राजस्थानी के प्रेमाख्यान
परम्परा
और
प्रगति

राजस्थानी के प्रेमाख्यान : परम्परा और प्रगति

लेखक

डॉ० रामगोपाल गोयल
एम ए, पी एच डी,

आमुख

हिन्दी साहित्य के इतिहास मे प्रेमाख्यान शब्द केवल सूफी प्रेमाख्यान-काव्यो के लिए प्राय रूढ-सा हो गया है। किन्तु हिन्दी भाषा मे सूफी प्रेमाख्यानो के अतिरिक्त अनेक प्रेमाख्यान मिलते है। ये प्रेमाख्यान विषय और शैली की दृष्टि से सूफी-प्रेमाख्यानो से बहुत भिन्न हैं और प्राचीनकाल से चली आ रही भारतीय प्रेमाख्यान परम्परा की देन हैं। यह प्रेमाख्यान-परम्परा सस्कृत, प्राकृत और अपभ्र श से होती हुई वर्तमान भारतीय भाषाओ तक पहुची है। राजस्थानी के प्रेमाख्यान इसी परम्परा की देन है। इस भारतीय प्रेमाख्यान परम्परा पर अनेक विद्वानो ने शोध-कार्य किया है जिनमे प० परशुराम चतुर्वेदी, डा० कमल कुलश्रेष्ठ, डा० हरिकान्त श्रीवास्तव एव डा० श्याम मनोहर पाण्डेय आदि विद्वानो के नाम उल्लेखनीय हैं। प० परशुराम चतुर्वेदी ने अपने ग्रन्थ 'भारतीय प्रेमाख्यान की परम्परा' मे ढोला मारू रा दूहा, सदयवत्स सावलिगा की कथा, बुद्धि रासो, लखमसेन पद्मावती, मदन शतक, मूमल और महेन्द्र की प्रेम-कथा आदि राजस्थानी के प्रेमाख्यानो का भी परिचय दिया है। इसी प्रकार डा० हरिकान्त श्रीवास्तव ने भी अपने शोध-प्रबन्ध 'भारतीय प्रेमाख्यान-काव्य' मे राजस्थानी के कुल चौदह प्रेमाख्यानो का परिचय दिया है। उक्त ग्रन्थो मे राजस्थानी के इन प्रेमाख्यानो के बारे मे पढकर अनुभव हुआ है कि कुछ ही ग्रथो का यह परिचय अपर्याप्त है। राजस्थानी के अधिकाश रूप मे अप्रकाशित विशाल वाड्गमय मे अन्य प्रेमाख्यान ग्रथ भी मिलने की सम्भावना लगी और उसी जिज्ञासा की तुष्टि के लिए मैंने राजस्थानी के प्रेमाख्यानो पर शोध-कार्य करना प्रारम्भ किया। प्रारम्भ मे, राजस्थानी के कुछ प्रकाशित प्रेमाख्यानक ग्रथ यथा—ढोला मारू रा दूहा, वेलि क्रिसन रुकमणी री वेलि, गणपति कृत माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध, भीमकृत सदयवत्स वीर प्रबन्ध, डा० माताप्रसाद गुप्त द्वारा सम्पादित बीसलदेव रास, चतुर्भुजदास कृत मधुमालती, छिताई वार्ता, असाइत कृत हसाउली, दामो कृत लखमसेन पद्मावती कथा, माधवानल कामकन्दला (कुशललाभ), जटमल कृत गोरा बादल, पद्मिनी चरित्र चौपई, माधवानल कामकन्दला (दामोदर) रतना हमीर री वारता, आदि ही मेरी दृष्टि मे थे। बाद मे अजमेर, बीकानेर, जयपुर, जोधपुर आदि मे स्थित हस्तलिखित ग्रथ-भण्डारो, जैन-

मन्दिरो एवं शोध-सस्थानो मे उपलब्ध सैकडो हस्तलिखित ग्रंथो के अवलोकन के पश्चात् इन प्रेमाख्यानो की सख्या सौ से भी अधिक पहुच गई। इन ग्रथो की भी विभिन्न व्यक्तियो द्वारा विभिन्न काल मे लिखी गई अनेक हस्तलिखित प्रतिया उपलब्ध हुई। इन उपलब्ध प्रेमाख्यानो मे से ११५ महत्वपूर्ण-प्रेमाख्यानो का चयन करके इस शोध-प्रबन्ध मे इनका आलोचनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। अत इस दृष्टि से यह शोध-प्रबन्ध राजस्थानी के प्रेमाख्यानो पर लिखा गया प्रथम और मौलिक ग्रथ है।

इस शोध-प्रबन्ध मे विक्रम सम्वत् १४०० से सम्वत् १९०० तक की अवधि मे रचित गद्य, पद्य अथवा गद्य-पद्य मिश्रित चम्पू-काव्य-शैली मे लिखे गये प्रेमाख्यानो का आलोचनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध को कुल नौ अध्यायो मे विभक्त किया गया है। प्रथम अध्याय के विषय-प्रवेश मे भारतीय प्रेमाख्यान-परम्परा का सक्षिप्त दिग्दर्शन कराते हुए राजस्थानी के प्रेमाख्यानो को भारतीय प्रेमाख्यान-काव्य की परम्परागत शृ खला की एक अगली कडी के रूप मे स्वीकार किया है। भाग 'क' मे राजस्थानी के कुल ११५ प्रेमाख्यानो का रचनाकाल क्रमानुसार सक्षिप्त आलोचनात्मक परिचय दिया गया है। इन प्रेमाख्यानो के रचयिताओ का परिचय तथा ग्रन्थो के रचनाकाल के साथ सक्षिप्त कथा-वस्तु भी दी गई है। इन ११५ प्रेमाख्यानो मे से ७६ ग्रथ अप्रकाशित हैं। अप्रकाशित ग्रथो मे से भी ४१ प्रेमाख्यानो का तो हिन्दी-साहित्य अथवा राजस्थानी-साहित्य के इतिहास मे कही भी उल्लेख नही मिलता है तथा इस शोध-प्रबन्ध मे प्रथम बार इनका अध्ययन प्रस्तुत किया जा रहा है। राजस्थानी के इन प्रेमाख्यानो मे से कुछ का परिचय देते समय विद्वानो द्वारा भ्रातिवश, इनके रचनाकारो एव रचनाकाल के बारे मे कुछ त्रुटिया रह गई थी; उपलब्ध हस्तलिखित ग्रथो से प्राप्त नये तथ्यो के आधार पर बडी विनम्रता के साथ इन त्रुटियो का सशोधन कर दिया गया है। पाद टिप्पणियो मे एक ही ग्रथ की विभिन्न काल मे विभिन्न लिपिकारो द्वारा लिखी हस्तलिखित प्रतियो का परिचय दिया गया है तथा उनके प्राप्ति-स्थानो का भी उल्लेख कर दिया गया है। विस्तार-भय से इन प्रेमाख्यानो का आलोचनात्मक परिचय बहुत सक्षिप्त दिया गया है, फिर भी आलोच्य ग्रथो की सख्या अधिक होने से इस अध्याय का कलेवर कुछ बडा हो गया है, इसके लिए हम विवश थे। प्रथम अध्याय के भाग 'ख' मे इन विविध प्रकार के प्रेमाख्यानो का वर्गीकरण प्रस्तुत किया गया है।

द्वितीय अध्याय मे, इन प्रेमाख्यानो के कथानको का मूल-स्त्रोत और उसकी परम्परा का अनुसन्धान प्रस्तुत किया गया है। कुछ प्रमुख लोकगाथात्मक एव

पौराणिक-स्त्रोत वाले प्रेमाख्यानो के कथा-चरणो का क्रमिक विकास एवं विविध कथा-रूपो का तुलनात्मक-अध्ययन प्रस्तुत किया गया है, साथ ही कथा के मूल रूप की खोज भी की गई है। ऐतिहासिक स्त्रोत वाले कुल प्रमुख प्रेमाख्यानो के पात्रो और घटनाओ का ऐतिहासिक विश्लेषण किया गया है। एक ही कथानक विभिन्न समय मे विभिन्न व्यक्तियो के हाथ मे पडकर किस प्रकार से विविध रूप ग्रहण कर लेता है और मूल-कथाओ के परिवर्तन, परिवर्द्धन के कौन-कौन से कारण होते है, आदि बातो का वैज्ञानिक विवेचन प्रस्तुत किया गया है। इस प्रकार यह अध्याय भी सर्वथा मौलिक है।

तृतीय अध्याय मे, राजस्थानी के इन प्रेमाख्यानो मे प्रयुक्त कथानक-रूढियो अथवा अभिप्रायो का अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। राजस्थानी भाषा मे कथानक-रूढियो पर कुछ प्रशसनीय कार्य हुआ है, किन्तु उसमे योजनाबद्ध लौकतात्विक वैज्ञानिक दृष्टिकोण का अभाव है। मैंने इस अध्याय मे लोक-साहित्य के सुप्रसिद्ध पाश्चात्य विद्वान् स्टिथ थामसन की प्रणाली पर इन प्रेमाख्यानो की अभिप्राय-अनुक्रमणिका प्रस्तुत की है जिसमे इन प्रेमाख्यानो मे प्रयुक्त अभिप्रायो का थामसन की अभिप्राय अनुक्रमणिका प्रणाली मे वर्गीकरण करके नये अभिप्रायो का अन्तर्राष्ट्रीय स्थान निर्धारित किया है। इन प्रेमाख्यानो मे कुल २५६० मोटिफ्ज अथवा अभिप्राय प्राप्त हुए हैं जिनमे १०४६ नये अभिप्राय है और इनका थामसन की अभिप्राय अनुक्रमणिका (Motif-Index) मे उल्लेख नहीं हुआ है। यद्यपि राजस्थानी प्रेमाख्यानो की यह अभिप्राय अनुक्रमणिका इसी अध्याय का अ ग है, किन्तु इस अध्याय की विशालता बढ जाने के भय से अभिप्राय-अनुक्रमणिका को परिशिष्ट मे दिया गया है और इस अध्याय मे केवल उसकी साराश तालिका दे दी गई है। राजस्थानी भाषा मे इस प्रकार का कार्य यह प्रथम वार ही हुआ है और सर्वथा मौलिक है। यह अभिप्राय-अनुक्रमणिका एक ऐसा दर्पण है जिसमे हम तत्कालीन लोक-मानस एव लोक-सस्कृति का स्पष्ट प्रतिबिंब देख सकते है। इस अभिप्राय-अनुक्रमणिका के अतिरिक्त कुछ विशेष अभिप्रायो की व्याख्या भी प्रस्तुत की गई है जिसमे अभिप्रायो का परम्परागत क्रमिक विकास एव अन्य भारतीय लोक-कथाओ तथा विश्व की लोक-कथाओ के सदर्भ मे उनकी स्थिति का अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

चतुर्थ अध्याय मे, राजस्थानी प्रेमाख्यानो की प्रेम-पद्धत्ति का निरूपण किया गया है। प्रेम-तत्व के निरूपण मे विभिन्न विद्वानो के मतो का उल्लेख करते हुए इसकी सर्वांगीण और व्यापक परिभाषा निर्धारित की गई है और प्रेम-तत्व के लक्षणो पर विवेचनात्मक प्रकाश डाला गया है। प्रेम-तत्व का उक्त विवेचन

इसलिए भी आवश्यक प्रतीत हुआ कि प्रेम-व्यजना की दृष्टि से इन प्रेमाख्यानो के विभिन्न रूप एव प्रेमातत्व की विविध कोटिया मिलती है। तत्पश्चात् राजस्थानी के इन प्रेमाख्यानो मे प्राप्त होने वाले प्रेम-तत्व का रूप, उसकी स्थिति, उद्रेक एव परिपाक की सम्यक् विवेचना की गई है। प्रेम मे काम और सौन्दर्य प्रमुख-तत्व होते है, अत राजस्थानी के प्रेमाख्यानो मे काम और प्रेम तथा सौन्दर्य और प्रेम का सम्बन्ध जिस रूप मे चित्रित हुआ है, इसका दिग्दर्शन कराया गया है।

पचम अध्याय मे, इन प्रेमाख्यानो मे वर्णित लौकिक, अलौकिक, मानव, अमानव आदि सभी प्रकार के पात्रो का परिचय दिया गया है तथा मानव-पात्रो का जिस रूप मे चित्रण हुआ है उसका भी आलोचनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

अध्याय षष्ठ मे, प्रकृति-चित्रण, दृश्य-विधान एव वस्तु-वर्णन का विवेचन प्रस्तुत किया गया हे तथा अध्याय सप्तम मे इन प्रेमाख्यानो के काव्य-सौष्ठव पर प्रकाश डाला गया है। काव्य-सौष्ठव मे मैंने रस, अलकार एव छन्दो का निरूपण किया है। इन प्रेमाख्यानो मे स्त्री-पुरुष के यौन-प्रेम की प्रमुखता होने से शृगार-रस की प्रधानता मिलती है, अत अन्य रसो की अपेक्षा शृगार-रस का विवेचन अधिक करना पडा है। राजस्थानी के इन एकसौ पन्द्रह प्रेमाख्यानो के काव्य-सौष्ठव का विवेचन करते समय मुझे अपनी लेखनी को बहुत सयम मे रखना पडा है, क्योकि अधिकाश प्रेमाख्यान हस्तलिखित है तथा शोध-संस्थानो एव हस्तलिखित ग्रथ भडारो मे सुरक्षित रहने से जनसाधारण के लिए अलभ्य भी है, अत इनमे प्राप्त अनेक सरस और सजीव उद्धरणो को देना चाहकर भी विस्तार-भय से नही दे पाया हूँ। फिर भी कही कही उद्धरण कुछ अधिक लम्बे दिखलाई पडते है, इसका कारण हस्तलिखित ग्रथो के इन काव्य-सौष्ठवपूर्ण उद्धरणो को विद्वानो और सहृदयो तक पहुँचाने की भावना रही है। इन उद्धरणो की भाषा भी हस्तलिखित प्रतियो मे जैसी प्राप्त हुई है, वैसी ही लिखी गई है एव मूल-रूप की सुरक्षा की दृष्टि से अशुद्धियो का परिमार्जन जान बूझ कर नही किया गया है, अतः कुछ उद्धरणो की भाषा कुछ अटपटी भी लग सकती है।

कवि या रचनाकार अपने युग का तटस्थ द्रष्टा होता है। जिस युग मे वह जीता है, उस युग की छाप उसकी रचनाओ पर पडना स्वाभाविक है तथा जिस युग का वह चित्रण करता है, उस युग की सामाजिक, राजनैतिक एव धार्मिक परिस्थितियो का चित्रण मिलना भी स्वाभाविक है। इन प्रेमाख्यानो का रचनाकाल विक्रम सवत् १४ ० से १९०० तक है और इनमे प्राचीनकाल तथा मध्ययुग के कथानक विद्यमान है। इस प्रकार अति प्राचीनकाल से लेकर लेखक के समय तक की

परिस्थितियो एव सास्कृतिक उद्भावनाओ का चित्रण इन प्रेमाख्यानो मे हुआ है। अत अष्टम अध्याय मे तत्कालीन समाज और सस्कृति के रूप को स्पष्ट करने के लिए तत्कालीन सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक, शैक्षणिक एव कलात्मक परिस्थितियो का सम्यक् रूप से चित्रण किया गया है।

नवम् अध्याय मे इन प्रेमाख्यानो की वस्तुगत एव रचनागत सामान्य विशेषताओ का दिग्दर्शन कराया गया है। इस प्रकार यह शोध-प्रबन्ध विषय-वस्तु एव विषय प्रतिपादन की शैली, दोनो ही दृष्टियो से मौलिक है और आशा है हिन्दी-साहित्य एव भारतीय सस्कृति मे हो रहे अनुसन्धानात्मक कार्य की शृ खला मे महत्वपूर्ण और उपयोगी कडी सिद्ध होगा।

इस शोध-प्रबन्ध को प्रस्तुत करने मे मैंने अनेको हस्तलिखित-ग्रथ-भण्डारो एव शोध-सस्थानो से लाभ उठाया है। इनमें रा प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, राजस्थानी शोध-सस्थान चौपासनी रोड जोधपुर, अनूप संस्कृत लाइब्रेरी, बीकानेर, अभय जैन ग्रथालय, बीकानेर, भारतीय प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, बीकानेर एव रा.प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, बीकानेर शाखा; सरस्वती भडार, उदयपुर, महावीर भडार, जयपुर के नाम उल्लेखनीय है। हस्तलिखित ग्रथो की खोज की धुन मे कुछ ऐसे भी अज्ञातनामा ग्रथालय मिले हैं जिनमे अनेक हस्तलिखित ग्रथ विद्यमान है और वे दीमक लगने से तथा असावधानी से नष्ट होते जा रहे हैं। इन अज्ञातनामा ग्रथ भण्डारो मे श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, लाखन कोटडी, अजमेर का नाम उल्लेखनीय है जहाँ सस्कृत, प्राकृत, अपभ्र श एव राजस्थानी के लगभग दो सहस्त्र महत्वपूर्ण अलभ्य हस्तलिखित ग्रथ विद्यमान है। इनमे से राजस्थानी के प्रेमाख्यानो का चयन कर इस शोध प्रबन्ध के लिए लाभ उठाया गया है। राजस्थान विश्वविद्यालय एव आगरा विद्यालय के पुस्तकालयो से भी लाभ उठाया गया है। इन हस्तलिखित ग्रथ भण्डारो एव पुस्तकालयो के अधिकारियो एव कार्यकर्ताओ के सौजन्यपूर्ण सहयोग से बहुत प्रेरणा मिली है, अत इन सबका अत्यन्त आभारी हूँ। इनके अतिरिक्त श्रद्धेय अगरचन्दजी नाहटा, डा० नारायणसिंह भाटी, श्री गोपालनारायण बहुरा (उपनिदेशक, रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर), डा० पुरुषोत्तम मेनारिया, श्री बृजमोहन जावलिया, श्री हीराचद सचेती (अजमेर) श्री चादमलजी सीपानी आदि महानुभावो से हस्तलिखित ग्रथ एव अलभ्य मुद्रित पुस्तके प्राप्त हुई, अत इन सबके प्रति भी हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ। श्रद्धेय नाहटा जी ने तो न केवल उपयोगी ग्रथ ही दिये, बल्कि परिचय-पत्र लिखकर अनूप सस्कृत लाइब्रेरी आदि से अध्ययन की सुविधाये भी प्रदान करायी तथा उपयोगी सुझाव दिये जिसके लिए आपका अत्यन्त आभारी हूँ।

इस शोध-प्रबन्ध को सम्पन्न कराने मे श्रद्धेय श्री नरोत्तमदास स्वामी, डा० सरनामसिंह शर्मा 'अरुण', डा० कुँवर चन्द्रप्रकाश सिंह तथा अन्य विद्वानो से

समय-समय पर उपयोगी सुझाव मिले, अत इनके प्रति भी मैं अपनी हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ। श्रद्धेय डा० सत्येन्द्रजी के प्रति तो मैं किन शब्दो मे अपनी कृतज्ञता व्यक्त करूँ? आपने तो अपना अमूल्य समय देकर निरन्तर मेरा मार्ग-निर्देशन किया है। स्टिथ थामसन की अभिप्राय अनुक्रमणिका प्रणाली के आधार पर राजस्थानी प्रेमाख्यानो की अभिप्राय–अनुक्रमणिका (Motif-Index) का प्रस्तुतीकरण तो आपके ही सुझाव और मार्ग-निर्देशन का फल है।

इस शोध-प्रवन्ध के मार्ग-निर्देशक श्रद्धेय डा० शिवस्वरूप शर्मा 'अचल' है। यह शोध-प्रवन्ध आपकी ही सतत् प्रेरणा, सजग मार्ग-निर्देशन एव स्नेह का फल है।

पुस्तक का कलेवर वढ जाने से, तृतीय अध्याय मे उल्लेखानुसार इन प्रेमाख्यानो की अभिप्राय-अनुक्रमणिका परिशिष्ट मे नही दी जा सकी है। कुछ महत्व-पूर्ण नये कथा-अभिप्रायो के विस्तृत-विश्लेषण के साथ उक्त अभिप्राय-अनुक्रमणिका पुस्तक-रूप मे अलग से प्रकाशित की जा रही है। सावधानी रखने के पश्चात् भी मुद्रण सम्वन्धी कुछ त्रुटियाँ यत्र-तत्र रह गई है, इसके लिए विद्वद्जन क्षमा करेंगे।

इस शोध-प्रवन्ध से राजस्थानी साहित्य की श्रीवृद्धि मे किंचित भी योग मिला तो मैं अपने परिश्रम को सार्थक समझूँगा।

बछराज भवन,
पुरानी मण्डी,
अजमेर

रामगोपाल गोयल

* * *

* * *

प्र
थ
म

अध्याय

राजस्थानी के प्रेमाख्यानों का सामान्य परिचय

प्र

थ

म

अध्याय

राजस्थानी-प्रेमाख्यानों का सामान्य परिचय

विषय-प्रवेश

भारतीय साहित्य मे प्रेमाख्यानो की परम्परा प्राचीन काल से ही प्रचलित रही है। इस प्रेमाख्यान परम्परा के बीज हमे वैदिक साहित्य मे, विशेष कर ऋग्वेद मे उल्लिखित यमयमी के सवाद, उर्वशी और पुरूरवस्, श्यावाश्व, सूर्य-पुत्री तपती एव सवरण के प्रणय प्रसगो मे मिलते हैं। उर्वशी और पुरूरवस के प्रेमाख्यान के बारे मे तो पेजर महोदय का मत है कि 'अभी तक जितनी भारतीय-यूरोपीय प्रेम-कहानिया विदित हैं, उनमे यह सर्वप्रथम है और हो सकता है कि समस्त विश्व के प्रेमाख्यानो मे भी यह प्राचीनतम समझी जा सके।'[1] महाभारत और पुराणो मे विविध प्रेमाख्यानो का वर्णन मिलता है। महाभारत का नलोपाख्यान, शकुन्तला, अर्जुन और सुभद्रा तथा भीम और हिडिम्बा के प्रेमाख्यान उल्लेखनीय है। उषा एव अनिरुद्ध प्रेमाख्यान का विस्तृत-वर्णन हरि वशपुराण मे मिलता है।[2] मार्मिक प्रेम-व्यजना की दृष्टि से रुरू और प्रमद्वरा की प्रेम-कथा भी कम महत्वपूर्ण नही है। इस कहानी मे ऋषि कुमार रुरू की प्रेम-पात्री प्रमद्वरा सर्प-दश के कारण मर जाती है और पुनरुज्जीवित करने के लिए रुरू को आकाशवाणी के प्रस्ताव पर अपनी आधी आयु का काल प्रमद्वरा को समर्पित करना पडता है।[3]

सस्कृत के कथा-साहित्य और काव्यो मे प्रेमाख्यानो के विविध रूप मिलते हैं। पैशाची भाषा मे लिखी गई गुणाढ्य की 'वृहत्कथा, क्षेमेन्द्र की वृहत्कथामजरी,

---

1 "It is the first Indo-European love-story known, and May even be the oldest love-story in tne world " N. M Penzer (The ocean of the story London, 1924) P 245

२. श्री परशुराम चतुर्वेदी भारतीय प्र माख्यान की परम्परा, पृ स १७।

३. वही, पृ स. २२।

सोमदेव रचित कथा-सरित्सागर अथवा जैन कवि हरिषेण रचित वृहत् कथा-कोष, वैताल पचविंशति, आदि कथा-साहित्य मे अनेक प्रेम-कथाओ का वर्णन मिलता है। देवसेन और उन्मादिनी की कथा,[1] धर्मदत्त और मदन मेना की कथा[2] वैताल पचविशति मे वर्णित रत्नवति की कथा,[3] कथा-सरित्सागर मे वर्णित अवतिका की कहानी मे वासवदत्ता और पद्मावती के साथ राजा उदयन का प्रेम-वृतात,[4] शक्तिदेवी और वेला का प्रेमाख्यान आदि अनेक प्रेम-कथानको से यह कथा-साहित्य भरा पडा है। सस्कृत-साहित्य मे प्रेम-कथाओ को लेकर स्वतन्त्र काव्य-ग्रन्थो की भी रचना की गई। पतजलि ने महाभाष्य मे वासवदत्ता, सुमनोत्तरा, उर्वशी और भैरमथी नामक प्रेमाख्यानो का उल्लेख किया है जिससे विदित होता है कि इस प्रकार के प्रेमाख्यान बहुत पहले से ही प्रचलित रहे होगे।[5] प्रेमाख्यानो को लेकर स्वतन्त्र रूप से रचे गये काव्य-ग्रन्थो मे महाकवि भास कृत स्वप्न-वासवदत्ता, सुबधु रचित वासवदत्ता, बाण रचित कादम्बरी एव पार्वती परिणयम्, कालीदास कृत अभिज्ञान शाकुन्तल, मेघदूत, विक्रमोर्वशी, कुमार-सम्भव, मालविकाग्निमित्रम्, भवभूति का मालतीमाधव, हर्ष रचित रत्नावलि नाटिका तथा महाकाव्य नैपधीयम् तथा त्रिविक्रम कृत 'नल' चम्पू एव श्रीराम वर्मवञ्जि युवराज विरचित रुक्मणि परिणयम्, इत्यादि उल्लेखनीय हैं। इनमे प्रेम-तत्व स्पष्ट रूप से उभर कर आया है तथा उसको समुचित विस्तार भी इन प्रेमाख्यानो मे मिला है।

वैदिक काल के प्रेम-प्रसगो तथा सस्कृत-साहित्य के प्रेमाख्यानो मे मूल-भेद तो यही है कि वैदिक प्रेम-प्रसगो मे सस्कृत-साहित्य के प्रेमाख्यानो की भाति प्रेम-तत्व को अधिक विस्तार नही मिल पाया है। इन प्रणय-प्रसगो मे आध्यात्मिक प्रतीकात्मकता का आरोपण होने के कारण प्रेम-तत्व दब सा गया है, किन्तु सस्कृत-साहित्य मे इनका अपेक्षा कृत अधिक रूप निखरने लग जाता है और इनकी सख्या भी बढती चली जाती हे। इन प्रेमाख्यानो मे अनेक कथा-तन्तु विस्तार पाने लगते है। प्रेम के उद्रेक मे प्रत्यक्ष दर्शन के साथ स्वप्न-दर्शन, चित्र-दर्शन के कथा-तन्तु

---

१. वृहत्कथा मञ्जरी, पृ ७०–१ और ३६३।
2 The ocean of the story (ch 84 st 163, 4 G)
3 The ocean of the story (ch 88 st 163, G)
४. सोमदेव कृत कथा सरित्सागर, रूपान्तरकार श्री गोपाल कृष्ण कौल (सत्सहित्य प्रकाशन, दिल्ली) पृ. स ७८।
५ 'वासवदत्ता मधिकृत्य, कृताऽ ख्यायिका वासवदत्ता सुमनोत्तरा, वाच भवति भैमरथी।' (४–३–८७२)।

भी जुड जाते है तथा सन्देश-प्रेषण मे हँस आदि पक्षियो का भी प्रयोग होने लगते है। शाप आदि के द्वारा नायक नायिका के मिलन मे बाधाओ का विधान भी मिलने लगता है। इस प्रकार अनेक प्रकार के कथा-तन्तु मिल जाने से प्रेमाख्यानो का एक मूल ढाचा तैयार हो जाता है जो भविष्य के लिए भारतीय भाषाओ के प्रेमाख्यानो के रुप-विधान का मूलाधार निर्मित करता है। सस्कृत-साहित्य के प्रेमाख्यानो के वर्ण्य-विषय मे भी विविधता आ जाती है। इनमे पौराणिक प्रेम-कथाओ के अतिरिक्त उदयन एव वासवदत्ता के ऐतिहासिक प्रेम-प्रसग तथा लोक-कथाये भी जुड जाती है।

सस्कृत-साहित्य के प्रेमाख्यानो मे वर्णित प्रेम-प्रवाह के साथ-साथ प्राकृत और अपभ्रंश भाषाओ मे भी यह प्रवाह बहने लगता है। पाली भाषा मे रचित बौद्ध-जातको मे भी यत्रतत्र प्रेम-कथाओ का वर्णन मिलता है। कट्ठहारि जातक[1] के मूल कथा-तन्तु महाभारत के शकुन्तलोपाख्यान से समता रखते है। अडभूत जातक[2] मे माणविका के प्रेम की कहानी वर्णित है। माणविका का प्रेमी फूलो की टोकरी मे छिपकर उससे मिलता है। असिलक्खण जातक[3] मे राजकुमारी अपने ममेरे भाई से प्रेम करती है और दोनो का मिलन भाग्य बतलाने वाली स्त्री की सहायता से होता है। मद्दुपानी जातक[4] मे राजकुमारी अपने पितृ-गृह को छोडकर प्रेमी के साथ भाग जाती है। आसङ्क जातक[5] मे राजा आसङ्ककुमारी का नाम बतलाकर, उसे प्राप्त करता है। इसमे 'विवाह के लिए शर्त' नामक कथानक-रूढि प्रयुक्त हुई है। 'दमएणक जातक'[6] मे वर्णन है कि राज पुरोहित का पुत्र सेनक कुमार रानी मे आसक्त हो जाता है और दोनो मे इतना प्रगाढ प्रेम हो जाता है कि वे प्रेम के वशिभूत होकर राज्य छोडकर अन्यत्र भाग जाते है। 'सु युग्ग जातक[7]' मे भी किसी सुन्दरी का राक्षस के वश मे होना तथा विद्याधर द्वारा मुक्त करने का उल्लेख मिलता है। किसी सुन्दरी का राक्षस के वेश मे होना तथा नायक द्वारा मुक्त करने का कथा-तन्तु बाद के प्रेमाख्यानो मे प्रचुर मात्रा मे मिलता है। 'माहा

---

१ जातक-कथा (प्रथम-खण्ड), हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग, पृ. स. १७३—६।

२ वही, पृ स. ३७६।

३ जातक-कथा (दूसरा भाग), हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग पृ स. ६४।

४ जातक-कथा (तृतीय-खण्ड), हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग, पृ. स. ४६।

५ वही, पृ स. ४७।

६ जातक-कथा (चतुर्थ-खण्ड), हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग, पृ स. १८७।

७ वही, पृ. न १८७।

पदुम जातक'[1] मे वर्णन है कि राजकुमार पद्मकुमार के रूप पर मोहित होकर उसकी सौतेली मा (रानी) प्रणय-प्रस्ताव रखती है, किन्तु वह सत्य पर दृढ रहकर रानी की कामुकता की भर्त्सना करता है। रानी प्रतिशोध की अग्नि मे जलकर राजकुमार पर मिथ्यारोप लगाती है और उसेराजा से कहकर पहाड पर से प्रपात मे गिरवाती है, किन्तु नागराज कुमार की रक्षा करता है। इस प्रकार हम देखते है कि जातक-कथाओ मे विविध प्रकार के प्रेम-प्रसग वर्णित हैं, किन्तु वहाँ उनका उपयोग त्रिया-चरित्र की दुशीलता को व्यक्त करने के लिए ही हुआ है। इन प्रेम-कथाओ का उद्देश्य नारी के चचल स्वभाव को प्रकट करके उसके प्रति अनासक्ति उत्पन्न करता है। इन प्रेमाख्यानो मे प्रयुक्त कथा-तन्तु, यथा-प्रेमी का फूलो की टोकरी में छिपकर प्रेमिका के महलो मे जाना, चौपड का खेल, नायिका का ममेरे भाई से प्रेम, परदेश जाते समय पत्नि के चरित्र की निगरानी के लिए पक्षी को घर पर छोडकर जाना, नायिका से विवाह के लिए शर्त रखना, प्रेमिका का घर से पलायन, सौतेली मा की कामासक्ति, नाग द्वारा नायक का रक्षण आदि का सम्प्रेषण प्राकृत और अपभ्रश के जैन-प्रेमाख्यानो मे होता हुआ हिन्दी के प्रेमाख्यानो मे होता है तथा राजस्थानी के प्रेमाख्यानो मे भी उक्त कथा-तन्तु प्रचुर मात्रा मे प्रयुक्त हुए हैं। बौद्ध-गाथाओ की कथा-बन्ध सम्बन्धी विशेषताये भी जैनियो के चरित-काव्यो और कथा-साहित्य मे अपनाई गई है।

जातक-कथाओ मे वर्णित प्रेमाख्यानो की अपेक्षा जैनियो की धर्म-कथाओ मे प्रेमाख्यानो का रूप अधिक निखरा है। सस्कृत के कथा साहित्य की भाति जैनियो ने प्राकृत-भाषा मे भी अनेक कथा-ग्रथ लिखे। इन कथा-ग्रन्थो मे अनेक प्रेम-कथाये वर्णित है। आख्यान मणि-कोप मे शील-महात्म्य को प्रकट करने के लिए दवदती, सीता रोहिणी, सुभद्रा आदि नायिकाओ के एक-निष्ठ प्रेम की कथाये वर्णित है। इसी भाति कहारयण-कोष (कथारत्न-कोष) मे पचास लोक-कथाये सग्रहीत हैं, जिनमे अनेक प्रेम-कथाये है। प्राकृत कथा-सग्रह मे वर्णित सुन्दरी देवी की कथा[2] एक सरस प्रेमाख्यान कहा जा सकता है। इसी प्रकार इस कथा-सग्रह मे मलय सुन्दरी कथा भी वर्णित है। इस कथा-साहित्य के अतिरिक्त प्राकृत भाषा मे स्वतन्त्र रूप से भी प्रेमाख्यान-काव्यो की रचना हुई। हरिभद्र कृत समराइच्च कहा, उद्योतन सूरि कृत कुवलयमाला, वासुदेव हिण्डी, तरगवइकहा, जिनदत्ताख्यान, जिन हर्ष

१. वही, पृ स. ३८७।

२ प्राकृत साहित्य का इतिहास—डॉ० जगदीशचन्द्र जैन, चौखम्बा विद्या भवन, वाराणसी, पृ स ३६४–६५।

गणि कृत रयण सेहरीकहा आदि इस भाति के सुन्दर प्रेमाख्यान है। इन प्रेमाख्यानो के अतिरिक्त मलयवती, मगध सेना, बन्धुमती और सुलोचना नामक काव्य-ग्रथो का भी जैन विद्वानो ने उल्लेख किया है।[1] इन कथा-ग्रथो मे प्रेम और शृगार का यथेष्ट वर्णन मिलता है।

प्राकृत भाषा के इन प्रेमाख्यानो की परम्परा अपभ्रंश भाषा मे भी प्रवाहमान हुई। अपभ्रंश के अधिकाश चरिउ-काव्य प्रेमाख्यान अथवा प्रेम-कथा परक काव्य है। कविवर धनपाल कृत भविसयत कहा, पुष्पदन्त कृत णायकुमार चरिउ, नयनदी कृत सुदसण चरिउ तथा पण्डित लाखू या लक्खण द्वारा रचित जिणदत चरित अपभ्रंश के सरस प्रेमाख्यान है। इन प्रेमाख्यानो का मूल उद्देश्य धर्म की शिक्षा देना है। किन्तु, अपनी रचनाओ को लोकप्रिय बनाने के लिए प्रेम और शृगार का भी उन्होने इन रचनाओ मे यथेष्ट स्थान दिया है। अपभ्रंश साहित्य मे धार्मिक-उद्देश्य से रहित अद्दहमाण (अब्दुर्रहमान) कृत 'सदेश रासक' भी मिलता है जो विशुद्ध प्रेमाख्यान है।

इस प्रकार हम देखते है कि भारतीय-साहित्य को यह अविच्छिन्न धारा चिरकाल से प्रवाहित है। इस धारा का परम्परागत रूप आज हमे हिन्दी-साहित्य मे दिखलाई पडता है। देश और काल के अनुरूप इस धारा का बाह्य-रूप परिवर्तित होता रहा, किन्तु उसका आन्तरिक रूप ज्यो का त्यो अबाध गति से निरन्तर आगे-प्रवाहित होता रहा। राजस्थानी के प्रेमाख्यान इसी परम्परा की अविच्छिन कडी है। इन प्रेमाख्यानो का मूल-स्रोत अपभ्रंश के चरित-काव्यो की परम्परा मे निहित है। इसका मूल कारण यह है कि अपभ्रंश के उपरान्त ही भारत की अन्य भाषाये विकसित हुई, साथ ही अपभ्रंश-साहित्य और आधुनिक काल की वर्तमान प्रान्तीय-भाषाये चिर-काल तक सामान्तक रूप से भी चलती रही और हिन्दी, राजस्थानी आदि भाषाओ को अपभ्रंश की भाव-परम्परा तथा रचना-शैली प्रभावित करती रही। अत. राजस्थानी की यह प्रेमाख्यान परम्परा भाव, भाषा, अलकार, छन्द-योजना, शैली की दृष्टि से अपभ्रंश-प्रेमाख्यान परम्परा की ही विरासत है। इस अध्याय मे हम सवत् १४०० से सवत् १६०० तक की अवधि मे रचित राजस्थानी के विविध प्रेमाख्यानो का सक्षिप्त परिचय प्रस्तुत करेगे।

---

१ वही, पृ स ३६४–६५।

भाग 'क'

प्रेमाख्यान-ग्रन्थों का संक्षिप्त-परिचय

१ ढोला मारू रा दूहा[1]

रचयिता :

यह राजस्थान का एक प्राचीन विशुद्ध प्रेमाख्यानक लोक-काव्य है। इसके रचयिता के विषय मे कुछ पता नही चलता। डॉ० मोतीलाल मेनारिया ने इसका लेखक, कवि कल्लोल माना है[2] तथा श्री परशुराम चतुर्वेदी[3] एव डॉ० हीरालाल माहेश्वरी[4] आदि विद्वानो ने इस मत की पुष्टि की है। डॉ० मेनारिया ने अपने मत की पुष्टि के लिए निम्नलिखित दोहा उद्दृत किया है —

> गाहा, गूढा, गीत, गुण, कउतिग कथा कलोल।
> चतुर-तणा चित-रजवण, कहियइ कवि कल्लोल॥[5]

किन्तु उक्त दोहे मे रेखाकित कल्लोल शब्द रचयिता को ध्वनित न करके कवि ने रचना-कौशल को व्यक्त करता है। यहाँ कवि-कल्लोल का अर्थ कवि-क्रीडा है। राजस्थानी के अन्य काव्य-ग्रथो मे भी कल्लोल शब्द का प्रयोग क्रीडा के अर्थ मे ही हुआ है। उदाहरणार्थ, गणपति रचित 'माधवानल कामकन्दला प्रबध' के सप्तम अग का निम्नलिखित दोहा लिया जा सकता है :—

---

१ सर्व श्री रामसिह, सूर्यकरण पारीक और नरोत्तमदास स्वामी द्वारा सम्पादित तथा ना प्र सभा द्वारा प्रकाशित ढोला मारू रा दूहा (द्वितीय सस्करण)।

२. राजस्थानी भाषा और साहित्य, पृ १३४।

३ हिन्दी-काव्य-धारा मे प्रेम-प्रवाह, पृ २६ (प्रथम-सस्करण, १९२५ ई.)।

४. राजस्थानी भाषा और साहित्य, पृ २०१।

५ ढोला मारू रा दूहा, परिशिष्ट (२) (घ) पृ. २७७, (ना प्र. स. काशी)।

"नमो नमो तू नर्मदे ! जल कैवल्य कल्लोल ।
चौद कल्प चासन थमा, भोगवता भूगोल ॥[1]

एक अन्य उदाहरण समय सुन्दर कृत 'पुण्यसार चरित्र चउपई' से भी उद्दृत किया जा सकता है । यथा—

'समरू श्री सरसत्ति, सद् गुण पिण सानिध करउ ।
आपो बचन उकति, कहु कथा कल्लोल सू ॥७॥[2]

मारवाड मे जब कोई युवक हास्य विनोद करता है तो उसके लिए कहा जाता है—"पट्ठो किल्लोला करतो फिर रह्यो है ।" अत 'ढोला मारू रा दूहा' के रचनाकार के रूप मे डॉ० मेनारिया द्वारा उल्लिखित कल्लोल नाम ठीक नही जान पडता । डॉ० कमल कुलश्रेष्ठ ने इसके रचयिता का नाम हरराज लिखा है[3], किन्तु वह भी ठीक प्रतीत नही होता । 'ढोला मारू रा दूहा' के सम्पादको ने इसको किसी एक व्यक्ति द्वारा रचे जाने की सम्भावना प्रकट करते हुए भी, वास्तव मे जनता को ही इसका निर्माता माना है ।[4] वस्तुत यह एक विकसनशील लोक-काव्य है और हर्ष-विषाद की घडियो मे लोक-कठ से ही दूहो के रूप मे लोक-वाणी उच्चरित हुई हैं । अत लोक-मानस ही इसका निर्माता है । किन्तु, इस लोक-स्वर को क्रमबद्धता देकर एक निश्चित लिपि मे ढालने वाला निश्चित ही कोई एक व्यक्ति रहा होगा जिसका परिचय अज्ञात है ।

रचना-काल :

इसके रचना-काल के विषय मे विद्वानो मे मतभेद हैं । 'ढोला मारू रा दूहा' के सम्पादको ने इसके रचना-काल की अन्तिम सीमा सवत् १४५० निर्धारित की है ।[5] डॉ० मेनारिया ने निम्नलिखित दोहे के आधार पर इसका रचनाकाल सवत् १५३० माना है[6]—

---

१ गणपति कृत माधवानल कामकन्दला प्रबध, (सप्तम अ ग), गायकवाड सीरिज, बडौदा ।

२ समय सुन्दर रास पचक (सा रा रिसर्च इन्स्टीट्यूट, बीकानेर, पृ १२०) ।

३ हिन्दी-प्रेमाख्यान-काव्य, पृ १२–१८ (१९५३) ।

४ डॉ० हीरालाल माहेश्वरी राजस्थानी भाषा और साहित्य, पृ. २०१ ।

५ ढोला मारू रा दूहा (ना. प्र सभा, काशी) प्रस्तावना, पृ ८ का फुट-नोट ।

६ राजस्थानी भाषा और साहित्य, पृ १३४ ।

पनरहसे तीसे वरस, कथा कही गुण जाण।
वदि वैसाखे वार गुरु, तीज जाण सुभवाण॥

डॉ० हरिकान्त श्रीवास्तव ने इसके रचनाकाल की अवधि स. १००० से १६१८ तक मानी है।[1] डॉ० कमल कुलश्रेष्ठ ने सन् १५०० से १७५० तक के प्राप्त प्रेमाख्यानो की सूची मे इसका नाम गिनाया है।[2] स्व० डॉ० गौरीशकर हीराचन्द ओझा का अनुमान है कि असली 'ढोला मारू रा दूहा' का समय सवत् १५०० के लगभग होगा।[3] वस्तुतः यह एक विकसनशील लोक-काव्य होने मे इसका कोई निश्चित रचनाकाल मानना भूल होगी। लोक-मानस द्वारा इसका निर्माण लगभग १२वी शताब्दी के प्रथम चरण मे प्रारम्भ हो गया प्रतीत होता है क्योकि इसके कुछ दोहे परवर्ती काव्य-रचनाओ मे, यथा—कबीर के दोहो मे, कुशल लाभ कृत 'माधवानल काम-कन्दला चौपाई' एव केशव कृत 'सदैवच्छ सावलिगा' चउपई मे ज्यो के त्यो मिल जाते हैं। किन्तु इसकी वर्तमान भाषा को देखते हुए यह अनुमान लगाया जा सकता है कि इसके वर्तमान लिपिवद्ध रूप का सम्पादन सोहलवी शताब्दी के प्रथम-चरण से पूर्व नही हुआ होगा।

कथा-वस्तु :

'ढोला मारू रा दूहा' काव्य मे नरवर के राजा नल के पुत्र ढोला एव पूगल के राजा पिंगल की पुत्री मारवणी की प्रेम-गाथा का वर्णन है। ढोला और मारवणी का बचपन मे विवाह हो जाता है, किन्तु जब ढोला बडा होता है तो उसका विवाह मालवा के राजा की कन्या मालवणी से कर दिया जाता है। उधर जब मारवणी को यौवन का प्रथम बसत झकझोरने लगता है, तब वह एक दिन स्वप्न मे अपने प्रियतम की मधुर-छवि देखती है और उसके विरह मे व्याकुल हो उठती है। वह अपना प्रेम-सदेश ढोला के पास भेजती है, किन्तु मालवणी उसके प्रेम-सन्देश-वाहको को धोखे से मरवा देती है, किन्तु अन्त मे कुछ ढाढी ढोला के पास मारवणी का प्रेम-सन्देश पहुचाने मे सफल हो जाते है। मारवणी के प्रेम-सन्देश को सुनकर ढोला तत्काल उससे मिलने के लिए पूगल पहुच जाता है। कुछ काल तक ढोला सुसराल रहकर मारवणी के साथ आनन्दोपभोग करके नरवर को लौट पडता है। लौटते समय मार्ग मे उसकी भेंट प्रतिनायक उमर सूमरा से होती है,

---

१ हिन्दी प्रेमाख्यान काव्य, पृ. १२—१८।
२. हिन्दी प्रेमाख्यान काव्य, पृ १२—१८।
३. ढोला मारू रा दूहा, प्रवचन पृ ५—६।

जिसके छल से मारवणी के द्वारा संकेत करने पर दोनो प्रेमी-प्रेमिका बच निकलते हैं। ढोला नरवर आकर मालवणी एव मारवणी के साथ आनन्द पूर्वक रहता है।

'ढोला मारू रा दूहा' राजस्थान का अत्यन्त लोकप्रिय काव्य है। इसके सम्बन्ध मे एक दोहा भी प्रचलित है, यथा—

सोरठ्यो दूहो भलो, भली मरवण री बात।
जोबन छाई धण भली, तारा छाई रात॥

यह इतना लोकप्रिय है कि इसकी एक दो हस्तलिखित प्रतिया, प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थो के भण्डार-गृहो मे मिल जाना सहज है। केवल राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर में ही सवत् १६०० से १६१२ की अवधि में लिखित दस से अधिक हस्तलिखित प्रतिया उपलब्ध है। वहुत सी हस्तलिखित प्रतिया तो सचित्र है। इसके नायक नायिका भी इतने लोकप्रिय हो गये हैं कि वे व्यक्तिवाचक न रहकर जातिवाचक वन गये है। वस्तुतः 'ढोला मारू रा दूहा' राजस्थान का एक जातीय-काव्य है, जिसमें राजस्थान की आत्मा अपने सरल एव स्वाभाविक ढग से झाकती हुई दृष्टिगोचर होती है। इसमे, झुड वर्णन, करहा-वर्णन, राजस्थानी नारी का सौंदर्य-वर्णन, सभी हृदयग्राही वन पडे हैं। 'ढोला मारू रा दूहा' में राजस्थानी लोगो को रहन-सहन, उनकी जीविका, उनकी आशा-आकाक्षा, मनोभावना, सभी सुन्दर ढग से व्यक्त हुई है।

इस काव्य का इतिवृत स्वाभाविक और सरल है। इसके अधिकाश भाग मे मारवणी के प्रेम-सन्देश को अधिक स्थान मिला है। इस दृष्टि से इसे अब्दुर्रहमान के 'सन्देश राशक'[1] परम्परा का 'सन्देश-काव्य' के नाम से अभिहित किया जाये तो कोई अत्युक्ति नही होगी। मानव-हृदय के रागात्मक सम्बन्ध, विशेषकर प्रेम का इसमे मर्म-स्पर्शी वर्णन हुआ है।

२ जिन पद्मसूरि सिरि थूलि फागु[2]

रचयिता :

'सिरि थूलि भद्र फागु' के रचयिता जैनाचार्य जिनपद्मसूरि हैं। आपने सवत् १३८० मे आचार्य पद प्राप्त किया था। इनका निर्वाण काल स. १४०० है।

---

१ सन्देशरासक प्रकाशक—भारतीय विद्या भवन, वम्वई।

२ रास और रासान्वयी काव्य, सम्पादक : डॉ० दशरथ ओझा एव डॉ० दशरथ शर्मा, पृ० ८२।

रचनाकाल :

कृति के रचना-काल के विषय मे निश्चित रूप मे कुछ नही कहा जा सकता। अनुमानत इसका रचनाकाल १४वी शती का अन्तिम चरण प्रतीत होता है।

कथा-वस्तु :

स्थूलि भद्र मगध के राजा नन्द के मन्त्री शकटार का पुत्र था। पाटलीपुत्र मे कोशा नाम की एक विख्यात गणिका रहती थी। स्थूलि भद्र उसके प्रेम मे पड गये और बारह वर्ष तक वही रहे। शकटार की हत्या के पश्चात् मत्री-पद के लिए राजा नन्द ने स्थूलिभद्र को निमन्त्रित किया, पर उन्हे पितृ-हत्या की घटना से वैराग्य हो गया। उन्होने दीक्षा लेकर तपस्या करना आरम्भ किया। चातुर्मास व्यतीत के लिए वह अपनी भूतपूर्व-प्रेमिका कोशा के घर रहे। कोशा ने उनके सयम-व्रत को भग करने के अनेक प्रयत्न किये, पर वह अडिग रहे। अन्त मे कोशा ने भी अपने प्रियतम के पथ का अनुसरण करके वैराग्य ले लिया।

यह फागु काव्य-प्रकार की प्राचीनतम कृति है। इसमे स्थूलिभद्र और कोशा की प्रेम-कथा वर्णित है। प्रेम-व्यजना का वडा मर्मस्पर्शी वर्णन इस रचना की विशेषता है। यद्यपि इसमे फागु का वर्णन न किया जाकर वर्षा-ऋतु का वर्णन वडे मनोयोगपूर्वक किया गया है, किन्तु रचना शृगारिक होने से यह फागु-काव्य की कोटि मे ही आयेगी।

३ राजशेखर नेमीनाथ फागु[1]

रचयिता :

इसके रचयिता राजशेखर सूरि है।

रचना-काल :

इस कृति का रचनाकाल सवत् १४०५ है।

कथा-वस्तु :

इसकी कथा-वस्तु नेमीनाथ और राजुल के विवाह से सम्बन्धित है। इसमे राजुल के विरह-दग्ध हृदय की मार्मिक व्यजना हुई है। राजमती के विवाह-काल के प्राकृतिक सौन्दर्य का वर्णन करता हुआ कवि कहता है—

---

१. डॉ० दशरथ ओझा एवं डॉ० दशरथ शर्मा द्वारा सम्पादित रास और रासान्वयी काव्य, पृ० ८२।

अरे काइल साद सोहावरणा, मोरि मधुर वासति ।
अरे भमरा रणझरण रुण करड, किरि किन्नरि गायति ।।
अरे हरि हरि खिड मन आपणइ, वासु लडी वाजति ।
अरे सिंगा सवद ही गोपिय, सोल सहस नाचति ।।
अरे कान्हहु अन्नइ नेमिजिण, खड्डो खलिमिलि गाई ।
अरे सिंगीय जल भरे छाटयइ, एसिय रमलि कराई ।।

४. असाइत : हसाउली[1]

रचयिता :

इसके रचियता असाइत नायक है। इनका जन्म सिद्धपुर मे हुआ था। यह जाति के औदिच्य ब्राह्मण थे।

रचना-काल :

हसाउली का रचना काल वि स १४२७ है। प केश्वराम काशीराम शास्त्री के अनुसार यह रचना जैनेत्तर कवियो की सबसे प्राचीन प्रतीत होती है।

कथा-वस्तु :

इसकी कथा-वस्तु विक्रम कथा-शृखला से सम्बन्धित लोक-कथा पर आधारित है जिसमे शृगार-रस के साथ अद्भुत रस की मुख्य रूप से व्यजना हुई है।

पइठाण पुरपत्तन के राजा नरवाहन एक दिन रात्रि को स्वप्न मे कणयापुर पाटन के राजा कनुकभ्रम की पुत्री हसाउली को देखकर उसे प्राप्त करने को आतुर हो जाता है। वह मत्री मनकेसर के साथ कणयापुर पहुच कर मालिन के घर मे ठहरता है। मालिन से पता चलता है कि राजकुमारी पुरुष-द्वेषणी है और वह चौदस, पूनम तथा रवि-सोम को पाच सौ शस्त्र महिलाओ के साथ अश्वारूढ होकर शक्तिपीठ जाती है तथा पुरुषो का सहार करती है। मत्री मनकेसर देवी की मूर्ति के पीछे छिपकर तथा देवी की वाणी मे बोल कर राजकुमारी के पुरुष-द्वेषणी होने का कारण ज्ञात कर लेता है। वह उनके पूर्वभव का हस-हसनी का चित्र बनाकर राजकुमारी के हृदय मे राजा के प्रति प्रेम का उद्रेक करता है तथा फलस्वरूप दोनो का विवाह हो जाता है। यहा प्रथम खण्ड समाप्त हो जाता है।

द्वितीय खण्ड मे हसाउली से दो पुत्र-वत्सराज और हस का जन्म होना, तथा बडा होने पर हस के रूप को देखकर पटरानी लीलावती का कामातुर होना तथा

---

१ प० केशवराम काशीराम शास्त्री द्वारा सम्पादित हसाउली . (गुजराती वर्नाक्यूलर सोसाइटी, अहमदाबाद)।

उसके प्रणय-प्रस्ताव को ठुकराने पर रानी द्वारा मिथ्यारोप लगा कर दोनो भाइयो को मरवाने की आज्ञा दिलाना एव मत्री मनकेसर द्वारा दोनो को बचाकर जगल मे पहुचा देना तथा जगल मे दोनो भाइयो पर भयकर विपदाओ का आना एव दोनो का वियोग हो जाना आदि बातो का हृदय-द्रावक रोमाचक वर्णन है।

तृतीय खण्ड में राजकुमार वत्सराज और सनकभ्रम राज्य की कन्या चित्र-लेखा के प्रणय-प्रसग का वर्णन है। वत्सराज अनेक साहमिक कार्य मम्पन्न करके चित्रलेखा को प्राप्त करता है।

चतुर्थ खण्ड मे प्रतिनायक पुष्पदन्त द्वारा राजकुमार वत्सराज को छल से समुद्र मे गिराकर राजकुमारी से वियुक्त कर देने का वर्णन है। हसराज को सयोग-वश कातीनगर के पुत्र-विहीन राजा के स्वर्गवास हो जाने से वहा का राज्य मिल जाता है। अन्त मे वत्सराज भी उससे जा मिलता है। कथा सुखान्त मे समाप्त होती है।

इस प्रकार हम देखते है कि यह काव्य चार खण्डो मे विभाजित है। इसमे कुल छद-सख्या ४६८ है। लोक-कथा-तत्वो के अध्ययन की दृष्टि मे यह रचना बडी महत्वपूर्ण है।

५. नाल्ह · बीसल देव रास[1]

रचयिता

इसके रचयिता नरपति नाल्ह है। डॉ. मेनारिया के अनुसार–यह व्यास ब्राह्मण थे,[2] किन्तु डॉ. हरिकान्त श्रीवास्तव ने इन्हे भाट माना है।[3]

रचना-काल

'बीसल देव दास' के रचना काल के विषय मे भी विद्वानो मे मत-भेद है। इसकी अनेक हस्तलिखित प्रतियो मे इसका रचना-काल भिन्न-भिन्न लिखा है। किन्तु, नागरी-प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित सस्करण मे इसका रचना-काल स. १२७२ दिया हुआ है।[4] यथा-बारह सौ बहोतराहाँ मँझारि, जेठ वदी नवमी बुधुवारि। स्व० ओझाजी ने इसको सही माना है। किन्तु, डा. माताप्रसाद गुप्त एव श्री अगरचन्द नाहटा ने इसका रचना-काल चौदहवी शताब्दी का उत्तरार्द्ध मानते है। डा. दशरथ ओझा तो इस कृति को इससे भी बाद की बतलाते हुए लिखते है रचना सम्भवत.

---

१. बीसलदेव रास सम्पादक–डा माताप्रसाद गुप्त तथा श्री अगरचन्द नाहटा।

२. राजस्थानी भाषा और साहित्य, पृ ११४।

३ भारतीय प्रेमाख्यान काव्य, पृ. २८२।

४. बीसल देव रासौ (ना प्र सभा, काशी) प्रथम सर्ग छन्द ६।

सोलहवी शताब्दी के पूर्व की नही है।[1] किन्तु, बीसलदेव की भाषा को देखते हुए इसका रचना-काल १५वी शताब्दी का मध्य जान पडता है।

कथा वस्तु

इसमे बीसलदेव के विवाह, उनकी उडीसा यात्रा तथा रानी राजमति का विरह-वर्णन है।

एक प्रेपित प्रतिका के विरह का वर्णन 'बारहमासा' आदि के द्वारा प्रेमाख्यानक काव्यो की परिपाटी के अनुकूल पाया जाता है। वस्तुत. यह आख्यान उन प्रेमाख्यानो की कोटि मे आता है जिसमे प्रेम का विकास विवाह के उपरान्त पति-पत्नि के साहचर्य से विकसित होता है। अत· प. रामचन्द्र शुक्ल ने अपने हिन्दी साहित्य के इतिहास मे इस रचना का वीर-गाथा-काल की रचनाओ में उल्लेख किया है, वह उचित नही प्रतीत होता। रचना को पढने से स्पष्ट प्रतीत होता है कि इसमे वीर-गाथा काल के कोई भी लक्षण नही मिलते। यह एक विशुद्ध प्रेम-काव्य है। इसमे कुल चार खण्ड है, छद-सख्या २१६ हे तथा रचना काव्य-सौष्ठव की दृष्टि से साधारण है।

६. हीराणद विद्या विलास पवाडउ[2]

इसकी एक सचित्र हस्तलिखित प्रति रा. प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर में उपलब्ध है।

रचयिता :

'विद्याविलास पवाडउ' के रचयिता जैन मुनि हीराणद सूरि है।

रचना-काल

उपलब्ध प्रति की पुष्पिका मे इसका रचना-काल सवत् १४८५ दिया हुआ है।[3] प्रति के अन्त मे इसका लिपिकाल सवत् १६७६ आश्विन कृष्ण द्वादशी, गुरुवार दिया हुआ है।[4]

---

१. रास-रासान्वयमी, पृ २०३।

२ विद्या विलास पवाडउ (ह. लि.) रा प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रथाक १०८२७।

३ सयम लेइ सिवपुरी पुहुतउ धन-धन विद्या विलासई। भणइ हीराणद सो श्री सघ वाछित पूरउ आसई। सवत् चऊद पच्चासी आए रचीउ एह रसाल तु अ चल वधामणा ए।

जा लगई अ बरि रवि तपए ता लगइ विस्तरउ ए चरी अचल वधामणाए।

४. "इति श्री विद्या विलास सचित्र रास सम्पूर्ण सवत् १६७६ वर्षे", आसोज बदि दवादसी गुरुवारे। जावला मध्य लिखत। शुभ भवतु।"

कथा-वस्तु :

'विद्या विलास पवाडउ' मे राजकुमारी सोहग सुन्दरी और श्रेष्ठी-पुत्र धन-सागर की प्रेम-कथा का वर्णन है। यह काव्य एक प्रचलित लोक-कथा पर आधारित है जो मल्लिनाथ काव्य मे भी मिलती है।

काव्य-बंध की दृष्टि से भी इस कृति का विशेष महत्व है। इसमे सवैया, वस्तु-छद, दूहे, चौपई, आदि छद तथा राग भीमपलासी, राग सधूड, राग बसन आदि राग-रागनियो का विपुल प्रयोग हुआ है। प्रत्येक छद के अन्त मे कवि का नाम मिलता है। गद्यात्मकता इसकी विशेषता है।

तत्कालीन सामाजिक जीवन की दृष्टि से भी इस कृति का बडा महत्व है। राज दरबार, व्यापार-वाणिज्य, नारी को लेकर समाज मे होने वाले झगडे, विवाह-समारोह आदि का सजीव वर्णन इसमे प्राप्त होता है।

७ भीम : सदय वत्स वीर-प्रबन्ध[1]

रचयिता :

इसके रचनाकार कवि भीम है।

रचना-काल :

'सदयवत्स वीर प्रबंध' का रचनाकाल सवत् १४६६ है।[2]

सदय वत्स सावलिंगा की कथा भारतीय साहित्य मे बहुत प्रसिद्ध है। इस कथा को लेकर सस्कृत[3] गुजराती[4] एव राजस्थानी[5] मे अनेक काव्य-ग्रंथ लिखे गये। विभिन्न काल मे जैन, अजैन आदि अनेक कवियो द्वारा लिखे जाने के कारण इसकी कथा के कई रूपान्तर मिलते है। श्री अगरचन्द नाहटा ने इसकी प्राचीनता का सम्बन्ध,

---

१. सदय वत्स वीर-प्रबन्ध सम्पादक—डा मजुल लाल मजमूदार (सा. रा रि इन्स्टीट्यूट, बीकानेर)

२ गवेषणा (जुलाई १९६३) पृ० १२९ (श्री नटवरलाल अम्बालाल व्यास का लेख मध्यकालीन गुजराती साहित्य मे सदयवत्स कथा)

३. सदयवत्स चरित्र (हर्षवर्धन गणि रचित) र का. वि स. १५२७। (श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर अजमेर हस्तलिखित प्रति प्राप्य)

४. कीर्तिवर्धन कृत सदयवत्स सावलिगा रास, र का. स. १६९७ (जैन गुर्जर कविओ, प्रथम भाग, पृ ४८१, मो. द. देसाई)

५. सदेवन्त सावलिंगा के आठभव की कहानी। (सदयवत्स वीर-प्रबन्ध प्रस्तावना, पृ (द)

इस कथा मे उल्लिखित उज्जैन की हरसिद्धि माता, विक्रम कथा-चक्र से जोडा है ।[1] अब्दुर्रहमान कृत 'सन्देश रासक' मे भी इस कथा का उल्लेख मिलता है—

कह व ठाइ सुदयवच्छ कत्थ व नल चरिउ,
कत्थ व विविह विणोइ हि भारहु उच्चरिउ ।
कह व ठाइ आसीस सिय चारहि दय वरिहि,
रामायण अहि विय अइ कत्थ विक्कम वरि हि ॥४४॥[2]

सदेश-रासक के रचनाकाल पर विद्वानो मे मतभेद है। पुरातत्वाचार्य मुनि जिनविजय जी ने इसका रचनाकाल मुहम्मद गौरी से पूर्व १२वीं व १३वी शताब्दी अनुमानित किया है, जबकि महापण्डित राहुल-सास्कृत्यायन ने इसका समय ई० १०१० बतलाया है। श्री 'नाहटा जी' के अनुसार सन्देश-रासक का रचनाकाल सं० १४०० के आस पास का है। जायसी कृत पद्मावत मे भी सदयवत्स सावलिंगा की प्रेम-कथा का उल्लेख मिलता है। इससे विदित होता है कि यह कथा राजस्थान गुजरात तथा उत्तर-प्रदेश मे समान रूप से लोकप्रिय रही है।

कथा-वस्तु[3] :

इसमे उज्जयिनी के राजा प्रभुवत्स के पुत्र सदयवत्स और प्रतिष्ठानपुर के नृप शालिवाहन की पुत्री सावलिंगा की प्रेम-कहानी वर्णित है। कथा मे मुख्य रूप से सदयवत्स के चमत्कारपूर्ण एव साहसिक कार्यों को अधिक स्थान मिला है। अत' इस काव्य मे शृ गार रस के साथ वीर और अद्‌भुत रस का परिपरक मुख्य रूप से हुआ है।

डॉ० टसाहरी ने इस ग्रन्थ की भाषा का नाम पुरानी पश्चिमी राजस्थानी दिया है और गुजराती लेखकगण इसकी भाषा जूनी गुजराती मानते है।

८. विजयभद्र · हंसराज बच्छराज चौपई[4]

रचयिता :

इसके रचनाकार जैनमुनि विजय भद्रसूरि है।

---

१ राजस्थान भारती (अप्रेल १९५०) पृ ४१ (सदयवत्स सावलिंगा की प्रेम-कथा श्री अगरचन्द नाहटा का लेख)

२. अब्दुल रहमान कृत सन्देश-रासक · सम्पादक—मुनि जिनविजय तथा प्रो० हरिवल्लभ भायाणी (भारतीय विद्याभवन, बम्बई) पृ १९।

३ विस्तृत कथा-वस्तु के लिए देखिए—गवेषणा (जुलाई, १९६३) मे श्री नटवरलाल अम्बालाल व्यास का लेख . मध्यकालीन गुजराती मे सदयवत्स-कथा।

४. रास और रासान्वयी काव्य पृ० ५७।

रचना-काल :

हसराज बच्छराज चौपई का रचना-काल स० १४६६ है।

कथा-वस्तु :

मध्यकालीन लोक-कथाओ मे इसकी कथा बडी लोकप्रिय रही है। इस लोक-कथा को लेकर विभिन्न कालो मे बहुत से काव्य-ग्रन्थो का सृजन हुआ। इसमे हस और बच्छराज, दो भाईयो के अद्‌भुत शौर्य एवं प्रेम की मर्म-स्पर्शी गाथा है जो इनके अद्‌भुत साहस, धैर्य एव प्रेमनिष्ठा को व्यक्त करती है। अलौकिक घटनायें अद्‌भुत रस का सचार करने के लिए पर्याप्त हैं।

६. माणक्य सुन्दर सूरि : मलय सुन्दरी कथा

रचयिता :

मलय सुन्दरी प्रेमाख्यान के रचयिता भी आंचलगच्छीय वही माणक्य सुन्दर सूरि हैं, जिन्होने पृथ्वीचन्द्र वाग्विलास की रचना की है।[1]

रचना-काल :

मलय सुन्दरी कथा के रचना-काल के विषय मे निश्चित रूप से कुछ नही कहा जा सकता, किन्तु इसकी रचना शैली एव साहित्यिक-प्रौढता के विश्लेषण से इतना अवश्य प्रतीत होता है कि इसका रचना-काल रचनाकार की अन्य कृति पृथ्वीचन्द्र वाग्विलास (स० १४७८) के रचना-काल से पूर्व है।

कथा-वस्तु :

'मलय सुन्दरी कथा' मे चन्द्रावती नगरी के राजा वीरधवल की पुत्री राजकुमारी मलय-सुन्दरी तथा पृथ्वी स्थानपुर के राजा सूरजपाल के पुत्र महाबल की प्रेम-कथा वर्णित है। चन्द्रावती नगरी मे गुप्त प्रवास के समय महाबल महल की गोख मे बैठी हुई मलय-सुन्दरी के रूप को देखकर आसक्त हो जाता है और मलय सुन्दरी भी राजकुमार के रूप को देखकर मोहित हो जाती है तथा मन ही मन उससे विवाह करने का सकल्प कर लेती है। प्रेम-सन्देशो के आदान-प्रदान के पश्चात् महाबल गुप्त रूप से मलय सुन्दरी के महल मे पहुचता है और प्रणय-निवेदन करता है। राजकुमारी भी उसे अपना हृदय-समर्पित करके उसे लक्ष्मीपुज हार पहिना देती है। कालान्तर मे प्रेमी-प्रेमिका के मिलन मे कई भयकर बाधाये आती

---

१ राजस्थानी गद्य साहित्य—उद्‌भव और विकास डॉ० शिवस्वरूप शर्मा, पृ स ५२।

है, किन्तु सम्यक् बुद्धि, धैर्य, कर्म-निष्ठा एव पराक्रम से उन बाधाओ को पारकर लिया जाता है और दोनो का सुखद मिलन हो जाता है। मुनि द्वारा धार्मिक-उपदेश के बाद कथा सुखान्त मे समाप्त होती है।

'मलय सुन्दरी कथा' मे अनेक अन्तर्कथाये दी गई हैं जिनका उद्देश्य कर्म-सिद्धान्त, पुर्वभव, मानव-कर्त्तव्य, एक पत्नि-व्रत, पतिपरायणता आदि विषयो का रहस्य सुगम बनाना है। चमत्कारिक एव अलौकिक घटनाओ की भी बहुलता पाई जाती है।

इस कथा-वस्तु का आधार प्रचलित लोक-कथा ही है। प्राकृत कथा-सग्रह मे सुन्दरी आदि की प्रेम-कथाओ के साथ मलय सुन्दरी की कथा भी मिलती है। प्राकृत भाषा मे मलय सुन्दरी चरित्र को लेकर एक स्वतंत्र काव्य की भी रचना की गई थी जिसका रचना-काल अज्ञात है। सस्कृत भाषा में भी आचार्य श्री जियतिलक सूरि द्वारा रचित 'मलय सुन्दरी चरित्र' का उल्लेख मिलता है। इससे विदित होता है कि जैन-प्रेमाख्यानों मे 'मलय सुन्दरी चरित्र' एक लोक-प्रिय कथानक रहा है।

१० माणक्य सूरि : पृथ्वीराज वाग्विलास[१]

रचयिता :

इसके रचयिता आंचल गच्छीय माणिक्य सूरि है। यह आचार्य श्री मेरुतुंग के शिष्य थे। इनकी अन्य रचनाये गुणवर्मा-चरित्र, सत्तर-भेदी, पूजा-कथा, चतुःपूर्वी-कथा, शुकराज-कथा, मलय सुन्दरी कथा तथा सविभाग व्रत-कथा है।

रचना-काल :

पृथ्वीराज वाग्विलास का रचनाकाल स० १४७८ है।

कथा-वस्तु :

पृथ्वीराज वाग्विलास मे महाराष्ट्र के पहुगणपुर पट्टण के राजा पृथ्वीचन्द्र तथा अयोध्या के राजा सोमदेव की पुत्री रत्नमजरी की प्रणय-कथा है। रत्नमजरी को प्राप्त करने की दैवी-प्रेरणा पृथ्वीचन्द्र को स्वप्न मे मिलती है। वह राजकुमारी के स्वयवर मे ससैन्य पहुचकर वर माला प्राप्त करता है। इसी अवसर पर वैताल माया का प्रसार कर रत्नमजरी को ले जाता है। किन्तु, अन्त मे पृथ्वीचन्द्र देवी की अनुकम्पा एव सहायता से उसे पुन प्राप्त करता है।

---

१. डॉ० शिवस्वरूप शर्मा अचल · राजस्थानी गद्य साहित्य-उद्भव और विकास, पृ. ५२।

पृथ्वीराज वाग्विलास राजस्थानी गद्य-साहित्य मे कलात्मक गद्य का सर्व-प्रथम उदाहरण है। यह राजस्थानी की सुप्रसिद्ध वचनिका गद्य शैली मे लिखी गई है। वस्तु-वर्णन इस रचना की विशेषता है जिसमे वस्तु-परिगवन शैली का प्रयोग किया गया है, किन्तु यह अरोचक और मन को उकता देने वाली न होकर, सरस और सजीव है। सात द्वीप, सात क्षेत्र, सातनदी, छह पर्वत बत्तीस सहस्त्र देश, नगर, राजसभा, वन, सेना, हाथी, घोडा, रथ, युद्ध, स्वयवर, लग्नोत्सव, स्वप्न आदि का विस्तृत वर्णन लेखक ने किया है। ऋतु-वर्णन और प्रकृति-चित्रण भी स्वाभाविक और रोचक बन पडा है। अनुरणनात्मक शब्दो का चयन, रूपक एव उपमाओ का हृदय-ग्राही प्रयोग इसकी विशेपता है।

भाषा की दृष्टि से इस ग्र थ का महत्व बहुत अधिक है। डॉ. शिव स्वरूप शर्मा 'अचल' ने इस ग्र थ की भाषा को राजस्थानी का सबसे पहला साहित्यिक रूप माना है।[1] सम्पूर्ण रचना मे अनुप्रास युक्त पदावली का प्रयोग किया गया है। राजस्थानी भाषा की कोमलता एव मनोहारिता के उदाहरण इस ग्र थ मे देखे जा सकते है।

११. विनय विजय नेमीनाथ भ्रमर गीता[2]

रचयिता :

इस कृति के रचनाकार जैनमुनि विनय विजय है।

रचना-काल :

इसका रचनाकाल १५वी शताब्दी माना जाता है।

कथा-वस्तु :

यह चतुर्भु जदास कृत भ्रमरगीत शैली मे लिखी गई रचना है। भ्रमर गीता मे नेमीनाथ के वियोग मे सतप्त राजुल की कथा का मार्मिक-वर्णन है। कवि ने नव युवती राजुलि के शारीरिक-सौदर्य एव विरह-व्यथा का बडा ही मनोहारी वर्णन किया है यथा—

फाग

ससि वमणी मृग नयनी, नवसति सजि सिणगार।
नव-यौवन सो वन वन, अलि अपच्वर अवतार॥

---

१ डॉ० शिवस्वरूप शर्मा 'अचल' : राजस्थानी गद्य साहित्य उद्‌भव और विकास, पृ ५४।

२. डॉ० दशरथ ओझा एव डॉ० दशरथ शर्मा रास और रासान्ययी काव्य पृ ७८।

अंजन अंजित अखडी, अधर प्रवाला रंग।
हसित लसित लीला गति, मदभरी अंग अनंग॥
रतन जडित कुचुक कस,ख जित कुच दोइ सार।
एकाउलि मुगताउलि, टकाउलिप गलि हार॥

ऐसी सुन्दरी नव-यौवना राजुलि नेमीनाथ के वियोग मे तडपती हुई रोदन कर रही है—

दोहला दिन गया तुम्ह पाखइ कषे ते सोहणि देव दाखइ।
आजहु दुखन पार यामी, नयन मेलावडि वडि मिल्यउ स्वामी।
रयणी न आवी नीदडी, उदक न भावइ अन्न।
सुनी भमिए देहडी, नेमी सु लागु मन्न।

राजुल अपने प्रियतम की प्रतीक्षा मे किस प्रकार से आतुर है? एक विरहणी की मनोदशा का हृदय हारी वर्णन देखते ही बनता है—

कत विना स्या मन्दिर, कंत विना सी सेज।
कत विना स्या भोजन, कत विना स्या हेज।
नीद न आवि विहरण, देयु सुहेण नाह।
व्यापीयडो पीउ-पीउ करि, दूणु दिवली दाह॥

राजुलि की इस विरह-पीडा से नेमीनाथ का हृदय पसीज उठता है और वह राजुल के समक्ष आ बैठते हैं—

नेमिजी राजुलि प्रीतिपाली, विरहणी वेदन सव टाली।
सुख घणा भुगति वेगि दीधा, नेमी विनय ना काज सीधा॥

इस प्रकार हम देखते है इसमे राजुलि की यौवना-स्थिति, विरह स्थिति-एव मिलन-स्थिति का वडा मनोरम वर्णन हुआ है।

१२. परमाणंद . ओखा हरण

रचयिता :

कृति की पुष्पिका से विदित होता है कि ओखाहरण के रचयिता बडौदा निवासी परमाणद भट्ट हैं।[1]

रचना-काल :

इसका रचनाकाल स १५१२ है।

---

१ "वीर क्षेत्र वडोदह गुजरात मधे गांम भट प्रेमानन्द ओखाल तण हरण॥ कडवा ५० समाप्तम्। शुभ भवतु॥"

इसकी एक हस्तलिखित प्रति रा प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर मे उपलब्ध होती है जिसका लिपिकाल १९वी शती है। प्रति का हस्तलेख कामदारी लिपि मे लिखा हुआ मिलता है जो बहुत अशुद्ध हो गया है।[1]

कथा-वस्तु :

इस की कथा हरिवश पुराण मे वर्णित उषा की कथा पर आधारित है। इसमे बाणासुर की पुत्री उषा और श्री कृष्ण के पुत्र अनिरुद्ध की प्रणय कथा का बडा सरस और सजीव वर्णन है। शोणितपुर के अधिपति बाणासुर की पुत्री उषा ने एक दिन स्वप्न मे अनिरुद्ध को अपने साथ रमण करते देखा[2], किन्तु वह उन्हे पहिचान न सकी और विरह ज्वर से पीडित होकर प्रलाप करने लगी। उसकी सखी चित्रलेखा ने उसे सन्तावना दी और विश्व भर के सुन्दर युवको के चित्र बना कर उसे दिखलाये। उषा ने उन चित्रो मे से अनिरुद्ध का चित्र पहिचान लिया और उसका परिचय भी जान लिया। उषा के विशेष अग्रह पर चित्रलेखा सोते हुए अनिरुद्ध को उठा लाई और उषा के महलो मे पहुचा दिया। जब बाणासुर को यह समाचार ज्ञात हुए तो वह अनिरुद्ध को मारने के लिए उद्यत हुआ, किन्तु श्री कृष्ण को यह समाचार मिल चुके थे। अत. वह ससैन्य शोणितपुर पहुच गये और बाणासुर को मारकर उषा के साथ अनिरुद्ध को लेकर लौट आये।

यह रचना ५० कडवा मे समाप्त हुई है। इसकी भाषा गुजराती प्रभावापन्न राजस्थानी है। कवि ने उषा के विरह का हृदय स्पर्शी वर्णन किया है[3] तथा हरिवश पुराण के इति वृतात्मक स्थलो को छोडकर काव्यात्मक दृष्टि से भावात्मक प्रसगो का ही चयन किया है।

---

१. परमाणद भट्ट कृत ओखा हरण (ह. लि) रा प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्र थाक–११४७७।

२. सामेरी सेजे सुते, सपनोभयो, पीआ अे ग्रही छे मारी बाऊ।
आचती जब सीने जगी, तब पीअ कु ना देखु पास ।।३।।
ओखाहरण (ह लि) रा प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्र थाक–११४७७।

३ चतुराचक्षु ने चोली ने जोती। पछे नेत्र आसु भर रोती ।।
जगीनार भुज दे दीने लिलाटे, बेठी ने विरहा नले बाइरे।
थर थर धूजे ने काइ नव सुजे, रुव अे आसू ढालिरै ।।

१३ दामो : लखमसेन पदमावती कथा[1]

रचयिता :

लखमसेन पद्मावती कथा के रचयिता कविदामो के जीवन वृत के विषय मे अभी कुछ विशेष पता नही चल सका है। रचना की भाषा के आधार पर केवल यह अनुमान लगाया जा सकता है कि वह राजस्थान या गुजरात का निवासी रहा होगा। डॉ. सुकुमार सेन कवि के पूर्वजो को काश्मीर निवासी बतलाते हैं, जिसका आधार सम्भवत' 'काश्मीर हृ हुतो नीसरई' है।[2]

रचना-काल :

कवि के कथनानुसार इसका रचनाकाल सवत् १५१६ विदित होता है।[3]

यद्यपि कवि दामो ने इस वीर-रस को कथा कहा है, किन्तु कथानक का मूल उत्स नायक-नायिका का प्रेम है तथा शृगार रस की प्रधानता है। वीर रस और अद्भुत रस का भी सुन्दर परिपाक हुआ है। कवि द्वारा इसको वीर-कथा कहने का कारण तत्कालीन प्रवृत्ति का प्रभाव अथवा जैन कथाओ की विशिष्ट सज्ञा का अनुसरण हो सकता है।

कथा-वस्तु :

सामौरगढ के राजा हसराय की पुत्री पद्मावती का यह प्रण था कि जो व्यक्ति १०१ राजाओ को मार देगा, उसके साथ वह विवाह करेगी। एक जोगी पद्मावती को प्राप्त करने के लिए प्रयत्न करता है तथा ९९ राजाओ को एक कुए मे डाल देता है। लखनौती का राजा लखमसेन भी उसके चुगल मे फस जाता है और जोगी उसे भी कुए मे डाल देता है। सयोग वश लखमसेन को कुए मे से एक सुरग का मार्ग मिल जाता है जो सामौरगढ पहुचता है। राजा अन्य राजाओ को मुक्त कर देता है और स्वय सामौरगढ पहुच जाता है। वहा वह जोगी का वेश

---

१ लखनसेन पद्मावती कथा : सम्पादक–नर्मदेश्वर चतुर्वेदी, परमिल प्रकाशन, प्रयाग।

२. डॉ० सुकुमार सेन इसलामी वगला साहित्य।

३ सवत् पनरइ सोलोत्तरा मझारि।
जेष्ठ वदी नवमी बुद्धवार॥
सप्त तारिका नक्षत्र द्रद जाणि।
वीर कथा रस करू वखाण॥
लखमसेन पद्मावती कथा की भूमिका।

बनाकर पद्मावती के महल मे पहुचता है और दोनो मे प्रेम हो जाता है पद्मावती अपने स्वयवर में ब्राह्मण-वेशधारी राजा के गले में वरमाला डाल देती है जिससे उसका पिता कुपित हो जाता है, किन्तु राजा लखमसेन अपना पराक्रम दिखलाकर राजा को पराजित कर देता है और पद्मावती के साथ विवाह कर लेता है।

सिद्ध राज जोगी को जब यह पता चलता है तो वह राजा का पीछा नही छोडता। अपनी जादुई शक्ति से उसे वशीभूत कर लेता है और पद्मावती को अपने चगुल मे फसा लेता है। राजा दु खी होकर निकल जाता है तथा सागर मे डूबने से हरिया सेठ को बचाकर कपूर धारा नगरी मे पहुचता है। उस पर राजा चन्द्र सेन की कन्या राजकुमारी चन्द्रावती मोहित हो जाती है। राजा लखमसेन अपने पराक्रम से राजा को प्रसन्न करके चन्द्रावती से विवाह कर लेता है। उधर पद्मावती जोगी के साथ राजा को ढूँढती हुई वहा पहुच जाती है। राजा जोगी को यहा भी देखकर, क्रोधित हो उससे लडने लगता है। सघर्ष मे दोनो ही जादुई शक्तियो का प्रदर्शन करते हैं। अन्त मे राजा लखमसेन जोगी की मृत्यु का रहस्य ज्ञात करके जोगी को मार डालता है। राजा दोनो रानियो के साथ आनन्द पूर्वक रहता है।

सक्षेप मे 'लखनसेन पद्मावती कथा' की यही कहानी है। असाम्प्रदायक प्रेमाख्यानो मे यह रचना सम्भवत. सबसे प्राचीन है। श्री उदयशकर शास्त्री इसे अर्द्धमागधी कथाओ की कडी होने का अनुमान करते हैं। प० परशुराम चतुर्वेदी एव डा० सुकुमार सेन के अनुसार यह अपभ्र श की किसी प्रेम-कहानी पर आधारित है। योगी के चमत्कार पूर्ण कार्यों से रचनाकार पर नाथपथियो का प्रभाव-लक्षित होता है। कथानक घटना–प्रधान है। कथानक रूढियो एव चमत्कारपूर्ण घटनाओ के सहारे कथानक का विकास होता है। नायिका के रूप–वर्णन, दृश्य–विधान, वस्तु–वर्णन मे कवि की सूक्ष्म चित्रण–शक्ति का पता चलता है।

१४. जनार्दन : उषा हरण

रचयिता :

उषा हरण के रचनाकार जनार्दन ब्राह्मण है।

रचना-काल :

इसका रचना काल स० १५५४ है।

कवि जनार्दन ने उषा और अनिरुद्ध के प्रणय प्रसग को लेकर विविध देशियो की चाल मे ३२ कडवो मे 'उषाहरण' की रचना की। अत जनार्दन द्वारा रचित 'उषाहरण', विस्तार की दृष्टि से परमाणद के ओखारहण से लघु ग्रथ है।

कथा वस्तु :

इसकी कथा-वस्तु परमाणद के ओखाहरण की कथा-वस्तु के समान ही है।

ग्रथ की भापा गुजराती प्रभावापन्न राजस्थानी है।

१५. गणपति · माधवानल कामकन्दला प्रबंध[1]

रचयिता :

माधवानल कामकन्दला प्रबध के रचयिता गणपति जाति से कायस्थ थे। इनके पिता का नाम नरसा था और बडोच जिले के आमोद (आम्रपद) के रहने वाले थे।[2]

रचना-काल :

इसका रचनाकाल सवत १५७४ है।

'माधवानल कामकन्दला प्रबध' २५०० दोहो (दोग्धक) में लिखा एक विशुद्ध प्रेमाख्यानक प्रबध-काव्य है, जो कवि के रचना–कौशल, उसकी बहुज्ञता, प्रबध–पटुता एव रसज्ञता का परिचायक है। इसकी सम्पूर्ण कथा आठ अगो मे विभाजित है। जिसमें मुख्य रूप से माधव ब्राह्मण तथा कामकन्दला गणिका की प्रेम–कथा वर्णित है। कवि ने ग्रथ का प्रारम्भ तत्कालीन प्रचलित मान्वता को छोड कर, मगलाचरण मे सरस्वती एव गणेश की वन्दना न करके, कामदेव की वन्दना की है।[3]

कथा वस्तु :

माधव रुक्मागदपुरी के राजा रायचन्द के राजपण्डित कुरगदत्त का पुत्र था। जब वह पाच वर्ष का हुआ तब एक यक्षणी उसे उठाकर ले गई तथा पुष्पावती के राजा गोविन्दचन्द्र के पुरोहित ने उसका पालन–पोषण किया। जब वह युवक हुआ तो उसके रूप पर पटरानी रुद्रदेवी मुग्ध हो गई और माधव के सम्मुख काम–

---

१ माधवानल कामकन्दला प्रवध . सम्पादक—एम आर. मजूमदार, (ओरियन्टल इन्स्टीट्यूट, बडौदा, १९४२)

२ कवि कायस्थ कथा कहई, नरसा सुत गणपति।
ढाढर कठइ ढुकड, आम्रदरि अधिवास।
मध्य पथि मही नर्मदा, जल कूणि जल राशि ॥१६॥
माधवानल कामकन्दला प्रवध, प्रथम अग।

३ कुअर कमला रति रमण, मयण महामड नाम।
पकजि पूजिय पत्र–कमल, प्रथम निकरुँ प्रणाम ॥

प्रस्ताव रखा। इस पर माधव ने रानी की भर्त्सना की जिससे रुष्ट होकर रानी ने माधव पर दुश्चरित्रा का मिथ्यारोप लगाकर राज्य से निकलवा दिया। जब वह रुक्मागदपुरी पहुँचा। तो वहाँ की युवतियाँ भी उसके रूप-सम्मोहन से कामातुर हो गई, अत माधव को वहाँ से भी निकलना पड़ा। घूमता-घूमता वह कामावती नगरी पहुँचा। वहाँ उसने अपनी कला-दक्षता से प्रभावित कर राजा कनकसेन की राज सभा मे उच्च स्थान प्राप्त कर लिया। माधव राज सभा मे नृत्य करती गणिका कामकन्दला पर इतना मुग्ध हो गया कि उसने राज्य द्वारा प्रदत्त पुरस्कार कामकन्दला को दे दिया, इससे राजा ने अपना अपमान समझकर उसे अपना राज्य छोडने का आदेश दे दिया। कामकन्दला माधव के प्रेम-पाश मे बध चुकी थी। किन्तु राजकोप के भय से माधव वहाँ रुक नही सकता था। अतः वह कामकन्दला को विरह मे तडपती छोड कर वहाँ से चल दिया[1] और वन के कष्टो को भोगता हुआ राजा विक्रमादित्य की राजधानी उज्जैनी मे पहुँचा। वहाँ महाकाली के मन्दिर मे, भीत पर अपनी विरह-वेदना का श्लोक लिखकर मूर्छित हो गया। पर दुःख भजनकारी राजा विक्रमादित्य को जब गणिका से उसकी विरह-वेदना का कारण ज्ञात हुआ तो वह माधव को कामकन्दला दिलवाने के लिए उद्यत हो गया। किन्तु उन दोनो प्रमी-प्रेमिका को मिलाने से पूर्व राजा ने दोनो के सच्चे प्रेम की परीक्षा लेने के लिए उनको एक दूसरे की मृत्यु के मिथ्या समाचार कहे जिसे सुनकर दोनो की मृत्यु हो गई। इस पर राजा दुःखी होकर जब आत्महत्या करने लगा तो देवी ने प्रकट होकर दोनो, प्रेमी-प्रेमिका को पुनर्जीवित कर दिया। राजा विक्रमादित्य ने कामसेन से युद्ध करके गणिका कामकन्दला माधव को दिलवादी।

कथा की समाप्ति दोनो प्रेमियो के मिलन तथा भोग विलासमय जीवन के वर्णन एव प्रेम की अन्यय निष्ठा के साथ होती है—

> माधव महिला थी ठहई, महिला माधव दीढ।
> अन्यो अन्यइ श्या थमा, चटकु चोल मजीठ॥

मध्ययुगीन प्रेमाख्यानक काव्यो में 'माधवानल कामकन्दला प्रबध' का अन्यतम स्थान है। भाव-पक्ष और कला-पक्ष, दोनो ही उत्तम बन पडे है। प्रेम का जैसा निश्छल रूप इस काव्य में मिलता है, वैसा अन्यत्र मिलना दुर्लभ है। श्री एम आर. मजूमदार का कथन है कि इस ग्रथ मे अद्वितीय रोचकता के साथ

---

१. जिम जिम जाइ जामिनी, आवि उषा कालि।
तिम तिम तरुणी टलवलइ, मछि पड़ी जिम जालि॥

सच्चे प्रेम का प्रतिपादन इस रूप मे हुआ है कि प्रेमी युगल एक दूसरे के पूरक जान पडते है ।[१] इसमे, गणिका कामकन्दला के चरित्र का विकास, उसकी सच्ची प्रेम–निष्ठा के कारण सती दमयन्ती और सीता के चरित्र तक पहुँच गया है ।[२] यहाँ प्रेम एक पक्षीय न होकर उभय पक्षी है । अब तक अधिकाश रचनाओ मे नायक के विरह, मे नायिका के विरह–दग्ध हृदय का चित्रण 'बारहमासा' के वर्ण द्वारा किया जाता रहा है, किन्तु इसमे नायक के विरह सतप्त हृदय का चित्रण 'बारहमासा' के वर्णन द्वारा किया जाता रहा है, किन्तु इसमे नायक के सतप्त हृदय का चित्रण 'बारहमासा' के द्वारा किया गया है जो कवि की मौलिक सूझ बूझ का द्योतक है । नायिका के नखशिख आदि का वर्णन तो बहुत हुआ है, पर पुरुष–सौन्दर्य का चित्रण गणपति की विशिष्टता है । समस्त काव्य मे, संयोग, वियोग के मार्मिक चित्रण के अतिरिक्त नायक-नायिका की मानसिक दशाओ का सूक्ष्म चित्रण किया गया है, वह कवि की पर्यवेक्षण–शक्ति का परिचायक है । मार्मिक स्थलो की पहिचान, सूक्ष्म निरीक्षण शक्ति, चित्रोपमता, इस काव्य के विशेष गुण है । महावन में विषधरों आदि की विभिन्न जातियाँ एव वनस्पतियो आदि के वर्णन–बाहुल्य से कवि की बहुज्ञता का पता चलता है । नाना प्रकार के व्यजनो, अश्वो, औषधियो आदि के सैकडो भेदो का मानो 'कटलोग' ही बन गया है । समस्या-विनोद अथवा प्रहलिका की रचनाओ से कवि के बुद्धि–कौशल का पता चलता है ।

'माधवानल कामकन्दला प्रबध' का न केवल मध्यकालीन प्रेमाख्यानक–काव्य होने की दृष्टि से ही महत्व है, बल्कि तत्कालिन सामाजिक स्थिति को समझने के लिए समाज शास्त्रीय एव लोक–कथा तत्वो के अध्ययन की दृष्टि से भी इसका बडा महत्व है ।

१६. छीहल : पंच सहेली रा दूहा[3]

---

1 'Madhavanal Kamkandla Katha however has unique interest of its own where true love is illusterated, though two persons who were each another's counter part as it were.'

२. माधव ! करि माहरु कहिउ , जु मुझ वछइ खेम ।
सास लगइ सेवा करिसि, सीत दमयन्ती जेम ।।

३ पच सहेली रा दूहा (ह. लि.) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रथाक ८५६२, इसका लिपिकाल स० १७९५ है–'इति श्री पच सहेली रा दूहा सपूरण । १७९५ रा सावण सुद १५ बुध लि. प० गुलाबराय हरिदासात ।'

कवि छीहल कृत पच सहेली काव्य अभी तक अप्रकाशित ही है। इसकी हस्तलिखित प्रतियाँ अनूप सस्कृत लाइब्रेरी बीकानेर[१], रा. प्रा. प्रतिष्ठान, जोधपुर, एव चित्तौडगढ निवासी श्री बालचन्द के पास उपलब्ध हैं।

रचयिता :

यह कृति अपने रचनाकार के जीवन परिचय के बारे मे मौन है। श्री देसाई ने इसके रचयिता छीहल को जैनेतर कवि बताया है[२] जबकि श्री कस्तूरचद कासलीवाल के अनुसार यह जैन कवि हैं।[3]

रचना-काल :

पच सहेली का रचना-काल स० १५७५ है। रचना-काल के विषय में कवि की स्वय की उक्ति इस प्रकार है :—

पनरे सै पीच्योतरै, पुन्यम फागुण मास।
पच सहेली वर्णवी, कवि छीहल प्रगास ॥६७॥

'पंच सहेली रा दूहा' अब्दुर्रहमान कृत प्राकृत के 'सन्देश-रासक' की परम्परा का राजस्थानी भाषा मे लिखा एक मधुर-शृगार-काव्य है जिसमे प्रोषित पतिका नायिकाओ की अपने पतियो के वियोग से पीडित अवस्था का बडा सरस वर्णन किया है।

कथा-वस्तु :

चन्देरी नगरी के सरोवर पर कवि पाच सहेलियो को देखता है।[४] ये पांचो

---

१. पच सहेली री बात (ह. लि.) अनूप सस्कृत लाइब्रेरी, बीकानेर, गुटका नं० ७२, लि. का. १८७५.

२. जै गु क भाग ३ (जैनेतर कविओ) पृ २१२६.

३ राजस्थान के जैन-शास्त्र भण्डारो की ग्रथ-सूचि, भाग ३ प्रस्तावना।

४ 'एक मालण, एक तम्बोलनी, तीजी छीपण नार।
चौथी जात कलालणी, पचमी सुनार ॥८॥
तीण मे पच सहेलियाँ, बैठी बाहा जोड।
ना वे गावे, ना हँसे, ना मुख बोलै बोल ॥९॥
नैणा का जल ना दियो, ना गल पैहरयो हार।
मुख तबोल न खाइयो, ना कछु कियो सिंगार ॥१०॥

सहेलियाँ अपनी विरह–व्यथा एक दूसरी को सुनाती है।[१] जब दूसरी बार छीहल उनको देखता है तो उनका रग कुछ अन्य ही दृष्टिगोचर होता है। उसको पता चलता है कि इन सबके प्रियतम परदेश से आ गये है। तदनन्तर सयोग–अवस्था का उल्लासपूर्ण चित्रण किया जाता है।

'पच सहेली रा दूहा' ६७ छन्दो का अनूठा सरस लघुकाव्य है। इसकी विशेषता यह है कि इसकी नायिकाये सामान्य–वर्ग की है जिनकी विरह–अवस्था का वर्णन करने मे कवि ने उनके पेशे से सम्बन्धित उपमाओ का उपयोग किया है। यह कवि की सूक्ष्म-निरीक्षण की सूझ को प्रकट करता है।

१७ माधव . माधवानल कामकन्दला रस-विलास[२]

माधवानल कामकन्दला की लोक-कथा मध्ययुग मे इतनी लोकप्रिय रही है कि इस पर भिन्न भिन्न काल मे विभिन्न कवियो ने सस्कृत, प्राकृत, राजस्थानी, अवधि आदि भाषाओ में काव्यो का सृजन किया है।

रचयिता :

माधवानल कामकन्दला की एक कृति माधव नामक कवि द्वारा रचित हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग के सग्रहालय मे मिली है। कवि के जीवन के बारे मे कोई परिचय उपलब्ध नही होता।

रचना-काल :

कृति की पुष्पिका से इसका रचना-काल स० १६०० ज्ञात होता है।[३]

---

१ पहिली बोली मालिणी, मोकू दुख्ख अनन्त।
बाला जोबन छडिकर, गए देसाउरिकत ॥
तन-तरवर फल लागिया, दोइ नारग रस पूर।
सूकण लागी वेलडी, सीचण हारा दूर ॥
मालिण अपणा जीव का बिउरा कह्या विचार।
अब कुछ दुख्ख शरीर का, अखै तबोलिण नार ॥

—पच सहेली रा दूहा

२. मरुभारती · (जुलाई १६५८, अक २) श्री अगरचन्द नाहटा का लेख।

३. माधव कामा मनै चौपई। नेह रीति जाके मन थेई।
जैइिना सदा मनोरथ मले। मन वाछित सुख सम्पत्ति मिलै ॥४३५॥
सम्वत् सोला सै वरसि, जेसलमेर मझारि।
फागन म्यसि सुहावनै, करि बात विसतारि ॥४३६॥

माधव कृत माधवानल कामकन्दला रामविलास की छद सस्या ४३६ है। जो हस्तलिखित प्रति प्राप्त हुई है, उसका उत्तरार्द्ध खण्डित है। लिपिकाल सवत् १७०४ है।[१]

१८ चतुर्भुजदास : मधुमालती[२]

रचयिता :

हिन्दी-साहित्य मे चतुर्भुजदास के अनेक कवियो का उल्लेख है और इसी भाति से मधुमालती की रचनाये भी कई प्राप्त होती है। प्रस्तुत मधुमालती के रचयिता चतुर्भुजदास अष्ट छाप के कवि चतुर्भुजदास से भिन्न हैं। यह जाति से कायस्थ थे। केवल एक प्रति को छोडकर शेष हस्तलिखित प्रतियो में इनके पिता का नाम 'नाथा' मिलता है। यथा—

कायथ नैगम कुल अहै, ना था सुत हुए राम।
तनय चतुर्भुजदास के कथा प्रकासी ताम ॥६४६॥

किन्तु राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर मे उपलब्ध केवल एक हस्तलिखित प्रति मे उक्त दोहे का पाठान्तर निम्नलिखित है—

कायथ वेगम कुलहू है, वाथा सुन भइया राम।
तिनह चुतरभुज तास के, कथा प्रकासी ताम ॥[3]

नाथा-सुत के स्थान पर रेखाकित 'वाथा सुन' लिखा गया है जिसका अर्थ बात सुनने से है। ऐसा लगता है लिपिकार ने भूल वश ही यह अशुद्धि करदी है।

---

१. "इति श्री माधवानल कामकदला रस विलास सम्पूर्ण ॥ सवत् १७०४ का आसाढ सुदि १५ लिषत जैराम वाचै सुनै जैहि नै हमारो श्री हरि सुमरित बारबार घनी प्रीति सेती वच्यौ छै जी। भूलौ चूकौ छिमा की जै जी।"

२ (क) चतुर्भुजदास कृत मधुमालती वार्ता तथा उसका माधव शर्मा कृत सशोधित रूपान्तर सम्पादक—डॉ० माताप्रसाद गुप्त (काशी नागरी प्रचारिणी सभा)।

(ख) सचित्र मधुमालती : सम्पादक—प० लक्ष्मीनारायण शर्मा, रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, (प्रेस-कॉपी)।

३. मधुमालती वारता (ह. लि.) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रंथाक—४६१५।

रचना-काल :

डॉ० हरिकान्त श्री वास्तव ने इसका रचना-काल सवत् १८३७ के आस-पास लिखा है[1], जो ठीक प्रतीत नही होता। वस्तुत सवत् १८३७ को रचना-काल नही मानकर लीपि-काल ही मानना चाहिये। मधुमालती की अनेक हस्तलिखित प्रतिया मिलती है जिनमे सबसे पुरानी हस्तलिखित प्रति (साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग) का लिपिकाल सवत् १७०७ है। इसके अतिरिक्त रा प्रा विद्या प्रतिष्ठान की जयपुर शाखा मे प्राप्त चार प्रतिलिपियो मे सबसे पुरानी प्रति का लिपिकाल सवत् १७७७ मिलता है।[2] इससे स्पष्ट है कि मधुमालती का रचनाकाल सवत् १७०७ से पूर्व तो निश्चित रूप से है ही। सवत् १७०७ वाले गुटके मे माधव शर्मा कृत माधवानल कामकन्दला का रचना-काल सवत् १६०० दिया गया हे। इसी गुटके मे चतुर्भुज की मधुमालती है जिसका सशोधन माधव शर्मा ने किया था। अत. इसका रचनाकाल सवत् १६०० के आस-पास ठहरता है।

कथा-वस्तु[3] .

चतुर्भुजदास कृत मधुमालती की कथा-वस्तु प्रसिद्ध सूफी प्रेमाख्यान-काव्य मझन की मधुमालती एव दक्खिनी हिन्दी के कवि नुसरती के गुलशन ए इश्क की प्रेम-गाथा से सर्वथा भिन्न है।

लीलावती नगर के राजा चन्द्रसेन की पुत्री मालती अति रूपवती थी। उस राजा के तारनसाह नामक मत्री का पुत्र मधु भी वहुत रूपवान था। उसके रूप को देखकर नगर की युवतिया अपना सयम खो बैठती थी। मधु और मालती एक ही पाठशाला मे पढते थे। एक दिन मधु के रूप को देखकर मालती मोहित हो गई और उसे अपना प्रणय निवेदन किया। मधु ने सामाजिक भेद तथा जाति भेद का स्मरण दिलाकर मालती को समझाया, पर मालती ने सच्चे प्रेम के अनेक दृष्टात देकर मधु को उसे प्रेम स्वीकार करने के लिए आग्रह किया। मधु पाठशाला छोडकर राम सरोवर पर जाने लगा। वहा भी मालती ने उसका पीछा नही छोडा। अपनी सखी जैतमाल की सहायता से उसे मधु को वशीकरण मन्त्र से वश मे करना चाहा। अन्त में मालती मधु का प्रेम प्राप्त करने मे सफल हो गई। रामसरोवर के तट पर दोनो ने गधर्व-विवाह कर लिया। जब यह घटना राजा को

---

१. भारतीय प्रेमाख्यान काव्य, पृ ४३५।

२. मधुमालती (ह. लि) रा प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जयपुर शाखा, ग्र थाक—२६१ (२४)।

३. मधुमालती (ह. लि) रा प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्र थाक ४६१५।

मालूम हुई तो उसने क्रुद्ध होकर मधु को मारने के लिए सेना भेजी। दैवी-सहायता से मधु ने राजा की सेना को परास्त कर दिया। अन्त में मधु और मालती के पूर्वभव मे कामदेव और रति होने की बात जानकर राजा ने अपनी भूल स्वीकार की। मधु का मालती के साथ विवाह हो गया। दोनो सुख पूर्वक रहने लगे।

मधुमालती की यह कथा इतनी लोकप्रिय रही है कि इसकी अनेक हस्त-लिखित प्रतिया १८वी शती के प्रारम्भ से लेकर २०वी शती तक की उपलब्ध होती है। केवल राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर मे ही लगभग १७ प्रतिया उपलब्ध है जिनमे कई सचित्र है। ग्र थाक–१५७८ सवत् १८७७ वाली हस्तलिखित प्रति मे ही बीकानेरी शैली के ६० चित्र है। इन चित्रो मे सुनहरी रग काम मे लिया गया है। चित्रो के बोर्डर लाल रग से रजित है तथा किनारों पर पीले रग की लकीरे खीची हुई है। कुछ चित्र सभोग के भी है जिससे विदित होता है कि यह रचना काम-कला की शिक्षा देने के लिए रची गई थी। स्वय कवि ने अपनी रचना मे इस बात का उल्लेख किया है।[1] इससे प्रतीत होता है कि मध्ययुग में स्वस्थ काम को बुरा नही समझा जाता था, बल्कि दाम्पत्य-जीवन को सुखी बनाने के लिए इसकी समुचित शिक्षा दी जाती थी।

डॉ० माता प्रसाद गुप्त द्वारा सम्पादित मधुमालती मे तथा जिस हस्तलिखित प्रति के आधार पर यहा जो कथा-वस्तु दी गई है, उसमे केवल पाच अन्तर्कथायें आती है, किन्तु कालान्तर मे इस कथा का इतना विस्तार हुआ है कि यह अन्तर्कथाये पाच से बीस तक पहुच गई है और इसमे मधुमालती के कई पूर्वभवो की कथाये जोड दी गई है।

काव्य-सौष्ठव की दृष्टि से यद्यपि इस कृति को उच्च कोटि की नही कहा जा सकता, किन्तु वर्णन की चारुता विरह-मिलन के प्रसगो के मार्मिक-चित्रण के साथ ही साथ सस्कृत के सुभाषितो एव सस्कृत साहित्य की परम्परागत नीति-कथाओ का यथा स्थान सम्यक् उपभोग कवि के रचना-कौशल के साथ उसकी सहृदयता को प्रकट करता है।

इस काव्य मे दोहा, चौपई, सोरठा, गाथा, कु डलिया आदि छन्दो का प्रयोग किया गया है। इसकी भाषा व्रज मिश्रित राजस्थानी है।

---

१. अल्प बुद्धि दीठो सही, काम-प्रबन्ध प्रगास।
कवियन से कर जोर के, कहत चतुरभुज दास ॥७४॥
काम-विलास की ए कथा चतुर सुने चितलाय।
सुगने सुनने गहगहे, निगुणे-की न हाय ॥७८॥

१६ साँखला करमसी : किसनजी री वेलि[1]

रचयिता

प्रस्तुत वेलि के रचयिता साखला करमसी रूणेचा हैं। ये साखला जाति के राजपूत थे। नैणसी की ख्यात के अनुसार ये राणा सीहड के द्वितीय राजकुमार बच्छा के वशजो मे से थे। उदयपुर के महाराणा उदयसिंह तथा बीकानेर के राव कल्याणमल के ये समकालीन थे।

रचना-काल

वेलि के अन्त मे रचना काल नहीं दिया है। रचना की पुष्पिका से पता चलता है कि सवत् १६३४ वैसाख सुदी तीज रविवार को सावलदास ने कटक मे रायसिंह के साथ जाते समय वूसी नामक ग्राम मे इसे लिपिबद्ध किया था। इसी आधार पर डॉ० मानावत के अनुमान के अनुसार इसकी रचना सवत् १६०० के आस-पास है।[2]

कथा-वस्तु :

प्रस्तुत वेलि की कथा-वस्तु श्रीकृष्ण और रुक्मणी के प्रणय प्रसग को लेकर निर्मित हुई है। इसमे प्रधानत. प्रेमलुब्धा-रुक्मणि के नखशिख का काव्यात्मक सरस चित्रण है। शशि-वदनी रुक्मणि ने कृष्ण के साथ रग खेलने के लिए अनुपम रूप और शृ गार धारण किया है तथा वह राजहस की भाति चलकर अपने प्रियतम कृष्ण से सेज पर जाकर मिलती है।

प्रस्तुत वेलि २२ छन्दो की एक छोटी सी रचना है। इसमे डिंगल भाषा का माधुर्य और प्रवाह द्रष्टव्य है। अनुप्रास की छटा देखते बनती है। अर्थालकारो मे उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, व्यतिरेक, भ्रातिमान, सन्देह अलकारो का प्रयोग भावोत्कर्ष बढ़ाने मे सहायक हुआ है। इस रचना मे छोटे साणोर के एक भेद खुडद साणोर छद का प्रयोग हुआ है।

२०. आज्ञा सुन्दर · विद्याविलास चौपई[3]

रचयिता :

इसके रचयिता जैन मुनि आज्ञासुन्दर है।

---

१. किसनजी री वेलि (ह लि) अनूप सस्कृत लाइब्रेरी, बीकानेर का गुटका नं ६६ (द)।

२ राजस्थान वेलि साहित्य (प्रकाशक राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर) पृ ११०।

३ विद्याविलास चोपइ (ह. लि.) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्र थाक–२७३८।

रचना काल ·

प्रस्तुत काव्य का रचनाकाल सवत् १६०२ है ।

कथा-वस्तु

'विद्या विलास चौपई' मे श्रेष्ठी-पुत्र विद्याविलास एव राजकुमारी सोहग-सुन्दरी की प्रणय-कथा वर्णित है। इसका आधार मध्ययुग मे प्रचलित लोक-कथा है। कथानक रूढ़ियो एव नायक के शौर्य एव साहसिक कार्यों तथा चमत्कारपूर्ण घटनाओ से कथानक का विस्तार हुआ है ।

२१. कुशललाभ · ढोला मारू चौपई[1]

रचयिता :

ढोला मारू चौपई के रचयिता जैन कवि कुशललाभ है ।

रचना-काल :

श्री अगरचन्द नाहटा के मतानुसार इसका रचनाकाल सवत् १६०७ है ।[2]

कुशललाभ ने राजस्थान मे सर्वाधिक प्रचलित 'ढोला मारू' के बिखरे हुए दोहो को एकत्र कर अपनी ओर से उसमे चौपाइया मिलाकर उसे पूर्ण किया है ।

कथा-वस्तु :

मूल 'ढोला मारू' और कुशललाभ रचित 'ढोला मारू चौपई' की मूल-कथा एक होते हुए भी इसमे कुछ अन्तर आ गया है। विशेष भेद तो यह है कि ये आगे की कथा के सकेत-सूत्र पहले से ही दे देते है। इस लम्बी प्रस्तावना के पश्चात् राजा पिंगल के उमादेवडी के साथ विवाह का विस्तृत वर्णन है, जो एक स्वतन्त्र कथा सी प्रतीत होती है । तत्पश्चात् मारवणी का जन्म, ढोला का जन्म आदि का वर्णन बहुत विस्तृत है ।

२२ मधुसूदन : हंसाउली विक्रम चरित्र विवाह[3]

रचयिता :

इसके रचयिता मधुसूदन व्यास है। यह गुजरात मे खेडा जिला के सारसा नामक ग्राम के रहने वाले थे ।[4]

---

१. (क) ढोला मारू रा दूहा (काशी ना. प्र. सभा) परिशिष्ट–२ (घ) ।
(ख) डॉ० हीरालाल माहेश्वरी : राजस्थानी भाषा और साहित्य, पृ. २५६ ।

२ राजस्थान-भारती, भाग १, अक ४, (जनवरी १९४७) ।

३ हसाउली विक्रम चरित्र विवाह सम्पादक–श्री शकर प्रसाद छगनलाल रावल (प्रकाशक–श्री फार्बस गुजराती सभा, बम्बई १९३५) ।

४. मध्य देश महिमद सुलतान, ग्राम सारसानी पटल राण ।
कथा कही मधुसूदन व्यास, सामलता होइ बुद्धि प्रकास ॥

रचना-काल :

उपलब्ध हस्तलिखित प्रतियो मे इसका रचना-काल भिन्न-भिन्न दिया हुआ है। 'क' प्रति मे इसका रचना-काल सवत् १६१४ लिखा है[1], जबकि 'ख' प्रति मे सवत् १६१६ लिखा हुआ मिलता है।[2] श्री मजुल मजुमदार ने इसका रचनाकाल सवत् १६१६ तदनुसार ई सन् १५६० माना है।[3]

कथा-वस्तु :

अवती नगरी के राजा विक्रमादित्य का पुत्र राजकुमार विक्रमचरित्र मत्री से खम्भात के राजा की पुत्री राजकुमारी हँसा का रूप वर्णन सुनकर उसे प्राप्त करने के लिए मत्री के साथ खम्भात पहुचता है। वह मालिन की सहायता से राजकुमारी हँसा से मिलता है और दोनो एक दूसरे पर मुग्ध होकर प्रेम-पाश मे बध जाते है। राजकुमारी की किसी अन्य राजकुमार से सगाई हो चुकी होती है और बारात भी आने वाली होती है, अत वह इस अवाछित विवाह से बचने के लिए विवाह के अवसर पर राजकुमार विक्रम के साथ भागने की योजना बनाती है। जब उसे विवाहने के लिए बारात आती है तो राजकुमार भी घोडे पर सवार होकर निश्चित सकेत स्थल पर पहुँच जाता है। राजकुमारी को देर हुई जानकर वह एक पथिक को घोडा सम्हलाकर महलो मे उसे ढूँढने जाता है। इधर हँसा पुरुष-वेश में आती है और रात्रि के अन्धकार मे पथिक को राजकुमार समझकर उसके साथ भाग जाती है। प्रातः जब उसे वस्तु-स्थिति का पता चलता है तो वह बडी दुखी होती है और निराश होकर काशी करवत लेने चल देती है। सुयोग से काशी का राजा निस्सतान होता है, अत वह पुरुष-वेश मे हँसा को राजकुमार समझ कर उसका अपनी राजकुमारी के साथ विवाह कर देता है और राज्य भी दे देता है। उधर राजकुमार विक्रम को भी जब हँसा नही मिलती तो वह भी निराश होकर काशी करवत लेने पहुँचता है। वहाँ उसका हँसा से मिलन हो जाता है। दोनो प्रेमी-प्रेमिका बडे आनन्दपूर्वक रहते है।

२३. जल्ह · बुद्धि रासो

रचयिता :

बुद्धि रासो के रचयिता जल्ह हैं जो जैन प्रतीत होते हैं।

---

१. 'क' प्रति विक्रमचरित्र चौपइ, सेन्टरल लाइब्रेरी, बडोदा, ग्र थाक ५२६४।
२. 'ख' प्रति . विक्रम चरित्र, श्री फार्बस गुजराती सभा, गुटका न० ७८।
३ मध्यकालनो साहित्य-प्रवाह (गुजराती-साहित्य खड ५) पृ. ४०२।

रचना-काल :

डॉ० मोतीलाल मेनारिया के मतानुमार कवि का आविर्भाव स० १६२५ के लगभग है,[1] अत बुद्धि रासो का रचना-काल भी म० १६५० से पूर्व माना जा सकता है ।

कथा-वस्तु :

इसकी कथा-वस्तु किसी पौराणिक, ऐतिहासिक अथवा प्रचलित लोक-कथा पर आधारित न होकर कल्पित है ।

चम्पावती नगरी का राजकुमार अपनी राजधानी से आकर कुछ दिनो के लिए जलधि-तरगिनी नाम की एक रूपवती-स्त्री के साथ समुद्र-तट के पास किसी निर्जन स्थान मे ठहरता है और वहाँ से जाते समय उसे एक मास के भीतर आने का समय दे जाता है । जब वह निश्चित अवधि के बाद कई मास बीत जाने पर भी नहीं लौटता तो जलधि-तरगिनी विरक्त हो जाती है और वस्त्राभूपणादि को भी उतार फेकती है । इस पर उसकी माँ सासारिक विलास-वैभव तथा मानव-देह की प्रशसा करने लगती है, किन्तु जलधि-तरगिनी अपनी प्रेम-निष्ठा से विचलित नही होती । इतने मे राजकुमार भी आ जाता है और फिर दोनो प्रेमी एक दूसरे से पुर्नमिलन का आनन्द लूटते हुए अपना समय व्यतीत करते हैं ।[2]

बुद्धि रासो की छन्द सख्या १४० है । इसकी भाषा अपभ्रश मिश्रित राजस्थानी है । रचना सरस और काव्य-सौष्ठव से पूर्ण है ।

२४ जयवंतसूरि स्थूलि भद्र कोशा प्रेम-विलास

रचयिता :

इसके रचयिता जयवतसूरि १६वी शती के उत्तरार्द्ध मे पैदा हुए थे । ये तपागच्छीय उपाध्याय विनय मण्डन के शिष्य थे ।[3] इनकी आठ कृतियो का पता

---

१ राजस्थानी भाषा और साहित्य (हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग, द्वितीय सस्करण) पृ १६१

२. श्री परशुराम चतुर्वेदी भारतीय प्रेमाख्यान की परम्परा (राजकमल प्रकाशन, दिल्ली) पृ ११३

३ श्री तपगछ सोहा कारा, श्री विनय मडन गुरूराय ।
जयवत सूरि सीसतास कइ, गायु थूलि भद गाय ।।२१३।।
—स्थूलि भद्र मोहन वेलि

चला है। स्थूल भद्र कोशा प्रणय-प्रसग को लेकर इन्होने एक अन्य कृति स्थूलि-भद्र मोहनवेलि की भी रचना की है जिसका परिचय अगले पृष्ठो मे दिया जारहा है।[1]

रचना-काल :

रास और रासान्वयी काव्य के सम्पादको ने इसका रचना-काल १५वी शताब्दी माना है[2] जो ठीक प्रतीत नही होता। स्थूलि भद्र कोशा प्रेम-विलास की रचना कवि द्वारा इस प्रसग को लेकर लिखी गई स्थूलि भद्र मोहन वेलि (र. का. स० १६५०) से पूर्व की रचित जान पडती है, क्योकि बाद मे लिखी गई रचनायें इससे प्रौढ है। अत॰ इसका रचना-काल अनुमानत स० १६२५ के लगभग है।

कथा-वस्तु :

इसमे मगध नरेश नन्द के मत्री शकटार के पुत्र स्थूलि भद्र और गणिका कोशा की प्रेम-कथा वड़ी सरसता के साथ वर्णित है। मगला-चरण मे ही सरस्वती-वन्दना के साथ स्थूली भद्र और कोशा के गीत-गायन का सकल्प और बसत ऋतु मे तरुणी विरहणी के सताप का उल्लेख पाया जाता है—

'ऋतु बसत नव यौवनि तरुणी वेश।
पापी विरह सतापइ तापइ पिउ पर देश।।

नायिका की विरह-वेदना का मार्मिक चित्रण इस काव्य मे मिलता है। वियोगिनी विरह के कारण पीली पड गई है। वैद्य कहता है कि इसे पाडुरोग होगया है। यथा -

देह पडुर भइ वियोगिइ, वईद कहइ एह नई पिंडरोग।
तुझ वियोगि जे वेदन महँ सही, सजनीयाते कुण सकइ कही।।

अपने प्रियतम का सामीप्य प्राप्त करने के लिए कोशा क्या-क्या आकाक्षायें करती है, यह द्रष्टव्य है—

हिं सि न सरजी पखिणी, जे भमती प्रीउ पास।
हउँ न सि सरजी चदन, करती पिउ तन वास।।

---

१ कवि की रचनाओ के विस्तृत परिचय के लिए देखिये—जैन गुर्जर कवियो भाग १, पृ १, १९३, १९८ तथा भाग ३ खण्ड १, पृ ६६६–६७२।

२ डॉ० दशरथ ओझा एव डॉ० दशरथ शर्मा द्वारा सम्पादित रास और रासान्वयी काव्य, पृ. ७३।

इस फागु का वध निराला है। उसमे काव्य, नालि, दूहा और ढाल नामक छदो का प्रयोग हुआ है।

२५ ज्ञानाचार्य : विल्हण पचासिका

रचयिता :

इसके रचयिता जैन मुनि ज्ञानाचार्य है।

रचना-काल :

विल्हण-पचासिका का रचना-काल स० १६२६ है।[1]

कथा-वस्तु :

इसमे गुर्जर देश के अणहिलपत्तन नामक नगर के राजा वैरीसिह की पुत्री राजकुमारी शशिकला और कवि विल्हण की प्रेम-कथा वर्णित है। राजकुमारी शशिकला को पढाने के लिए विल्हण को रखा जाता है। पूर्व-जन्म मे दम्पत्ति होने के कारण इस जन्म मे भी दोनो मे प्रेम हो जाता है, किन्तु राजा को इस वात का पता चलने पर, वह विल्हण को उसकी धृष्टता के लिए शूली का दण्ड देता है। इस वात को सुन कर राजकुमारी अपने सच्चे प्रेम की वात माता के सम्मुख प्रकट कर देती है और स्वय भी विल्हण के साथ मर जाने का अपना सकल्प वतला देती है। अपनी पुत्री की सच्ची प्रेम-निष्ठा देख कर वह राजा को समझाकर दोनो का विवाह करा देती है।

इसकी कथा-वस्तु का आधार सस्कृत मे रचित विल्हण पचासिका है जो विल्हण—कवि की कृति मानी जाती है। इस काव्य पर राम-तर्क वागीश की टीका प्रसिद्ध है। इसी कथानक को लेकर सोर अथवा सुदर्शन कवि ने सुरत-पचाशिका अथवा चौर पचाशिका नामका ५० श्लोको का द्व्यर्थक काव्य भी लिखा जिसका एक अर्थ तो राजकुमारी के प्रणय-प्रसग पर तथा दूसरा अर्थ दुर्जन पर घटित होता है।

'विल्हण-पचासिका' एक सरस और काव्य-सौष्ठव से पूर्ण प्रेमाख्यान है। इसका मगला-चरण भी बडा रसात्मक है। मगला-चरण मे सरस्वती से अधिक कामदेव को महत्व दिया है। भाषा भी भावानुकूल एव प्रसाद-गुण युक्त है।

---

१ जैन गुर्जर-काव्य, प्रथम भाग, पृ. ६३६।

२ फार्बस कृत रास माला (अनुवादक—श्री गोपाल नारायण वहुरा) पृ. १२४।

२६ कुतुबशत[1]

रचयिता :

इसके रचनाकार का परिचय अज्ञात है। रा. प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर मे उपलब्ध एक हस्तलिखित प्रति से इसके रचयिता का नाम 'तला' प्रतीत होता है।[2]

रचना-काल :

इसकी अनेक हस्तलिखित प्रतिया १७वी शती से लेकर २०वी शती के प्रारम्भ तक की प्राचीन ग्र थ-भण्डारो मे मिलती है। लगभग आठ प्रतिया तो रा. प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर मे ही उपलब्ध है। तीन प्रतिया नाहटा जी के पास सुरक्षित है। अनूप-सस्कृत लाइब्रेरी तथा सरस्वती भण्डार, उदयपुर मे भी इसकी प्रतिया उपलब्ध हैं। इससे इस प्रेमाख्यान की लोक-प्रियता का पता चलता है।

---

१ (क) कुतुबशत (ह लि) रा प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्र थाक ११५२, पत्र-सख्या ६, माप १०" × ४$\frac{1}{4}$", लिपिकर्त्ता–गोपीचन्द। लिपि-काल स० १६७०।

(ख) कुतुबशत (ह लि) रा प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रथाक ७७२१, पृ १६६ से १७७ तक।

प्रति का अन्तिम अ श—

दूहा—वजे वाजित्रव जिणे हुआ हुअ दे काह।
जोभी जीवे कुतबदी, मुए अनेर साह ॥१००॥

'इति श्री कुतुबदीन शतक सपूर्ण। सवत् १८२५ काती सुदि २ दिने लिषत दी ठी जिसी की लिषी छै।'

नोट—इस प्रति मे पजाबी भाषा का प्रभाव अधिक लक्षित होता है।

(ग) कुतुबदीन साहजादा री वारता (ह लि) रा प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्र थाक २१४६, पत्र-सख्या १२ माप १०" × ४$\frac{1}{2}$" लि का. स. १६०२।

(घ) कुतुबदीन साहजादा री वात (ह. लि.) अनूप-सस्कृत लाइब्रेरी, बीकानेर, ग्र थाक ६ (६) (गुटका) लि. का स० १८२०।

२ वात स कुतुबदीन री, ढढनी आखी जोड।
सायजादा तला कहै, सुणै न दी यै कौड ॥४॥
—सायजादा कुतबदीन री वात (ह. लि) रा. प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्र थांक ४६१५।

सबसे प्राचीन प्रति स० १६३३ की अनुप सस्कृत लाइब्रेरी मे उपलब्ध है। इसके बाद की प्रति जिसका लेखन-काल म० १६७० है, रा. प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर मे उपलब्ध है। इसके लिपिकर्त्ता श्री अमरकीर्ति सूरि के शिष्य धर्मकीर्ति है। इन तथ्यो से विदित होता है कि इसकी रचना स० १६३३ से पूर्व हो चुकी थी।

जैनाचार्य जिनप्रभ सूरि के विषय मे कहा गया है कि उन्होने अश्वपति (असपति) कुतुवद्दीन के चित्त को प्रसन्न किया था। कुतुवद्दीन ने उनसे जन-शासन के विषय मे अनेक प्रश्न किये थे और फिर सुलतान ने गाव और हाथियो की भेट देकर उनका सम्मान करना चाहा था, पर सूरिजी ने उसे स्वीकार नही किया।[1]

'असपति कुतुवदीनु' मन रजिउ दीठे लि जिग्ग-प्रभ सूरिए।
एकतिहि मन सरमउ पूछइ, राय मग्गोरह पूरीए॥४॥[2]

रेखाकित कुतुवदीन' खिलजी वश का वादशाह कुतुवुद्दीन मुवारिकशाह ही प्रतीत होता है जो सन् १३१६ मे गद्दी पर वैठा था। 'कुतुवशत' का नायक यही कुतुवद्दीन प्रतीत होता हे जिसके नाम पर यह प्रेमाख्यानक लोक-कथा चल पडी होगी।

कथा-वस्तु :

माडव थाणा मे वादशाह मवलशाह राज्य करता था। उस नगर मे दावलदा फकीर रहता था जिसकी वीवी का नाम मौजम था। एक दिन एक फकीर ने मौजम को वरदान दिया कि उसके अप्सरा जैसी पुत्री होगी। कुछ समय वाद मौजम के एक लडकी ने जन्म लिया जिसका नाम सायवा रखा गया। जव सायवा वडी हुई थी तो उसके रूप को देखकर वेगम ने अपने शाहजादा के लिए उसे मांगा पर मौजम इसके लिए सहमत नही हुई और वह सायवा को लेकर दिल्ली चली गई और वहीं रहने लगी।

एक दिन, एक अत्यन्त रूपवती ढढणी दिल्ली मे आई जो वीणा वजाने मे प्रवीण थी। मौजम सायबा को वीणा सिखलाने के लिए उसे घर ले आई। ढढणी ने सायबा को वरदान दिया कि उसका विवाह शाहजादा से होगा। अपने वचन को पूरा करने के लिए वह मालिन का वेश वनाकर शाहजादा कुतुवद्दीन से मिली और सायबा के रूप की प्रशसा की। कुतुवद्दीन भी सायवा को देखने के लिए गुप्त-

---

१. ऐतिहासिक जैन-काव्य सग्रह सम्पादक—अगरचन्द भवरलाल नाहटा, प्रस्तावना, पृष्ठ सख्या १६।

२. वही, पृ स १२।

वेश बनाकर चल पडा। दोनो ने एक दूसरे को देखा और एक दूसरे पर मुग्ध होकर प्रेम-पाश मे बध गये। अन्त मे दोनो का विवाह हो गया और सुखपूर्वक रहने लगे।

कुतुबशत गद्य-पद्य मे लिखा गया चम्पू-काव्य है। इसमे दोहे आदि सौ छन्द है, अतः इसे शतक का नाम दिया गया है। एक अन्य प्रति मे १०६ छद भी मिलते है। बीच-बीच मे कथा का विस्तार गद्य मे होता है। १६वी शती के गद्य-साहित्य की दृष्टि से इसका बडा महत्व है। बाद मे जितने प्रेमाख्यान मिलते है, उनमे से अधिकाश इसी गद्य-पद्य मिश्रित शैली मे ही लिखे गये हैं। इसका गद्य भी कविता के ही समान अनुप्रासयुक्त लयात्मक है। इसकी कथा-वस्तु मुस्लिम परिवार से सम्बन्धित होने से तत्कालीन हिन्दु-मुस्लिम सम्बन्धो को समझने मे बडी सहायक है। जहा एक ओर हिन्दू-कथानको को लेकर उदार हृदय मुसलमान सूफी कवि प्रेमाख्यान-काव्य लिख रहे थे, उसी भाति मुस्लिम-कथानको को लेकर हिन्दू-कवि अपनी रचनाओ की सृष्टि कर रहे थे। धार्मिक-सहिष्णुता की दृष्टि से इस प्रकार की रचनाये दृष्टव्य है।

कुतुबदीन सायबा की प्रेम-कथा को लेकर विभिन्न काल मे कुतुबशत, कुतुबदीन री वारता, 'कुतुबद्दीन की वात' आदि कई नामो से रचनाये लिखी गई जिनके प्रतिलिपिकार भिन्न-भिन्न होने एव विभिन्न समय मे लिखी जाने से भाषा मे भी अन्तर आता गया है। काव्य-सौष्ठव की दृष्टि से रचना साधारण है, किन्तु कही-कही प्रेम-सिक्त मानव चेष्टाओ का सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक चित्रण होने से कथ्य मे चारुता आ गई है।

२७ महीराज नल दवदंती रास[1]

रचयिता :

यह जैन-कलम से देवनागरी लिपि मे लिखी गई ५४ पत्रो की हस्तलिखित प्रति है।

ग्रथ की पुष्पिका के अनुसार इसके रचयिता महीराज है जो विनय मण्डन के शिष्य थे। इस ग्रथ की रचना उन्होने साध्वी विनयसुन्दरी की शिष्या मरधाई के पढने के लिए की थी।[2]

---

१ महीराज कृत नल दवदती रास सम्पादक—डॉ० भोगीलाल ज० साडेसरा, (महाराजा सयाजीराव विश्व विद्यालय, वडोदरा)।

२. इति श्री नल दवदती रास सम्पूर्ण सवत १६४१ वर्षे कार्तिक वदि २ सोमे। श्री सेनापुरे। श्री पूज्य भट्टारक श्री धर्मरत्न सूरीन्द्र शिष्य पूज्य परमगुरु महोपाध्याय श्री विनय मडन नगणीद्र शिष्य पडित महीराज लखित। साध्वी विनयसुन्दिरि गणि शष्यणी, प्र० मरधाई योग्य प्रठनार्थ।

रचना-काल :

ग्रंथ की पुष्पिका से इसका रचना काल सं० १६४१ कार्तिक शुक्ला द्वितीया सोमवार प्रतीत होता है ।

कथा-वस्तु[1] :

इसकी कथा-वस्तु महाभारत मे वर्णित 'नलाख्यान' पर आधारित है । इसमे कोशल देश के राजा निषधराज के पुत्र नल और कुडिनपुर के राजा भीमक की पुत्री दमयन्ती की प्रणय-कथा वर्णित है । कथा मे जैन सिद्धान्तो के अनुसार पूर्वभव की कहानी जोड दी गई है तथा जैन-कथानक रूढियो का प्रयोग किया गया है ।

२८. पृथ्वीराज . वेलि क्रिसन रुक्मणी री[2]

पृथ्वीराज राठौड कृत वेलि क्रिसन रुक्मणी री को विद्वानो ने डिगल की सर्व-श्रेष्ठ रचना माना है । यह ३०४ छन्दो की कृति है ।

रचयिता :

राठौड पृथ्वीराज बीकानेर नरेश राव कल्याणमल के पुत्र थे । इनका जन्म स० १६०६ मे तथा स्वर्गवास स० १६५७ मे हुआ । डॉ० हीरालाल माहेश्वरी ने इनके तीन विवाहो का उल्लेख किया है[3]—प्रथम, महाराणा उदयसिह की पुत्री से, दूसरा जैसलमेर के रावल हरराज की पुत्री लालादे से और तीसरा विवाह लालादे की मृत्यु के बाद उसकी छोटी बहिन चापादे से । चापादे स्वय भी अच्छी कवियत्री थी ।

पृथ्वीराज का स्थान राजस्थान के सर्वोत्कृष्ट कवियो मे है । कर्नल टाड ने इनके विषय मे लिखा है कि पृथ्वीराज अपने युग के वीर सामन्तो मे एक श्रेष्ठ वीर थे और पश्चिमीय ट्रूबेडर राजकुमारो की भाति अपनी ओजस्विनी कविता द्वारा किसी भी कार्य का पक्ष उन्नत कर सकते थे तथा स्वय तलवार लेकर लड़ भी सकते थे । इतना ही नही, राजपूताने के कवि समुदाय ने एक स्वर से गुणिता का सहरा भी इन्ही वीर राठौड़ के सिर बाँधा था ।

---

१. विस्तृत कथा-वस्तु के लिए देखिये : महीराज कृत नलदवदती रास की भूमिका (स. डॉ० भोगीलाल ज० साडेसरा) ।

२. वेलि क्रिसन रुक्मणी री स० ठाकुर रामसिह व प. सूर्यकरण पारीक (हिन्दुस्तानी एकेडेमी, प्रयाग) ।

३. डॉ० हीरालाल माहेश्वरी राजस्थानी भाषा और साहित्य प १५२ ।

रचना-काल :

वेलि के रचना-काल के विषय में विद्वानो मे मतभेद है। डॉ० टैसीटरी[1], सूर्यकरण पारीक[2], म. र. मजुमदार[3], राजकुमार वर्मा[4], नरोत्तमदास स्वामी[5], कृष्णशकर शुक्ल[6] आदि विद्वानो ने इसका रचना-काल स० १६३७ माना है, जबकि डॉ० मोतीलाल मेनारिया, उदयपुर के सरस्वती भण्डार की तीन हस्त-लिखित प्रतियो के आधार पर इसका रचना-काल स० १६४४ मानते है। वह लिखते है—'अनुमान होता है, उल्लिखित सस्करणो के अन्तिम पद्यो मे जो सवत् १६३७ दिया हुआ है, वह वेलि को प्रारम्भ करने का समय है। इसका समाप्ति-काल स० १६४४ ही है।''[7] डॉ० आनन्द प्रकाश दीक्षित[8] एव डॉ० माहेश्वरी[9] भी इस मत से सहमत है।

कथा-वस्तु :

वेलि मे श्रीकृष्ण एव रुक्मणी के विवाह की कथा वर्णित है। इसका मूल कथानक भागवत से लिया गया है। यथा—

> वल्ली तसु बीज भागवत वायौ, महिथाणौ प्रिथुदास मुख।
> मूल ताल जड अरथ मण्डहे, सुथिर करणि चढि छाँह सुख॥

कवि के कथनानुसार यह एक शृ गार-रस प्रधान काव्य है। मगला-चरण के बाद नायिका रुक्मणी का वर्णन पहले किया है, जो शृ गार-रस के ग्रथ रचयिताओ की मान्य पद्धति रही है—

> सुकदेव व्यास जैदेव सारिखा, सुकवि अनेक ते एक सन्त।
> त्री वरणण पहिलौ कीजै तिणि, गू थयै जेणि सिंगार ग्रथ॥

---

१ वेलि (ऐशियाटिक सोसाइटी, कलकत्ता) प्रस्तावना, पृ ६।
२. वेलि (हिन्दुस्तानी एकेडमी) भूमिका, पृ ७७, ६६।
३ गुजराती साहित्यना स्वरूपो, पृ ३७५।
४ हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, पृ ११२।
५ स्वसम्पादित वेलि, प्रस्तावना, पृ. ७६–७८।
६ स्वसम्पादित वेलि, भूमिका।
७. राजस्थानी भाषा और साहित्य, पृ १६४।
८. स्वसम्पादित वेलि, भूमिका पृ ५१।
९ राजस्थानी भाषा और साहित्य, पृ स १६१।

"यदि अलौकिक घटनाओं को छोड दिया जाए तो काव्य का पूर्वार्द्ध और षट् ऋतु-वर्णन शुद्ध प्रेम-काव्य है, जो सन्देश रासक और 'ढोला मारु' की परम्परा मे बैठता है। समूचे काव्य को देखने से इसे प्रेम-काव्य कहना ही उचित जंचता है। अन्य वीर-काव्यो की तरह, इसमें वीर-रस का स्वतत्र वर्णन नही पाया जाता; प्रत्युत शृगार की पूर्णता और पुष्टि के लिए उसका उपयोग हुआ है।"[१]

वेलि राजस्थान का सर्वाधिक लोकप्रिय-काव्य रहा है। इस पर प्राचीन तथा अर्वाचीन अनेक विद्वानो ने अपनी-अपनी टीकाये लिखी हैं। डॉ० टैसीटरी के मतानुसार वेलि डिंगल साहित्य मे काव्य-कला की दक्षता का एक विलक्षण नमूना है। इसमे रमणीय भाव-विधान के साथ-साथ कला-पक्ष भी उतना ही प्रौढ है। जिस प्रकार आगरे का ताजमहल न केवल भाव-सौन्दर्य का प्रतीक है, बल्कि उसका बाह्य भी उतना ही रम्य है। इस भांति की अन्तर्बाह्य की समरूपता विरल काव्य-ग्रथो मे मिलती है। वह लिखते हैं—

'The veli of Krisna and Rukamni by Rathore Prithiraja of Bikaner is one of the most fulgent gems in the rich mine of the Rajasthani literature Composed in the lumious days of Akbar, this palm by the consensus of all the bards who have sat in the tribunal of critic from those times to this day ' is one of the most perfect production of Dingle literature, a marvel of poletical ingenuity, in which like in the Taj of Agra, elaborateness of details is combined with simplicity of conception and exquititeness of feeling is glorified in immaculateness of form '[२]

डॉ० मेनारिया ने इसकी शाब्दिक सजावट का उल्लेख करते हुए लिखा है—

"जिस प्रकार एक चतुर सुनार किसी नग की ठीक-ठीक परीक्षा कर लेने के पश्चात् फिर उसे आभूषण मे बिठाता है, उसी तरह पृथ्वीराज ने भी प्रत्येक शब्द को खूब सोच विचार कर, पूरी तरह से शोध मॉजकर वेलि मे स्थान दिया है। अतः कोई शब्द कहीं बे-मौके नही है प्रत्येक शब्द चित्रोपम, भावोपयुक्त एव उपादेय है और अपने स्थान पर ठीक बैठा है।"[३]

---

१ डॉ० हीरालाल माहेश्वरी राजस्थानी भाषा और साहित्य, पृ १६१।

२ डॉ० टैसीटरी द्वारा सम्पादित-वेलि (रायल ऐशियाटिक सोसाइटी, कलकत्ता) प्रस्तावना, पृ. १२।

३. डॉ० मोतीलाल मेनारिया . राजस्थानी भाषा और साहित्य, पृ. १६६।

सक्षेप मे, पृथ्वीराज राठौड की यह वेलि डिंगल-साहित्य ही नही, हिन्दी-साहित्य की भी अनुपम निधि है।

२९. हेमरत्न सूरि गोरा बादल चौपाई[1]

रचयिता :

गोरा बादल चौपई के रचयिता जैन कवि हेमरत्न सूरि है।

रचना-काल :

इसका रचना-काल स० १६४५ है।

कथा-वस्तु :

राजा रतनसेन को जब पटरानी के हाथ का बना हुआ भोजन स्वादिष्ट नही लगा, तब उसने ताना दिया कि किसी पद्मिनी के साथ विवाह कर लाओ। इस पर रतनसेन पद्ममनी की प्राप्ति के लिए राज-पाट छोड कर घर से निकल पडा और अनेक कष्टो का सामना करता हुआ जोगी की सहायता से सिंधलगढ पहुचा। वहाँ उसने रूपवती पद्मिनी को देखा। यथा--

बादल माहि जिय बीजली, चचल जिय चमकति।
महीयलि माहि तेह नउ, झल हल तन झलकति ॥
हस गमणि हेजइ हसइ, वदन कमल विहसति।
दत कुली दीसइ जिसी, जाणि की हीरा हु ति ॥

रतनसेन ने अपने शौर्य-बल से पद्मिनी का हृदय जीत-कर उसे प्राप्त कर लिया। विवाहोपरान्त वह पद्मिनी सहित चित्तौडगढ लौट आया। वहाँ एक दिन केलि-क्रीडा के समय रनिवास में राघव चेतन बिना सूचित किये आगया, अत. राजा ने कुपित होकर उसे देश निकाला दे दिया। राघव दिल्ली के बादशाह अलाउद्दीन के पास पहुचा। बादशाह ने राघव के उकसाने पर पद्मिनी की प्राप्ति के लिए चित्तौडगढ पर आक्रमण कर दिया। जब उसका आक्रमण सफल नही हुआ तो उसने रतनसेन को छल से बदी बना लिया और पद्मिनी की प्राप्ति पर राणा को मुक्त करने के समाचार चित्तौडगढ भेजे। अपने शील की रक्षा के लिए पद्मिनी गोरा बादल के पास पहुची और उनकी सहायता से सात सौ पालकियो मे चुने हुए वीर बैठाकर बादशाह से सघर्ष किया तथा राणा रतनसेन को छुडा लाये।

सरल और सुबोध राजस्थानी भाषा मे लिखा गया यह काव्य अपनी भाव-प्रवण सहजता के लिए अनूठा है। इसमे शृ गार-रस का तो सुन्दर परिपाक हुआ

---

१. डॉ० हीरालाल माहेश्वरी राजस्थानी भाषा और साहित्य, पृ २६६।

ही है, साथ ही शृंगार–रस के पोषक वीर–रस का उससे भी अधिक सफलता के साथ वर्णन मिलता है, जिसमे गोरा, बादल का स्वामी–भक्ति से प्रेरित बलिदान, कथानक मे चारुता ला देता है। कवि प्रारम्भ मे ही कहता है––

वीरा रस सिणगार रस, हासा रस हित हेज।
साम धर्म रस साभलउ, जिय होवइ तन तेज॥

३०. नय सुन्दर . सुर सुन्दरी रास[1]

रचयिता :

प्रस्तुत काव्य के रचयिता जैन मुनि नयसुन्दर है। इनका स० १६४१ मे रचित रूपसुन्दर रास नामक एक अन्य काव्य भी मिलता है।

रचना-काल

नयसुन्दर रचित सुर सुन्दरी रास का रचना–काल स० १६४६ है।

सुर सुन्दरी और अमर कुमार की प्रेम–कथा को लेकर सवत् १७३६ में मुनि धर्मवर्धन ने भी अमर कुँवर सुर सुन्दरी चौपई नामक प्रेमाख्यान की रचना की। इसकी एक हस्तलिखित प्रति रा प्रा विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर मे उपलब्ध है।[2]

कथा-वस्तु :

इसकी कथा-वस्तु श्रेष्ठी पुत्र अमरकुमार और राजकुमारी सुरसुन्दरी की प्रेम-कथा पर आधारित है। राजकुमारी सुरसुन्दरी और श्रेष्ठी-पुत्र अमरकुमार दोनो एक पाठशाला मे पढते है। वहाँ स्त्री-पुरुष के अधिकारो को लेकर हुए वाद-विवाद से दोनो मे अनबन हो जाती है। किन्तु, राजा अमर कुमार की योग्यता देखकर सुरसुन्दरी का उसके साथ विवाह कर देता है। किसी कारणवश अमर कुमार को अपना देश छोडना पडता है। सुरसुन्दरी भी उसके साथ हो जाती है। सिंहल द्वीप जाते समय मार्ग मे जब पीने का पानी प्राप्त करने के लिए प्रवहण ठहरता है, तब अमरकुमार सुरसुन्दरी द्वारा बचपन मे किये गये अपमान का स्मरण कर, प्रतिशोध लेने के लिए, उसे वन मे स्थित यक्ष-मन्दिर मे सोती हुई छोड कर चल देता है। इधर सुरसुन्दरी अपने शील-व्रत की रक्षा करती हुई पुरुष-वेश

---

१. सुर सुन्दरी रास (ह. लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

२ अमर कुवर सुरसन्दरी चौपई (ह लि) लि. का. स १८३०, रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रथाक २७३८०।

मे चम्पा वती के राजा के पास पहुचती है और बीमार राजा को अच्छा करके उससे आधा राज्य तथा विवाह में राजकुमारी प्राप्त कर लेती है। सुयोगवश अमर कुमार भी वहाँ पहुच जाता है। दोनो का प्रेम-मिलन होता है। कथा सुखान्त है।

३१ जयवंत सूरि : स्थूलिभद्र मोहन वेलि[1]

रचयिता :

प्रस्तुत कृति के रचयिता जैनमुनि जयवत सूरि है जिनका परिचय इससे पूर्व दिया जा चुका है।

रचना-काल :

रचना की पुष्पिका के अनुसार इसका रचना-काल स १६४२ मार्ग-शीर्ष शुक्ला दशमी गुरुवार है।[2]

कथा-वस्तु[3] :

यह २१५ छदो की रचना मगध नरेश के मत्री शकटार के पुत्र स्थूलिभद्र और नगर वधू कोशा के प्रेम से सम्बन्धित है। काव्य का प्रारम्भ सरस्वती की वन्दना से हुआ है। उदयन और वासवदत्ता के आदर्श पर ही स्थूलिभद्र और कोशा का प्रेम विकसित हुआ है।

स्थूलिभद्र मोहन वेलि का भाव-पक्ष और कला-पक्ष बडा पुष्ट है। इह-लौकिक प्रेम-व्यजना का बडा मार्मिक चित्रण इस कृति मे मिलता है। रसराज शृ गार के दोनो पक्ष-सयोग और वियोग का सूक्ष्म और भाव-प्रवण वर्णन किया गया है। नायिका की मानसिक दशा का सजीव चित्रण मिलता है। प्रकृति चित्रण भी बडा मनोरम बन पडा है। कवि प्रकृति की गोद मे ही प्रेम-क्रीडा का कौतुक देखता है। प्रेम के सयोग-पक्ष मे बसन्त-वर्णन और वियोग-पक्ष मे सावन, भाद्रपद, आश्विन तथा कार्तिक मास के विविध दृश्य उपस्थित किये गये हैं। भाषा भी भावानुकूल

---

१. (क) स्थूलिभद्र मोहन वेलि (ह. लि) अभय जैन ग्रथालय, बीकानेर, ग्रथाक ३७१९।
(ख) राजस्थानी वेलि साहित्य : डॉ नरेन्द्र भानावत पृ ३१३

२ मागशिर सुदि दशमी गुरौ, सवत सोल बिताल ।
जयवत थूलि पद गावतइं, दिन-दिन मगल माल ।। २१५ ।।

३. विस्तृत कथा वस्तु के लिए देखिए—डॉ. नरेन्द्र भानावत का शोध-प्रबन्ध : राज स्थानी वेलि—साहित्य, पृ ३१३।

और प्रवाहमयी है। अलकारो मे विशेष रूप से सादृश्य-मूलक अलकारो का सहारा लिया गया है। विरोधाभास का चमत्कार भी द्रष्टव्य है। छन्दो मे कवि ने दोहा, सोरठा तथा चौपई का प्रयोग किया है तथा राग सामेरी, राग गुडी और केदार गुडी के प्रयोग से काव्य मे गयात्मकता आगई है।

३२. नारायणदास छिताई-वार्ता[1]

रचयिता :

इसके रचयिता कवि नारायणदास है जिनका जीवन-वृत्त अज्ञात है।

रचना-काल :

छिताई–वार्ता का लिपिकाल स० १६४७ है तथा रचना–काल सवत् १५८३ है।

कथा-वस्तु[2]

छिताई–वार्ता की कथा-वस्तु का निर्माण, देवगिरि के राजा रामदेव यादवा की कन्या छिताई को प्राप्त करने के लिए बादशाह अलाउद्दीन का आक्रमण तथा सुरसी और छिताई की प्रेम–कथा के ऐतिहासिक आधार पर लोक–कथा–तत्वो के मिश्रण से हुआ है।

देवगिरि के राजा रामदेव की कन्या जब विवाह केयोग्य हो गई, तब उसका विवाह ढोल समुदगढ (द्वार समुद्र) के राजा भगवान् नारायण के पुत्र सुरसी के साथ कर दिया और दोनो आनन्द–प्रमोद से रहने लगे। किन्तु, कुछ दिनो के बाद चित्रकार द्वारा बनाया हुआ छिताई का चित्र देखकर बादशाह अलाउद्दीन उस पर मोहित होगया और उसको प्राप्त करने के लिए देवगिरि पर आक्रमण कर दिया। बादशाह ने किले मे गुप्त रूप से कुछ सैनिको के साथ प्रवेश करके शिव के पूजन हेतु आई हुई छिताई को पकड लिया और उसे दिल्ली ले गया। जब सुरसी को इस समाचार का पता चला तो वह दु खी होकर वैरागी होगया और वीणा बजाता हुआ घूमता–घूमता दिल्ली पहुँच गया। उसके वीणा वादन पर मग्ध होकर बादशाह अलाउद्दीन ने उसे छिताई वापिस लौटादी। दोनो प्रेमी–प्रेमिका मिल कर बडे प्रसन्न हुए और ढोल समुन्द लौटकर आनन्दपूर्वक रहने लगे।

---

१ छिताई वार्ता डॉ० माता प्रसाद गुप्त (काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा, बनारस) पृ. स २६।

२ विस्तृत कथा–वस्तु के लिए देखिये—भारतीय–प्रेमाख्यान काव्य (डॉ० हरिकान्त श्रीवास्तव) पृ २०८–२१३।

जायसी की पद्मावत की तरह प्रस्तुत रचना भी इतिहास और कल्पना के योग से निर्मित हुई है। इसकी कथा–वस्तु मे आश्चर्यतत्व और कुतूहल का समावेश करके कवि ने काल्पनिक घटनाओ और ऐतिहासिक घटनाओ को सूत्र-बद्ध कर कहानी के सौष्ठव को बढा दिया है। पात्रो के स्वभाव चित्रण मे कवि को बडी सफलता प्राप्त हुई है। अलाउद्दीन जैसे कामी और लोलुप बादशाह के हृदय मे भी कोमलता दिखलाकर कवि ने अपनी सहृदयता का परिचय दिया है। काव्य-सौष्ठव की दृष्टि से भी यह रचना सुन्दर बन पडी है। डॉ० हरिकान्त श्रीवास्तव के मतानुसार छिताई वार्ता मे आचार, नीति, लोक-प्रवृत्ति से सम्बन्धित उक्तियाँ इसके काव्य-सौष्ठव और उपयोगिता को बढाने मे सहायक हुई है। प्रस्तुत रचना साहित्य के अतिरिक्त सास्कृतिक महत्व की दृष्टि से भी बडी महत्वपूर्ण है।[1]

३३. जयवंत सूरि : नेमी राजुल बार मास वेल प्रबन्ध[2]

रचयिता :

जैन कवियो ने नेमीनाथ और राजमति के प्रेम-प्रसग को लेकर अनेक सरस काव्य ग्रथो की रचनाये की है। प्रस्तुत कृति के रचयिता जयवत सूरि है, जिनका परिचय इससे पूर्व दिया जा चुका है।

रचना-काल :

इसकी रचना सवत् १६५० के आस-पास की गई।[3]

कथा-वस्तु :

७७ छन्दो मे रचित इस वेलि का सम्बन्ध नेमीनाथ और राजमति के विवाह–प्रसग से है, जहाँ नेमीनाथ तोरण से वापिस लौट पडते है और राजमति विरहाधिक्य से मूर्छित होकर गिर पडती है। कवि ने राजुल की विरह-व्यजना के लिए बारहमासा पद्धति को अपनाया है। प्रारम्भ के दूहे मे प्रत्येक मास का उल्लेख कर आगे की राग मल्हार देशी मे तदजन्य राजुल की विरह-भावना की विवेचना की गई है।[4]

---

१. भारतीय प्रेमाख्यान काव्य (डॉ० हरिकान्त श्रीवास्तव) पृ २१८।

२ प्रस्तुत कृति का परिचय निम्नलिखित ग्रथो के आधार पर दिया गया है—
(क) गुजराती साहित्यना स्वरूपो, पृ २८२–८४।
(ख) राजस्थानी वेलि साहित्य (डॉ० नरेन्द्र भानावत) पृ २५३।

३ गुजराती साहित्यना स्वरूपो, पृ २८२–८४।

४. राजस्थानी वेलि साहित्य (डॉ० नरेन्द्र भानावत) पृ. २५४।

इस प्रेमाख्यान की भाषा माधुर्य-गुण सम्पन्न है। उपमा, रूपक आदि अलकारो का प्रयोग सुन्दर हुआ है। छन्दो मे प्रमुख रूप मे दोहा और ढाल (राग मल्हार देशी) का प्रयोग हुआ है।

३४ समय सुन्दर मृगावती रास[1]

रचयिता :

मृगावती रास के रचयिता महोपाध्याय समय सुन्दर का स्थान भारतीय वाड्गमय की गौरव वृद्धि करने वालो मे बडा महत्वपूर्ण है। राजस्थानी एव गुजराती भाषा मे भी आपके द्वारा रचित काव्यो की सख्या प्रचुर है। इनका जन्म मारवाड प्रदेश के साचौर नामक ग्राम मे पोरवाड रूपसी की भार्या लीला देवी की कुक्षि से स० १६१५ के आस-पास हुआ था और १७०२ चैत्र शुक्ला को अहमदाबाद मे स्वर्गवास हुआ।[2]

रचना-काल :

मृगावती रास का रचना-काल सवत् १६६८ है।[3]

हिन्दी साहित्य मे मृगावती नामक अन्य रचनाये भी उपलब्ध होती हैं। प्रस्तुत रचना की कथा-वस्तु कुतबन रचित सूफी प्रेमाख्यान-काव्य मृगावती से भिन्न है। इसकी एक हस्तलिखित प्रति श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर मे उपलब्ध जिसकी पृष्ठ सख्या ३२ है और दो खण्डो मे विभाजित है। दूसरी हस्तलिखित प्रति राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, बीकानेर शाखा मे उपलब्ध हैं जिसमे रचना-काल नही दिया जाकर लिपिकाल स० १७५० दिया हुआ है और लिपिकर्ता कर्पूर विनय गणि है। इसकी रचना शीलव्रत के प्रचारार्थ की गई है।

---

१ (क) मृगावती रास (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।
(ख) मृगावती (ह. लि) रा प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, बीकानेर शाखा। प्रति का अन्तिम अश निम्नलिखित है—
'मोहण वेल चौपइ सुनता भणता नह वलि गुणताणे।
समय सुन्दर देइ सग असीसा, रिद्धि वृद्धि सुजगीसावे।
१७५० बरसे मासोत्तम कार्तिक मासे क्रिस्न पक्षे अष्टमी
तिथिउ गुरु आसेर। लीपी–कर्ता–कर्पूर विजय गणि।'

२ समय सुन्दर रास पचक; सम्पादक—भवरलाल नाहटा, प्रस्तावना, पृ. स. १।

३. सोलसइ अडसठी वरसे, हुई चउपइ घणे हरखे वे।
मृगावती चरण कथा त्रिहुँ खण्डे, घणे आनन्द घमण्डे वे ॥६१॥
समय सुन्दर कृति कुसुमाञ्जलि, पृ ५६।

कथा-वस्तु

इसमे कोसावीपुरी के राजा सातनीक और उनकी रानी मृगावती की प्रेम-कथा वर्णित है।

एक दिन राजा सातनीक अपनी गर्भवती रानी मृगावती को भ्रमण के लिए वन मे ले गया तो वहाँ रानी ने एक वावडी मे स्नान किया। उसी समय एक मारुड-पक्षी उडता हुआ आया और रानी को अपने पजो मे पकडकर ले गया। राजा सातनीक कुछ भी नही कर पाया। वह रानी के वियोग मे वडा दु खी रहने लगा। एक दिन, एक पथिक को पकड कर दरवार मे लाया गया। उसके पास रानी मृगावती का सोने का कगन था। पथिक से राजा को मृगावती के वारे मे पता चला कि वह मलयागिरी वन के आश्रम मे रहती है तथा उसके उदयन नाम का पाँच वर्ष का वालक भी है। राजा अपने मत्री युगधार के साथ मृगावती के पास पहुँचा। जिस प्रकार कण्व के आश्रम मे राजा दुष्यन्त को शकुन्तला मिली थी, उसी भाँति ब्रह्मभूति के आश्रम मे राजा सातनीक को रानी मृगावती मिली। रानी के साथ राजा अपनी राजधानी मे लौट आया और आनन्दपूर्वक रहने लगा।

एक दिन राजा अपनी चित्रसारी देखने के लिये गया तो वहाँ मृगावती का चित्र देखकर दग रह गया। उस चित्र मे जघन-स्थल पर तिल का चिन्ह भी चित्रित था। राजा को चित्रकार की इस धृष्टता पर वडा क्रोध आया और उसका वाया हाथ कटवा दिया। चित्रकार अपने प्रतिशोध का वदला लेने उज्जैन के राजा चण्ड प्रद्योत के पास पहुँचा और उसे मृगावती का चित्र दिखलाया। राजा चण्ड प्रद्योत कामी और लम्पट था, अत. उस चित्र को देखकर मृगावती को प्राप्त करने के लिए उसने राजा सातनीक पर आक्रमण कर दिया। जव चण्ड प्रद्योत किले के वाहर घेरा डाले हुए पडा था, राजा सातनीक वीमार होकर चल वसा। राजा के स्वर्गवास होने पर मृगावती ने भी वैराग्य ले लिया। इस घटना का चण्ड प्रद्योत पर भी प्रभाव पडा तथा उसने भी सयम-व्रत ले लिया। इस भाँति इस कथा का अन्त शान्त-रस मे होता है।

कवि समयसुन्दर द्वारा रचित मृगावती रास एक सरस प्रेमाख्यान है। एक प्रचलित लोक-कथा को लेकर धर्ममय अर्थ, काम के उपभोग का जैसा सुन्दर चित्रण किया हे तथा दामपत्य प्रेम की निष्ठा को अपनी सुन्दर कवित्व शक्ति से व्यक्त किया है, वह रचनाकार की रचना-पटुता का परिचायक है। रचना का मूल उत्स दामपत्य-प्रेम है किन्तु सयम-निष्ठा से युक्त जैन-धर्म का आरोपण होने

के फलस्वरूप इसका पर्यवसान शान्त-रस मे हुआ है। स्वय कवि ने राजा सातनीक और मृगावती के भोग–विलास युक्त दाम्पत्य–जीवन की झांकी इस प्रकार दी है–

'धरम अरथ अनइ वलि काम। आराधइ प्रियस्यु अभिराम।
सतानीक नइ मिरगावती, सुखभोग वइ जिम सचि सुरपति ॥

सुन्दर दृश्य-विधान, मानव चेष्टाओ का सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक चित्रण, सयोग, वियोग का हृदय-हारी वर्णन, रूप-माधुर्य और नख-शिख वर्णन बडी कुशलता पूर्वक किया गया है। प्रारम्भ मे भारत-देश की विशेषता का बडा सुन्दर वर्णन है जो देश की अखण्डता का परिचायक है। यह रचना काव्य-सौष्ठव की दृष्टि से ही नही, बल्कि तत्कालीन सामाजिक-अवस्था को जानने की दृष्टि से भी बडी महत्व-पूर्ण है।

३५. कुशल लाभ : माधवानल कामकन्दला चौपई[1]

रचयिता :

इसके रचयिता कुशललाभ है। इनके जीवन के विषय मे केवल यही पता चलता है कि ये खरतरगच्छीय वाचक अभयधर्म के शिष्य थे। श्री अगरचन्द नाहटा के मतानुसार इनका जन्म अनुमानत सवत् १५८० है।[2]

रचना-काल

माधवानल कामकन्दला का रचना-कल नाहटा जी ने स १६१७ फा व १३ रविवार लिखा है।[3]

डा. हरिकान्त श्री वास्तव इसका रचना-काल स १६१३ लिखते हैं।[4] किन्तु जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर मे उपलब्ध इसकी हस्तलिखित प्रति मे इसका

---

१. (क) माधवानल कामकन्दला चौपई (ह लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।
(ख) राजस्थानी भाषा और साहित्य : डा हीरालाल माहेश्वरी पृ स. २५६।
(ग) माधवानल कामकन्दला प्रवध (ओरियन्टल इन्स्टीटयूट, बडौदा–१६४२) परिशिष्ट–२ (वाचक कुशललाभ कृत माधवानल कामकन्दला चउपई)

२. श्री अगरचन्द नाहटा का लेख राजस्थान भारती (जनवरी १६४७) पृ. २२।

३. वही, पृ २२।

४. भारतीय प्रेमाख्यान-काव्य, पृ. ४४७।

रचना काल स. १६७२ फा. शुक्ला १३ रविवार लिखा हुआ है, अतः यही ठीक प्रतीत होता है।[1]

इस ग्रथ की पुष्पिका से यह भी विदित होता है कि यह रचना गाहा, दूहा, कवित, चौपई आदि ५५० छन्दो मे वर्णित है। पुष्पिका से विदित होता है कि इसकी रचना जेसलमेर के राजकुँवर हरिराज के मनोरजन के लिए की गई थी। पुष्पिका मे इसका लिपिकाल सवत् १७८२ दिया गया है।[2]

कथा-वस्तु :

कुशललाभ कृत[3] माधवानल कामकन्दला की कथा-वस्तु गणपति कृत माधवानल कामकन्दला प्रबध से समानता रखती है। इन दोनो मे अन्तर केवल इतना ही है कि कुशललाभ कामकन्दला को पूर्वभव मे इन्द्र की अप्सरा जयन्ती बतलाते है। यह जयन्ती इन्द्र के शाप से दो बार स्वर्ग से च्युत होती है। प्रथम बार, शिला बनती है और माधव के द्वारा खेल-खेल मे ही फेरा करने पर शाप मुक्त हो पुन अप्सरा होकर स्वर्ग मे चली जाती है। दूसरी बार इन्द्र की सभा मे नाच करते समय माधव को भौरा बनाकर अपनी क चुकी मे छिपा कर रखने के अपराध मे इन्द्र की कोप-भाजन बनकर शाप ग्रसित हो वेश्या बनती है। माधव का जन्म अलौकिक रीति से भगवान् शकर के वीर्य-बिन्दु से बतलाया गया है। शेष कथानक लगभग गणपति रचित माधवानल कामकन्दला प्रबध से मिलता है।

---

१. सवत् सोलह सो मोत्तरइ, जेसलमेर मझारि।
फागुण सुदि तेरसि दिवसि विरचि आदित वार॥
गाहा, दूहा, चौपई, कवित कथा-सम्बन्ध।
कुशललाभ वाचक कहै, सरिस चरित सुपवित्त॥
जे वाचे जे समले, ते नर सदा सु चित्त।
गाथा साढि पाचसइ ए चउपई प्रमाण।
भणता गुणता सरस वीई, ते नर सदा सुजाण।
राउल भाल सु पट्ट धर, कुँवर श्री हरिराज।
विरच्यो ए शृ गार रस, तासु कतुहल काज॥

२ "सवत सतर बयासिइ ग्राम देवलिया माहि।
माधवा तारिण यए वारता लागि चितइ माहि।
काती बदी एकादसी तिथि लिखि परत सुप्रसन्न॥"

३. विस्तृत-कथा वस्तु के लिए देखिये भारतीय प्रेमाख्यान-काव्य (डॉ. हरिकान्त श्रीवास्तव) पृ ४४७।

कुशललाभ कृत माधवानल कामकन्दला चौपई काव्य की दृष्टि से एक सरस और प्रौढ काव्य-कृति है । शृ गार-रस का इसमे सुन्दर परिपाक हुआ है । विरहणी नायिका की मानसिक दशा का चित्रण बडा सूक्ष्म, मनोवैज्ञानिक तथा हृदय-स्पर्शी बन पडा है । इसकी भाषा सरल, सुबोध और लोक-प्रचलित राजस्थानी है। तत्कालीन सामाजिक एव सास्कृतिक स्थिति को समझने के लिए यह ग्रन्थ बडा उपयोगी है ।

३६. मालदेव : पुरन्दर कुमार चौपइ[1]

रचयिता :

इसके रचयिता मालदेव है । यह लाभदेव सूरि के शिष्य थे ।[2]

रचना-काल :

'पुरन्दर कुमार चौपइ' का रचनाकाल सवत् १६७२ है ।

इसकी एक हस्तलिखित प्रति रा प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर मे उपलब्ध हुई है तथा दो प्रतिया श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर अजमेर मे उपलब्ध है ।

पुरन्दर कुमार चौपइ ५२५ छन्दो का एक सरस प्रेमाख्यान-काव्य है जिसकी सरसता का उल्लेख कवि ने ग्र थ के मगलाचरण मे ही कर दिया है ।[3]

---

१. पुरन्दर कुमार चौपई (ह लि) रा प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रथाक ६४३७ पत्र-सख्या २१, माप ६½" × ४½" लि का. १६ वी शताब्दी ।
प्रति का अन्तिम अ श—
'सील बडहु ससार मई, अउर न काइ प्रधान ।
रतनागर तुछ पाई ई, चिता रतन समान ।।७५।।

२. लाभदेव सूरि गुण निधउ, वडगछ दिणाद ।
तास सीस सिक्षा कहइ, मालदेव अणाद ।।७६।।
आगम मिलरस जो कहिउ, अनुमोहिते जीम ।
जव विरुद्ध कछु मइ कहउ, मिथ्या दुक्कड जीय ।।७७।।
इति श्री सील विषये परिदर कथा-सम्पूर्ण । शुभ भवतु । ग्रथ श्लोक ५२५ ।।

३. वरदाई श्रु त-देवता, गुरु प्रसाद आधार ।
कुमर पुरन्दर गाइसिउ, सील व्रत सुविचार ।।१।।
नर नारी जे रसिकते सु नीयहु सव चित लाय ।
ढू ढन कबहु घुमाईइ, विना सरस तरुवाई ।।२।।
सरस कथा जे होइ तौ, सुनेहि सवइ चितलाय ।
जहा सुवास होवई कुसुम, मधुप तही तह जाइ ।।३।।

कथा-वस्तु :

पुरन्दर कुमार और कलावती की प्रेम-सम्बन्धी लोक-कथा को लेकर इसकी कथा-वस्तु निर्मित हुई है।

विलासपुर नगर के राजा सिहरथ राय की रानी कमलावती से पुरन्दर नामक राजकुमार का जन्म हुआ। युवा होने पर एक दिन राजकुमार वन मे बसत-ऋतु की बहार देखने गया। वहा उसने एक विद्याधरी को बन्धन मुक्त कर उससे अनेक जादुई विद्याये प्राप्त की। एक दिन राजसभा मे मागध ब्राह्मण से भोगपुर की राजकुमारी कलावती का रूप-वर्णन सुनकर उसे प्राप्त करने के लिए जोगी बनकर निकल पडा। वह वीणावादक के रूप मे भोगपुर के राजा की राजसभा मे पहुचा और वीणा-वादन से राजा सहित सब राजसभा को प्रसन्न कर लिया। राजकुमारी कलावती भी उसके वीणावादन पर मुग्ध हो गई। जब कलावती को पुरन्दर कुमार का वास्तविक परिचय ज्ञात हुआ तो उसने कुमार से विवाह करने का सकल्प कर लिया। राजा को जब उन दोनो के प्रेम का पता चला तो उसने कलावती का विवाह पुरन्दर कुमार के साथ कर दिया। दोनो प्रेमी-प्रेमिका आन्नदपूर्वक रहने लगे। वन मे देवताओ द्वारा राजकुमारी की परीक्षा, शत्रुजय राजा की दूसरी रानी मदनावती का जोगी वेशधारी पुरन्दर कुमार के रूप को देख कामातुर होकर काम प्रस्ताव रखना तथा धनदत्त सेठ की पत्नि और राजकुमार की प्रणय लीला आदि की अन्तर्कथाये भी वर्णित है।

३७. समयसुन्दर . सिहल सुत चौपइ[1]

रचयिता

सिहल सुत चौपई के रचयिता कविवर समयसुन्दर है जिनका परिचय इससे पूर्व दिया जा चुका है।

रचना-काल :

रचना की पुष्पिका मे इस कृति का रचना-काल स० १६७२ दिया हुआ है।[2]

---

१. (क) सिहल सुत चौपई (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।
(ख) सिहल सुत चौपई (समय सुन्दर रास पचक) सम्पादक श्री भवरलाल नाहटा।

२ सवत सोल वहुत्तर समद्दरे मेडतानगर मझारि।
प्रिय मेलक तीरथ चउपई, रे मूल आग्रह मुलताण ।।१।।

'सिंहल सुत चौपई' ग्यारह ढालो मे लिखा गया एक सरस प्रेमाख्यान-काव्य है। इसमें सौरठिया दूहा, रामगिरी, आसाउरी, अलवेल्यारी, सोहलारी एव धन्यासिरी आदि राग रागिनियो का प्रयोग किया गया है जो कवि के शास्त्रीय-सगीत के अध्ययन को प्रकट करता है।

कथा-वस्तु :

सिंहल द्वीप के नरेश्वर सिंहल का पुत्र राजकुमार सिंहलसिंह बडा रूपवान और वीर था। एक दिन वह वसत ऋतु मे वन मे भ्रमण हेतु गया तो वहा जल क्रीडा को आई हुई नगर-सेठ की कन्या को पागल हाथी के चगुल मे देखा। सिंहलसिंह ने अपने प्राणो को सकट मे डालकर धनवती की रक्षा की। फलस्वरूप दोनो प्रेम-पाश मे बध गये और विवाह कर लिया। राजकुमार के अत्यन्त रूपवान होने के कारण सिंहल की युवतिया उसके रूप-सम्मोहन से कामातुर रहती थी, अतः पचो की शिकायत पर राजा ने कुमार का नगर वीथियो मे घूमना बद कर दिया, इससे रुष्ट होकर राजकुमार धनवती के साथ प्रवहण मे आरूढ होकर परदेश के लिए निकल पडा।

मार्ग मे सिंहल-सुत का प्रवहण समुद्र की उत्ताल तरगो से नष्ट हो गया। किन्तु धनवती एक-काष्ठ-पट्टिका के सहारे किनारे लग गई और प्रिय मेलक तीर्थ पर पहुच कर प्रिय मिलन की प्रतीक्षा मे निराहर, मौन-व्रत लेकर बैठ गई। उधर सिंहल-सिंह भी किसी प्रकार से बच कर रतनवती के नगर मे पहुचा, जहा के राजा रत्न प्रभ की पुत्री रतनवती के साप के विष को उतार कर आधा राज्य प्राप्त किया तथा राजकुमारी के साथ विवाह किया। कुछ दिनो के बाद कुमार रतनवती को लेकर वहा से चल पडा। राजा ने सुविधा के लिए अपने मत्री रुद्रदत्त पुरोहित को भी साथ कर दिया, किन्तु वह बडा कृतघ्न निकला। उसने राजकुमारी के रूप पर मुग्ध होकर उसे प्राप्त करने के लिए राजकुमारी को छल से समुद्र मे गिरा दिया किन्तु रुद्रदत्त की मनोकामना पूरी नही हो पाई, क्योकि प्रवहण समुद्र की उत्ताल तरगो से फिर नष्ट हो गया। रतनवती भी बचकर प्रिय मेलक तीर्थ पर पहुची और वहा धनवती के समीप मौन-व्रत लेकर बैठ गई। उधर राजकुमार इस बार भी बच गया और एक तरपस के आश्रम पर पहुचा। तापस की कन्या रूपमती के कुमार पर मोहित होने पर, तापसेन ने उसका विवाह कुमार के साथ कर दिया और करमोचन मे अनेक जादुई वस्तुये दी। रूपमती के साथ सिंहल सिंह प्रिय मेलक तीर्थ पहुचा। वहा उसे एक सर्प ने डस लिया जिससे वह कुरूप हो गया। रूपमती भी उसे पहिचान नही सकी और निराश होकर वह भी धनवती के समीप मौन व्रत

धारण करके बैठ गई। उन तीनो की उग्र तपस्या से चारो ओर शोर मच गया। कुमार भी वहा पहुच गया और उन तीनो कुमारियो को मौन अपनी कहानी कह कर मौन-व्रत भग कर दिया। दैवयोग से राजकुमार को भी अपना वास्तविक रूप मिल गया। अपने प्रियतम को पाकर तीनो स्त्रियाँ बडी प्रसन्न हुई। कुसुमपुर के राजा को भी जब सिहला सिंह का परिचय मिला तो उसने अपनी पुत्री का उसके साथ विवाह कर दिया। राजकुमार अपनी चारो पत्नियो के साथ आनन्द पूर्वक रहने लगा। इसके बाद पूर्व-जन्म के वृतान्त के साथ कथा-समाप्त होती है।

३८. समयसुन्दर पुण्यसार चौपई[1]

१५ ढालो मे वर्णित यह भी लोक-कथा पर आधारित एक सरस प्रेमाख्यानक काव्य है।

रचयिता :

इसके रचयिता भी कविवर समयसुन्दर है।

रचना-काल :

कवि ने इसका रचना-काल सवत् १६७३ दिया है। यथा—

> सवत सोल त्रिहुत्तरई, भर भादव मास।
> एक अधिकार पूरउ कर्यउ, समयसुन्दर सुख वास॥

कथा वस्तु

इसमे पुण्यसार और गुणावली की प्रेम कथा-वर्णित है। गोपाचल के सेठ पुरन्दर का पुत्र पुण्यसार जब पाठशाला मे पढता है तो सेठ रत्नसार की पुत्री रत्नवती से उसका विवाद हो जाता है और उसके साथ विवाह करने का सकल्प कर लेता है। सेठ पुरन्दर उसकी सगाई रतनवती से कर भी देता है, किन्तु दैव-योग से एक दिन रानी का गिरवी रखा हुआ हार जुए मे हार जाने के कारण उसे घर से भागना पडता है, वह जगल मे एक वृक्ष की खोह मे जाकर बैठता है किन्तु वह वृक्ष देवियो के चमत्कार से उडकर वल्लभी नगर पहुँचता है। वहाँ उसका विवाह नगर सेठ की गुणावली आदि सात कन्याओ से हो जाता है। पुण्यसार अपने परिचय का एक श्लोक भीत पर लिखकर वृक्ष पर बैठ कर वापिस अपने घर लौट आता है।

उधर गुणावली को जब इस घटना का परिचय मालूम होता है तो वह व्यापारी का वेश बनाकर उसे ढूँढने निकलती है और सुयोग से पुण्यसार के नगर

---

१ समय सुन्दर रास पचक सम्पादक-श्री भवरलाल नाहटा, पृ. १२०।

मे पहुँच जाती है। वहाँ, उसे एक योग्य व्यापारी समझकर, सेठ रत्नसार उसका विवाह अपनी पुत्री रत्नवती से कर देता है। निश्चित अवधि की समाप्ति पर भी जब गुणावली का अपना प्रियतम नही मिलता तो वह अग्नि-प्रवेश के लिए उद्यत् हो जाती है। इस अवसर पर पुण्यसार उसके पास जाता है और उसके अग्नि-प्रवेश का कारण पूछता है। गुणावती अपना वास्तविक परिचय प्रकट कर देती है। दोनो, प्रेमी-प्रेमिका एक दूसरे को प्राप्त कर बडे प्रसन्न होते है। पुण्यसार के पूर्वभव के साथ कथा की समाप्ति होती है।

३९. समयसुन्दर : नलदमयन्ती चौपई[1]

रचयिता ·

इसके रचयिता कविवर समयसुन्दर है।

रचना-काल ·

'नलदमयन्ती चौपई' का रचना-काल सवत् १६७३ है। यथा—

> 'सवत सोल त्रिहुतरे, मास बसत आणद।
> नगर मनोहर मैंडतौ, जिहा वासु पूज्य जिणद ॥
> उवझाय यमणइ समय सुन्दर, कीयो आग्रह नेतसी।
> चउपइ नलदमयन्ती कैरी, चतुर माणस चितवसी ॥[2]

इसकी एक हस्तलिखित प्रति श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर मे उपलब्ध हुई है, जिसमे कथा दो खण्डो मे विभाजित है तथा पॉच ढालो मे वर्णित है।

कथा-वस्तु

'नलदमयन्ती चौपई' की कथा-वस्तु महाभारत के 'नलाख्यान' पर आधारित है।

यह नलदमयन्ती की प्रेम-निष्ठा को लेकर लिखा गया एक सरस काव्य है। प्रारम्भ मे ही कवि ने जम्बू द्वीप के भारत खण्ड का तथा उसमे सम्मिलित ३२ देशो का सरस वर्णन कर राष्ट्रीय अखडता की मनोरम झाकी प्रस्तुत की है। दमयन्ती का स्वयवर-वर्णन तो महाकवि कालीदास द्वारा इन्दुमति के स्वयवर वर्णन की

---

१. नलदमयन्ती चौपई (ह लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर। पत्र-सख्या २८।

२. समयसुन्दर कृति कुसुमाञ्जली : सम्पादक—श्री अगरचन्द नाहटा, पृ. सख्या ५७।

चारुता को पीछे छोड गया है। श्रृ गार-रस का सुन्दर परिपाक हुआ है। दमयन्ती के नख-शिख का वर्णन परम्परागत होते हुए भी कोमल कल्पना और सरस शब्दावली युक्त है। काव्य-सौष्ठव की दृष्टि से यह रचना राजस्थानी-काव्य परम्परा मे अपना विशिष्ट स्थान रखती है।

४०. हेमरत्न : लीलावती[१]

रचयिता

हेमरत्न सूरि पूर्णिमागच्छ के वाचक पद्मराज के शिष्य थे। इनका रचना-काल अनुमानत· स० १६१६–१६७३ है।[२]

रचना काल

इसका रचना-काल सवत् १६७३ है।

सवत सोल त्रिहोतरइ, पाली नगर मझारि।
सील कथा साची रची, प्रवचन वचन विचारि।
सामलता सुख उपजइ, भणता भावढि दूरि।
गुणता नव निधि पामीइ, हेमरतन भरपूरि ॥[३]

कथा-वस्तु

इसमे पाटन नगर के धना सेठ की पत्नि धनवती की पुत्री लीलावती और कोशावी के सागर-सेठ के पुत्र श्री राज की प्रेम-निष्ठा का सरस काव्यमय वर्णन है। श्री राज और लीलावती के पूर्वभव के वृतात के साथ कथा की समाप्ति होती है।

यह कृति शील धर्म के प्रचारार्थ रची गई है। इसमे दोहा, चौपई आदि छन्दो का प्रयोग किया गया है।

४१. शिवदास हंसाउली री वारता[४]

रचयिता :

शिवदास खम्भात के निवासी, जैन कवि थे।

---

१ लीलावती चौपई (ह लि) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रथाक ३५००।

२ राजस्थानी भाषा और साहित्य : डॉ० हीरालाल माहेश्वरी, पृ. स. २६६।

३ लीलावती चौपड (ह लि.) रा. प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रंथाक ३५०० की पुष्पिका।

४. गुजराती साहित्य प्रवाह, खड ५, पृ. स. ४२५–२६।

रचना-काल :

इसका रचना-काल सवत् १६७३ है।

कथा-वस्तु :

इसकी कथा-वस्तु असाइत रचित हसाउली के समान ही है।

हसाउली वीरता दूहा, चौपई और छप्पय छन्दो मे लिखी गई है। इसकी भाषा गुजराती से प्रभावित राजस्थानी है।

४२. जटमल : गोरा बादल चौपई[1]

रचयिता :

गोरा बादल चौपई के रचयिता जटमल नाहर लाहोर-निवासी जैन-श्रावक थे।

रचना-काल :

इसकी रचना सबला ग्राम मे स० १६८० मे सम्पन्न हुई। यथा—

सोलैसे असिमै समै, फागरण पूनिम मास।
वीरा रस सिरणगार रस, कहि जटमल सु प्रकाश ।।१४६।।[2]

कथा-वस्तु :

इसमे पद्मावती और रतनसेन की स्वामी भक्ति की कहानी सरल भाषा मे मार्मिक-व्यजना के साथ व्यक्त हुई है। राणा रतनसेन सिंहल की राजकुमारी पद्मावती को प्राप्त करने के लिये जोगी का वेश बना कर जाता है और पद्मावती से विवाह करके लौट आता है। एक दिन राघव चेतन पद्मावती का चित्र बनाता है। उस चित्र मे पद्मावती के जघन स्थल पर तिल का चित्र बना देता है जिसे देखकर राजा कुपित हो जाता है और उसे देश निकाले का दण्ड देता है। राघव चेतन राणा से प्रतिशोध लेने के लिए दिल्ली पहुँचता है और पद्मावती के रूप का वर्णन करके उसे प्राप्त करने के लिए चित्तौडगढ पर आक्रमण करने के लिए प्रेरित करता है। अलाउद्दीन अपने आक्रमण को निष्फल जान कर छल से राणा को बन्दी बना लेता है और पद्मावती देने की शर्त पर राणा को छोडने का पत्र चित्तौडगढ के सामन्तो को लिखता है। यहाँ पद्मावती के अन्य कथानको मे वर्णित

---

१. जटमल नाहर कृत गोरा बादल चौपई (पद्मिनी चरित्र चौपई, सा. रा. रिसर्च इस्टीट्यूट, बीकानेर) पृ १८२।

२. वही, पृ. स. २०८।

राणा की भाँति रतनसेन स्वाभिमानी नही निकलता, बल्कि एक कायर की भाँति अपनी धर्म पत्नि को वस्तु की भाँति विधर्मी को दे देने के लिए पत्र लिख देता है। किन्तु, पद्मावती गोरा बादल की सहायता से अपनी सतीत्व की रक्षा करती है और राणा को भी अलाउद्दीन की कैद से मुक्त कराती है।

१५३ छन्दो मे रचित 'गोरा बादल चौपई' काव्य-सौष्ठव की दृष्टि से साधारण है। कहानी वर्णनात्मक है और सरपट चलती है। भाषा भी बोल-चाल की सरल राजस्थानी है।

४३. जटमल : प्रेम विलास प्रेमलता

रचयिता :

इसके भी रचयिता जटमल नाहर है जिनका परिचय इससे पूर्व दिया जा चुका है।

रचना काल :

डा० हरिकान्त श्रीवास्तव ने इसका रचना-काल सवत् १६१३ दिया है जो ठीक नही है।[1] वस्तुत 'प्रेम विलास प्रेमलता' की रचना स० १६६३ मे भाद्रपद शुक्ला ४ रविवार को जलालपुर मे हुई थी।[2]

कथा-वस्तु[3] :

योतनपुर नगर के राजा प्रेम विजय की कन्या प्रेमलता और मत्री मदन-विलास के पुत्र प्रेम विलास मे, साथ-साथ पढते समय प्रेम होगया। जब राजा ने राजकुमारी का विवाह अन्य राजकुमार से करने का निश्चय किया तब दोनो प्रेमी-प्रेमिका ने अमावस की रात्रि को महाकाली के मन्दिर मे जाकर, भागने की योजना बनाली। इस बीच एक योगण योतनपुर आई, उससे राजकुमारी ने रूप बदलने, उडने एवं अजन द्वारा दिव्य-दृष्टि प्राप्त करने की विद्याये प्राप्त करली। एक दिन दोनो प्रेमी-प्रेमिका ने महाकाली के मन्दिर मे गधर्व विवाह कर लिया और उड कर रतनपुर पहुँच गये। सुयोग से वहाँ के राजा का निस्सतान ही स्वर्गवास होगया। अत देवदत्त हाथी द्वारा मगल-कलश प्रेम विलास पर उँडेल दिये जाने पर नगर-

---

१. भारतीय प्रेमाख्यान काव्य, पृ स. २८६।

२. पद्मिनी चरित्र चौपई (सा. रा. रि. इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ. ३८।

३. विस्तृत कथा-वस्तु के लिए देखिये—भारतीय प्रेमाख्यान काव्य (प्रेम विलास प्रेमलता कथा) डा० हरिकान्त श्रीवास्तव, पृ. सं. २८६-२६०।

वासियो ने उसको वहाँ का राजा बना दिया। दोनो प्रेमी-प्रेमिका आनन्दपूर्वक रहने लगे।

प्रस्तुत रचना लोक-कथा पर आधारित है तथा लोकोत्तर घटनाओ की दृष्टि से द्रष्टव्य है। इसमे प्रेम की रहस्यात्मक अभिव्यजना इस बात का प्रमाण उपस्थित करती है कि जैनियो ने लौकिक प्रेमाख्यानो के बीच अलौकिकता के बीच सकेतो का सयोजन सूफियो के अनुसार ही करना आरम्भ कर दिया था। केवल काव्य प्रणयन की शैली मे ही दोनो मे भेद प्रतीत होता है। काव्य-सौष्ठव की दृष्टि से रचना साधारण होते हुए वर्णनात्मक शैली सजीव और सरस है।

४४. किसनउ : महादेव पारवती री वेलि[१]

पृथ्वीराज राठौड कृत 'वेलि क्रिसन रुक्मणि री' काव्य की प्रतिस्पर्धा मे लिखा गया यह काव्य श्रृगारिक-वर्णन की मोहकता के लिए प्रसिद्ध है।

रचयिता :

इसके रचयिता के बारे मे विद्वानो मे मतभेद है। श्री नरोत्तमदास स्वामी इसका रचयिता 'किसना आढा' को मानते है।[२] किन्तु डा० हीरालाल माहेश्वरी के मतानुसार इसका लेखक किसनउ नामक कोई जैनेतर, कवि है, जो ठीक जान पडता है।[3]

रचना-काल :

श्री रावत सारस्वत ने इसका रचना-काल सवत् १६६६–१७०३ के मध्य माना है।[४]

कथा-वस्तु :

शिव पुराण के आधार पर शिव-पार्वती के पौराणिक आख्यान को लेकर इसकी कथा-वस्तु का निर्माण हुआ है जिसमे भगवान शकर के दो विवाहो का (पहला सती के साथ एवं दूसरा पार्वती के साथ) बडा ही सजीव और सरस चित्रण है।

---

१ महादेव पारवती री वेलि, सम्पादक—रावत सारस्वत, (सा. रा. रि. इन्स्टीट्यूट, बीकानेर)

२. राजस्थानी साहित्य एक परिचय, पृ. ३०।

३. राजस्थानी भाषा और साहित्य डा० हीरालाल माहेश्वरी, पृ. सं. १६४।

४. महादेव पारवती री वेलि स. रावत सारस्वत, भूमिका, पृ २६।

'महादेव पार्वती री वेलि' ३८१ छन्दो मे रचित काव्य-सौष्ठव की दृष्टि से एक उत्तम रचना है। इसमे शृ गार-रस की प्रधानता है। वीर-रस का उतना सुन्दर चित्रण नही हो पाया है जितना कि शृ गार-रस का। पार्वती के रूप-लावण्य का मौलिक उपमाओ से युक्त एक सरस उदाहरण द्रष्टव्य है—

माडिया सरोज मयग चइ माथइ,
हरणाखी चित ळावन-हरि।
अलिरगता विराजइ ऊपर,
पग थलिया मीयलइ परि ॥५६॥

× × × ×

आकुस मदन चातन ऊपडिया,
घट महिमा जो वता घणी।
देवल जाहि सिखर चा देवल,
ईडा चा झलकियाँ अणि ॥६३॥

अपने नयनो मे काजल डालती हुई पार्वती का निम्नलिखित रमणीय चित्रण कवि की सूक्ष्म सूझ और चित्रोपमता के गुण को प्रकट करता है—

अणियाला नयण आजिया अजण,
काजल रेख सुरेख कर।
इन्द्र तणइ दिन मूठ अपूठी,
भलका नारवई वाम वर ॥३३७॥

भाषा का चुस्त गठन, कल्पना की समाहार शक्ति, उपमा और उत्प्रेक्षा अलकारो की अनुपम छटा से युक्त भाव-पक्ष और कला-पक्ष की दृष्टि से प्रस्तुत रचना १७वी शताब्दी के उत्तरार्द्ध की प्रौढ कृति मानी जा सकती है।

४५. केशव सदेवच्छ सावलिगा चउपई[1]

रचयिता .

'सदेवच्छ सावलिगा चउपई' के रचयिता खरतर गच्छीय जैन कवि केशव, अपर (दीक्षित) नाम कीर्तिवर्धन है।

---

१. (क) केशव मुनिकृत सदेवच्छ सावलिगा चउपई (ह लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

(ख) मुनि केशव रचित सदयवच्छ सावलिगा चउपई (सदयवच्छ वीर-प्रबन्ध सा रा. रि इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) परिशिष्ट—२, पृ सं. १३५।

रचना-काल :

इसकी रचना वि. स. १६६७ मे विजयदशमी को प्रथमाभ्यास के रूप में की गई।[1]

कथा-वस्तु :[2]

कोकण देशस्थ विजयपुर के राजा महीपाल का पुत्र सदेवच्छ एव मत्री सोम की पुत्री सावलिंगा के साथ २ पढते समय प्रेम हो जाता है। जब सावलिंगा विवाह योग्य होती है, तब उसका विवाह पुष्पावती के सेठ धनदत्त से कर दिया जाता है तथा सदेवच्छ का भी विवाह किसी अन्य राजकुमारी से हो जाता है। किन्तु, इससे दोनो मे प्रेम की तीव्रता और भी बढ जाती है। सदेवच्छ लुक-छिप कर सावलिगा से मिलता रहता है। जब सावलिगा सुसराल जाती हे, तब वह भी वहाँ पहुँच जाता है, और योगी के वेश मे सावलिंगा से मिलता हे। पुष्पावती के राजा की कन्या भी सदेवच्छ पर मुग्ध हो जाती है और राजा उसका विवाह सदेवच्छ से कर देता है। करमोचन मे सदेवच्छ सावलिगा को माँगता है, अत राजा सेठ धनदत्त से सावलिगा को उसे दिलवा देता हे। इस प्रकार दोनो प्रेमी मिलकर वडे प्रसन्न होते है तथा आनन्दपूर्वक रहते है।

प्रस्तुत रचना काव्य-सौष्ठव से युक्त हे। इसमे शृगार-रस का वडा सुन्दर परिपाक हुआ है। इस कृति मे दूहा, चन्द्रायणा एव कवित्त आदि जो छद प्रयुक्त हुए हैं, वे भावानुकूल हैं तथा सुभ्यषित, अन्योक्ति, अर्थान्तरन्यास, कहावते और मुहावरो के द्वारा काव्य रस-पूर्ण वनाया गया है।

४६. लब्धोदय पद्मिनी चरित्र चौपई[3]

रचयिता :

'पद्मिनी चरित्र चौपई' के रचयिता लब्धोदय का जन्म सं० १६८० के लगभग माना गया है। इनका जन्म-नाम लालचद था और दीक्षा का नाम लब्धोदय रखा गया।

रचना-काल :

इसका रचना-काल स० १७०७ चैत्र शुक्ला पूर्णिमा है।[4]

---

१. वही, प्रस्तावना, पृ. स. (त)

२. विस्तृत कथा-वस्तु के लिए देखिए—वही, प्रस्तावना, पृ. स. (ट) से (ढ) तक।

३. पद्मिनी चरित्र चौपई प्रकाशक—सा. रा. रिसर्च इन्स्टीट्यूट, बीकानेर।

४. वही, पृ स. २६, (भूमिका)।

तसु आग्रह करी सवत सतर सतोतरेरे चैत्री पूनम शनिवार ।
नव-रस सहित सरस सवध रच्योरे, निजबुद्धि ने अनुसार ॥

पद्मिनी के चरित्र को लेकर अनेक काव्य रचे गये है । जायसी द्वारा अवधि भाषा मे रचा गया पद्मावत तो प्रसिद्ध है ही, किन्तु राजस्थानी मे इस कथा को लेकर जितने काव्य रचे गये, उनमे लब्धोदय कृत पद्मिनी चरित्र चौपई का प्रमुख स्थान है ।

कथा-वस्तु :

लब्धोदय कृत 'पद्मिमी चरित्र चौपई' की कथा-वस्तु मे अपने पूर्ववर्ती लिखे गये गोरा बादल कवित्त, हेमरत्न एव जटमल नाहर रचित 'गोरा बादल चउपई' की कथा-वस्तु से निम्नलिखित भिन्नता द्रष्टव्य है ।[1]

(क) नागमती के स्थान पर इसमे रतनसेन की पहली रानी का नाम प्रभावती है ।

(ख) सिंहल-प्रमाण की कथा कुछ अतिरजित है ।

(ग) पद्मिनी के देने का विचार वही है, किन्तु मुख्यत: इस मत्रणा का दोष स पत्नी प्रभावती के पुत्र वीरभाण को दिया गया है ।

(घ) कथा-वस्तु को यत्र तत्र परिवर्द्धित कर दिया गया है ।

यह रचना ४६ ढालो और ८१६ गाथा मे रचा गया । वीर श्रृंगार-रस से युक्त एक सरस चरितात्मक प्रवन्ध काव्य है । स्वय कवि ने अपनी कृति की सरस का उल्लेख निम्नलिखित पक्तियो मे किया है ।[2]

सरस कथा नव रस सहित, वीर श्रृगार विशेष ।
कहस्यु कवित कल्लोल स्यु, पूरव-कथा सपेख ॥६॥

४७. जसराज : वीरोचन मुहात री बात[3]

रचयिता :

इसके रचयिता कोई जसराज नाम के कवि हैं जिनकी जीवनी अज्ञात है ।

---

१. वही (रानी पद्मिमी—एक विवेचन डॉ० दशरथ शर्मा) पृ स. ६ ।

२ वही, पृ स १ ।

३. वीरोचन मुहात री बात (ह लि) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर, ग्रंथाक ६००, लि. का स १ ९९ आसोज सुद १३ शनिवार ।
लिपिकर्ता—कुशलमूर्ति के शिष्य दशोक ग्राम के निवासी प किशनलाल है ।

रतनपाल रतनवती रास की एक हस्तलिखित प्रति श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर अजमेर मे उपलब्ध हुई है। शील धर्म के उपदेश के लिए ३४ ढालो मे रचित तीन खण्ड का यह एक सरस प्रेमाख्यानक काव्य है जो कवि के रचना-कौशल की प्रौढता का परिचायक है।

कथा-वस्तु :

पुरिमताल नगर के श्रावक जिनदत्त के यहाँ जब बहुत प्रतीक्षा के बाद रतनपाल नामक पुत्र का जन्म हुआ तो वह कुछ दिन बाद दरिद्र हो गया। जीवन-यापन के लिए पुत्र को गिरवी रख कर वह अपनी पत्नि भानुमति के साथ श्रीपुर नगर चला गया और वहाँ लकडहारे का कार्य करने लगा।

उधर जब रतनपाल बडा हुआ, तब उसे अपने माता-पिता को ढूँढने की चिन्ता हुई। वह पुरिमताल नगर मे पहुँचा और वहाँ के राजा कृष्णन का अन्धापन दूर करके राजकुमारी रतनवती को विवाह मे प्राप्त किया। विवाहोपरान्त रतनपाल अपने माता-पिता की खोज मे जाने लगा, तब रतनवती भी उसके साथ होगई। मार्ग की कठिनाईयो को ध्यान मे रख कर रतनपाल उसे साथ ले चलने के लिए सहमत नही हुआ। इस पर रतनवती ने वीणावादक 'रावल' का छद्म-वेश बनाकर उससे मित्रता की और रतनपाल के साथ होगई। रतनपाल एव रावल एक नगर में ठहरे। वहाँ रतनपाल को छोडकर रावल उसके माता-पिता को ढूँढता हुआ श्रीपुर नगर पहुँचा और उन्हे रतनपाल का पता बतलाया। रावल उन्हे लेकर रतनपाल के पास आगया। रतनपाल को माता-पिता से मिलाने के पश्चात् रतनवती ने 'रावल' का छद्म-वेश त्याग कर वास्तविक रूप धारण कर लिया। रतनपाल रतनवती बडे आनन्दपूर्वक रहने लगे। कथा पूर्वभव के वृतात के साथ होती है।

५० विनय लाभ बछराज चउपई[1]

रचयिता :

इसके रचयिता जैन मुनि विनय लाभ है।

---

१. बछराज चउपइ (ह लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर। -पत्र सख्या ६२। लि. का. स० १८८६।

रचना-काल :

कृति की पुष्पिका मे इसका रचना-काल सवत् १७३७ पौष कृष्णा द्वितीया सोमवार है।[२]

यह २४ ढालो मे तथा चार खण्डो मे लिखा गया लोक-कथा पर आधारित एक सहस प्रेमाख्यानक है। इसमे शृ गार-रस के साथ अद्भुत-रस का प्रमुख रूप से प्रयोग हुआ है।

कथा-वस्तु :

क्षित प्रतिष्ठ नगर के राजा वीरसेन की पटरानी से देवराज और दूसरी रानी धारणी से वछराज का जन्म होता है। वीरसेन के स्वर्गवासी हो जाने पर देवराज अपने सौतेले भाई को देश निकाला दे देता है। वछराज अपनी माता धारणी के साथ उज्जैन नगर मे पहुँचता है और लकडहारे का कार्य करके अपना जीवन-यापन करता है। वह कलाचार्य से विद्याये सीखकर राजा को भी प्रसन्न कर लेता है। वछराज कई अद्भुत-कार्य सम्पन्न करके अपने अद्भुत साहस और शौर्य का परिचय देता है। यक्ष-मन्दिर मे रात्री को विद्याधरी की कचुकी चुराकर रानी को भेट करता है। दत्तसेठ की पुत्री को मायावी पीडा से मुक्त कर उससे विवाह करता है। वह विद्याधरियो के देश मे जाकर स्वर्णचूला और रत्नचूला नामक विद्याधरियो को पत्नि रूप में प्राप्त करता हे तथा यक्ष-अश्व, रत्न, तथा उडनखटोला आदि वस्तुये भी प्राप्त करता है। वह अपनी तीनो पत्नियो को लेकर माता धारणी के पास पहुँचता है। वछराज से रत्न पाकर राजा भी वडा प्रसन्न होता है।

एक दिन राजा वछराज की दोनो विद्याधर पत्नियो को देखकर उनके रूप पर मोहित हो जाता है और उन्हे प्राप्त करने के लिए अपने मार्ग से वछराज को दूर करना चाहता है। इसके लिए वह वछराज से सिंहनी का दूध, वोलता नीर, यमराज से सन्देश आदि अलभ्य वस्तुये मगाता है और असम्भव कार्य सौपता है। वछराज यक्ष की सहायता से सब कार्य सम्पन्न कर लेता है। वाद मे राजा अपनी दुष्टता के लिए बडा लज्जित होता है और राजकुमारी का विवाह उसके साथ कर देता है। उधर देवराज के दुष्ट कार्यों से तग आकर क्षित प्रतिष्ठ नगर

---

२ सवत् सत्रै सैतीसे, पोस मास वदि वीज।
तिण दिन कीधी चौपई, सोमवार तीय हीज॥
श्री वछराज कुमार तणी चिहु खडे सवध।
कीधो श्री मुलतान मैं प्रसिद्ध गणौ प्रवंध॥

की जनता वछराज को आकर राज्य सम्हालने के लिए आमन्त्रित करती है और वछराज देवराज को पराजित कर अपना राज्य सम्हाल लेता है। कथा वछराज के पूर्वभव के वृतात के साथ समाप्त होती है।

मध्यकालीन लोक-कथाओ के अध्ययन की दृष्टि से इस कृति का विशेष महत्व है। वर्णन की चारुता और सरसता के कारण कवि अपने पाठको का असम्याव्य एव अतिमानवीय अद्भुत घटनाओ के प्रति भी विश्वास अर्जित करने में सफल प्रतीत होता है। लोक-गीत शैली पर आधारित मधुर ढालो मे गाया जाने वाला यह काव्य अपने काव्य-सौष्ठव की दृष्टि से भी एक प्रौढकृति कही जा सकती है।

५१. दामोदर : माधवानल कामकन्दला[1]

रचयिता :

'माधवानल कामकन्दला' के रचयिता दामोदर हैं जिनका जीवन-परिचय अज्ञात है।

रचना-काल ·

'माधवानल कामकन्दला' का लिपि काल सवत् १७३७ है और रचना-काल दिया हुआ नही है। अत इसका रचना-काल स० १७३७ से पूर्व माना जा सकता है।[2]

कथा-वस्तु

दामोदर कृत 'माधवानल कामकन्दला' की कथा-वस्तु किंचित् हेर-फेर के साथ गणपति और कुशल लाभ के 'माधवानल कामन्दला' काव्य के समान ही है। दामोदर ने माधवानल और कामकन्दला के पूर्वभव की कहानी नही दी है। इसके अतिरिक्त पुष्पावती से आने के उपरान्त कवि ने माधव का अमरावती मे रुकने एव मनोवेगो मत्री की पत्नि के गर्भपात की घटना का आयोजन कर माधव की मोहिनी शक्ति का अधिक विस्तार से वर्णन किया है।

---

१ माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध, स एम आर मजूमदार, (ओरियन्टल इन्स्टीट्यूट, बडौदा) परिशिष्ट ३, कवि दामोदर कृत माधवानल कथा।

२. वही, (रचना की पुष्पिका)
"इति श्री कवि दामोदर कृत माधवानल कथा समपुरण लाखुछि। सवत् १७३७ नेवर ने जेठ द्रुतीय वद ६ वार बुध सपूर्ण वड नगर मध्ये लखुछि।"

'माधवानल कामकन्दला' दोहा छद मे लिखी गई काव्य-सौष्ठव की दृष्टि से एक प्रौढ कृति है। रचना के बीच-बीच मे ढोला मारू दूहा' एव 'कुशल लाभ' के दोहे जोड दिये गये है अथवा यह प्रक्षिप्त रूप से आगये प्रतीत होते है। सयोग, वियोग, शृ गार की नाना भाव दिशाओ का इसमे सरस और मार्मिक चित्रण मिलता है। माधव से मिलने के लिए वियोगनी कामकन्दला की यह अभिलाषा कितनी हृदय-द्रावक और मर्मस्पर्शी है—

हइहु वाली मसिकस। अक्षर लखावु सोइ ॥
ते कागत पीउ वाचस्यइ। इण्ट मिलावउ होई ॥

५२. कलस : चन्दकुँवर री बात

'चन्दकुँवर री बात' की अनेक हस्तलिखित प्रतियाँ १९वी शताब्दी के प्रारम्भ से लेकर २०वी शताब्दी उत्तरार्द्ध सवत् १९७० तक की विभिन्न सस्थानो मे उपलब्ध होती है। रा प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर मे ही इसकी १५ से अधिक प्रतियाँ उपलब्ध है। इससे इस कथा की लोकप्रियता प्रकट होती है।

रचयिता .

डा० मोतीलाल मेनारिया ने इसका रचयिता प्रतापसिह माना है[2], किन्तु प्रतापसिह न तो इस कृति का रचयिता ही है और न डा० हरिकान्त श्रीवास्तव के अनुसार इसका प्रति लिपिकार है[3], बल्कि वह तो इस कृति के रचयिता का आश्रय-दाता है। विभिन्न प्रतियो के अवलोकन से यह निष्कर्ष निकलता है कि इस कृति

---

१. (क) चदकुँवर री वारता (ह लि) रा प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रंथाक–४९१५।

(ख) चदकुँवर री बात (ह. लि.) राजस्थानी शोध सस्थान, जोधपुर ग्रथाक ३१२९१ की पृष्ठ सख्या २२४ से २२७ तक। लिपिकाल स. १८३६ फागण सुद ६।

(ग) चदकुँवर री बात (ह लि.) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रथाक ७७५३ के गुटका की पृ. स. ४७ से ६० तक।

(घ) चदकुँवर री बात (ह. लि.) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रंथाक ३५७३ (४३) लिपिकाल सवत् १८०८।

२ राजस्थानी भाषा और साहित्य, पृ. स. १९१।

३. भारतीय प्रेमाख्यान काव्य, पृ. स. २९७।

का मूल लेखक कविराय कलस है। हंस कवि सु ऐसो कह्यो। कयुयक वात सुणाय ॥'—इस पद्यांश मे रेखांकित हस शब्द को लेकर डा० हरिकान्त ने इसका रचयिता 'हस' लिखा हे पर मुझे रा प्रा. विद्या प्रतिष्ठान मे जो प्रति उपलब्ध हुई है उसमे 'हस' के स्थान पर 'हसि' शब्द लिखा मिलता है और रचना की पुष्पिका मे कृतिकार का नाम 'कलस' कवि लिखा हे।[1] अत' यहाँ 'हस' या 'हसि' शब्द का अभिप्राय हँस कर कहने से हे। यदि हम हस किसी व्यक्ति का नाम भी मानले तब भी वह व्यक्ति प्रतापसिह को कलस कविकृत 'चदकुँवर री वारता' सुनाने वाला कोई भाट अथवा चारण हो सकता है, कृतिकार नही।

रचना-काल ·

डा मोतीलाल मेनारिया ने इसका रचना-काल स. १५४० दिया हे[2] जो ठीक नही प्रतीत होता। अभयजैन ग्रथालय, बीकानेर मे प्राप्त एक प्रति के आधार पर डा हरिकान्त ने इसका रचनाकाल सवत् १७४० माना है।[3] रा प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर मे उपलब्ध एक हस्तलिखित प्रति मे भी इसका रचना-काल स. १७४० ही दिया हुआ है,[4] अत. चदकुँवर री वारता का रचना-काल निस्सकोच-पूर्व स १७४० माना जा सकता हे।

कथा-वस्तु

अमरपुरी के राजा अमरसेन का पुत्र चन्दकुमार एक दिन आखेट खेलने वन मे जाता है। वन मे मार्ग भूलकर वह राजा अजैदीन की नगरी त्रिवापुरी मे पहुच जाता है। वहा के नगर-सेठ सामजी की पत्नि अपने पति के विदेश जाने पर

---

१. 'क' प्रति—

प्रताप सिघ खुमाण नैं, हुकम कीयौ करिचाय।
हसि कवि सौ अैसे कह्यो, कछुक बात सुनाय ॥२॥

(ग) प्रति—

प्रताप सिघ सुरत सब, वाचत सदा सुहाय।
चद बात पुरी हुई, करि कलस कविराय ॥८५॥

२ राजस्थानी भाषा और साहित्य, पृ स १६१।

३. भारतीय प्रेमाख्यान, पृ स. २६७।

४ 'क' प्रति—

सतरे सै चालीस मै, तेरस पोस ज मास।
कीनौ गुणाकर चावकै, भोगी पुरण आस ॥४॥

पीछे से कामातुर रहती है। एक दासी चन्द्रकुँवर को सेठानी के पास ले जाता है और वह आमोद-प्रमोद के साथ वही रहने लगता है। इधर दो वर्ष बीत जाने पर राजकुमार का पता नही चलने पर राजा राजकुमार की खोज के लिए अपने प्रधान को भेजता है। प्रधान चद्रकुँवर को खोजता हुआ उसके पास पहुचता है और सेठानी के चगुल से उसे मुक्त करता है। त्रिबापुरी के राजा को कुमार का वास्तविक परिचय प्राप्त होने पर अपनी राजकुमारी का विवाह उसके साथ कर देता है। चन्दकुँवर राजकुमारी को लेकर अमरपुरी लौट आता है और सुखपूर्वक रहने लगता है।

चन्द्रकुँवर री वारता अथवा बात परकीया-प्रेम पर आधारित एक गद्य कथा है जो काव्य सौष्ठव की दृष्टि से साधारण कोटि की रचना है। विभिन्न प्रतियो मे इसके कथानक मे हेर-फेर मिलता है पर मूल कथा एक सी है। कही-कही वारता मे घटा बढी मिलती हे।

५३ रतन प्रभ रणसिघ कुमार चौपई[1]

रणसिघ कुमार चौपई ३६ ढालो मे तथा ७०६ सर्वगाथा मे रचित लोक-कथा पर आधारित एम सरस प्रेमाख्यानक-काव्य है। इस की रचना शील धर्म के उपदेशार्थ पाटण नगर मे हुई थी।

रचयिता :

इसके रचयिता जैनमुनि रतन प्रभ हैं।

रचना-काल .

कृति की पुष्पिका स रचना-काल स १७४१ विदित होता है।[2]

कथा-वस्तु :

(१) विजयपुर नगर के राजा विजयसेन की छोटी रानी विजया के जब पुत्र जन्म लेता है तब उसकी सौत अजिया ईर्ष्यावश उसे दासी से जगल मे फिंकवा देती है।

(२) रणसिघ कुमार का पालन पोषण कलबी नाम का एक किसान करता है। जब राजकुमार युवक हो जाता है तो वह कनकपुर के राजा की पुत्री कनकावती को स्वयवर मे जीतकर उससे विवाह करता है।

---

१. रण सिघकुमर चौपई (ह लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।
२ "सवत् सतरइ इकतालीसइ व बरइरे इग्यारससि वदी पोस।"

(३) सोमापुरी की राजकुमारी रतनवती से विवाह के लिए जाते समय मार्ग मे उसकी एक यक्ष-मन्दिर मे राजा कमलसेन की पुत्री कमलावती से भेट होती है और दोनो एक दूसरे पर मुग्ध होकर गन्धर्व विवाह कर लेते है।

(४) रतनवती को जब इस बात का पता चलता है, तब वह एक गव मूलिया कूटनी को भेजकर राजकुमार के मन मे कमलावती के चरित्र के प्रति सन्देह उत्पन्न कर देती है। फलस्वरूप गर्भवती कमलावती को जगल मे छोड दिया जाता है और उस पर विपत्तियो का पहाड टूट पडता है।

(५) एक दिन रतनवती अपने षड्यत्र का स्वय भण्डाफोड कर देती है जिससे राजकुमार कमलावती के प्रति किये गये क्रूर-व्यवहार की ग्लानि से आत्म-दाह करने को उद्यत हो जाता है। उस अवसर पर कमलावती भी सुयोग से पहुच जाती है।

(६) रणसिघ कुमार कमलावती को पाकर बडा प्रसन्न होता है। कमलावती रतनवती का भी अपराध क्षमा करवा देती है। पूर्वभव के वृतात के साथ कथा समाप्त होती है।

५४. नरबद सुपियारदे री बात[1]

रचयिता :

इसके रचयिता के बारे मे कोई जानकारी प्राप्त नही होती है।

रचना-काल .

इसकी सबसे प्राचीन हस्तलिखित प्रति श्री स्वरूपलाल ग्रथालय, उदयपुर, की है। जिसका लिपिकाल सवत् १७५४ है। अत इसका रचना-काल भी सवत् १७५४ से पूर्व का माना जा सकता है।[2]

---

१. (क) नरबद सुपियारदे री बात (ह. लि.) रा प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्र थाक २८६४७।

(ख) नरबद सुपियारदे री बात (ह लि) सरस्वती भण्डार, उदयपुर, ग थाक ७०३ (४७) लिपिकाल स० १८२३।

(गन) रबद सुपियारदे री बात (ह लि) अनूप सस्कृत लाइब्रेरी बीकानेर, ग्र थांक २४ (५५)।

२ नरबद री अर नृसिंघ सीधल री पियारदे बाबत (ह. लि.) श्री स्वरूपलाल ग्रंथालय, उदयपुर, ग्र थाक ६१ (३८)।

कथा-वस्तु :

नरवद सुपियारदे री बात मे मण्डोरराज के नरवद और सुपियार दे की प्रेम-कथा वर्णित है।

नरबद के दानशीलता की प्रसिद्धि सुनकर राणा हमीर परीक्षा के लिए भाट को भेजकर उसकी आखे मगवाता है। नरबद सहर्ष अपनी आखे निकाल कर देता है। इस पर राणा को वडा पश्चाताप होता है। ब्राह्मण से विदित होना है कि यदि सुपियारदे से नरबद का विवाह हो जाय तो उसके हिये की आखे खुल सकती है। उधर साहजी की रूपवती बेटी सुपियारदे की सगाई पहले से ही मोजत के नरसिंघदास सीदल के साथ हो जाती है, किन्तु नरबद के वीरता पूर्व व्यक्तित्व से डरकर साहजी सुपियारदे से नरबद की आरती उतरवा देता है। अत वह नरवद को ही अपना हृदय समर्पित कर देती है। किन्तु उसे वधू बनकर नरसीघ सदिल के साथ जाना पडता है। कुछ काल बाद, सदिल के क्रूर-व्यवहार से रुष्ट होकर नरवद को प्रेम-पत्र लिखती है और नरबद उसे भगाकर ले जाता है। दोनो प्रेमी आनन्दपूर्वक रहते है।

'सुपियारदे री वात' की कथा-वस्तु ऐतिहासिक है। यह गद्य मे रचित एक साधारण कोटि की रचना है, किन्तु इसका गद्य १८वी शताब्दी होने से महत्व-पूर्ण है।

५५. लाभवर्द्धन लीलावती चौपई[1]

रचयिता :

लीलावती चौपई के रचयिता लाभवर्द्धन और पद्मिनी चरित्र चौपई के रचयिता लब्धोदय एक ही व्यक्ति जान पडते है। लब्धोदय का परिचय इससे पूर्व दिया जा चुका है।

रचना-काल :

लीलावती चौपई की उपलब्ध हस्तलिखित प्रति मे इसका लिपिकाल स० १७४२ दिया हुआ है। इससे अनुमान किया जा सकता है कि इसका रचना-काल भी स० १७४२ से कुछ पूर्व हुआ होगा।

---

१ लीलावती चौपई (ह लि.) रा. प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्र थाक ६११६, पत्र सख्या १४ (पत्र १ से ३ अप्राप्य) माप १०½" × ४½" लिपिकाल सवत् ७४२ वैसाख वद १५ शुक्रवार।

कथा-वस्तु :

लीलावती का पति जिणदास जब परदेश मे होता है तब वह एक दिन अपने वियोग की दु ख गाथा अपनी सखी को सुनाती है। एक चोर छिपकर लीलावती की इस विरह-कथा को सुन लेता है और जिणदास का छद्म-मित्र बनकर लीलावती को धन-सम्पति सहित उसे अपने पति से मिलाने के बहाने अपने घर ले जाता है। लीलावती के सम्मुख वह अपना प्रणय-निवेदन भी प्रस्तुत करता है। लीलावती इस विपत्ति के समय भी अपना धैर्य नही खोती। वह एक महीने का व्रत-उपवास रखने का बहाना बनाकर अवाछित प्रेमि से अपने को बचाये रखती है और एक दिन अवसर मिलने पर उसके चु गल से मुक्त हो जाती ह। वहा से निकलकर वह एक अन्य ठग के चु गल मे पुन फस जाती है, किन्तु उसे विष के लड्डू खिलाकर उसका जीवन समाप्त कर देती है। मृत चोर के शव की गठरी लिए जब वह चौराहे पर पहुचती है, तब उसे चार ठग और मिलते है। वह उन्हे भी चकमा देकर तथा गठरी सम्हलाकर बच निकलती हे और अपने प्रियतम से जा मिलती है।

५६ राजा भोज अर मतरसेन री वारता

रचयिता :

इसके रचयिता का परिचय अज्ञात है।

रचना-काल :

इस वारता की हस्तलिखित प्रतिया सरस्वती भण्डार उदयपुर[१] तथा श्री स्वरूपलाल ग्र थालय[२], (जगदीश चौक) उदयपुर मे उपलब्ध हुई है। इनका लिपि-काल क्रमशः सवत् १८२३ एव सवत् १७५४ है। अत इसका रचना-काल भी सवत् १७५४ से पूर्व विदित होता है।

कथा-वस्तु :

राजा भोज पानीपत के राजा मन्तरसेन की कन्या से विवाह के लिए जाता है। मार्ग मे, एक मन्दिर मे अप्सरा उसके हाथ मे डोरी बाधकर उसे भी अप्सरा बना लेती है। किसी भाति राजा अपने पूर्व रूप को प्राप्त कर पानीपत पहुचता है और वहा मालिन की सहायता से राजकुमारी को देखकर उसके रूप पर मोहित हो जाता है। राजा भोज राजकुमारी के 'सत' की परीक्षा लेकर उसके साथ विवाह कर लेता है। इस मुख्य कथा के साथ अतीत की गुफा से चोरो द्वारा चुराई गई जादुई वस्तुये—कथा, उडनखटोला, मनसापर्ण डिबिया एव सिद्धि-डण्डा को राजा द्वारा चोरो मे प्रतियोगिता कराकर स्वय हडप जाने की अन्तर्कथा भी वर्णित है।

५७. वारता राजा गंधर्वसेणरी

रचयिता :

इसके रचयिता का भी परिचय अज्ञात है।

रचना काल

इस वारता की हस्तलिखित प्रतिया अनूप सस्कृत लाइब्रेरी, बीकानेर,[3] सरस्वती भण्डार[4] एव श्री स्वरूपलाल ग्रथालय[5] उदयपुर मे उपलब्ध है। इनका लिपिकाल क्रमश सवत् १८२०, १८२३ एव सवत् १७५४ है। सबसे प्राचीन प्रति सवत् १७५४ की होने से विदित होता है कि इस लोक-कथा की रचना स० १७५४ से पूर्व हो चुकी थी।

कथा-वस्तु ·

इसकी कथा-वस्तु इन्द्र के पुत्र गधर्वसेन और अप्सरा लीलावती के प्रेम से सम्बन्धित है। स्वर्ग मे प्रेम करने के बाद अपराध मे इन्द्र इन दोनो को श्राप देता है जिससे गधर्वसेन गधा हो जाता है और लीलावती पहले राजा विक्रमादित्य के सिंहासन की पुतली होती है और बाद मे राजा सेन के यहाँ राजकुमारी के रूप मे जन्म लेती है। राजकुमारी के बडी होने पर राजा उसका विवाह गधा रूपधारी गधर्वसेन से कर देता है। विवाह के पश्चात् गधर्वसेन शाप से मुक्त होकर अपना वास्तविक रूप प्राप्त कर लेता है और दोनो प्रेमी-प्रेमिका आनन्दपूर्वक रहते है।

५८ राजा विजेराज री वारता

रचयिता

इस वारता के रचनाकार का भी जीवन परिचय अज्ञात है।

---

१ राजा भोज अर मतरसेण राजा री वारता (ह लि) सरस्वती भण्डार, उदयपुर, ग्रथाक ७०३ (१००) पृ. स. २४०–२४७।

२. मतरसेण राजा री बात (ह. लि) श्री स्वरूपलाल ग्रथालय, उदयपुर, ग्रथाक–६१ (६३)।

३. गधर्वसेण री बात (ह लि) अनूप-सस्कृत लाइब्रेरी, बीकानेर, ग्रथाक–७०३ (६)।

४. गधर्वसेण री बात (ह लि.) सरस्वती भण्डार, उदयपुर, ग्रथाक–७०३ (६)।

५. वारता गधर्वसेण राजा री (ह. लि.) श्री स्वरूपलाल ग्रथालय, उदयपुर। ग्रथाक–६१ (२)।

रचना-काल :

इस वारता की हस्तलिखित प्रतियाँ श्री स्वरूपलाल ग्रथालय[1] एव सरस्वती भण्डार, उदयपुर[2] तथा रा. प्रा विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर[3] मे उपलब्ध होती है जिनका लिपिकाल क्रमश स. १७५४, स १८२३ तथा १९वी शताब्दी (विक्रम) है। उपलब्ध प्रतियो मे सबसे प्राचीन प्रति का लिपिकाल स १७५४ है, अत यह निश्चित है कि यह लोक-कथा भी स. १७५४ से पूर्व प्रचलित थी।

कथा-वस्तु

पाटण के राजा विजयराज ने एक राजपूत-कन्या पर मोहित होकर मत्री के मना करने पर भी उससे विवाह कर लिया। वह रानी दुराचारणी निकली। वह अपने महल मे सुरग बनवाकर, एक साहुकार के पास रमण के लिए जाने लगी। मत्री सुमत के मरने पर उस रानी ने अपने प्रेमी साहुकार को मत्री बना दिया और स्वर्गीय मत्री के पुत्रो से बदला लेने के लिए उन्हे देश निकाला दिलवा दिया। किन्तु, कुछ समय व्यतीत हो जाने पर मत्री-पुत्र राजा के पास पहुँचे और उन्होने रानी की करतूतो का भण्डाफोड कर दिया। राजा ने उनकी बात को, जाँच करने पर सच पाया और रानी को 'दुहाग' देकर मत्री-पुत्रो को पहले जैसा स्थान दे दिया। इस कथा मे साहुकार की पत्नि द्वारा भूत के साथ रमण करने की तथा अन्य आठ अर्न्तकथाये वर्णित है।

५९ कुंवर चित्रसेण री बात[4]

रचयिता :

रचनाकार का परिचय अज्ञात है।

---

१ विजैपति राजा री बात (ह. लि.) श्री स्वरूपलाल ग्रथालय, उदयपुर, ग्रथाक ६१ (४६)।

२. राजा विजेराज री वारता (ह. लि.) सरस्वती भण्डार, उदयपुर, ग्रथाक–७०३ (४९) पृ. स. २१६–२३३।

३. विजेपति राजा री बात (ह. लि.) रा प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रथाक १५२९५ (९)।

४. (क) कुँवर चित्रसेण री बात (ह. लि.) रा. प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रथाक १५२९५ (३१) लि का. १९वी शताब्दी (विक्रम)।

(ख) चित्रसेण कुँअर री बात (ह. लि.) सरस्वती भण्डार, उदयपुर, ग्रंथाक ७०३ (३९) पृ स १७१–१७८, लिपिकाल सं० १८२३।

रचना काल :

उपलब्ध हस्तलिखित प्रतियो मे सबसे प्राचीन हस्तलिखित प्रति का रचना-काल स. १७५४ है,[1] अत इसका रचनाकाल भी इससे पूर्व का माना जा सकता है।

कथा-वस्तु :

चम्पा नगर के राजा विक्रम की 'दूहागवती' रानी से कुँवर चित्रसेन का जन्म होता है। राजकुमार जब युवक हो जाता है तब एक दिन एक सुतार राजसभा मे उडने वाला काष्ठ का घोडा लाता है। घोडे की परीक्षा के लिए जब राजकुमार उस पर बैठता है, तब वह राजकुमार को लेकर उड जाता है और भूतो की नगरी में पहुँचता है। वहाँ राजकुमार भूतो की कन्या से विवाह करता है। तदन्तर सिरोही के राजा की पुत्री से विवाह करके घर लौट आता है। इस लोक-कथा मे कई चमत्कारपूर्ण बातो का उल्लेख मिलता है। एक करामाती जोगी की अन्तर्कथा भी वर्णित है।

६०. रतन माणक साहजादा री बात[2] :

रचयिता :

इसके रचयिता का परिचय अज्ञात है।

रचना-काल :

इसकी उपलब्ध हस्तलिखित प्रतियो मे से सबसे प्राचीन प्रति स० १७५४ की है[3], अत इसका रचना-काल भी इससे पूर्व का माना जा सकता है।

कथा-वस्तु

थहेरा राजा का पुत्र राजकुमार रतनभाभी के ताना मारने पर पद्मिनी राजकुमारी से विवाह कर लाने के लिए घर से निकल पडता है। वह समुद्र मे स्थित पजू पातसाह की नगरी मे मच्छ की पीठ पर बैठ कर पहुँचता है तथा वहाँ महादेव के मन्दिर मे ठहरता है। उस मन्दिर मे राजकुमारी 'पायजेब' की खोज में

---

१. चित्रसेन कुँअर री बात (ह लि.) श्री स्वरूपलाल ग्रथालय, उदयपुर, ग्रथाक ६१ (३०) लि का स० १७५४।

२ रतन माणक साहजादा री बात (ह. लि.) सरस्वती भण्डार, उदयपुर, ग्रथाक ७०३ (६०) पृ स. ११३, लिपिकाल-स० १८२३।

३. रतन माणक साहजादा री बात (ह लि.) श्री स्वरूपलाल ग्रंथालय (जगदीश चौक) उदयपुर, ग्रथाक ६१ (१७) लिपिकाल स० १७५४।

पहुँचती है, तब एक दूसरे को देखकर दोनो मुग्ध हो जाते है और दोनो एक मच्छ की पीठ पर बैठकर उस द्वीप से भाग निकलते है। लौटते समय मार्ग मे राजकुमारी को एक गुफा मे छोडकर राजकुमार विवाह की सामग्री लाने के लिए एक नगर मे जाता हे। वहाँ मालिन उसके रूप पर मुग्ध होकर उसे मेढा बनाकर अपने घर मे रख लेती है। उधर एक ग्वाला राजकुमारी को अपनी पत्नि बनाने के लिए जबरन घर ले जाता है, किन्तु राजकुमारी माणक एक दिन अवसर पाकर पुरुष-वेश मे घोडे पर बैठकर निकल पडती है और नगर मे पहुँचती है। वहाँ का राजा उसे राजकुमार समझकर अपनी कन्या से विवाह कर देता है। राजकुमारी राजकुमार रतन का पता चलाने के लिए नगर-भण्डारा करती है जिसमे वह मालिन नही आती। मालिन को पकड लिया जाता है और उसके चुगल मे से राजकुमार को मुक्त कर लिया जाता है। राजकुमार रतन राजकुमारियो के साथ आनन्दपूर्वक रहता है।

६१. विनयप्रभ विद्याविलास[1]

रचयिता ·

विद्याविलास के रचयिता विनयप्रभ है।

रचना काल :

कृति की पुष्पिका से इसका रचना-काल स० १७५८ विदित होता है।

कथा-वस्तु

(१) उज्जैन के सेठ धनपति का पुत्र धन सागर जब राज्य प्राप्ति की कामना करना है तब उसका पिता रुष्ट होकर उसे घर से निकाल देता है।

(२) धनसागर श्रीपुर नगर मे पहुँचकर, वहाँ एक विद्यालय मे प्रवेश पा लेता है। विद्यालय मे उसकी भेट राजकुमारी सोहग सुन्दरी से होती है जो उस पर मुग्ध हो जाती है।

(३) दोनो कामदेव के मन्दिर मे जाकर गधर्व-विवाह कर लेते है और साडनी पर चढकर वहाँ से भाग जाते है। मार्ग मे सोहग सुन्दरी को सोती हुई छोडकर धनसागर अन्यत्र चल देता है।

---

१ विद्याविलास (ह लि) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्र थाक ८१५०, पत्र–सख्या ४०, माप ५" × १०"।

२ सवत सतर अठावन वरसे मास भाद्र व तीथी तेरस जी सोमवार रचीयो ए सरसे चतुर साभल वात रसे जी।

(४) राजकुमारी सोहग सुन्दरी धनसागर के वियोग मे दुखित हो 'आहडपुर' पहुँचती है और वही एक आवास मे रहकर धनसागर की प्रतीक्षा करती है।

(५) सुयोग से धनसागर भी वही पहुँच जाता है और एक पुरालेख पढकर विद्याविलास की उपाधि के साथ राज-सम्मान प्राप्त करता है।

(६) उस नगर मे भ्रमण करते समय उसके रूप पर मुग्ध होकर एक वेश्या उसे तोता बना लेती है। एक दिन अवसर पाकर तोता उडकर राजमहल की छत पर राजकुमारी के पास पहुँचता है और राजकुमारी को अपना परिचय देता है।

(७) राजकुमारी विद्याविलास को सोहग सुन्दरी से मिला देती है विद्याविलास को पाकर राजा भी प्रसन्न होता है और राजकुमारी का उसके साथ विवाह कर देता है और अपना आधा राज्य भी दे देता है।

मध्यकालीन लोक वार्ताओ में विद्याविलास बहुत लोकप्रिय वार्ता प्रतीत होती है। इस लोक-वार्ता को लेकर विभिन्न समय मे विभिन्न लेखको ने सरस-काव्यो की रचना की है। श्री हीराणद और मुनि आज्ञासुन्दर की रचनाओ का इससे पूर्व हम परिचय दे चुके हैं। श्री जिनहर्ष ने भी विद्याविलास नामक काव्य की रचना की थी। विद्याविलास चौपई नाम से एक कृति और भी मिलती है जिसका लिपिकाल स० १६६३, माह वद ९वी है।

विनयप्रभ कृत प्रस्तुत कृति एक सरस प्रेमाख्यान-काव्य है। काव्य-सौष्ठव की दृष्टि से भी इसका महत्वपूर्ण स्थान है। सयोग और वियोग के मार्मिक चित्र चित्रित किये गये हैं। दृश्य-विधान, प्रकृति-चित्रण, प्रभात वर्णन सजीव बन पडे हैं तथा कवि की सूक्ष्म पर्यवेक्षण शक्ति का परिचय देते हैं। समस्या-विनोद, प्रहलिका आदि के वर्णन मे कवि का उक्ति चातुर्य दृष्टव्य है। गाहा, गूढा, कवित्त आदि लोक-छद और ढाल आदि लोक गीत शैली मे लिखा होने से इस काव्य की गयात्मकता से सजीवता बढ गई है। मध्यकालीन सामाजिक एव सास्कृतिक अध्ययन की दृष्टि से भी इस कृति का महत्वपूर्ण स्थान है।

६२. वीरमदे सोनीगरा री वात[1]

रचयिता

इसकी विभिन्न समय की हस्तलिखित प्रतियाँ उपलब्ध होती हैं, जिनसे

---

१. वीरमदे सोनीगरा री वात (ह लि) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रथाक ३५५५, पत्र–सख्या १६२–१६८।

मूल लेख का पता नही चलता है। 'मुहता नैणसी री ख्यात' मे भी इसकी कथा दी गई है।

रचना-काल

इसका लेखन-काल संवत् १७६१ है।[1]

कथा-वस्तु

'वीरमदे सोनीगरा री वात' एक प्रेमाख्यान सम्बन्धी अर्द्ध ऐतिहासिक गद्य–कथा है जिसका पूर्वार्द्ध जायसी के पद्मावत की भाँति काल्पनिक और उत्तरार्द्ध ऐतिहासिक है जिसमे कल्पना का भी यत्र–तत्र मिश्रण है। कथा का विकास अद्भुत घटनाओ और कथानक रूढियो के सहारे होता है।

कथा के प्रथम भाग मे एक प्रस्तर पुतलिका का अप्सरा के रूप मे परिणित होना तथा कान्हडदे से उसका विवाह होना और उससे वीरमदे का जन्म लेना, जैसलमेर के भाटी रावल लाखण सी द्वारा सूचित होने पर कान्हडदे का विषपान से बचना, रावल लाखण दे के साथ अपनी वहिन कुमारी सोनगिरा का विवाह करना, सुसराल जाते समय मार्ग मे सोनगिरा का नीवा राजपूत पर मोहित होना तथा नीबा द्वारा सोनिगरा का हरण, आदि घटनाये वर्णित है।

कथा के उत्तरार्द्ध मे मुख्य रूप से वीरमदे और वादशाह अलाउद्दीन की वटी फातिमा की प्रेम–कथा वर्णित है जो वीरमदे के चमत्कारिक शौर्य–प्रदर्शन की अर्न्तकथाओ से कथा विस्तार पाती है। वस्तुत. यह एक पक्षीय प्रेम कहानी है जिसमे वीरमदे को पति रूप मे प्राप्त करने के लिए शाहजादी अपने पति अलाउद्दीन को जालोर पर आक्रमण करने के लिए प्रेरित करती है। वीरमदे बन्दी बनाकर सुलतान के पास ले जाया जाता है। शाहजादी वीरदे को पाकर प्रसन्न होती है, किन्तु वह पहले से ही अपना पेट काट लेता है और उसकी मृत्यु हो जाती है। शाहजादी वीरमदे के साथ सती हो जाती है।[2]

इस वार्ता का ऐतिहासिक दृष्टि से वडा महत्वपूर्ण स्थान है। मुसलमान इतिहासकारो ने उल्लेख किया है। वास्तव मे जालोर का साका राजस्थान ही

---

१. वीरमदे सोनीगरा री वात (ह. लि) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रथाक १२७०६।

२. "चदणरो घर करि नै गोद मैं धड माथो मेल नै सती हुई। साह बेगम कै नै वीरमदे कै रुसणो भागो। पातिसाह पाछो दिल्ली गयो। इति श्री वीरमदे सोनिगारा री वात संपूर्ण ॥"

नही, समस्त पश्चिमोत्तरी भारत की एक महत्वपूर्ण [illegible] है। तत्कालीन सामाजिक, सास्कृतिक सम्बन्धो, विशेपकर राजपूती आशाओ, आकाक्षाओ और विश्वासो के साथ विजेता मुसलमानो के सम्पर्क-साहचर्य के सदर्भ मे इसके अध्ययन का विशेष महत्व है।

६३. गुलाबा भंवरा री वारता

रचयिता

इसकी एक हस्तलिखित प्रति राजस्थानी शोध-संस्थान, जोधपुर मे उपलब्ध है। इस प्रति मे इसके रचयिता का उल्लेख नही मिलता।

रचना-काल

इस प्रेम-कथा के लिपिकर्ता को भी २९६ छद तक रचना पूरी मिली थी और बाद की कथा लोक-अनुश्रति के आधार पर पूरी की गई। इसका लिपिकाल स० १९१५ है, अत. इसका रचना-काल इससे पूर्व का ही होना निश्चित है। इसके रचना-काल के सम्बन्ध मे एक दोहा दिया हुआ है जिससे मूल-कथा का रचना-काल स० १७६६ विदित होता है। यथा—

समत छै अरु वेद छ, वरस सपत गुण एक।
उजेणी नगरी सरस। सोवा लिये अनेक ॥२९६॥

कथा-वस्तु

इसमे मोती-मालपुरा के सचिव भवरा तथा हरकृत ब्राह्मण जाति [illegible] कन्या गुलाबा की प्रेम-कथा वर्णित है। एक दिन, छत पर खडे हुए गुलाबा भवरा एक दूसरे के रूप को देखकर मोहित हो गये और प्रेम-पाश मे वॅध गये, किन्तु उनके मिलन मे सामाजिक-बाधायें थी। गुलाबा का विवाह भटनेर के सरसहरि नामक एक रुग्ण युवक से हो गया था और भवरा भी विवाहित था, किन्तु प्रेम-मार्ग मे इन बाधाओ की उन्होने कुछ भी चिन्ता नही की। वे परस्पर प्रेम-सन्देशो का आदान-प्रदान करके लुके छिपे निश्चित-सकेत स्थलो पर मिलने लगे। एक दिन भवरा को राजा ने युद्ध में बाहर भेज दिया। गुलाबा भवरा के वियोग को सहन नही कर पाने के कारण आत्म-हत्या करने को तत्पर होगई। इस पर शिव-पार्वती ने उसकी सच्ची प्रेम-निष्ठा देखकर आत्म-हत्या करने से रोका तथा इन्द्र की सभा मे लेजाकर दोनो का मिलन करा दिया। वे पूर्व भव मे गधर्व और उर्वशी थे, किन्तु ऋषियो के समक्ष धृष्टता करने से शाप वश मनुष्य योनि मे जन्मे थे।

परकीया-प्रेम को लेकर लिखी गई, यह एक गद्य-कथा है जिसमे बीच २ मे दूहा, सोरठा, चन्द्रायणा आदि छन्द प्रयुक्त हुए है। काव्य-सौष्ठव की दृष्टि से यह एक सरस और सजीव रचना है जिसमे कवि की कल्पना-शक्ति, भाव-प्रवणता एव वर्णन-कौशल की सूक्ष्मता का परिचय मिलता है। नवीन प्रसगो की सृष्टि कर कवि ने शृ गार-रस के दोनो-पक्ष-सयोग-वियोग का मार्मिक चित्रण किया है। मध्यकालीन सामन्तशाही-सस्कृति के अध्ययन की दृष्टि से भी इस रचना का महत्वपूर्ण स्थान है।

६४ मोहन विजय : मानतुंग मानवती चरित्र[1]

रचयिता :

इसके रचयिता जैनमुनि मोहन विजय है। यह मुनि कीर्ति विजय के शिष्य थे।[2] मोहन विजय की अन्य कई कृतियाँ मिलती है। इनकी एक कृति रतन पाल रतनावती रास का इससे पूर्व वर्णन कर चुके है। यह एक सिद्ध-हस्त कवि थे और इनका भाषा पर पूर्ण अधिकार था।

रचना-काल :

'मानतु ग मानवती चरित्र' का लिपिकाल स १८८७ है।[3] इसका रचना-काल १८वी शती का मध्य प्रतीत होता है।

कथा-वस्तु

(१) उज्जेन का राजा मानतु ग एक दिन रात्रि को गुप्त रूप से अपनी प्रजा का हाल जानने के लिए निकलता है और पुरुष-वर्ग को नीचा दिखलाने के लिए सखियो से होड लगाती मानवती का परिचय प्राप्त करता है।

---

१ मानतु ग मानवती चरित्र (ह. लि) श्री जैन-श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

२. कृति की पुष्पिका—

श्री विजैय सेन सुरी पय सेवक कीर्ति विजयउ बडाया है।
तास सिष्य कछु ए गाथा करीनै अक्षय गुण ये गाया है।
अणहिण पुर पाठण मे रहानि मानवती गुण गाया है।
दुर्गादास राठौड ने राज्ये आनन्द अधिक उपाया है।
एकतालीसै ढाले करिनै कीधौ रास सु विचारो है।
मोहन विजय कहौ नित्य होज्यो, घरि-घरि मगल माला है।

३. इति श्री ' वीर मणीधिकारे मानतु ग मानवती चरित्र सपुरण स १८८७ बैसाख सुदी १५ सुलिपीकृत अमृत कार्तस्व आत्मार्थे दौलत दुर्ग मध्यै ॥

(२) नगर-सेठ-धनदत्त की रूपवती पुत्री मानवती का गर्व चूर करने के लिए राजा उससे विवाह कर लेता है और उसे एक सरोवर मे थम्भानुमा महल बनाकर एकान्तवास का दण्ड देता है।

(३) मानवती के कहने से धनदत्त सेठ गुप्त रूप से एक सुरग मानवती के महल से लेकर अपने घर तक बनवा देता है, जिसमे से होकर मानवती योगरण का छद्म-वेश बनाकर राजा के पास जाती है और उसे अपने रूप जाल मे फँसा लेती है।

(४) मुंगी पट्टण के राजा दलथम्मणराय की पुत्री राजकुमारी रतनवती उजैनी के पथिक से राजा मानतुग का रूप और शौर्य-वर्णन सुनकर उसके साथ विवाह का सकल्प कर लेती है।

(५) विवाह का निमत्रण पाकर मानतुग अपनी बारात के साथ योगरण को साथ लेकर जाता है और मार्ग मे योगरण एक रूपवती स्त्री का वेश बनाकर राजा के साथ रमण करती है।

(६) मुंगी पट्टण पहुचने पर रतनवती से सम्पर्क साध कर राजा को अपना झूठा लड्डू खिलाती है और छह मास तक राजा को अपने रूप-जाल मे फंसा रखकर नित्य रमण करती है। अन्त मे गर्भ रह जाने पर राजा का 'मुगताहल हार' एवं मुद्रिका निशानी के रूप मे प्राप्त करके उज्जैना लौट आती है।

(७) तदन्तर राजा के पास पुत्र-जन्म का समाचार भेजती है जिसको सुनकर राजा को बडा विस्मय होता है, किन्तु मानवती द्वारा सब रहस्य प्रकट कर दिये जाने पर राजा उससे अपनी हार स्वीकार कर लेता है। धर्मघोष मुनि से दीक्षा लेने के पश्चात् पूर्वभव के वृतात के साथ कथा समाप्त होती है।

काव्य-सौष्ठव की दृष्टि से यह एक प्रौढ कृति है। इसमे शृंगार, वीर और अद्भुत-रस का सुन्दर परिपाक हुआ है। नगर, वन, सरोवर, तथा रम्य-प्रकृति-चित्रण बडे सुन्दर बन पडे हैं। लोक-कथानक रूढियो के सहारे कथानक का विकास हुआ है। इसमे पुरुष के अहम् को आहत कर नारी के गौरव को अक्षुण्ण रखा गया है। यह एक सरस प्रेम-कथा है। इसकी सरसता का दावा स्वय कृतिकार ने इन शब्दो में किया है। यथा—

सुरजन सामलियो कथा, रसिक थई दई कान।
चतुर नर उपजस्ये रसागतो, चाख्या थी जिम पान ॥

६५. दाम : मदनशतक[1]

रचयिता :

कृति की पुष्पिका से इसका रचयिता 'दाम' विदित होता है। प० परशुराम चतुर्वेदी ने इसका रचयिता दाम अथवा दामोदर कोई जैन कवि माना है[2] किन्तु मदनशतक की रचना-शैली देखने से इसका रचयिता जैन-धर्मावलम्वी प्रतीत नही होता।

रचना-काल :

'मदन शतक' का रचनाकाल १८वी शताब्दी का मध्य माना जा सकता है। सबसे प्राचीन प्रति 'मदन कुवार री वात'[3] नाम से सवत् १७५४ की लिखी हुई मिलती है। इसके वाद की स. १८२३ व[4] स. १८६०[5] की भी प्रतिया मिलती हैं।

---

१. (क) मदन शतक (ह. लि.) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान. वीकानेर शाखा, ग्रंथाक (८६–६), कृति की पुष्पिका—

आस फली सव मदन की, पूरव पुन्य पसाइ।
दाम कहै जन सवन स्यु , पुण्य कर उमन लाई ॥१०१॥

(ख) मदन शतक वार्ता (ह. लि) रा प्रा विद्या प्रतिष्ठान, वीकानेर शाखा, ग्र थाक ७८, पुष्पिका—

'इति श्री दाम कृत मदन शतक' सम्पूर्ण, प्रो० विद्यापति लिषत।'

(ग) मदन शतक (ह. लि) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्र थाक ८८२२ पत्र स. ६, लिपिकर्ता प० ईश्वर लिषत।

भारतीय प्रेमाख्यान की परम्परा, पृ स. १३२।

३. मदन कुवर री बात (ह लि) श्री स्वरूपलाल ग्र थालय, उदयपुर, ग्र थाक ६१ (८३) लिपिकाल स. १७५४।

४ मदन कुवार री बात (ह. लि.) सरस्वती भण्डार, उदयपुर, ग्रंथाक ७७३, (८०) लिपिकाल सवत् १८२३।

५ मदन सतक री वार्ता (ह. लि.) रा. प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर। कृति की पुष्पिका—

इति श्री मदन सतक री वार्ता सम्पूर्ण। ग्र थाक २२५ सर्व ॥ मिति मिगसर सुदी ६ स० १८६०।

कथा-वस्तु[1] **:**

(१) अमरपुर के राजा रत्नसिंह का पुत्र राजकुमार मदन स्वप्न मे कामदेव के आदेशानुसार शुक के साथ देशाटन के लिए निकलता है और एक उद्यान मे कामदेव के मन्दिर मे ठहरता है।

(२) कामदेव के मन्दिर मे उसकी भेट श्रीपुर नगर की राजकुमारी रतिसुन्दरी से होती है जो उस पर मुग्ध हो जाती है। दोनो गधर्व-विवाह कर लेते है।

(३) राजा को जब इस बात का पता चलता है तब मदन कुमार रतिसुन्दरी को वियोग मे तडपती छोडकर वहाँ से चल देता है।

(४) कुछ समय बाद अनेक स्त्रियो से विवाह करके तथा राज्य प्राप्त करके रतिसुन्दरी के पास लौटता है और उसके साथ विधिवत् विवाह सम्पन्न करके, अपनी दसो पत्नियो सहित माता पिता के पास लौटकर आनन्द पूर्वक रहता है।

'मदन शतक' गद्य-पद्य मे लिखा गया एक विशुद्ध प्रेमाख्यान है। इसमे सम्वादो की प्रचुरता मिलती है जिससे काव्य मे नाटकीयता का गुण समाविष्ट हो गया है। प्रमुख सवादो मे रतिसुन्दरी शुक-सवाद, रतिसुन्दरी मदनकुमार सवाद, रतिसुन्दरी दासी सवाद एव रतिसुन्दिरी रानी सवाद हैं। यह दोहो मे रचा गया है और बीच-बीच मे वार्ताओ के रूप मे गद्य का अश भी दिया गया है। कनक सुन्दरी और हर्ष सुन्दरी से मदनकुमार की गूढार्थों मे हुई बातचीत सूरदास के दृष्टकूटो तथा पहेलियो का स्मरण दिलाती है। काव्य-सौष्ठव की दृष्टि से रचना साधारण है।

६६. अचलदास खीची री बात[2]

रचयिता :

इसके रचयिता का परिचय अज्ञात है।

रचना-काल :

इसकी सबसे पुरानी हस्तलिखित प्रति स० १७५४ की उपलब्ध है।[3] इसके

---

१. विस्तृत कथा-वस्तु के लिए देखिये—
कल्पना (हैदराबाद, वर्ष ६, अक ४ अप्रेल १९५५) पृ ४७–५४।

२. अचलदास खीची री बात (ह लि.) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्र थाक १२७१७ (४)।

३ अचलदास खीची री बात (ह. लि.) श्री स्वरूपलाल ग्र थालय, उदयपुर, ग्र थाक ६१ (४४)।

बाद की स. १७८८ व स. १७९६ की[1] प्रतिया भी रा प्रा. विद्या-प्रतिष्ठान, जोधपुर में उपलब्ध है। अत इसका रचनाकाल १८वी शताब्दी का उत्तरार्द्ध माना जा सकता है।

इस वारता का नायक अचलदास खीची एक ऐतिहासिक व्यक्ति है जो कोटा राज्य के अन्तर्गत गागरोणगढ के नरेश थे। इनकी वीरता से प्रेरित होकर शिवदास चारण ने सवत् १४८५ मे 'अचलदास खीची री वचनिका' लिखी थी।[2] डा० शिवस्वरूप 'अचल' ने इसकी गणना अर्द्ध एतिहासिक वातो की कोटि मे की है तथा इसे राजस्थानी की अच्छी कहानियो मे माना है।[3]

कथा-वस्तु :

प्रस्तुत बात मे इन्ही अचलदास खीची और जागलू के खीवजी साखला की पुत्री उमादे की प्रेम-कथा वर्णित है। वीठू चारण की वेटी झीमा के द्वारा उमादे का रूप-वर्णन सुनकर अचलदास के मन मे पूर्वराग उत्पन्न होता है और उसकी परिणति उन दोनो के विवाह मे होती हे। अचलदास की पहली पत्नी लाला मेवाडी उन दोनो के प्रेम मे वाधा डालती है पर विजय अन्तत. उमादे की ही होती है।

इसके कथानक मे ऐतिहासिक, साहित्यिक एव अलौकिक तत्व मिलते है। कहानी की भाषा प्रौढ और परिमार्जित राजस्थानी भाषा है। उपमा और अनुप्रासमयी होने से भाषा मे लालित्य एव गेयता आगई है।

६७ खेतसी : विरह गुलजार इश्क अनवर कथा[4]

रचयिता ·

इसके रचयिता खेतसी है। ये सादू शाखा के चारण कवि एव जोधपुर के महाराजा अभयसिंह के आश्रित थे। इन्होने सवत् १७९० मे 'भाषा-भारत' नाम से महाभारत को भाषा मे लिखा था।

---

१. अचलदास खीची री उमादे भटराणी री वारता (ह लि.) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्र थाक १५२९५।

२. अचलदास खीची री वचनिका (सा. रा रिसर्च इन्स्टीट्यूट, बीकानेर)।

३. राजस्थानी गद्य-साहित्य-उद्भव और विकास : डा शिवस्वरूप अचल, पृ १३२।

४. (क) विरह गुलजार इश्क अनवर कथा (ह लि,) रा. प्रा विद्या प्रतिष्ठान, ग्र थाक ५८६६, माप १०¾" × ७¾" पृ. १२ से ८२ तक, पत्र स. ७०।

(ख) विरह गुलजार इश्क अनवर कथा (ह लि.) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्र थाक ५२०३ पत्र स ४२, माप १२" × ७" (अपूर्ण)।

रचना-काल :

'विरह गुलजार इश्क अनवर कथा' की उपलब्ध हस्तलिखित प्रतियो मे लिपि-काल और रचना-काल दोनो का ही उल्लेख नही है, किन्तु इसके रचयिता 'भाषा भारत' के कृतिकार खेतसी होने से इसका रचनाकाल १८वी शताब्दी का उत्तरार्द्ध माना जा सकता है।[1]

कथा-वस्तु :

एक दिन अकरम के बादशाह की शाहजादी अनवर ने बलख के बादशाह महमदशाह के पुत्र इकबाल को स्वप्न मे देखा और उसके इश्क मे पड गई। इकबाल के विरह मे वह अपनी चेतना खो बैठी। बहुत उपचार किया गया किन्तु कुछ फल नही निकला। एक अचारज को पता लगाने पर उसने शाहजादी का उपचार करने का बीडा उठाया। एक दिन उसने राजकुमार चन्द्र और राजकुमारी चन्द्रावती को स्वप्न मे प्रेम हो जाने की कहानी कही, तब उसे सुनकर अनवर को अपने स्वप्न की बात याद आ गई और अचारज को इकबाल से प्रेम होने की बात बतादी। अनवर की विरह-वेदना को सुनकर अचारज बलख गया और वह सौदागर के यहाँ नौकरी करके किसी प्रकार इकबाल के पास पहुच गया। उधर इकबाल भी अनवर के वियोग मे बीमार पड गया था। इकबाल को अनवर की विरह पीडा ज्ञात होने पर, उससे मिलन की उत्सुकता से इकबाल की बीमारी दूर हो गई। जब दोनो प्रेमी–प्रेमिका के माता पिता को पता चला तो उन दोनो का विवाह कर दिया। दोनो प्रेमी आनन्दपूर्वक रहने लगे।

मुस्लिम परिवार को लेकर लिखे गये इस प्रेमाख्यान मे फारसी प्रेम-पद्धति का प्रभाव लक्षित होता है। इसमे हिन्दु और मुसलमान पात्रो तथा सामाजिक रीति-रिवाज–निका और विवाह आदि का सामजस्य मिलता है। हिन्दु मुस्लिम सस्कृतियाँ एक दूसरे को किस प्रकार प्रभावित कर रही थी, इस बात को जानने की दृष्टि से भी इस रचना का बडा महत्व है। इसकी भाषा पर फारसी और खडी बोली का अधिक प्रभाव है। राजस्थानी भाषा की पृष्ठभूमि से खडी बोली किस तरह उठ रही थी, इसके अध्ययन की दृष्टि से भी यह रचना अपना विशिष्ट स्थान रखती है। इसके गद्य का उदाहरण प्रस्तुत किया जा रहा है—

"ओर अनवर सहजादी के ताइ, यह खुवाव नीजर आया। और खुवाव मैं देखती क्या है। ये कै आदमी वो होतै कैवुल सुरतै चद आफताब पायेती बडा है।"

---

१. राजस्थानी भाषा और साहित्य, डा० मोतीलाल मेनारिया, पृ. सं. २४५।

६८ खेतसी · लेला मजनू की वार्ता[1]

फारसी मे प्रचलित कुछ प्रसिद्ध प्रेमाख्यानो के आधार पर हिन्दु कवियो ने भी काव्य-सृजना की है। डा० हरिकान्त श्रीवास्तव ने सेवाराम कृत लैला मजनू का उल्लेख किया है जिसकी भाषा उर्दू मिश्रित हिन्दी बतलाई गई है।[2]

रचयिता

सेवाराम की भाँति ही कविवर खेतसी ने भी राजस्थानी भाषा मे लैला मजनू की वार्ता' का सृजन किया है। कविवर खेतसी का परिचय इससे पूर्व दिया जा चुका है।

रचना-काल :

इसका रचनाकाल १८वी शताब्दी का उत्तरार्द्ध प्रतीत होता है।

कथा-वस्तु

इसमे लैला और मजनू की प्रसिद्ध प्रेम-कहानी वर्णित है।

मजनू शिकार को जाते समय लैला के रूप को देखकर मोहित हो जाता है। लैला भी मजनू पर मोहित हो जाती है, किन्तु सामाजिक बन्धनो के कारण से मिल नही पाती। लैला के वियोग मे मजनू दरवेश हो जाता है। लैला प्रेम मे पागल होकर किसी भाँति अवसर पाकर दरवेश से मिलने जाती है, किन्तु विरह-पीडा नही सह सकने के कारण मजनू का प्राणान्त पहले ही हो जाता है।

प्रेम की यह दुखान्त कहानी अपनी मार्मिक एव तीव्र सवेदनशीलता के लिए विशिष्ट स्थान रखती है। यह गद्य मे लिखी गई है और बीच-बीच मे पद्य प्रयुक्त हुआ है। इसमे कवित्त, कुण्डलियाँ, सवैया आदि असाठ छन्द मिलते हैं जिन पर ब्रज-भाषा का प्रभाव लक्षित होता है। इसका गद्य अनुप्रास युक्त होने से लयात्मक हो गया है। यत्र-तत्र अरबी फारसी के शब्दो का भी प्रयोग मिलता है। उदाहरणार्थ, वन के परिवेश मे दरवेश मजनू का एक चित्रण प्रस्तुत किया जाता है—

'ठौर ठौर अ बादामी, हरी-हरी दूब, जगल की सबजी खूब, सारो सूआ चाकोर मोर, भाति-भाति के जानवरो का सोर। पाहार की किनारी, पचरंगी गुलक्यारी। दरखतो की झाडी। × × भमरो का गु जार, फूलो की महक, काइलो

---

१ लैला मजनू री वार्ता (ह लि) रा प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्र थाक ५८६६।
'इति श्री लैला मजनू री वार्ता, कवि खेतसी कृत समाप्त' श्री श्री।

२. भारतीय प्रेमाख्यान-काव्य, प स. ४२।

की कुइक । साहू की मौज । देखने का चौज । पवन का थाभा । आसमान का गुमज, चाद सूरज की चिराग । बादर की चादर । जमीन का दुलरीया । पथर का तखत । तिस पर मजनू देषा । नए चाद की रेखा सा । दिए की सीखा सा । भूत की माया सा । धोम की छाया सा । रोजे का करन वाला ।"

६६ कुंवर भूपत सेरण री वारता[1]

रचयिता

इसके रचयिता का परिचय अज्ञात है ।

रचना-काल :

इसकी उपलब्ध हस्तलिखित प्रतियो मे सबसे पुरानी प्रति का लिपिकाल स० १७७४ है ।[2] अत इसका रचनाकाल स० १७७४ से पूर्व माना जा सकता है ।

कथा-वस्तु

(१) परकर के राजा की खवासिन पत्नी से जय विजय नामक पुत्रो का जन्म तथा दुहागवती रानी से कुवर भूपतसेरण का जन्म होता है ।

(२) राजकुमारो के युवक होने पर राजा उनकी शौर्य की परीक्षा के लिए स्वप्न मे देखे गये सफेद जानवर' को लाकर देने वाले राजकुमार को आधा राज्य देने की घोपरणा करता है ।

(३) कुँवर भूपत सेरण इस कार्य का बीडा उठाता है और छहू वर्ष के सीधे मार्ग से न जाकर छहू महीने के सकटपूर्ण मार्ग से तोता–पक्षी के मार्ग निर्देशन मे यात्रा के लिए प्रस्थान करता है तथा एक राक्षस की गढी मे पहुँचकर उसके चुगल से एक राजकुमारी को मुक्त करता है । वह राक्षस को वश मे करके उससे एक दरयाई घोडा और एक जादुई सोठा प्राप्त करता है ।

(४) दरयाई घोडे पर बैठकर एक अन्य राक्षस की नगरी में पहुँचता है और उसके चुगल मे फँसी एक अप्सरा को मुक्त करके, उससे विवाह करने का वचन देकर वाछित सफेद जानवर प्राप्त करता है ।

---

१ (क) कुँवर भूपत सेरण री वारता (ह लि) सरस्वती भण्डार, उदयपुर, ग्र थाक ७०३ (४३) पृ. स १६४ से २०१ तक, लि. का. सं १८२३ ।
(ख) कुँवर भूपत सेरण री वारता (ह लि) रा प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्र थाक १५२६ (१७) ।

२. कुँवर भूपत सेरण री वात (ह लि) श्री स्वरूपलाल जी (जगदीश चौक) उदयपुर, ग्र थाक ६१ (३४) ।

(५) लौटते समय एक राजा की नगरी को राक्षस के उत्पात से अभय करके राजकुमारी से विवाह करता है ।

(६) अपने पिता के पास वाछित सफेद जानवर लेकर पहुँचने पर उसे आधा राज्य मिलता है तथा रानी का दुहाग दूर होकर 'सुहाग' लौटता है । भूपत-सेण अपनी प्रियाओ के साथ आनन्दपूर्वक रहता है ।

७० मोहन विजय चन्द्रराज चरित्र[1]

रचयिता

इसके रचयिता जैन मुनि मोहन विजय है, जिनका परिचय इससे पूर्व दिया जा चुका है । कवि ने चन्द्रराज चरित्र की रचना राजनगर मे की थी ।

रचना-काल

कृति की पुष्पिका मे इसका रचना–काल सवत् १७८२ पौष शुक्ला पचमी दिया हुआ है ।[2]

लोक–कथा–तत्वो के अध्ययन की दृष्टि से इस रचना का बडा महत्व है । ७८ ढालो मे तथा चार उल्लासो मे वर्णित यह एक सरस काव्य है जिसकी सरसता का स्वय कवि ने उल्लेख किया है—

मधुर कथा, रचना मधुर, वक्ता मधुर तिय होय ।
मधुर ऐ तो अे मधुरता, जो होय श्रोता कोय ।।

कथा-वस्तु .

(१) आभा नगरी का राजा वीरसेन एक दिन घोडे पर बैठकर महावन मे पहुँच जाता है जहाँ वह एक जोगी के चुगल से राजकुमारी चन्द्रावती को मुक्त कर उससे विवाह कर लेता है ।

(२) पटरानी वीरमती सौतिया डाह से कुछ ऐसे कृत्य करती है जिनसे राजा ग्लानिवश चन्द्रराज को राज्य सौंपकर चन्द्रावती के साथ वैराग्य ले लेता है ।

---

१. चन्द्रराज चरित्र (ह. लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर अजमेर, पत्र-सख्या १३५, लिपिकाल स० १८८१, लिपिकर्ता, प० अमरकीर्ति ।

२ "कीधो चौथो उल्लास सपुरण, गुण वसु सयम वरसे जी ।
१७८२ पोश मास सीत पचमी, दिवस तरणी जिवारे हरषे जी ।।
राजनगर चोमासु करीने, गायो चद चरित्र जी ।
श्रवण देई श्रोता सामलश्ये, थास्ये तेह पवित्र जी ।।"

(३) वीरमती राजा चन्द्रराज की रानी गुणावली को वशीभूत करके एक दिन पेड पर बैठाकर विमलपुरी के राजा की कन्या प्रेमलालच्छी का विवाह दिखलाने ले जाती है। चन्द्रराज भी छिपकर वही उनके साथ पहुँच जाता है।

(४) प्रेमलालच्छी का वर सिहलपुरी का राजकुमार कनकध्वज कोढी होता है, अत उसके स्थान पर एक दिन के लिए राजा चन्द्रराज को दूल्हा बना दिया जाता है।

(५) रात्री को यह भेद प्रेमलालच्छी के सम्मुख प्रकट हो जाता है तो वह राजा चन्द्रराज के साथ चलने का आग्रह करती है पर राजा कुछ दिनो बाद आने का आश्वासन देकर, वहाँ से चल कर पेड के कोटर मे बैठ जाता है और आभापुरी पहुँच जाता है।

(६) जब वीरमती को इस बात का पता चलता है- तव वह चन्द्रराज को मत्र-विद्या से कूर्कट बना लेती है। एक दिन शिवनट द्वारा यह कूर्कट पुरस्कार मे ले लिया जाता है।

(७) शिवनट कूर्कट सहित देश देशान्तर मे भ्रमण करता हुआ सिद्धतीर्थ मे पहुँचता है। वहाँ तीर्थ मे स्नान करके राजा अपना असली रूप प्राप्त कर लेता है।

(८) तदन्तर प्रेमलाच्छी को विरह जनित दुख से मुक्त करके उसके साथ अपने राज्य मे वापिस लौटता है और वीरमती को दण्ड देता है। राजा अपनी रानियो के साथ सुखपूर्वक रहता है। पूर्वभव के वृतान्त के साथ कहानी समाप्त होती है।

काव्य-सौष्ठव की दृष्टि से यह एक प्रौढ रचना कही जा सकती है। जहाँ इसमे अलौकिक कार्यो एव घटना-वैचित्र्य के द्वारा अद्‌भुत-रस का सुन्दर परिपाक हुआ है, वहाँ शृगार-रस की मादकता भी कम मोहक नही है, इस रचना की सबसे बडी विशेषता यह है कि इसमे देश की एकात्मकता का भाव-बोध बडी खूबी के साथ प्रकट किया गया है। कूर्कट के पीजरे को लेकर नट अपनी नाट्य-कला दिखलाता हुआ सब दिशाओ मे बडे-बडे नगरो मे जाता है और नगरो तथा जनपदो का स्थानीय विशेषताओ सहित वर्णन करता हे। लोक-कथा-तत्वो के अध्ययन की दृष्टि से भी इसमे एक विशेषता यह मिलती है कि कवि ने राजा चद और प्रेमलालच्छी की लोक-कथा को बडी चतुराई से अपने काव्य का आधार बनाकर तथा उसमे जैन-कथानक रूढ़ियो को सम्मिलित करके एक सर्वथा नये कथानक का रूप दे दिया है।

७१. चतुरविजय : नेमिराजुल वेलि

रचयिता :

इसके रचयिता चतुर विजय हैं। ये तपागच्छीय आणद सूर शाखा के आचार्य विजय ऋद्धि सूरि (स० १७६६–९७) के प्रशिष्य और रविविजय के शिष्य थे।[१]

रचना-काल

कवि ने वेलि के अन्त मे रचना–काल दिया है। इसके अनुसार इस वेलि का रचना–काल स० १७८६ पौष सुदि १४ गुरुवार है।[२]

कथा-वस्तु[3]

प्रस्तुत वेलि की कथा–वस्तु नेमीकुमार तथा राजमति के प्रणय सम्बन्ध मे सम्बन्वित है।

वेलि का कला–पक्ष समृद्ध है। अलकारो मे उपमा, रूपक, अतिशयोक्ति, व्यतिरेक, भ्रातिमान का प्रयोग अधिक हुआ है। छन्दो मे चारणी शैली का छद छोटा साणोर प्रयुक्त हुआ है।

७२ किसना सदैवच्छ सावलिगा री बात[४]

सदैवच्छ सावलिगा की प्रेम–कथा को लेकर मध्ययुग मे विभिन्न लेखको ने गद्य–पद्य मे अनेक रचनाये रची है। इस कथा की अनेक हस्तलिखित प्रतियाँ राजस्थान के हस्तलिखित–ग्र थ भण्डारो मे उपलब्ध होती है। इसकी ४१ प्रतियाँ तो हमे देखने को मिली है जिनमे से कई सचित्र हैं। तत्कालीन चित्र–कला के अध्ययन की दृष्टि से इनका विशेष महत्व है।

रचयिता :

इसके रचयिता प० किसना जी है।

रचना-काल :

इसकी रचना दहणोक ग्राम मे स० १७९९ मे हुई थी।

---

१. डा० नरेन्द्र भानावत . राजस्थानी वेलि-साहित्य, पृ. २५६।

२. "सवत सतर छिउतरे सुदि पोसे, रचीउं गुण चवदस गुरुवार (२०२)

३ विस्तृत कथा-वस्तु के लिए देखिए—राजस्थानी वेलि-साहित्य (डा. नरेन्द्र भानावत) पृ. स २५७-२६२।

४. सदैवच्छ सावलिगा री बात (ह. लि) राजस्थानी शोध-सस्थान, जोधपुर, ग्रथांक ६००, पत्र-संख्या १७।

कथा-वस्तु :

इसकी कथा-वस्तु सदैवच्छ और सावलिंगा की प्रेम-कथा पर आधारित है।

पाटण के राजा सालिवाहन के पुत्र सदैवच्छ का राजा के प्रधान पद्म सेठ की पुत्री सावलिंगा से पाठशाला में साथ पढते हुए प्रेम हो जाता है। इस प्रेम की पुष्टि खवास के द्वारा प्रेम-सदेशो के आदान-प्रदान से होती रहती है। अन्त मे, वे दोनो प्रेमी-प्रेमिका सब सामाजिक-बन्धनो को तोडकर विवाह-सूत्र मे आबद्ध हो जाते है। कथा के प्रारम्भ मे सदैवच्छ सावलिंगा के पूर्व-भव की कहानी दी गई है।

प्रस्तुत 'बात' मे दूहा, गाथा, चन्द्रायणा छद के साथ बीच-बीच मे गद्य का प्रयोग किया गया है। इसमे प्रयुक्त गद्य का उदाहरण प्रस्तुत किया जारहा है—

"वात—पाछले भव सुगण महातमारो जीव। सुझाण सीह पचोली हुतो। सदैवच्छारो जीव मनोहर सुत्रवी हुंतो। सावलिंगा रो जीव रूपमती अस्त्री छी।"

'सदैवच्छ सावलिंगा री वात' के अध्ययन से हमें विदित होता है कि अजैन लेखको द्वारा लिखी जाने पर इसके कथा-विकास मे जैन-कथानक-रूढियो के स्थान पर किस प्रकार राजपूत-सस्कृति, उसकी आशा, आकाक्षा और विश्वासो की छाप लग चुकी थी।

७३. मतिकुशल : चन्द्रलेहा चौपई[1]

रचयिता

इसके रचयिता जैनमुनि मति कुशल हैं।

कृति की पुष्पिका मे इसका लिपिकाल सवत् १८०५ दिया गया है।[2] अत इसका रचनाकाल भी इससे पूर्व का विदित होता है।

कथा-वस्तु .

कचनपुर के सेठ चन्दन सार की कन्या चन्द्रलेहा अत्यन्त रूपवती थी। उसे विदेश से विभिन्न जातियो के घोडे मगाने का चाव था। एक दिन अश्व-रत्न घोडे को देखकर राजा उस पर रीझ गया। किन्तु चन्द्रलेहा ने राजा को अश्व देने से मना कर दिया जिससे कुपित होकर राजा ने चन्द्रलेहा का गर्व-भग करने के लिए उससे विवाह कर लिया। राजा ने उसको एकान्त-वास का दण्ड भोगने के लिए थम्मानुमा महल बनवाकर उसमे भेज दिया। चन्द्रलेहा ने भी राजा का गर्व खण्डित

---

१ चन्द्रलेहा चौपई (ह लि) रा प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर। ग्रथाक ४०६०, पत्र सख्या १६ माप ३½" × ४¼"।

२ "इति श्री चन्द्रलेहा चरित्र समाप्त। सामायकधिकारे चन्द्रलेहा चतुपदी सम्पूर्ण सवत् १८०५ वर्षे मिति कार्तिक सुदी ८ दिनें सरसा ग्रामे लिखित ऋषि उत्तम चद॥

करने का सकल्प कर लिया । वह किसी भाँति उस महल से योगिन का वेश बनाकर निकल गई तथा राजा को अपने मधुर वीणा-वादन और अपनी रूप-माधुरी से मोहित कर लिया । एक दिन उसने नर्तकी बनकर राजा के साथ रमण किया । इसके पश्चात् चन्द्रलेहा ने अप्सरा के छद्म-वेश मे राजा के साथ विवाह भी कर लिया, किन्तु सुहाग के समय राजा ने उसे पहिचान लिया । रानी ने सब बाते प्रकट करदी, इस पर राजा अपने कार्यों के लिए बडा लज्जित हुआ । तदन्तर राजा रानी धर्म की छत्र-छाया मे अर्थ, काम का उपभोग करते हूए आनन्दपूर्वक रहने लगे । यथा —

कब हीक नाटिक प्रेम-रस, कब हीक पासा सार ।
कब हीक कथा किलोल रस, बैसि कहे भरतार ॥
कब हीक खेले बाग मे, कब हीक (वीण बजाय के) गावे गीत रसाल ।
कब हीक समाही करे, कब हीक पजे देव ॥"

काव्य-सौष्ठव की दृष्टि से यह एक सरस चरित काव्य है । प्रारम्भ मे विद्याधर विद्याधरियो की केलि-क्रीडाओ तथा उपवन का वर्णन बडा मनोहर है । रूप एव प्राकृतिक-सुषमा का भी इसमे बडा सरस और मार्मिक चित्रण किया गया है ।

७४. राम विजय . चित्रसेन पद्मावती रतनसार मंत्री चौपई[1]

शील-व्रत एव दान, धर्म अनुमोदनार्थ लिखा गया यह एक सरस प्रेमाख्यानक काव्य है ।

रचयिता :

इसके रचयिता जैनमुनि रामविजय है । यह जिनलाभ सूरि की शिष्य-परम्परा मे हुए थे ।

रचना-काल :

कृति की पुष्पिका मे इसका रचनाकाल सवत् १८१४ दिया हुआ है । इसका लिपिकाल स १८७७ है ।[2]

---

१ चित्रसेन पदमावती रतनसार मत्री चौपई (ह लि) रा प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रथाक २८९७२ पत्र स १२ ।

२ "अठारह सै ऊपर वरसै, चवदात्तरै बहुतै ।
पोस मास सुदि ६ समतणौ दिन रास रच्यै मनषतै ।"
तासू रणक पासू पसाये, सरसती सू निजर पाई ।
राम विजय उन ज्ञाय ए चौपई, बीकानेर वणाई ॥
"इति श्री दानधर्मनुमोदना धिकारे श्री चित्रसेन पदमावती रतनासार मत्री चलुपदि समाप्तम । स. १८७७ वर्षे मीती फागुण सुद ७ लिषिती नागोर मध्य सू ।"

कथा-वस्तु :

(१) कलिंग के राजा वीरसेन का पुत्र चित्रसेन अपने मित्र रतनसार के साथ वन मे जाता है और वहाँ एक बावडी की भीत पर पद्मावती का चित्र देखकर मोहित हो जाता है तथा उसे प्राप्त करने के लिए मित्र के साथ घर से निकल पडता है।

(२) वह पद्मावती के स्वयवर मे पहुचकर धनुर्भंग करके पद्मावती के साथ विवाह कर लेता है।

(३) पद्मावती को लेकर लौटते समय मार्ग मे वे एक स्थान पर ठहरते है तब मत्री-सुत राजकुमार पर आने वाले चार सकटो[1] की वाणियाँ सुनता है और यह भी सुनता है कि सुनने वाला व्यक्ति यदि इनको प्रकट कर देगा तो वह पत्थर का हो जायगा।

(४) रतनसार राजकुमार की अपने प्राण सकट मे डालकर तीन सकटो से रक्षा कर देता है और चौथा सकट दूर करने के लिए जब वह पद्मावती के शयन-कक्ष मे छिपकर रात्रि को उसके कपोल पर पडी विष की बूद को पौछता है तो राजकुमार को उसके चरित्र पर सन्देह हो जाता है।

(५) कुछ वर्ष पश्चात् जब पद्मावती के पुत्र का जन्म होता है तब एक दिन अपनी गोद मे पुत्र को लिए हुए वह उस मूर्ति का स्पर्श करती है जिससे रतनसार पुनर्जीवित हो जाता है।

काव्य-सौष्ठव एव लोक-कथानक रूढियो की दृष्टि से इस कृति का बहुत महत्व है।

७५. कल्याण कलस · चन्दन मलियागिरि[2]

रचयिता :

इसके रचयिता मुनि कल्याण कलस गणि है।

---

१ पहिली जोषमए अछै रे लाल, सुनो अवरवलि साज।
पोल पैसता कलघरि रे लाल, सिल पाडेवा काज ॥
विप मोदक तीजी आवती रे लाल, चोथी सरप प्रसग।
च्यारो ही कष्ट टल्या पछि रे लाल, एहनो राज्य अभग ॥

२. चन्दन मलियागिरि चौपई (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर, पत्र स० ५, कुल ४२ चउपई।

रचना-काल

कृति की पुष्पिका से इसका रचनाकाल स० १८१६ विदित होता है।[1]

कथा-वस्तु :

कुसुमपुर के राजा चन्दन और रानी मलियागिरि अपने पुत्र सायर और नीर के साथ अनिष्ट की आशका से वन मे निकल पडते हैं। राजा वन मे लकडहारे का कार्य करके अपना जीवन-यापन करता है। एक दिन एक सौदागर रानी के रूप पर मोहित होकर उसे छल-पूर्वक अपनी नाव मे बैठाकर चल देता है। इधर सायर और नीर भी नदी मे बह जाते है। राजा नल अकेला रह जाता है और परिवार के सब व्यक्ति अलग-अलग हो जाते हैं। यथा—

गाहा—कहाँ चन्दन, कहाँ मलियागिरि, कहाँ सायर और नीर।
जुजू पडे अवच्छरी, सासा सहै सरीर॥

राजा भटकता २ एक दिन चम्पा नगरी मे पहुच जाता है। देवयोग से वहाँ के निस्सतान राजा की मृत्यु हो जाने से राजा चन्दन को राजा वना दिया जाता है। सायर और नीर भी बचकर उसी नगर मे पहुचते हैं और नगर कोतवाल उन्हे नौकर रख लेता है। सुयोग से रानी मलियागिरि को लेकर सौदागर का प्रहवरण भी उसी नगर मे पहुचता है और उसकी रखवाली के लिए सायर नीर को नियुक्त किया जाता है। वहाँ दोनो भाईयो की बातचीत से मलियागिरि उन्हे पहचान लेती है। अन्त मे सब परिवार पुन मिल जाता है। पूर्वभव के वृतात के बाद कथा समाप्त होती है।

शीलव्रत के उपदेश के लिए मध्यकालीन प्रेमाख्यान-काव्यो मे चन्दन मलियागिरि की कथा बडी लोकप्रिय रही है। इस आख्यान को लेकर मुनि भद्रसेन

---

१ कल्याण कलस गणि मुनि गावता, आणद विजइ करि आज।
श्री जिन राज तणइ सु पसावलइ, लहीयइ अवचल राज॥
युग प्रधान जग मादे परगडा, श्री जिनराज जतीस।
तसु उपदेस लही नइ ए रच्यो, श्री सघनइ आसीस॥
साध्वी तणा गुण प्रहसभइ, गावस्वइं तिहाँ धरि लील विलास।
भणइ गुणै बलि जैए सामलइ, पूजइ तेहनी आस।
इति श्री चन्दन मलायागिरि चउपई समाप्त॥ सवत् १८१६ शनै। ६ बदी (बैसाख)।

ने भी काव्य-रचना की थी।[1] कर्नल टाड ने इस कथा का उल्लेख अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'पश्चिमी भारत की यात्रा' में किया है।[2] उसने भूल से मलियागिरि के स्थान मुलीग्री लिख दिया है। कर्नल टाड ने राजा चन्दन की जिन दो पुत्रियो का उल्लेख किया है, वस्तुत वे पुत्रियाँ न होकर सायर और नीर नाम के दो पुत्र थे। उसने राजा चन्दन की राजधानी चन्द्रावती बतलाया है जबकि मुनि कल्याण कलस गणि की कृति मे 'कुसुमपुर' लिखा है।

७६. नाथकवि : देव चरित्र[3]

रचयिता :

देव चरित्र के रचयिता कवि रावनाथ है।[4]

---

१. चन्दन मलियागिरि वारता सचित्र (ह. लि.) रा प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रंथाक ४४५२ (४८) पत्र सख्या ३५।

पुष्पिका—

जाइलई फुनि निजपुरी, मिले सजन सब लोग।
भद्रसेन कहि पुन्यतें, फलै सुवछित-भोग।।

इति श्री चन्दन मलियागिरी वार्ता या वल्लभा सायर नीर सित मिलन निजपुरी प्रासष्टी कीर्तिका सपूर्ण।। मथे नेमी नछाराम से व्यौ करतव्य श्री बीकानेर मध्ये। स० १८३६ सावण वद (आगे कटा हुआ)

२ "बडौदा का प्राचीन नाम चन्द्रावती है क्योकि इसे दोर (Dor) जातीय राजपूत राजा चन्दन ने वसाया था। उपाख्यानो मे इसका वर्णन आता है। उसकी प्रसिद्धि रानी मुलग्री (Mullagari) से दो कन्याये हुई जिनके नाम सौकरी (Socri) और नीला थे।

पश्चिमी भारत की यात्रा (Travels in western India) पृ. स. १२५।

३. देव-चरित्र (ह. लि.) श्री बृजमोहन जावलिया, शोध कार्यकर्त्ता, रा प्रा. विद्या प्रतिष्ठना, जोधपुर से उपलब्ध।

४. महि अवचल मेवाड राज अडसी राणा रो।
नगर अटाली नडर सुवस बाधनेरी पारौ।।
भूप अषौ वेराट सुहड षत्र वाट् तणो सिंघ।
जाटा चो कवि जठे, जातरो चारण चाचिग।।
सुवाई मीया देखीयो सरस भलौ-भलौ गुण भाखियौ।
कवि राव 'नाथ' कुसलेसर रे देव चरित्र गुण दाखियौ।।२३६।।

रचना-काल :

कृति की पुष्पिका के अनुसार इसका रचनाकाल स० १८२० है तथा लिपि-काल स० १८४६ बैसाख प्रथम वद ८' है।[1]

कथा-वस्तु :

'बगडावतो की कथा को लेकर वगडावत लोक-महाकाव्य एव गद्य-पद्य मे अनेक रचनाये मिलती है। देव चरित्र का मुख्य कथानक वगडावतो की उत्पत्ति, भौज और जैमती की प्रेम-कथा तथा दूसरे खण्ड मे वर्णित देवनारायण का जन्म एव उनके वीरतापूर्ण कार्य-कलापो पर आधारित है।

'देव चरित्र' राजस्थानी भाषा के साहित्यिक रूप डिंगल का एक महत्वपूर्ण प्रबन्ध-काव्य है। यद्यपि भाषा और भाव, दोनो की दृष्टि से पृथ्वीराज राठौड कृत 'वेलि क्रिसन रुक्मणि री' की समता मे यह उच्च कोटि का नही है। इसकी भाषा साधारण चलती हुई तत्कालीन चारणी भाषा है जो अपनी अनगढता के लिए प्रसिद्ध है, तथापि प्रबन्ध-कौशल, शृगार रस के मधुर और युद्ध के ओजस्वी चित्रण की दृष्टि से यह एक प्रौढ कृति है। इसके प्रथम खण्ड मे २७९ व द्वितीय खण्ड मे २४० छद है। दोहा, पद्धरि, मोतीदाम, कवित्त, छप्पय, त्रोटक, सोरठा, गाथा, चौसर, बेखरी आदि विविध छन्दो का प्रयोग किया गया है।

७७. जोगराज चारण री बात[2]

रचयिता :

इसके रचयिता का परिचय अज्ञात है।

रचना-काल :

अनूप-सस्कृत लाइब्रेरी, बीकानेर मे उपलब्ध एक हस्तलिखित प्रति मे इसका लिपिकाल स० १८२० दिया हुआ है। अत इसका रचनाकाल इससे पूर्व का माना जा सकता है।

---

१ चन्द्र पाक गुण चाव मास माहा सुद सप्तमी।
रच्यो ग्रथ कवि राव सवत अठोर वीसो तरै ॥२४०॥

२ जोगराज चारण री बात (ह. लि) अनूप सस्कृत लाइब्रेरी, बीकानेर, ग्रथाक ६ (१२५)।

कथा-वस्तु[1] :

जोगराज चारण जैसलमेर का निवासी था जो एक चारण-कन्या का रूप वर्णन सुनकर उससे विवाह करने के लिए आतुर हो गया। अन्त मे जोगराज ने अपनी प्रेमिका से विवाह करके ही चैन लिया। यथा—

'परणीया गाजा वाजा करि वीदणी ले जोगराज घरे आयो। चारणी सु घणा सुख भोग वै छै। मन माहे हुती सु वीदणी पाई।'

यह एक गद्य मे लिखी हुई प्रेम-कथा है। बीच-बीच मे दोहे भी मिलते है। यथा—

नीर भरता नारि, नयणे निरखी नेह सु ।
प्रीति ज लगी अपार, जो वै ऊभौ जोगडो ।।

इसमे प्रेम और विवाह का चित्रण सुन्दर वन पडा है जिससे विदित होता है कि इसका रचयिता एक अच्छा कवि था।

७८. वात सयणी चारणी री[2]

रचयिता :

इसके रचयिता का परिचय अज्ञात है। यह राजस्थान की एक प्रसिद्ध लोक-कथा है। अत' लोक-मानस ही इसका वास्तविक निर्माता है। सदियो से लोक-मानस में निरन्तर प्रवाहमान है।

रचना-काल :

इसकी सबसे प्राचीन प्रति अनूप सस्कृत लाइब्रेरी मे स० १८२० की लिखी हुई उपलब्ध होती है,[3] अत' इसका रचनाकाल भी इससे पूर्व का माना जा सकता है।

---

१. चारण-बन्धु (अप्रेल-जून १९६५) : जोगराज चारण के विवाह और प्रेम की वात—ले० श्री अगरचन्द नाहटा।

२. (क) वात सयणी चारणी री, राजस्थान भारती, (जुलाई-अक्टूबर १९४६ ई०) प स. ८५।

(ख) सयणी चारणी री वात (ह लि.) सरस्वती भडार, उदयपुर, ग्र थाक ४ (४) लि. का. १२६, स १८२६।

३. सायणी चारणी री वात (ह. लि.) अनूप संस्कृत लाइब्रेरी, बीकानेर, ग्र थाक ६ (५७) लिपिकाल स. १८२०।

कथा-वस्तु :

वेकरे ग्राम के वेदाचारण की कन्या सयणी कच्छ के वीजाणद के वीणा-वादन पर मुग्ध हो जाती है और उसे कुछ मागने के लिए कहती है। वीजाणद स्वय सयणी को ही अपने लिये माग लेता है। इस पर सयणी यह शर्त रखती है कि यदि वह भीख मागना छोडदे और कही से सवा नो करोड का धन लाकर छह महीने मे दे तव उससे विवाह कर सकती है। वीजाणद इसके लिए तैयार हो जाता है और सव राजाओ से निराश होकर अन्त मे जल-प्रदेश के राजा मूगल के पास जाता है और वहाँ से वाछित धन प्राप्त करता है। जव वह धन लेकर लौटता है तव तक निश्चित अवधि समाप्त हो जाती है और सयणी अपने प्रियतम की प्रतीक्षा करके निराश होकर हिमालय मे गलने चली जाती है। वीजाणद भी यह समाचार सुनकर हिमालय मे गलने को चल देता है।

एक अन्य प्रति 'सयणी वीजाणद'[1] मे विवाह के लिए शर्त स्वयं सयणी न रखकर उसका पिता रखता है और शर्त भी सवा करोड का धन न होकर 'नौ चदुरियु' भैंसे रखता है। इस कथा मे सयणी के साथ वीजाणद हिमालय मे गलता नही है, वल्कि सयणी के कहने से लौट पडता है और अपने जतर पर करुण रागिनी गाता फिरता है।

'सयणी चारणी री वात' प्रेम की मार्मिक-व्यंजना के कारण पाठको के हृदय मे एक मर्म-व्यथा छोड जाती है। यह एक करुणाजनक दुखान्त प्रेम-कथा है।

७९ मूगल महिंदरा री वात[2] .

रचयिता :

इसके रचयिता का परिचय अज्ञात है।

रचना-काल :

इसकी एक हस्तलिखित प्रति सरस्वती भण्डार, उदयपुर मे उपलब्ध है, जिसका लिपिकाल स० १८२२ है, अत इसका रचना-काल भी स० १८२२ से पूर्व का माना जा सकता है।

---

१. परम्परा (रसराज अक–१९६०) पृ. स ११३।

२ मूमल महिंदरा री वात (ह लि) सरस्वती भण्डार, उदयपुर, ग्रथाक ७०३ (६८) लिपिकाल स० १८२२।

कथा-वस्तु :[1]

इसमे अमरकोट के राजकुमार महेन्द्र और मूमल की हृदय-स्पर्शी प्रेम-कथा वर्णित है। अमरकोट का राजकुमार महेन्द्र नित्य ऊँट पर बैठकर अपनी प्रियसी मूमल से मिलने जाया करता था। एक दिन उसके पिता को सन्देह होने पर ऊँट को कही अन्यत्र भेज दिया। अतः महेन्द्र एक सांडनी पर बैठकर अपनी प्रियसी से मिलने चल पडा, पर निश्चित समय पर पहुँचने मे उसे विलम्ब हो गया। उधर मूमल उसकी प्रतीक्षा मे बैठी २ प्रतिपल उसका मार्ग निहार रही थी, किन्तु बाद मे उसे नींद आगई। उसकी छोटी बहिन उसकी गोद मे सिर रखकर सोगई। महेन्द्र ने दूर से जब यह दृश्य देखा तो उसे मूमल के साथ किसी अन्य पुरुष होने का सन्देह होगया और वह ईर्ष्या से जलकर वही अपनी जूतियाँ छोडकर वापिस घर आगया। प्रात जब मूमल जगी तो महेन्द्र की जूतियाँ देखने पर उसकी विरह-वेदना और भी तीव्र होगई। महेन्द्र मूमल के पास फिर कभी नही लौटा। इस पर मूमल ने महेन्द्र का वियोग सहन नहीं कर पाने के कारण अपने प्राण छोड दिये।

राजस्थान की यह अत्यन्त लोकप्रिय कथा है। 'महेन्द्ररो सोढो राणो' नाम से भी इसकी प्रति उपलब्ध होती है।[2] राजस्थान के अतिरिक्त यह प्रेम-कथा सिंध मे भी बहुत लोकप्रिय रही है।[3] इस कथा के लोक-गीत भी बहुत प्रचलित है।[4] प्रस्तुत बात गद्य मे लिखी गई है। बीच २ मे दोहा, सोरठा व चन्द्रायणा आदि छन्द प्रयुक्त किये गये है। कथा दुखान्त है।

८०. जलालदीन री वारता :[5]

इसकी अनेक हस्तलिखित प्रतियाँ राजस्थान के हस्तलिखित ग्रथ भण्डारो में

---

१ भारतीय प्रेमाख्यान की परम्परा . प. परशुराम चतुर्वेदी, पृ स १४८।

२ महेन्द्रा सोढा राणा री बात (ह लि) रा प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रथाक १०७६ (६)।

३ सिन्धी लोक-कथा · मूमल राणो, स बूलचद वसूमल (गुलदस्ता . वर्ष १, अक ९)।

४ मूमल के विभिन्न लोकगीत और उसका जीवन वृतात—श्री दीनदयाल ओझा (शोध पत्रिका, भाग ७ अक २–३) पृ. स. ४९।

५. (क) जलालदीन री वारता (ह लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।
(ख) जलाल गहाणी री वारता (ह लि.) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रथाक ३१९७३ गुटका पत्र सख्या १ से ४७ तक।
(ग) जलाल गहाणी री बात (ह लि.) अनूप संस्कृत लाइब्रेरी, बीकानेर, ग्रथाक ७ (१२)।

उपलब्ध होती है जिनमे से कई सचित्र हैं। सबसे पुरानी हस्तलिखित प्रति संवत् १७९५ की रा प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर मे उपलब्ध है।[1]

रचयिता :

प्रस्तुत वारता के रचयिता ऋषि जीवणदास हैं। यह ऋषि खीवराज के शिष्य थे।

रचना-काल

इसका लेखन-काल स० १८२१ 'पोस सुद १५ सोमवार' है।

राजस्थान मे इसकी अनेक हस्तलिखित प्रतियो की प्राप्ति से यह प्रतीत होता है कि जलाल बूबना की प्रेम-कथा राजस्थान मे विशेष लोकप्रिय रही है। वीरमदे सोनगरा री बात (लिपिकाल स० १७६१) मे भी जलाल का उल्लेख मिलता है।[2] इससे विदित होता है कि १८वी शताब्दी से पूर्व ही जलाल बूबना का प्रेमाख्यान लोक प्रसिद्धि प्राप्त कर चुका था।

कथा-वस्तु :

ठठा मखर के बादशाह मुगतमायची की बहिन गहाणी का लडका जलाल अपने रूप-यौवन के लिए प्रसिद्ध था। सिंध समद के बादशाह ने अपनी लडकियाँ मूमना ओर बूबना के विवाह के नारेल काजी के साथ बादशाह मुगतमायची के पास भेजे। काजी ने रिश्वत लेकर बूबना का नारेल जलाल को देने की अपेक्षा बादशाह को दे दिया और मूमना का नारेल बादशाह को देने की अपेक्षा जलाल को दे दिया। किन्तु बूबना तो पहले से ही जलाल के प्रेम-जाल मे फँसी हुई थी, अत बादशाह के साथ विवाह हो जाने पर भी जलाल उससे लुप-छिपकर मिलता रहा। बादशाह को जब यह बात मालूम हुई, तब उसने जलाल को मार्ग से हटाने के लिए जोइयो से युद्ध लडने भेज दिया। किन्तु जलाल सावन की तीज पर अपनी प्रियतमा से मिलने पहुँच गया। बादशाह ने जलाल के प्रेम-मार्ग में अनेक बाधाये उपस्थित की किन्तु सफल न हो सकी। अन्त मे उसने जलाल के पास बूबना की मृत्यु के मिथ्या समाचार पहुँचाये जिसे सुनकर जलाल के भी प्राण-पखेरू

---

१ जलाल बूबना री बात, सचित्र (ह लि) रा. प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रथांक ५८९५।

२. "तरै उडदा बेगम वीरमदे ने देखने राजी हुई। सागै गेहणी जलाल छै।" —राजस्थानी साहित्य-सग्रह, भाग २, (रा प्रा. विद्या-प्रतिष्ठान, जोधपुर) स० डॉ. परुषोत्तम लाल मेनारिया।

उड गये। जब बूबना ने जलाल की मृत्यु के समाचार सुने तो उसकी भी मृत्यु हो गई। किन्तु शिव-पार्वती ने दोनो प्रेमी-प्रेमिका को पुनर्जीवित कर दिया। चार दिन बाद गजनी के बादशाह की मृत्यु हो जाने पर जलाल वहाँ का बादशाह बन गया। जलाल और बूबना आनन्दपूर्वक रहने लगे।

जलाल बूबना की यह लोक-कथा विशुद्ध प्रेमाख्यान की कोटि मे आती है जिसमे प्रेम की सहज प्रवृत्ति का सहज और निरावृत रूप से निरूपण किया गया है। यहाँ निश्छल और एक निष्ठ प्रेम का सुन्दर उदाहरण मिलता है। सामाजिक एव सास्कृतिक अध्ययन की दृष्टि से भी इस रचना का बडा महत्व है। इसके पात्र सब मुसलमान है, किन्तु उनके क्रियाकलाप अधिकाश रूप से हिन्दु-धर्म से प्रभावित हैं। हिन्दु-मुस्लिम सस्कृति का इस वारता मे बडे सुन्दर तरीके से मिश्रण हुआ है।

जलालदीन री वारता गद्य मे लिखी गई है किन्तु बीच-बीच मे पद्य भी मिलते हैं। गद्य की भाषा अनुप्रासमयी है और लययुक्त है। लोक-कथानक रूढियो, अन्योक्तियाँ, लोकोक्तियो एव मुहावरो के प्रयोग से कथानक मे चारुता आगई है। सासू-बहू सवाद, बूबना मूमना सवाद आदि से कथानक मे नाटकीयता आगई है। यद्यपि इसकी भाषा राजस्थानी है, किन्तु यत्र तत्र पजाबी भाषा का भी गहरा पुट मिलता है। यथा—

साई हदा हथ सु गमरु हथे ठौर।
कैसी आँखु बत्तडी, हम साहिब दाँ चौर॥

८१ जीवणदास : सदैवच्छ सावलिगा री वारता[1]

रचयिता

इसके भी रचयिता जीवणदास है जिनका परिचय इससे पूर्व दिया जा चुका है।

रचना-काल :

कृति की पुष्पिका से इसका रचना-काल 'स० १८२१ माह सुदि २ बुद्धवार' विदित होता है।[2]

---

१. सदैवच्छ सावलिगा री वारता (ह. लि.) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रथाक ३११९७३ (गुटका की पत्र-सख्या ४८ से १०७ तक)

२. "इति श्री सदैवच्छ सावलिगा री वारता सपूर्ण। सवत् १८२१ रा वरषे मिती माह सुदि २ बुद्धवारे सपूर्ण लिखित्वा लिषत ऋषि जीवणदास वाजोली नयरे। लेषक पाठक यो श्रु षल वउ॥"

कथा-वस्तु

इसकी कथा-वस्तु सदैवच्छ सावलिगा की प्रेम-कथा पर आधारित है तथा कुछ परिवर्तन के साथ प० किसना जी द्वारा रचित सदैवच्छ सावलिगा री वात के समान ही है।

यह मुख्य रूप से गद्य में लिखी गई है, किन्तु बीच-बीच मे दोहा, छन्द प्रयुक्त हुआ है और यत्र-तत्र सस्कृत के सुभाषित भी प्रसगानुकूल जोडे गये हैं। इसमे प्रयुक्त सस्कृत श्लोको की भाषा अशुद्ध है जो लिपिकार की सस्कृत भाषा के प्रति अल्पज्ञता का द्योतक है। कथानक मे जैन-विश्वास और चारण-सस्कृति का मिश्रण द्रष्टव्य है।

८२ प. चक्रचूडामणि . राजा चन्द्र प्रेमलालछी री बात[1]

रचयिता :

इसके रचयिता का नाम प० चक्र चूडामणि है, जिनका जीवन-परिचय अज्ञात है।

रचना-काल :

कृति की पुष्पिका मे इसका लिपि-काल स. १८३६ चैत्र कृष्णा १४ सोमवार दिया है तथा इसके लिपिकर्ता का नाम मुनि खुस्यालचद है।[2] अनुमानत इसका रचना-काल स १८२६ के आस-पास होना सम्भव है।

कथा-वस्तु[3] :

राजा चन्द प्रेमलालछी री वात मे दो कथाये वर्णित हैं —

---

१. (क) राजाचन्द प्रेमालालछी री बात (ह. लि.) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रथाक १२७०६, पत्र स. ८६–९७।
(ख) राजाचंद की प्रेमालालछी रुद्रदेव री वात (ह. लि.) राजस्थानी शोध सस्थान, जोधपुर।

२ "इति श्री राजा चन्दरी प्रेमालालछी रुद्रदेवरी बात सम्पूर्ण। सवत् १८३६ रा मती चैत्र वदि १४ चन्द्र वासरे। पडीत चक्रचूडामणि वा.। श्री श्री श्री। श्री कुशल रत्न जी तत् शिष्य प. श्री श्री अनोप रत्नजी मुनि खुस्यालचद लिपि कृत। श्री गुंदवच नगरमध्ये। सेवक गिरधारी री पोथी माहे सु लिखी।"

३ विस्तृत कथा-वस्तु के लिए देखिए—
राजस्थानी-प्रेमाख्यान (प्रेस कॉपी) स गोस्वामी लक्ष्मीनारायण, रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर (राजचन्द्र प्रेमलालछी री बात)।

प्रथम, राजापुर ग्राम के रुद्रदत्त राजपूत का अपनी दोनो पत्नियो के मायावी त्रिया-चरित्र से डरकर घर छोडकर भागना और सुयोग से आभा नगरी के राजा चन्द की पुत्री से उसका विवाह हो जाना। इसको हम मुख्य-कथा मान सकते है क्योकि पात्रो की प्रत्यक्ष क्रियाशीलता से यह कथा विस्तार पाती है।

द्वितीय, राजकुमार द्वारा बाज बनकर चील बनकर आई हुई उसकी पत्नियो को मार डालने पर रुद्रदत्त के भयभीत होकर भागने पर राजा चन्द द्वारा उसे आश्वस्त करने के लिए कही गई प्रेमलालछी की कहानी। इसमे राजा चन्द और प्रेमलालछी की प्रेम-कथा वर्णित की गई है। यह इस कथानक की उपकथा है, क्योकि यह कहानी मे प्रत्यक्ष रूप से घटित न होकर वर्णित है। किन्तु रचनाकार द्वारा राजा और प्रेमलालछी की प्रेम-कथा को महत्व देने को इसका शीर्षक 'राजा चद प्रेमलालछी री बात' रखा गया है। अत उपकथा होते हुए भी यह मुख्य-कथा लगती है। प्रेमलालछी री बात राजस्थानी गद्य में लिखी गई एक साधारण कोटि की रचना है जिसके छोटे से कथानक मे अनेक स्त्रियो के त्रिया-चरित्र की विचित्रता अनेक अद्भुत घटनाओ के सयोग से दिखलाई गई है। किन्तु, इन त्रिया-चरित्रो की पृष्ठभूमि मे तुलनात्मक दृष्टिकोण से प्रमुख नायिका प्रेमलालछी की विशुद्ध प्रेम-निष्ठा का परिचय देना ही लेखक का मुख्य लक्ष्य है राजस्थानी भाषा के साथ-साथ अरबी फारसी के शब्दो का प्रयोग भी मिलता है। इस कथा मे लोकोक्तियो और राजस्थानी के ठेठ मुहावरे सफलता के साथ प्रयुक्त हुए हैं। लोक-कथा तत्वो के अध्ययन की दृष्टि से इस कथा का महत्वपूर्ण स्थान है।

८३ लाखा फुलाणी :[1]

लाखा फुलाणी राजस्थानी की प्रेम-परक अर्द्ध ऐतिहासिक सुप्रसिद्ध कथा है। लाखा फुलाणी एक ऐतिहासिक व्यक्ति है और मध्यकाल में इसका व्यक्तित्व इतना सुपरिचित रहा है कि भारतीय वाङ्गमय मे अनेक स्थलो पर इसका उल्लेख मिलता है। इतिहास-बोध (Historic sense) के आधार पर ऐतिहासिक

---

१ (क) लाखा फुलाणी (ह लि.) रा प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर ग्रथांक ३५५५ (२७)।

(ख) लाला जाडेची री बात (ह लि) सरस्वती भण्डार- उदयपुर, ग्रथाक ७०१ (७६)।

व्यक्तियो के सम्बन्ध मे अनेक बाते चल पडने की परम्परा रही है। लाखा फुलाणी के सम्बन्ध मे भी गुजराती एव राजस्थानी मे अनेक वार्तायें मिलती है।[1] यह कथा राजस्थान मे इतनी लोकप्रिय है कि जैसलमेर की ओर लोक-गीतो मे अब भी उसका रासात्मक चरित्र गाया जाता है।[2] राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर एव सरस्वती भण्डार, उदयपुर मे इसकी हस्तलिखित प्रतियाँ उपलब्ध है।

रचयिता :

इसके रचयिता का परिचय अज्ञात है।

रचना-काल :

उपलब्ध हस्तलिखित प्रतियो मे सबसे पुरानी प्रति का लिपि-काल स १८२६ है[3], अत इसका रचना-काल भी इससे पूर्व भी माना जा सकता है।

कथा-वस्तु[४] :

(१) केलकोट का राजा जाडेचाफूल वन मे भारी वर्षा से भीग जाने के कारण बेहोश हो जाता है।

(२) खेरडी गाव का जमला अहीर उसके शरीर मे उष्णता पहुचाने के लिए अपनी नवयुवती लडकी को उसके साथ सुला देता है। फूल उस लडकी से विवाह कर अपनी राजधानी लौट जाता है।

(३) जमला की बेटी से लाखा का जन्म होता है। वह माता के पास से फूल द्वारा प्रदत्त मुद्रिका ले अपने पिता के पास पहुच जाता है और राजा फूल उसे राज्य-भार सौपकर बलोचो की ओर चल पड़ता है।

---

१. नैणसी री ख्यात मे लाखा फुलाणी : डा० मनोहर शर्मा, (वरदा, जुलाई १९३३ ई.)।

२. जैसलमेर के प्रचलित लाखा फुलाणी के लोक-गीत–'लाखो'! दीनदयाल ओझा (मरु भारती अप्रेल १९५५)।

३. 'क' प्रति की पुष्पिका–लिपिकाल १८२६।

४. विस्तृत कथा-वस्तु के लिये देखिये—'मुहता नैणसी री ख्यात, द्वितीय खण्ड, पृ स. २२६–२३३, (नोट– रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर में उपलब्ध प्रति, ग्रथाक ३५५५) मे कथा अन्य प्रकार से वर्णित है।

(४) पीछे से फूल की पटरानी लाखा के रूप पर मोहित होकर प्रेम-प्रस्ताव रखती है, किन्तु लाखा उस कुत्सित प्रस्ताव को ठुकरा देता है। परिणाम स्वरूप लाखा पर मिथ्या दोषारोपण करके उसे राज्य से निकलवा देती है।

(५) राजा फूल का स्वर्गवास हो जाने पर लाखा पुन राज्य-भार सम्हाल लेता है।

यह कहानी का पूर्वार्द्ध है। कहानी के उत्तरार्द्ध मे सोढी रानी से लाखा का विवाह होना, सोढी का मनफूलिया डोम पर मोहित होकर स्खलित होना तथा लाखा के हाथ से शूले खाकर मर जाना आदि घटनाये वर्णित है।

८४ रायचन्द : मृगलेखा चौपई[1]

मृगलेखा चौपई एव मृगाक लेखा चौपई के कई जैन रूपान्तरो का उल्लेख श्री अगरचन्द नाहटा ने गवेषणा-शोध-पत्रिका मे प्रकाशित अपने लेख मे किया है।[2] इस कथा का पूर्व रूप सस्कृत के कवि भट्ट अपराजित की मृगाक लेखा मे मिलता है, किन्तु वह अप्राप्य है। राजस्थानी भाषा का सबसे प्राचीन रूप जैन श्वेताम्बर कवि वच्छ की मृगाँक लेखा चरित्र मे है जिसका रचनाकाल स. १५२० के आस-पास का है।

रचयिता :

प्रस्तुत मृगलेखा चौपई के रचयिता ऋषिराय चन्द हैं।

रचना-काल :

कृति की पुष्पिका से इसका रचनाकाल स १८३८ विदित होता है तथा इसका राचना-स्थल जोधपुर है।[3]

मृगलेखा चौपई शील-व्रत से निरूपण के लिए ६२ ढालो में लिखा गया एक प्रेमाख्यानक-काव्य है जिसमे मृगलेखा की प्रेम-निष्ठा का रसमय चित्रण

---

१ मृग लेखा चौपई, सचित्र (ह लि) रा. प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्र थाक ५६६१, चित्र सख्या ४८।

२ गवेषणा–(जुलाई १९५३) पृ स १३६।

३. 'जयमलजी रो पाटवीजी ज्यारा सिष्य रायचन्द।
मृग लेखा नि चौपईजी, भाख्यौ सरस सम्बन्ध॥
समत् अठोर अडतीस मे जी, भादवा वदि इग्यारस जाण।
चौमासो सहर जोधपुर मे जी, अठे रच्यौ एहम ढाण॥"

किया गया है। अपनी रचना का आधार कवि ने शील तरंगणी नामक ग्रंथ बतलाया है। कवि ने अपनी रुचि के अनुसार इस कथा मे इतना परिवर्तन एव परिवर्धन किया है कि इसका आकार कवि वच्छ की मृगाक लेखा से लगभग दुगना हो गया है।

कथा-वस्तु[1] :

उज्जेन के सेठ धनसागर की कन्या मृगलेखा के रूप को देखकर सेठ सागरदत्त का पुत्र सागर चन्द मोहित हो जाता है और उसके वियोग मे बीमार भी हो जाता है। अत· उसका विवाह मृगलेखा से कर दिया जाता है। कुछ समय बाद सागर चन्द अपनी मुद्रिका मृगलेखा को देकर शत्रुओ पर विजय प्राप्त करने अन्य स्थान पर चला जाता है। पीछे से मृगावती के चरित्र पर सन्देह कर उसके घर वाले गर्भावस्था मे ही उसे घर से निकाल देते है। मृगावती पर विपत्तियो का पहाड टूट पडता है किन्तु वह अपना धैर्य नही खोती। जगल मे उसके पुत्र जन्मता है और उसे कोई उठा ले जाता है, उसके सतीत्व को भग करने के प्रयत्न किये जाते है, किन्तु वह धैर्य से सब कष्टो को सहकर अपने शील की रक्षा करती है। अन्त मे, उसका पुत्र भी बडा होकर तथा राजकुमारी से विवाह करके उसके पास लौटता है। सागर चन्द भी शत्रुओ पर विजय प्राप्त कर लौट आता है और सब सुखपूर्वक रहते है। कथा पूर्वभव के वृतात के साथ समाप्त होती है।

८५. बात बीजड़ बीजोगण री[2]

रचयिता :

इसके रचयिता का परिचय अज्ञात है।

रचना-काल .

अनूप-सस्कृत लाइब्रेरी, बीकानेर मे उपलब्ध इसकी हस्तलिखित प्रति मे लिपिकाल सं० १८२६ दिया हुआ है[3], अत. इसका रचना-काल भी १९वी शताब्दी का प्रारम्भकाल माना जा सकता है।

---

१. विस्तृत कथा-वस्तु के लिए देखिए—गवेषणा (जुलाई १९५३) में श्री अगरचन्द नाहटा का लेख, पृ. स. १३६।

२. बात बीजड बीजोगण री : वरदा (वर्ष ७, अ क ३, सन् १९६४)।

३. बीजड बीजोगण री कथा (ह. लि) अनूप सस्कृत लाइब्रेरी, बीकानेर, ग्रथाक—४ (१३)।

यह गद्य मे लिखी गई एक प्रेम-कथा है। गद्य के बीच-बीच मे दोहे लिखे हुए मिलते हैं जो प्रेम की मार्मिक-व्यजना के लिए प्रसिद्ध है। होड या डाडा मेडी कथानक प्ररूढि के सहारे सयोग वियोग के वाद-विवाद से कथानक का विकास हुआ है।[1]

कथा-वस्तु ·

गुजरात के राजा विजैसाल का पुत्र बीजड और सावलसाह की पुत्री बीजोगरा मे विद्यालय मे साथ २ पढते प्रेम हो जाता है। एक दिन राजकुमार बीजोगरा के घर जाकर उसकी माता से बीजोगरा को अपने लिए माग लेता है। किन्तु अनिष्ट की आशका से सावलसाह के राज्य छोडकर अन्यत्र चले जाने पर उनका विवाह नही हो पाता। राजकुमार के निश्चित अवधि मे सावलसाह के पास नही पहुँचने पर, वह बीजोगरा की सगाई अन्य व्यक्ति से कर देता है, किन्तु जब बीजोगरा की बारात आने वाली होती है, बीजड बीजोगरा के पास पहुँच जाता है और विवाह की शर्त के लिए पूछे गये गणित के कठिन प्रश्नो को हल कर बीजोगरा से विवाह कर लेता है।

बीजोगरा के साथ लौटते समय मार्ग मे शेर मौहम्मद नामक सौदागर बीजोगरा के रूप पर मोहित हो जाता है और उसे प्राप्त करने के लिए बीजड को छल से समुद्र में गिरा देता है। बीजोगरा कुछ काल तक शेर मौहम्मद को फुसलाये रखकर अपने सतीत्व की रक्षा करती है। उधर बीजड समुद्र मे काष्ठ-पट्ट के सहारे बचकर एक नगर के शिव मन्दिर मे जाकर बैठ जाता है। सुयोग से बीजोगरा भी उस नगर मे पहुँचती है और शेर मौहम्मद से वहाना करके बीजड के वियोग से दुखी होकर उसी मन्दिर मे आत्म-हत्या करने पहुँचती है। दोनो प्रेमियो का आकस्मिक रूप से आनन्ददायक मिलन होता है। अपने प्रियतम से मिलन की इस चिरानन्द घडी मे बीजोगरा आनन्दातिरेक से चिल्ला पडती है। यथा—

> जी जी करती तिम जपै, कीध मिलाप करतार।
> हम अलकाज पपीहे जैही, पीव पीव करत पुकार॥
> तारे पार उतारिया, सोग सम्भालो स्याम।
> रात दिवस जपता रहो, निमश निमश हरीनाम॥

---

१. लोक-कथाओ की कुछ प्ररूढियाँ डा० कन्हैयालाल सहल।

८६. बीजा सोरठ री बात [1]

रचयिता :

इसके रचयिता के बारे में कुछ भी पता नही चलता। शताब्दियो से लोक-कठ से इस मर्मस्पर्शी लोक-कथा के दूहे सोरठ राग में निसृत होते रहे हैं।

रचना-काल :

'बीजा सोरठ री बात' की उपलब्ध सबसे प्राचीन हस्तलिखित प्रति का लिपिकाल स० १८२२ है[2], अतः इसका रचना-काल १९वीं शती का प्रारम्भ माना जा सकता है।

यह लोक-कथा राजस्थान और गुजरात मे बहुत प्रचलित है। यह एक विरह-काव्य है जिसमे सोरठ का विरह-वर्णन मिलता है।

कथा-वस्तु :[3]

साचोर के राजा देवडा के यहाँ सोरठ का अशुभ नक्षत्र मे जन्म होने से, उसे कुम्हार के घर छोड दिया जाता है। कुम्हार के घर बडी होने पर सोरठ के रूप की चर्चा चारो ओर फैल जाती है और एक धनी विन जारा रूर से उसका विवाह हो जाता है। राणा खेगार के साथ जुये के दांव मे विनजारा सोरठ को हार जाता है। खेगार का भानजा बीजा जब सोरठ को रथ मे लाने जाता है तब दोनो एक दूसरे को देखकर मोहित हो जाते हैं और प्रेम-पाश मे बध जाते हैं। यद्यपि सोरठ खेंगार के महलो मे रहती है, किन्तु बीझा और सोरठ का लुके-छिपे मिलना जारी रहता है। भेद खुलने पर राव खेगार बीजा को देश निकाला दे देता है। बीजा सोरठ को प्राप्त करने के लिए पाटण के बादशाह से सहायता मागता है।

---

१. (क) बीजा सोरठ री बात (ह लि.) रा प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रथाक—२१४२ (१)।

(ख) बीजा सोरठ री बात (ह लि.) रा प्रा विद्या प्रतिष्ठान, बीकानेर शाखा, ग्रथाक—३४२ (६९)।

(ग) सोरठा रा दूहा (ह. लि) रा. प्रा विद्या प्रतिष्ठान, बीकानेर शाखा, गुटका नम्बर ७८।

२ बीजा सोरठ री बात (ह लि) सरस्वती भण्डार, उदयपुर, ग्रथाक १६, लिपिकाल स० १८२२।

३. विस्तृत कथा-वस्तु के लिए देखिए—परम्परा का रस-राज अ क (सन् १९६० ई.) पृ. सं. १०८।

युद्ध मे राव खेंगार मारा जाता है, किन्तु सोरठ वीजा हाथ नही लगती। वह पाटण के बादशाह के महलो मे पहुँचा दी जाती है। सोरठ के वियोग मे दुखी बीजा तडप-तडप कर मर जाता है। तत्पश्चात् सोरठ भी बीजा के पास श्मशान मे जाकर, जन्म-जन्मातर तक उसे पति रूप मे प्राप्त करने की कामना करके प्राणोत्सर्ग कर देती है।

बीजा सोरठ री बात के सम्बन्ध मे निम्नलिखित दोहा प्रचलित है—

सोरठ सिंघल दीप नी पाली आण कुम्हार।
परणी राजा रूर नै, माणी राव खेगार॥

किन्तु इसकी 'ग' प्रति मे यह दोहा इस रूप मे मिलता है। यथा—

सोरठ सिंगल दीप की पाली आणि अ तार।
परणी राजा रो मनइ, जितराइ सिणगार॥

सोरठ के विरह-दग्ध हृदय की मार्मिक-व्यजना पाठको के हृदय को छू लेती है। सोरठ कामना करती है—

वीजा म्हाकइ आगणई नित आवउ नित जाई।
घट की वेदन बालहा, कह उतउ कोइ न जाई॥

भाव भीनी कल्पना की समाहार शक्ति के लिए निम्नलिखित दोहा द्रष्टव्य है—

वीजा थाकइ कारणइ, तोडयउ नवसर हार।
लोग जाणइ मोती चुणइ, निय निम करु जुहार॥

सोरठ मोतियो का हार तोडकर, उसके मोती चुगने के बहाने अपने प्रियतम को प्रणाम करती है। इस दोहे मे सोरठ की परवशता और उसके प्रेम-निष्ठ हृदय का परिचय प्राप्त होता है।

८७. बात नागजी नागवंती री

रचयिता :

यह राजस्थान और गुजरात मे प्रचलित लोकप्रिय प्रेम-कथा है जिसके रचयिता का परिचय अज्ञात है।

रचना-काल :

राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर मे उपलब्ध एक हस्तलिखित

प्रति मे इसका लिपिकाल स० १८५२ दिया गया है। अत इसका रचना-काल भी इससे पूर्व का माना जा सकता है।

कथा-वस्तु :

(१) कच्छ मे अकाल पडने पर जाखडे अहीर का वागड प्रदेश के राजा धोलवाडा के यहाँ जाना और दोनो का पगडी वदल भाई हो जाना।

(२) जाखडे अहीर की रूपवती कन्या नागवती का नागजी की भाभी परमलदे के साथ नागजी से मिलना और उन पर मुग्ध होकर छिपकर विवाह कर लेना।

(३) नागजी और नागवती का प्रेम-प्रकट हो जाने पर नागजी को देश निकाले का दण्ड मिलना और नागवती का विवाह उसके पूर्व मगेतर से कर देना।

(४) मिलन-स्थल पर निश्चित समय पर नागवती का प्रतीक्षारत नागजी के पास नही पहुँच पाने पर विरह की असह्य वेदना से दु खी होकर नागजी का आत्म-हत्या कर लेना।

(५) बारात मे सजी वधू नागवती का सुसराल जाते समय मार्ग मे नागजी की चिता देखकर उनके साथ सती हो जाना।

(६) दोनो प्रेमियो का सच्चा-प्रेम देखकर शिव-पार्वती द्वारा दोनो को पुनर्जीवित कर देना और दोनो प्रेमियो का आनन्दपूर्वक रहना।

'नागजी नागवती री वात' का राजस्थानी के प्रेमाख्यानो में विशिष्ट स्थान है। इस कथा मे प्रेम, करुणा, सामाजिक व्यवधान, व्यक्ति की परवशता आदि रागात्मक और सामाजिक प्रवृत्तियो का मार्मिक-चित्रण हुआ है। काव्य-सौष्ठव की दृष्टि से इसके दोहे राजस्थानी साहित्य की अमूल्य निधि है। इन दोहो मे भाव-गरिमा के साथ हृदय की मार्मिक-व्यथा एव व्यग्यात्मकता की सुन्दर व्यजना हुई है। यथा—

सज्जन दुरजन हुय जले, सयणा सीख करेह।
धण विलयती यू कहै, आवा साख भरेह ॥१५॥

---

१. बात नागजी नागवती री (ह लि.) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रथाक न. ११५८५ माप १६ × १० से.मी. पत्र ३२।
कृति की पुष्पिका—
"इति श्री नागवती ने नागजी री वात सम्पूर्ण। संवत् १८५२ वर्ने मिति आसाढ वदि ७ भोमवारे लिपि कृत प० केसर विजे न विकपुर मध्ये कोचर सु लिछमन जी पठनार्थ श्री रस्तु कल्याणमंस्तु ॥"

नागजी ! तुमीणा नेह, रात-दिवस सालै हीये ।
किण नै कहीयै तेह, नित-नित साले नागजी ॥२३॥

८८. नाथूराम व्यास · फूलसी फूलमती री वारता[1]

इसकी अनेक हस्तलिखित प्रतियाँ रा प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर तथा सरस्वती भण्डार, उदयपुर मे उपलब्ध होती है । इनमे से कई प्रतियाँ तो सचित्र है । एक प्रति में जोधपुरी कलम के ५३ चित्र चित्रित हैं ।

रचयिता :

इसका रचयिता जोधपुर निवासी नाथूराम व्यास है ।

रचना-काल :

कृति की पुष्पिका से इसका रचना-काल स० १८५२ विदित होता है ।[2]

कथा-वस्तु

राणा राजसिंह के समय उदयपुर के गगाराम मुहाता की पुत्री फूलमती का विवाह उदयपुर के ही साह मनिराम के पुत्र योगराज के साथ होता है । विवाह के दो वर्ष पश्चात् सीरोही के राव अखेसिंह का पुत्र फूलजी श्रावण की तीज पर उदयपुर आते हैं और झरोखे पर खडी फूलमती के रूप को देखकर मोहित हो जाते हैं । फूलमती भी फूलजी पर अपना हृदय समर्पित कर बैठती है । पीछोला तालाब के पीछवाडे दोनो प्रेमी मिलते हैं और दोनो एक दूसरे के हो जाते हैं । कभी फूलो की टोकरी मे छिपकर, कभी अन्य प्रकार से फूलजी फूलमती से गुप्त रूप मे मिलते रहते हैं । इसी बीच वार्ताकार द्वारा सयोग-वियोग के अनेक अवसर निकाले जाकर नायक-नायिका की प्रेम-चेष्टाओ का रसात्मक वर्णन किया जाता है । फूलजी और फूलमती का प्रेम-व्यापार जीवन पर्यंत चलता रहता है ।

---

१ (क) फूलजी फूलमती री वार्ता (ह. लि) रा प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रथाक ६१२७, पत्र-सख्या १४ ।
(ख) फूल कुँवर फूलमती री वात (सचित्र) रा प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रथाक ५७७२ ।
(ग) फूलकँवर फूलमती री वात (ह. लि.) सरस्वती भण्डार, उदयपुर । लिपिकर्ता · मछापुरी, लि. का स० १६१२ ।

२. सवत् अठारै बावनै, करी वात चितलाय ।
सरस्वती की क्रीपा भई, दीनी बुध बताय ॥

—'क' प्रति से उद्धृत ।

परकीया-प्रेम को लेकर लिखी गई यह एक गद्य-पद्यमयी सरस प्रेम-कथा है। इसका गद्य अनुप्रासमय होने से लालित्य लिए हुए है तथा पद्य मे प्रेम की मार्मिक व्यजना हुई है। तत्कालीन राजपूत-सस्कृति के अध्ययन एवं सामन्ती मनोवृत्ति को जानने के लिए यह रचना बडी उपयोगी है। स्थानीय तीज, मेलो तथा बारह-मासा आदि के वर्णनो में आचलिकता (Local colour) का गहरा रग मिलता है।

८९. शेरसिंह : पनां वीरमदे री बात[1]

पना वीरमदे री वात, पन्ना री वात आदि नामो से इसकी अनेक हस्त-लिखित प्रतिया उपलब्ध होती है। इनमे कई सचित्र प्रतियाँ भी हैं।

रचयिता :

इसके रचयिता शेरसिंह नाम के कोई व्यक्ति हैं, जिनका जीवन-परिचय अज्ञात है।

रचना-काल :

इसका रचना-काल स १८५६ है।

कथा-वस्तु :

पु गल देश के सुप्रसिद्ध सेठ साह रतन की रूपवती पुत्री पना का विवाह सुरत के साह चन्द्रभाण के पुत्र हीरालाल के साथ होता है, जो कुरूप होता है। पना इस अनमेल विवाह से वडी दु खी रहती है और कुछ दिन ससुराल ठहरकर

---

१. (क) पन्ना की वात (ह. लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, दादावाडी, अजमेर। पत्र-सख्या ६९।
'इति श्री पना की वात कवर सेरसीध कृत सपूर्ण।'
(ख) वीरमदे पन्ना री वारता (सचित्र) रा प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, पत्र १ से ४७ तक, चित्र-सख्या १८, ग्रथाक ७७६९।
(ग) बात पना वीरमदे री (ह. लि) रा. प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रथाक ४९१५ लिपिकाल–१८८७।
"इति श्री सु पुरण, सवत् १८८७ रा अषाढ ५ गुरुवार।
(घ) कवर वीरमदे पन्ना री बात (ह लि.) रा प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रथाक ५३४१, पत्र-सख्या ५७।
'इति श्री कवर वीरमदे पना की बात सपूर्ण। लिषीत बोरा वीरानद रत्नपुर मध्यै ॥ लिषत वोरा वीरजी हीरजी पठनार्थ ॥'
(च) पना री बात (ह. लि) राजस्थानी शोध सस्थान, जोधपुर।

मायके आ जाती है। इधर इन्दरगढ के उमराव इन्द्रभाण का पुत्र वीरमदे पुगल की तीज देखने आता है और मेले मे पना को देखकर मोहित हो जाता है। पना भी वीरमदे के पौरुष और सौदर्य के समक्ष अपना हृदय हार बैठती है। पूर्व निश्चय के अनुसार निश्चित सकेत-स्थल पर दोनो प्रेमी अनेक बाधायें पार कर मिलते हैं। हरिया खवास और कस्तुरी बादी के द्वारा प्रेम-सन्देशो का आदान-प्रदान चलता रहता है। नायक-नायिका के मिलन का क्रम सावन की तीज एव अनेक अवमरो पर चलता रहता है। अन्त मे दोनो प्रेमियो को एक दूसरे की दूरी असह्य हो जाती है, और एक दिन अवसर पाकर वीरमदे गोरी-पूजन के लिए मन्दिर मे आई हुई पना का हरण कर ले जाता है। पना के परिवार को इस घटना का पता चलने पर वे वीरमदे को पकडने दौडते हैं, युद्ध होता है, किन्तु विजय वीरमदे की होती है। लौटते समय मार्ग मे, विक्रमपुर का भाटिया रतनसिह अपना प्रतिशोध लेने के लिए वीरमदे से युद्ध करता है, किन्तु हार जाता है। वीरमदे पना को लेकर इन्द्रगढ पहुच जाता है। दोनो प्रेमी भोग-विलास मे रत होकर जीवन व्यतीत करते है।

परकीया प्रेम से सम्बन्धित राजपूत-सामन्तशाही के भोग-विलास मुक्त-जीवन के अध्ययन की दृष्टि से इस रचना का बडा महत्वपूर्ण स्थान हैं। यह गद्य-पद्यमयी शैली मे लिखा गया चम्पू-काव्य है जो काव्य-सौष्ठव की गरिमा से युक्त है। इसमे शृगार के सयोग से और वियोग पक्ष का नाना कल्पना से युक्त रस-भीना वर्णन है। शृगार-रस के अतिरिक्त वीर-रस का भी इसमे ओजस्वी चित्रण मिलता है जो कवि की सूक्ष्म सूझ, सजग कल्पना शक्ति का द्योतक है। इसका गद्य भी अनुप्रास-मय होने से गयात्मक होकर कुछ लचीला और कुछ लजीला हो गया है।

"मोत्यारा हार री लडा कुचा दोन्यो दोली फीरे छै। जाणें सुमेर रा सिखर सु गगादोय धारा कर उतरै छै आगिया री कसा शरीर मे गडी छै। जाणै सोना के उपरै कसोटी चमी छै।"

उपमा, उत्प्रेक्षा आदि अलकारो की छटा भी दर्शनीय है—

"हीणभाँत तीजल्या बाग मे आई॥ जहा हरि लता मैं नीसरती जाणै कनक लता सी दरसाई॥

इस काव्य में दोहा, चन्द्रायणा, कवित्त, सारग आदि छन्द प्रयुक्त हुए है।

६०. रिख साधु : कलावती चौपई[1]

शील-धर्म के उपदेश के लिए लिखा गया यह एक सरस जैन-प्रेमाख्यानक-काव्य है।

---

१. कमलावती चौपई (ह लि.) श्री जैन श्वेताम्वर मन्दिर, अजमेर, पत्र स ३०।

रचयिता :

इसके रचयिता रिख साधु नाम के कोई जैन मुनि प्रतीत होते है।

रचना-काल :

कृति की पुष्पिका मे इसका रचना-काल स० १८६१ आश्विन शुक्ला १३ बुद्धवार दिया हुआ है।[1]

कथा-वस्तु :

इसमे अवती के राजकुमार शख कुमार और राजकुमारी कलावती की प्रणय-कथा वर्णित है। नगर मे भ्रमर करते हुए शखकुमार को देखकर युवतिया कामातुर हो उठती है और लोक-मर्यादा छोड वैठती है। नगर-निवासियो की शिकायत पर राजा शखकुमार को देश निकाले का दण्ड देता है। राजकुमार वन मे अनेक कष्टो का सामना करता हुआ अपने धैर्य और शौर्य से सब प्रतिकूल परिस्थितियो पर विजय प्राप्त करता है। एक राक्षस को मारकर उसकी रूपवती कन्या से विवाह करता है और अद्भुत सिद्धिया प्राप्त करता है। एक दिन वह राजकुमारी कलावती का चित्र देखकर उस पर मुग्ध हो जाता है और अनेक कष्ट झेलकर उसे प्राप्त करता है। इसके पश्चात् कलावती को अनेक कष्टो मे दिखलाकर कवि ने इसके शील-धर्म एव प्र म की एक निष्ठता का परिचय दिया है। पूर्वभव के वृतात के साथ कथा समाप्त होती है।

काव्य-सौष्ठव की दृष्टि से यह एक प्रौढ रचना है। वर्णन-कौशल, प्रबन्ध-पटुता एव मनोभावनाओ का सरस और सूक्ष्म चित्रण इस कृति की विशेषता है। लोक-प्रचलित कथानक रूढियो के द्वारा कथा का विकास होता है।

९१. वीर विजय : स्थूलभद्र शीयल वेलि

रचयिता :

इसके रचयिता वीर विजय शुभ विजय के शिष्य थे। ये उन्नीसवी शती के उत्तरार्द्ध के श्रेष्ठ-कवियो मे से थे। वीर विजय राजनगर (अहमदाबाद) के रहने वाले थे। इनके पिता जद्रोसर गुजराती ब्राह्मण थे। सवत् १९०८ मे भाद्रपद कृष्णा

---

१ 'इति श्री शख नृप कलावती चरित्र सपूर्ण। सवत् १८६१ वर्षे आसोज सुद १३ सुकल पषे वार बुद्धवार लिषयु। (आगे स्याही पुति हुई होने से अस्पष्ट है)।

तृतीया गुरुवार को इनका स्वर्गवास हुआ।[1] देसाई जी ने इनके २१ ग्रंथों का परिचय दिया है।[2]

रचना-काल

इसका रचनाकाल सवत् १८६३ पौष शुक्ला १२ गुरुवार है। रचना-स्थल राजनगर (अहमदावाद) है।[3]

कथा-वस्तु[4] :

प्रस्तुत वेल की कथा-वस्तु स्थूलिभद्र और कोशा के प्रेम से सम्वन्धित है। शीयल शब्द शील-धर्म का व्यजक है।

राजा नन्द के मत्री शकडाल का पुत्र स्थूलिभद्र कोशा नामक वेश्या मे अनुरक्त होता है। वह बारह वर्ष तक कोशा के साथ प्रेम-कीडाओ मे व्यस्त रहता है किन्तु एक दिन अपने पिता शकडाल की हत्या की बात सुनकर ससार त्याग कर विरक्त हो जाता है। कोशा फिर भी उससे प्रेम करना नहीं छोडती और उसकी प्रतिक्षा मे रहती है। जब स्थूलिभद्र कोशा के यहा चतुर्मास बिताने आते है, तब वह विविध प्रकार से उन्हे प्रेम-मार्ग पर लाने का प्रयत्न करती है, किन्तु असफल रहती है। अन्त मे वह भी अपने प्रियतम के पथ का अनुगमन करके समकित धारण कर लेती है।

प्रस्तुत वेलि काव्य-सौष्ठव की दृष्टि से एक प्रौढ कृति कही जा सकती है। भावानुकूल शब्द-चयन, उपमा, रूपक आदि अलकारो तथा लोक-प्रचलित सूक्तियो का समुचित प्रयोग कृतिकार के रचना-कौशल का परिचायक है।

६२. उत्तम विजय : नेमिश्वर स्नेह वेलि

रचयिता :

इसके रचयिता उत्तम विजय १९वी शती के उत्तरार्द्ध के कवियो मे से थे।

---

१ डा० नरेन्द्र भानावत राजस्थानी वेलि साहित्य (शुभ वेलि) पृ स. २२५।

२ जैन गुर्जर कवियो भाग ३, खण्ड १, सम्पादक—मोहनलाल दलीचन्द देसाई, पृ २१० से २४६।

३. अठार वे वरसठे शुद पोप वारग गुरुवारे ध्याई रे।
राजनगर मुनिवर निरदोप शीयल वेलि प्रेमे गाइ रे ॥ढाल १८॥

४. विस्तृत कथा-वस्तु के लिए देखिए –डा० नरेन्द्र भानावत का शोध-प्रवन्ध : राजस्थानी वेलि साहित्य, पृ. स. ३२३–३२६।

ये तपागच्छीय गौत्तम विजय के पद-सेवक हेम विजय के लघु बाधव खुशाल विजय के शिष्य थे। देसाई जी ने इनके द्वारा रचित ५ कृतियो का परिचय दिया है।[1]

रचना-काल :

प्रस्तुत वेलि का रचनाकाल सवत् १८६७ आश्विन शुक्ला पचमी भृगुवार (शुक्रवार) है।[2]

कथा-वस्तु[3] :

इसकी कथा-वस्तु नेमीनाथ और राजमती के जीवन से सम्बन्वित है तथा चतुर विजय कृत 'नेमी राजुल वेलि' की कथा-वस्तु के समान ही है।

यह कथा १५ ढालो के १७४ पद्यो मे वर्णित है। इसमे वीर, शृ गार और शान्त-रस का सुन्दर परिपाक हुआ है। शृ गार रस के सयोग और वियोग दोनो रूप बडी कुशलता के साथ उजागर हुए है। कथा का पर्यवसान शान्त-रस मे ही हुआ है क्योकि इसमे लोक-रति आत्मरति मे परिणत होकर ब्रह्म-रति मे विलीन हो जाती है। कवि को मार्मिक-स्थलो की पहिचान होने से सस्कृत का काव्य-सौष्ठव खिल उठा है। प्रकृति का चित्रण भी सुन्दर बन पडा है। वर्णन-शैली मे नाद सौदर्य और अनुरणन छटा देखते ही बनती है।

९३ हुलास चन्द : रूपसेन कुमार नो चरित्र[4]

रचयिता :

इसके रचयिता मुनि हुलासचन्द हैं।

रचना-काल :

रूपसेन कुमार नो चरित्र के रचना-काल के सम्बन्ध मे स्पष्ट रूप से कुछ पता नही चलता। अनुमानतः १९वी शती का प्रथम चरण इसका रचनाकाल माना जा सकता है। इसकी रचना चतुर्मास के समय वेदासर ग्राम मे की गई थी।

---

१. जैन गुर्जर कवियो, भाग ३, खण्ड १, पृ. २९५–३०५।

२. 'अहि मही भोजन दधि जेहरे, (१८६७) सवत सवसर एहरे।
रीष्ठ आश्वन मे भृगुवार रे, तिथि पचामी ग्रह्यो सुचिवार रो ॥११॥ढाल १५॥

३ विस्तृत कथा-वस्तु के लिए देखिए—डा० नरेन्द्र भानावत का शोध-प्रबन्ध : राजस्थानी वेलि साहित्य, पृ स. २६४–२६५।

४. रूपसेन कमार नो चरित्र, प्रकाशक—जोरावरमल वैद्य, १४ मु'गापट्टी, कलकत्ता।

रूपसेन कुमार ना चरित्र ५७ ढालो मे लिखा हुआ एक सरस जैन-प्रेमाख्यान-काव्य है। इसकी एक हस्तलिखित प्रति रा प्रा. विद्या प्रतिष्ठान मे 'रूपसेन कनकावती रास'[1] नाम से तथा सरस्वती भण्डार, उदयपुर मे 'रूपसेन की कथा'[2] नाम से उपलब्ध होती है।

कथा-वस्तु :

(१) श्रीपुर नगर के राजा मन्मथराय के पुत्र रूपसेन कुमार के लिए धारा नगरी के राजा प्रतापसिंह की रूपवती कन्या गुणावती के विवाह का नारियल आता है, किन्तु अभिष्ठ की आशका से वह नारियल उसके लिए स्वीकार न करके छोटे राजकुमार के लिए स्वीकार कर लिया जाता है।

(२) रूपसेन इसे अपना अपमान समझकर घर से निकल जाता है और वन मे देवी की आराधना करके जादुई वस्तुये तथा सिद्धिया प्राप्त करता है।

(३) वह राजा कनकभ्रम की राजधानी कचनपुर पहुचकर राजकुमारी के महल मे अदृश्य होने की शक्ति से पहुच जाता है। दोनो मे प्रेम हो जाता है और नित्य रमण करते हैं।

(४) इस घटना का राजा को पता चलने पर वह राजकुमार को पकडने का प्रयत्न करता है, पर असफल रहता है।

(५) राजकुमार और राजकुमारी दोनो कचनपुर से भाग निकलते है। मार्ग मे जब वे दोनो एक वृक्ष के नीचे सोते हैं तो राजकुमारी रूपसेन के पास कथा, जादुई सोटा आदि जादुई वस्तुओ को देखकर उसे धूर्त जोगी समझ बैठती है और अपने नगर लौट आती है। इधर राजकुमार को भी बन्दर-बन्दरी के वार्तालाप से रूप-परिवर्तन की जडी-बूटी मिलती है जिससे वह बन्दर का रूप बनाकर कचनपुर वापिस लौट पडता है।

(६) राजकुमार बन्दर का रूप बनाकर मालिन की सहायता से राजकुमारी के महल मे पुन. जाता है। उसका वास्तविक परिचय प्राप्त कर राजकुमारी अपने किये पर पश्चाताप करती है, किन्तु जडी सु घाकर राजकुमार उसे बन्दरी बना देता है।

---

१ रूपसेन कनकावती रास (ह लि) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्र थाक २८८७७।

२ रूपसेन री कथा (ह. लि.) सरस्वती भण्डार, उदयपुर, ग्र थाक ६५० (४)।

(७) कनकभ्रम अपनी पुत्रि की दशा देखकर बडा दुखी होता है। इधर राजकुमार योगी का वेश बनाकर राजकुमारी का उपचार करने पहुचता है और उसी जडी से उसे पुन' राजकुमारी बनाकर पुरस्कार मे आधा राज्य सहित राजकुमारी को प्राप्त करता है। पूर्वभव के वृतात के साथ कथा समाप्त होती है। मुख्य कथा के साथ २ दृष्टान्त रूप मे सिह-शशक आदि की अन्तर्कथायें भी वर्णित है।

६४. सोहणी री बात :[१]

यह राजस्थान की प्रसिद्ध प्रेम-कथा है। यह कथा पजाव और गुजरात मे भी प्रचलित है। इसकी सात-आठ हस्तलिखित प्रतियां अनूप सस्कृत लाइब्रेरी, तथा अनूप जैन ग्रथालय, वीकानेर मे उपलब्ध है जिनकी कथायें विभिन्न प्रकार की है।

रचयिता :

इसके रचयिता का परिचय अज्ञात है।

रचना-काल :

इसका रचना-काल अनुमानत १९वी शती का प्रारम्भ प्रतीत होता है।

कथा-वस्तु :

जटमल नामक एक अरोड व्यापारी के सोहणी नाम की एक सुन्दर पत्नि होती है। व्यापार के लिए परदेश जाते समय, वह तपस्वी पिंगल से प्राप्त एक जादुई लकडी से अपनी पत्नि को मृत करके, उसे एक घडे मे बन्द कर देता है। दासी उस लकडी को देख लेती है और छल से एक टुकडा उसमे से काट लेती है। वह पीछे से उस जादुई लकडी के टुकडे से सोहणी को पुनर्जीवित कर देती है। सोहणी एक दिन नदी पर नहाते समय पीडार को देखती है। दोनो एक दूसरे पर मुग्ध होकर प्रेम-पास मे बध जाते है। मिट्टी के घडे के सहारे सोहणी नदी पार करके पीडार से मिलने नित्य जाती है। परदेश से उसके पति जटमल के लौटने पर जब उसे सोहनी के प्रेम का पता चलता है तव भी सोहनी अपने प्रेम-पथ मे अडिग रहती है। एक दिन सोहणी की सास नदी किनारे पर छल से पक्के घडे के स्थान पर कच्ची मिट्टी का घडा रख देती है। अत' कच्चे घडे के नष्ट हो जाने से सोहणी नदी मे बह जाती है और उसे एक मछली निगल जाती है। वह मछली पीडार के हाथ लगती है। जब मछली के पेट को चीरा जाता है तो उसमे से सोहणी निकल आती है। दोनो प्रेमी-प्रेमिका बडे आनन्दपूर्वक रहते है।

---

१. द्रटव्य, राजस्थानी प्रेम-कथाये (प्रेस कापी) श्री अगरचन्द नाहटा से उपलब्ध।

उपर्युक्त कथा सुखान्त है किन्तु इसका दूसरा रूपान्तर दुखान्त है। उसमे सोहणी का प्रेम महीयार बलोच से वतलाया गया है। वहाँ वह कच्चे घडे के नष्ट हो जाने से नदी मे डूब जाती है और उसको बचाने के प्रयत्न मे महीयार भी उसके साथ डूब जाता है।

६५ रावलदे सांखला री वार्ता

रचयिता :

वार्ता के अन्तिम अ श से इसका रचयिता कोई आनन्द कविराय नामक व्यक्ति प्रतीत होते है जिनका जीवन-परिचय अज्ञात है।[1]

रचना-काल

वार्ता की भाषा और रचना-शैली से इसका रचना-काल अनुमानत १९वी शती का प्रारम्भ प्रतीत होता है।

कथा-वस्तु :

रावलदे साखला ब्राह्मण के मुख से चन्दनपुर के राजा बीठल की पुत्री सुरगधा का रूप-वर्णन सुनकर मोहित हो जाता है। वह अपने कामदार बीका की सहायता से सुरगधा को प्राप्त करता है। मालिन भी इस कार्य मे सहायक होती है। सुरगधा की यह शर्त होती है कि वह उसी व्यक्ति के साथ विवाह करेगी जो उसे चौपड के खेल मे पराजित कर देगा। वह एक जोगी के चुगल मे होती है। जोगी उसे चार जादुई वस्तुये—'सीसफल, काकण, हार एव जेहड' देता है। राजा सुरगधा के जादुई रहस्य को जान लेता है और उसे चौपड के खेल मे हराकर विवाह कर लेता है। इस बात के समाचार जोगी को मिलते ही वह आता है, किन्तु राजा अदृश्य-शक्ति की सहायता से जोगी को मार देता है। कहानी सुखान्त है।

९६ चच राठौड़ री बात[2]

रचयिता

इसके रचयिता के बारे मे कुछ पता नही चलता।

---

१ रसिक बात मनरी रसिक करि आनन्द कविराय।
सामलता सुणता नरो, दी जै मोहि पसाय॥
अथ 'रावलदे साखला री वार्ता'।

२. 'चच राठौड री बात—एक विवेचन . डा० मनोहर शर्मा, राजस्थान भारती (लोक-साहित्य विशेषाक, दिसम्बर ६६ ई०) पृ. स. ५९।

रचना-काल :

इसकी भाषा और रचना-शैली को देखते हुए इसका रचनाकाल भी १६वी शताब्दी का प्रारम्भ प्रतीत होता है।

कथा-वस्तु :

कलूर का चच राठौड अपनी भाभी के ताना मारने पर मागा सुनार की रूपवती कन्या कली से विवाह करने पाटण पहुचता है। वह मागा सुनार के यहा कोयला ढोने की नौकरी कर लेता है। एक दिन मागा सुनार कली को घर मे छोड़कर जब अपने सुसराल जाता है तब चच कली को स्वर्ण-फूलो की माला देता है। सुसराल से वापिस लौटने पर मागा सुनार वह माला राजा को भेट करता है। राजा प्रसन्न होकर चच के साथ कली का विवाह करने की आज्ञा देता है। इधर चच भी अपनी प्रतिद्वन्दी को हराकर कली से विवाह कर लेता है। कली को लेकर चच अपने घर लौटता है। एक दिन कली की सर्प-दशन मे मृत्यु हो जाती है। चच को बडा दु.ख पहुँचता है। उसके दु ख को भुलाने के लिए कली की छोटी बहिन मली के साथ उसका विवाह कर दिया जाता है, किन्तु वह कली को नही भूल पाता। उधर कली को मरने के बाद भी चच के वियोग मे चैन नही पडता। वह नित्य चच को देखने आती है। एक दिन चच उसे पकड लेता है। इस पर कली धरती मे समा जाती है। कली के साथ चच और मली भी धरती में समा जाते है। इस भाँति यह प्रेम-कथा दुखान्त है।

प्रस्तुत प्रेम-कथा राजस्थानी वार्ता साहित्य का सरस उदाहरण है। इसमे वार्ताकार के शब्द द्रटव्य है। छोटे-छोटे वाक्यो के कथोपकथन सुगठित, सक्षिप्त एव यथार्थ है तथा अपनी नाटकीयता से पात्रो को सजीव रूप मे लाकर खडा कर देते है।

६७. आभल खींवजी री बात :[1]

यह प्रेमाख्यान राजस्थान और गुजराज मे प्रचलित है। इसका गुजराती रूपान्तर दुखान्त है, जबकि इसका राजस्थानी रूपान्तर सुखान्त है।

रचयिता :

इसके रचयिता का परिचय उपलब्ध नही है।

---

१. आभल खीवजी परम्परा (रसराज अ क सन् १९६०) पृ. स. ११० (प्रकाशक राजस्थानी शोध सस्थान, जोधपुर)।

रचना-काल :

प्रस्तुत बात का रचना-काल भी अनुमानत १९वी शती का प्रथम-चरण प्रतीत होता है ।

कथा-वस्तु

चोटियालेगढ के राजकुमार खीवजी भाभी के मुँह से उसकी बहिन का रूप-वर्णन सुनकर उससे विवाह करने के लिए बीसलपुर पहुँच जाता है । नायक-नायिका प्रथम बाग मे और बाद मे महल मे मिलते है और दोनो प्रगाढ-प्रेम-पाश मे बध जाते हैं । खीवजी चोटियाला लौट पडता है और उधर आभल को भी खीवजी का वियोग असह्य हो उठता है । वह घरवालो से जगन्नाथपुरी की यात्रा का बहाना करके खीवजी से मिलने चल देती है और चोटियाला ग्राम के समीप डेरा डालती है, जहाँ खीवजी उससे मिलता है । यह निश्चय किया जाता है आभल के जगन्नाथ-पुरी से यात्रा करके वापिस लौटने पर खीवजी उससे विवाह कर लेगे । किन्तु जब आभल अपने प्रियतम से मिलने की उत्सुकता लिए हुए यात्रा से लौटती है, तब वह खीवजी को युद्ध मे वीरगति को प्राप्त हुआ देखती है । इस भीषण दुखदायी दृश्य को देखकर आभल का हृदय फट पडता है । वह खीवजी का शव गोद मे लेकर सती हो जाती है । किन्तु वार्ताकार को इसका दुखान्त अच्छा प्रतीत नही होता, अत उसने शिव-पार्वती की अवतारणा करके तथा उनसे नायक-नायिका को पुनर्जीवित कराके कथा को सुखान्त बना दिया है ।

आभल खीवजी की उपर्युक्त बातो मे रोमास और करुणा का अद्भुत मिश्रण है । आभल के हृदय की वेदना को व्यक्त करने के लिए वार्ताकार ने जो मर्मस्पर्शी उक्तियाँ कही है, वे नायिका के हृदय की मार्मिक वेदना का साकार चित्र उपस्थित कर देती है ।[1]

९८. राजा सिद्धराज जयसिंघ और अप्सरा री बात[2]

रचयिता :

इसके रचयिता का परिचय अज्ञात है ।

---

१ परम्परा (रसराज अ क, सन् १९६०) छद सख्या ९८ से १०३, पृ स. ३४ (प्रकाशक—राजस्थानी शोध सस्थान, जोधपुर)

२ (क) राजा सिद्धराज जयसिंघ अर अप्सरा री बात (ह. लि.) सरस्वती भण्डार, उदयपुर, ग्रथाक ७०३ (९५) ।

(ख) सिद्धराज जैसिंघ दे री बात (ह. लि) रा प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रथाक ३०५ (२२) ।

रचना-काल :

सरस्वती भण्डार, उदयपुर मे उपलब्ध हस्तलिखित प्रति मे इसका लिपिकाल स० १८२३ दिया हुआ है, अत इसका रचना-काल अनुमानत १६वी शताब्दी का प्रथम-चरण प्रतीत होता है।

कथा-वस्तु :

इसकी कथा-वस्तु राजा सिद्धराज जयसिंध और अप्सरा के प्रेम से सम्बन्धित है। एक दिन राजा हिरण का पिछा करते हुए वन मे स्थित एक मन्दिर में पहुँचता है। जहाँ अप्सरा नाच करने आती है। राजा अप्सरा पर मोहित होकर उसके गले मे हार पहिनाता है। अप्सरा राजा को अपने साथ स्वर्ग मे ले जाती है और दोनो आनन्दोपभोग करते हैं।

६६. राजा सुसील री वारता[1]

यह राजस्थानी कामदारी लिपि मे लिखी गई एक प्रेम-कथा है।

रचयिता :

इसके रचयिता का परिचय अज्ञात है।

रचना-काल :

इसका रचना-काल भी अनुमानतः १६वी शताब्दी का प्रथम-चरण प्रतीत होता है।

कथा-वस्तु :

धर्मपुरी का राजा सुसील सिंहल की राजकुमारी सुमित्रा से विवाह के लिए जाता है। वहाँ सुमित्रा की सखी प्रधान-पुत्री राजा से स्वय विवाह करने के लिए सुमित्रा को छल से समुद्र मे गिरा देती है और सुमित्रा उसके वस्त्र पहिनकर राजा से विवाह कर लेती है। सुयोग से सुमित्रा एक काष्ठ-पट्टिका के सहारे समुद्र के किनारे लग जाती है और सतराजित राजा उसे धर्म-पुत्री बना लेता है। दैवयोग से राजा सुसील भी सतराजित के राज्य मे पहुँच जाता है और उसे वास्तविकता का पता चलता है। राजा सुसील और सुमित्रा का विवाह हो जाता है। सुमित्रा अपनी सखी के अपराध को भी क्षमा कर देती है। मुख्य कथा के साथ दो अतीत तथा वणिक् भाईयो की अन्तर्कथा भी वर्णित है।

---

१. राजा सुसील री वारता (ह. लि) सरस्वती भण्डार, उदयपुर, ग्रथाक ७०३ पृ. स. २२–३०।

१००. जेठवा ऊंजली[1]

राजस्थान मे जेठवा ऊजली की प्रेम-कथा बहुत प्रसिद्ध है। इसके सोरठे अपनी विरहजनित मार्मिक उक्तियो के लिए बेजोड है।[2]

रचयिता :

इसके रचयिता का परिचय अज्ञात है।

रचना-काल

रचना-काल अनुमानत १६वी शताब्दी का प्रथम-चरण प्रतीत होता है।

कथा-वस्तु

घूमली नगर का राजा मेह जेठवा एक दिन वर्षा-ऋतु मे साथियो के साथ शिकार खेलने जाता है। जगल मे भारी वर्षा मे भीग जाने के कारण वह चेतना-हीन हो जाता है। राजा को उसके साथी अमरा चारण के घर लाते है, जहाँ अमरा राजा को उष्णता पहुँचाने के लिए अग्नि के अभाव अपनी युवती कन्या को उसके साथ सुला देता है। प्रात राजा ऊजली को विवाह का वचन देकर अपनी राजधानी मे लौट जाता है। इधर ऊजली राजा की प्रतीक्षा करती रहती है, किन्तु राजा सामाजिक-बन्धनो के कारण अपने वचन से मुकर जाता है, किन्तु ऊजली फिर भी उसके विरह मे तडपती रहती है।

जेठवा ऊजली के सोरठे, ऊजली की मार्मिक विरह-वेदना को व्यजित करते हैं। इसकी कथा 'लाखा फुलाणी' की कथा के पूर्वार्द्ध से मिलती है। उसमे भी फूलजी का वर्षा मे भीग जाने के कारण चेतनाहीन हो जाने पर उन्हे उष्णता पहुँचाने के लिए मेहाचारण अपनी युवती कन्या को उनके साथ मे सुला देता है।

१०१. शामल भट्ट : पुष्पसेन पद्मावती री बात[3]

रचयिता .

इसके रचयिता शामल भट्ट हैं।

---

१. जेठवा ऊजली परम्परा का रसराज अक (सन् १९६०) पृ सं. ११८।

२ वही, पृ स ७० से ७३ तक।

३ (क) पुष्पसेन पद्मावती री वात (ह. लि.) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्र थाक २३७५ (१) पत्र-सख्या ६०।

(ख) पुष्पसेन पद्मावती री वात (ह लि.) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्र थाक ११४२।

रचना-काल

इसका रचना-काल १९वी शताब्दी का मध्य प्रतीत होता है। इसकी हस्तलिखित प्रति जो उपलब्ध हुई है, उसकी पुष्पिका मे इसका लिपिकाल स० १९०६ लिखा हुआ है।[1]

कथा वस्तु

(१) चम्पावती नगर के राजा चम्पक सेन के पुत्र पुष्पसेन का नगर सेठ की पुत्री सुलोचना को सरोवर पर देखकर मुग्ध होना और दोनो मे प्रेम हो जाना।

(२) उनका प्रेम-प्रकट होने पर पुष्पसेन का १२ वर्ष के लिए देश निकाले का दण्ड मिलना।

(३) वन के कष्टो को भोगकर तथा राक्षस के चुगल से बचकर पुष्पसेन का राजा कुन्ती भोज की नगरी मे पहुचना तथा वहा पागल हाथी को वश मे करके राजसभा मे सम्मान प्राप्त करना।

(४) कुन्ती भोज की पुत्री राजकुमारी पद्मावती का राजकुमार के रूप और शौर्य का वर्णन सुनकर मुग्ध हो जाना तथा राजकुमार के साथ माता-पिता की आज्ञा लिए बिना छिपकर गधर्व विवाह कर लेना।

(५) इस बात का राजा को पता लगने पर कुपित होना, किन्तु राजकुमार के बिना पद्मावती द्वारा प्राणोत्सर्ग की धमकी देने पर दोनो का विधिवत् विवाह कर देना।

(६) १२ वर्ष की अवधि समाप्त हो जाने पर पुष्पसेन का पद्मावती को लेकर अपने राज्य मे लौट आना तथा अपनी दोनो पत्नियो के साथ आनन्दपूर्वक सुख भोगना।

दोहा, चौपई छन्द मे लिखा गया यह एक विशुद्ध प्रेमाख्यान-काव्य है। काव्य-सौष्ठव की दृष्टि से यह एक साधारण कृति कही जा सकती है। पद्मावती और सुलोचना के बीच समस्या-विनोद प्रसग की सृष्टि करके कवि ने अपनी वाक्-पटुता का परिचय दिया है।

---

१. "श्रोता बगता सामले, कहै कविता कर जोड।
सामल भट्ट कहे, सहु बोल ज्यो, जै जै श्री रण छोड॥
इति श्री पुष्पसेन पद्मावती री वारता सपूर्ण। सवत् १९०६ वर्ष फागण मासे कृष्णपक्षे तिथि सातम ७ वार सोमवार॥"

१०२ मोजदीन महताब री बात[1]

रचयिता :

इसकी उपलब्ध हस्तलिखित प्रतियो मे रचयिता के विषय मे कुछ भी उल्लेख नही मिलता है । अत इसके रचयिता का कुछ भी पता नही चलता है ।

रचना-काल

अनुमानत इसका रचना-काल १६वी शताब्दी का मध्य प्रतीत होता है ।

कथा-वस्तु

ईरान के बादशाह खुदादीन का पुत्र शाहजादा मोमदीन जब बडा हुआ, तब एक दिन शिकार खेलने के लिए जाते समय बजीर रोशनखान की पुत्री मेहताव पर उसकी दृष्टि पडी । दोनो एक दूसरे पर मुग्ध होकर प्रेम-पाश मे बध गये । मोजदीन के विरह मे सतप्त मेहताब ने एक दिन अपनी सखी द्वारा उसे बुलवाया तो वह मेहताव की पाच सखियो के साथ स्त्री-वेश मे उससे मिलने गया और महताब के साथ रमण किया । प्रेम-मिलन का यह क्रम बहुत समय तक चलता रहा । एक दिन उनके प्रेम की चर्चा बादशाह तक पहुच गई । बादशाह ने रुष्ट होकर मोजदीन को राज्य के बाहर भेज दिया और मेहताव पर कडा पहरा लगा दिया । जब मोजदीन मेहताव से मिलने आया तब वह पकड लिया गया । राजाज्ञा के उल्लघन पर उसे फाँसी की सजा दी गई । जब मेहताब को इस घटना का पता चला तो सब सामाजिक बन्धनो को तोडकर वह बादशाह के पास पहुच गई और मोजदीन के स्थान पर स्वय फासी का दण्ड प्राप्त करने के लिए आग्रह करने लगी । अन्त मे उनका सच्चा प्रेम देखकर बादशाह ने दोनो को विवाह अनुमति देदी । मोजदीन ने मेहताव को अपनी तीन हजार बेगमो पर पटरानी बनाया और दोनो भोग-विलास मे रत रहने लगे ।

यह बात गद्य मे लिखी गई है और बीच-बीच मे दोहे मिलते हैं । इसकी भाषा राजस्थानी होते हुए भी कही कही खडी बोली का पुट मिलता है । लिपिकार

---

१ (क) मोजदीन मेहताव री बात (ह. लि) राजस्थानी शोध सस्थान, जोधपुर, ग्र थाक १६१, (इस प्रति मे कुल ६६ छद है) ।

(ख) मोजदीन मेताव री बात (ह लि) राजस्थानी शोध सस्थान, जोधपुर, ग्रथाक १११० ।

'इति श्री मोजदीन मेताब री वात सपुरण १६३२ रा मीती वैसाख सुद १५ । (इस प्रति मे छद सख्या ६७ है । बात वही है पर अन्य विवरण का विस्तार मिलता है) ।

की अज्ञानता के कारण इसकी भाषा भ्रष्ट हो गई है और मात्राओ की बहुत अशुद्धिया मिलती है ।

१०३ रतना हमीर री वारता[१]

'रतना हमीर री वारता' परक्रिया प्रेम से सम्बन्धित गद्य-पद्य मे लिखा एक सरस चम्पू काव्य है । इसकी दस से भी अधिक हस्तलिखित प्रतिया राजस्थान के प्रमुख ग्रथ-भण्डारो में मिलती है । विभिन्न लिपिकारो की कृपा से विभिन्न प्रतियो मे कही-कही दोहो मे घटा बढी मिलती है ।

रचयिता :

रतना हमीर की वारता के रचयिता जोधपुर नरेश मानसिंह माने जाते हैं जो सरस्वती के सेवक, कविता प्रेमी एव स्वय भी काव्य-रचना मे प्रवीण थे। डा० मोतीलाल मेनारिया ने महाराजा मानसिंह रचित २४ ग्रथो का उल्लेख किया है[२], जिसमे 'रतना हमीर री वारता' का उल्लेख नही मिलता । श्री अगरचन्द नाहटा ने इस वारता का असली रचयिता महाराजा मानसिंह के आश्रित भण्डारी उत्तमचन्द को माना है ।[3] महाराजा मानसिंह लिखित अन्य ग्रन्थो की भाषा-शैली से मेल नही खाती । यद्यपि अन्य उपलब्ध प्रतियो में कृतिकार का नाम उत्तमचन्द भण्डारी नही मिलता है (केवल नाहटा जी के पास उपलब्ध प्रति को छोडकर) बल्कि सवत् १८८७ वाली प्रति मे 'दसकत प्रभुदान लिखा मिलता है ।[४] फिर भी अन्य

---

१ (क) रतना हमीर की वारता (जोधपुर नरेश मानसिंहजी कृत) प्रकाशक—खेमराज श्रीकृष्णदास, श्री वङ्कटेश्वर प्रेस, बम्बई (स. १९६८)।

(ख) रतना हमीर री वारता : प्रकाशक—आसोपा पण्डित बलदेव आत्मज, पण्डित रामकरण, श्यामकरण, निजप्रताप प्रेस, म. १९९० ।

(ग) रतना हमीर री बात (ह लि) श्री जैनश्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर ।

(घ) रतना हमीर री वारता (ह. लि.) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्र थाक ४९१५ (इस प्रति मे केवल २०० छद हैं, बीच-बीच मे चित्रो के लिए स्थान रिक्त हैं ।

२. राजस्थानी भाषा और साहित्य, पृ. स २९२ ।

३. राजस्थान भारती (अ क ३, जुलाई १९५३) पृ स. ७८ (रतना हमीर री वारता के वास्तविक रचयिता—प्रकीर्णका) ।

४. ''इति श्री रतना हमीर री वारता सपूर्ण । सवत् १८८७ रा असाढ बद ११ बुद्धवार, दसकत प्रभुदास रा छै ।''
—(घ) प्रति की पुष्पिका से उद्धृत ।

किसी पुष्ट प्रमाव के अभाव मे नाहटा जी का कथन विश्वासनीय माना जा सकता है।

रचना-काल :

इसका रचना-काल स. १८८५ है।

कथा-वस्तु :

चन्द्रगढ के साहु हीरानद की रूपवती कन्या रतना का विवाह चित्रगढ के इन्द्रमाण के रोगी पुत्र लिषमीचन्द के साथ हो जाता है, किन्तु रतना उसके साथ एक रात्रि भी कठिनता से निकाल पाती है। एक दिन रूपा चितेरा की बेटी हीरा से सूरजगढ के राजा दलपति के पुत्र हमीर का चित्र देखकर अपना हृदय हार बैठती है। चित्रगढ के राव लखपत की कन्या चित्रलेखा को ब्याहने हमीर की बरात आने पर रतना शिव-मन्दिर मे हमीर से मिलती है और दोनो प्रगाढ-प्रेमालिंगन मे आबद्ध हो जाते हैं। चित्रलेखा को लेकर हमीर सूरजगढ लौट जाता है। इधर रतना उसके वियोग मे दु खी रहती है। अन्त मे हमीर का वियोग सहन नही कर पाने के कारण रतना सब सामाजिक बन्धनो को तोडकर पुरुष-वेश मे सूरजगढ पहुचती है और अपने प्रियतम हमीर से जा मिलती है। यथा—

"इण भांति रतना हमीर हू जाइ मिली, जाणे सरिता समुद्र हू आइ मिली।"

जे चेतन किण विध तजै, मन ज्या बसियौ मोह।
चिंबुक हूं जाइर चिपै, लखौ अचेतन लोह॥

१०४. उत्तम विजय . नेमीनाथ रस वेलि

रचयिता :

इसके रचयिता भी उत्तम विजय है जिनका परिचय 'नेमिश्वर स्नेह वेलि' के साथ दिया जा चुका है।

रचना-काल :

इसका रचना-काल स० १८६६ फागुण सुदी ७ हैं।

कथा-वस्तु :

इसकी कथा-वस्तु भी नेमीनाथ और राजमती के जीवन से सम्बन्धित है। कवि ने राजमती के [illegible]

१०५. नरबद चारण : रसालु कंवर री बात[1]

रचयिता :

प्रस्तुत कृति की पुष्पिका मे इसके रचयिता का नाम 'चारण नरबदो' दिया गया है,[2] जिससे प्रतीत होती है कि किसी नरबद नामक चारण ने प्रचलित लोक-कथा को लेकर तथा उसमें कुछ पद्य जोडकर कथा का वर्तमान रूप खडा किया है।

रचना-काल :

कृति की पुष्पिका से विदित होता है कि इसका रचना-काल स. १८९९ है।[3]

पर दु ख भंजन राजा विक्रमादित्य, भोज और रिसालु के चरित्र को लेकर अनेक लोक-कथायें रची गई है। राजा शालिवाहन का पुत्र रसालु भारतीय लोक-कथाओ का सर्वप्रिय नायक रहा है। राज रसालू की कहानी न केवल राजस्थानी मे ही, बल्कि गुजराती,[4] पजाबी आदि भाषाओ मे लिखी गई है। पजाब मे राजा रसालू के लोक-गीत बहुत प्रचलित है। राजस्थान मे यह आख्यान इतना प्रचलित रहा है इसके गद्य और पद्य मे १७वी शती से १९वी शती तक के अनेक रूपान्तर मिलते है। सबसे प्राचीन हस्तलिखित प्रति अनूप सस्कृत लाइब्रेरी मे मिलती है जिसका लिपिकाल सं० १६६९ है।[5] एक दूसरी हस्तलिखित प्रति 'राजा रसालू रा दूहा' सवत् १७१२ की है।[6] इन दोनो प्रतियो का आदि-अन्त समान मिलता है। इनमे

---

१ रसालु कंवर री बात (ह. लि) श्री श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर, पत्र स. २४।

२. दूहा—राजा रिसालू हदी बताडी कथियन सोज छै।
गावे चारण नरबदो, हस्ती पावे मोज छै।।

३. "इति श्री रसालू कवर री वात सम्पूर्ण। मिती ज्येठ सुद चौथ दितवार छै। सवत् १८९९ रा अजमेर मध्ये।

४. श्री रीसालू कमरनी वार्ता (ह. लि.) रा प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्र थांक ४९०५, कृति का अन्तिम अ श—
दूहा— माथो लागो बार सापस्यू, चषू विहूं हुआ सुचंग।
रीसालू सालि वाहन मिल्यो, दीधो गायो दडग।।
'इनि श्री रीसालू कुमरनी वार्ता सपूर्ण।। सवत् १८९० ना कार्तिक विद ८ बुद्धे।। लिखित मुनी गुलाल कुसल।।'

५ राजा रसालू रा दूहा (ह लि) अनूप सस्कृत लाइब्रेरी, बीकानेर, गुटका क्रमाक १४० (४)।

६ राजा रसालू रा दूहा (ह. लि) अनूप सस्कृत लाइब्रेरी, बीकानेर, गुटका क्रमाक ७८।

केवल ४१ दोहे हैं। इनके रचयिताओ के बारे मे कुछ नही कहा जा सकता। सम्भवत लोक-कण्ठ ही इसका गायक रहा हो।

गद्य-पद्य मे लिखित स० १८७५ से स० १८६२ के बीच लिखी गई सात हस्तलिखित प्रतियो के आधार पर रा. प्रा विद्या प्रतिष्ठान के शोध कार्यकर्ता श्री लक्ष्मीनारायण गोस्वामी ने राजस्थानी प्रेमाख्यान नामक ग्रथ मे इस वार्ता को सम्पादित किया है।[1] श्री रेवरेण्ड चार्ल्स स्विन्नरटन द्वारा सम्पादित इस वार्ता का एक अग्रेजी सस्करण सन् १८८४ मे प्रकाशित हुआ[2] जिसमे स्विन्नरटन महोदय ने यह गीतात्मक कथा 'शरफ' नामक लोक-गायक से सुनी थी। इसमे कुल बारह अध्याय हैं। श्री लक्ष्मीनारायण गोस्वामी द्वारा सम्पादित वार्ता मे तथा इसकी कथा मे कही तारतम्य एकसा दृष्टिगोचर होता है तो कही अधिक अन्तर प्रतीत होता है। अग्रेजी सस्करण मे उल्लिखित स्यालकोट के राजा सालिवाहन की रानी लूना व पूरन की कथा, देश निकाले के दण्ड से रसालू का मुसलमान-धम अपनाने का कथन, राजा रसालू और सरिकप के द्वन्द्व की घटना, अन्य राजस्थानी प्रतियो मे नही मिलती। अग्रेजी सस्करण मे राजा रिसालु की रानी का नाम कोकल लिखा गया है जबकि अन्य प्रतियो मे उक्त नाम के स्थान पर अन्य नाम मिलते है।

कथा-वस्तु

श्रीपुर नगर के राजा शालिवाहन को बाबा गोरखनाथ के वरदान से रसालू का जन्म होता है। बुरे नक्षत्रो मे जन्म लेने के कारण वह १२ वर्ष तक तहखाने मे बन्द रक्खा जाता है। इस बीच उसकी तलवार के माध्यम से राजा भोज की लडकी का उसके साथ विवाह सम्पन्न कर दिया जाता है। १२ वर्ष की अवधि समाप्त हो जाने पर जब वह तहखाने से बाहर निकाला जाता है तो राज पुरोहित के पेट मे कटारी खुभा देने से उसे देश निकाले का दण्ड दिया जाता है। रसालू 'अगरजी' की नगरी मे पहुँचकर राजा को 'पहेलियो' मे हराकर उसकी छह माह की कन्या से विवाह करता है। वहाँ से वह धारा नगरी पहुँचता है और एक राक्षस को मारकर राज्य करने लगता है। इधर राजकुमारी युवती हो जाती है

---

१ श्री लक्ष्मीनारायण गोस्वामी · राजस्थानी प्रेमाख्यान, (प्रकाशक—रा प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर)।

२. The advantres of the Panjab Hero Raja Rasalu and other Folktales of Panjab. By—Rev C. Swymerton (Publisher W. New man and Co. Ltd. 4 Dal Housie Square 1884.)

और उसका प्रेम बादशाह हठमल से हो जाता है। रसालू को जब इस बात का पता चलता है, वह हठमल को द्वन्द्व-युद्ध में मार देता है। इस पर रानी अपने प्रेमी हठमल के साथ सती हो जाती है।

राजा रसालू वहाँ से अपने सुसराल जाता है और अपनी दूसरी पत्नि राजा मान की लडकी को एक सुनार से प्रेम करते हुए पाता है। इस पर रसालू उसे सुनार को सौंप देता है और वहाँ से अपनी एक पत्नि राजा भोज की कन्या साँवलदे के पास पहुँचता है। साँवलदे पतिव्रता होती है। रसालू के निश्चित अवधि मे उसके पास नही पहुँचने पर जब वह अग्नि-प्रवेश को तैयारी कर रही होती है तब रसालू ठीक अवसर पर पहुँचकर उसे बचा लेता है। तत्पश्चात् दोनो श्रीपुर नगर मे आकर आनन्दपूर्वक रहते है।

लोक-कथा-तत्वो के अध्ययन की दृष्टि से इस बात का बडा महत्व है।

१०६. राजा भोज भानुमति री बात

इसकी एक हस्तलिखित प्रति सरस्वती भण्डार[1] मे तथा एक अन्य प्रति श्री स्वरूपलाल ग्रंथालय[2], उदयपुर मे उपलब्ध है।

रचयिता

इसके रचयिता का परिचय अज्ञात है।

रचना-काल :

राजा भोज भानुमती री बात का रचना-काल १६वी शताब्दी का प्रारम्भ प्रतीत होता है।

कथा-वस्तु[3] :

इसकी कथा-वस्तु राजा भोज और रानी भानुमती के प्रेम से सम्बन्धित है। इसमे शृंगार-रस के दोनो पक्ष, सयोग-वियोग का बडा सरस और सजीव चित्रण किया गया है। स्थान २ पर सुभाषितो का सुन्दर-प्रयोग कथा मे चारुता ला

---

१ राजा भोज और भानुमती री बात (ह लि) सरस्वती भण्डार, उदयपुर, ग्रंथाक ७०३ (६१) लिपिकाल स १८२३।

२ भोजराजा भानुमती रे बाद री बात (ह लि) श्री स्वरूपलाल ग्रथालय, उदयपुर, ग्रंथाक ६१ (४२)।

३ राजा भोज भानुमती री बात (ह लि.) श्री श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर। (प्रति के कुछ पत्र उपलब्ध है, शेष नष्ट हो चुके है)।

देता है। राजस्थानी की 'परिहाँ' काव्य-शैली का यह एक सुन्दर उदाहरण है। यथा—

भाणमति का प्रेम निमख नही बीसरे।
परिहाँ, भोजकहे किण भाँति जमारो नीसरै।।
अहैलो जाय जनम विहुणी नारियाँ।
वा सुरत सुपियार कै ऊपर वारियाँ।।
अरध सरीरी रग रमीजै रतडी।
परिहाँ, व अवरी कहि न जाय सलूणी वतडी।।
गरजि रह्यो घनघोर के चमकै दामणी।
कामातुर मैंमत पियारी कामणी।।
बौले दादुर मोर किगारै पपीहीया।
परिहा भाणमती सुपयार सदेसा ना दीया।।
दूहा—जीवडो पडै जजाल, राति दिवस लहीरा भरै।
फूटे सरवरपालि, पाणी चलू न पाइयै।।

१०७ फूलमती री वार्ता[1]

यह लोक-कथा पर आधारित गद्य मे लिखी हुई प्रेम-कथा है।

रचयिता :

इसके रचयिता का परिचय अज्ञात है।

रचना-काल :

इसका रचना-काल १६वी शताब्दी माना जा सकता है।

कथा-वस्तु :

एक राजकुमार अपने दीवान उत्तमीचन्द के साथ शिकार खेलने जाता है। वहाँ जगल मे एक वावडी की भीत पर फूलमती का चित्र देखकर मोहित हो जाता है। राजकुमार उत्तमीचन्द के साथ फूलमती को प्राप्त करने के लिए उसके नगर मे पहुँचता है। राजकुमारी पुरुष-द्वेषणी होती है। दीवान उत्तमीचन्द उसके पुरुष-द्वेषणी होने का कारण ज्ञात करता है, तथा राजकुमारी के पूर्वभव का 'सुवा सुवती' का चित्र बनाकर राजकुमार के प्रति राजकुमारी के हृदय मे प्रेम का उद्रेक करता है। फलस्वरूप दोनो का विवाह हो जाता है।

---

२ फूलमती री वारता (ह लि.) राजस्थानी शोध सस्थान, जोधपुर।

राजकुमारी को लेकर राजकुमार जब अपने नगर के लिए लौटता है, तब मार्ग मे विश्राम करते समय उत्तमीचन्द चकवा-चकवी के वार्तालाप से राजकुमार पर आने वाले सकटो के विषय मे सुनता है। ये तीन सकट-हार का साप बनकर डसना, वट-वृक्ष से दबकर या शयन-कक्ष मे विषैले कीट से मृत्यु होना है। उत्तमीचन्द अपने प्राण सकट मे डालकर राजकुमार को प्रथम दो सकटो से बचा लेता है। तीसरे सकट से बचाने के लिए उत्तमीचन्द द्वारा राजकुमारी के शयन-कक्ष मे छिपकर उसके कपोल पर पडी विष की बूद को पोंछते समय राजकुमार उसे देख लेता है और उत्तमीचन्द के चरित्र पर सन्देह करने पर उसे सब रहस्य प्रकट करना पडता है, जिससे वह पत्थर का हो जाता है। एक दिन राजकुमार के मस्तक से रक्त की बूद उस पर गिरने से उत्तमीचन्द पुनर्जीवित हो जाता है। राजकुमार और फूलमती बडे आनन्दपूर्वक रहते हैं।

लोक-कथा तत्वो के अध्ययन की दृष्टि से इसका बडा महत्वपूर्ण स्थान है। इस लोक-कथा मे दो भाइयो वाली तथा तीन सकटो वाली विश्व-प्रसिद्ध कथानक रूढियो के माध्यम से कथानक का विकास हुआ है।

१० . बगड़ावतां री बात[1]

रचयिता

इसके रचयिता का परिचय अज्ञात है।

रचना-काल :

बगडावता री बात नामक प्रस्तुत हस्तलिखित प्रति का रचना-काल १९वी शताब्दी है।

कथा-वस्तु

इसमे बगडावतो की उत्पत्ति तथा भोज और ईडड के सोलकी राजा की पुत्री जेलू या जेमती की प्रेम-कथा वर्णित है। इसके उतरार्द्ध मे लोक-देवता देवनारायण का अलौकिक जन्म और चमत्कारपूर्ण घटनाओ का वर्णन है।

भिन्न-भिन्न व्यक्तियो द्वारा एक ही कथा को लेकर लिखने पर उसमे कथानक रूढियो के हेर-फेर के कारण मूल-कथानक से कुछ घटा बढी हो जाती है। यह कृति उक्त प्रवृति का अपवाद नही है। अनूप सस्कृत लाइब्रेरी, बीकानेर[2]

---

१ बगडावता री बात (ह लि) राजस्थानी शोध सस्थान, जोधपुर।

२. बगडावत देवजी री बात (ह. लि) अनूप सस्कृत लाइब्रेरी, बीकानेर, ग्रथाक १० (५)।

की प्रति से इसके कथानक मे कुछ भिन्नता मिलती है। डा० पुरुषोत्तम मेनारिया द्वारा सम्पादित—'बात देवजी बगडावता री'[1] से भी इसका कथानक कुछ भिन्न हो गया है।

इस कथानक को लेकर 'बगडावत' नामक लोक महाकाव्य का भी सृजन हुआ हे। महामहोपाध्याय श्री हरप्रसाद शास्त्री के अनुसार १२०० ई के आस-पास छोछू नामक भाट ने इसे लिखा था जिसकी श्लोक-सख्या १५०० बताई जाती है। परम्परा से मौखिक रूप से गाया जाने के कारण इसमे क्षेपक जुडते गये हैं। छोछू कवि की समता महाकवि चन्द से की जाती हे।

'ओछू ने छोछू मिल्यो, पृथ्वीराज ने चन्द।

राजस्थानी-लोक-मानस मे बगडावता के लिए इतना स्थान है कि इनके सम्बन्ध मे निम्नलिखित कहावत प्रचलित होगई है। यथा—

माया माणी बगडावता, कै लाखा फुलाणी।
रही सही सो माण गौ, हरगोविन्द नाटानी॥

'बगडावत' इतना विशालकाय लोक-महाकाव्य है कि राजस्थानी मान्यता के अनुसार इसे प्रति रात्रि तीन प्रहर गाया जाने पर छह माह मे समाप्त होता है। गूजरो के भोपा इसे गाते है। यह एक विकसनशील जातीय लोक-महाकाव्य है जिसका ऐतिहासिक और समाज-शास्त्रीय अध्ययन की दृष्टि से महत्वपूर्ण स्थान है। इतना महत्वपूर्ण लोक-महाकाव्य लिपिबद्ध होकर प्रकाशित नही हो पाया है, अत इस दिशा मे सजग प्रयत्न की आवश्यकता है।

१०६ लालजी हीरजी री बात[2]

'लालजी हीरजी की बात', गद्य मे लिखी गई एक प्रेम-कथा है। राजस्थानी जन-जीवन मे यह लोक-कथा मौखिक परम्परा से प्रचलित है। इसकी एक हस्त-लिखित प्रति राजस्थानी शोध सस्थान, जोधपुर मे उपलब्ध है।

रचयिता

इसके रचयिता का परिचय अज्ञात है।

रचना-काल

इसका रचना-काल १६वी शताब्दी प्रतीत होता है।

---

१. राजस्थानी साहित्य-सग्रह, भाग २। प्रकाशक—रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।

२. लालजी हीरजी री बात (ह. लि) राजस्थानी शोध सस्थान, जोधपुर।

कथा-वस्तु

लालजी हीरजी एक पाठशाला मे पढते हैं और वहाँ दोनो प्रेम-पाश मे बध जाते हैं। हीरजी की सगाई पहले से ही अन्य व्यक्ति से हो जाती है। जव उसकी वारात आती है तव हीरजी पुरुष-वेश वनाकर लालजी के साथ भाग जाती है। एक नगर मे पहुँचने पर लालजी के रूप पर मोहित होकर एक तम्वोलिन उन्हे मेढा वनाकर रख लेती हे। हीरजी वहाँ के राजा के उमराव होकर, तम्वोलिन के चुगल से लालजी को मुक्त कर लेती है। राजा भी हीरजी को सुन्दर राजकुमार समझकर अपनी पुत्री व्याह देता हे। वहाँ से लालजी अपनी दोनो पत्नियो को लेकर अपने देश के लिए लौटते हैं। मार्ग मे नदी मे स्नान करते समय एक डाकू लालजी को मार देता है, किन्तु शकर-पार्वती की कृपा से पुनर्जीवित हो जाते है। इसके पश्चात् एक दिन लालजी के रूप पर मोहित होकर एक अप्सरा उनको सोते हुए ही ले जाती है। इधर खोये हुए लालजी का पता लगाने के लिए हीरजी सोने का टका देकर नित्य नई कहानी सुनती है और एक दिन उसे लालजी का पता चल जाता है। हीरजी को एक वट-वृक्ष के नीचे रामचन्द्री की गोद मे वैठे हुए लालजी उसे मिलते हैं जिन्हे वह अपने नृत्य से रामचन्द्रजी को प्रसन्न कर माग लेती है। इसके पश्चात् लालजी हीरजी और राजकुमारी के साथ वडे आनन्दपूर्वक रहते हैं।

लोक-कथा-तत्वो के अध्ययन की दृष्टि से यह लोक-कथा अपना एक विशेष महत्व रखती है।

११०. पद्म तेला बड़ा रुक्मिणी मंगल[1]

रचयिता ·

'बडा रुक्मिणी मगल' के रचयिता का नाम पद्मा तेली प्रचलित है, किन्तु यह जाति से तेली न होकर तेला गौत्रीय माहेश्वरी जाति के वैश्य थे।

रचना-काल :

इसका रचना-काल १९वी शताब्दी का मध्य प्रतीत होना है।

कथा-वस्तु :

'बडा रुक्मिणी मगल' मे कृष्ण और रुक्मिणी की प्रणय-कथा वर्णित है। इस कथा का मूलाधार भागवत पुराण है।

---

१. बडा रुक्मिणी मगल, प्रकाशक—श्री विङ्कटेश्वर प्रेस, बम्बई (स० १९६१)।

'बड़ा रुक्मिणी मगल' काव्य मे राग मारु, सोरठ आदि रागो तथा दोहा, चन्द्रायणा, छद का प्रयोग हुआ है। रुक्मिणी की विरह-व्यजना मे नाथ-सम्प्रदाय का प्रभाव लक्षित होता है। यथा—

चीर फारू कथा ओढू, करू जोगन भेसा।
सेल सिगी भस्मि मुद्रा, छुटै राखू केसा ॥
प्रेम-अमृत शीतल धारा, यौ हिये उपदेस।
कमल-नैनी विरह का, कहियौ एक सन्देश ॥
नैनन की पाती करु, असुवन की छिरकाव।
स्याम-स्नेही आ वियौ, दे पलको पर पाव ॥

काव्य-सौष्ठव की दृष्टि से यह एक प्रौढ कृति कही जा सकती है।

१११ बात जसमा ओडण

रचयिता .

यह राजस्थान और गुजरात मे प्रचलित एक प्रसिद्ध लोक-कथा है। इसके रचयिता के बारे मे कुछ पता नही चलता।

रचना-काल

इसका रचना-काल १९वी शताब्दी प्रतीत होता है।

गुजराती मे रचित जसमा ओडण को रासडो पण्डित जेष्ठाराम से उपलब्ध हुआ था। राजस्थान मे यह कथा 'जसमा रतनपाल' के नाम से प्रसिद्ध है। इस कथानक पर लोकगीत भी प्रचलित है जो सारग राग मे गाया जाता है। सगीत, नाटक, अकादमी, राजस्थान द्वारा इस लोकगीत को टेप मे स्वर-बद्ध किया जा चुका है। राजस्थान मे प्रचलित कथा गुजराती-कथा के समान ही है, केवल इतना अन्तर अवश्य है कि राजस्थानी-कथा मे सिद्धराज जयसिह के स्थान पर 'रतनपाल' नाम मिलता है। गुजरात मे यह कहानी इतनी प्रचलित है कि फार्वस ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'रास माला' मे 'जस्मा ओडण री वात' शीर्षक से इस कथा को उधृत किया है।[1]

कथा-वस्तु :

सिद्धराज जयसिह ने मालवा के एक नगर-निवासी से जस्मा ओडण के रूप का वर्णन सुनकर उसे बुलाने के बहाने के लिए पट्टण मे सहस्त्र-लिंग सरोवर

---

१ अलेंकजेण्डर किन् लॉक फार्वस रचित 'रास माला' (मंगल प्रकाशन, जयपुर) पृ स २२४।

खुदवाने का कार्य प्रारम्भ कराया। अन्य ओडो के साथ जस्मा भी बुलाई गई। राजा उसके अनिंद्य सौन्दर्य पर मुग्ध हो गया और उसे प्राप्त करने के लिए अनेक प्रयत्न किये, किन्तु असफल रहा। राजा की बुरी कुत्सित इच्छा से तग आकर जस्मा ने अपना प्राणोत्सर्ग कर दिया तथा राजा को तालाब मे कभी भी पानी नही ठहरने का शाप दिया। सहस्त्रलिंग तालाव के लिए पट्टण मे जो जमीन खोदी गई थी, वह अब तक बताई जाती है।

११२. ससी पनां री बात[1]

रचयिता :

इसके रचयिता का भी कुछ पता नही चलता।

रचना-काल

इसना रचना-काल १६वी शताब्दी प्रतीत होता है।

'ससी पना री वात' राजस्थान मे वहुत लोकप्रिय है। इसकी लोकप्रियता इस बात से भी स्पष्ट होती है कि राजस्थानी लोक गीतो मे 'पना मारु' व्यक्ति-वाचक से जातिवाचक शब्द बन गया है और नायक के अर्थ मे ग्रहण किया जाता है। इसकी अनेक हस्तलिखित प्रतिया जोधपुर, बीकानेर के शोध-भण्डारो मे उपलब्ध है। इसका एक रूप 'ससी पूनो' के नाम से राजस्थानी प्रेम-कथाओ मे श्री मोहनलाल पुरोहित ने सकलित किया है जो ठेठ राजस्थानी भाषा का पुराना रूप लिये हुए है[2], इसमे, कथा के पात्रो के नाम तथा स्थानो के नाम राजस्थानी शोध सस्थान, जोधपुर में उपलब्ध प्रति से भिन्न है। इस कहानी का प्रचार सिंध और पजाब मे भी वहुत है।

कथा-वस्तु :

इसमे भयीदेश के बादशाह की लड़की ससी तथा खम्भात के बादशाह का पुत्र पना की प्रेम-कथा वर्णित है।

ससी के मूल नक्षत्र मे जन्म लेने से काजी के निर्देशानुसार अशुभ की आशका से उसे नदी मे बहा दिया जाता है जिसका एक धोबी पालन-पोषण कर बडी करता है। खम्भात के व्यापारियो के साथ पना आता है और ससी के बाग मे ठहरता है। वहा दोनो एक दूसरे के रूप पर मोहित होकर प्रेम-पाश में बध जाते

---

१. ससीपना पातसाहजादा री बात (ह. लि.) राजस्थानी शोध सस्थान, जोधपुर।
२. राजस्थानी प्रेम-कथाए (सा. स. रिसर्च इस्टीट्यूट, बीकानेर) सम्पादक—श्री मोहनलाल पुरोहित।

है। पनां ससी से विवाह् करके वही रह् जाता है। जब बादशाह् को पता चलता है तो वह् पना को लाने के लिए अपने दोनो पुत्र होती मोती को भेजता है। होती मोती पना को तेज शराब पिलाकर उसे बेहोशी मे उठाकर ले जाते हैं। इधर ससी को ज्ञात होने पर वह योगरण होकर पना को ढूढने निकल पडती है और अन्त मे निराश होकर प्राणोत्सर्ग करके धरती मे समा जाती है। वहा शीशे की एक मस्जिद बन जाती है। उधर पना की चेतना लौटने पर वह भी ससी को ढूढता हुआ उसकी मस्जिद के समीप पहुच जाता है और अपने प्राणोत्सर्ग कर देता है। ससी मस्जिद से बाहे निकाल पना को अपने आलिगन मे ले लेती है। यथा—

तैसी की हो सजना, ते ही लाया साव।
आउ ससी कहाकी, आहो पना आव ॥४६॥

यह एक दुखान्त कहानी है। बीच २ मे दोहो, सोरठो मे दर्द भरे प्रेम की मार्मिक-व्यजना हुई है। जिस धूलि पर प्रियतम के चरण चिन्ह अकित हो, वह धूलि प्रियतमा को कितनी प्यारी लगती है? ससी कहती है—

पनां चलता मर गया, आगणी भीव डियाँ।
ते मे सीस चढाईया, भरी भरी मुठ डियाँ॥

११३ गीदोली गणगौर री बात[1]

राजस्थान मे यह वार्ता बहुत प्रचलित है। 'गणगोर' के अवसर पर स्त्रिया गीदोली के गीत गाती हैं।

रचयिता :

इसके रचयिता का परिचय अज्ञात है।

रचना-काल

रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर मे उपलब्ध हस्तलिखित प्रति मे इसका लिपिकाल स १८५६ दिया हुआ है। अत इसका रचनाकाल भी १९वी शताब्दी का पूर्वार्द्ध माना जा सकता है।

---

१. (क) गीदोली गणगोर री वात (ह. लि.) राजस्थानी शोध संस्थान, जोधपुर, ग्रंथाक ३२६१, पृ. सं. ६६।
(ख) गिदोली री वारता (ह. लि) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रंथाक ५४३८ (४) लि. का. स. १८५६।

कथा-वस्तु :

इसकी कथा-वस्तु बादशाह की लडकी गीदोली और राजपूत वीर जगमाल के प्रेम से सम्बन्धित है। अहमदाबाद के बादशाह की शाहजादी गीदोली को जगमालजी गणगौर के मेले मे से अपहरण करके ले आये थे।

इसके गद्य का उदाहरण प्रस्तुत किया जाता है—

"गिदोली ने सीपुवासत की घणी मानोती की। बीती का गीदोली गाईज छै। समत् १३२५ का चेत सुद ४ री दीन लाया। वात दुरासु कही छैइती गीदोली री वारता सपुरण।"

ऐतिहासिक अध्ययन की दृष्टि से इस वार्ता का महत्वपूर्ण स्थान है।

११४ निहालदे सुलतान के पवाड़े[1]

'बगडावता' के समान ही 'निहालदे सुलतान' राजस्थानी का प्रसिद्ध प्रेमाख्यान लोक-महाकाव्य है। अब तक यह मौखिक परम्परा से ही गाया जाता रहा है। इसको लिपिबद्ध करने का महत्वपूर्ण कार्य डा. कन्हैयालाल सहल ने बडे परिश्रम से किया है तथा 'मरुभारती' के अंको मे प्रकाशित हुआ है। सहलजी ने इसे जयदयाल नाथ से सुनकर लिपिबद्ध किया था। बिडला सेन्ट्रल लाइब्रेरी पिलानी मे निहालदे सुलतान के पावडे की हस्तलिखित प्रति उपलब्ध है।

रचयिता

यह एक मौखिक परम्परा से प्रचलित विकसन शील लोक-महाकाव्य है, अतः इसका कोई निश्चित रचयिता नही है।

रचना-काल :

रचना-काल के विषय मे भी कुछ निश्चित रूप से नही कहा जा सकता। उपलब्ध प्रति की भाषा को देखते हुए इसका रचना-काल १९वी शताब्दी प्रतीत होता है।

कथा-वस्तु :

कीचलकोट के राजा मैनपाल की रानी कर्णावती से बाबा गोरखनाथ की कृपा से सुलतान नामक राजकुमार का जन्म होता है। बचपन से ही नटखट होने से ब्राह्मण की कन्या का कलश फोड देने के कारण उसे १२ वर्ष तक के लिए देश

---

१. मरुभारती (अप्रेल १९५८) सम्पादक—डा० कन्हैयालाल सहल।

निकाले का दण्ड दिया जाता है। सुलतान के ईडरकोट पहुचने पर वहा राजा कमधज उसे अपना धर्मपुत्र वना लेता है। एक दिन राजकुमार फूलकुँवर एव सुलतान शिकार खेलते हुए मृग के पीछे लगकर केलागढ के वाग मे पहुच जाते हैं। फूलकुँवर का घोडा वाग मे दिवार फादकर नही पहुच पाने के कारण वह तो लौट पडता है किन्तु सुलतान बाग मे पहुचकर राजकुमारी निहालदे को देखता है। दोनो का परिचय होने पर एक दूसरे पर मुग्ध होकर परस्पर प्रेम-पाश मे वध जाते हैं। अन्त मे स्वयवर मे मत्स्य-वेध कर सुलतान निहालदे को प्राप्त कर लेता है।

इस कथा मे सुलतान का दानव से युद्ध तथा अन्य अनेक चमत्कारपूर्ण घटनायें तथा अन्तर्कथायें वर्णित हैं। लोक-सस्कृति एव लोक-कथा-तत्वो के अध्ययन की दृष्टि से इस काव्य का विशिष्ट स्थान है।

११५. धांधलजी और अप्सरा री बात

रचयिता :

इसके रचयिता का परिचय अज्ञात है।

रचना-काल :

इसका रचनाकाल अनुमानतः १९वी शताब्दी माना जा सकता है।

कथा-वस्तु :

प्रस्तुत वात की कथा-वस्तु धाधलजी और अप्सरा के प्रणय-सम्वन्ध के फलस्वरूप राजस्थान के लोक-देवता पाबूजी के अलौकिक जन्म से सम्वन्धित है।

पाटण के तालाव पर धाधलजी स्नान करती हुई एक अप्सरा को देखते हैं और उसे पकड लेते हैं। धाधलजी अप्सरा के सम्मुख अपनी पत्नी वनने का प्रस्ताव रखते हैं किन्तु अप्सरा धाधलजी के प्रस्ताव को इस शर्त पर स्वीकार करती है कि यदि वह उनका गुप्त-भेद जानना चाहेंगे तव वह उन्हे छोडकर चले जायेगी। कुछ वर्ष वीत जाने पर एक दिन धाधलजी उत्सुकतावश छिपकर अप्सरा को सिंहनी के रूप मे पाबूजी को दूध पिलाते हुए देख लेते हैं। अतः शर्त भग होने पर वह धाधल जी को छोडकर आकाश मे उड जाती है।

यह राजस्थानी की एक प्रसिद्ध लोक-कथा है। इसमे हस कुमारी' (Swan Maiden) नामक प्रसिद्ध अभिप्राय का प्रयोग हुआ है। इस दृष्टि से यह पुरुरवा और उर्वशी की कथा से मिलती है। ऋग्वेद की पुरुरवा और उर्वशी की कथा मे भी इस अभिप्राय का प्रयोग हुआ है। अतः लोक-कथा तत्व की दृष्टि से विचार करने पर इस लोक-कथा का और भी महत्व वढ जाता है। डा० कन्हैयालाल सहल ने

हस कुमारी अभिप्राय की व्याख्या करते हुए इसका विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत किया है।[1]

उपर्युक्त वर्णित प्रेमाख्यान ग्रंथो के अतिरिक्त निम्नलिखित प्रेमाख्यानो का भी उल्लेख मिलता है, किन्तु इनकी हस्तलिखित प्रतियाँ या प्रकाशित ग्रंथ अप्राप्य होने से इनका सक्षिप्त परिचय नही दिया जा सका है :—

क्र. सं.	नाम ग्रन्थ	रचयिता	रचना-काल
१.	नलदवदती रास	ऋषिवर्द्धन सूरि	१५१२
२.	सुमित्रकुमार रास	धर्मसमुद्र गणि	१५६७
३.	सुदर्शन-रास	,,	—
४.	शकुन्तला रास	,,	—
५.	लीलावती	कक्कसूरि	१५६६
६.	चन्दन मलियागिरी चौपई	हरि विलास के शिष्य द्वारा	१५६६
७.	मृगावती चौपई	विनयभद्र	१६०२
८.	चित्रसेन पद्मावती रास	,,	१६०४
९.	रोहिणेय रास	,,	१६०५
१०.	कर्पूर मजरी	मतीसार	१६०५
११.	नलदमयन्ती रास	विनयभद्र	१६१४
१२.	पद्मावती पद्मश्री रास	मालदेव	१६१२–१४
१३.	मृगाक पद्मावती रास	,,	,,
१४.	कर्पूर-मजरी रास	कनकसुन्दर	१६३३
१५.	रूपसुन्दर रास	नयसुन्दर	१६४१
१६.	कनकावती	हेमश्री	१६४१
१७	मृगावती आख्यान	सकलचन्द्र उपाध्याय	१६४३–१६६०
१८.	नलदमयती प्रबध	उपाध्याय गुण विजय	१६६५
१९.	तरगवती	नेमीचन्द्र	१७००
२०.	रूपसुन्दर री कथा	माधवदास	१७०७

* * *

१. लोक-कथाओ का एक मूल अभिप्राय: हसकुमारी, राजस्थान भारती (अंक ३–४, जून १९५९)।

राजस्थानी के प्रेमाख्यानों का वर्गीकरण
(१) भाषा-रचनागत
(२) रूप-भेद के आधार पर
(३) कथा-प्रकृति के आधार पर
(४) प्रेम-व्यजना की दृष्टि से
(५) रचना उद्देश्य की दृष्टि से
(क) गद्य (ख) पद्य (ग) चम्पू
(क) चरित्र काव्य (ख) लोक-महाकाव्य
(क) स्वच्छद-प्रेम-सबधी (ख) दाम्पत्य प्रेम सबधी
अभिव्यक्ति के माध्यम की दृष्टि से
१. आयोगात्मक २. सयोगात्मक ३ परपुरुष से प्रेम अथवा परकीया प्रेम सबधी ४. गणिका प्रेम सबधि
१. दूहा २. चौपई ३. रास ४. फागु ५ पवाडउ ६ वेलि
(क) पौराणिक (ख) ऐतिहासिक (ग) लोक-कथात्मक (घ) काल्पनिक
(क) काम शिक्षा-गर्भित (ख) सामान्य (ग) साम्प्रदाय अथवा धार्मिक
१. जैन पुराणो पर आधारित
२. जैनेतर पुराणो पर आधारित
१. जैनेतर-प्रेमाख्यान
२. जैन-प्रेमाख्यान
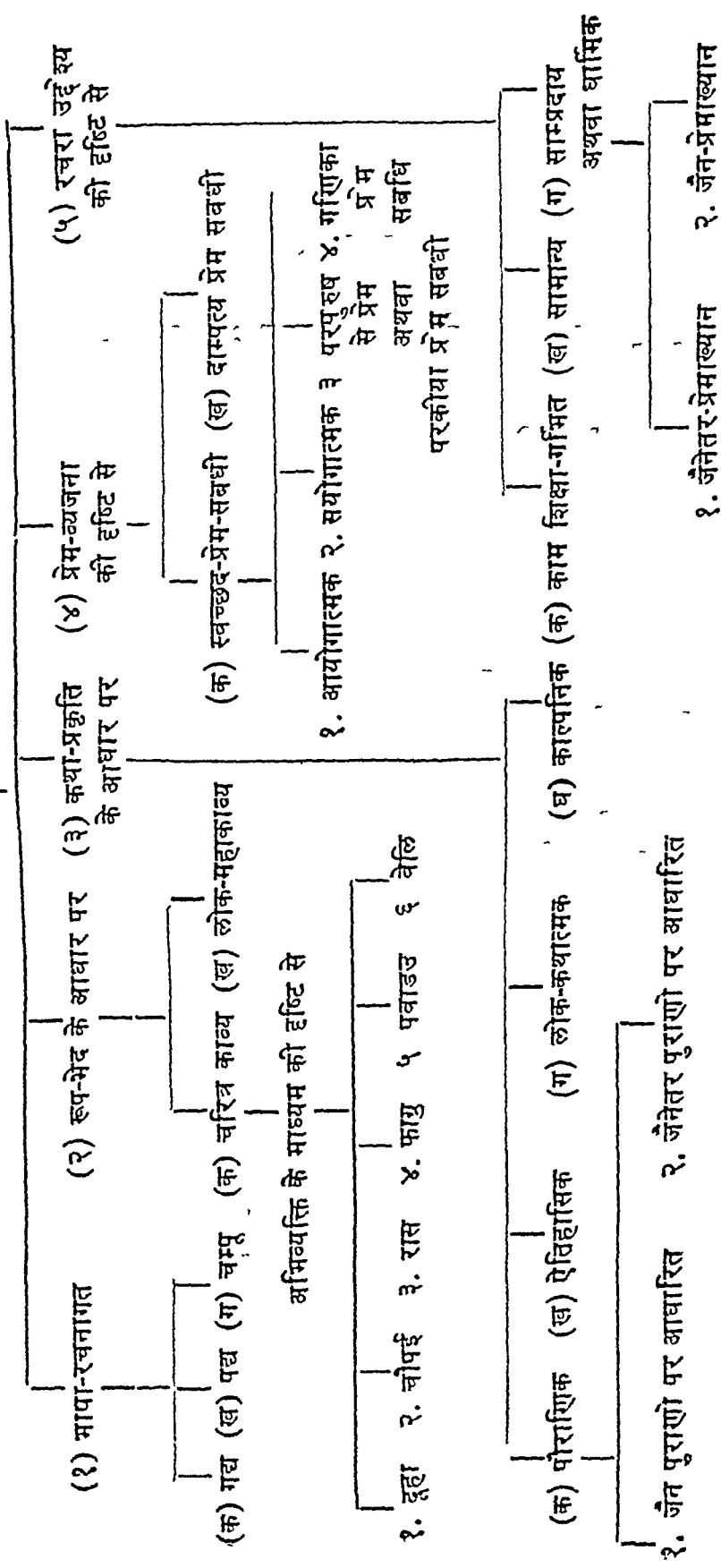
भाग 'ख'

राजस्थानी के प्रेमाख्यान : एक अध्ययन

राजस्थानी के प्रेमाख्यानो का सामान्य परिचय प्राप्त करने पर हमे विदित होता है कि वि० स० १४०० से १९०० तक अनेक प्रेमाख्यान लिखे गये हैं। विभिन्न समय मे विभिन्न व्यक्तियो द्वारा विभिन्न दृष्टिकोण से लिखे जाने के फलस्वरूप इनके विविध रूप मिलते है। इन प्रेमाख्यानो का हम निम्नलिखित रूप मे वर्गीकरण कर सकते हैं :—

१. भाषा-रचना-गत,
२. रूप-भेद के आधार पर,
३. कथा-प्रकृति के आधार पर,
४ प्रेम-व्यजना की दृष्टि से, एव
५. रचना-उद्देश्य की दृष्टि से।

१ भाषा-रचनागत

भाषा-रचनागत दृष्टि से राजस्थानी प्रेमाख्यानो के तीन रूप मिलते है —
(क) गद्य, (ख) पद्य और (ग) गद्य-पद्य मिश्रित चम्पू-काव्य।

(क) राजस्थानी गद्य मे लिखी गई अनेक प्रेम-कथायें, वार्ता, बात, वचनिका आदि नामो से उपलब्ध होती है। गद्य मे लिखे गये निम्नलिखित प्रेमाख्यान हैं :—

१. पृथ्वीराज वाग्विलास	२. वीरोचन मुहता री बात
३. नरबद सुपियारदे री बात	४ वीरमदे सोनीगरा री बात
५. सदैवच्छ सावलिंगा री बात	६. अचलदास खीची री बात
७. विरह गुलजार इश्क अनवर कथा	८ लैला मजनू री वारता
९. जोगराज चारण री बात	१०. बात सयणी चारणी री
११. मूमल महिंदरा री बात	१२ लाखा फुलाणी
१३. मोजदीन मैताब री बात	१४ राजा रसालु री बात
१५. फूलमती री वारता	१६. बगड़ावतां री वात

१७. लालजी हीरजी री बात
१८ ससी पना पातसाहजादा री बात
१९. गीदोली गणगोर री बात
२०. धाधलजी और अप्सरा री बात
२१. कुँवर भूपतसेण री बात
२२. राजा विजेराज री वारता
२३. राजा सिद्धराज जयसिंघ और अप्सरा री बात
२४. राजा भोज और मतरसेण री वारता
२५ वारता गधर्वसेण री
२६. राजा सुसील री वारता
२७. रतन माणक साहजादा री बात
२८. राजा चितरसेण री बात
२९ चच राठौड री बात
३० आभल खीवजी री बात
३१ जलालदीन री वारता
३२ सोहणी री बात

(ख) पद्य मे लिखे गये प्रेमाख्यान निम्नलिखित है :—

१. ढोला मारू रा दूहा
२ सिरिथूलि फागु
३ नेमीनाथ फागु
४ हसाउली
५ बीसलदेव रास
६ विद्याविलास पवाडउ
७ सदयवत्स वीर-प्रबन्ध
८ हसराज बच्छराज चौपई
९ मलयासुन्दरी कथा
१० नेमीनाथ भ्रमर गीता
११ ओखाहरण
१२. लखमसेन पद्मावती कथा
१३. उषा हरण
१४ माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध
१५ पचसहेली रा दूहा
१६ माधवानल कामकन्दला रस-विलास
१७ मधुमालती
१८ किसनजी री वेलि
१९ विद्याविलास चौपई
२० ढोला मारू चौपई
२१ हसाउली विक्रम-चरित्र विवाह
२२ बुद्धि रासो
२३. स्थूलिभद्र कोशा प्रेम-विलास
२४. विल्हण पचासिका
२५ कुतुबशतक
२६ नल दवदती रास
२७. वेलि क्रिसन रुक्मिणी री
२८ गोरा बादल चौपई
२९. सुरसुन्दरी रास
३० स्थूलिभद्र मोहन वेलि
३१ छिताई वार्ता
३२. नेमी राजुल बार मास वेल प्रबन्ध
३३. मृगावती रास
३४ माधवानल कामकन्दला चौपई (कुशल लाभ)
३५. पुरन्दर कुमार चौपई
३६. सिंहल सुत चौपई
३७. पुण्यसार चौपई
३८. नलदमयन्ती रास
३९. लीलावती
४०. हंसाउली (शिवदास)

४१. गोरा बादल चौपई (जटमल)
४२ प्रेम-विलास प्रेमलता कथा
४३. महादेव पार्वती री वेलि
४४. सदेवच्छ सावलिगा चउपई
४५ पद्मिनी चरित्र चौपई
४६. रघुनाथ चरित्र नव रस वेलि
४७. रतनपाल रतनवती रास
४८ वछराज चउपई
४९. माधवानल कामकन्दला (दामोदर)
५० रणसिंघ कुमार चौपई
५१. लीलावती (लाभवर्द्धन)
५२. विद्याविलास (विनयप्रभ)
५३. मानतुग मानवती चरित्र
५४. चन्द्रराज चरित्र
५५. नेम राजुल वेलि
५६. चन्द्रलेहा चौपई
५७ चित्रसेन पद्मावती रतनसार मत्री चौपई
५८ चन्दन मलियागिरि
५९ देव-चरित्र
६०. मृगलेखा चौपई
६१. कलावती चौपई
६२. स्थूलभद्र शीयल वेलि
६३. नेमिश्वर स्नेह वेलि
६४. पुष्पसेन पद्मावती री वात
६५ रूपसेन कुमार नो चरित्र
६६. नेमनाथ रस वेलि।
६७. वडा रुक्मिणी मगल
६८. निहालदे सुलतान के पावडे

(ग) उपर्युक्त गद्य और पद्य मे लिखे गये प्रेमाख्यानो के अतिरिक्त गद्य-पद्य दोनो के मिश्रत रूप-चम्पू-काव्य मे भी लिखे गये अनेक प्रेमाख्यान मिलते है। यह मध्य-कालीन राजस्थानी-साहित्य की एक विशिष्ट शैली प्रतीत होती है। गद्य मे लिखी गई वार्ता के बीच-बीच मे दोहा, चन्द्रायणा, सोरठा, सवैया, कवित्त आदि छन्द मिलते हैं। इन छन्दो मे मानव-हृदय को उद्वेलित करने वाली रसमयी रजत तरगो में मार्मिक प्रेम-व्यजना की मन-मोहक झाँकी परि लक्षित होती है। गद्य भी अनुप्रास युक्त, तुकान्तमय होने से गयात्मक हो गया है। चम्पू-काव्य शैली मे लिखे गये प्रेमाख्यान निम्नलिखित हैं :—

१ कुतुबशतक
२ चदकुँवर री बात
३ राजा चन्द प्रेमलालछी री बात
४ बात बीजड बीजोगण री
५ बीजा सोरठ री बात
६. बात नागजी नागवती री
७ फूलजी फूलमती री वारता
८ पना वीरमदे री बात
९. मदन शतक
१०. राजा भोज भानुमती री बात
११ बात जसमा ओडण
१२ गुलाबा भवरा री वारता
१३ जेठवा ऊजली
१४. रावलदे साखला री बात
१५ रतना हमीर री वारता

२ रूप-भेद के आधार पर

रूप-भेद के आधार पर राजस्थानी-प्रेमाख्यानो के मुख्य रूप से दो भेद किये जा सकते हैं। प्रथम, चरित्र-काव्य एव द्वितीय लोक-महाकाव्य।

(क) चरित-काव्य :

राजस्थानी मे चरित-ग्रथो की रचना-प्रणाली अपभ्रश साहित्य की देन है। अपभ्रश साहित्य मे जसहर चरिउ, भविसत कहा, नागकुमार चरित्र जैसे प्रेमाख्यानो के समान ही राजस्थानी मे अधिकतर जैन-मुनियो ने चरित्र-काव्यो की रचना की। अभिव्यक्ति के माध्यम की दृष्टि से इन चरित-काव्यो के कई रूप मिलते हैं। यथा— १) दूहा, (१) चौपई, (३) रास, (४) फागु, (५) पवाडउ और (६) वेलि।

१. दूहा-काव्य :

दोहा छद अपभ्रश से राजस्थानी को विरासत के रूप में मिला है और कालान्तर मे इसने हमारे साहित्य मे प्रमुख स्थान बना लिया है। अपनी समासिकता के कारण दोहा प्रभावशीलता के साथ स्मृति-पटल पर सहज अकित हो जाता है। वास्तव मे राजस्थानी जन-जीवन का मर्म जितना इस छद के माध्यम से व्यक्त हुआ है, उतना अन्य किसी छद के माध्यम से नही। इसलिए दोहा छन्द की लोकप्रियता के सम्बन्ध मे अनेक दोहे प्रचलित हैं। यथा—

सोरठियो दूहो भलो, भल मरवण री बात।
जोबन छाई धण भली, ताराँ छाई रात॥

दोहो की गेयता इनका सबसे बडा गुण है। सोरठ के दोहे सोरठ राग मे तथा ढोला मारू के दोहे मारू व माड राग मे गाये जाते है। इन दोहो के द्वारा प्रेमी और प्रेमिकाओ के प्रेम सिक्त हृदय मे उठती हुई भाव लहरियो का कलख बडी खूबी से व्यक्त हुआ है। इस दूहा-काव्य के अन्तर्गत निम्नलिखित प्रेमाख्यान आते हैं :—

१. ढोला मारू रा दूहा
२ पच सहेली रा दूहा
३ सोरठ रा दूहा
४ जेठवा रा दूहा
५ राजा रसालु रा दूहा

२ चौपई-काव्य

जैन मुनियो द्वारा रचित चौपई, रास, फागु आदि चरित-काव्य पहले विविध प्रसगो मे व मन्दिरो मे खेले जाते थे। अत लघु होना स्वाभाविक और आवश्यक

भी था। कालान्तर मे जब ये काव्य बडे आकार मे रचे जाने लगे तो वे केवल गेय काव्य रह गये। इन चरित-काव्यो में अधिकतर चौपई के लिए रास और रास के लिए चौपई शब्द का प्रयोग मिलता है। इससे विदित होता है कि कालान्तर मे इन काव्यो के लिए दोनों शब्दो का प्रयोग होने लगा था। राजस्थानी मे लिखे गये निम्नलिखित प्रेमाख्यान चौपई-काव्य ग्रंथ मिलते है —

१. हसराज वच्छराज चौपई
२. विद्या विलास चौपई
३. ढोला मारू चौपई
४. गोरा बादल चौपई (हेमरत्न)
५ माधवानल कामकन्दला चौपई
६. पुरन्दर कुमार चौपई
७. सिंहलसुत चौपई
८. पुण्यसार चौपई
९. नलदमयन्ती चौपई
१०. गोरा बादल चौपई (जटमल)
११. सदैवच्छ सावलिंगा चउपई
१२. पद्मिनी चरित्र चौपई
१३. वछराज चौपई
१४. माधवानल कामकन्दला चौपई (दामोदर)
१५. रणसिंघ कुमार चौपई
१६. चन्द्रलेहा चौपई
१७. चित्रसेन पद्मावती रतनसार मत्री चौपई
१८. मृग-लेखा चौपई
१९. कमलावती चौपई
२०. चन्दन मलियागिरी चौपई
२१. मृगावती चौपई

३. रास-काव्य

रास-काव्य लघु और दीर्घ दोनो प्रकार के लिखे गये है। 'लघु रासो मे काव्य-विभाजन बडा सरल है। प्रत्येक रास मे ५-६ से लेकर १५-२० तक ढाल होते है। प्रत्येक ढालो मे २० से लेकर २५ तक छद होते है। रास के प्रारम्भ मे मगलाचरण होता है जो दूहा, रोला, घत्ता, चउपई आदि गेय छन्दो के माध्यम से गाई जाती है। प्रस्तावना के उपरान्त ढाल प्रारम्भ होती है। प्रत्येक ढाल के प्रारम्भ मे राग-रागनियो का नामोल्लेख होता है।[1] बडे रास ग्रथो मे ३७ से भी अधिक ढालें मिलती है। राजस्थानी के निम्नलिखित प्रेमाख्यानक रास-ग्रथ उपलब्ध होते है :—

१. बीसल देवरास
२. सुरसुन्दरी रास
३. मृगावती रास
४ रतनपाल रतनवती रास

---

१. डा० दशरथ शर्मा एवं डा० दशरथ ओझा रास और रासान्वयी काव्य, पृ० स. १७।

५. बुद्धिरासो
६ नलदवदती-रास (महीराज कृत)
७ नलदवदती रास (ऋषिवर्द्धन सूरि)
८. सुमित्रकुमार रास
९. सुदर्शन रास
१० शकुन्तला रास
११ चित्रसेन पद्मावती रास (विनयभद्र)
१२ रोहिणेय रास
१३ नलदमयन्ती रास (विनयभद्र)
१४. पद्मावती पद्मश्री रास
१५ मृगाक पद्मावती रास
१६. कर्पूर मजरी रास
१७. रूपसुन्दर रास

४ फागु-काव्य :

जो 'रास' वसन्तोत्सव के समय गाये जाने के लिये लिखे गये वे 'फागु' कहलाते है। 'फागु-काव्य' मे नायक-नायिकाओ को केन्द्र मे रखकर बसत का वर्णन किया जाता है। राजस्थानी मे इस प्रकार के निम्नलिखित प्रेमाख्यानक ग्रथ प्राय उपलब्ध होते है —

१. सिरिथूलि फागु
२ नेमीनाथ फागु

५ पवाडउ-काव्य :

राजस्थानी प्रेमाख्यानो मे 'पवाडउ' अथवा 'पवाडे' नाम के निम्नलिखित ग्रथ उपलब्ध हैं —

१. विद्याविलास पवाडउ
२ निहालदे सुलतान के पवाडे

६ वेलि-काव्य :

राजस्थानी-साहित्य मे वल्ली, वल्लरी वेल, वेलि सज्ञक रचनाओ की एक सुदीर्घ परम्परा रही है। वेलि नाम से राजस्थानी मे कई प्रेमाख्यान-काव्य भी लिखे गये हैं। निम्नलिखित वेलि-सज्ञक प्रेमाख्यान उपलब्ध है —

१. किसनजी री वेलि
२. वेलि क्रिसन रुक्मिणी री
३ स्थूलिभद्र मोहन वेलि
४. नेम राजुल बारमास वेल-प्रबन्ध
५ महादेव पारवती री वेलि
६. रघुनाथ चरित्र नव-रस वेलि
७. नेम राजुल वेलि
८. स्थूलभद्र शीयल वेलि
९ नेमिश्वर स्नेह वेलि
१०. नेमीनाथ रस वेलि

(ख) लोक-महाकाव्य .

जन-मानस को अपनी रसमयी स्निग्ध धारा से आप्लावित करते हुए ये शताब्दियो से अपनी मौखिक-परम्परा से जीवित चले आते है और समय-समय पर

लोक-विश्वासो, आस्थाओ के अनुरूप ढलकर, प्रचलित किंवदन्तियाँ एवं कथानक रूढियो को ग्रहण करके विशाल आकार के हो जाते हैं। बहुधा इनका मूल-कथानक किसी प्रसिद्ध ऐतिहासिक वीर-पुरुष के जीवन-चरित्र पर आधारित होता है, जो बाद मे लोक-देवता के रूप मे पूज्य हो जाता है। इस प्रकार के राजस्थानी प्रेमाख्यानक लोक-महाकाव्यो मे निम्नलिखित ग्रंथ आते है —

१ बगडावत

२. निहालदे सुलतान के पवाडे

३ कथा-प्रकृति के आधार पर

कथा-प्रकृति के आधार पर राजस्थानी प्रेमाख्यानो को (क) पौराणिक (ख) ऐतिहासिक (ग) लोक-कथात्मक एव (घ) काल्पनिक प्रेमाख्यानो मे वर्गीकृत किया जा सकता है।

(क) पौराणिक-प्रेमाख्यान :

श्री परशुराम चतुर्वेदी[1] के अनुसार पौराणिक-प्रेमाख्यानो मे देवताओ तथा स्वर्गीय एव लौकिक मर्यादाओ की चर्चा बहुत स्पष्ट रूप से होने लगती है और इनमे अवतारवाद, कर्मवाद एव जन्म-जन्मान्तरवाद जैसे कई सिद्धान्तो का उदाहृत हो जाना भी दीख पडने लगता है। इस प्रकार से राजस्थानी पौराणिक-प्रेमाख्यान मुख्य रूप से दो प्रकार के मिलते है —(१) जैन पुराणो पर आधारित प्रेमाख्यान एव जैनेतर पुराणो पर आधारित-प्रेमाख्यान।

१. जैन पौराणिक-प्रेमाख्यान निम्नलिखित है —

१. सिरिथूलि फागु
२. नेमीनाथ फागु
३. नेमीनाथ भ्रमर गीता
४. स्थूलीभद्र कोशा-प्रेम विलास
५. नलदमयन्ती चौपाई
६. नलदवदती रास
७. स्थूलिभद्र मोहन वेलि
८ नेमी राजुल बारमास वेलि प्रबध
९ नेम राजुल वेलि
१० स्थूलभद्र शीयल वेलि
११ नेमिश्वर स्नेह वेलि
१२. नेमीनाथ रस वेलि
१३. शकुन्तला रास
१४ नलदमयन्ती रास (विनयभद्र)
१५ नलदमयन्ती प्रबध

२. निम्नलिखित प्रेमाख्यान जैनेतर पुराणो पर आधारित हैं —

१ ओखाहरण

२ उषाहरण

---

१. भारतीय प्रेमाख्यान-परम्परा, पृ० स० ११६।

३ किसनजी री वेलि
४. वेलि क्रिसन रुक्मिणी री
५ महादेव पारवती री वेलि
६ रघुनाथ चरित्र नव रस वेलि
७ बडा रुक्मिणी मगल

(ख) ऐतिहासिक-प्रेमाख्यान :

ऐतिहासिक प्रेम-कथाओ का आधार इतिहास होता है। कथा के मुख्य-पात्र ऐतिहासिक होते हैं और घटनाये भी प्राय· इतिहास-सम्मत होती हैं। किन्तु, इतिहास मे और साहित्य मे अन्तर होता है। इतिहास मे तो व्यक्तियो के नामो और घटनाओ की तिथियो पर अधिक आग्रह रहता है, अत वह तथ्यात्मक अधिक होता है जबकि साहित्य तत्वात्मक। अत इन प्रेमाख्यानो की कुछ ऐसी विशेषता होती है कि वे ऐतिहासिक होते हुए भी केवल विवरणात्मक नही रह पाते। प्रेम-भाव एव विरह दशा के अनुकूल पात्र, वातावरण, तथा विभिन्न घटनाओ की सृष्टि करने के फलस्वरूप उनका रूप बदल जाता है। इस प्रकार के राजस्थानी ऐतिहासिक प्रेमाख्यान निम्नलिखित हैं :—

१. बीसलदेव रास
२. गोरा बादल चौपई (हेमरत्न सूरि)
३ छिताई वार्ता
४ मृगावती रास
५ गोरा बादल चौपई (जटमल)
६ पद्मिनी चरित्र चौपई
७ नरवद सुपियारदे री बात
८ वीरमदे सोनीगरा री बात
९ अचलदास खीची री वात
१० लाखा फुलाणी
११ गीदोली गणगोर री बात

(ग) लोक-कथात्मक प्रेमाख्यान :

लोक-कथायें आदि-काल से मौखिक परम्परा द्वारा प्रचलित होती है। इनका समय अज्ञात रहता है और रचयिता भी कोई व्यक्ति विशेष न होकर सामूहिक जन-मानस होता है। अपने शाश्वत स्थायित्व के लिए ये कथायें लोक-हृदय में इतनी रमी हुई रहती है कि पीढी दर पीढी-सचरित होती रहती हैं। इनका आधार जनश्रुति होता है और जन-विश्वास, लोक-जीवन की आस्थायें, आशायें, आकाक्षाये इनकी रूपवृद्धि करती हैं। प्रारम्भ मे इनके मुख्य-पात्र कोई ऐतिहासिक वीर-पुरुष अथवा कोई लोक-देवता होते हैं और बाद मे अन्ध-विश्वासो के आधार पर कई प्रकार की अलौकिक और चमत्कारिक घटनायें जुड जाती हैं। यहाँ यह स्पष्ट हो जाना आवश्यक है कि लोक-कथाओ और ऐतिहासिक कथाओ के बीच कोई एकान्तिक

सीमान्त-रेखाये नही होती, बल्कि ऐतिहासिक आख्यानो में लोक-कथा तत्व और लोक-कथाओ का आधार ऐतिहासिक व्यक्ति एव घटनाये हो सकती हैं। इस प्रकार के वर्गीकरण का आधार केवल तत्व की बहुलता ही होती है। अपनी निरालकृत सहज शैली और प्राकृतिक-प्रवृत्तियो के सहज सन्चरण से लोक-कथात्मक प्रेमाख्यान अपनी प्रेम जनित-व्यजना के लिए बडे प्रभावी होते है। इस प्रकार के लोक-कथात्मक प्रेमाख्यान निम्नलिखित है —

१. ढोला मारू रा दूहा
२ हसाउली
३ विद्या विलास पवाडउ
४ सदयवत्स-वीर-प्रबंध
५ हँसराज वच्छराज चौपई
६ पृथ्वीराज वाग्विलास
७ लखमसेन पद्मावती कथा
८ माधवानल कामकन्दला प्रवध (गणपत)
६ माधवानल कामकन्दला रस-विलास (माधव)
१० विद्या विलास चौपई
११ ढोला मारू चौपई
१२ हसाउली विक्रम चरित्र विवाह
१३. विल्हण पचासिका
१४ कुतुवशतक
१५ सुरसुन्दरी रास
१६ माधवानल कामकन्दला चौपई (कुशललाभ)
१७ पुरन्दरकुमार चौपई
१८ सिंहलसुत चौपई
१६ पुण्यसार चौपई
२०. लीलावती
२१ हसाउली (शिवदास)
२२. सदेवच्छ सावलिगा चउपई
२३ वीरोचन मुहता री वात
२४ रतनपाल रतनवती रास
२५ वछराज चउपई (विनयलाभ)
२६. माधवानल कामकन्दला (दामोदर)
२७. चदकुँवर री वात
२८. रणसिंघकुमार चौपई
२६. लीलावती (लाभ वर्द्धन)
३०. विद्याविलास (विनयप्रभ)
३१. भानुतु ग मानवती चरित्र
३२ चन्द्रराज चरित्र
३३. सदैवच्छ सावलिगा री वात (किसना जी)
३४ विरह गुलजार इश्क अनवर कथा
३५. लैला मजनू री वारता
३६ चन्द्रलेहा चौपई
३७. मलया सुन्दरी कथा
३८. चित्रसेन पद्मावती रतनसार मन्त्री चौपई
३६ चन्दन मलियागिरि
४०. देव-चरित्र
४१. जोगराज चारण री वात
४२. वात सयणी चौरणी री

४३. मूमल महिंदरा री बात
४४. जलॉलदीन री वारता
४५. मृगलेखा चौपई
४६. बात बीजड वीजोगरा री
४७. वात नागजी नागवती री
४८ बात बीजा सोरठ री
४९. राजाचन्द प्रेमलालछी री बात
५०. कलावती चौपई
५१ पुष्पसेन पद्मावती री बात
५२. रूपसेनकुमार नो चरित्र
५३. मदनशतक
५४. मोजदीन मैताव री बात
५५. राजा रसालु री बात
५६. राजा भोज भानुमती री बात
५७. वगडावता री वात
५८. फूलमती री वारता
५९ लालजी हीरजी री बात
६० बात जसमा ओडरा
६१. ससी पना पातसाहजादा री बात
६२. निहालदे सुलतान के पवाडे
६३ धाधल जी और अप्सरा री बात
६४. कुँवर भूपतसेरा री वारता
६५ राजा वीजेराज री वारता
६६. राजा सिद्धराज जयसिंघ और अप्सरा री बात
६७. राजा भोज और भतरणसेरा री वारता
६८ वारता गधर्व सेरा री
६९. राजा सुसील री वारता
७०. रतन मारणक साहजादा री बात
७१. राजा चितरसेरा री बात
७२. जेठवा ऊजली
७३ सोहरणी री वात
७४ राव रावलदे साखला री बात
७५ चच राठौड री बात
७६ आमलजी खीवजी री वात
७७. सुमित्रकुमार रास
७८. सुदर्शन रास
७९. लीलावती (कक्क सूरि)
८०. चन्दन मलयागिरी चौपई
८१ चित्रसेन पद्मावती रास (हरविलास के शिष्य द्वारा)
८२. कर्पूर मजरी
८३. पद्मावती पद्मश्री रास
८४. मृगाक पद्मावती रास
८५ कर्पूर मजरी रास (कनक सुन्दर)
८६ रूप सुन्दर रास
८७ कनकावती
८८. तरगवती
८९ रूपसुन्दर री कथा

(घ) काल्पनिक प्रेमाख्यान :

काल्पनिक प्रेमाख्यानो का आधार केवल रचनाकार की कल्पना होती है। इनके पात्र और घटनाये भी काल्पनिक होती हैं। राजस्थानी काल्पनिक प्रेमाख्यान निम्नलिखित हैं :—

१. पच सहेली रा दूहा
२. मधुमालती
३. वुद्धिरासो
४. रतना हमीर री वारता
५. फूलजी फूलमती री वारता
६. पर्नां वीरमदे री वारता
७. गुलॉवा भवरा री वारता

४. प्रेम-व्यंजना की दृष्टि से

प्रेम-व्यजना की दृष्टि से इन प्रेमाख्यानो को मुख्य रूप से दो वर्गों मे विभाजित किया जा सकता है। (क) स्वच्छन्द-प्रेम-व्यजना (Romentic-Love) सवधी प्रेमाख्यान एव (ख) दाम्पत्य-प्रेम सम्बन्धी प्रेमाख्यान।

(क) स्वच्छन्द प्रेम-व्यंजना सवधी प्रेमाख्यान :

इस प्रकार के प्रेमाख्यानो मे नायक-नायिका मे प्रेम सम्बन्ध विवाह से पूर्व ही स्थापित हो जाता है और विवाह उस प्रेम बन्धन का परिणाम होता है। इन प्रेमाख्यानो मे कभी-कभी प्रेमी-प्रेमिका विवाह के बन्धन को स्वीकार भी नही करते है और प्रेम-बन्धन को सर्वोपरि मानते है। इस प्रकार के स्वच्छद प्रेम-व्यजना सम्बन्धी प्रेमाख्यानो के निम्नलिखित चार रूप मिलते है — (१) आयोगात्मक प्रेमाख्यान, (२) सयोगात्मक प्रेमाख्यान, (३) पर-पुरुष से प्रेम अथवा परकीया-प्रेम सम्बन्धी प्रेमाख्यान, (४) गणिका-प्रेम सम्बन्धी प्रेमाख्यान।

१. आयोगात्मक प्रेमाख्यान

इस प्रकार के प्रेमाख्यानो मे प्रेमी-प्रेमिका मे प्रेम-सम्बन्ध तो प्रगाढ होता है किन्तु सामाजिक व्यवधानो अथवा किन्ही अन्य कारणो से उत्कट प्रयत्न के बाद भी सयोग नही हो पाता है। प्रायः ऐसे प्रेमाख्यान दुखान्त होते है। इस प्रकार के प्रेमाख्यान निम्नलिखित है —

१. बीजा सोरठ री वात
२ वात नागजी नागवती री
३. ससी पना पातसाहजादा री बात
४ जेठवा-ऊजली
५ सोहणी री बात
६. आभल खीवजी री वात
७. बात सयणी चारणी री
८ मूमल महिंदरा री वात
९. लैला मजनू री वारता
१०. चच राठौड री बात

२. संयोगात्मक प्रेमाख्यान

सयोगात्मक प्रेमाख्यानो मे प्रेम-बन्धन के परिणाम स्वरूप प्रेमी प्रेमिका का मिलन अथवा विवाह हो जाता है। प्राय ये प्रेमाख्यान सुखान्त होते है। राजस्थानी मे इस प्रकार के प्रेमाख्यानो की सख्या सबसे अधिक है। स्वच्छद-प्रेम-व्यजना सम्बन्धी निम्नलिखित सयोगात्मक प्रेमाख्यान उपलब्ध होते है —

१ हसाउली
२. विद्याविलास पवाडउ
३. हसराज बच्छराज चौपई
४ पृथ्वीराज वाग्विलास
५ ओखाहरण
६. उषाहरण
७. मधुमालती
८. विद्याविलास चौपई (आज्ञा सुन्दर)

९ हसाउली विक्रम चरित्र विवाह
१०. बुद्धि रासो
११ विल्हण पचासिका
१२ कुतुब शतक
१३. हसाउली (शिवदास)
१४ प्रेमविलास प्रेमलता
१५ सदैवच्छ सावलिगा चौपई
१६ वछराज चौपई
१७ नरबद सुपियारदे री वात
१८ विद्या विलास (विनयप्रभ)
१९ सदैवच्छ सावलिगा री वात
२० विरह गुलजार इश्क अनवर-कथा
२१ चित्रसेन पद्मावती रतनसार मत्री चौपई
२२ देव-चरित्र
२३. जोगराज चारण री वात
२४ जलालदीन री वारता
२५. राजा चन्द प्रेमलालछी री वात
२६ लाखा फुलाणी
२७ पुष्पसेन पद्मावती री वात
२८ रूपसेन कुमार नो चरित्र
२९. मदनशतक
३० मोजदीन मैताब री वात
३१. राजा रसालू री वात
३२. राजा भोज और भानुमति री वात
३३. फूलमती री वारता
३४ वगडावता री वात
३५ लालजी हीरजी री वात
३६. गीदोली गणगोर री वात
३७ निहालदे सुलतान के पवाडे
३८. धाधल जी और अप्सरा री वात
३९ कुँवर भूपत सेण री वात
४० राजा वीजेराज री वारता
४१ राजा सिद्धराज जयसिंघ और अप्सरा री वात
४२ राजा भोज और मतरसेण री वारता
४३ वारता गधर्वसेण री
४४ राजा सुसील री वारता
४५ रतन माणक साहजादा री वात
४६ राजा चितरसेण री वात
४७ राव रावलदे साखरी वात

(३) पर-पुरुष से प्रेम अथवा परकीया प्रेम सम्बन्धी :

इस प्रकार के प्रेमाख्यानो मे नायक-नायिका विवाहित होते हैं। विवाहित होते हुए भी नायिका अपने प्रेमी किसी अन्य पुरुष से प्रेम करती है अथवा नायक किसी अन्य पुरुष से विवाहित स्त्री से प्रेम करता है। वे विवाह के बन्धन को प्रेम-बन्धन के समक्ष तुच्छ समझते हैं। ऐसे प्रेमाख्यानो मे नायिका या तो अपने पति से सम्बन्ध तोडकर प्रेमी से जा मिलती है या पति के साथ रहकर भी लुकछिप कर प्रेमी से प्रेम-सम्बन्ध बनाये रखती है। इस प्रकार के प्रेमाख्यान निम्नलिखित है :—

१. चद कुवर री वात
२. वीरोचन मुहता री वात
३ वीरमदे सोनगरा री वात
४. गुलाबा भवरा री वारता

अधिक काम की वन्दना को महत्व दिया है।[1] इसी भांति जैन कवि नर्वदाचार्य ने अपनी रचना लोक-शास्त्र-चतुष्पदी (रचना-काल स. १६५६) मे फागु रचना के लिए कोकशास्त्र का ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक माना है।[2]

मध्यकालीन सामन्तशाही युग मे राजकुमारियो को काम की शिक्षा देने के लिए मधुमालती जैसे सम्भोग और स्त्री-पुरुषो की काम-चेष्टाओ से सम्बन्धित चित्रो से युक्त प्रेमाख्यान लिखे जाते थे। वसन्तोत्सव अथवा विवाह आदि के अवसरो पर ऐसे सचित्र प्रेमाख्यान प्रेमोपहार मे भेट दिये जाने की प्रथा भी प्रचलित थी। इस प्रकार के काम शिक्षा-गर्भित प्रेमाख्यानो मे चतुर्भु ज कृत मधुमालती और माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध इत्यादि आते है।

(ख) सामान्य-प्रेमाख्यान :

इस प्रकार के प्रेमाख्यान लिखने का उद्देश्य मुख्य रूप से स्वय कृतिकार की सृजनात्मक अदम्य इच्छा की तृप्ति के साथ मनोरजन होता है। कला के लिए सिद्धान्त का चाहे प्रचलन उस समय नही हुआ हो, किन्तु इस प्रकार की रचनाओ मे अपरोक्ष रूप मे यह सिद्धान्त कार्य करता हुआ दिखलाई पडता है। अपने सम्प्रदायक दृष्टिकोण को लेकर समासिकता अथवा रूपक के माध्यम से किसी प्रकार के धार्मिक या साम्प्रदायिक सिद्धान्तो का प्रतिपादन करना इनमे आवश्यक नही होता। इन प्रेमाख्यानो का प्रारम्भ प्रेम से होता है और समाप्ति भी प्रेममय होती है। इस प्रकार के प्रेमाख्यान निम्नलिखित हैं —

१. ढोला मारू रा दूहा
२. बीसलदेव रास
३. पच सहेली रा दूहा
४. माधवानल कामकन्दला रसविलास
५. ढोला मारू चौपई
६. हसाउली विक्रम चरित्र विवाह
७. बुद्धिरासो
८. कुतुबशतक
९. छिताई वार्ता
१० माधवानल कामकन्दला चौपई (कुशल लाभ)

---

१. मकरध्वज महीपति वर्णवु। जेहनु रूप अवनि अभिनवु ॥
कुसुम बाण करि कु ज चढई। तास प्रमाणि धरा धडै हडई ॥
तास तणा पत्र हु अण सरी, सरसती सामिणी हइडइ धरी ॥
पहिलु कदर्प करी प्रणाम, गइउ ग्र थ रचिसि अभिराम ॥
२ डा० दशरथ शर्मा एव डा० दशरथ ओझा रास और रासान्वयी काव्य, पृ. स. ८१।

११ प्रेम विलास प्रेमलता
१२. गोरा बादल चौपई (जटमल)
१३ सदेवच्छ सावलिंगा चौपई
१४. माधवानल कामकन्दला (दामोदर)
१५ चंदकुँवर री बात
१६. नरबद सुपियारदे री बात
१७. वीरमदे सोनीगरा री बात
१८. सदैवच्छ सावलिंगा री बात (किसना)
१९. अचलदास खीची री बात
२०. विरह गुलजार इश्क अनवर कथा
२१. लैला मजनू री वारता
२२. जोगराज चारण री बात
२३. बात सयणी चारणी री
२४. मूमल महिंदरा री बात
२५ जलालदीन री वारता
२६. सदैवच्छ सावलिंगा री बात (जीवणदास)
२७. राजा चन्द प्रेमलालच्छी री बात
२८. लाखा फुलाणी
२९. बीजा सोरठ री बात
३० वात बीजड बीजोगण री
३१. बात नागजी नागवंती री
३२. फूलजी फूलमती री वारता
३३. पना वीरमदे री बात
३४. पुष्पसेन पद्मावती री बात
३५. मदनशतक
३६. मोजदीन् मैताब री बात
३७. रतना हमीर री वात
३८. राजा रसालु री बात
३९. राजा भोज भानुमती री बात
४०. फूलमती री वार्ता
४१ लालजी हीरजी री बात
४२ ससी पना री बात
४३. गुलाबा भवरा री वारता
४४. गीदोली गणगोर री वात
४५ निहालदे सुलतान के पवाडे
४६ धाधलजी और अप्सरा री वात।
४७ राजा भोज और मतरसेण री वारता
४८. कुँवर भूपतसेण री वारता
४९. राजा वीजैराज री वारता
५० राजा सिद्धराज जयसिंघ और अप्सरा री बात
५१. राजा भोज और मतरसेण री वारता
५२. वारता गधर्वसेण री
५३. राजा सुसील री वारता
५४. रतन माणक साहजादा री बात
५५ जेठवा ऊजली
५६. सोहणी री बात
५७. राव रावलदे साखला री वात
५८. चच राठौड री बात
५९ आभल खीवजी री बात

(ग) साम्प्रदायक अथवा धार्मिक प्रेमाख्यान :

इस प्रकार के प्रेमाख्यानो मे किसी मत विशेष अथवा धार्मिक-सिद्धान्तो की पुष्टि का उद्देश्य मुख्य-रूप से रहता है और प्रेम-तत्व गौण हो जाता है।

साम्प्रदायक अथवा धार्मिक प्रमोख्यानो के दो भेद मिलते है —(१) जैनेतर प्रेमाख्यान और (२) जैन-प्रेमाख्यान ।

१. जैनेतर-प्रेमाख्यान

अपने इष्ट-देव की ऐहिक लीलाओ का वर्णन करने के लिए माधुर्य अथवा 'प्रेमाभक्ति' की महत्ता सिद्ध करने के लिए राम और कृष्ण तथा शिव-पार्वती देवताओ के चरित्र को लेकर भी ऐसे प्रेमाख्यान लिखे गये हैं। लोक-देवताओ के गुणानुवाद, उनके अलौकिक जन्म एव अलौकिक कार्यों के वर्णन के रूप मे भी प्रेमाख्यान मिलते है। इस प्रकार के जैनेतर-प्रेमाख्यान निम्नलिखित हैं :—

१. किसनजी री वेलि
२. ओखाहरण
३ उषा हरण
४. वेलि क्रिसन रुक्मिणी री
५. महादेव पारवती री वेलि
६ रघुनाथ चरित्र नव रस वेलि
७. देवचरित्र
८ वगडावता री वात
९. बडा रुक्मणि मगल
१०. वगडावत

२. जैन-प्रेमाख्यान

जिस प्रकार हिन्दी साहित्य मे सूफी कवियो ने अपने सिद्धान्तो के प्रचार के लिए सूफी-प्रेमाख्यानो की रचना की, उसी भाँति राजस्थानी भाषा मे जैन-कवियो ने जैन-सिद्धान्तो के प्रचार के लिए अनेक प्रेमाख्यानक-काव्यो का सृजन किया। जैन-कवियो द्वारा रचित यह साहित्य केवल शुष्क धार्मिक सिद्धान्तो का पिटारा मात्र नही है, बल्कि साहित्य-सौन्दर्य एव काव्य-सौष्ठव की दृष्टि से बडा महत्वपूर्ण है और इसमे जीवन का सगीत ध्वनित हुआ दृष्टिगोचर होता है। यह चिन्तनीय है कि ऐसा महत्वपूर्ण साहित्य हिन्दी साहित्य के इतिहास मे उपेक्षित रहकर उचित स्थान प्राप्त नही कर पाया। राजस्थानी जैन-प्रेमाख्यानो की परम्परा हिन्दी साहित्य मे कोई आकस्मिक घटना नही है, बल्कि पूर्व से ही चली आरही प्रेमाख्यान परम्परा की विरासत है। अपभ्रंश के चरित-काव्यो की अपेक्षा राजस्थानी के चरित-काव्य-चौपई रास, पवाडउ, फागु, वेलि आदि मे विविध रूपो मे रचे गये प्रेमाख्यानो मे प्रेम-तत्व अधिक स्पष्ट मिलता है। इन प्रेमाख्यानो मे प्रेम-तत्व झिझक-झिझक कर केवल झाकता ही नही है, बल्कि खुलकर खेलता हुआ दृष्टिगोचर होता है। जैन-मुनि बडे दूरदर्शी थे और साथ ही व्यवहारिक भी। उनका वैराग्य केवल कल्पना की उड़ान-मात्र नही था, बल्कि जीवन के भोग मे से तप कर निखरा हुआ

था। वे मानव-स्वभाव की दुर्बलता से भली-भाँति परिचत थे। माधवानल कामकन्दला प्रबध की भूमिका मे डा० एम. आर. मजूमदार लिखते है —[1]

"The author of the prakit peem vasudevchandı ınsısted that romentıc storıes should be utılised for writıng Dharm-Kathas, or to sayıng other words Dharm-Katha should be properly dıtuded with Good love storıes ın oıder to achieve the best results"

कुवलिय माला के रचयिता उद्योतन सूरि के अनुसार कहानी ग्राभूषणो से सुसज्जित, हस्ति के समान मथर गति से चलने वाली, मृदुभाषिनी, रसिको के मन को प्रसन्न करने वाली लजीली नव-वधू के समान होनी चाहिये।[2] जैन-प्रेमाख्यान इस कसौटी पर खरे उतरते है।

जैन-कवियो ने शील व्रत के उपदेश के लिए समाज मे प्रचलित लोक-कथाओ के आधार पर प्रेमाख्यान-काव्य लिखे है। शील-व्रत से तात्पर्य ही प्रेम की एक निष्ठाता से है। ऐसे प्रेमाख्यानो मे नायक-नायिका पर चाहे कितनी विपत्तिया आयें, प्रलोभन दिये जाय, किन्तु वे अपने प्रेम की एकनिष्ठता से अडिग रहती है। इस शील-व्रत के उपदेश के लिए पुराणो मे प्रचलित कुछ लोक-प्रसिद्ध उपाख्यान, यथा—नलोपाख्यान, शकुन्तलोपाख्यान आदि को लेकर नलदमयन्ती चौपई, शकुन्तला रास आदि चरित-काव्यो की रचनाये की गई। इन लौकिक प्रेम-कथाओ और पौराणिक प्रेमाख्यानो के आदि और अत मे इन जैन कवियो ने अपने धार्मिक-सिद्धान्तो का आरोपण कर दिया है। प्रारम्भ मे मगलाचरण मे जिनेश्वर की स्तुति, शील-धर्म आदि रचना के अनुसार पूर्वभव का वृतात, किसी जैन मुनि से उपदेश सुनकर दीक्षित होना और वृद्धावस्था मे अपने पुत्र को राज्य-सौपकर ससार से वीतराग हो जाने का वर्णन प्राय सभी प्रेमाख्यानो मे वर्णित है। यदि इन रचनाओ मे इस धार्मिक सिद्धान्तो के आरोपण को अलग कर दिया जाय तो ये रचनाये विशुद्ध प्रेमाख्यान रह जाती हैं। ऐसी स्थिति मे सूफी-प्रेमाख्यानो की भाति इनमे द्वियार्थ ढूँढने मे भी प्रयत्न नही करना पडता।

जैन-प्रेमाख्यानकारो ने इन काव्यो मे प्रेम का बडा ही व्यापक एव मार्मिक चित्रण किया है। इस प्रेम की शाश्वत सत्ता इतनी व्यापक हो गई है कि देश और काल की सीमायें यहा लोप हो गई है। प्रेमी-प्रेमिका के बीच यह प्रेम-बन्धन इस

---

१ 'माधवानल कामकन्दला प्रबध' की भूमिका, (गायकवाड, ओरियन्टल सीरीज)।

२. "सा लकारा सुहमाललिय पयाम उय मजु सलावा।
सह्यियाण देइ हरिस उव्वूढाणा व वहू चेव॥"

जन्म का न होकर जन्मजन्मान्तर का वन्धन है। 'सदेवन्त सावलिगा के आठ भवो की कहानी' मे तो उनके प्रेम-निष्टा की आठ भवो नक की कहानी वर्णित है। जैन मुनियो की वीतराग भावनाओ को देखकर कुछ लोगो का यह मत वनता हुआ प्रतीत होता है कि इन प्रेमाख्यानो में प्रेम का पूर्ण रूप से परिपाक नही हो पाया है तथा शृ गार-रस के विरह-पक्ष के अपूर्ण चित्रण के अतिरिक्त सयोग शृ गार का वर्णन नही है। प्रेम का अन्त भी वैराग्य-भावना से युक्त होने पर शान्त-रस मे होता है। किन्तु, यह धारणा नितान्त भ्रामक है। प्रेम की नाना चेष्टाओ और शृ गार-रस के विरह और सयोग दोनो पक्षो का जितना मार्मिक और सूक्ष्म, सरस एव सजीव चित्रण इन प्रेमाख्यानकारो ने किया है, वह अन्यत्र मिलना दुर्लभ है। इन प्रेमाख्यानो मे नायिका के नख-शिख एव शरीर-यष्टि का अ गोत्सव वर्णन देखते ही बनता है। इसके अतिरिक्त सगीत, नाटक, नृत्य आदि का जैसा मनमोहक चित्रण इन प्रेमाख्यानो मे हुआ है, वह हिन्दी-साहित्य की अमूल्य निधि है। यह समझना भी भ्रामक है कि इन प्रेमाख्यानो मे प्रेम का पर्यवसान शान्त-रस मे होता है क्योकि नगण्य अपवादो को छोडकर किसी प्रेमाख्यान मे नायक ने नायिका के प्रति अथवा अपनी प्रेम-निष्ठा के प्रति विरक्ति भाव नही दिखलाया है, वल्कि इसके विपरीत प्रेम की परीक्षा मे अनेक विपत्तियो का दृढ आत्म-विश्वास एव शौर्य के साथ सामनाकर सफलता प्राप्त की है। यहा तक की स्थूलिभद्र का ससार से वीतराग हो जाने पर भी सयम साधना के लिए अपनी प्रियसी कोशा का निवास स्थान चुनना उनके हृदय के किसी निरभ्र कौने मे छिपे हुए प्रेम को ही व्यक्त करता है। यद्यपि यह प्रेम वासना जन्य न होकर प्राणी-जगत की कल्याण-कामना को समाविष्ट किये हुए होता है। 'भोग मे योग' अथवा धर्म के मार्ग निर्देशन मे अर्थ, काम का उपभोग करते हुए मोक्षकी उपलब्धि भारतीय सस्कृति का चिर-काव्य रहा है। इन प्रेमाख्यानो मे नायक-नायिक यदि ससार त्याग करते हैं तो सब प्रकार के भोग भोगकर और अपने पुत्र को राजपाट देकर पीछे वानप्रस्थ लेते हैं। इस प्रकार इन रचनाओ का अन्त सुखद शान्त-रस मे होता है और लोक-रति का पर्यवसान ब्रह्मरति मे होता है।

इन जैन-प्रेमाख्यानो की एक यह भी विशेषता है कि इनके विकास-क्रम मे कुछ ऐसी रीतियाँ अथवा शैली का प्रयोग हुआ है जो प्राय सब कथानको मे एक-सी मिलती है और इस प्रकार अलग से कथानक रूढियाँ बन गई हैं, जिनसे इन प्रेम-कथानको का विकास होता है।

उपर्युक्त वर्णित, इस श्रेणी के प्रेमाख्यान निम्नलिखित है —

१ सिरिथूलि फागु
२. विद्याविलास पवाडउ
३ सदयवत्स वीर प्रबन्ध
४ मलय सुन्दरी कथा

५ पृथ्वीराज वाग्विलास
६ नेमीनाथ भ्रमर गीता
७ विद्या विलास चौपई
८ स्थूलिभद्र कोशा प्रेम विलास
९ विल्हण-पचासिका
१० नलदवदती रास
११. गोरा बादल चौपई (हेमरत्न सूरि)
१२ सुरसुन्दरी रास
१३ स्थूलिभद्र मोहन वेलि
१४ नेमी राजुल बारमास वेलि प्रबध
१५. मृगावती-रास
१६ माधवानल कामकन्दला चौपई (कुशल लाभ)
१७. पुरन्दर कुमार चौपई
१८ सिंहल-सुत चौपई
१९ पुण्यसार चौपई
२० नलदमयन्ती चौपई
२१ लीलावती (हेमरत्न)
२२ गोरा बादल चौपई (जटमल)
२३. पद्मिनी चरित्र चौपई
२४. रतनपाल रतनवती रास
२५ बछराज चौपई
२६ रणसिंघकुमार चौपई
२७ लीलावती (लाभ-वर्द्धन)
२८. विद्याविलास (विनयप्रभ)
२९ वीरमदे सोनीगरा री बात
३०. मानतु ग मानवती चरित्र
३१ चन्द्रराज चरित्र
३२ नेम राजुल वेलि
३३ चन्द्रलेहा चौपई
३४ चित्रसेन पद्मावती रतनसार मत्री चौपई
३५. चन्दन मलियागिरी (कल्याण चौपई)
३६. मृगलेखा चौपई
३७. कलावती चौपई
३८. स्थूलिभद्र शीयल वेलि
३९ नेमिश्वर स्नेह वेलि
४०. पुण्यसेन पद्मावती री बात
४१ रूपसेन कुमारनो चरित्र
४२. नेमिनाथ रस वेलि
४३ नलदवदती रास (ऋषिवर्धन सूरि)
४४ समित्र कुमार रास
४५ सुदर्शन रास
४६. शकुन्तला रास
४७ लीलावती (कक्क सूरि)
४८ चन्दन मलियागिरि चौपई
४९ मृगावती चौपई (विनयभद्र)
५० चित्रसेन पद्मावती रास (विनयभद्र)
५१. रोहिणेय रास
५२. कर्पूर मजरी
५३. नलदमयती रास (विनयभद्र)
५४ पद्मावती पद्मश्री रास
५५. मृगाक पद्मावती रास
५६ कर्पूर मजरी रास
५७. रूप सुन्दर रास
५८ कनकावती
५९ मृगावतीआख्यान
६०. नलदमयती प्रबध
६१ तरगवती
६२ रूप सुन्दर री कथा

द्वि
ती
य
अध्याय

कथानकों का मूल स्रोत और उनकी परम्परा

द्वि
ती
य
अध्याय

कथानकों का मूल स्रोत और उनकी परम्परा

कथानको के मूल स्रोत की दृष्टि से विचार करने पर राजस्थानी प्रेमाख्यानो के चार रूप उपलब्ध होते है, यथा—

(१) लोक-कथात्मक प्रेमाख्यान,
(२) पौराणिक प्रेमाख्यान,
(३) ऐतिहासिक प्रेमाख्यान और
(४) कल्पनात्मक-प्रेमाख्यान ।

इन कथा-रूपो की उक्त आधार भूमि सर्वथा ऐकान्तिक नही है। इन चारो रूपो मे परस्पर घनिष्ट सम्बन्ध है। लोक-कथा का आधार भी प्राय कोई ऐतिहासिक व्यक्ति अथवा घटना होती है और घटना सयोजन मे कल्पना का प्रमुख हाथ रहता है। अत: कथानको के इन चार प्रकार के रूप-भेदो का आधार उक्त तत्वो मे से किसी एक तत्व की बहुलता है। लोयल महोदय ने लोक-कथा, ऐतिहासिक तथ्य एव कल्पना-तत्व के पारस्परिक सम्बन्ध को व्यक्त करते हुए लिखा है कि आख्यान अथवा गाथा मे कथा-तत्व और कल्पना-तत्व के साथ ऐतिहासिक तथ्य का काफी समावेश होता है। यही ही नही, कथा और कल्पना का मूल-बिन्दु ऐतिहासिक तथ्य अथवा घटना होती है। इस लेखक का यह भी मानना है कि धर्म-गाथा का जब जन्म हुआ उस समय मनुष्य इतिहास और कल्पना-कथा मे भेद करना नही जानता था। अत उन कथाओ मे जो धर्म-गाथाओ के रूप मे हमे प्राप्त हुई है, इतिहास का बिन्दु भी है और लोक-गाथाओ का भी। दोनो का जन्म साथ २ हुआ है। बाद मे इतिहास कथा से अलग होता गया और कथा इतिहास से। लोक-साहित्य के

धुरन्धर विद्वान डा० सत्येन्द्र या लोयल महोदय के इस कथन की पुष्टि करते हुए लिखते है कि ऐतिहासिक तथ्य कितना ही लघु क्यो न हो, उसी लघु बिन्दु पर से कल्पना के पुट से गाथा का रूप खडा हुआ है।'[1] ऐन साइक्लो पीडिया ब्रिटानिका मे भी लोक-गाथा तथा इतिहास के परस्पर के घनिष्ठ सम्बन्ध को व्यक्त किया गया है।[2]

कथानको के पौराणिक रूप मे लोक-कथा तत्वो की बहुलता रहती है। लोक-कथा और पौराणिक कथाओ मे केवल इतना ही अन्तर है कि लोक-कथा मे यदा-कदा देवी-देवता का वर्णन कथानक रुढि के रूप मे होता है, जबकि पौराणिक कथा मे कथा-चक्र अनेक चरित्र-वर्णन पर आधारित होता है।

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से हम इस निष्कर्ष पर पहुचते है कि कथानको के मूल स्रोतो के आधार की दृष्टि से उल्लिखित चार-भेद एक दूसरे से घनिष्ट रूप से सम्बन्धित है।

यहा हम मुख्यत लोक-कथात्मक, पौराणिक एव ऐतिहासिक स्त्रोत वाले कथा-रूपो की परम्पराओ का अनुसधान एव उनकी कथा-वस्तुओ के विकास के चरण आदि का अध्ययन प्रस्तुत करेगे।

१. लोक-कथा स्त्रोत वाले प्रेमाख्यान :

इस प्रकार के प्रेमाख्यानो के कथानको का मूलाधार प्रचलित लोक-कथा होती है। डा० सत्येन्द्र के शब्दो मे इन लोक-कथाओ का आधार लोक-मानस होता है। इनमे हमारी आदिम मनोवृत्तिया, आस्था और विश्वास वशानुक्रम से सचरित होती रहती है। इस प्रकार ये हमारे सास्कृतिक इतिहास, आदिम मानव की मनोवृत्तियो उनकी आस्थाओ और विश्वासो, रीति-रिवाजो और सामाजिक सस्थाओ के अध्ययन की दृष्टि से बडी महत्वपूर्ण होती है। लोक-साहित्य के सुप्रसिद्ध पाश्चात्य

---

१. डा० सत्येन्द्र . लोक साहित्य का विज्ञान, पृ. स. ७१।

२. Lengend May be said to be the distorted history. It contains a nucleus of historical fact, the memories of which have been elaborated or distorted by acceretious derived from myth or from stories of oui third kind

मनीषी श्री स्टिथ थामसन ने लोक-कथाओ की महत्ता को व्यक्त करते हुए उन्हे मानव जाति के सास्कृतिक इतिहास का महत्वपूर्ण भाग बतलाया है ।[१]

इन लोक कथाओ के क्षितिज का विस्तार भी बहुत व्यापक होता है । देश, काल के अनुरूप वातावरण एव मानसिक स्थितियो की भिन्नता के फलस्वरूप एक ही लोक-कथा के अनेक रूपान्तर हो जाते है । इस दृष्टि से "भारतीय लोक-कथाओ का तो अपना विशिष्ट महत्व है । उनकी प्रवृत्तियो के सम्बन्ध मे यह बात प्रसिद्ध है कि उनके प्रमुख लक्षणो की पुनरावृत्ति प्राय अन्य-कथाओ मे होती रहती है । वास्तव मे यह एक सच्चाई है । पजाब, बगाल, बिहार, राजस्थान, महाराष्ट्र, मेवाड अथवा मालवा आदि स्थानो मे पाई जाने वाली लोक-कथाओ मे अनेक कथाये एक दूसरे से वस्तु, पात्र, चित्रण और शैली में सादृश्य रखती हैं ।"[२]

लोक-कथाओ की लोक-प्रियता, उनकी जीवन-शक्ति, जन-मानस को सहज रूप से आकर्षित करने की शक्ति एव व्यापकता को दृष्टि मे रखकर ही राजस्थानी के प्रेमाख्यानकारो ने अपने कथानको का आधार लोक-कथाओ को बनाया । लोक-कथाओ के आधार पर रचे गये प्रेमाख्यानो का उल्लेख प्रथम अध्याय मे किया जा चुका है । यहा हम राजस्थानी के कुछ प्रमुख लोक-कथात्मक प्रेमाख्यानो के कथानको का मूल स्रोत और परम्परा का अनुसधान तथा उन कथा-वस्तुओ के विकास के चरण आदि की दृष्टि से अध्ययन करेगे ।

१. चित्रसेन पद्मावती रतनसार मंत्री चौपई एवं फूलमती री वारता

एक लोक-तात्विक अध्ययन :

लोक साहित्य के प्रसिद्ध मनीषी, डा० सत्येन्द्र ने राजवल्लभ कृत 'चित्रसेन

---

१ "The Folk tale is an important part of the cultural history of the race The anthropologist and all students of human institutions should be able to use the growing mass of life histories of Various tales to clarify their own findings. The greater the number of the stories which they understand thoroughly, the clearer and more accurate becomes their View of the entire intellectual and elsthetic life of man."
—The Folk tale-By Stith Thomson, P. 448,

२ डा० श्याम परमार : भारतीय लोक साहित्य, पृ. स. १६७ ।

पद्मावती कथा' का लोक-तात्विक अध्ययन बडे विस्तृत रूप से प्रस्तुत किया है।[१] इस कृति का परिचय श्री नाहटा जी ने नागरी प्रचारिणी पत्रिका में दिया था।[२] इसकी एक हस्तलिखित प्रति रा प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर मे उपलब्ध है। यह एक वहुचर्चित लोक-कथा पर आधारित रचना है। इस लोक-कथा के मूल रूप को पाश्चात्य विद्वानो ने वहुत प्राचीन, लगभग ईसा से दो सहस्त्र वर्ष पूर्व का वताया है। राजवल्लभ ने यह रचना सस्कृत मे लिखी थी।[3] किन्तु इस कथा का राजस्थानी रूप, मुनि राम विजय कृत 'चित्रसेन पद्मावती रतनसार मत्री चौपई'[४] उपलब्ध हुआ है और एक अन्य रूप 'फूलमती री वारता'[५] के नाम से भी उपलब्ध हुआ है।

डा० सत्येन्द्र ने इस लोक-कथा के विविध प्रादेशिक-रूपो का भी उल्लेख किया है।[६] ब्रज मे यह कहानी 'यारू होय तो ऐसो होय' के रूप मे प्रचलित है तो बुन्देल खण्ड मे 'मित्रो की प्रीति' नाम से। इस कथा का सवसे प्राचीन लिखित रूप हमे सोमदेव कृत कथा सरित्सागर मे 'मदन मचुका' शीर्षक छठे खण्ड के अट्ठाइसवे अध्याय मे राजकुमार और सौदागर की कहानी के रूप मे मिलता है।[७] कथा सरित्सागर गुणाड्य कृत पैशाची भाषा मे लिखी गई 'वड्ड कहा' का सस्कृत भाषा मे किया गया रूपान्तर है। गुणाड्य राजा सातवाहन की राजसभा का कवि था। विभिन्न इतिहासकारो के मत से सातवाहन वश की स्थापना का समय २७१ वर्ष

---

१. (क) डा० सत्येन्द्र : लोक साहित्य का विज्ञान, पृ स ३०१ से ३१३ तक।
   (ख) डा० सत्येन्द्र मध्ययुगीन हिन्दी साहित्य का लोकतात्विक अध्ययन, पृ स. १६५ से १८५।

२ नागरी प्रचारिणी पत्रिका, अ क १, वर्ष ५६, स २०११ मे श्री अगरचन्द नाहटा का लेख।

३. चित्रसेन पद्मावती कथा (ह. लि) रा प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रथाक १४६३५, पत्र सख्या २०, लि का स १६७६।

४. चित्रसेन पद्मावती रतनसार मत्री चौपई (ह. लि.) रा० प्रा० विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्र थाक २८९७२, पत्र सख्या १२।

५. फूलमती री वारता (ह. लि) राजस्थानी शोध सस्थान, जोधपुर।

६. लोक-साहित्य का विज्ञान डा० सत्येन्द्र, पृ स ३०१ से ३०६।

७. सोमदेव कृत कथा सरित्सागर का हिन्दी रूपान्तर श्री गोपालकृष्ण, पृ. ११४-११५।

ईसा पूर्व से ७२ ई. पूर्व ठहरता है।[1] अत इस लोक-कथा के लेख-वद्ध रूप की साक्षी आज से लगभग दो सहस्त्र पूर्व की मिलती है। इससे यह विदित होता है कि इस लोक-कथा की मौखिक परम्परा और भी प्राचीन रही होगी।

सर जी काक्स महोदय ने 'माइथालाजी ऑव दि आर्यन नेशन्स' मे इस कहानी पर विस्तार से विचार किया है और वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे है कि इस कहानी का मूल ढाँचा इतिहास पूर्व युग मे उस समय निर्मित हुआ होगा जब आर्यन लोग अपने मूल निवास स्थान मे रहते होगे और योरोप तथा भारत मे फैले नही होगे। इस दृष्टि से इस कहानी का जन्म-काल दूर अतीत-काल मे चला जाता है जबकि आधुनिक आर्य जातियो की सभ्यता का नाम भी नही था। इसका सकट विषयक मूल अभिप्राय ई० २००० वर्ष पूर्व मिश्र मे प्रचलित था।[2]

यह लोक-कथा इतनी लोक-प्रिय रही है कि देशकालोचित परिवेश के के अनुरूप यह विभिन्न रूपो में पाश्चात्य देशो मे भी प्रचलित थी। इस कहानी का मौखिक रूप ग्रिम के द्वारा सग्रहित जर्मन कहानियो मे 'देरट्रिपुई जोहेन्नेस' मे मिलता है। अग्रेजी मे इसे 'फेथफुल जोह्न' नाम दिया है। यह पेन्टा मेरोन (Penta merone) मे 'दक्रो' नाम से है। 'बर्नार्ड स्किमृदत' के 'ग्रिस्करये मार्वे' मे तीसरी सख्या की कहानी इसी के अनुरूप है। यह कहानी माइरई (Moırei) है। इसमे भावी सकटो की सूचना मिलनी है। राजकुमारी की बहिन, राजकुमार को बचपन मे जलने से तथा गिरने से बचाती है और विवाह के दिन सर्प से रक्षा करती है।[3] पेड्रोसो के पोर्तुगीज 'फोकटेल्स' मे भी ऐसी कहानी है। इस कहानी के समस्त उपलब्ध रूपो पर विचार करके स्टिथ थामसन ने इसका जो आदर्श रूप खडा किया है, वह अपनी पुस्तक 'द फोक टेल' मे दिया है। उसने सबसे आरम्भ मे लिखा है—'समस्त लोक कहानियो मे सबसे अधिक रोचक एक है'—स्वामीभक्त जोह्न' (५१५वी कोटि की कहानी) जिसका सम्बन्ध एक नौकर की स्वामी भक्ति से है, यद्यपि इस कहानी मे, कुछ संस्करणो मे कभी नौकर के स्थान पर भाई, धर्म भाई अथवा हितू मित्र का उल्लेख मिलता है।[4] बेन्फी ने इस कहानी को हितोपदेश

---

१. आन्ध्र सातवाहन साम्राज्य का इतिहास श्री चन्द्रभान पाण्डेय, पृ स ११ से १६।

२ लोक-साहित्य का विज्ञान : डा० सत्येन्द्र, पृ स. ३०७।

३ दी स्टैण्डर्ड डिक्सनरी ऑव फोक लोर, पृ ३३६।

४ लोक-साहित्य का विज्ञान डा० सत्येन्द्र, पृ. स. ३०७।

के स्वामीभक्त सेवक वीरवर के तुल्य माना है। यह वीरवर की कहानी वैताल पच विशति तथा कथा सरित्सागर मे भी मिलती है।[1]

उपर्युक्त विवेचन से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते है कि यह लोक-कथा अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इस कहानी के मूल अभिप्राय स्वामी-भक्त सेवक का जन्म भारत मे ही हुआ था और यह लगभग दो हजार तथा इससे भी पूर्व भारत से योरोप गया। लोक-वार्ता-तत्व अन्वेषक श्री राञ्च (Rosch) काल क्रोह्य महोदय ने भी इसी तथ्य की पुष्टि की है।[2]

इस कथा-वस्तु के विकास के चरण :

जिस प्रकार एक जीवित भाषा के प्रक्रिया के आगम, लोप, स्थानापन्न, विपर्ययता आदि अनेक कारण होते है और भाषा विकासमान होती चलती है, उसी भाँति कथाकार की मानसिक भिन्नता के आधार पर इसी प्रकार के अनेक कारणो से कथा-वस्तु का विकास होकर एक ही कथा के अनेक रूपान्तरण हो जाते है। पाश्चात्य लोक-तत्व-वेत्ता ऐण्टी आर्ने और एडरसन ने कहानी के परिवर्तन और परिवर्धन के कारणो का विस्तृत निरूपण किया है, जिनमे कहानी की किसी कडी का छूट जाना (लोप) आदि और अन्त मे ऐसी कडी जोड देना जो मूल मे नही है (आगय), मूल या अक्षर-कथा के तन्तुओ को दोहराना, सामन्य से विशेषीकरण, विशेषीकरण से सामन्यीकरण, किसी अन्य कहानी की सामग्री को सयुक्त कर देना, चरित्रो का विपर्यय आदि अनेक कारण सम्मिलित हैं।

चित्रसेन पद्मावती की कथा-वस्तु के विकास परिवर्तन एव परिवर्धन मे भी मूलत· यही कारण काम करते है। मुख्य रूप से इस कथा-वस्तु के चार लिखित रूपान्तरण मिलते हे जो कालक्रमानुसार निम्नलिखित है —

(अ) कथा सरित्सागर मे वर्णित 'राजकुमार और सौदागर के पुत्र की मित्रता' वाला रूप। रचना-काल, ११वी शती का उत्तरार्द्ध।

(ब) राजबल्लभ कृत 'चित्रसेन पद्मावती कथा' काव्य का कथा-रूप। लिपिकाल सवत् १६७६।

(स) राजविजय कृत 'चित्रसेन पद्मावती रतनसार मत्री चौपई' नामक राजस्थानी प्रेमाख्यान का कथा-रूप। रचना-काल स० १८१४.

---

१. सोमदेव कृत कथा सरित्सागर रूपान्तरकार—गोपालकृष्ण कौल, पृ. स. २०६।

२. लोक-साहित्य का विज्ञान डा० सत्येन्द्र, पृ. स. ३१२।

(द) 'फूलमती री वारता' नामक राजस्थानी लोक-कथा का कथा-रूप। रचना-काल १९वी शती।

उपर्युक्त चार कथा-रूपो मे से प्रथम दो कथा रूप—'अ' और 'ब' की कथा-वस्तु के विकास की तुलनात्मक व्याख्या डा० सत्येन्द्र ने अपने ग्रथ 'लोक साहित्य का विज्ञान' एव मध्यकालीन हिन्दी-सातिय का लोक-तात्विक अध्ययन मे प्रस्तुत की है। राजस्थानी भाषा के प्रेमाख्यानो की खोज करते समय 'स' और 'द' कथा-रूप और उपलब्ध हुए है। इन चारो कथानको का यहाँ तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया जारहा है :—

'चित्रसेन पद्मावती रतनसार मंत्री चौपई' प्रेमाख्यानों की कथा-वस्तु के अ, ब, स, द का तुलनात्मक-अध्ययन

(अ) कथा-रूप	(ब) कथा-रूप	(स) कथा-रूप	(द) कथा-रूप
१. पुष्करावती के राजा गुहसेन के पुत्र और सौदागर ब्रह्मदत्त के पुत्र मे मित्रता।	१. कलिंग के राजा वीरसेन के पुत्र चित्रसेन की मत्री बुद्धिसार के पुत्र रत्नसार से मित्रता।	१ कलिंग के राजा वीरसेन के पुत्र चित्रसेन की मत्री सुत रतनसार से मित्रता।	१. एक राजकुमार की मत्री के पुत्र उत्तमचन्द से मित्रता।
२. दोनो विवाह के निमत्त यात्रा करते हुए मार्ग मे एक नदी किनारे ठहरते है।	२. (क) चित्रसेन की सुन्दरता के कारण जनता परेशान अत चित्रसेन का राज्य से निष्कासन, मत्री पुत्र भी साथ।	२ राजकुमार रतनसार के साथ वन मे एक राजकुमारी के चित्र को देखकर मोहित होता है और उसे प्राप्त करने के लिए स्वयवर में पहुचकर तथा धनुप से निर्दिष्ट लक्ष्य वेध कर राजकुमारी से विवाह करता है।	२ (क) राजकुमार अपने मित्र उत्तमीचन्द के साथ वन मे शिकार खेलने जाता हे और वहा वावडी को भीत पर एक सुन्दर स्त्री का चित्र देखकर मोहित हो जाता हे।
	(ख) रात्रि मे किन्नरियो की ध्वनि सुनकर ऋपभदेव के मन्दिर मे जाता है तथा		(ख) राजकुमार उसे प्राप्त करने के लिए प्रयत्न करता है। उसे पता चलता है कि वह

(अ) कथा-रूप	(ब) कथा-रूप	(स) कथा-रूप	(द) कथा-रूप
	वहा एक पुतली को देखकर उस पर मोहित ।		राजकुमारी फूलमती है जो फूलो से तुलती है ।
	(ग) एक ज्ञानी मुनि वहा आये और उनसे पता चला कि यह पुतली पद्मपुर के राजा पद्मरथ की पुत्री पद्मावती है ।		(ग) वह पुरुष-द्वेषणी है, क्योकि पूर्व जन्म मे जब वह सुवटी थी, तब सुवटे ने उसे धोखा दिया था ।
	(घ) वह पुरुष-द्वेषणी है । पूर्व-भव मे हस हंसी थे । हस की दुष्टता से पुरुषो के प्रतिद्वेष दूर करने का उपाय पूर्व जन्म की घटना का चित्र बनाकर हस के प्रति द्वेषभाव दूर किया जाने पर पुरुष-द्वेष त्यागना तथा चित्रसेन को पद्मावती की प्राप्ति ।		(घ) राजकुमार पूर्व जन्म का चित्र बनवाकर चित्रकार बनता है और फूलमती के पूर्व-जन्म का सन्देह मिटाकर उसका पुरुष के प्रति द्वेषभाव का अन्त करता है और फूलमती को विवाह मे प्राप्त करता है ।
३. वहा एक कहानी कहते-कहते राजकुमारी कहानी अधूरी	३. पद्ममावती को साथ लेकर लौटते समय मार्ग मे	३, राजकुमार को साथ लेकर लौटते समय मार्ग मे	३ लौटते समय मार्ग मे राजकुमार और राजकुमारी

(अ) कथा-रूप	(ब) कथा-रूप	(स) कथा-रूप	(द) कथा-रूप
छोडकर सो जाती है।	विश्राम करते हुए पद्मावती और राजकुमार सो जाते हैं।	विश्राम करते हुए राजकुमार और पद्मावती सो जाते हैं।	विश्राम करते हैं।
४. सौदागर-पुत्र जागता रहता है। वह दो क्रुद्ध आवाजे सुनता है कि कहानी अधूरी छोड देने के दण्ड स्वरूप इसे—	४. मत्री-पुत्र जागता रहता है। वह वृक्ष पर यक्ष-यक्षणी की वाते सुनता है कि इसकी विमाता आगयी है। वह इसे मारने के तीन उपाय करेगी—	४. मत्री-सुत जागता रहता है। वह भविष्यवाणी सुनता है कि—	४. मार्ग मे उत्तमीचन्द को चकवे-चकवी की वार्ता से राजकुमार पर आने वाले सकटो का पता चलाता है।
(क) हार दिखायी पडेगा जिसे यह पहिन लेगा तो गला घुट जायगा और मर जायगा, किन्तु इससे वच जाने पर—	(क) नगर प्रवेश से पूर्व एक दुष्ट घोडा भेजेगी।	(क) दुष्ट घोडे पर राजकुमार वैठेगा तो घोडा उसे लेकर भाग जायेगा और राजकुमार की मृत्यु होगी।	(क) मार्ग मे हीरो का कोडा दृष्टिगोचर होगा। यदि राजकुमार उसे उठा लेगा तो वह साप वनकर उसे डस लेगा। यदि इस संकट से वच गया तो—
(ख) एक आम खायेगा और मर जायेगा, किन्तु इससे भी वच जाने पर,	(ख) मत्र से नगर-प्रवेश पर द्वार गिराकर मृत्यु।	(ख) द्वार मे प्रवेश करते समय द्वार गिरने से वह मरेगा। यदि इससे वच गया तो—	(ख) तालाव के किनारे वट-वृक्ष के नीचे विश्राम करेगा और वट वृक्ष के गिरने से उसकी मृत्यु हो जायगी। यदि इस सकट से वच गया तो –

(अ) कथा-रूप	(ब) कथा-रूप	(स) कथा-रूप	(द) कथा रूप
(ग) विवाह के समय घर मे प्रवेश करते समय द्वार गिर पडने से दबकर मर जायगा। यदि इस दुर्घटना से भी बच गया तो—	(ग) विष निर्मित भोजन (लड्डू) खाकर मृत्यु तथा इन सबसे बच निकले तो—	(ग) विष के (लड्डू) खायेगा और उससे मरण होगा। यदि इससे भी बच गया तो—	(ग) शयनागार मे सोते समय राजकुमारी के कपोल पर, छत पर से विषैला कीट पडेगा और चुम्बन लेते समय उस विष से राजकुमार की मृत्यु हो जायगी। कीट साप बनकर चल देगा।
(घ) रात्रि मे शयन-कक्ष मे आने पर सौ बार छीकेगा और यदि वहा उपस्थित कोई व्यक्ति इसके लिए इतनी ही बार 'ईश्वर रक्षा करे' नही कहेगा तो यह मर जायगा।	(घ) रात्रि मे सर्प डस लेगा।	(घ) सर्प के डसने से मृत्यु होगी। यदि इन सब दुर्घटनाओ से बच गया तो वह विघ्न बाधा रहित राज्य का भोग करेगा।	(घ) जो व्यक्ति इन बातो को सुनता होगा, वह इन बाधाओ को टाल देगा, किन्तु रहस्य प्रकट करने पर पत्थर का हो जायगा।
(ङ) जो व्यक्ति हमारे बातें सुनकर उसे रक्षार्थ भेद बतायेगा वह भी मर जायगा।	(ङ) जो व्यक्ति सुन लेगा और बातें प्रकट कर देगा, वह पत्थर का हो जायगा।	(ङ) जो व्यक्ति यह बाते सुन रहा होगा और इस रहस्य को प्रकट कर देगा तो वह पत्थर का हो जायगा।	
५. सौदागर-पुत्र चारो	५ मत्री पुत्र राजकुमार	५ मत्री सुत इन सकटो	

(अ) कथा-रूप	(ब) कथा-रूप	(स) कथा-रूप	(द) कथा-रूप
सकटो से राजकुमार की रक्षा करता है। अन्तिम बार रक्षा करने के लिए वह राजकुमार के पलग के नीचे लेटा रहता है।	की चारो सकटो से रक्षा करता है।	से राजकुमार की रक्षा करता है।	इन सकटो से रक्षा करता है।
६. 'सौ बार, ईश्वर रक्षा करे' कह चुकने पर वह चुपचाप जाने लगता है, किन्तु राजकुमार उसे देख लेता है।	६ सर्प के विष की बूद पद्मावती की जाघ पर जा पडती है। मत्री द्वारा उसे पोंछते समय चित्रसेन देख लेता है।	६. सर्प के विष की बूंद राजकुमारी की जाघ पर जा पडती है। जब मत्री-सुत उसे हानिकारक समझकर पोंछने लगता है तो राजकुमार जाग पडता है और उसे मत्री-सुत पर दुराचरण का सन्देह हो जाता है।	६. सोते समय राजकुमारी के कपोल पर विषैला कीट छत पर से गिर पडता है, तब उत्तमीचद के द्वारा विषैला कीट हटाते समय राजकुमार जाग जाता है और उसके चरित्र पर सन्देह करता है।
७ सौदागर-पुत्र के चरित्र पर सन्देह हो जाने पर राजकुमार उसे प्राण-दण्ड की आज्ञा देता है।	७. चित्रसेन राजकुमारी के शरीर पर हाथ रखने का कारण जानना चाहता है।	७ राजकुमार मत्री-सुत से अपने इस अनुचित कार्य का कारण जानना चाहता है।	७. राजकुमार उत्तमीचद से इस तरह छिपकर राजकुमारी के कपोल छूने का कारण जानना चाहता है।
८. तब मित्र उसे सब रहस्य	८ विवश हो मत्री को	८. राजकुमार के विवश	८. राजकुमार के विवश

(अ) कथा-रूप	(ब) कथा-रूप	(स) कथा-रूप	(द) कथा-रूप
समझाता है और सभी प्रसन्न होकर रहते हैं।	रहस्य प्रकट करना पडता है और पत्थर का हो जाता है।	करने पर मत्री-पुत्र घुडसाल मे जाकर रहस्य प्रकट करता है और पत्थर का हो जाता है।	करने पर उत्तमीचन्द सब रहस्य प्रकट करता है और पत्थर का हो जाता है।
	६. कुछ वर्ष बाद पद्मावती के पुत्र होने पर जब वह गोद मे बालक को लिए, मत्री-पुत्र की प्रस्तर-प्रतिमा को स्पर्श करती है तो वह पुनर्जीवित हो जाता है।	६. कुछ वर्ष बाद पद्मावती के पुत्र होता है। वह अपनी गोद मे पुत्र को लेकर घुडसाल मे जाती है और रतनसार की पत्थर की मूर्ति को छूती है तो वह पुनर्जीवित हो उठता है।	६ एक दिन राजकुमार घुडसाल मे जाता है और उत्तमीचन्द की प्रस्तर-प्रतिमा से सिर टकराने पर उसके रक्त की बूंद प्रतिमा पर पड जाती है और वह पुनर्जीवित हो उठता है।

—:०:—

उक्त चार कथा-रूपो की तुलना करने पर हम इस निष्कर्ष पर पहुचते हैं कि कथा-रूप 'ब' और 'स' समान है। केवल कथा-रूप 'ब' के क्रमाक २ का विवरण कथा-रूप 'स' के इसी क्रमाक से विस्तृत है। इसमे नायिका का पुरुष-द्वेषिणी होना तथा उसके पूर्व-जन्म का वृतात कथा-रूप 'द' के समान है। कथा-रूप 'ब' मे भावी सकटो की भविष्यवाणी यक्षणियाँ करती है जो जैन कथानक-रूढि है। कथा-रूप 'द' मे यह कार्य चकवा-चकवी के द्वारा होता है। पक्षियो का वार्तालाप, यक्षणियो द्वारा भविष्यवाणी से वहुत प्राचीन है। यह सम्भवत पचतत्र के रचना-काल से भी वहुत प्राचीन 'वौद्ध जातको' की देन है। तीन सकटो वाली वाधा (जो वस्तुत चार सकट है) कथा-रूप 'ब' और 'स' मे समान है। किन्तु, 'अ' कथा-रूप मे द्वार गिरने से तथा साप से मृत्यु के अतिरिक्त दो सकट (क) और (ख) भिन्न है। कथा-रूप 'द' मे तो केवल तीन ही सकट हैं जो वस्तुत 'तीन-सकट' के प्राचीन अभिप्रायको सार्थक करता है। इसमे साप से मृत्यु का सकट दो वार आया है। कथा-रूप 'अ' मे साँप से मृत्यु के स्थान पर 'सौ वार छीकने और उतनी ही वार रक्षा करे' का वर्णन है जो इस कथा-रूप पर शैवमत के प्रभाव का द्योतक है। केवल कथा-रूप 'अ' को छोडकर शेष सर्व कथा-रूपो मे रहस्य खोलने पर राजकुमार के मित्र का पत्थर हो जाना लिखा है। कथा-रूप 'ब' और 'स' मे मत्रीसुत नायिका के वालक होने पर उसके स्पर्श से पुनर्जीवित होता है जो जैन-मोटिक है, पर कथा-रूप 'द' मे राजकुमार के रक्त की बू द गिरने पर जीवित होना—रक्त लेप से प्राण-सचार—आदिम-मानव के विश्वास की देन है। यह कथा-रूप 'ब' और 'स' के क्रमाक ६ मे उल्लिखित 'मोटिफ' से अधिक प्राचीन है। इस प्रकार कथा-रूप 'ब' मे अन्य कथा-रूपो की अपेक्षा निम्नलिखित लोक-कथा-तत्व अधिक प्राचीन मिलते हैं —

(१) **वर्जित स्थान, किसी वावड़ी पर राजकुमारी का चित्र देखना और उस पर मुग्ध होना :** यह चित्र-दर्शन का 'मोटिफ' अत्यन्त प्राचीन है। जर्मन लोक-कथा 'फैथफुल जौह्न' राजकुमार वर्जित-कक्ष मे राजकुमारी का चित्र देखकर मोहित होता है।

(२) **चकवा-चकवी के वार्तालाप द्वारा भावी-सकटों की भविष्यवाणीयां :** पक्षियो द्वारा भविष्यवाणी वाला मोटिफ ब्रज लोक-कथा, (यार होय तौ एसौ होय) जर्मन लोक-कथा 'फैथफुल जौह्न' (कव्वे द्वारा भविष्यवाणी) व दक्षिण की लोक-कथा राम-लक्षमण (उल्लूओ द्वारा भविष्यवाणी) मे भी मिलता है।

(३) **तीन सकटो वाला मोटिफ :** कथा-रूप 'द' के तीन सकट वाले मोटिफ के समान इस मोटिफ का उल्लेख जर्मन-लोक कथा 'फैथफुल जौह्न' तथा दक्षिण

भारत की लोक-कथा 'राम-लक्ष्मण' मे भी है, जबकि ब्रज-लोक-कथा और बगाल की लोक-कथा में चार सकटो का उल्लेख है। इनमे साप के द्वारा मृत्यु वाला मोटिफ जर्मन-लोक-कथा को छोडकर सब कथा-रूपो मे मिलता है। कथा-रूप 'द' की भाँति 'वट-वृक्ष के गिरने से मृत्यु' वाला सकट ब्रज लोक-कथा, दक्षिण की लोक-कथा राम-लक्ष्मण मे समान रूप से मिलता है। द्वार गिरने से मृत्यु, हाथी, घोडा से मृत्यु, विषमय भोजन से मृत्यु, जर्मन लोक-कथा मे 'वैवाहिक-कमीज पहिनने से नृत्यशाला मे मृत्यु' आदि के सकट से सम्बन्धित मोटिफ्स—प्रथम, द्वितीय एव तृतीय सकट के रूप मे हेर-फेर के साथ विद्यमान है और अन्तिम सकट—'साँप से मृत्यु' का मोटिफ तो जर्मन लोक-कथा को छोडकर सब लोक-कथाओ मे समान रूप से मिलता है।

(४) **मित्र के द्वारा रहस्य खोलने पर पत्थर का हो जाना :** यह मोटिफ (कथा-सरित्सागर के कथा-रूप को छोडकर) उक्त सब लोक-कथाओ मे मिलता है।

(५) **रक्त-लेप से मित्र का पुनर्जीवित होना :** यह मोटिफ अपने विभिन्न रूपो मे (जर्मन लोक-कथा को छोडकर; इस कहानी मे राजकुमारी के स्तन से रक्त की बून्दे निकालने पर जीवित होने का वर्णन है) उक्त सब लोक-कथाओ में मिलता है।

इस प्रकार हम देखते है कि 'फूलमती री वारता' नामक राजस्थानी लोक-कथा अपने मूल रूप के अधिक निकट है। इसके आधार पर इस लोक-कथा के मूल रूप की कल्पना निम्नलिखित रूप मे की जा सकती है —

(१) एक राजकुमार और उसका एक मित्र।

(२) दोनो साथ २ रहते हैं।

(३) राजकुमार वर्जित—स्थल पर जाकर किसी राजकुमारी का चित्र देखकर मुग्ध हो जाता है।

(४) वह अनेक बाधाओ को पार करके राजकुमारी को प्राप्त करता है।

(५) राजकुमारी को लेकर लौटते समय राजकुमार का मित्र पक्षियो के वार्तालाप से आने वाले सकटो के विषय मे भविष्यवाणी सुनता है। (यह सकट मुख्य रूप मे शयनागार मे साँप द्वारा काटने का है)

(६) जो कोई व्यक्ति भविष्यवाणी को सुनता होगा, यदि वह इसका रहस्य प्रकट करेगा तो पत्थर का हो जायेगा।

(७) मित्र राजकुमार की सकटो से रक्षा करता है, किन्तु अन्तिम सकट से रक्षा करते समय राजकुमार को अपने मित्र के चरित्र पर सन्देह हो जाता है और उसे रहस्य खोलना पड़ता है।

(८) रहस्य खोलने के बाद वह पत्थर का हो जाता है।

(९) रक्त-लेपन से राजकुमार का मित्र पुनर्जीवित हो जाता है।

देश कालोचित वातावरण तथा सस्कृति के अनुरूप एव कथाकार की मानसिकता, उसकी मान्यताये एव विश्वासो के अनुसार इस मूलकथा का विकास होकर उपर्युक्त वर्णित अनेक कथा-रूप प्रचलित हो गये है।

२. चन्द्रराज चरित्र एवं राजा चन्द प्रेमलालछी री वात ·

राजा चन्द और प्रेमलालछी की प्रेम-परक लोकवार्ता न केवल राजस्थान मे ही अपितु उत्तरी भारत मे भी बहुत प्रचलित एव लोकप्रिय रही है। राजस्थानी मे इसके अनेक कथा-रूप मिलते है। इसका एक कथा-रूप 'राजा चन्द री वात' व्रज-भारती के अंक सख्या ४–५–६ वर्ष ४ सवत् २००३ मे प्रकाशित हो चुका है। डा० सत्येन्द्र ने अपने शोध-प्रबध—'मध्यकालीन साहित्य का लोकतात्विक अध्ययन' मे इस कथा-रूप को लेकर इसके साथ अन्य प्रान्तो मे पाये जाने वाले कथा-रूप, यथा–पजाब की लोक-वार्ता 'राजा नेकवख्त की कहानी' तथा बगाल की लोकवार्ता 'सत्यपीर भक्त की कहानी' के साथ तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया है।[1] राजस्थानी प्रेमाख्यानो की खोज के समय प्रस्तुत 'चन्द्रराज चरित्र'[2] अजमेर मे उपलब्ध हुआ है जो इसी लोक-कथा पर आधारित एक चरित्रात्मक प्रबन्ध-काव्य है। काव्य-ग्रथ होने से कवि की कल्पना का सहारा लेकर इसमे भूमिका-कथाओ, सयोजक-कथाओ और अन्तर्कथाओ के अतिरिक्त काव्य-सौष्ठवपूर्ण वर्णनो की बहुलता से इसका आकार विस्तृत हो गया है। इसके अतिरिक्त 'राजा चन्द प्रेमलालछी री वात'[3] और 'राजा चन्द री वात'[4] ये दो कथा-रूप जोधपुर तथा सरस्वती भण्डार, उदयपुर मे उपलब्ध है जो चारणी-कलम की देन है। इस प्रकार राजस्थानी मे इस लोकवार्ता के यही प्रमुख चार कथा-रूप है जिनका साकेतिक नाम 'अ', 'ब', 'स', 'द' देना उचित रहेगा। इनमे से प्रथम दो जैन मुनियो द्वारा रचित धार्मिक-उपदेश के लिए

---

१ मध्ययुगीन हिन्दी—साहित्य का लोकतात्विक अध्ययन, देखिये—पृ स २०३ से २०७।

२ चन्द्रराज चरित्र (ह लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर। देखिये—प्रथम अध्याय, पृ. स. ६१।

३. राजा चन्द प्रेमलालछी री बात देखिये—प्रथम अध्याय, पृ स १०५।

४ राजा चन्द री बात (ह. लि) सरस्वती भण्डार, उदयपुर, ग्र थाक ७०३ (२१) प. ५१ से ६६ तक, लिपिकाल स १८२३।

है, जबकि शेष दो चारणकालीन सस्कृति, उसके विश्वासो को समाहित किये हुए है और जिनका उद्देश्य मात्र विशुद्ध मनोरजन है ।

इस लोक-कथा की प्राचीनता :

श्री अगरचन्द नाहटा ने राजा चन्द की वात विषयक कई ग थो का उल्लेख 'व्रज-भारती' मे प्रकाशित अपने लेख मे किया है। उनके अनुसार 'चन्द की कहानी' सम्बन्धी प्राप्त ग्रथो मे सबसे पहला ग्र थ स० १६८९ कार्तिक शुक्ला ५ को बुरहानपुर के शेखपुरे मे लिखा गया था ।[1] इस तथ्य से यह तो निश्चित रूप से पता चलता है कि उक्त लोक-वार्ता उपर्युक्त साहित्यिक रूप प्राप्त करने से बहुत पहले प्रचलित थी । इसके अतिरिक्त राजा चन्द के सभी कथा-रूपो मे राजा चन्द को आभानगरी का शासक बतलाया है और उसकी प्रेमिका प्रेमला को गिरनार की राजकुमारी । केवल कथा-रूप 'ब' (चन्द्रराज-चरित्र) मे गिरनार के स्थान पर 'विमलपुरी' लिखा है किन्तु उसकी स्थिति सौराष्ट्र मे ही बतलायी गई है । जनश्रुति के अनुसार राजा चद ऐतिहासिक व्यक्ति है जो ११वी शताब्दी मे विद्यमान था । राजा चन्द की राजधानी आभानगरी राजस्थान के अलवर नगर से कुछ दूर बादीकुई स्टेशन से चार मील दूरी पर एक गाव के रूप मे अब भी विद्यमान है । पुरातत्व विभाग के खनन कार्य मे प्राचीन स्मारको मे एक कुण्ड तथा हर्षमाता का मन्दिर एव अर्धनारीश्वर की मूर्ति प्राप्त हुई हे । यह खनन कार्य डा० केदारनाथ पुरी द्वारा सम्पन्न हुआ था । उनके अनुसार यह स्थान निसन्देह १००० से अधिक वर्ष पूर्व का है और भारतीय कला की अनुपम छाप अपनी मूर्तियो आदि मे रखता है । पुरातत्व सग्रहालय राजस्थान द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'राजस्थानी सस्कृति व कला की कहानी, पत्थरो की जबानी'[2] मे इसके बारे मे लिखा गया है कि '९वी शताब्दी से ११वी शताब्दी तक यह नगर बडी उन्नत दशा मे रहा होगा । यह नगर प्राचीन भारत मे अभय नगरी से सम्बोधित होता था । राजा चन्द के निवास स्थान के सम्बन्ध मे अलवर के समीपवर्ती गाँवो मे यह कहावत बहुत प्रचलित है —

शहर ठठी कर परगना, अलवरगढ के पास ।
वसती राजा चन्द की, आभानेर निकास ।।

---

१. व्रज-भारती (अक स ४, ५, ६ स २००३) मे प्रकाशित 'राजा चन्दर री वात' नामक लेख ।

२ राजस्थानी-सस्कृति व कला की कहानी, पत्थरो की जबानी, प. स १ व २ ।

आभानेर के इसी राजा चन्द पर उक्त लोक-कथा प्रचलित हो चली है। इस बात का पहले ही उल्लेख किया जा चुका है कि ऐतिहासिक व्यक्तियो को लेकर कालान्तर मे प्रचलित लोक-कथानक रूढ़ियो के आधार पर तथा उनमे चमत्कारिक घटनाये जुडकर लोककथाये चल पडती है। प्रस्तुत लोक-कथा भी ऐतिहासिक व्यक्ति राजा चन्द को लेकर, उसके जीवन-काल के सौ, पचास वर्ष बाद चल पडी होगी। इस लोक-कथा का प्रचलन १२वी शताब्दी से पूर्व हो गया होगा। इसमे वर्णित 'वृक्ष का उडना' 'राजा चद को तोता या कूर्कट पक्षी बना देना', आदि मोटिफ तो और भी प्राचीन है और कथा सरित्सागर मे आये है। कथा-सरित्सागर के अध्याय ३ मे वर्णित पाटली-पुत्र की कहानी मे पुत्रक का खडाऊओ को पहिनकर उडना, 'राजा चन्द की बात' मे 'वृक्ष का उडना' नामक मोटिफ के समान ही है।

'चन्द्रराज चरित्र एवं राजा चन्द प्रेमलालछी री बात' के कथा-रूपों का तुलनात्मक-अध्ययन

(अ) कथा-रूप	(ब) कथा-रूप	(स कथा-रूप	(द) कथा-रूप
१. राजा चद का शिकार खेलने जाना तथा मार्ग भूलना और बुढिया (वेहमाता) के पास पहुँचना।	१ (क) आभानगरी का राजा वीरसेन शिकार करते हुए एक घने जगल मे पहुँचता है और वहाँ एक योगी के चुगल मे से राजा पद्मशेखर की पुत्री चन्द्रावली को मुक्त कर उससे विवाह कर लेता है।	१ (क) राजपुर का रुद्रदत्त अपनी पत्नियो के त्रिया-चरित्र से डरकर परदेश जाता है।	१ (क) पानीपत के निवासी एक राजपूत की माँ और पत्नि डायने होती हैं।
	(ख) वीरसेन की पटरानी वीरमती सौतियाडाह वश विद्याधरी को प्रसन्न कर सिद्धियाँ प्राप्त करती है। राजा अपने पुत्र चन्द्र को राज्य सौपकर वन मे चला जाता है।	(ख) मार्ग मे तालाब की पाल पर बैठकर घर से लाया हुआ सत्तू खाना चाहता है। भूखा होने से उस सत्तू को एक ढोली खा लेता है तो वह गधा बन जाता है और रुद्रदत्त की दोनो स्त्रियो के पास पहुँचता है।	(ख) जब राजपूत कमाकर परदेश से घर आता है तब मार्ग मे एक चोर भी उसके साथ हो जाता है और रात्रि मे जब सास-बहू राजपूत को मारने की योजना बनाती है तब चोर उसे सुनकर राजपूत को बतला देता है।

(अ) कथा-रूप	(ब) कथा-रूप	(स) कथा-रूप	(द) कथा-रूप
—	—	(ग) अपनी योजना को विफल जानकर वे दोनो घोडियाँ बनकर रुद्रदत्त को लाने के लिए दौडती है। रुद्रदत्त जान बचाने के लिए अहीरन के घर में घुस जाता है। अहीरन सिंही बनकर घोडियो को भगा देती है।	(ग) राजपूत वहाँ से डरकर परदेश के लिए चल देता है। सास-बहू उसे चूरमा बनाकर देती है जिसे वह एक अतीत को खिला देने पर वह गधा बनकर सास-बहू के पास जाता है।
—	—	(घ) रुद्रदत्त यहाँ से भी डर कर भागता है और आभा-नगरी मे पहुँचता है। राजकुमारी उसके गले में वर-माला डाल देती है।	(घ) राजपूत एक अन्य राजपूत की कन्या से विवाह कर लेता है, किन्तु वह भी डायन निकलती है। सास-बहू जब चीलें बनकर राजपूत पर झपटती है तो वह बिल्ली बनकर उन्हे मार डालती हैं।
—	—	(ङ) रुद्रदत्त की पत्नियाँ यहाँ भी चीलें बनकर उसकी	(ङ) राजपूत के घबराने पर वह राजा चन्द की कहानी सुना

(अ) कथा-रूप	(ब) कथा-रूप	(स) कथा-रूप	(द) कथा-रूप
—	—	आँखे निकालने के लिए झपटती हैं पर राजकुमारी अपने नूपरो को फैंकती है जिससे वह बाज बनकर उन दोनो को मार डालता है।	कर धैर्य बधा देती है।
—	—	(च) रुद्रदत्त यहाँ से भी डरकर भागता है तब राजा उसे बुलाकर समझाता है और राजपूत को भयमुक्त करने के लिए अपनी कहानी सुनाता है।	
२. चन्द की माँ कामरूप-मत्र जानती है। पीपल उडता है, उन्हे गिरनेरी पहुँचाता है और वापस लाता है। पीपल का वृक्ष बाते भी करता है।	२ वीरमती चन्द्र की रानी गुणावली को बहकाती है और दोनो एक पेड पर बैठकर तथा उसे मत्र विद्या से उडाकर विमलपुरी के राजा की कन्या प्रेमला के विवाह मे पहुँचती है। राजा भी वृक्ष	२ राजा चद की रानी तथा माता दोनो मत्र-विद्या से एक वृक्ष पर बैठकर प्रेमलालछी का विवाह देखने गिरनार जाती है। राजा भी उस वृक्ष के कोटर मे बैठकर पहुँच जाता है।	२ राजा चन्द की माता और रानी प्रेमला का विवाह देखने गिरनार जाती है और राजा भी वृक्ष के कोटर में बैठ कर जाता है।

(अ) कथा-रूप	(ब) कथा-रूप	(स) कथा-रूप	(द) कथा-रूप
	के कोटर मे बैठकर पहुँच जाता है।		
३. सुन्दरी कन्या प्रेमलालछी का वर काना है। वास्तविक वर के स्थान पर मावरो के अवसर के लिए चन्द को वर बनाया जाता है।	३ प्रेमलालछी का वर कोढी होता है। भावरो के लिए चन्द्र को दूल्हा बनाया जाता है।	३ प्रेमलालछी का वर कुरूप होता है, अत राजा चद को भावरो के लिए दूल्हा बनाया जाता है। राजा चद प्रेमलालछी की चूनरी पर अपने परिचय का एक छद, लिखकर चले आता है।	३ राजकुमारी प्रेमलालछी का वर काना होता है, अत· भावरो के लिए राजा चन्द को दूल्हा बनाया जाता है। राजा एक दोहा लिखकर आ जाता है।
४ सास-बहू घर जाकर राजा चन्द के शरीर पर जब विवाह के चिह्न देखती है तो भयभीत होती है। बहू राजा को तोता बनाकर पीजडे मे रख लेती है। लीला तागा बाध देती है।	४ सास-बहू को जब राजा चन्द्र के विवाह मे पहुँचने की बात प्रकट होती है तो उन्हे बडा डर लगता है। वीरमती राजा को कूर्कट बनाकर पीजरे मे बन्द कर देती है।	४ जब सास-बहू को पता चलता है कि राजा चद को सब रहस्य मालूम हो गया है तो वे उसे सुग्गा बनाकर पीजरे मे बद कर देती है।	४ मेहदी रचे हाथ तथा काकण डोरा बँधा देखकर सास-बहू को राजा के गिरनार पहुँचने की बात मालूम हो जाती है और वे राजा को तोता बना लेती है।
५. तोता उड जाता है और प्रेमलालछी के पास पहुच जाता है।	५ एक नट, पुरस्कार मे कूर्कट को रानी से माग लेता	५ सावन की तीज पर प्रेमला अपनी चूनर ओढती	५ सोनचिडी नामक नटी रानी से पुरस्कार के रूप मे वह

(अ) कथा-रूप	(ब) कथा-रूप	(स) कथा-रूप	(द) कथा-रूप
	है, और अनेक नगरो का भ्रमण करता हुआ सिद्धपुर तीर्थ पर पहुँचता है। कूर्कट रूपी राजा वहाँ स्नान कर अपना असली रूप प्राप्त करता है।	है तब उसे दोहे छद मे लिखा चन्द का पता मिल जाता है और वह उसे प्राप्त करने के लिए निकल पडती है।	तोता माँग लेती है।
६ प्रेमला वियोग से पीडित होकर पवन-दूत बनाती है। जो सूअर बनकर आये चन्द से भी सन्देश कहती है।	६ प्रेमला राजा के वियोग मे बडी व्यथित रहती है। उस पर कई विपदायें आती हैं।	६ आभा नगरी पहुँचकर सुग्गा के रूप मे बन्दी राजा को छुडा लेती है और उसके स्थान पर दूसरा सुग्गा रख देती है।	६ नटी तोता को लेकर गिरनार प्रेमला के पास पहुँचती है।
७ प्रेमला ने लीला तागा तोडा। दोनो मिले।	७. राजा प्रेमला के पास पहुँचता है और गुणावली के पास प्रेमला को लेकर लौटने के समाचार भेजता है।	७. प्रेमला सुग्गे का धागा तोड देती है। राजा को अपना वास्तविक रूप प्राप्त हो जाता है। दोनो का मिलन हो जाता है।	७. प्रेमला तोते का धागा तोड देती है जिससे राजा अपना वास्तविक रूप प्राप्त कर लेता है। तत्पश्चात् दोनो का मिलन हो जाता है।
८ सास-बहू, दोनो चील बनकर उड़ती हैं। प्रेमला बाज	८. वीरमती को पता लगता है तो वह सिद्धियो के	८ जब सास-बहू को पता लगता है, तो वह चीले बनकर	८ राजा अपनी माँ और बहू को चौराहे पर नीले काँटो मे

(अ) कथा-रूप	(ब) कथा-रूप	(स) कथा-रूप	(द) कथा-रूप
बनकर उन्हे दबा लेती है। राजा चन्द एक तीर से दोनो को मार देता है।	बल पर राजा चन्द्र को मारना चाहती है, किन्तु राजा चन्द्र वीरमती को मार देता है। पूर्वभव के वृतात के बाद कथा समाप्त होती है।	राजा की आँखे फोडने के लिए झपटती हे किन्तु राजा तीर मे दोनो को मार देता है।	जलाकर मार देता है।

—.०:—

'चन्द्रराज चरित्र' एव 'राजा चन्द प्रेमलालछी री बात' के उक्त कथा-रूपो की तुलना से हम निम्नलिखित निष्कर्ष पर पहुँचते है :—

(१) कथा-रूप 'अ' के क्रमाक १ की घटनाये उसके अन्य कथा-रूप 'ब' 'स' 'द' से भिन्न है, किन्तु अन्य प्रान्तीय रूप, यथा—राजा नेकबख्त की कहानी (पजाबी लोक-कथा) तथा सत्यपीर भक्त की कथा (बगला लोक-कथा) के समान है। 'अ' कथा-रूप मे वर्णित राजा चन्द का बुडिया बेहमाता के पास जाने के स्थान पर 'ब' कथा-रूप मे राजा वीरसेन और चन्द्रावली की एक पूरी प्रेम-कथा ही भूमिका-कथा के रूप मे दी गई है, जबकि कथा-रूप 'स' मे रुद्रदत्त और उसकी मायावी पत्नियो का त्रिया-चरित्र भूमिका-कथा के रूप मे वर्णित है। कथा-रूप 'स' और 'द' के क्रमाक १ के 'क', 'ख', 'ग', 'घ', 'ड' मे भिन्नता मिलती है। कथा-रूप 'द' के क्रमाँक १ (क) मे कथा-रूप 'स' के समान राजपूत की दो स्त्रिया न होकर सास-बहू है। कथा-रूप 'स' के क्रमाक १ (घ) मे राजपूत का स्वयवर मे राजा चन्द की लडकी से विवाह करने के स्थान पर किसी अन्य राजपूत कन्या से विवाह करने का वर्णन है। कथा-रूप 'स' मे राजा चन्द राजकुमार को भय से मुक्त करने के लिए अपनी कहानी सुनाता है, जबकि कथा-रूप 'द' मे राजपूत कन्या राजा चन्द की कहानी सुनाती है। इस विवेचन से हम इस निष्कर्ष पर भी पहुँचते है कि क्रमाक १ पर वर्णित कथा-रूप 'अ', 'ब', 'स', 'द' की यह भूमिका-कथाये, मूल कथानक से कोई सम्बन्ध नही रखती। कथाकारो ने अपनी कल्पना और सस्कारो के अनुसार इन्हे मूल लोक-कथा के साथ जोड दिया है।

क्रमाक २ पर वर्णित घटनायें चारो कथा-रूपो मे कुछ मामूली परिवर्तन के साथ समान ही हैं। केवल कथा-रूप 'अ' मे पीपल का वृक्ष बोलता हुआ बतलाया गया है, जबकि अन्य कथा-रूपो मे नही। कही पीपल के पेड के स्थान पर वट-वृक्ष है। कथा-रूप 'ब' मे रानी गुणावली स्वत पति के साथ विश्वासघात नही करती बल्कि अपनी सास के द्वारा बहकायी जाती है, जबकि अन्य कथा-रूपो मे ऐसा उल्लेख नही है। कथा-रूप 'ब' मे इस परिवर्तन का कारण जैन-धार्मिकता का प्रभाव है।

क्रमाक ३ व ४ की घटनाये सब कथा-रूपो मे लगभग समान है। क्रमाक ५, ६, ७, की घटनाये सब कथा-रूपो मे समान नही है। कथा-रूप 'अ' मे तोता स्वय उडकर प्रेमला के पास जाता है, जबकि कथा-रूप 'ब' और 'द' मे नट अथवा नटी कूर्कट अथवा तोता को पुरस्कार मे मागकर, गिरनार प्रेमला के पास ले जाती है। कथा-रूप 'स' मे प्रेमला स्वय आभा नगरी आती है और राजा को तोता पक्षी के रूप से मुक्त करती है। क्रमांक ७ व ८ की घटनायें कथा-रूप 'अ', 'स' मे समान

है । कथा-रूप 'द' मे राजा माँ और पत्नी को चौराहे पर जलाकर मारता है, जबकि कथा-रूप 'ब' में वीरमती को अपनी सिद्धियो से परास्त करता है। कथा-रूप 'ब' मे पूर्वभव की कथा भी दी गई है जो जैन-धार्मिकता के प्रभाव को व्यक्त करती है।

३ सदयवत्स-सावलिंगा

इस प्रेम-कथा की प्राचीनता पर प्रथम अध्याय मे चर्चा की जा चुकी है। 'सदयवत्स' नाम का प्रथम उल्लेख अभी तक अब्दुर्रहमान के 'सन्देश रासक' मे ही प्राप्त हुआ है। कथा-सरित्सागर एव जैन-आगम ग्रथो मे सदयवत्स एव सावलिंगा का नाम उपलब्ध नही होता, किन्तु इस कथा मे आये हुए अन्य नाम यथा—उज्जैनी, राजा शालिवाहन, हरसिद्धि माता, प्रतिष्ठानपुर, खापरा चोर आदि इतने प्राचीन हैं कि यह कथा, विक्रम कथा-चक्र से सम्बन्धित लगती है। इसके कुछ कथा-तन्तु तो कथा, सरित्सागर में भी मिलते है। सदयवत्स का रोती हुई स्त्री के पास जाना तथा उस स्त्री का अपने मृत पति को पानी पिलाने के बहाने सदयवत्स की पीठ पर चढकर शव का मास खाना तथा उसका नेरची निकलने की घटना कथा-सरित्सागर के पाँचवे खण्ड मे वर्णित कनकपुरी और शक्ति-देव के कथा-प्रसग से समता रखती है। यहाँ भी एक स्त्री पानी पिलाने के बहाने अशोकदत्त की पीठ पर चढकर सूली पर टके शव का मास खाती है।[1]

इस कथा के अनेक कथा-रूप मिलते है, किन्तु इसकी कथा-वस्तु के विकास को समझने के लिए भीम कृत सदयवत्स वीर-प्रबन्ध (स० १४६६) केशव कृत सदैवच्छ सावलिंगा चउपई (स० १६६७), सदेवन्त सावलिंगा के आठ भवो वाली कथा एव प० किसना जो द्वारा रचित सदैवच्छ सावलिंगा री वात (स० १७६६), इन चार कथा-रूपो का तुलनात्मक विवेचन प्रस्तुत किया जा रहा है। सस्कृत भाषा मे रचित हर्षवर्धन गणिकृत सदयवत्स कथा, भीम कृत सदयवत्स प्रबध का अनुसरण करती है तथा शेष कथा-रूप कुछ व्यक्तियो, स्थानो के नामो एव अन्तर्कथाओ के फेर-बदल के साथ समानता रखते है। इन चार प्रमुख कथा-रूपो के साकेतिक नाम 'अ', 'ब', 'स', 'द' रखे जा रहे है—

---

१. कथा-सरित्सागर (सत्साहित्य प्रकाशन, दिल्ली) पाचवा खण्ड, पृ० स० १०६।

सदयवत्स सार्वलिंगा कथानक के कथा-रूपो का तुलनात्मक अध्ययन

(अ) कथा-रूप	(ब) कथा-रूप	(स) कथा-रूप	(द) कथा-रूप
१ उज्जैनी के राजा प्रभुवत्स की रानी महालक्ष्मी का पुत्र सदयवत्स एव प्रतिष्ठानपुर के राजा शालिवाहन की पुत्री सावर्लिंगा ।	१ कोकरण देशस्थ विजयपुर के राजा महीपाल का पुत्र सदैवच्छ और उसके मत्री सोम की पुत्री सार्वलिंगा ।	१ (क) पार्वती द्वारा वन लीला देखने का हठ करने पर बावडी पर बन्दर-बन्दरी के जोडें को देखकर उनके बारे में जानने का आग्रह करना ।	१ (क) पूर्व मे सदैवच्छ मनोहर नाम का सुतार था तथा सार्वलिंगा उसकी पत्नी रूपमती ।
		(ख) शिव सदेवन्त के आठो भवो की कहानी बतलाते है । आठ भवो के नाम क्रमश: ब्राह्मरण-ब्राह्मणी, चकवा-चकवी, हिरन-हिरनी, मयूर-ढेल्नी, हँस-हँसनी, राजा-रानी, बन्दर-बन्दरी एव सदैवन्त-सार्वलिंगा ।	(ख) मनोहर के परदेश जाने पर रूपमती माधव खाती से नाता कर लेती हे ।
			(ग) मनोहर परदेश से लौटकर अपनी स्त्री की प्राप्ति के

(अ) कथा-रूप	(ब) कथा-रूप	(स) कथा-रूप	(द) कथा-रूप
			लिए राजा से न्याय की याचना करता है और अपने पक्ष मे न्याय नही पाकर वैराग्य ले लेता है।
२ स्वयवर द्वारा सावलिगा वाह।	२. दोनो का बडा होने पर एक ही पाठशाला मे पढ़ना और एक दूसरे के प्रेम-पाश मे बँध जाना।	२. (क) शालिवाहन राजा का पुत्र सदयवत्स और नगर सेठ पद्मशाह की पुत्री सावलिगा।	२ (क) मनोहर मुगीपुर पाटण के राजा शालिवाहन का पुत्र सदैवच्छ होता है और रूपमती प्रधान मुहता पद्मसेठ के घर साव-लिगा के रूप मे जन्म लेती है।
		(ख) गोरख साधु का साव-लिगा के रूप को देखकर मूर्छित हो जाना।	(ख) दोनों का एक पाठशाला मे पढना और प्रेम हो जाना। नाई के द्वारा प्रेम-पत्रो का आदान-प्रदान।
		(ग) दोनो का पाठशाला मे पढते समय प्रेम हो जाना तथा तोता द्वारा प्रेम-सन्देश प्रेषित करना।	

(अ) कथा-रूप	(ब) कथा-रूप	(स) कथा-रूप	(द) कथा-रूप
३ सगर्मा ब्राह्मणी को बचाने के लिए जय मगल हाथी को मारने पर 'सदयवत्स को देश-निकाले का दण्ड मिलना।	३. युवा होने पर सार्वलिगा का विवाह पुष्पावती के सेठ धनदत्त से कर दिया जाता है और सदैवच्छ का किसी राज-कन्या से।	३ बात प्रकट होने पर सार्वलिगा का विवाह रूपशाह से कर दिया जाना, किन्तु सार्वलिगा द्वारा षड्यत्र रचकर विवाह मण्डप मे दासी को बैठा देना।	३ किन्तु सार्वलिगा का विवाह अन्यत्र कर दिया जाता है।
४. सार्वलिगा भी साथ मे, वन मे, देवी से द्यूत-क्रीडा मे जय पाने के लिए पासे, कपर्दिकायें, लोह-छूरिका मिलना और राजकुमारी लीलावती से विवाह करना।	४ सुसराल जाने से पूर्व देवी की मनौती के बहाने सार्वलिगा सदयवच्छ से मिलने जाती है किन्तु वह मद पीकर प्रगाढ निद्रा मे सो जाता है। सार्वलिगा उसकी बाँह पर सूचना लिखकर चली जाती है।	४ रात्रि मे रूपशाह से मनौती का बहाना कर शकर के मन्दिर मे सदेवन्त से मिलने जाना, सदेवन्त का मोह-निद्रा मे होने से उसके हाथ मे समस्या लिखकर लौट पडना।	४. दोनो का गुप्त मिलन चलता रहता है।
५. प्रतिष्ठानपुर मे पहुँचकर द्यूत-क्रीड़ा मे चोरो को परास्त करना।	५. सदैवच्छ पोहपावती नगर मे सार्वलिगा के पास पहुचता है और वहाँ भवन-निर्माण के लिए मजदूर बन जाता है।	५ पटरानी के ताना मारने पर आवेश मे आकर सदेवन्त का सार्वलिगा को लाने के लिए उसके सुसराल पहुँच जाना।	५ सदयवत्स सामाजिक भेद-भावो की बाधाओ को पार करके उससे विवाह कर लेता है और दोनो सुखी रहते हैं।

(अ) कथा-रूप	(ब) कथा-रूप	(स) कथा-रूप	(द) कथा-रूप
६. गणिका के चुगल से सोमदत्त वाणिक् को मुक्त करना और कामसेना वेश्या का उसके प्रेम मे पड जाने से पाँच दिन तक वहाँ ठहरना तथा राजा द्वारा वेश्या को शूली का दण्ड दिये जाने पर उसे बचाना।	६ पोहपावती की राजकुमारी दोनो का प्रेम जान लेती है। सदैवच्छ सेना का सग्रह करके राजकुमारी का अपने साथ विवाह करने राजा भोज को विवश करता है।	६. राजा की कन्या कनकावती का सदेवन्त के प्रेम मे पड जाना—सदेवन्त को सावलिंगा से मिलाने के लिए मालिन का यह शर्त रखना कि उसे कनकावती से विवाह करना पडेगा।	
७. राजा को अपने दामाद सदयवत्स का प चलने पर उसे सावलिंगा सहित सादर बुला लेना।	७. कर-मोचन के समय वह धनदत्त से सावलिंगा दिलवाने की माग करता है और सावलिंगा उसे दिलवादी जाती है।	७. सदेवन्त के साथ कनकावती का विवाह हो जाना और रूपशाह को सावलिंगा और सदेवन्त के प्रेम का पता चलने पर उनका भी विवाह कर देना।	
८. दोनो उज्जेनी लौटे तथा वीरकोट का नवीन राज्य स्थापित किया और आनन्दपूर्वक रहने लगे।			—

—:०:—

प्रस्तुत कथा-रूपो मे, कथा रूप 'अ' की घटनाये शेष कथा-रूपो से सर्वथा भिन्न है। कथा-रूप 'अ' मे नायिका स्वकीया है; उसका विवाह स्वयवर-प्रथा से हुआ है और शेष घटनाये नायक के अद्‌भुत शौर्य से सम्बन्धित है। हाथी से महिला की रक्षा करने का 'मोटिफ' कथा-सरित्सागर मे भी मिलता है और राजस्थानी अन्य प्रेमाख्यानो मे भी। किन्तु कथा-रूप ब, स, द मे न केवल नामो का ही अन्तर है, बल्कि घटना-क्रम और कथा का मूल उत्स ही भिन्न है। इन कथा-रूपो मे नायिका या तो मत्री की पुत्री है या नगर-सेठ की। इन कथा-रूपो मे सार्वलिगा परकीया नायिका हो जाती है। केवल, कथा-रूप 'स' मे बडी चतुराई से विवाह सस्था की प्रतिष्ठा को बचाने के लिए दासी के साथ फेरो की बात जोड दी गई है। तीनो ही कथा-रूपो मे नायक-नायिका मे प्रेम-पल्लवित होने का स्थान पाठशाला है, किन्तु कथा-रूप 'स' में प्रेम-सन्देहवाहक तोता हे जबकि 'द' कथा रूप मे यह स्थान नाई को मिल जाता है। कथा-रूप 'अ' मे वीर और अद्‌भुत रस की प्रधानता होती है और शृ गार-रस का स्थान गौण, किन्तु शेष तीन कथा-रूपो मे शृ गार-रस की प्रधानता होती है। कथा-रूप 'स' के सात भवो की कहानी अन्य कथा-रूपो मे नही है। कथा-रूप 'द' के पूर्वभव की कहानी कथा-रूप 'स' के सात-भवो की कहानी से भिन्न है। इसमे उत्तरमध्यकालीन ठेठ राजस्थानी ग्राम्य सस्कृति का प्रभाव लक्षित होता है। कथा-रूप 'स' मे गोरख साधु एव शिव पार्वती की कथा भी जोड दी गई है। इस यह लक्षित होता है कि किस प्रकार गोरख-पथी साधुओ की चमत्कारिक घटनायें तत्कालीन समाज को आतकित कर रही थी और लोक-कथाओ मे यथेष्ट स्थान पाने लगी थी। इन कथा-रूपो को देखने से हम इस परिणाम पर भी पहुँचते है कि उत्तर मध्यकाल मे किस प्रकार कथा-रूप 'अ' की एव जैन धार्मिकता से प्रभावित हर्षवर्धन गणि कृत सस्कृत वाले कथा-रूप की लोकप्रियता घट गई थी और कथा-रूप 'ब' का उत्तरोत्तर विकास हो चला था।

४ मृगावती रास

कविवर समयसुन्दर कृत 'मृगावती रास' के कथानक का आधार प्राकृत भाषा मे रचित जैन आगम-ग्रथ 'नायधम्य कहाओ' मे वर्णित मृगावती कथा है। इसका उत्तरार्द्ध गुणचन्द्र गणिकृत 'कहारयण कोस' (सन् ११०१) मे वर्णित चण्डप्रद्योत की कथा से मिलता है जो पर-स्त्री-प्रसग की बुराई के प्रति प्रबोध देने के लिए उदाहरण स्वरूप कही गई है। किन्तु, यह कथा इससे भी प्राचीन तथा बहुत प्रसिद्ध उदयन-कथाचक्र से सम्बन्धित है। इसका मूल-रूप हमे कथा-सरित्सागर के दूसरे खण्ड मे वर्णित सहस्रानीक और मृगावती की कथा मे मिलता है। गर्भवती रानी मृगावती का रक्त मे स्नान करने की इच्छा वाला प्रसिद्ध 'दोहद मोटिफ' तो

दो सहस्र वर्ष से भी अधिक पुराना है जो आदिम मानव के विश्वासो को प्रकट करता है। डा० सत्येन्द्र ने इसका पूर्वार्द्ध दुष्यन्त-शकुन्तला भरत कथा-चक्र से तथा उत्तरार्द्ध पद्मावती कथा-चक्र से सम्वन्धित माना है।[1]

कथा-सरित्सागर मे वर्णित मृगावती कथा[2] और उक्त 'मृगावती रास' के कथानक मे प्रमुख अन्तर यह है कि मृगावती रास का पूर्वार्द्ध ही कथा-सरित्सागर की मृगावती-कथा से मिलता है। इसके उत्तरार्द्ध मे वर्णित चित्रकार द्वारा मृगावती के चित्र मे उसकी जाघ पर तिल वनाना तथा राजा का रुष्ट हो, उसका हाथ कटवा देना तथा चित्रकार द्वारा मृगावती का चित्र दिखलाने पर चण्डप्रद्योत का कामातुर होकर मृगावती को प्राप्त करने के लिए कोशाम्वी पर आक्रमण करने की घटनाये कथा-सरित्सागर मे नही है। कथा-सरित्सागर मे तो राजा, चण्डप्रद्योत के साथ अपनी कन्या वासवदत्ता का साथ सम्वन्ध जोडने के लिए प्रयत्न करता है और उसमे सफल होता है। इसके अतिरिक्त कथा-सरित्सागर मे मृगावती का पति सतानीक का पुत्र सहस्रानीक वताया गया है जवकि समयसुन्दर कृत 'मृगावती रास' में मृगावती का पति सतानीक है। कथा-सरित्सागर मे उदयन का जन्म जमदग्नि ऋषि के आश्रम मे होता है, किन्तु 'मृगावती रास' जमदग्नि के स्थान पर ब्रह्मभूति नाम मिलता है।

यक्ष द्वारा प्रदत्त सिद्धि के चमत्कार से चित्रकार द्वारा अदृश्य अगो के चित्रण की क्षमता कथा-सरित्सागर की मृगावती-कथा मे न मिलकर शकटाल और चाणक्य के कथा-प्रसग मे मिलती है।[3] वररुचि नन्द की रानी के चित्र मे उसकी कमर मे तिल वना देता है जिससे नन्द को उस पर सन्देह हो जाता है और वह वररुचि को वध करने की आज्ञा देता है। लगता है, मृगावती-कथा के इस जैन-रूपान्तर के विकास क्रम मे कथा-सरित्सागर की उक्त घटना उसके उत्तरार्द्ध मे मिला दी गई है और अपमानित चित्रकार द्वारा प्रतिशोध लेने के लिए चित्र दिखलाकर राजा चण्डप्रद्योत को आक्रमण करने के लिए उकसाने की घटना वाद मे जोड दी गई है। तत्पश्चात् जैन सिद्धान्तो के अनुसार मृगावती द्वारा दीक्षा लेकर वामनप्रस्थ लेने आदि की घटनाये मिलाकर 'मृगावती रास' नामक शीलव्रत उपदेश के लिए एक प्रेमाख्यान रच दिया गया है।

---

१. मध्ययुगीन लोक-साहित्य का अध्ययन, पृ. स ३४१।
२ कथा-सरित्सागर (सत्साहित्य-प्रकाशन, दिल्ली), दूसरा खण्ड, पृ सं २३।
३. कथा-सरित्सागर (सत्साहित्य प्रकाशन, दिल्ली) प्रथम खण्ड, पृ सं. १०।

५ हंसाउली

हसाउली के प्रथम खण्ड की कथा कथा-सरित्सागर के सातवे खण्ड की कथा राजकुमारी कर्पूरिका से समानता रखती है।[1] हसाउली की भाँति राजकुमारी कर्पूरिका भी पुरुष-द्वेषणी होती है। मत्री मनकेसर के समान कथा-सरित्सागर मे गोमुख कर्पूरिका को प्राप्त करने के लिए उसके पूर्वभव का पता लगाकर राजा नरवाहन की सहायता करता है, किन्तु गोमुख मनकेसर की भाँति देवी के पीछे छिपकर कर्पूरिका को आतकित नही करता और न वह हसाउली का चित्र बनाकर राजकुमारी के पास जाता है। इसमे तो नरवाहन केवल योगी बनकर हाय हसा, हाय हसा, चिल्लाता हुआ उसके वियोग का नाट्य करता है। राजकुमारी कर्पूरिका की कथा मे नरवाहनदत्त को स्वप्न मे कर्पूरिका दिखलाई तो पडती है, किन्तु हसाउली कथा की भाँति उसका कोई स्वप्न-भग नही करता। यह स्वप्न-भग करने की कथा कथा-सरित्सागर की ही एक अन्य कथा 'मलयावती का विवाह'[2] मे मिलती है। यहाँ राजा विक्रमादित्य एक पुस्तक मे कन्या का चित्र देखकर मोहित होता है और स्वप्न मे वही कन्या देखता है। प्रेमालाप प्रारम्भ होने से पहले ही सेवक जगा देता है, जिस पर राजा कुपित होकर उसे नगर से निकाल देता है। हसाउली की भाँति मलयावती भी पुरुष-द्वेषणी होती है। मलयावती को प्राप्त करने के लिए यहाँ मत्री नही, वल्कि द्वारपाल भद्रायुध राजा की सहायता करता है। स्वप्न मे देखे गये दृश्य का चित्र बनाकर चौराहे पर टाक दिया जाता है जिसे देखकर एक भाट मलयनगर का पता बतलाता है और मलयावती राजा को प्राप्त होती है। 'राजकुमारी का पुरुष-द्वेषणी होने' का मोटिफ इतना प्रचलित है कि राजवल्लभ कृत पद्मावती चरित्र, चित्रसेन पद्मावती रतनसार मत्री चौपई, फूलमती री वारता आदि अनेक लोक-कथाओ मे मिलता है। अन्तर केवल यही है कि कही राजकुमारी और उसका प्रेमी अपने पूर्वभव मे हँस-हँसी होते है तो कही सुवा-सुवटी। हँसाउली के शेष तीन खण्डो मे, उसके दो पुत्र वत्सराज, हँस की कहानी जैन आगम कथाओ की देन है। इस प्रकार हम देखते है कि 'हसाउली' कथा की आधार भूमि बहुत प्राचीन है और इसका सम्बन्ध विक्रम कथा-चक्र से है। कथा सरित्सागर के दो कथानको की सयुक्त आधार भूमि पर जैन आगम ग्रथो से वत्सराज हँस की कथा का समावेश करके वर्तमान कथा 'हँसाउली' का ढाँचा खडा किया गया है।

---

१. वही, (सातवा खण्ड) पृ स १६१।

२. कथा-सरित्सागर (सत्साहित्य प्रकाशन, दिल्ली) सत्रहवा खण्ड, पृ स. ५१६।

६. रूपसेन कुमार नो चरित्र

इस कथा का मूल स्रोत कथा-सरित्सागर की पाटलीपुत्र की कहानी[1] मे सुरक्षित मिलता है। पुत्रक भी रूपसेन कुमार की भाँति माता-पिता से वियुक्त होकर जगल मे जादुई खडाऊओ का जोडा, डण्डा तथा कटोरा प्राप्त करता है और राजकुमारी पाटली के रूप की प्रशसा सुनकर खडाऊँ पहिनकर उडता है और उसके महल में पहुँच जाता है। दोनो एक दूसरे के प्रेम-पाश मे बँध जाते है। रहस्य प्रकट होने पर राजा क्रोधित हो, रूपसेन की भाँति ही पुत्रक को भी पकडने के लिए वेश्या की नियुक्ति करता है और एक दिन वैश्या की दासी उसके कपडो पर लाल रग लगा देती है। रूपसेन की भाँति पुत्रक भी आकाश मार्ग मे उड जाता है और फिर राजकुमारी को भगाकर उससे गधर्व विवाह कर लेता है। पुत्रक तो वन में आकर जादुई वस्तुओ से पाटलीपुत्र नगर वसाकर आनन्दपूर्वक रहता है, 'रूपसेन कुमार नो चरित्र' मे बूँटी से यौन-परिवर्तन वाला कथा-ततु, कथा-सरित्सागर की 'शशिप्रभा की कथा'[2] मे भी विद्यमान है। इस कथा का प्रारम्भ और अन्त भिन्न है जो जैन-कथा रत्नकोप की देन है। जैन-कथा रत्नकोप की कहानियो मे शेष कथा-ततु मिल जाते है। इस प्रकार प्रस्तुत-काव्य के कथा-ततु बहुत प्राचीन, लगभग प्रथम शताब्दि से भी पूर्व के मिल जाते है।

७. हंसराज बछराज चौपई

मध्यकालीन जैन प्रेमाख्यानो मे हसराज वछराज' की लोक-कथा भी बहुत लोकप्रिय रही है। इसके कथा–ततु धनपाल रचित अपभ्रश के 'भविष्यदत कहा' के समान है। हसराज भी भविष्यदत्त की भाति अपनी सौतेली मा के द्वेप का शिकार बनकर गृह-त्याग करता है और अनेक सकटो को पार कर सुन्दर राजकुमारी के साथ धन ऐश्वर्य प्राप्त कर लौटता है।

८. विद्या विलास चौपई

'विद्या विलास चौपई' के कथा-ततु पुष्पदत द्वारा रचित अपभ्रश के णायकुमार चरिउ (नागकुमार चरित) से समता रखते है। नागकुमार भी विद्या विलास की भाति वीणा बजाता है। उसकी रानिया सोहग सुन्दरी की भाति ही जिन-मन्दिर मे नृत्य करती है। नागकुमार की भाति विद्या विलास अपनी अद्‌भुत

---

१. कथा-सरित्सागर (सत्साहित्य प्रकाशन, दिल्ली) प्रथम खण्ड, पृ स ६–७।

२. कथा-सरित्सागर (सत्साहित्य प्रकाशन, दिल्ली) नवा खण्ड, पृ. स. ४१२।

शौर्य प्रदर्शित करके अपने भाग्य का निर्माण करता है। चमत्कारिक घटनायें दोनो मे समान रूप से विद्यमान है।

९. सिंहल-सुत चौपई

समयसुन्दर कृत सिंहल सुत चौपई के कथा-ततु पडित लक्खण द्वारा अपभ्रंश भाषा मे रचित जिणदत्त चरित से साम्य रखते है। जिणदत्त चरित का रचना-काल वि० स० १२७५ है।

जिणदत्त की भाँति सिंहल-सुत भी अत्यन्त रूपवान राजकुमार है। जिस प्रकार जिणदत्त के सौन्दर्य पर मुग्ध होकर नगर-स्त्रियाँ कामातुर होती है और परिणाम स्वरूप उसे नगर छोडना पडता है, उसी भाँति सिंहलसुत को भी उसके रूप पर नगर की युवतियो के सम्मोहित होने पर नगर छोडना पडता है। जिणदत्त 'चरित' मे वर्णित घटनाओ की भाँति 'सिंहलसुत चौपई' मे भी घटनाये घटित होती है। श्रीमती से विवाह करके जिणदत्त जब समुद्र मार्ग से लौटता है तो प्रवहन का मालिक श्रीमती के रूप पर मुग्ध होकर उसे प्राप्त करने के लिए जिणदत्त को समुद्र मे गिरा देता है। उसी भाँति सिंहल-सुन भी रतनवती से विवाह करके लौटता है तो मार्ग मे रुद्रदत पुरोहित रतनवती को प्राप्त करने के लिए सिंहलसुत को समुद्र मे छलपूर्वक धक्का दे देता है। समुद्र मे प्रवहण का नष्ट होना और नायक-नायिकाओ का काष्ठ-पट्ट के सहारे बचकर निकलना तथा बाद मे नायक-नायिका के मिलन की घटनाये, दोनो से एकसी हैं।

प्रतिनायक द्वारा नायिका को प्राप्त करने के लिए प्रवहण से नायक को समुद्र मे धकेल देना तथा पट्ट के सहारे नायक का बच निकलना, यह कथा-ततु जैन-प्रेमाख्यानो मे बहुत प्रचलित है और साथ ही बहुत प्राचीन भी है। इसके मूल कथा-ततु कथा-सरित्सागर के ग्यारहवे खण्ड मे वेला की कहानी मे भी मिलते है।[1] वेला का विवाह स्वछद-प्रेम के फलस्वरूप एक व्यापारी से होता है। इन दोनो को अनेक विपत्तिया भोगनी पडती हैं। वे भी समुद्र मे जहाज डूब जाने से बिछुडते है और पुन' मिलते है। जर्मन की अति प्राचीन कथा "फैथफुल जोह्न"[2] मे वर्णित राजकुमार द्वारा सौदागर का रूप बनाकर राजकुमारी को जहाज मे बन्दी बना लेने वाला मोटिफ, उपर्युक्त मोटिफ का ही प्राचीन रूप है। इस प्रकार सिंहल-सुत चौपई' के कथा-ततु भी चित्रसेन पद्मावती चौपई के ही समान प्राचीन प्रतीत होते हैं।

---

१ कथा सरित्सागर (सत्साहित प्रकाशन, दिल्ली) ग्यारहवाँ खण्ड, ४२२

२ देखिये—स्टैण्डर्ड डिक्शनरी ऑव फौक लोर, निबध, फेथफुल जोह्न, प. ३६६.

१०. पुण्यसार चौपई

पुण्यसार चौपई के कथा-ततु 'राजा चद की वात' के समान है। दोनो मे ही नायक वृक्ष पर बैठकर नायिका के नगर मे पहुँचते है और आकस्मिक रूप से नायिकाओ से उनका विवाह हो जाता है। दोनो ही कृतियो मे नायक, नायिकाओ को विना सूचित किये भाग निकलते है और दोनो की नायिकाये अपने प्रेमियो का पता अनेक बाधाये पार करके पा लेती है।

इस प्रकार हम देखते है कि लोक-कथाओ पर आधारित इन प्रेमाख्यानो के कथा-ततु गुणाढ्य की 'वड्ड कहा' से भी वहुत पहले के है। इन कथा-ततुओ के मूल बीज लगभग ६०० ई० पूर्व रचित जातक कथाओ मे, यथा—कठहारि जातक, राध जातक आसङ्क जातक की आड्ककुमारी आदि की प्रेम कथाओ मे सुरक्षित मिलते हैं। तदन्तर इनका विस्तार प्राकृत के प्रेमाख्यान लीला वही 'समराइच्च कहा' 'वासुदेव हिण्डी' आदि मे प्रस्फुटित होते हैं और अपभ्र श के चरित-काव्यो मे पल्लवित होते हुए राजस्थानी प्रेमाख्यानो की परम्परा का आधार वनते है।

इन प्रेमाख्यानो मे वर्णित प्रेम-कथाओ मे प्रेम का आरम्भ प्राय: समान रूप से—गुण-वर्णन सुनकर, चित्र-दर्शन, स्वप्न दर्शन अथवा प्रत्यक्ष-दर्शन से होता है। इनमे प्रेम की परिणति विवाह मे होती है। नायक और नायकाओ के मिलन के लिए प्रयत्न दोनो ओर से ही होता है। अनेक नायको को सिंहल की यात्रा करनी पडती है और अनेक कष्ट भोगने पडते हैं। इन प्रतिनायको की उपस्थिति भी अनेक प्रेमाख्यानो मे मिलती है जिसका उद्देश्य नायको के चरित्र को ऊँचा-उठाना है। नायक-नायिकाओ को एक दूसरे की प्राप्ति के बाद भी अनेक कष्ट भोगने पडते है जिसका कारण उनके पूर्वजन्मो के कर्मों का फल है। इन प्रेमाख्यानो मे कथा-सरित्सागर मे वर्णित कथाओ एव प्राकृत और अपभ्र म के प्रेमाख्यानो की ही भाँति आश्चर्य तत्व एव चमत्कार बहुलता से दिखलाई पडते है। विद्याधर, विद्याधारियाँ, यज्ञ, गधर्व, राक्षस, देवता, शिव-पार्वती आदि समय २ पर प्रकट होकर पात्रो की सहायता करते है। पूर्व-जन्म का प्रभाव, तत्र-मत्र मे विश्वास, मुनियो की वाणि मे श्रद्धा, स्वप्न-फल एव शकुनो मे विश्वास, इन प्र माख्यानो मे समान रूप से मिलते हैं।

जोगीया सिद्ध के चमत्कारपूर्ण कथा-तंतुओं से सम्बन्धित प्रेमाख्यान :

मध्यकाल मे सिद्धो की तात्रिकता, नाथ पथी जोगियो और फकीरो की करामातो से तत्कालीन जनता इतनी प्रभावित थी कि शनै शनै. इनसे सम्बन्धित चमत्कारपूर्ण घटनाये लोक-कथाओ मे पवेश पाने लगी। फलस्वरूप तत्कालीन

लोक-कथाओ मे जोगी या सिद्ध के चमत्कारपूर्ण कथा-तत्तु भी जुड गये। 'लखम सेन पद्मावती कथा' मे सिद्ध जोगी के चमत्कारपूर्ण कार्य मिलते हैं और साथ ही कथा के नायक पर जोगी का व्यक्तित्व छाया हुआ लगता है। वस्तुत यह जोगी लोक-कथाओ मे आये राक्षस या दानव का ही स्थानापन्न है, जिसके वश मे सुन्दरी-नायिका होती है और राक्षस के मरण का रहस्य जानकर नायक राक्षस को मारकर उसके चुगल से सुन्दरी-नायिका को मुक्त करता है।

११ राजा रसालु री बात

इस कथा मे रसालु का जन्म बाबा गोरखनाथ के आशीर्वाद से होता है। वह गोरखनाथ से ही सिद्धियाँ प्राप्त करके सकटो पर विजय प्राप्त करता है।

कथानक का मूल स्रोत और ऐतिहासिकता :

'राजा रसालु री बात' के गुजराती, पजाबी, राजस्थानी कथा-रूपो का उल्लेख हम प्रथम अध्याय मे कर चुके हैं। इसकी सबसे प्राचीन प्रति स० १६६६ की मिली है जिससे यह तो निश्चित है कि यह कथा इससे पूर्व प्रचलित थी। इस कथा का नायक राजा शालिवाहन का पुत्र रसालु एक ऐतिहासिक व्यक्ति है। पाश्चात्य विद्वान स्वेनेरर्टर महोदय ने भी लिखा है—

The one point upon which the whole of the different authorities are agreed is, that Rasalu a Rajput prince, was the son and successor of Raja Salivahan X X Now it is well known that Salivahan was a very powerful monarch and that his era began in or about the year of christ 77. (Elepinton's India P 245.)[1]

जनश्रुति प्रचलित है कि शालिवाहन ने राजा विक्रमादित्य को जीतकर उससे राज्य लिया था। राजस्थानी-भाषा मे लिखी 'राजा शालीवाहन री वारता' नामक हस्तलिखित प्रति से भी इस बात की पुष्टि होती है। किन्तु प्रसिद्ध इतिहास-कार Briggs इस बात पर सहमत है, क्योकि उसके अनुसार राजा विक्रमादित्य का समय ५६ ई० पूर्व है जबकि शालीवाहन का समय सन् ७७ ई० है। Elepinton's India[2] के वर्णन के अनुसार भी यही उचित लगता है कि शालिवाहन को उज्जेन

---

१. The Adventure of the Punjab hero Raja Rasalu and other Folk tales of the Panjab—By Rev. C. Swynnerton. Introduction P 16

२. Elepintonton's India P 245

का राज्य या तो उत्तराधिकार में मिला था या उसने बाद में जीता था जो दक्षिण से लेकर पजाब तक विस्तृत था। इस तथ्य से हमारे कथानायक राजा रसालु की राजधानी स्यालकोट होने का भी औचित्य सिद्ध हो जाता है। स्वेनेर्टन महोदय ने लोक-कथा के नायक राजा रसालु और ऐतिहासिक शालिवाहन के पुत्र राजा रसालु, दोनो के एक ही व्यक्ति होने की पुष्टि की है।[1]

इस प्रकार इस लोक-कथा का सम्बन्ध ऐतिहासिक व्यक्ति राजा रसालु से स्थापित होता है जिसका काल सन् १५० ई० के लगभग माना जाता है, किन्तु इस लोक-कथा के पजाबी कथा-रूप मे बाबा गोरखनाथ का होना और राज्य से निष्कासन के समय रसालु का अपने समक्ष मुसलमान होने की शर्त रखना एक ऐतिहासिक असगति है, क्योकि बाबा गोरखनाथ तो सन् १४०० ई० मे हुए थे और मुसलमानो का प्रभाव भी ११वी शताब्दि से पूर्व नही था। इसके राजस्थानी कथा-रूपो मे राजा भोज की लडकी के साथ विवाह की बात भी एक ऐतिहासिक असगति है, क्योकि भोज का समय स० १११२ के आस पास माना जाता है।

इस लोक-कथा मे गोरखनाथ का उल्लेख इस बात को प्रमाणित करता है कि किस प्रकार कथक्कड अपने नायक की लोकप्रियता बढाने के लिए तत्कालीन प्रचलित घटनाओ को मिला दिया करता है। इसके पजाबी कथा-रूप मे रसालु द्वारा मुसलमान होने की शर्त रखना भी यह लक्षित करता है कि उस समय पजाब पर इस्लाम-धर्म का प्रभाव व्यापक था।

इस प्रकार हम देखते है कि 'राजा रसालु री बात' १४वी शताब्दी से पूर्व प्रचलित थी। बाद मे, इसमें गोरखनाथ के चमत्कार सम्बन्धी तथा अन्य कथा-तन्तु जोड दिये गये। इसमे प्रयुक्त तोता मैना के सरक्षण मे कोकल अथवा फूलमती को

---

१. "It seems evident, therefore, *that* Salivahan *of* history and Salivahan of legendary fable, are one and the same individual If we assure that the year of christ 77 represents the birth year of Salivahan, we may *safely conclude that that* soverighn expired about the year 130, so that Raja Rasalu the hero of the legends, may be asserted, with great or less profability to have flourished in the middle or towards the close of the second century of our Eara."—The Adventure of the Panjab hero Raja Rasalu and other Folk tales of the Panjab—Interoduction"

रखना तथा उसके द्वारा तोता को मारने की चेष्टा करने का कथा-त तु 'राध जातक'[1] मे आये हुए कथा-ततु–'ब्राह्मण द्वारा अपनी पत्नी के चरित्र पर निगाह रखने के लिए तोते को घर पर छोड आना' तथा ब्राह्मणी का तोते को मारने की चेष्ठा करने से मिलता है।

कथा-रूपो का तुलनात्मक अध्ययन .

'राजा रसालु री बात' के उपलब्ध विभिन्न कथा-रूपो का उल्लेख हम प्रथम अध्याय मे कर आये हैं। यह भी उल्लेख किया जा चुका है कि इसका पजाबी कथा-रूप राजस्थानी और गुजराती कथा रूपो से बिल्कुल भिन्न है।[2] इसके राजस्थानी और गुजराती कथा-रूपो की मूल-कथा एक होते हुए भी भिन्न २ लिपिकारो द्वारा भिन्न २ समय पर लिखे जाने के फलस्वरूप कुछ अन्तर आगया है जो निम्नलिखित है :—

(१) इसके गुजराती कथा-रूप मे रसालु को शालिवाहन का पुत्र बतलाया गया है जबकि राजस्थानी कथा-रूपो मे शालीवाहन का पौत्र राजा समस्त का पुत्र लिखा मिलता है।

(२) गुजराती कथा-रूप मे राजा भोज की पुत्री का नाम सामलदे और धारा नगरी के मान कछवाहा की पुत्री का धारा लिखा मिलता है जबकि राजस्थानी कथा-रूपो मे इन राजकुमारियो का नाम ही नही मिलता है।

(३) गुजराती कथा-रूप मे अगरजी की नगरी का नाम विराट् है किन्तु राजस्थानी कथा-रूपो मे इसका नाम नही दिया गया है।

(४) गुजराती कथा-रूप मे अगरजी की छोटी पुत्री का नाम फूलमती दिया गया है, किन्तु राजस्थानी कथा-रूपो मे नाम का उल्लेख नही मिलता।

(५) गुजराती कथा-रूप मे वर्णन है कि फूलमती का प्रेम हठमल से होता है जो 'वणजारा' गढ गागल का चौहाण राजपूत होता है, किन्तु राजस्थानी कथा-रूपो मे इसको जलाल पाटण का बादशाह हटमल बतलाया गया है।

(६) इसके राजस्थानी कथा-रूपो मे राक्षस द्वारा उजाडे गये नगर के नाम अलग २, द्वारका, धारा नगरी एव सीधडी मिलते है।

---

१ जातक प्रथम खण्ड भदन्त आनन्द कौसल्यायन, (हिन्दी-साहित्य सम्मेलन, प्रयाग) पृ स ३१०।

२ देखिये इसी शोध-प्रबन्ध का प्रथम अध्याय, प सं १३०।

(७) गुजराती कथा-रूप मे योगी के साथ सुन्दरी नारी के त्रिया-चरित्र का ऐन्द्रजालिक वर्णन मिलता है, जबकि राजस्थानी कथा रूप मे योगी की स्त्री का किसी के द्वारा हरण किये जाने का वर्णन है।

(८) गुजराती कथा-रूप मे राजा मान की पुत्री के प्रेमी का नाम 'कुमतियो' सुनार दिया गया है, जबकि राजस्थानी कथा-रूप मे उसका नाम प्राणनाथ सुनार है।

(९) गुजराती कथा-रूप मे, हठमल के वियोग मे फूलमती का झरोखे से कूदकर आत्महत्या करने का उल्लेख मिलता है जबकि इसके राजस्थानी कथा-रूपो मे हठमल के साथ सती होना वर्णित है।

'राजा रसालु री वात' के उपर्युक्त विभिन्न कथा रूपो के तुलनात्मक अध्ययन से हम इस निष्कर्ष पर पहुचते है कि कथाक्कडो के हाथ मे पहुच कर एक ही कथा उनकी मानसिकता, सस्कारिता, देश-काल के वातावरण के अनुरूप किस प्रकार विभिन्न रूप धारण कर लेती है।

१२. बगड़ावत लोक-महाकाव्य

एक लोकतात्विक विवेचन :

कथा का मूल स्त्रोत और ऐतिहासिकता . बगडावत लोक-महाकाव्य के कथा-त तु बहुत प्राचीन है। इसमे जोगी का प्रभाव लक्षित होता है। कथा का नायक सवाई भोज जोगी के चु गल मे होता हे। वह जोगी की परम भक्ति भाव से सेवा करता हे किन्तु जोगी स्वर्ण-पुरुष की सिद्धि के लिए उसे तेल से उबलते हुए कडाव मे डालना चाहता हे, किन्तु भोज इस रहस्य को जान लेता है और छल से जोगी का ही उपाय अपनाकर उसे तेल के कडाव मे डाल देता है जिससे जोगी स्वर्ण-पुरुष बन जाता हे। यह कथा-ततु कथा-सरित्सागर मे वर्णित राजा विक्रम और जोगी की कथा मे निहित है। इस प्रकार बगडावत के कथा-त तु चमत्कारपूर्ण घटनाओ के लिए बहुत प्राचीनकाल से प्रचलित है।

'बगडावत लोक-कथा लोकदेवता देवनारायण के जन्म से सम्बन्धित है तथा इसका आधार भी ऐतिहासिक है। इस लोक-कथा के विभिन्न कथा-रूपो मे (देव-चरित्र को छोडकर) बीसलदेव चौहान का सामन्त हरिराम चह्वाण का वर्णन आता है। 'देव-चरित्र' मे बीसलदेव के स्थान पर पृथ्वीराज चौहाण लिखा मिलता है, किन्तु यह इसके रचयिता की भूल ही मालूम होती है। 'बगडावत' लोक-कथा मे वर्णित बीसलदेव प्रसिद्ध ऐतिहासिक व्यक्ति अजमेर के राजा विग्रहराज चतुर्थ ही प्रतीत होते हैं जिनका काल सवत् १२०७ से १२२० तक का है। बगडावतो का मूल पुरुप 'हरिरास चह्वाण' इनके समय मे ही हुआ था। हरीराम चह्वाण से

लीलावती के गर्भ की बात भी सत्य प्रतीत होती है। कोकशाह की पुत्री बाल विधवा लीलावती का पुष्कर के पहाडो मे तपस्या करने का उल्लेख है। अजमेर के नाग पहाड की तलहेटी मे पुष्कर के समीप लीलावती के नाम पर 'लीला छेवडी' नामक ग्राम अब भी वसा हुआ है। जहा भाद्र महीने मे हर वर्ष मेला लगता है। जैमती के लिए भिणाय राजा के साथ बगडावतो के युद्ध का भी उल्लेख है। भिणाय मे अब भी २४ बावडिया हैं जो बगडावतो की बावडिया कहलाती हैं और जनश्रुति प्रचलित है कि बगडावत इसी स्थान पर खेत रहे थे। मारवाड मर्दुम शुमारी रिपोर्ट सन् १८९१ ई० मे उल्लेख है कि देवजी का जन्म सं० १३०० मे हुआ था। उधर बगडावतो का भिणाय राजा के साथ हुए युद्ध मे मारा जाना लिखा है। किन्तु श्री हरविलास शारदा के अनुसार अकबर से पूर्व भिणाय जागीर का अस्तित्व ही नही था।[1] अत ऐसा प्रतीत होता है कि बगडावतो का इसी स्थान पर खेत रहने के कारण भिणाय के राणा के साथ युद्ध की कहानी बाद मे जोड दी गई है।

महा महोपाध्याय हर प्रसाद शास्त्री के अनुसार भाट जाति के छोछू नामक कवि ने १२०० ई० के आस-पास बगडावतो के कीर्ति-श्लोक लिखे जिनकी सख्या लगभग १५००० बताई जाती है, किन्तु यह बात सत्य प्रतीत नही होती क्योकि बगडावतो की यह कथा देवनारायण के जन्म तथा गौ रक्षा के लिए उनके वीरतापूर्ण बलिदान के बाद ही प्रचलित हुई होगी। अत बगडावत लोक-कथा का प्रारम्भ १४वी शताब्दी (विक्रम) का प्रारम्भ माना जा सकता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि विक्रम सवत् की १४वी शताब्दी से ही यह लोक-कथा मौखिक रूप से चली आ रही है, अत इसमे कई क्षेपको का मिल जाना सम्भव प्रतीत होता है। इस कथा के लेखबद्ध कथा-रूप अब तक तीन ही प्राप्त हुए हैं जिनमे से एक डा० पुरुषोत्तम मेनारिया द्वारा सम्पादित है। एक कथा-रूप राजस्थानी शोध सस्थान, जोधपुर वाला है। ये कथायें दोनो ही राजस्थानी गद्य मे लिखी हुई हैं। इस कथा को लेकर 'नाथ कवि' ने देव चरित्र नाम से डिंगल मे एक काव्य ग्र थ लिखा है। इन तीनो ही कथा-रूपो को हम 'अ', 'ब', 'स' साकेतिक नामो से सम्बोधित कर सकते है।

---

१. No Istimurari estate existed in Ajmer Merwara before the time of Akabar X X of the five principal estates, Bhinai, Masuda and Kharwa came into existence in the time of Akabar. —Ajmer Historical Descriptive—By Harbilas Sarda. P 292.

बगड़ावत के अ, ब, स, कथा-रूपों का तुलनात्मक अध्ययन

(अ) कथा-रूप	(ब) कथा-रूप	(स) कथा-रूप
१. अजमेर मे वीसलदेव चह्वाण के समय हरिराम चह्वाण रहता है।	१. अजमेर मे वीसलदेव के समय हरिराम चह्वाण का बाघ को मारना तथा पुष्कर मे अपनी तलवार धोते समय कोकाशाह की पुत्री लीलावती की उस पर दृष्टि पडना।	१. अजमेर के राजा पृथ्वीराज चौहान के समय हरिराम चह्वाण का बाघ को मारना तथा अपनी तलवार पुष्कर मे धोते समय लीलावती की दृष्टि उस पर पडना और उसके दृष्टि-गर्भ रहना।
२. कोकाशाह की पुत्री लीलावती के हरिराम से दृष्टि गर्भ रहना तथा लोकापवाद से बचने के लिए लीलावती का हरिराम से विवाह कर लेना।	२. लीलावती का हरिराम को शाप देना और हरिराम का बाघ को मारने के पुरस्कर मे लीलावती को पाना।	२. लीलावती का हरिराम को शाप देना और पृथ्वीराज द्वारा दोनो का विवाह करा देना।
३. लीलावती के बाघा नामक पुत्र का जन्म, बडा होने पर खेल २ मे ही १२ लडकियों से विवाह कर लेना।	३. लीलावती से बाघा का जन्म, खेल-खेल मे ही लडकियो से विवाह कर लेना।	३. लीलावती से बाघा का जन्म, सावन की तीज पर आई तिजणियो से खेल-खेल मे ही विवाह कर लेना।
४. इनसे २४ पुत्रो का जन्म होना तथा उनका विवाह गुर्जरो की कन्याओ से किया जाना।	४. इनसे २४ पुत्रो का जन्म होना तथा गुर्जरो की कन्याओ से उनका विवाह होना।	४. इनसे २४ पुत्रो का जन्म होना तथा गुर्जरो की कन्याओ से उनका विवाह कर देना।

(अ) कथा-रूप	(ब) कथा-रूप	(स) कथा-रूप
५ भिणाय के राजा बावट पडिहार के यहाँ भोज का नौकरी करना तथा वहाँ ईहड सोलकी की कन्या जेलू के विवाह का नारियल आना।	५. ईहड सोलकी के यहाँ देवी चामुण्डा का जेलू के रूप मे जन्म लेना तथा काजल से एक पुरुष का चित्र बनाकर वैसे ही पुरुष से विवाह करने का सकल्प करना।	५ बुवाल के राणा के यहाँ देवी का जैमती के रूप मे जन्म लेना।
६ विवाह मे भिणाय राजा के साथ भोज का जाना तथा जेलू का भोज के रूप पर मुग्ध होना।	६. जेलू के विवाह का नारियल भिणाय राणा के पास भेजा जाना तथा राणा की बारात मे भोज को अपने द्वारा बनाई गई तस्वीर के अनुरूप पाकर जेलू का मुग्ध होना तथा हीरा खवास के साथ भोज के पास प्रेम-सन्देश भेजना।	६. जैमती के विवाह का नारियल भोज द्वारा अपने मित्र बघट पडिहार को दिला देना और उसकी बारात में जाने पर भोज पर जैमती का मुग्ध होना तथा अपनी सखी हीरा के साथ प्रेम-सन्देश भेजना।
७. भोज का जेलू को भिणाय के राणा से छीनकर अपने घर ले आना तथा युद्ध मे भोज सहित बगडावतो का मारा जाना।	७. भोज का उसको लेने जाना तथा युद्ध में बगडावतो सहित भोज का मारा जाना।	७ बघट पडिहार से जैमती को छीन कर भोज का ले आना तथा बघट पडिहार साथ बगडावतो का युद्ध मे खेत रहना।
८. भोज के साथ जेलू का सती होना तथा उसका भोज की पत्नि सोढा को पुत्र-जन्म का वरदान देना।	८ जेलू का भोज के साथ सती होना।	८. भोज के मारे जाने पर उसके साथ जैमती का सती होना।

(अ) कथा-रूप	(ब) कथा-रूप	(स) कथा-रूप
६ सोढा से देवनारायण का अलौकिक जन्म तथा गायो को बन्दी बनाने पर राणा को देवनारायण का युद्ध मे मारना तथा देवनारायण की स्तुति से कथा का अन्त होना।	६ देवनारायण के अलौकिक जन्म की कथा तथा गायो को छुडाने के लिए अलौकिक वीरता दिखलाकर मरने की कहानी।	६ देवनारायण के जन्म की तथा गायो की रक्षा करते हुए अलौकिक वीरता की कथा।

—:०:—

'वगडावता री वात' के उक्त अ, ब, स कथा-रूपो मे से कथा-रूप 'स' मे बीसलदेव चौहान के स्थान पर पृथ्वीराज चौहान लिखा मिलता है, किन्तु पृथ्वीराज चौहान के समय का घटनाचक्र इस कहानी मे मेल नही खाता और ऐतिहासिक असगतियाँ उठ खडी होती है। पृथ्वीराज की लोकप्रियता के कारण ही कथाकार ने इसका नाम जोड दिया है। कथा-रूप 'ब' मे बाघ के लिए बारी बारी से आदमियो का जाना तथा वृद्धा के स्थान पर हरीराम चौहाण का बाघ के लिए जाना अन्य कथा-रूपो मे नही मिलता। घटनाक्रम २, ३, ४ समान रूप से सबमे मिलता है, केवल कथा-रूप 'ब' मे जेलू का काजल से चित्र बनाकर, चित्र के अनुरूप व्यक्ति से विवाह करने का सकल्प लेने की घटना अन्य कथा-रूपो मे नही मिलती। कथा-रूप स' मे जैमती का पिता बुवाल का राणा होता है जबकि कथा-रूप 'अ' और 'ब' मे ईडर का सोलकी राणा बतलाया गया है। कथा-रूप 'अ' और 'स' मे जोगी के उबलते तेल के कढाव में भोज को डालने की योजना तथा भोज द्वारा जोगी का स्वर्ण-पुरुष हो जाना, बगडावतो के अनीतिपूर्ण कार्यों मे शेषनाग के अग्नि लगना आदि की अर्न्तकथायें एक-सी मिलती हैं।

१३ शेणी बीजाणंद

कथा का मूल स्त्रोत और प्राचीनता . राजस्थान की एक अन्य लोकप्रिय-कथा 'सयणी चारणी' या 'शेणी बीजाणद' के नाम से प्रसिद्ध है जिसका परिचय प्रथम अध्याय मे दिया जा चुका है। इस लोक-कथा का मूल स्त्रोत केवल काल्पनिक न होकर शेणी और बीजाणद की प्रेम-घटना है। शेणी और बीजाणद ऐतिहासिक व्यक्ति है और कथा मे आये मू छाला मालदेव तथा अकबर की घटना भी इतिहास सम्मत है। इसकी पुष्टि मुहता नैणसी री ख्यात' से होती है। 'मुहता नैणसी री ख्यात' मे इस घटना का उल्लेख हमे इस प्रकार मिलता है।

"रावल कान्हडदेव के भाई मू छाले मालदेव जो सामन्तसिंह का दूसरा पुत्र था और जिसको कान्हडदेव ने अपना वश रखने के वास्ते गढ के नीचे भेज दिया था, तुर्कों की फौज का बहुत बिगाड किया। सिवाने का खान उसके पीछे लगा। मालदेव देवी सेणी के साथ दिल्ली गया। जब देवी एक गुफा मे घुमी तो मालदेव भी उसके साथ चला गया। आगे बहुली नामक जोगिनी बैठी थी जिसने अपने गले का हार मालदेव को दिया और रुधिर भरा एक पात्र भी उसके सामने रक्खा। मालदेव ने उसको (ग्लानिवश) पिया नही, वह अमृत था, उसे थोडासा मुख से लगाकर रख दिया। उससे उसकी मू छे बढ गई। वह मू छाला कहलाया। कान्हड़देव की आज्ञा पाकर

वह बादशाह से मिला था। बादशाह ने उसकी सेवा से प्रसन्न हो, चितौड का राज्य दिया था जिस पर सात वर्ष राज्य किया।"[1]

मध्ययुगीन सामन्त-काल मे चारणो के प्रति बडी श्रद्धा थी। कुछ चारणो की कन्याये प्रभावशाली व्यक्तित्व के कारण देवी के रूप मे पूजी जाने लगी थी। मेहा नामक चारण की छहो कन्याओ को उत्तर भारत मे अब भी देवी के रूप मे पूजा जाता है।[2] बीकानेर के भूतपूर्व नरेशो की कुलदेवी करणीमाता मेहा चारण की छठी सन्तान थी। उसने सन् १४१६ मे देशनोक कस्बे का शिलान्यास किया था, जहा उसका भव्य मन्दिर अब भी विद्यमान है। उसकी बडी बहिनें विशेषत: लालबाई और फूलबाई मेवाड की अनुसूचित जातियो द्वारा पूजी जाती है। बाल्य-काल मे ही करणी मे आध्यात्मिक, आधिदैविक प्रवृत्तियो के दर्शन हुए जिससे उसे जीवनकाल मे ही देवी का पद प्राप्त हो गया था। २७ वर्ष की आयु मे दीपा नामक व्यक्ति से उसे प्रेम हो गया, किन्तु अपने प्रेम मे असफल रहने के कारण उसने सन्यास ले लिया। वेदाचारण की कन्या शेणी भी करणी के ही समकालीन थी। करणी के समान ही शेणी को भी आध्यात्मिक, आधिदैविक प्रवृत्तियो के कारण उसके जीवन-काल मे ही देवी का पद मिल गया प्रतीत होता है। शेणी को भी करणी की भाँति, कुछ भिन्न रूप से प्रेम मे असफलता मिली थी जिससे उसे सन्यासनी होकर हिमालय मे गलने के लिए जाना पडा था। इस प्रकार हम देखते हैं कि शेणी बीजाणद की यह प्रेम-कथा १५वी शताब्दी के उत्तरार्द्ध या १६वी शताब्दी के पूर्वार्द्ध मे प्रचलित हो चली थी।

२. पौराणिक स्त्रोत वाले प्रेमाख्यान :

१. नलराज चौपई

नलदमयन्ती की प्रेम-कथा इतनी लोकप्रिय रही है कि सस्कृत भाषा मे ही नही, अपितु अर्वाचीन भारतीय भाषाओ, यथा-राजस्थानी, गुजराती मे इस कथानक पर अनेक प्रेमाख्यान ग्रथ लिखे गये। इसकी लोकप्रियता से सूफी प्रेमाख्यानकार भलि-भाँति परिचित थे। शेख कुतबन ने अपने प्रेमाख्यान 'मिरगावती' मे इसका उल्लेख किया है। पद्मावती मे जायसी भी इसे नही भूल पाया है। फारसी मे इस प्रेम-कथा को लेकर प्रेमाख्यान लिखे गये। सूरदास का 'नलदमन' इसी कोटि का प्रेमाख्यान है।

---

१. मुहता नैणसी री ख्यात, प्रथम भाग (काशी ना प्र. सभा) पृ स. १५३।

२. धर्मयुग (१८ सितम्बर, १६६६) चूहो का विचित्र मन्दिर, पृ. स. १५३।

कथा का मूल स्त्रोत और वकास :

यह कथा सर्वप्रथम महाभारत के 'नलोपाख्यान' के रूप मे आती है। महाभारत के वन-पर्व वाले ५३वे से लेकर ७९वे अध्याय तक यह प्रेमाख्यान चलता है। जब युधिष्ठर अपने सकट के दिनो मे बृदाश्व ऋषि के आश्रम मे था, तब उसने ऋषि से दुखित होकर कहा था कि मेरे समान दुखी कौन है ? तब उसे सान्तवना देने के लिए ऋषि ने नल की कथा कही थी। इससे पता चलता है कि महाभारत मे भी यह कथा दृष्टात रूप मे कही गई है। इस कथा मे आये हुए इन्द्र, अग्नि, वरुण आदि वैदिक देवताओ के उल्लेख से यह कथा वैदिक-युगीन प्रतीत होती है।

महाभारत के बाद यही कथा सोमदेव के कथा-सरित्सागर मे उसके ५६वें अध्याय मे वर्णित है।[1] कथा-सरित्सागर का 'नलोपाख्यान' महाभारत की अपेक्षा सक्षिप्त है। दोनो ग्रथो मे कथा का आरम्भ प्राय. एक ही प्रकार से होता है, किन्तु महाभारत मे जहाँ हस पहले राजा नल से भेट करता है, वहाँ कथा-सरित्सागर मे वह पहले दमयन्ती से ही मिल लेता है। इस प्रकार कथा-सरित्सागर मे स्वयवर का प्रबध स्वय दमयन्ती के कहने से होता है। राजा नल को मार्ग मे इन्द्र, वरुण और यम के अतिरिक्त वायु देवता भी मिलते है। उसके ऊपर कलि का तथा उसके भाई पुष्कर के ऊपर द्वापर का बुरा प्रभाव पडता है। द्यूत-क्रीडा एक बैल के लिए की जाती है। इसमे राजा बौना न होकर कुरूप हो जाता है। इन छोटे-छोटे परिवर्तनो के अतिरिक्त मूल-कथा दोनो मे समान है।

९वी शताब्दी मे केरल के कवि वासुदेव ने नल एव दमयन्ती के पुनर्मिलन सम्बन्धी कथा को लेकर चार सर्गो में नलोदय-काव्य की रचना की है। इसी प्रकार १२वी शताब्दी के उत्तरार्द्ध में श्री हर्ष कवि ने अपने प्रसिद्ध महाकाव्य 'नैषधीयम्' का भी निर्माण किया है। किन्तु यहाँ भी कोई वैसा मौलिक अन्तर प्रतीत नही होता।[2]

आधुनिक भाषाओ मे 'नलोख्यान सम्बन्धी' रचे गये प्रेमाख्यानो मे गुजराती प्रभावापन्न राजस्थानी भाषा मे लिखा कवि प्रेमानन्दकृत 'नलाख्यान' अपनी कलात्मक उत्कर्षता की दृष्टि से महत्वपूर्ण स्थान रखता है। श्री अनन्तराम, प० रावल के अनुसार 'प्रेम नदना-आख्यान समूह मा नलाख्यान प्रथम पकित नु

१. The ocean of the story. P. 237-50.

२. भारतीय प्रेमाख्यान की परम्परा—श्री परशुराम चतुर्वेदी (राजकमल प्रकाशन, दिल्ली) पृ सं. १४।

अने घणा ने मेत तेनु श्रेष्ठ सर्जन छे।[1] प्रेमानन्द कृत नलाख्यान महाभारत के नलोपाख्यान के समान ही है, कोई मौलिक अन्तर नही जान पडता।

जैन कवियो मे इस प्रेमाख्यान को लेकर लिखने वाले सर्व प्रथम कवि ऋषि वर्धन सूरि थे जिन्होने स० १५२१ मे 'नलदवदती रास' की रचना की। इसका सम्पादन अर्नेष्ट वेन्डर (फिलाडेल्फिया) ने सन् १६५१ ई. मे किया था। इसके बाद सवत् १६१२–१४ के बीच मे लिखा मुनि विनयभद्र का 'नलदमयन्ती रास' सवत् १६४१ मे लिखा महीराज कृत नलदवदती रास, स. १६६५ मे रचित वाचक नयनसुन्दर का नलदमयन्ती (प्रसिद्ध आनन्द काव्य महोदधि ग्रथ ६) व उपाध्याय गुणविजय का नल दमयती, सवत् १६६४ मे वाचक मेघराज कृत 'नलदमयती रास', वाचक समयसुन्दर कृत स १६७३ मे रचित 'नलदमयन्ती चौपई', १७वी शताब्दी मे सेवक नाम के कवि द्वारा रचित 'नलदवदती विवाहलु, पालणपुर के श्रीमाली वणिक वासणसुत भीत कृत स० १७२७ मे रचित नलाख्यान एव स० १७८२ मे रचित गुलाल विजय कृत 'नलदमयन्ती रास' नामक प्रेमाख्यान उपलब्ध होते है। नलोपाख्यान सम्बन्धी एकाद गद्य कृति भी १७वी शताब्दी मे रची गई थी।

कथानकों का तुलनात्मक अध्ययन :

उपर्युक्त इन जैन-प्रेमाख्यानो मे महाभारत के नलोपाख्यान की मूल घटनाये सुरक्षित होते हुये भी इनमे जैन-धर्म के सिद्धान्तो के अनुरूप परिवर्तन कर दिया गया है। महीराज कृत नल दवदती रास' मे मगलगान तीर्थंकर की स्तुति से होता है तथा इसमे पूर्वभव की कहानी भी जोड दी गई है। पूर्वभव मे मम्मण राजा और वीरमती रानी जैन-धर्म मे दीक्षित थे, पुन अगले जन्म मे राजा ने पातनपुर मे धम्मिल अहीर के घर जन्म लिया तथा धण नाम रखा गया। रानी वीरमती भी 'धूसरी' नामक अहीर-कन्या के रूप मे पैदा हुई। ये दोनो ही अपने पुण्य कर्मो के प्रभाव से कोसलदेश के राजा रानी बने। रानी के स्वप्न मे सफेद हाथी देखने पर उत्तम सन्तान के रूप में नल का जन्म हुआ। महीराज कृत नलदवदती रास तथा समयसुन्दर कृत 'नलराज चौपई' दोनो मे ही नल के छोटे भाई का नाम पुष्कर के स्थान पर कूबर दिया है। दोनो ही प्रेमाख्यानो मे हस के द्वारा सन्देश-प्रेषण की घटनाये नही है तथा न ही इन्द्र, वरुण आदि वैदिक और पौराणिक देवताओ का नामोल्लेख है। महीराज कृत 'नलदवदती' मे महाभारत के ऋतु-वर्ण के स्थान पर दधि-वर्ण नाम

---

१. कवि प्रेमानन्द कृत 'नलाख्यान', सम्पादक—अनन्तराम, प० रावल (गूर्जर ग्रथ रत्न कार्यालय, अहमदाबाद) पृ. स. २२।

का उल्लेख है तथा राजा नल पागल हाथी को वश मे करके वहा के राजा का अनुग्रह प्राप्त कर लेता है। समयसुन्दर कृत 'नलराज चौपई' मे नल सुसमा नगर मे हाथी को वश मे करके वहा के राजा का अनुग्रह प्राप्त करता है। नल द्वारा पर्वत की गुफा मे शान्तिनाथ की आराधना करना जैन-धर्म के सिद्धान्तो के अनुसार है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि महाभारत के नलोपाख्यान मे इन जैन मुनियो ने कुछ नामो और घटनाओ मे ही परिवर्तन नही किया है, बल्कि कथा के मूलभाव को ही बदल दिया है।

२ श्री कृष्ण रूक्मिणी-प्रणय सम्बन्धी प्रेमाख्यान

कथानको का मूल-स्त्रोत एवं क्रमिक विकास :

श्रीकृष्ण एव रुक्मिणी-प्रणय सम्बन्धी-राजस्थानी प्रेमाख्यानो के कथानको का मूल-स्त्रोत श्रीमद्भागवत के दशम स्कध वाले ५२वे से ५४वे अध्यायो मे वर्णित 'श्रीकृष्ण रूक्मिणी' कथा से है। यह कथा विष्णु-पुराण (पाचवे अध्याय का छब्बीसवा खण्ड) मे भी आई है। इसमे श्रीकृष्ण द्वारा रुक्मिणी हरण को राक्षस-विवाह की सज्ञा दी गई है। हरिवश-पुराण (५६वा एव ६०वा अध्याय) मे दोनो प्रेमियो के गुण-श्रवण द्वारा प्रेमासक्त हो जाने पर भी श्री कृष्ण और बलराम रुक्मिणी के यहाँ उसका शिशुपाल के साथ विवाह देखने जाते है और उसके पूर्व ही रुक्मिणी को देव-मन्दिर के निकट पाकर श्रीकृष्ण उसका हरण कर लेते है। इस प्रेमाख्यान का सरस काव्यात्मक रूप सर्वप्रथम हमे युवराज राम-वर्मन कृत 'रुक्मिणी परिणयम्' नामक सस्कृत नाटक में मिलता है जिसमे शृगार-रस का सरस चित्रण किया गया है। सम्भवत 'वेलि क्रिसन रुक्मिणी री के रचयिता पृथ्वीराज राठौड को वेलि लिखने की प्रेरणा इसी नाटक से मिलती है, क्योकि वेलि की शृ गार-रस सम्बन्धी बहुत-सी उपमाये तथा अन्य काव्यात्मक सरस वर्णन इस नाटक से मिलते है। मध्य-युग मे इस प्रसग को लेकर अन्य भी रचनायें भी लिखी गई जिनमे करमी साखला कृत किसनजी री बेल (र. का. स. १६३४ से पूर्व), सामाजी भूला कृत 'रुक्मिणी-हरण' (र का. स. १६३२–१७०३), विट्ठलदास देवीदास कृत रुक्मिणी-हरण (१८वी शताब्दी वि पूर्वार्द्ध) मुरारदास कृत 'गुण विजे व्याह' (र का १७७५ वि.) आशाकृत 'किसन किलोल' (र. का. १७८७ वि) एव पद्मतेली कृत 'रुक्मिणी मगल' (र का १६वी शताब्दी का पूर्वार्द्ध) उल्लेखनीय है। इसके अतिरिक्त इस विषय पर लिखने वाले अनेक कवियो ने 'रुक्मिणी हरण' का नाम रुक्मिणी-स्वयवर भी कर दिया है। ऐसे नामकरण वाली रचनाओ मे

महानुभाव पथी नरेन्द्र कवि की 'मराठी' कृति 'रुक्मिणी-स्वयवर' का नाम भी लिया जा सकता है।[1]

यद्यपि इन काव्यो का कथानक मूल—रूप से एकसा ही है, किन्तु भिन्न-भिन्न कवियो ने काव्य-सौष्ठव के लिए अपनी कल्पना के अनुसार परिवर्तन अवश्य कर दिये है। कामी साँखला कृत किसनजी री वेल, पृथ्वीराज कृत वेलि क्रिसन रुक्मिणी री, एव पद्म तैला कृत 'रुक्मिणि मगल' को छोडकर उपर्युक्त शेष कृतियो मे प्रेम की भावना उभर नही पाई है। तथा अपने आराध्य देव की भक्ति-भावना के समक्ष दव सी गई है। पद्म तैला कृत 'रुक्मिणि मगल' की प्रेम-भावना मे मीराँ की हृदय-विह्वलता तथा आतुरता, कवीर की रहस्यमयता एव गोरखपथी साधुओ से प्रभावित कथा खप्पर आदि पहिनकर प्रियतम के वियोग मे 'जोगन' बनने की भावना का समन्वय मिलता है। श्रीकृष्ण के वियोग मे रुक्मिणी की हृदय-विह्वलता का जैसा मार्मिक-चित्रण इसमे मिलता है, वह वेलि को छोडकर अन्य कृतियो मे दुर्लभ है।

३. उषा एवं अनिरुद्ध के प्रेम-सम्बन्धी प्रेमाख्यान

कथानकों का मूलस्रोत और क्रमिक विकास :

उषा एव अनिरुद्ध के प्रेम-प्रसग को लेकर सवत् १५१२ मे परमाणद ने 'ओखाहरण' तथा सवत् १५५४ मे जनार्दन ने 'उषाहरण' नामक प्रेमाख्यान लिखे। ये दोनो ही प्रेमाख्यान गुजराती प्रभावापन्न राजस्थानी भाषा की कृतियाँ है। इस कथा का मूल-स्त्रोत भी हमे भागवत के दशम् स्कन्ध मे मिलता है। हरिवश-पुराण[2] मे यह कथा विस्तार से दी गई है। वैवर्तपुराण[3], विष्णु पुराण[4], शिव-पुराण[5], ब्रह्मपुराण[6], तथा अग्निपुराण[7] मे भी लगभग उसी रूप मे दी गई है। प० परशुराम चतुर्वेदी ने लिखा है कि उषा एव अनिरुद्ध के इस प्रेमाख्यान मे सबसे उल्लेखनीय वात स्वप्न-दर्शन द्वारा प्रेम-भाव के उत्पन्न होने तथा तदुपरान्त

---

१. भारतीय प्रेमख्यान—प० परशुराम चतुर्वेदी, पृ स. १६।
२. हरिवश-पुराण (२६५वे अध्याय से २७७वा अध्याय)।
३. ब्रह्म वैवर्तपुराण (अ. ११४ अ. २०)।
४. विष्णु पुराण (अ. ५ अ. ३२-३३)।
५. शिव-पुराण (अ ५ अ. ३२-३३)।
६. ब्रह्म-पुराण (अ. १२)।
७. अग्नि-पुराण (अ १२)।

उसके फिर चित्र-दर्शन द्वारा पुष्टि पाकर विकसित होने मे देखी जाती है। इसके उदाहरण हमे अभारतीय प्रेमाख्यानो मे भी मिलते है। उषा एव अनिरुद्ध की प्रेम-कथा सोमदेव के कथा-सरित्सागर मे भी आई है तथा भागवत की कथा से मिलती-जुलती है। अन्तर केवल यही है कि यहॉ उषा गौरी की आराधना करके उनसे वर पाती है कि जिस किसी के साथ वह स्वप्न मे रमण करेगी, वही उसका पति होगा। बाणासुर के सम्बन्ध मे इस कथा के अन्तर्गत, केवल इतना ही आया है कि वह अनिरुद्ध के प्रति उषा के प्रेम की सूचना पाकर क्रुद्ध हो जाता है, किन्तु अनिरुद्ध उसे स्वय तथा अपने पितामह कृष्ण की सहायता से उसे हरा देते है। इस कथा मे शिव के किसी युद्ध की चर्चा नही की जाती जिसका कारण कदाचित् यही हो सकता है कि शैव सोमदेव को अपने इष्टदेव का लडना एव विजित भी होना अच्छा नही लगा होगा। एक दूसरी भी विशेषता जो इस प्रेमाख्यान मे लक्षित होती है वह प्रेम-लीला के प्रसग मे प्रेम-पात्री के लिए युद्ध ठान देना तथा उसका उसके पिता के घर से बलात्कारपूर्वक हरण कर लाना भी है जो पौराणिक साहित्य के अन्तर्गत प्रधानतः श्रीकृष्ण और उनके परिवार मे ही दीख पडता है।'[१]

कथानको की तुलना

परमाणद कृत ओखाहरण तथा जनार्दन कृत उपा-हरण प्रेमाख्यानो की कथा श्रीमद्भागवत् की कथा से समानता रखती है। बाणासुर शोणितपुर में राज्य करता है। वह तप करने कैलाश पर्वत पर जाता है और भगवान शकर के प्रसन्न होने पर उसे वरदान मे सहस्त्र हाथ मिलते है। उसकी पुत्री उषा को स्वप्न मे अनिरुद्ध दिखलाई देते है और उसके वियोग मे वह पागल-सी हो जाती है। चित्र-दर्शन के द्वारा उसके प्रेम की पुष्टि होती है तथा वियोग सहन नही कर पाने पर उसकी सखी माया से सोते हुए अनिरुद्ध को उठा लाती है। बाणासुर के क्रुद्ध होने पर श्रीकृष्ण द्वारा उषा का हरण हो जाता है। यह कथा श्री मद्भागवत् में वर्णित कथा के समान ही है, किन्तु काव्यात्मक होने से परमाणद ने उषा के वियोग का हृदय-स्पर्शी-वर्णन किया है। इसमे श्री मद्भागवत् के विस्तृत-वर्णन को छोडकर काव्यात्मक दृष्टि से भावात्मक प्रसगो का ही चयन किया गया है।

४. महादेव-पार्वती री वेलि

कथानक का मूल-स्त्रोत तथा क्रमिक विकास :

'महादेव पार्वती वेलि' की कथा-वस्तु का मूल-स्त्रोत 'शिवपुराण' है। वेलि मे वर्णित प्राय सभी उपकथाये शिव-पुराण में उपलब्ध है। शिव-पुराण मे उपकथाये

---

६. भारतीय प्रेमाख्यान की परम्परा (राजकमल प्रकाशन दिल्ली)

विस्तारपूर्वक कही गई है जबकि 'वेलि' मे कवि को वस्तु, रूप, शृ गार आदि का वर्णन ही अधिक प्रिय होने के कारण कथा को केवल निमित्त ही बनाया गया है। शिव-पार्वती के प्रणय-प्रसग को लेकर लिखा गया महाकवि कालीदास का 'कुमार-सम्भव' प्रसिद्ध ही है।

इस प्रसग पर लिखी गई 'रुकिमणी-मगल' के नामकरण के साम्य पर किसी अज्ञात कवि कृत राजस्थानी भाषा मे लिखी गई 'पार्वती-मगल' की रचना भी मिलती है। किन्तु रामायण और महाभारत की भाँति शिव-पुराण लोक-प्रचलित ग्र थ न होने के कारण इस प्रसग को लेकर अधिक रचनाये नही लिखी गई। शिव-विषय कथानको मे विवाह का प्रसग अधिक प्रसिद्ध और लोकप्रिय हो पाया है।

३. ऐतिहासिक स्रोत वाले प्रेमाख्यान

पिछले पृष्ठो मे उल्लेख किया जा चुका है कि लोक-गाथात्मक प्रेमाख्यानो का आधार भी प्राय घटित घटनाये होती हैं, किन्तु उनमे कल्पना का अधिक उपयोग किया जाता है। ऐतिहासिक-प्रेमाख्यानो मे भी घटना-सयोजन के लिए तथा काव्यात्मक चमत्कार उत्पन्न करने के लिए कल्पना का सहारा लेना पडता है और साथ ही लोक-कथा तत्वो का भी। किन्तु ऐतिहासिक-प्रेमाख्यानो के प्रमुख-पात्र ऐतिहासिक व्यक्ति होते है और घटनाये भी इतिहास-सम्मत होती हैं। यहाँ कुछ प्रमुख ऐतिहासिक प्रेमाख्यानो का विवेचन किया जा रहा है।

१. लाखा फुलाणी

'लाखा फुलाणी' प्रेमाख्यान का नायक लाखा फुलाणी एक प्रभावशाली ऐतिहासिक व्यक्ति है। भारतीय वाङ्गमय मे इसका उल्लेख बहुत मिलता है। सुप्रसिद्ध इतिहासकार कर्नल टॉड ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'पश्चिमी भारत की यात्रा'[१] मे इसका उल्लेख करते हुए लिखा है कि "कजरकोट के विजेता मोर के वशजो ने इस पर पाचवी पीढी तक अधिकार बनाये रक्खा, किन्तु बाद मे प्रसिद्ध लाखा फुलाणी के साथ जिसका उल्लेख तत्कालीन प्रत्येक जाति के इतिहास मे मिलता है, यह शाखा भी नष्ट हो गई। मोर से सरज, उसके फूल और फूल के फुलाणी उपनाम-धारी लाखा हुआ जो सतलज से लेकर समुद्र तट तक अपने लूट अभियानो के लिए प्रसिद्ध था। लाखा का उत्तराधिकारी रामधन हुआ और उसको ही कच्छ मे जाडेचा रियासत का सस्थापक माना जाता है। कर्नल टॉड जब कच्छ

---

१. James Tod-Travells in western India, P. 481

मे गया तो उस समय देसल या मारासी राज्य करते थे। उसने लाखा द्वारा बनाये गये शीशमहल तथा लाखा के पलग का भी उल्लेख किया है। वह लिखता है कि "इस पलग के सोने के पाये है और सामने अखण्ड ज्योति जलती है। यह पलग जाडेचो के कुल देवताओ मे सम्मिलित कर लिया गया है।"

लाखा के जन्म के विषय मे एक प्राचीन दोहा इस प्रकार प्रचलित है –

शाके सात सतोतरो, पातम श्रावण मास।
सोनल लाखो जन्मियो, सूरज जोतप्रकाश ॥

इससे विदित होता है कि वह शाके ७७७ मे पैदा हुआ था और उसकी माता का नाम सोनल था। यह सोनल कुडधर रैवारी की पुत्री रूप मे उत्पन्न कोई अप्सरा थी।[1] जैसलमेर मे प्रचलित एक लोक-गीत के अनुसार लाखा का जन्म शुक्लपक्ष की चतुर्दशी को पूर्णिमा की घडियो मे हुआ था। यथा—

"चादणी रे चवदस री रात, राय पूनम री रे, घडिया रे लखपत जमलियो।"[2]

'मुहता नैणसी री ख्यात' के अनुसार लाखा फुलाणी सीहाजी राठौड के हाथ से मारा गया था।[3] जोधपुर राज की ख्यात मे भी उल्लेख है कि सीहाजी ने मूलराज सोलकी की कन्या से विवाह किया और विक्रम स. १२०६ कार्तिक सुदी ७ (११५२ ई) को लाखा सीहाजी के हाथ से मारा गया था।[4] कर्नल टॉड ने भी सीहाजी के हाथ से लाखा की पराजय का उल्लेख किया है।[5] लाखा फुलाणी सम्वन्धी जो हस्तलिखित प्रति रा प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर से प्राप्त हुई है, उसमे भी लाखा

---

१ मुहता नैणसी री ख्यात, द्वितीय खण्ड (काशी ना प्र सभा) पृ स २२६–२३३।

२ मरु भारती, वर्ष ३, अ क ३, पृ स. ५८।

३. मुहता नैणसी री ख्यात, द्वितीय खण्ड, पृ. ५०, ५५ और ५८।

४ जोधपुर राज की ख्यात, जिल्द १, पृ. १०–१५।

५. "राव सीहा सर्वप्रथम बीकानेर २० मील पश्चिम कुलमुद के सोलकी सरदार के यहा गया, जिसने उनका बडा आदर किया। उसके बदले मे उसने लाखा फुलाणी से युद्ध करने मे उक्त सरदार की सहायता की जिससे लाखा की पराजय हुई।"
राजस्थान–जिल्द २ प. ६३६–४२।

का सीहाजी के हाथ से मारा जाना लिखा है।[१] किन्तु प्रसिद्ध इतिहासकार प गौरी-शकर हीराचद ओझा ने अपने जोधपुर के इतिहास मे पुष्ट प्रमाणो के आधार पर यह सिद्ध किया है कि लाखा फूलाणी सीहाजी के हाथो न मारा जाकर विक्रम स १०३६ (९८० ई.) के लगभग मूलराज सोलकी के हाथ से मारा गया था।[२]

ओझाजी के मतानुसार लाखा का सीहाजी के हाथ से मारा जाने के उल्लेखो का कारण उसका सम्पत्तिशाली और दानी होने के कारण यश का दूर-दूर तक फैलना है तथा चारणभाट आदि उसकी दानशीलता के कवित्त, दोहे आदि गाया करते थे। इस प्रकार उसका नाम प्रसिद्ध होने से उसके मारे जाने की कथा सीहा के साथ जोड दी गई है।

फार्बस कृत 'रासमाला' मे भी ओझा के मत की पुष्टि मिलती है।[३] इसकी ऐतिहासिकता के विषय मे भी इस ग्र थ से कुछ-कुछ जानकारी प्राप्त होती है। उक्त 'रासमाला' से यह भी विदित होता है कि मूलराज और लाखा फुलाणी की शत्रुता के कई कारणो मे से एक कारण लाखा के द्वारा सावतसिह के पुत्र अहिपति को जो मूलराज का ककट था—उसकी माता के साथ शरण देना भी है।[४]

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि 'लाखा फुलाणी' प्रेमाख्यान का नायक और अन्य प्रमुख-पात्र तथा घटनाये इतिहास सम्मत है। ऐसे प्रभावशाली व्यक्ति के सम्बन्ध मे कई किवदतियाँ भी प्रचलित हो जाया करती है। चारण भाटो द्वारा उसके जीवन से सम्बन्धित रोमाचक घटनाये भी जोड दी जाती हैं। उक्त कथा मे कल्पना और लोक-कथा तत्वो का भी खुलकर सहारा लिया गया है। यथा—फूलजी की पटरानी लाखा की सौतेली मा का उस पर मोहित होकर काम प्रस्ताव रखना तथा लाखा को देश निकाले की घटनाये इसी प्रकार की है।

---

१. लाखा फुलाणी (ह. लि.) रा. प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्र थाक–३५५५ (२७) लि. का. १८२९।

२. राजपूताने का इतिहास–चौथी जिल्द, पहला भाग (जोधपुर राज्य का इतिहास, प्रथम खण्ड) पृ. स १५० से १५२ तक।

३. "सीहाजी राठौड जोधपुर और इडर के राजवशियो का पूर्वज था, यह तो ठीक है, पर वह मूलराज के समय नही था। वह तो उससे २३३ वर्ष बाद हुआ था।"

—फार्बस कृत रासमाला प्रकरण–४, पृ. स. १२३। (हिन्दी रूपान्तरकार—श्री गोपाल नारायण बहुरा)।

४. वही, पृ. स. ७९।

२. वीरमदे सोनीगरा री बात

वीरमदे सोनीगरा री बात के कथानक का स्त्रोत भी वीरमदे का ऐतिहासिक व्यक्तित्व और उस व्यक्तित्व से सम्बन्धित घटनायें हैं। भारतीय इतिहास मे जालौर का साका समस्त पश्चिमोत्तरी भारत की एक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक घटना है। जब अलाउद्दीन खिलजी ने जालौर पर आक्रमण किया तो इस अवसर पर हजारो ही वीराङ्गनाओ को जौहर-व्रत का पालन करते हुए अग्नि-प्रवेश करना पडा था और कान्हडदे, वीरमदे, राणकदे जैसे अगणित वीरो को मातृभूमि की रक्षा के लिए आत्मोत्सर्ग करना पडा था।[1] महता नैणसी री ख्यात मे 'सोनीगरा' को चौहानो की शाखा बतलाया गया है। यथा—

"चौहानो की २४ शाखा मे एक शाखा सोनगरा, जालौर (इसका पुराना नाम स्वर्णगिरि या सोनगिर था, उसी पर सोनगरे प्रसिद्ध हुए।) के स्वामी थे।"[२] "रावल सामत सिह का पुत्र रावल कान्हडदेव था जो दशमा शालिग्राम और गोकुलनाथ भी कहलाया। स० १३६८ मे जालौर के गढ के नीचे आलोप हुआ।"[३] कर्नल टॉड ने भी अपने प्रसिद्ध ग्रथ पश्चिमी भारत की यात्रा मे कान्हडदेव की आबू विजय का उल्लेख किया है तथा वीरमदे को खदेडने के लिए अलाउद्दीन का जालौर पर आक्रमण का भी उल्लेख किया है।[४] चन्द्रावती के (सिरोही राज्य के अन्तर्गत) वशिष्ठ मन्दिर के शिलालेख मे भी जालौर के चौहान कान्हडदे द्वारा आबू पर विजय का उल्लेख है क्योकि उसके पुत्र वीरमदे को अलाउद्दीन ने स० १३४७ अथवा १२९१ ई० मे जालौर से निकाला था, इसलिए यही सम्भव है कि धारावर्ण के पुत्र प्रेमदस (प्रहालादन) से ही कान्हडदेव ने आबू का अधिकार छीना था।[५]

कान्हडदे की पुत्री राजकुमारी सोनगरा का रावल लाखणसी से विवाह की पुष्टि भी मुहता नैणसी री ख्यात से होती है। उसमे उल्लेख है कि रावल लखनसेन (जैसलमेर) के लिए जालौर से सोनगरा का नारियल भेजा गया था, किन्तु नारियल

---

१. राजस्थानी साहित्य-सग्रह, भाग—२, सम्पादक—डा० पुरुषोत्तम लाल मेनारिया (वीरमदे सोनगरा री बात)।

२. नैणसी री ख्यात, प्रथम भाग : अनुवादक श्री रामनारायण दूगड (काशी, ना. प्र सभा), पृ. स. १५२।

३. वही, पृ स. १३१।

४. James Tod : Travells ın western Indıa, P. 128.

५. James Tod : Travells ın western Indıa, P. 128.

झेलने में अमरकोट की सोढी का उसे डर था। सोढी ने उससे सोनगरा से विवाह करने के बाद घृणा और तिरस्कार से छोडने का वचन लिया।[1]

इसी प्रकार पजू नायक का रुष्ट हो अलाउद्दीन के पास जाना, अपनी शारीरिक कला दिखलाकर बादशाह को प्रसन्न करना, बादशाह द्वारा वीरमदे को बुलाया जाना, वीरमदे के रूप और सौन्दर्य पर बादशाह की लडकी का मोहित होना आदि घटनाओ का उल्लेख मुहता नैणसी री ख्यात मे है।[2]

सुलतान अलाउद्दीन के हरम मे कर्ण देवी जैसी कुछ हिन्दू बेगमें भी थी, अत उनमे से किसी शाहजादी का वीरमदे पर मोहित होकर उससे विवाह करने की अभिलाषा स्वाभाविक लगती है। मुहता नैणसी री ख्यात मे इसका उल्लेख निम्न प्रकार से मिलता है :—

"पातसाहजी नै बेटी एक वडी कवारी हुती सु निपट रीझाई। पछै पातसाह जी पाजु वीरमदे नै डेरा री सीख दी। पातसाह री बेटी हुवी खटपाटी ले पडी। धान खाय न पाणी पीवे। सारी हुत्यां समझाई ओ हिन्दू, तू तरकाणी, किण भात परणावा ?"[3]

इस प्रकार हम देखते हैं कि 'वीरमदे सोनगरा री वारता' के पात्र व घटनाये ऐतिहासिक है। वार्ता के प्रथम भाग मे कल्पना और कथानक रूढियो का सहारा लिया गया है। पत्थर की पुतली का अप्सरा होना और उससे वीरमदे के जन्म आदि की घटनाये प्रचलित चली आरही कथानक-रूढियो का ही परिणाम है जिनका प्रयोग वार्ताकार ने कहानी मे चमत्कार उत्पन्न करने के लिए किया है। वार्ता का उत्तरार्द्ध इतिहास सम्मत घटनाओ पर आधारित है।

३ पद्मिनी चरित्र चौपई

पद्मिनी से सम्बन्धित प्रेम-कथा को लेकर अनेक कवियो ने अपनी लेखनी को धन्य किया है। पद्मिनी का सबसे प्रसिद्ध वर्णन सन् १५२० ई० मे रचित जायसी के पद्मावत-काव्य मे मिलता है। राजस्थानी भाषा मे इस विषय पर लिखा गया पहला काव्य-ग्रंथ 'गोरा बादल कवित' है जिसका रचना-काल डा० दशरथ ओझा

---

१. मुहता नैणसी री ख्यात, भाग–२, (प्रकाशन–रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर) पृ. स. ३९।

२. वही, (प्रथम भाग) पृ. स. २१७।

३. वही, प. स. २२१।

के अनुसार पद्मावत से अर्वाचीन नही जान पडता।[1] सवत् १६४५ मे जैन-कवि हेमरत्न द्वारा रचित 'गोरा बादल चौपई' एव वि० स० १६८० मे जटमल नाहर रचित 'गोरा बादल चौपई' भी उपलब्ध होते हैं। केवल अवधी और राजस्थानी मे ही नही, फारसी और उर्दू मे भी इस मनोहर कहानी को लेकर काव्य-ग्र थ रचे गये। 'हुसैन गजनवी'' ने "किस्सए पद्मावत" नामक एक फारसी काव्य लिखा। सन् १६५२ ई० मे राय गोविंद मु शी ने पद्मावत की कहानी फारसी गद्य मे "तुक फतुल कु लूब" के नाम से लिखी। इसके बाद मीर जियाउद्दीन 'इब्रत' और गुलाम अली 'इशरत' ने मिलकर सन् १७९६ ई० मे उर्दू शेरो मे इस कहानी को लिखा।[2]

इस प्रकार हम देखते हैं कि अनेक सिद्धहस्त कवियो और लेखको की भावना से भावित होकर पद्मिनी हमारे लिए एक भावनात्मक चरित्र बन गया है जो न केवल अपने अनुपम सौन्दर्य का ही, बल्कि बुद्धियुक्त धैर्य, असीम साहस और पतिव्रत्य का भी प्रतीक है। यह एक ऐसा चरित्र है जो लोक-कथाकार की मानसिक सृष्टि होते हुए भी लोक-कथाओ के द्वारा लोक-मानस मे रमता हुआ ऐतिहासिक-सत्य बन गया है।

पद्मावती विषयक इन काव्य ग्रथो मे, उनके रचयिताओ द्वारा भूमिका कथा, सयोजन-कथा तथा अर्न्तकथाओ एव प्रबन्ध-निर्वाह के लिए सूत्र-कथाओ में ली गई कल्पना के अधिकार को और लोक-कथा-ततुओ के समावेश को छोड दे तो मुख्य बातें सब ग्रथो मे एकसी मिलती हैं। यथा—

पद्मावती सिहल की राजकुमारी है। कथा का नायक रतनसेन और प्रति-नायक अलाउद्दीन भी है। अलाउद्दीन को कुमत्रणा देकर पद्मावती को प्राप्त करने के लिए उकसाने वाला तात्रिक राघव चैतन्य भी सब ग्रथो मे है और पद्मावती के सतीत्व की रक्षा मे सहायक गोरा बादल भी।

पद्मिनी चरित्र चौपई का नायक चित्तौडगढ के अधिपति राणा रतनसेन ऐतिहासिक व्यक्ति हैं। कर्नल टॉड ने इसका नाम भूल से भीमसी लिख दिया है, किन्तु आईने अकबरी में भी रतनसी नाम लिखा मिलता है। डा० कालिकारञ्जन कानूनगो आदि विद्वानो ने इस नाम विभिन्नता को देखकर ही रतनसेन की

---

१ पद्मिनी चरित्र चौपई (सा रा रिसर्च इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) की भूमिका (रानी पद्मिनी एक विवेचन . डा० दशरथ ओझा) पृ स ४।

२. जायसी ग्र थावली . सम्पादक—प० रामचन्द्र शुक्ल, (काशी ना. प्र. सभा,

ऐतिहासिकता के प्रति सन्दिग्धता प्रकट की है ।[1] वह समुचित नही है, क्योकि महारावल रत्नसिंह के समय का वि. स. १३५६ माघ सुदि ५ बुद्धवार एक शिलालेख प्राप्त है । अलाउद्दीन ने स० १३५६ माघ सुदि के दिन चित्तौड पर प्रयाण किया और वि. स. १३६० भाद्रपद सुदि १४ के दिन किला फतह किया ।[2] केवल कर्नल टॉड को छोडकर अन्य ऐतिहासिक उल्लेखो और काव्य-ग्रथो मे रतनसिंह या रतनसेन ही नाम मिलता है । इस प्रकार दिल्ली के बादशाह अलाउद्दीन का पद्मिनी की प्राप्ति के लिए चित्तौड पर आक्रमण करना तथा गोरा बादल द्वारा रतनसेन को छुडाकर लाने की घटना भी ऐतिहासिक है । कर्नल टॉड ने तो अपने राजपूताने के इतिहास में इस घटना का विस्तृत वर्णन किया ही है, किन्तु कक्क सूरि रचित समसामयिक रचना-नाभिनदन जिनोद्धार ग्रथ मे भी (र. का. स. १३३६ ई) अलाउद्दीन की चित्तौड पर विजय का उल्लेख है । कक्क सूरि ने लिखा है कि अलाउद्दीन ने चित्रकूट के राजा को पकडा, उसका धन छिन लिया और कण्ठ मे रस्सी बाधकर नगर मे बन्दर की तरह घुमाया । राजा रतनसेन के पकडे जाने पर उसकी अलाउद्दीन द्वारा ऐसी दशा किये जाने का वर्णन जटमल कृत 'गोरा बादल चौपई' मे भी मिलता है । बादल द्वारा पद्मिनी को छुडा लाने वाली घटना की पुष्टि जायसी कृत 'पद्मावत' की समकालीन रचना 'छिताई चरित' से भी होती है जिसका रचना-काल वि स १५८३ तदनुसार सन् १५२६ ई है। इसमे उल्लिखित बादशाह अलाउद्दीन का कथन है कि—"मैंने चित्तौड मे पद्मिनी की सत्ता के बारे मे सुना । मैंने जाकर रतनसेन को बाँध लिया, किन्तु बादल उसे छुडा ले गया । जो अबकी बार मैंने छिताई को न लिया तो यह सिर मैं देवगिरी को अर्पण करूँगा ।"[3]

राघव चैतन्य की ऐतिहासिकता के बारे मे विद्वानो मे मतभेद है। प० रामचन्द्र शुक्ल ने राघव चेतन को जायसी का काल्पनिक पात्र माना है। वस्तुत· देखा जाय तो राणा रतनसेन के द्वारा राघव चैतन्य का अपमानित होकर दिल्ली के बादशाह के पास जाना और पद्मिनी को प्राप्त करने के लिए उकसाना परम्परागत लोक-कथाओ मे चले आरहे कथा-ततु का ही रूप है । जिस प्रकार जटमल

---

१. Studies in Rajput History—A critical analysis of the Padmavati legend

२. पद्मिनी चरित्र चौपई (सा. रा. रि इन्स्टीट्यूट, बीकानेर), भूमिका–डा० दशरथ शर्मा, पृ. स. १० ।

३. वध्यौ रतनसेन भइजाइ । लइगो बादल ताहि छडाई ।
जो अबके न छिताई लेऊं । तो यह सीसु देवगिरि देऊं ।।४५६।।

कृत 'गोरा बादल चौपई' मे राघव चेतन के देश निकाले के कारण उसके द्वारा बनाये गये पद्मावती के चित्र मे गुह्य स्थान पर तिल बना देखकर रतनसेन का कुपित होना है, इसी प्रकार का कथा-ततु समयसुन्दर कृत 'मृगावती रास' मे भी मिलता है जहाँ चित्रकार मृगावती के चित्र मे उसके जघन-स्थल पर तिल का चिन्ह बना देता है और राजा सतानीक कुपित होकर उसका बाया हाथ कटवा देता है। मृगावती में वर्णित चित्रकार भी राघव-चैतन्य की भाँति प्रतिशोध का बदला लेने मृगावती को प्राप्त करने के लिए राजा चण्ड-प्रद्योत को उकसाता है। इस प्रकार यह एक प्राचीन कथा-ततु है जो सोमदेव कृत कथा-सरित्सागर मे भी मिलता है। किन्तु, डा० दशरथ शर्मा ने राघव चैतन्य की ऐतिहासिक सत्ता सिद्ध करने का प्रयत्न किया है। डा० शर्मा का तर्क है कि राघव चैतन्य का उल्लेख वद्धाचार्य प्रबधावली के अन्तर्गत जिन भ्रम सूरि प्रबध मे वर्तमान है। ऐपिग्राफिका इण्डिया, भाग १, पृष्ठ १६२-१६४ मे प्रकाशित ज्वालामुखी देवी का स्तवन भी राघव चैतन्य मुनि की कृति है। यह राघव चैतन्य सम्भवत जिनभ्रम सूरि प्रबन्ध के राघव चैतन्य से अभिन्न है। शार्ङ्गधर पद्धति का रचयिता शार्ङ्गधर राघव का पौत्र था और उसने अत्यन्त आदरपूर्वक श्री राघव चैतन्य के श्लोको को उद्धृत किया है। इससे सिद्ध है कि राघव चैतन्य की ऐतिहासिकता जायसी के पद्मावत पर निर्भर नही है।[1] किन्तु यहाँ प्रश्न यह उठता है कि पद्मिनी सम्बन्धित काव्यो मे वर्णित राघव चैतन्य और उक्त राघव चैतन्य क्या एक ही व्यक्ति हैं? यदि मान लिया जाय कि दोनो एक ही व्यक्ति है तो फिर दूसरा प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि राघव चैतन्य जैसे धर्मपरायण विद्वान मुनि को ऐसा जघन्य कार्य किस कारण से करना पडा होगा। सम्भवत· धार्मिक वैमनस्य के कारण ही उनके अलाउद्दीन के पास जाने की घटना लोक-प्रचलित कथा-ततु से समन्वित करके जोड दी गई प्रतीत होती है।

अब अन्तिम बात, कथा की नायिका पद्मिनी की ऐतिहासिकता के विषय पर विद्वानो मे मतभेद है। कुछ विद्वान इसकी ऐतिहासिकता सिद्ध करते हैं और अन्य कुछ विद्वान इसे काल्पनिक-पात्र मानते हैं। पद्मिनी की ऐतिहासिकता सिद्ध करने वाले विद्वानो मे डा० आशीर्वादीलाल श्रीवास्तव ने 'खजाइतुल फुतूह' के आधार पर पद्मिनी की सत्ता सिद्ध करने का प्रयत्न किया है। डा० श्रीवास्तव की पुष्टि के पक्ष मे डा० दशरथ शर्मा ने पद्मिनी चरित्र चौपई की भूमिकाये 'खजाइतुल फुतूह' मे वर्णित अमीर खुसरो के शब्दो को उदधृत किया और इस पर प्रोफेसर

---

१. पद्मिनी चरित्र चौपई (सा. रा रिसर्च इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) भूमिका, पृ. स. १४-१५।

हवीब की टिप्पणी का उल्लेख करते हुए लिखा है कि—"हुदहुद वह पक्षी है जो सुलेमान के पास सेबा की रानी बलकिस के समाचार लाता है। यह स्पष्ट है कि सुलेमान के सेबा आदि की तरफ संकेत के लिए पद्मिनी उत्तरदायी है।"[१] किन्तु, डा० शर्माजी के इन तर्को से सिहल की पद्मिनी की ऐतिहासिक सत्ता फिर भी सिद्ध नही होती। इससे तो केवल यही निष्कर्ष निकलता है कि बादशाह अलाउद्दीन किसी बलकिस की तलाश मे आतुर था और उसके समाचार की प्राप्ति के लिए 'हुदहुद' चिल्ला रहा था। यह तो निश्चित है कि यह 'बलकिस' रतनसेन की कोई पद्मिनी जाति की सुन्दर रानी होगी, क्योकि ऐतिहासिक तथ्य इस बात को सिद्ध करते है कि अलाउद्दीन एक रूप लोलुपलम्पट बादशाह था और देवगिरि आदि पर जहाँ कही उसने आक्रमण किया, वह रूपवती नारी की तलाश मे रहता था। किन्तु वह सिहल की राजकुमारी पद्मिनी ही थी, यह सिद्ध नही होता।

डा० गोरीशकर हीराचन्द ओझा पद्मिनी को सिहल की न मानकर राजपूताने मे इसे सिंगोली का ठिकन्ना मानते है। डा० किशोरी शरणलाल ने भी इसकी ऐतिहासिकता का खण्डन किया है और डा० कानूनगो ने अपने पुष्ट तर्को से डा० किशोरी शरणलाल के मत को पुष्ट किया है।[२] जायसी ग्रथावली की भूमिका मे प. रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा है कि "पद्मिनी सिहल द्वीप की हो नही सकती। यदि सिंहल नाम ठीक माने तो वह राजपूताने या गुजरात का कोई स्थान होगा। शुक्ल जी सिहल मे पद्मिनी स्त्रियो का पाया जाना गोरखपथी साधुओ की कल्पना मानते हैं।[3] वस्तुत देखा जाय तो मध्यकाल मे नाथपथी जोगी अपने अद्भुत चमत्कारो और आश्चर्यजनक करामातो के कारण तत्कालीन कथाकारो के लिए प्रेम योगी बनकर कथा-काव्यो का 'मोटिफ' बन गया था। लखनसेन पद्मावती कथा का जोगी इसी प्रकार का है। जटमल कृत 'गोरा बादल चौपई' मे भी उल्लेख है कि रतनसेन जोगी की करामात से ही सिहलद्वीप पहुचता है, नाथपथी जोगी बनकर पद्मिनी के विरह मे धूनी रमाता है। पद्मिनी जोगी के रूप पर मोहित होकर उसे मोतियो का हार भिक्षा मे देती है। यहा रतनसेन को कोई साहस की परीक्षा नही देनी होती और न किसी प्रकार का शौर्य प्रदर्शित करना पडता है। केवल नाथपथी

---

१ पद्मिनी चरित्र चौपई (सा रा. रि. इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) भूमिका, पृ. स १४–१५।

२. Studies in Rajput history—A critical analysis of the Padmavati legend

३. जायसी ग्रंथावली (काशी ना. प्र. सभा) प. स. २४–२५।

जोगी की आज्ञा से राजा पद्मिनी का विवाह रतनसेन से कर देता है। सिंहल मे पद्मिनी स्त्रियो द्वारा सिद्धि प्राप्ति मे जोगी को पथभ्रष्ट करने की भी कथायें हमें मिलती हैं। गोरखनाथ (वि० स० १४०७) के गुरु मतयेन्द्रनाथ इसी भाति से सिंहल की पद्मिनियो के जाल मे फँसकर कुएं मे डाल दिये गये थे तब गोरखनाथ ने पहुचकर 'जाग मछदर गोरख आया' का अलाप लगाकर मुक्त किया था। सिंहलद्वीप महायान शाखा के योगी मार्गी-बौद्धो का सिद्ध-पीठ रहा है और गोरखनाथ ने ही बौद्धो की इस शाखा को शैव रूप देकर नाथपथ चलाया था। अतः शुक्ल जी का उक्त कथन सत्य प्रतीत होता है, किन्तु यहा एक प्रश्न और उठता है कि क्या सिंहल की पद्मिनी नाथपथियो की मात्र कपोल कल्पना है अथवा इसका आधार कोई प्रचलित लोक-कथा है।

जायसी की पद्मावत के पूर्वार्द्ध का आधार स्वय शुक्ल जी ने अवध मे प्रचलित 'पद्मिनी रानी और हीरामन सूए' की लोक-कथा को माना है। इस लोक-कथा के कथा-ततु बहुत प्राचीन है। सिंहल की राजकुमारी से किसी राजकुमार के विवाह का मोटिफ भारतीय वङ्मय मे चिरकाल से प्रचलित है। इसका सबसे प्राचीन लिखित रूप सोमदेव कृत कथा-सरित्सागर जो गुणाड्य की 'बड्डकहा' का रूपान्तर है, मे राजा विक्रमादित्य और सिंहल की राजकुमारी मदनलेखा की प्रेम-कथा मे मिलता हैं। हर्ष रचित रत्नावली नाटिका की नायिका रत्नावती भी सिंहल की राजकुमारी है। सालिवाहन के पुत्र त्रिलोक सुन्दर ने भी सिंहल की राजकुमारी पद्मिनी से विवाह किया था। सिंहल की राजकुमारी की प्रेम-कथा प्राकृत और अपभ्रश के प्रेमाख्यानो मे भी प्रचलित रही है। प्राकृत मे रचित कोऊहल कृत लीलावती (र का ८वीं शताब्दी) की नायिका लीलावती सिंहल की ही राजकुमारी है। 'करकड चरिउ' में करकडु का सिंहल जाना औरवहा की राजकुमारी रतिवेगा से विवाह करने की प्रेम-कथा वर्णित है। जिनदत्त चरिउ (र. का. वि. स १२७५) का नायक भी सिंहल की यात्रा कर राजकुमारी लक्ष्मीवती को प्राप्त करता है। प्राकृत की 'रमण सेहरी कहा' (रतनशेखर की कथा—र. का. १५वीं शताब्दी) मे भी राजा रतनशेखर सिंहल की राजकुमारी के लिए जोगी बनकर निकलता है और मत्री की सहायता से उसे प्राप्त करता है। अत हम इस निष्कर्ष पर पहुचते है कि सिंहल की राजकुमारी पद्मिनी का मोटिफ प्राचीनकाल से ही चला आ रहा है। 'पद्मिनी चरित्र चौपई' एव अन्य पद्मिनी विषयक राजस्थानी-काव्य ग्रथो तथा अन्य भाषा मे रचित ग्रन्थो में रचयिताओ ने इसी 'मोटिफ' का उपयोग अपने कथानको के लिए किया है। अत. राणा रतनसेन की रानी सिंहल की राजकुमारी पद्मिनी ऐतिहासिक व्यक्तित्व नही है। हा यह

सम्भव है कि राणा रतनसेन की कोई रानी पद्मिनी जाति की सुन्दर स्त्री हो और उसकी सुन्दरता के कारण उसका नाम पद्मिनी प्रचलित हो गया हो। यह रानी राजपूताने के ही किसी ठिकाने की राज-पुत्री हो सकती है जैसा कि ओझा जी ने कल्पना की है। चन्द्रराज चरित्र (र का. स. १८८१) मे उल्लेख है कि सिंहलपुरी सिन्धु देश मे स्थित थी। यथा—

सिन्धु देश सिंहलपुरी अलकाने अवतार।
राज्य करे तहा कनक रथ गुण पुरण वस धार॥

उपर्युक्त विवेचन से हम इस निष्कर्ष पर पहुचते है कि राणा रतनसेन की रानी पद्मिनी राजपूताना, गुजरात अथवा सिन्ध प्रदेश के किसी ठिकाने की राज-पुत्री रही हो, सिंहल की राजकुमारी पद्मिनी नही।

जायसी के पद्मावत की भाति पद्मिनी चरित्र चौपई एव पद्मिनी विषयक अन्य राजस्थानी काव्यो का पूर्वार्द्ध लोक-कथा पर आधारित है। जटमल कृत 'गोरा-बादल चौपई' मे लोक-कथा के आश्चर्य तत्व वहुत अधिक विद्यमान हैं, उदाहरणार्थ— रतनसेन का मृग-त्वचा से बने आसन पर बैठकर सिंहल द्वीप मे उडकर पहुचना आदि घटनाये। पद्मिनी विषयक इन राजस्थानी काव्यो का उत्तरार्द्ध भी पद्मावत के उत्तरार्द्ध से भिन्न है। सवसे वडा भेद तो यह है कि 'पद्मावत' मे अलाउद्दीन की चित्तौड पर दूसरी लडाई का भी वर्णन है तथा पद्मिनी का जौहर ज्वाला मे भस्म होने का भी। किन्तु, पद्मिनी चरित्र चौपई, हेमरत्न एव जटमल कृत 'गोरा बादल चौपई' आदि राजस्थानी प्रेमाख्यानो के उत्तरार्द्ध मे अलाउद्दीन के दूसरे आक्रमण का वर्णन नही है। इनमे केवल पहले आक्रमण का वर्णन है जिसमे गोरा बादल राणा को छुडाकर ले आते हैं और अलाउद्दीन को मुँह की खाकर लौटना पडता है। राणा रतनसेन और पद्मिनी के संयोग वर्णन के साथ कथा समाप्त होती है। सम्भवतः काव्य को सुखान्त बनाने की दृष्टि से राजस्थानी काव्यो मे अलाउद्दीन के दूसरे आक्रमण की घटना को छोड दिया गया है।

४ बीसलदेव रास

बीसलदेव रास का नायक शाकाम्भरी का राजा विग्रहराज चतुर्थ ऐतिहासिक व्यक्ति है। इसके शिला-लेख स १२१० और स. १२२० के प्राप्त हुए है। अजमेर बसने के बाद केवल यही बीसलदेव हुआ है। यह अर्णोराज का पुत्र तथा गगदेव का छोटा भाई था। यह अपने वडे भाई गगदेव से राज्य छीनकर बैठा था। विग्रहराज चतुर्थ विद्या-प्रेमी था। इसका लिखा 'हरकेलि नाटक' प्रसिद्ध है। यह नाटक वि स. १२१० (सन् ११५५) की माघ शुक्ला पचमी को समाप्त हुआ था।

यह नाटक शिला-लेख रूप मे खनन कार्य से उपलब्ध हुआ है। अजमेर में ढाई दिन का झोंपडा नामक ऐतिहासिक स्थान जहाँ है, कहते हैं वहाँ बीसलदेव द्वारा स्थापित सस्कृत-पाठशाला थी। दिल्ली के प्रसिद्ध फिरोजशाह की लाट पर वि. स १२२० बैसाख शुक्ला १५ का, इसका एक शिला-लेख भी है।[१] डा० रामकुमार वर्मा ने बीसलदेव रास को ऐतिहासिक काव्य माना है और इसकी पुष्टि के लिए इतिहास के प्रमाण भी दिये हैं।[२]

बीसलदेव रास के कथानक की मुख्य घटना राजमती के ताना मारने पर बीसलदेव का रूठकर उडीसा जाना है। यह राजमती भोज परमार की पुत्री बताई गई है। अत: कुछ विद्वान इसे ऐतिहासिक असगति मानकर बीसलदेव को विग्रहराज चतुर्थ न मानकर, विग्रहराज तृतीय मानते हैं, क्योंकि परमार वशी राजा भोज लगभग सं. ११११२ के आस-पास था। बीसलदेव चतुर्थ का समय स. १२०७ से स. १२२० तक है। इस प्रकार सौ वर्ष पूर्व के व्यक्ति की पुत्री से विवाह की बात असगत लगती है। बिजोल्या के शिला-लेख की वशावली के आधार पर भोज का भाई उदयादित्य विग्रहराज तृतीय का समकालीन था, जिसमे भोज की पुत्री राजदेवी या राजमती के विवाह की सम्भावना विग्रहराज तृतीय से प्रतीत होती है।[३] डा० माताप्रसाद गुप्त के अनुसार भी बीसलदेव विग्रहराज तृतीय ही था। उसकी रानी का नाम राजदेवी था। नाम-साम्य के आधार पर नाल्ह ने इसी राजदेवी का भोज की पुत्री के साथ नाम जोड दिया है।[४] सुप्रसिद्ध पुरातत्ववेत्ता डा० गौरीशकर ओझा विग्रहराज चतुर्थ की पत्नी राजमती का होना सत्य मानते हैं, किन्तु विग्रहराज का उडीसा जाने की घटना को कल्पित मानते हैं। उनके अनुसार राजा भोज के कनिष्ठ भ्राता उदयादित्य ने पुराना वैर मिटाने के लिए अपनी पुत्री का विवाह विग्रहराज से किया था।[५]

वस्तुत. 'बीसलदेव रास' का नायक विग्रहराज चतुर्थ ही था जो अपने शौर्य और विद्या-प्रेम के लिए प्रसिद्ध था। राजा भोज की कन्या राजमती के साथ विवाह

---

१. बीसलदेव रास सम्पादक—डा० सत्यजीवन वर्मा पृ स. ६–७।

२ हिन्दी-साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास—डा० रामकुमार वर्मा, प. स. २६६।

३. वीर-काव्य, पृ. स १६४।

४. बीसलदेव रास, पृ स. ५४।

५. काशी-नागरी प्रचारिणी पत्रिका, सन् १६६७ पृ स. १६६–६८।

तथा वीसलदेव का रूठकर उडीसा जाना कल्पित ही है। परम्परागत लोक कथाओ में नायिका के ताना मारने पर नायक का रूठकर परदेश जाना तथा वहाँ से रूपवती राजकुमारी का विवाह कर लाना एक प्रसिद्ध कथा-ततु है। वीसलदेव रास के रचयिता नाल्ह ने इस प्रचलित लोक-कथा-ततु का अपनी रचना मे समावेश कर दिया है तथा राजा भोज की प्रसिद्धि से उसकी पुत्री के साथ वीसलदेव के विवाह की बात जोड दी है। प० रामचन्द्र शुक्ल का भी यही मत है कि वीसलदेव रास का नायक विग्रहराज चतुर्थ ही था और राजमती का भोज की पुत्री होना तथा उसका वीसलदेव के साथ विवाह की बात बाद मे गढली गई है।

५. अचलदास खींची री वारता

अचलदास खीची री वारता के मुख्य-पात्र हैं—गागरोणगढ के अधिपति अचलदास खीची, झीमी-चारणी, अचलदास खीची की प्रथम रानी मेवाड के मोकल की पुत्री लाला तथा उनकी दूसरी रानी जागलू के खीवसी की पुत्री उमा साकडी। ये सब ऐतिहासिक-पात्र है। अचलदास खीची कोटा राज्य के अन्तर्गत गागरोण के नरेश थे। ये मेवाड के राणा मोकल के जामाता थे। इनका विवाह जागलू के खीवसी की पुत्री से हुआ था। कहानी के अन्त मे अचलदास पर मुसलमान बादशाह का आक्रमण भी ऐताहासिक है। माडव के बादशाह अलपखा का गागरोण पर आक्रमण का समय सवत् १४८० की आश्विन शुक्ला ८ से कार्तिक कृ. ८ तक के बीच का है। मुसलमानी तवारीखो के अनुसार भी सवत् १४८० की शरद्-ऋतु के आस-पास ही ठहरता है। इस युद्ध मे अचलदास खीची मारे गये थे और उनकी मेवाडी राणी तथा उमादे भी उनके साथ सती हो गई थी। अचलदास खीची री वारता का ऐतिहासिक विवरण गाडण सिवदास कृत अचलदास खीची री वचनिका मे सुरक्षित है। सिवदास अचलदास खीची का समकालीन था और वह युद्ध मे साथ था। मुहता नैणसी री ख्यात मे भी इस घटना का विवरण है। वारता मे उमादे के साथ पूर्वाराग की कथा, कामधेनु से अलौकिक हार की प्राप्ति की घटनाये कथाकार की कल्पना का परिणाम है जो कथा को रसात्मकता प्रदान करती है।

* * *

तृ

ती

य

अध्याय

राजस्थानी प्रेमाख्यानों में कथानक रूढ़ियाँ

तृ

ती

य

अध्याय

राजस्थानी प्रेमाख्यानों में कथानक-रूढ़ियाँ : एक अध्ययन

कथानक रूढिया अथवा अभिप्राय उस शब्द अथवा एक ढाँचे मे ढले हुए विचार को कहते है जो समान स्थितियो मे अथवा समान मन स्थिति और प्रभाव उत्पन्न करने के लिए किसी एक कृति अथवा एक ही जाती की विभिन्न कृतियो मे बराबर आता है।[१] यह कथा का मूलाधार होता है जिस पर कथा का ताना बाना बुना जाता है। अत इसे हम कथा-ततु भी कह सकते है। अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त कथा-ततु कोषकार श्री स्टिथ थामसन के मतानुसार अभिप्राय कथा का लघुतम तत्व होता है जो परम्परा मे स्थिर रूप से रहने की शक्ति रखता है। इस प्रकार की शक्ति रखने के लिए उसमे कुछ असाधारणता और अपूर्वता होना आवश्यक है।[२] अभिप्राय कथानक के निर्माणकारी तत्व है। किसी महत्वपूर्ण एक अभिप्राय को केन्द्रित करके एक लोक-कथा खडी हो सकती है तो एक लोक-कथा मे कई कथा-ततु

---

१ "A word or a pattern of thought which returns in a similar situation or to evoke a similar mood with in a work or in various works of a genre."

Shiple—Dictionary of world Literature.

२. A Motif is the smallest elements in a tale having a power to persist in tradition. In order to have this power, it must have something unusual and striking about it the Falk tale—By Stith Thomson

(The Dryden Press 1957, New York) P. 415.

या अभिप्राय हो सकते हैं। अभिप्राय रहित किसी लोक-कथा की कल्पना नही की जा सकती। कथानक के निर्माण मे अभिप्रायो या कथानक-रूढ़ियो का मुख्यत: निम्नलिखित कार्य होता है :—

(१) ये कथाओ मे घटना-व्यापार को अग्रसर करते है।

(२) अलौकिक एव आश्चर्यजनक क्रिया-कलापो का समाधान प्रस्तुत करते हैं।

(३) श्रोताओ अथवा पाठको की उत्सुकता की वृद्धि करते है तथा कथा को रोचक बनाते है।

अभिप्रायो का वर्गीकरण करते हुए स्टिथ थामसन लिखते है कि अधिकाशत अभिप्राय तीन श्रेणियो मे विभाजित किये जा सकते हैं—प्रथम, कर्त्ता-कथाओ मे देवता, असाधारण पशु, आश्चर्यजनक प्राणी, जैसे—चुडैल, राक्षस, अप्सरा और परम्परित मानव-चरित्र जैसे—प्रिय सबसे छोटा बालक, क्रूर सौतेली माँ। द्वितीय, कुछेक ऐसी वस्तुयें जो कथा-व्यापार मे काम आने वाली होती हैं, जादू की वस्तुये, असाधारण खोज, अनौखे विश्वास। तृतीय स्थान कुछेक घटनाओ का है, जिनमे बहुत से अभिप्राय आ जाते हैं।[१] इस वर्गीकरण से पता चलता है कि अभिप्राय कथानक के सभी अगो को अपने मे समेटे हुए है, क्योकि कथानक, घटना चरित्र और कार्य के मेल से बनता हे। अभिप्राय घटना के भी हो सकते है, चरित्र के भी और कार्य के भी। डा० सत्येन्द्र के अनुसार अभिप्राय कथानक का लोक-कथात्मक रूप है। जिस प्रकार कथानक के बिना कथा का अस्तित्व नही, उसी प्रकार प्रत्येक लोक-कथा मे किसी न किसी प्रकार का एक या अधिक अभिप्राय उपस्थित रहता है।[२]

उपर्युक्त विवेचन से हम इस निष्कर्ष पर पहुचते है कि कथानक का मूल-तत्व अभिप्राय ही है और कथाओ के अध्ययन मे विशद् स्थान रखता है। लोक-कथा का

---

१. Most Motif fall into three classes. First are the actors in a tale Gods, or unusual animals or marvelous creatures like witches, orgres or fairies, or even conventionalized human characters like the favorite youngest child or the cruel step-mother. Second come certain items in the background of the action magic objects, unusual customs, strange beliefs and like In the third place there are single incidents and these comprise the great majority of Motifs.

२. डा० सत्येन्द्र · लोक-साहित्य का विज्ञान, पृ. सं. २७४।

परम्परागत रूप, सांस्कृतिक रूप, मनोवैज्ञानिक रूप, नैतिक रूप और परिभ्रमणकारी रूप अभिप्रायो से ही परिलक्षित होता है। ससार भर की लोक-कथाओ की एकता इनके द्वारा व्यक्त की गई है।

कथानक-रूढियों के अध्ययन को मुख्य प्रणालियाँ .

अभिप्रायो का अध्ययन सर्व-प्रथम अमरीका के विद्वान् ब्लूम फील्ड ने किया। साथ ही साथ आर्ने की प्रकार-प्रणाली मे आई हुई घटनाओ को देखकर स्टिथ थामसन ने ससार भर की लोक-कथाओ के अध्ययन हेतु अभिप्राय-अनुक्रमणिका प्रणाली का शुभारम्भ किया। अतः मुख्यत इन्ही विद्वानो द्वारा प्रारम्भ की गई प्रणालियो पर अनेक पाश्चात्य विद्वानो ने कार्य किया है, भारत मे भी कुछ कार्य इस दिशा मे सम्पन्न हुआ है। अभिप्राय-अध्ययन की ये प्रणालिया, प्रथम, ब्लूम फील्ड प्रणाली तथा द्वितीय, स्टिथ थामसन की अभिप्राय अनुक्रमणिका (Motif-Index) प्रणाली कहलाती है।

ब्लूम-फील्ड प्रणाली

अभिप्रायो की सुनिश्चित परपाटी बनाने की उद्भावना सर्व-प्रथम मोरिस ब्लूम फील्ड (१९१४ ई०) ने की। वे भारतीय अभिप्रायो का विश्व-कोष बनाने की परिकल्पना करते थे, किन्तु नियतिवश आपकी यह योजना साकार रूप नही ले पाई। आपने भारतीय कथा-साहित्य मे प्रचलित इन मूल अवयवो का ऐतिहासिक और तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया। अभिप्रायो का ऐतिहासिक अध्ययन करते हुए उन्होने मूल-स्त्रोत तक पहुँचने की चेष्टा की है। आपके गूढ-अध्ययन का परिचय विभिन्न पत्रिकाओ मे प्रकाशित लेखो से मिलता है। उदाहरणार्थ – हिन्दू कथाओ मे बोलते हुए पक्षी[1], परकाया-प्रवेश की विद्या[2], हँसने रोने की क्रिया[3], दोहद[4],

---

1 Frestschrift for Ernst windisch (Leipryıng 1914) P P 349-61.

2 Proceedings of American Philosophical Society Vol VI 1917 P P 1–43

3 Journal of American philosophical society Vol VI. 1917 P. P. 1–43

4 Journal of American Oriental Society Vol. XXXVI. 1917 P. P. 54–89.

चोर-विद्या[1], कुणाल तथा पूरन भगत जैसी लोक-कथाओ के मुख्य अभिप्राय[2], छद्मवेशी सन्यासियो[3], योगनियो के अभिप्राय[4], कौए और सेमल के पेड सम्बन्धी कथायें[5], प्रयुक्त मानस-क्रिया सम्बन्धी अभिप्राय[6], छिपकर सुनना, पच-प्रतीको द्वारा राज्य के उत्तराधिकारी का चुनाव, सत्य- क्रिया[7], आदि का सश्लिष्ट विवरण दिया है ।

ब्लूम फील्ड के कई एक शिष्यो मे जिनमे रुथनार्टन[8] तथा नार्मन ब्राउन[9] प्रधान है, ओरियटल सोसायटी के जनरल एव फिलोसोफीकल सोसायटी के जनरल कतिपय अभिप्रायो का ऐतिहासिक अध्ययन सस्कृत के ग्र थो और अ ग्रेजी मे प्रकाशित सग्रहो के आधार पर किया । ब्लूम फील्ड और उनके सहयोगियो के अतिरिक्त डा० ई. डब्ल्यू वर्लिंगम[10] एव ऐमन्यु के नाम विशेप रूप से उल्लेखनीय है । वर्लिंगम ने भारतीय कथा-साहित्य मे विशिष्ट रूप से प्रचलित अभिप्राय सच्च-

---

1. American Journal of philosophy. Vol. XIIV, 1923. P P. 97, 133, 193, 229
2. American philo-logical association, Vol 1923. P. P. 141, 176
3. Journal A. O. S. Vol. XLIV. 1924. P. P 202, 242
4. Journal of philology Vol. IXL P. 1.
5. A Journal of philology Vol. 41. P. P. 309-335.
6. Journal of Asiatic society. Vol. XXXI. P. 11, 23.
7. Journal of Royal Asiatic society 1917. Annual P. P. 429, 467
8. प्राणो की अन्यत्र स्थिति — Studies in honour of M. Bloom Field P. 211, 224.
9. (i) भ्रमण करती खोपडी — American Journal of Philology Vol. 11. P. P. 423, 430.
   (ii) भाग्य से बचना — Studies in honour of M. Bloom Field 89, 104.
   (iii) व्याघ्रकारी — A. J. O. P. Vol. 42. P. P. 122, 151.
   (iv) मौन के बाद . वही, : P. P. 43-289, 317.
   (v) लुक का बच्चा गृह पर — Scientific Monthly. 15, P P. 228-234.
10. सच्चन्क्रिया — Journal of the Royal Assiatic society 1912. P. P. 427, 467

क्रिया का विश्लेषण किया। 'बुद्धिस्ट ली जेंडस' नामक पुस्तक में आपने जातक कथाओ के अभिप्रायो की एक सूची दी है। एमेन्यु[१] का अध्ययन ऐतिहासिक होते हुए भी विभिन्न रूपान्तरो के तुलनात्मक विश्लेषण पर भी आधारित है। इसके अतिरिक्त उन्होने घटनाओ को थामसन की अनुक्रमणिका प्रणाली की सज्ञा भी दी।

२. स्टिथ थामसन की अभिप्राय अनुक्रमणिका प्रणाली

अभिप्रायो पर ब्लूम फील्ड एव उसके शिष्यो द्वारा किया गया कार्य यद्यपि अपना ऐतिहासिक महत्व रखता है, किन्तु यह ठोस तथा मौलिक प्रणाली की अवतारणा पाश्चात्य विद्वान् स्टिथ थामसन के कठिन अध्यवसाय के फलस्वरूप हुई। ब्लूम फील्ड की काल्पनिक योजना को आपने साकार रूप मे परिणित किया। आर्ने की प्रकार-प्रणाली मे आई हुई घटनाओ मे अद्भुत समानता देखकर थामसन ने विश्व की कथाओ के अध्ययन हेतु अभिप्राय प्रणाली का प्रारम्भ किया। उनके अभिप्राय-कोश का प्रथम सस्करण सन् १९३५ मे प्रकाशित हुआ। अभिप्रायो का वैज्ञानिक वर्गीकरण करते हुए उन्होने विश्व की सग्रहित एव उपलब्ध कथाओ के अभिप्रायो को पुस्तकालयो की पुस्तक सूची बनाने की प्रणाली के आधार पर विभाजित किया। इस प्रणाली में अनुक्रमणिकाकार ने जो सामान्य क्रम रखा है, वह अ ग्रेजी (रोमन) वर्णमाला के कर्ण-क्रम पर ही नही रखा, बल्कि उसने धर्म-गाथा तथा दैवी और परा प्राकृतिक से चलकर चमत्कारिक और प्राकृतिक तक पहुचने का क्रम रखा है। प्रत्येक अध्याय शताको अथवा शत गुणाको (Multiple of hundred) मे विभाजित है। उदाहरणार्थ—दूसरा अध्याय पशु-विषयक अभिप्रायो का है, यथा—B 0–B 99 धर्म-गाथा के पशु-विषयक अभिप्रायो से सम्बन्धित है। B 200–299 मानव गुणवाले पशु के अभिप्रायो सम्बन्धित है, इत्यादि। इन अभिप्रायो के महाविभाजन (Grand Division) को फिर दस-दस के गुच्छ (Group of tens) मे विभाजित किया गया है। प्रथम दसक अभिप्रायो का गुच्छ, यथा—

---

४ (i) तीन लडके एक गृह मे उत्पन्न हुए — [१] Journal of oriental society P. P. 62
(ii) दोहराया शब्द घोडा-बोडा— Journal of the oriental society. P P. 58–53–38.
(iii) मोर के कुरूप पाँव वही, P. P. 63.
(iv) शरीर को गर्मी से पकाना वही P. P. 67–30.
(v) पशु की शृ खला मनि चुहिया (हितोपदेश)

B 0 – B 9 धर्मगाथा के सामान्य पशुओ से सम्बन्धित है। इससे अगला दसक का गुच्छ B 10–B 19 धर्म-गाथा के चौपायो से, B 20–B 29 मानव-पशु सम्बन्धी अभिप्रायो से। इसी प्रकार यह क्रम चलता रहा है। बीच २ में कुछ अक रिक्त छोड दिये गये है, जो नये प्राप्त होने वाले अभिप्रायो के लिए प्रयुक्त किये जा सकते हैं। थामसन ने अभिप्रायो के इस अनुक्रमिका-कोश मे अभिप्रायो के अध्ययन मे रत अन्य विद्वानो द्वारा नये अभिप्राय जोडने के लिए भी अवसर रखा है, जिससे यह विशाल-विश्व-कोश विश्व भर के कथा-तन्तुओ से पूर्ण होता चले। इसके लिए रिक्त स्थान छोडने के अतिरिक्त यह व्यवस्था भी रखी है कि अभिप्रायो के दसक-गुच्छ मे उसकी प्रकृति और स्वरूप के अनुरूप वाले नये अभिप्राय जोडे जा सके। यदि इस 'दसक-गुच्छ' मे स्थान रिक्त नही है तो नये अभिप्राय 'दसक-गुच्छ' के अन्तिम अक पर विन्दु (Point) लगाकर जोडे जा सकते है। यथा—B 10–B 19 के दसक-गुच्छ मे कोई स्थान रिक्त न हो और नया अभिप्राय इसी दसक की प्रकृति वाला हो तो उसके लिए नया अक B 19.1+ अकित कर देना चाहिये। अनुक्रमणिका मे जोडे जाने वाले नये अभिप्रायो को पहिचानने के लिए थामसन ने + के चिह्न की व्यवस्था रखी है।[1]

इस प्रकार हम देखते है कि थामसन की यह अभिप्राय-अनुक्रमणिका प्रणाली सुनियोजित और वैज्ञानिक है। थामसन ने अपने अभिप्राय अनुक्रमणिका कोश (Motif Index) मे भारत से आयरलैंड के देशो की लोक-कथाओ मे प्रयुक्त अभिप्रायो को अनुक्रमणित किया है। इस प्रकार अभिप्रायो के इस विश्व-कोष मे विश्व-लोक-सस्कृति की एक झलक देखने को मिलती है तथा विश्व-लोक-मानस को समझने का अवसर प्राप्त होता है। यहा इस बात का उल्लेख करना आवश्यक है कि थामसन के इस अभिप्राय अनुक्रमणिका-कोश की विशालता और व्यापकता का मूल कारण यह है कि उसने अभिप्राय या 'मोटिफ' शब्द की किसी कठोर अथवा पूर्ववर्ती शास्त्रीय परिभाषा को रूढ अर्थों मे ग्रहण नही किया है, बल्कि उसका तो कथन है कि—"कोई तत्व विशेष मोटिफ है या नही, इसका निर्धारण करने मे किसको लिया जाय और किसको छोड दिया जाय, इस विषय मे मैंने किसी कठोर एव अपरिवर्तनीय सिद्धान्तो का अनुसरण नही किया है। कोई भी ऐसा तत्व, जिसमे कि लोकवार्ता-तत्व की किसी भी परम्परा प्राप्त वर्णनात्मक विधा के होने मे सहायता मिलती है, मैंने अपनी अनुसूचि मे समन्वित कर लिया है। जब कभी भी

1. Motif-Index. By—Stith Thomson. (Indian University Press, Bloomington and Indian) Vol. I. Introduction P. 11.

मैंने मोटिफ शब्द का प्रयोग किया है, तो सदैव उदार रूप मे ही किया है। तदनानुसार मैंने 'मोटिफ' मे उस प्रत्येक तत्व को समन्वित माना है जिसमे वर्णनात्मक लोक-वार्ता का कोई भी अ श विद्यमान हो। ये वर्णनात्मक मोटिफ बडे सीधे-सादे विचार विन्दु होते है जो बहुधा परम्परागत कथाओ मे कही न कही मिल ही जाते हैं।"[1]

कथानक रूढ़ियो पर भारत मे किया गया कार्य

भारत मे अभिप्राय अध्ययन का प्रारम्भ सर्व-प्रथम (१८८४ ई) आर. सी टेम्पल तथा एफ ए स्टील की पुस्तक 'वाईड अवेक स्टोरीज' मे टेम्पल ने टिप्पणी के माध्यम से किया। अभिप्राय की व्याख्या का वह प्राथमिक रूप इतना सुलझा हुआ नही था। उन्होने घटनाओ को ही अभिप्राय की सज्ञा दी। कालान्तर मे यही टिप्पणिया फोकटेल्स ऑफ पजाब (१८८४ ई०) के कथा-सग्रह में कतिपय परिवर्तन के साथ जोडदी गई। बाद मे स्विनरटन आदि विद्वानो ने अपनी लोक-कथाओ के सग्रहो की भूमिका मे छुटपुट रूप से कुछ कथानक रूढियो पर प्रकाश डाला। विलियम क्रुक (१८९४ ई) ने उत्तर भारत की कथाओ का सग्रह करते हुए कुछ अभिप्रायो पर प्रकाश डाला।

इसके पश्चात् पेजर महोदय (१९२४ ई) ने कथा-सरित्सागर का अनुवाद करते हुए, उसमे आये कुछ अभिप्रायो पर ब्लूम फील्ड की पद्धति के अनुसार सविवरण उल्लेख किया हैं। वस्तुत. आपका कार्य अपने पूर्ववर्ती विद्वानो द्वारा सकलित की गई सामग्री के आधार पर ही आधारित है। आपने कथा-सरित्सागर मे प्रयुक्त हुए अभिप्रायो का अन्य देशो के कथा साहित्य मे पाये जाने वाले अभिप्रायो से तुलनात्मक विवेचन प्रस्तुत किया है जो आपके गहन-अध्ययन का परिचायक है। अपने ग्र थ-ओसन ऑफ स्टोरी के अन्त मे उन सभी अभिप्रायो की सूची दी है जो उन्हे कथा-सरित्सागर मे प्राप्त हुए ?[2]

---

1 "For the purpose of deciding on inclusion or exclusion, I have had no hard and fast principles Anything that goes to make up a traditional narrative has been used when the term Motif is employed, it is always in a very loose sense and is made to include one of the elements of narrative structure."

Motif Index—By Stith Thomson Vol. I (Introduction)

2 (The ocean of the story. N. M. panzer Vol X Apendix III) (Alphabetical list of motifs.)

अभिप्रायो के अध्ययन मे वेरियर एलविन का प्रयास भी उल्लेखनीय है। आपने फोक टेल्स ऑफ महाकौशल (१६४४ ई) के सग्रह मे ऐतिहासिक तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया है। अध्याय के प्रारम्भ मे कथाओ का सक्षिप्त परिचय देते हुए कथाओ मे आने वाले अभिप्रायो की सश्लिष्ट व्याख्या भी की है। ट्राईवल टेल्स ऑफ उरीसा' मे आपने कथाओ के आधार पर अभिप्रायो की सूची दी है।

अव तक कार्य अग्रेजी के माध्यम से पाश्चात्य विद्वानो द्वारा किया गया। हिन्दी क्षेत्र मे अभिप्राय का प्रारम्भिक परिचय डा वासुदेव शरण अग्रवाल द्वारा उनकी कथा-सग्रह की भूमिका से प्राप्त होता है।[1] कथाओ मे प्रयुक्त होने वाले कुछ अभिप्रायो का विवरण उन्होने वौद्ध तथा जैन-साहित्य मे प्रचलित अभिप्रायो से साम्य प्रदर्शित करते हुए दिया। डा हजारीप्रसाद द्विवेदी ने पृथ्वीराज रासो तथा पद्मावत मे ऐतिहासिक तथा निजधरी कल्पनाओ की अवधारणा करते हुए अभिप्राय के लिए कथानक रुढि का प्रयोग किया है। अपने वक्तव्य मे उन्होने कहा कि 'ऐतिहासिक चरित का लेखक सम्भावनो पर अधिक वल देता है। सम्भावनाओ पर वल देने का परिणाम यह हुआ कि हमारे देश के साहित्य मे कथानक को गति और घुमाव देने के लिए कुछ ऐसे अभिप्राय वहुत दीर्घकाल से व्यवहृत होते आये हैं, जो आगे चलकर कथानक रुढि मे वदल गये है।[2] इस प्रकार सम्भावना पक्ष पर जोर देने से कुछ कथानक रूढियाँ इस देश मे चल पडी। इसी सम्वन्ध की चर्चा करते हुए उन्होने हिन्दी काव्य के अभिप्रायो के ऊपर प्रकाश डाला है।

'पृथ्वीराज रासो' मे प्रयुक्त कुछ कथानक रूढियो का विवरण श्री व्रजविलास ने भी अपनी पुस्तक 'पृथ्वीराज रासो' की कथानक-रूढियो नामक पुस्तक मे दिया है।

पेजर महोदय के अनुसरण पर डा. कन्हैयालाल सहल ने अभिप्रायो की व्याख्या प्रस्तुत की है। राजस्थानी लोक-कथाओ मे प्रयुक्त कथानक रूढियो का गहन अध्ययन प्रस्तुत करने वाले आप एक मात्र विद्वान् है। आपने कथानक रूढि के स्थान पर 'प्ररूढि' शब्द अपनाने का सुझाव दिया है। आपके कथनानुसार मूल अभिप्राय मे कथा को गति देने की शक्ति भी पाई जाती है। 'प्ररूढि' शब्द मे आवृत्ति और गति दोनो का भाव एक साथ पाया जाता है, इसलिए मोटिफ प्रयाय के रूप मे प्ररूढि

---

१. पाषाण नगरी · भूमिका—डा वासुदेवशरण अग्रवाल, १६५०।
२. हिन्दी साहित्य का आदिकाल (१६५६) डा. हजारीप्रसाद द्विवेदी। पृ. स. ८०।

शब्द अपनाया जा सकता है। राजस्थानी लोक-कथाओ की कथानक रूढियो पर आपके बहुत से लेख मरुभारती राजस्थान भारती, परम्परा आदि पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित हो चुके है। आपकी लोक-कथाओ की कुछ प्ररूढिया नामक एक पुस्तक भी प्रकाशित हो चुकी है।

हिन्दी मे छुट-पुट रूप से अभिप्रायो का अध्ययन हुआ है, किन्तु पाश्चात्य विद्वानो द्वारा उद्भुत तुलनात्मक तथा वैज्ञानिक प्रणाली के आधार पर मूल अभिप्रायो के अध्ययन का शुभारम्भ डा० सत्येन्द्र द्वारा किया गया। आपने व्रज लोक-साहित्य का अध्ययन नामक ग्रथ मे व्रज की लोक-कहानियो की कथा-सरित्सागर की कहानियो, बुन्देलखण्ड, बगाल, एव काश्मीर की लोक-कथाओ से तुलना कर अभिप्रायो का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया है एव अभिप्रायो के माध्यम से लोक-कथाओ के मूल-स्त्रोत तक पहुचने का प्रशसनीय कार्य किया है। डा० सत्येन्द्र के इस मौलिक अनुसन्धान से परम्परागत कथा का आदि रूप प्राप्त होता है। इस प्रकार आपने अभिप्रायो के वैज्ञानिक अध्ययन को प्रोत्साहित किया है। आपके निर्देशन मे डा० सावित्री सरीन ने व्रज लोक-कथाओ मे प्राप्त अभिप्रायो का स्टिथ थामसन की अभिप्राय अनुक्रमणिका प्रणाली मे अध्ययन प्रस्तुत किया है। आपकी एक अन्य शिष्य डा० लक्ष्मी सक्सेना ने भी सिंहासन वत्तिसी की कथाओ मे प्रयुक्त अभिप्रायो पर थामसन की अभिप्राय-अनुक्रमणिका प्रणाली के अनुसार कार्य किया है।

राजस्थानी प्रेमाख्यानों में प्रयुक्त अभिप्रायों का स्टिथ थामसन प्रणाली में अध्ययन :

राजस्थानी प्रेमाख्यानो मे प्रयुक्त अभिप्रायो का स्टिथ थामसन की अभिप्राय अनुक्रमणिका प्रणाली मे वर्गीकरण करके मैंने इस कार्य को आगे बढाने का प्रयास किया है। इन प्रेमाख्यानो मे कुल २५६० अभिप्राय प्राप्त हुए है जिनमे १०४६ नये अभिप्राय हैं। इनको स्टिथ थामसन की अभिप्राय अनुक्रमणिका प्रणाली मे अकन करके उचित स्थान निर्धारित कर दिया है। इन नये अभिप्रायो को पहिचानने के लिए उन पर + का चिह्न लगा दिया है। अभिप्राय अनुक्रमणिका के वर्गीकरण मे थामसन द्वारा प्रयुक्त रोमन अक्षरो के स्थान पर डा० सावित्री सरीन का अनुसरण करते हुए मैंने देवनागरी के वर्णाक्षरो को ही अपनाया है। राजस्थानी प्रेमाख्यानो के अभिप्रायो की यह विस्तृत अनुक्रमणिका शोध-प्रबन्ध के 'परशिष्ट' मे दी गई है। यहा इन अभिप्रायो की वर्गक्रमानुसार साराश तालिका प्रस्तुत की जा रही है :—

राजस्थानी प्रेमाख्यानों मे प्रयुक्त अभिप्रायो की सारांश तालिका

क्र. स.	नाम-वर्ग	थामसन द्वारा अंकित अभिप्राय	नये अभिप्राय	योग
१.	क : धर्म-गाथा	७१	११०	१८१
२.	ख · पशु विषयक	१२३	५८	१८१
३.	ग : वर्जन	३०	१७	४७
४.	घ . जादुई	२८४	१६७	४५१
५.	च · मृतक	५०	४६	९६
६.	छ : चमत्कारक	१३७	८६	२२३
७.	ज : दैयत	३६	४०	७६
८.	झ : परीक्षाये	११३	५२	१६५
९.	ट बुद्धिमान तथा मूर्ख	३७	३१	६८
१०.	ठ : धोखे	१५५	६९	२२४
११.	ड भाग्य पलटना	१४	२५	३९
१२.	ढ भाग्य निर्देशक	३७	३३	७०
१३	त अवसर तथा भाग्य	८७	२३	११०
१४	थ : समाज	३३	१७	५०
१५.	द पुरस्कार तथा दण्ड	४५	३५	८०
१६.	छ कैदी तथा पलायक	३८	६	४४
१७.	न अप्राकृतिक क्रूरता	२२	११	३३
१८.	प यौन	१६२	१८२	३४४
१९	ब : धर्म	२३	२६	४९
२०	भ · चरित्र की विशेषताये	११	२	१३
२१.	म हास्य	०	६	६
२२.	य अन्य विविध अभिप्राय	३	७	१०
	योग	१५११	१०४९	२५६०

राजस्थानी प्रेमाख्यानों में प्राप्त अभिप्रायों का (GRAPH) शलाका चित्र
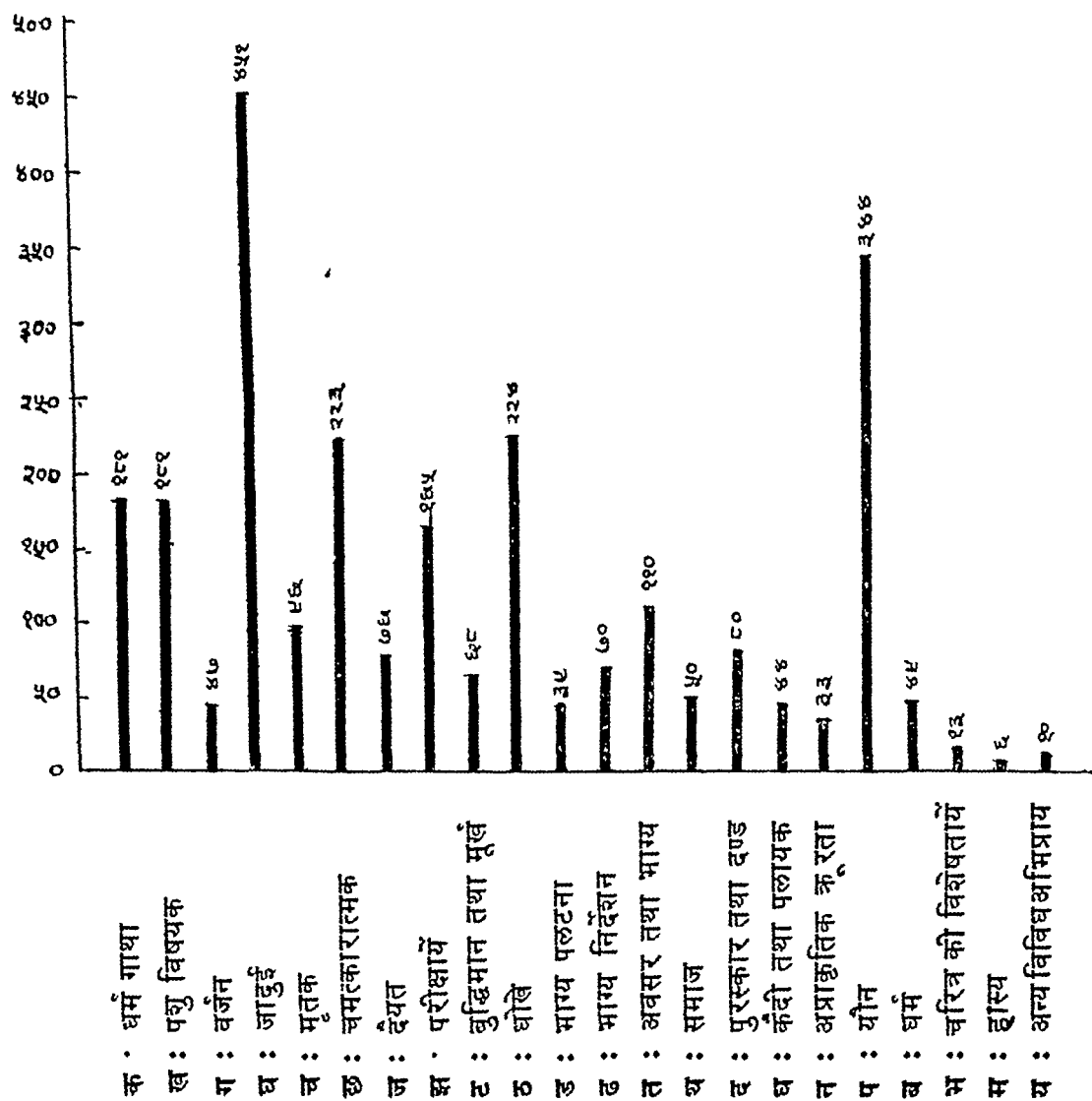
राजस्थानी प्रेमाख्यानो मे प्रयुक्त अभिप्रायो की इस साराश-तालिका के अवलोकन से पता चलता है कि इन प्रेमाख्यानो मे सबमे अधिक जादुई अभिप्रायो का प्रयोग हुआ है। इसके बाद यौन-सम्बन्धी अभिप्राय प्रयुक्त किये गये हैं। तीसरे क्रम मे चमत्कार एव धोखे सम्बन्धी अभिप्राय आते है। अत' इस साराश तालिका के अध्ययन से हम इस निष्कर्ष पर पहुचते है कि तत्कालीन मानव-समाज जादू-टोनो मे तथा चमत्कारो मे अधिक विश्वास करता था। योग सम्बन्धी अभिप्रायो से भी हम इस निष्कर्ष पर पहुचते हैं कि पुरुष-समाज के लिए नारी सदैव मे ही एक पहली रही है जिसे समझने के लिए वह आदिकाल से निरन्तर सजग रहा है। त्रिया-चरित्र की अनेको कहानिया इस बात का प्रमाण है कि नारी के प्रति पुरुष सदैव से ही सशयशील रहा है तथा उसकी नारी पर बलवती अधिकार भावना के प्रति नारी द्वारा विद्रोह किये जाने की आशखा भी भयभीत किये रही है। इसके अतिरिक्त मानव समाज मे यौन-सम्बन्धो का प्रमुख स्थान है, अतः इन प्रेमाख्यानो मे यौन-सम्बन्धी अभिप्रायो की अधिकता होना भी स्वाभाविक है। इस प्रकार हम देखते हैं कि इन प्रेमाख्यानो मे प्रयुक्त अभिप्रायो का यह अध्ययन तत्कालीन लोक-मनस्थिति का परिचय देते है। साथ ही समाज की धार्मिक मनोवृत्ति, विश्वास, रीति-रिवाज, मानसिक विचारधारा, सौन्दर्य-बोध एव लोक-समाज की मानसिक एकता की अनुभूति का परिचय देते है।

कुछ विशेष अभिप्रायों की व्याख्या :

१. प्रवेश

परकाय-प्रवेश अभिप्राय का तात्पर्य प्राण का एक शरीर को छोडकर दूसरे शरीर मे प्रवेश करना है। प्रस्तुत राजस्थानी के प्रेमाख्यानो में 'लाखा फुलाण री बात' नामक प्रेमाख्यान मे इस कथानक रूढि का प्रयोग हुआ है। लाखा छठे महीने अपनी देह बदलता है। उसका एक शरीर अप्सराओ की गुफा मे होता है। जब लाखा को अप्सराओ के पास जाना होता है, तब उसके प्राण राजा के शरीर को छोडकर अप्सराओ की गुफा मे रखे शरीर मे प्रविष्ट होता है और अप्सराओ के साथ आमोद-प्रमोद करता है। सदयवत्स वीर प्रबन्ध मे भी इस कथानक रूढि का प्रयोग मिलता है। सदयवत्स वीर प्रबन्ध मे उल्लेख है कि एक सेठ के शव मे बैताल प्रवेश करता है जिससे मृत सेठ जीवित होकर घर लौट आता है।

'परकाय-प्रवेश' एक भारतीय प्राचीन विद्या है। इसका सम्बन्ध भारतीय योग-विद्या से है। डा० सत्येन्द्र ने इस विद्या को मूलतः जानने वालो मे नटो को माना है, जो भ्रामक है। इसका मूल-स्त्रोत श्रीमद्भागवत से भी प्राचीन है।

श्रीमद्भागवत मे योगधारण करने वाली जिन सिद्धियो का वर्णन भगवान् ने उद्धव से किया है, उनमे सतोगुण बढने से प्राप्त होने वाली १० सिद्धियो में परकाय प्रवेश की भी गणना की गई है। यथा—

अनूर्मिमत्व देहेऽस्मिञ्दूर श्रवणदर्शनम् ।
मनोजव काम रूप परकाय प्रवेशम् ॥

'परकाय-प्रवेश' की सिद्धि किस प्रकार से होती है, इस सम्बन्ध मे निम्न-लिखित श्लोक उद्धरणीय है —

परकाय विशन् सिद्ध आत्मान् तत्र भावयेत् ।
पिड हित्वा विशेत् प्राणो वायुभूत षडघ्रिवत् ॥ (११, १५, २३)

अर्थात् पराई देह मे प्रवेश करने के लिए सिद्ध को चाहिये कि वह उस शरीर मे अपनी आत्मा का ध्यान करे। ऐसा करने से वह अपने स्थूल शरीर को छोडकर लिंग-रूप उपाधि को साथ लेकर दूसरे शरीर मे इस प्रकार प्रविष्ट हो जाता है जैसे भौरा एक फूल से दूसरे पर जा बैठता है।[1]

परकाय-प्रवेश अभिप्राय से सम्बन्धित एक अन्य कथा श्री शकराचार्य द्वारा सुधन्वा के मृत शरीर मे प्रवेश करने की, भी प्रसिद्ध है। अनुश्रुति के अनुसार उन्होने परकाय-प्रवेश से पहले अपने शिष्यो से कहा था—'मेरे शरीर को तुम यत्नपूर्वक सभालकर रखना। इस बात को गोपनीय रहने देना। मैं इस शरीर से अपने प्राण निकालूँगा और परकाय-प्रवेश कर काम-शास्त्र सिद्ध करूँगा। छह मास पश्चात् इस शरीर मे पुनः वापस आ जाऊँगा।[2]

कथा-सरित्सागर मे इस अभिप्राय का प्रयोग 'नन्द की कहानी' मे किया गया है। इन्द्रदत्त योग-माया से नन्द के मृत शरीर मे प्रवेश करता है और तीन लाख स्वर्ण-मुद्राये शकटाल को दान देने के लिए कहता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि परकाय-प्रवेश अभिप्राय का प्रयोग भारतीय वाङ्गम्य मे प्राचीनकाल से होता आरहा है।

पाश्चात्य विद्वान डा० ब्लूम फील्ड और पेजर ने इस अभिप्राय का मूल-स्त्रोत भारत ही माना है। पेजर इस अभिप्राय के दो रूप मानते हैं। एक तो, जादू की

१ द्रष्टव्य राजस्थान भारती (दिसम्बर ६६ ई०) मे प्रकाशित लेख मूल अभिप्राय अद्भुत (ले डा कन्हैयालाल सहल) पृ स. ५७।

२. द्रष्टव्य भारती (दिसम्बर १९६१) मे प्रकाशित, परकाय प्रवेश विद्या · एक प्राचीन भारतीय अध्याय विज्ञान (ले० डा. कैलाशनाथ मिश्रा) पृ. ८५।

शक्ति या योग-विद्या से, एक शरीर से दूसरे शरीर मे प्रवेश करना, जिसे पेंजर ने भ्रमण-शील आत्मा (Wandering Soul) का नाम भी दिया है। दूसरे रूप में आत्मा की अन्यत्र स्थिति अथवा प्राण-प्रतीक (Life Index) को भी इसी मे सम्मिलित कर लिया है।[1] वैसे आत्मा की अन्यत्र स्थिति प्राण-प्रतीक का अभिप्राय परकाय-प्रवेश से बिल्कुल भिन्न है। प्राणो की अन्यत्र स्थिति प्राय दानवो मे मिलती है जिनके प्राण किसी पक्षी, पशु अथवा वृक्ष मे रहते हैं या ऐसे दुर्गम भयकर स्थान पर जो सात समुद्रो के पार साँप बिच्छुओ से घिरे हुए वृक्ष मे हो। राजस्थानी के प्रेमाख्यानो मे लखनसेन पद्मावती कथा मे इस अभिप्राय का प्रयोग हुआ है। इसमे जोगी के प्राण भौरे मे रहते है। राजा भौरे को किसी प्रकार से प्राप्त कर उसे मार डालता है जिससे दुरात्मा जोगी भी मर जाता है।

२. सांकेतिक-भाषा

यह एक बहुत ही लोकप्रिय अभिप्राय है। साकेतिक-भाषा का प्रयोग अधिकतर, नायक-नायिकाओ के प्रेम-सन्देशो के आदान-प्रदान के लिए हुआ है। पूर्वी देशो, अफ्रीका और अमरीका आदि महाद्वीपो मे यह एक लोकप्रिय कथानक रूढि है। अरबी लोक-कथाओ मे तो इसका बहुत प्रयोग मिलता है। एक अरब की राजकुमारी बादशाह को नवनीत से भरा प्याला भेजती है जिसमे पीने चुभोकर बादशाह लौटा देता है। लेन के अनुसार योरोप मे इस अभिप्राय का सर्व-प्रथम परिचय फ्रेंचमैन एम डुविगनॉउ ने सन् १६८८ मे दिया था। उसने नायिका द्वारा एक अरब प्रेमी को सकेतो द्वारा सन्देश भेजा, जिसका उल्लेख किया है। उस नायिका ने अपने प्रेम-सन्देश को व्यक्त करने के लिए एक पखा, फूलो का गुच्छा, सिल्क का दुपट्टा, गन्ना, सगीत का वाद्य-यत्र भेजा था।[2] राजस्थानी के प्रेमाख्यानो मे भी इसका बहुत प्रयोग हुआ है। मधुमालती मे मालती अपना प्रेम-सन्देश नायक पर फूल फेंककर ही व्यक्त करती है। पुष्पसेन पद्मावती की कथा मे राजकुमार राजकुमारी के पास अपने आगमन की सूचना एव प्रेम-सन्देश विशेष प्रकार की माला गूथ कर भेजता है। साकेतिक भाषा के लिए फूलो का प्रयोग बहुत प्राचीनकाल से प्रचलित मालूम होता है। कथा-सरित्सागर की पुष्पदत की कथा मे इस कथानक रूढि का प्रयोग मिलता है जिसमे नायिका ने प्रेम-सन्देश प्रेषण मे फूलो से काम लिया है। इस कथा मे राजकुमारी श्री नायक देवदत्त को साकेतिक भाषा मे प्रेम-सन्देश देने के

---

1. Entering another body Motif : The ocean of the story N M Panzer. Vol. I. P. No. 38
2. The ocean of the story—By N. M. Panzer Vol. 1. P. 81,

लिए पहले वह फूल को अपने दातों से पकड़ती है और फिर उसे धरती पर गिरा देती है जिसका तात्पर्य यह है कि पुष्पदत के मन्दिर में वह अमुक समय पर आयेगी, अत: नायक उसकी प्रतीक्षा मन्दिर मे करे ।

इस कथानक रूढि का उद्गम-स्थल भारत है या योरोप यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता किन्तु सबसे प्राचीन लिखित प्रयोग भारत मे ही उपलब्ध होता है, अतः यह सम्भावना की जा सकती है कि इस कथानक रूढि का उद्गम स्थान भारत ही है । भारत से ही अरब होता हुआ योरोप मे पहुँचा है ।

३ मूल अभिप्राय

तिरस्कृत प्रेमिका एक विवेचन :

तिरस्कृत प्रेमिका का अभिप्राय इतना लोकप्रिय है कि लगभग विश्व के समस्त कथा-सग्रहो मे पाया जाता है । इस अभिप्राय मे नारी कामातुर होकर अपना प्रेम पर-पुरुष के समक्ष प्रकट करती है पर वह पुरुष उसके प्रेम को ठुकरा देता है । नायक के इस व्यवहार पर तिरस्कृत प्रेमिका उससे प्रतिशोध लेने के लिए अपने साथ कुकर्म करने का मिथ्यादोषारोपण करके नायक के जीवन को सकट मे डाल देती है ।

प्रोफेसर ब्लूम फील्ड ने इस अभिप्राय के तीन रूप निर्धारित किये हैं ।

(१) नारी कामातुर होकर काम प्रस्ताव रखती है और पुरुष उस प्रस्ताव को ठुकरा देता है ।

(२) नारी प्रतिशोध की ज्वाला मे जलकर पुरुष पर अपने साथ बलात्कार का मिथ्यारोप लगाती है और उसे सकट मे डाल देती है ।

(३) नारी काम-प्रस्ताव रखती है और नर उसे स्वीकार कर लेता है ।

ब्लूम फील्ड ने तीसरे रूप की पुष्टि के लिए तिब्बती-लोक-कथा से एक उदाहरण भी दिया है । यथा—

उत्पल वरना अपने जामाता के समक्ष कामाचार का प्रस्ताव रखती है और जामाता उसके साथ रमण करता है ।

किन्तु पेजर इस अभिप्राय को ब्लूम फील्ड के तीसरे रूप को स्वीकार नही करते । वस्तुत ब्लूम फील्ड का यह तीसरा रूप 'तिरस्कृत प्रेमिका' के अभिप्राय मे आ भी नही सकता, क्योकि इसमे तो व्यक्ति नारी द्वारा प्रस्तावित काम प्रस्ताव को स्वीकार कर लेता है । अत' इस अभिप्राय मे ब्लूम फील्ड द्वारा निर्धारित प्रथम दो रूप ही ग्राह्य हो सकते हैं ।

तिरस्कृत प्रेमिका का अभिप्राय बहुत प्राचीन है। इसका मूल-स्त्रोत हमे मिस्र की लोक-कथा हिप्पोटैट्स और उसकी विमाता पैड्रा की कहानी मे मिलता है। पैड्रा कामासक्त होकर अपने सौतेले पुत्र के समक्ष काम-प्रस्ताव रखती है जिसे वह अपमानजनक समझकर ठुकरा देता है। इस पर पैड्राहिप्पो टैटस पर मिथ्यारोप लगाकर अपने पति थेयिस से उसे निर्व्वासित करवा देती है और हिप्पोटट्स की मृत्यु हो जाती है। पेजर के अनुसार यही कहानी मिस्र से तिव्वत मे गई। दो भाईयो की कहानी मे इसका यही रूप मिलता है। अनुपू और वायती दो भाई होते है। जब अनुपू शहर मे बीज लेने के लिए जाता है, अनुपू की पत्नि अपने देवर वायती पर आसक्त होकर उससे प्रेम-याचना करती है, पर वायती उसे इस कूकर्म के लिए तिरस्कृत करता है। इस पर वह वायती से प्रतिशोध लेने के लिए उसके साथ कूकर्म करने का झूँठा आरोप लगाती है। अनुपू अपनी पत्नि की वात सच मानकर अपने छोटे भाई को घडियालो से भरी झील मे फैक देता है, जहाँ उसे घडियाल खा जाते है। किन्तु वाद मे सच्चाई का पता चलने पर ग्लानि की अग्नि मे जलने के अतिरिक्त कुछ नही कर पाता। वह क्रोधित होकर अपनी पत्नी के टुकडे-टुकड़े कर डालता है। मिस्र लोक-कथा मे और इसमे यही अन्तर है कि मिस्र लोक-कथा मे जहाँ रानी पैड्रा अपना अपराध स्वय स्वीकृत कर लेती है, वहाँ इस कथा मे अपराध का पता आकस्मिक रूप से लगता है। वाइविल की 'जोसेफ' की कहानी मे भी पोतीफर को अपनी पत्नि के अपराध का पता आकस्मिक रूप से लगता है। इसी प्रकार कुरान मे भी पोतीफर (Potiphar) अपनी पत्नी के अपराध को तुरन्त भाँप लेता है, क्योकि जोजेफ के वस्त्र पीठ की ओर से फटे होते हैं। इसी प्रकार सिन्धवाद नामा मे भी 'तिरस्कृत प्रेमिका' का अभिप्राय पाया जाता है। बादशाह का पुत्र फकीर के पास पढने जाता है। पढाई पूरी करने पर उसे फकीर सात दिन के लिए मौन रखने को कहता है। मौन रखने के कारण वह बादशाह के प्रश्नो का उत्तर नही दे पाता, इसलिए 'हरम' में भेजा जाता है। वहाँ वेगम उसके रूप पर मोहित होकर काम प्रस्ताव रखती है जिसे शाहजादा ठुकरा देता है। प्रतिशोध लेने के लिए बेगम स्वय अपने कपडे फाडकर शाहजादा पर बलात्कार का मिथ्यारोप लगाती है जिससे कुपित होकर बादशाह उसे मौत की सजा देता है, किन्तु बाद मे राज खुल जाता है।

भारतीय वाङ्गमय में इसका सबसे प्राचीन लिखित रूप जातक कथाओ मे सुरक्षित है। महापदुम जातक मे वर्णन है कि राजकुमार पद्मकुमार के रूप पर मोहित होकर उसकी सौतेली माँ प्रणय प्रस्ताव रखती है किन्तु राजकुमार सत्य पर दृढ रहकर रानी की कामुकता की भर्त्सना करता है। रानी प्रतिशोध की अग्नि

मे जलकर राजकुमार से अपने साथ कुकर्म का मिथ्यारोप लगाती है।[१] इस पर राजा पद्मकुमार को पहाड से प्रपात मे गिराने का दण्ड देता है, पर राजकुमार के 'सत' से प्रसन्न होकर नागकुमार उसकी रक्षा करता है। इसके पश्चात् इस अभिप्राय को लोक प्रसिद्धि प्राप्त करने वाली कहानी 'कुणाल और रानी तष्यरक्षिता' की है जिसके पात्रो का समय ईसा पूर्व २७४–२३७ माना जाता है। कथा-सरित्सागर की गुण शर्मन और अशोकवती रानी की प्रेम-कथा मे भी अभिप्राय का वर्णन मिलता है। अशोकवती गुणशर्मन को वाद्य सीखने के बहाने बुलाती है और कामेच्छा व्यक्त करती है, पर गुणशर्मन उसे माता के समान कहकर उपेक्षा करता है, इस पर रानी त्रिया-चरित्र रचकर उसको सकट मे डाल देती है।[२]

इसके अतिरिक्त प्रान्तीय भाषाओ की लोक कथाओ मे भी इस अभिप्राय का प्रचुर मात्रा मे प्रयोग मिलता है। तेलगू भाषा मे ताड-पत्र पर लिखी हस्तलिखित प्रति मे सारगधरा-चरित्र उपलब्ध होता है जिसमे राजा महेन्द्रराज का पुत्र सारगधरा और उसकी विमाता चित्राणी का प्रणय-प्रसग वर्णित है। रानी कामातुर होकर अपने पुत्र से ही कामेच्छा पूर्ण करने का प्रस्ताव रखती है और पुत्र के द्वारा मना करने पर उस पर दोषारोपण करती है। राजा उसका सिर उडाने की आज्ञा देता है।[3]

पजाबी लोक कथा 'राजा रसालू की बात' का सम्पादन श्री स्वीटरडन महोदय ने किया है। इसमे भी कथा का प्रारम्भ राजा शालिवाहन की रानी लूना और उसका सौतेला पुत्र पूरन (जो पूरन भगत के नाम से प्रसिद्ध है) के प्रणय-प्रसग से होता है। रसालू को सौतेला भाई पूरन से उसकी विमाता लूना कामातुर होकर काम प्रस्ताव रखती है जिसे पूरन माता के इस अनुचित कर्म का तिरस्कार कर उसे समझाता है। इस पर लूना प्रतिशोध मे पागल होकर पैड़ा की भॉति ही मिथ्यारोप लगाकर, पूरन की आँखे निकलवा लेती है और एक अन्ध-कूप मे गिरा देती है। कई वर्षो बाद बाबा गोरखनाथ आकर उसे निकालते है।[४]

---

१. जातक-कथा (प्रथम खण्ड) हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, पृ. स. ३८७।

२. The ocean of the story N M. Panzer, Vol I. P. 104.

३. Descriptive catalogue of the mackemiyie collection of oriental MBS, etc By H. H Wilson, 1828.

४ The Adventures of the Panjab Hero, Raja Rasalu. By Rev. C. Swynnerton (Introduction P viii)

प्रोफेसर ब्लूम फील्ड का मत है कि इस अभिप्राय का प्रयोग जैन-कथाकारो ने अन्य हिन्दू आख्यानकारो की अपेक्षा अधिक किया है। हम प्रोफेसर ब्लूम फील्ड के मत से सर्वथा सहमत हैं। वस्तुतः बौद्ध और जैन धर्म निवृति प्रधान धर्म है और नारी इस निवृति मार्ग पर अग्रसर होने मे सदा बाधक रही है, अत: जातक मे तथा जैन-आख्यानो मे त्रिया-चरित्र के अनेक उदाहरण मिलते है जिनमे तिरस्कृत प्रेमिका के अभिप्राय का प्रचुर मात्रा मे प्रयोग हुआ है। विजयधर्म सूरि कृत मल्लिनाथ चरित्र मे भी यह मोटिफ अपनी विकसित अवस्था मे मिलता है। ऋषभदास का पुत्र सुदर्शन, राजा का मत्री कपिल का मित्र होता है। एक दिन कपिल ने अपनी पत्नि कपिला से सुदर्शन के रूप की प्रशसा की, तब से कपिला सुदर्शन को चाहने लगी। अपने पति के विदेश जाने पर उसने दासी से सुदर्शन को यह कहकर बुला लिया कि तुम्हारा मित्र बीमार है। जब सुदर्शन अपने मित्र के घर गया तो कपिला ने उसके समक्ष काम-प्रस्ताव रखा पर सुदर्शन उसकी ताडना कर निकल गया।

राजस्थानी के प्रेमाख्यानो में भी विशेषकर जैन-प्रेमाख्यानो मे इस 'मोटिफ' का प्रचुर मात्रा मे प्रयोग हुआ है। इन प्रेमाख्यानो में 'तिरस्कृत प्रेमिकाये' अधिकतर पटरानियाँ चित्रित की गईं जो अपने सौतेले पुत्रो अथवा जामाताओ के समक्ष-प्रणय निवेदन करती है किन्तु उनके द्वारा इन पटरानियो का प्रेम तिरस्कृत कर दिया जाता है। ये प्रेम-तिरस्कृत नारियाँ प्रतिशोध की ज्वाला मे जलकर नायिको पर मिथ्या दोषारोपण करके उनको सकटो मे डालती है। 'हसाउली' प्रेमाख्यान मे पटरानी अपने सौतेले पुत्र की आँखे निकाल लेने की आज्ञा राजा द्वारा दिलवा देती है। माधवानल कामकन्दला, रणसिह कुमार चौपई, मलय सुन्दरी कथा आदि अनेक प्रेमाख्यानो मे इस अभिप्राय का सफल प्रयोग हुआ है।

'तिरस्कृत प्रेमिका' अभिप्राय के उपर्युक्त ऐतिहासिक एव तुलनात्मक विवेचन से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते है :—

(१) विश्व की अनेक लोक-कथाओ मे प्रयुक्त इस अभिप्राय मे एक आश्चर्य-जनक समानता मिलती है। विश्व के प्रमुख धर्म-ग्रन्थो—बाइबिल, कुरान, बौद्ध-जातक, जैन-आख्यान आदि मे इस अभिप्राय का लगभग समान रूप मिलता है, जिससे विश्व-लोक-मानस की एकता प्रकट होती है।

(२) इस अभिप्राय का मूल-स्त्रोत भी अति प्राचीनकाल सम्भवत: प्रागैति-हासिक काल ही प्रतीत होता है, क्योकि इधर भारतीय-साहित्य मे इसका लिखित रूप जातक-कथाओ मे सुरक्षित है जिनका रचना-काल ६०० वर्ष ई. पूर्व माना जाता है। अत: इसका मौखिक रूप तो और भी प्राचीन है। उधर मिस्र की लोक-कथा मे

भी यह अभिप्राय सुरक्षित है। इस अभिप्राय का उद्गम-स्थल मिस्री अथवा प्राचीन भारतीय सभ्यता ही हो सकती है। यही से इस अभिप्राय ने विश्व के अन्य देशो मे यात्रा की है अथवा यह भी सम्भव है कि योरोपीय-मानव-परिवार प्रागैतिहासिक काल मे एक स्थान पर रहा हो और वहाँ से अलग होते समय अपने विश्वासो और सस्कारो को लोक-कथाओ के रूप मे अपने इस अभिप्राय को साथ ले गया हो।

४. दोहद

दोहद या गर्भवती नारी की अभिलाषा नामक अभिप्राय मे गर्भवती नारी किसी असाधारण वस्तु की प्राप्ति के लिए अथवा अन्य कोई विचित्र अभिलाषा व्यक्त करती है और पति उसकी इच्छा पूर्ति के लिए प्रयत्नशील होता है। पाश्चात्य विद्वान् डा. अलफ्रैडऐला[1], प्रोफेसर ब्लूम फील्ड[2], तथा पेजर[3] ने इस कथानक-रूढि पर विस्तृत प्रकाश डाला है। पेजर ने दोहद शब्द की व्याख्या करते हुए लिखा है कि 'दोहद' शब्द का तात्पर्य दो हृदय (Two heartedness) अर्थात् ऐसी नारी जिसके दो हृदय हो अर्थात् जिसकी दो इच्छाये हो—एक अपनी और दूसरी गर्भ के बालक की। राजस्थान मे गर्भवती नारी के लिए प्रयुक्त शब्द 'दो जीवाँ' भी दोहद शब्द को इसी रूप मे सार्थक करता है। डा० ब्लूम फील्ड ने 'गर्भवती नारी की अभिलाषा' नामक अभिप्राय की व्याख्या करते हुए इसके छह विभिन्न रूप बतलाये हैं। यथा—

(१) दोहद अभिप्राय मे नारी या तो स्वय अपने पति को घायल करती है या उसकी यह मनोवृति होती है कि पति सकट-ग्रस्त हो।

(२) इसके दूसरे रूप मे नारी अपने पति को कुछ साहसिक कार्य सम्पन्न करने, असाधारण दक्षता दिखलाने को प्रोत्साहित करती है।

(३) दोहद मे पवित्र नारी पवित्र भावनाओ से युक्त पवित्र-कार्य सम्पन्न करने के लिए लालायित रहती है।

---

1. Longing of the Pregent, viewed in the light from the East. By Alfred Ela (Boston Medical and Surgical Journal, Vol. (CLXXXIII P. 576, 1920)
2. The Dohad or carving of the pregnant women. By Bloomfield (Toun Amer, orient soc. Vol IX Part I, 1920 P. 1. 24)
3. On the Dohad or carving of the pregnant women, as a Motif in Hindu Fiction. (Ocean of the story—N. M. Penzer. Vol 1. P. 221-232).

(४) दोहद का चौथा रूप किसी आख्यान मे कृत्रिम घटना के रूप मे प्रयुक्त होता है जो आख्यान की मुख्य घटना को प्रभावित नही करता।

(५) दोहद मे गर्भवती नारी किसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए अथवा अपनी कोई अभिलाषा की पूर्ति के लिए ललायित रहती है।

(६) दोहद अभिप्राय के छठे रूप मे गर्भवती नारी को बडे चतुरतापूर्ण कार्य से यह विश्वास दिलाया जाता है कि उसकी अभिलाषापूर्ण की जा रही है।

दोहद अभिप्राय के प्रथम रूप की पुष्टि के लिए कुछ उदाहरण भी प्रस्तुत किये गये है। प्रथम उदाहरण मे, राजा बिम्बसार अपनी गर्भवती रानी को अपने दाहिने घुटने से रक्त निकाल कर देता है। इसी प्रकार रासल्टन द्वारा सम्पादित तिब्बत की लोक-कथाओ मे उल्लेख है कि गर्भवती रानी वासवी अपने पति की पीठ का माँस खाने की अभिलाषा व्यक्त करती है।[1] किन्तु पेजर महोदय प्रोफ़ेसर ब्लूम फील्ड के द्वारा वर्णित दोहद के प्रथम रूप से सहमत नही है। उनका कहना है कि पत्नि द्वारा पति को घायल करने का कार्य अथवा अभिलाषा 'दोहद' अभिप्राय के अन्तर्गत नही आता। उनके अनुसार दोहद अभिप्राय मे तो केवल गर्भवती स्त्री की विचित्र कामना और उसकी पूर्ति ही आना चाहिये।

भारतीय-साहित्य मे दोहद अभिप्राय का प्रयोग प्राचीन काल से होता आ रहा है। परशिष्ट पर्वन मे उल्लेख है कि मत्री की गर्भवती-पुत्री की मनोकामना पूर्ण करने के लिए कृत्रिम साधनो से दूध मे चाँद की किरणे झलकाकर उसे चाँद पिलाया जाता है। कथा-सरित्सागर की कहानी राजा सातवाहन और मृगावती मे भी इसका प्रयोग मिलता है। इस कथा मे गर्भवती मृगावती रक्त से भरी बावडी मे स्नान करने की अभिलाषा व्यक्त करती है और रानी की अभिलाषा की पूर्ति के लिए राजा लाख आदि पदार्थो से बावडी का पानी रक्त जैसा बनवा देता है जिसमे स्नान करके रानी अपनी अभिलाषा पूर्ति की तृप्ति का अनुभव करती है।[2] दोहद अभिप्राय का यही रूप राजस्थानी प्रेमाख्यान समयसुन्दर कृत 'मृगावती रास' मे मिलता है। अतः दोहद अभिप्राय की व्याख्या जो पेजर महोदय ने की है वह प्रोफेसर ब्लूम फील्ड की व्याख्या से अधिक तर्क सगत लगती है। इस अभिप्राय का प्रयोग जैन-आख्यानकारो ने बहुत किया है।

---

१. Schiefiner and Ralston's Tibetan Tales. P. 84.

२ कथा-सरित्सागर (सत साहित्य प्रकाशन, दिल्ली) दूसरा खण्ड, पृ स. २३।

५. सत्य-क्रिया

विश्व मे सत्य एक महान् शक्ति के रूप मे ग्रहण किया जाता है। सत्य से वर्षा की जा सकती है। आग बुझाई जा सकती है, सत्य से विष का प्रभाव भी जाता रहता है। विश्व मे ऐसा कोई कार्य नही जो सत्य के बल से सम्पन्न न हो सके। देव, दनुज, गधर्व, मानव सभी चराचर सत्य का अनुसरण करते है।[1] 'सच-क्रिया' का धार्मिक महत्व भी है। बाल्मीकि रामायण मे सत्य की महिमा निम्न-लिखित रूप मे व्यक्त हुई है—

"सत्यमेवेश्वरो लोके, धर्मसत्ये प्रतिष्ठित", ईसाइयो, मुसलमानो और यहूदियो का विश्वास है कि उनके देवता सत्य की प्रति मूर्तियाँ है। अत इस विश्वास का प्रचलित होना कि सत्य की उद्घोषणा से कोई चमत्कारिक कार्य सम्पन्न हो जाता है, तो कोई आश्चर्यजनक बात नहीं है। इस अभिप्राय के लिए 'सच-क्रिया' नाम का प्रयोग प्रथम बार पाली साहित्य मे प्रयुक्त हुआ है। राजा मिलिंद और बौद्ध-भिक्षु नागसेन के सवाद मे सच-क्रिया की महत्ता व्यक्त होती है। नागसेन मिलिंद से कहता है कि 'सच-क्रिया' से तूफानी समुद्र को शान्त करना और उमडती हुई नदियो के प्रवाह को विपरीत दिशा मे चलाना आदि अनेक असम्भव बाते भी सम्भव हो जाती है।[2]

डा० कन्हैयालाल सहल ने सच-क्रिया के अभिप्राय की व्याख्या करते हुए लिखा है कि 'सत्य-क्रिया से तात्पर्य उस विधि विहित सत्योक्ति से है जिसमे किसी आज्ञा, दृढ निश्चय अथवा प्रार्थना का सन्निवेश इस दृष्टि से किया जाता है कि ऐसा करने से कर्त्ता के उद्देश्य की पूर्ति हो जायेगी।[3] उदाहरणार्थ राजस्थानी के प्रेमाख्यान 'नलाख्यान' मे दमयन्ती के सत की परीक्षा के लिए जब इन्द्रादि देवता विवाहार्थी होकर जाते है और नल का रूप बना लेते है तो दमयन्ती सत्य-क्रिया करती है कि 'यदि नल के प्रति मेरा प्रेम सच्चा हो और यदि मैंने स्वप्न मे भी नल के अतिरिक्त अन्य पुरुष की कामना न की हो तो यह वर माला असली नल के गले मे ही पडे। दमयन्ती की इस सत्य-क्रिया से इन्द्र आदि देवता अपने असली रूप मे प्रकट हो जाते है। इस प्रकार का एक अन्य उदाहरण राजस्थानी के

---

१ The act of Truth, by W. B. Burlingane, J R A. S July, 1957.

२. The act of truth, N M Penzer The ocean of the story, Vol II P. 31

३ लोक-कथाओ की कुछ प्ररूढियो नामक पुस्तक मे सत्य-क्रिया और उसकी परम्परा डा० कन्हैया लाल सहल।

प्रेमाख्यान 'निहालदे सुलतान' से उद्धृत किया जाता है। मारू तथा ढोला सिंह से विदाई के समय सुलतान ने जल का एक लोटा अपने हाथ मे लिया और सूर्य देव के सामने ढालते हुए कहा—

"तेरी वी नजर कै नीचै हे सूरज सव काम है,
ते वी मेरो सत कडे डिग्यो है नरवल कोट मे,
तो जाणूँ तेरे सै छानो वी अलवत नाय
जेवी मेरो सत सूरज देवता डिग्यो तो,
गढ का कागण भी न ज्याय
ओ वी वचन तो वे छत री सत का जद कह्या,
ढाई कागण वी गढ का नय ज्याय ॥४॥"[1]

सुलतान द्वारा इस सत्य-क्रिया के किये जाने पर उसी समय गढ के कगूरे झुक जाते हैं। इसी प्रकार 'मलिया मुन्दरी कथा' मे भी मलिया अपने सत की परीक्षा के लिए सच-क्रिया करती हुई विषैले साँप को पकड लेती है, किन्तु साँप उसे नही काटता।

'सत्य क्रिया' नामक यह अभिप्राय बहुत प्राचीनकाल से प्रचलित है, सम्भवत प्रागैतिहासिक काल से, क्योकि इसकी पृष्ठ-भूमि मे आदिम-मानव का जादुई शक्तियो मे विश्वास होना निहित है। सत्य-क्रिया के अनेक उदाहरण ऋग्वेद मे भी मिलते है। श्री ए वेकट सुब्बिआ के अनुसार ऋग्वेद मे यह अभिप्राय ५४ बार आया है। महाभारत मे उत्तरा के बालक को जीवित करने के लिए कृष्ण की सत्य-क्रिया, स्वयवर एव व्याध के प्रसग मे दमयन्ती द्वारा की गई सत्य क्रियाए भी प्रसिद्ध है।

जातक-कथाओ मे तो सत्य-क्रिया के अनेक उदाहरण मिलते है। 'कट्ठहारि-जातक' मे वर्णन है कि जब राजा ब्रह्मदत्त अपनी पूर्व प्रेमिका को उसके द्वारा प्रदत्त अगूठी से नही पहिचानता है तो लडकी अपनी साक्षी के लिए कहती है :—

'तो देव अब मेरे पास सत्य-क्रिया के अतिरिक्त कोई दूसरा साक्षी नही है और इतना कहकर वह सत्य-क्रिया करती है —

"यदि बालक आपसे पैदा हुआ है तो आकाश मे ठहरे, नही तो भूमि पर गिरकर मर जाये।" इस पर उसके द्वारा फैका गया बालक आकाश मे ठहर जाता

---

१. डा० कन्हैयालाल द्वारा सम्पादित निहालदे सुलतान (प्रथम खण्ड) पृ. स ४२, ४३।

है ।[१] अडभूत जातक मे माणविका का प्रेमी भी सत्य क्रिया करता है ।[२] श्रीमद्भागवत मे भी सत्य-क्रिया के उदाहरण मिलते है। रुरू और प्रमद्वरा की प्रेम कथा मे इस अभिप्राय का प्रयोग हुआ है। रुरू अपनी आधी आयु देकर प्रमद्वरा को सत्य-क्रिया से जीवित करता है। इस प्रकार हम देखते है कि भारतीय वाङ्गमय मे सत्य-क्रिया के अनेक उदाहरण मिलते है। 'सत्य-क्रिया' का मोटिफ इतना लोक-प्रिय है कि यह विश्व की अनेक लोक-कथाओ मे इसके अनेको उदाहरण विभिन्न रूपो मे प्राप्त होते हे।

६. सत की परीक्षा

पति-पत्नि या प्रेमी-प्रेमिका की एक दूसरे के प्रति सच्ची प्रेमनिष्ठा की परीक्षा के कई रूप विश्व की लोक-कथाओ से मिलते है। पेजर महोदय ने सत-परीक्षा (Chestity Index) अभिप्राय के तीन रूपो का उल्लेख किया है।[३] यथा—

(१) कोई जादुई पदार्थ या जादुई-शक्ति से अपने से दूर, प्रेमी या प्रेमिका अथवा नायक-नायिका की सच्चाई या प्रेम-निष्ठा का पता चलाना।

(२) प्रेमी-प्रेमिका या नायक-नायिका के सत की परीक्षा उन्हे प्रलोभन देकर या उन्हे सकट मे डालकर लेना।

(३) सत्-क्रिया द्वारा अर्थात् अपने सत की उद्घोषणा करके वाछित फल की प्राप्ति करके सत्य-निष्ठा का परिचय देना।

सत-परीक्षा अभिप्राय के प्रथम रूप को स्पष्ट करने के लिए पेजर महोदय ने अनेक उदाहरण दिये है। आग्ल लोक-कथा 'द राइट्स चेस्ट वाइफ' की नायिका नायक को विदा करते समय फूलो की माला पहिनाती हुई कहती है कि जब इस माला के फूल कुम्हला जाय तब जानना कि मैं तुम्हारे प्रति प्रेम-निष्ठा से पतित हो चुकी हू। किसी व्यक्ति की सत्य-निष्ठा की परीक्षा के लिए जादुई-वस्तुओ पर विश्वास कुछ आदिम जातियो मे आज भी प्रचलित है। पेरू की आदिम जातियो मे आज भी यह रिवाज प्रचलित है कि जब पति परदेश जाता है तो वह वृक्ष की शाखा के गाठ बाँध जाता है। उसके लौटने पर यदि गाँठ लगी हुई मिलती है तो

---

१ जातक (प्रथम खण्ड) स० भदन्त आनन्द कौसल्यायन (हिन्दी-साहित्य सम्मेलन, प्रयाग) पृ स. १७५ व ३७६।

२ जातक, प्रथम खण्ड (हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग) पृ स ३७६।

३ The ocean of the story, by N M. Panjer. P. 165.

पत्नि चरित्रवान् समझी जाती है और यदि गाँठ खुली हुई मिलती है तब वह दुश्चरित्र समझी जाती हे ।

राजस्थानी के प्रेमाख्यानो मे भी 'सत-परीक्षा' के अनेक उदाहरण मिलते है, किन्तु इनमे उपर्युक्त प्रथम रूप के उदाहरण नही मिलते है, दूसरे एव तीसरे रूप के उदाहरण ही पाये जाते है । इनका तीसरा रूप 'सच-क्रिया' का अभिप्राय भी अपनी प्रकृति और व्याप्ति की दृष्टि से एक अलग अभिप्राय है जिसकी विवेचना की जा चुकी है । राजस्थानी प्रेमाख्यानो मे नायक-नायिका के प्रेम की एकनिष्ठता एव सच्चाई की परीक्षा के लिए मुख्यत निम्नलिखित साधनो का प्रयोग हुआ हे -

(१) वेश वदलकर कोई देवता या मानव नायक-नायिका को प्रेम-निष्ठा से च्युत करने के लिए प्रलोभन देते हैं या कोई मिथ्या सूचनाये देते हे । 'महादेव पार्वती री वेलि' मे उल्लेख हे कि पार्वती की प्रेमनिष्ठा की परीक्षा के लिए शिव वृद्ध ब्राह्मण का रूप वनाकर उसे प्रलोभन देते है और शिव के प्रति अरुचि उत्पन्न करने वाली मिथ्या सूचनाये देते है, किन्तु पार्वती अपनी प्रेम-निष्ठा मे अडिग रहती हैं । इस प्रकार 'उत्तम कुमार चौपई' मे भी देव-माया एक सुन्दर नारी का रूप वनाकर उत्तम कुमार को मोहित करना चाहती हे किन्तु उत्तम कुमार उसे पर-स्त्री माता के समान बतलाकर अपने सत की परीक्षा मे उत्तीर्ण होता है ।

(२) नायक अथवा नायिका की सत की परीक्षा के लिए उन्हे विषैले साँप पकडना, अग्नि मे प्रवेश करना, हिंसक पशुओ के सामने जाना आदि सकटपूर्ण कार्य सौपे जाते है और उसे किसी प्रकार की क्षति नही पहुचती हे तो उसका चरित्र विशुद्ध समझा जाता हे । 'मलय सुन्दरी कथा' मे उल्लेख है कि मलया को अपने सत की परीक्षा के लिए उपर्युक्त तीनो परीक्षाये देनी पडती है । भयकर निर्जन-वन मे भूखासिंह उसके चरणो मे नत-मस्तक होता है । अग्नि की लपटे उस पर कुछ भी प्रभाव नही डालती ।

(३) नायिकाओ पर घोर विपत्ति पडना और विपत्ति के समय मे प्रति-नायको द्वारा तथा दुष्ट-पुरूपो द्वारा उनके सतीत्व के अपहरण के लिए उन्हे घोर यातनाये पहुचाने पर तथा नाना प्रकार के प्रलोभन देने पर उनका अपने सत-पथ से अडिग रहना । नायिकाओ की सत-परीक्षा का उक्त साधन प्राय सब जैन प्रेमा-ख्यानो मे पाया जाता हैं ।

७. संकटों की भविष्यवाणिया

भविष्यवाणियाँ सुनने का अभिप्राय इतना लोक-प्रिय है कि विश्व की अनेक लोक-कथाओ मे इसका प्रयोग विविध रूपो में पाया जाता है इन लोक-कथाओ

मे भविष्यवाणिया करने वाले प्राय· पशु-पक्षी तथा दानव, राक्षस, चुडैल आदि परा प्राकृतिक तत्व होते है। नायक या नायिका किसी वृक्ष के नीचे अथवा अन्य स्थान पर आकस्मिक रूप से या छिपकर इनका वार्तालाप सुन लेते है और तदानुसार अपना कार्य निश्चित करते है। ये भविष्यवाणियाँ प्राय दो प्रकार की होती है—प्रथम प्रकार मे नायक-नायिका पर आने वाले सकटो की तथा उनके निराकरण सम्बन्धी भविष्यवाणिया होती है। दूसरे प्रकार मे नायक-नायिकाओ को अमुक कार्य करने से आकस्मिक रूप से धन मिलने सम्बन्धी अथवा भाग्योदय सम्बन्धी होती हैं।

राजस्थानी के प्रेमाख्यानो मे भी इस अभिप्राय का प्रचुर मात्रा मे प्रयोग हुआ है। 'चित्रसेन पद्मावती रतनसार मत्री चौपई' एव 'फूलमती री वारता' मे उल्लेख है कि नायिका के साथ नायक लौटते समय मार्ग मे एक वट वृक्ष के नीचे विश्राम करते है। वहा वृक्ष पर बैठी व्यतरियों के अथवा चकवा-चकवी के वार्तालाप से नायको के सहायक मित्रो को उन पर आने वाले सकटो की भविष्यवाणिया सुनाई पडती हैं तथा वे उन सकटो से अपने मित्रो की रक्षा करते है। 'हँसाउली विक्रम चरित्र विवाह' नामक प्रेमाख्यान मे भी उल्लेख है कि राजकुमारी हँसा को एक वृक्ष पर बैठे हुए गरुड पक्षियो के वार्तालाप से भावी घटनाओ का पता चलता है और वह अपने प्रेमी राजकुमार को प्राप्त करने मे सफल होती है। राजस्थानी के एक अन्य प्रेमाख्यान 'रूपसेन कुमार नो चरित्र, मे भी वर्णन है कि रात्रि मे राजकुमार वृक्ष के नीचे लेटा हुआ यक्ष-यक्षणी के वार्तालाप से रूप बदलने वाली जादुई जडी प्राप्त करता है।

सकटो की भविष्यवाणियो मे प्राय· तीन सकटो का उल्लेख होता है। ये सकट अलग २ कहानी मे अलग २ रूप ग्रहण करते है। 'चित्रसेन पद्मावती चौपई' मे चार सकटो का उल्लेख मिलता है। यथा—

१. दुष्ट घोडे पर बैठने से मृत्यु।
२ दरवाजे पर प्रवेश करते समय मृत्यु।
३. विष का मोदक खाने पर मृत्यु।
४ शयना गृह मे साँप से मृत्यु।

'फूलमती री वारता' मे तीन सकटो का ही उल्लेख है। यथा —

(१) हीरो का कोडा उठाने पर, वह साँप बनकर डस लेगा।

(२) तालाब के किनारे जिस वट-वृक्ष के नीचे राजकुमार सोयेगा, वह उस पर गिर पड़ेगा।

(३) शयना-गृह में राजकुमारी के कपोल पर विषैली लट पडेगी और चुम्बन से राजकुमार की मृत्यु होगी। लट साँप बनकर चल देगी।

पशु-पक्षियो से परा प्राकृतिक तत्वो से भविष्यवाणियां सुनने का अभिप्राय बहुत प्राचीनकाल से प्रचलित है। इस अभिप्राय मे आदिम मानव का पशु-पक्षियो के प्रति यह विश्वास निहित है कि उनमे महान् बुद्धि और समझदारी होती है और वे रहस्यमयी शक्तिया रखते हैं जिन्हे उनकी भाषा समझने वाला ही जान पाता है। लोक-कथाओ मे पशुओ के वार्तालाप की अपेक्षा पक्षियो के वार्तालाप का वर्णन अधिक आया है। इसका कारण सम्भवतः यही है कि पशु की अपेक्षा पक्षी उडने की शक्ति के कारण अगम्य स्थलो पर सफलता से आ जा सकता है।

इस अभिप्राय का प्रयोग भारतीय वाङ्गमय मे प्रचुर-मात्रा में मिलता है। जातको मे पशु पक्षियो की भविष्यवाणियो के अनेक उदाहरण प्राप्त होते है। 'सिरि जातक' मे दो कव्वे अपने को एक दूसरे से ऊँचा सिद्ध करने के लिए ऐसा वार्तालाप करते है कि सुनने वाला उनका मास खाकर समृद्धि प्राप्त करता है। "खरपत जातक" मे उल्लेख है कि राजा एक गधा और बैल का वार्तालाप सुनकर नाग से अपने-प्राणो की रक्षा करता है।[१] कथा-सरित्सागर की वररुचि की कहानी इस अभिप्राय के लिए प्रसिद्ध है। राक्षसी का वार्तालाप सुनकर वररुचि मछली के हसने का कारण ज्ञात कर लेता है।[२]

कथा-कोश की रानी पद्मावती तोता मैना की बातें सुनकर अपने शरीर की दुर्गंध का कारण जान लेती है और दूर करने का उपाय भी। एक अन्य कथा मे विद्याधर बन्दर-बन्दरी का वार्तालाप सुनकर अपनी माता से विवाह करने से बच जाता है।[3] कथा-कोष की ही ललिताग की कहानी मे एक अन्धा राजकुमार भारुड पक्षियो से नेत्रज्योति प्राप्त करता है और अन्धी राजकुमारी की आँखें ठीक करके आधा राज्य तथा विवाह मे राजकुमारी प्राप्त करता है।[४] पचतत्र की लोक-कथा मे भी इस कथानक-रूढि का प्रयोग मिलता है। एक राजकुमारी दो साँपो का वार्तालाप सुनकर उनकी मृत्यु का रहस्य जान लेती है और उन्हे मार-

1. Ocean of the story, by N. M. Panjer, Vol, III. P. 60.
2. ,, ,, ,, Vol I. P. 48.
3 Tewney's Katha Koca (Oriental Translation Fund, New Series II, 1895, Royal Asiatic Society) P. 42.
4. ,, ,, ,, P. 164,

कर समृद्धि-प्राप्त करती है। 'पचफूल रानी की कहानी' में रानी गीदडो के वार्तालाप से जादुई-सजीवनी-रस का पता चलाकर अपने मृत पति को पुनर्जीवित कर लेती है।[१] दक्षिण की लोक-कथाओ मे भी इस कथानक-रूढि का प्रयोग हुआ है। एक राजा अजगर के गले मे फस जाता है जो अनेक उपाय करने पर भी नही निकल पाता। रानी साँपो के वार्तालाप से राजा को मुक्त करने का उपाय मालूम करती है।[२] एक अन्य लोक-कथा 'राम लक्ष्मण' मे उल्लेख है कि वृक्ष के नीचे लक्ष्मण उल्लूओ का वार्तालाप सुनकर तदानुसार कार्य करता है। श्री लालबिहारी के द्वारा सग्रहित बगला की 'फकीरचद' नामक लोक-कथा मे भी इस अभिप्राय का प्रयोग हुआ है।[३] इसी प्रकार ब्लूम फील्ड द्वारा सम्पादित 'पार्श्वनाथ की जीवनी' में भी इस अभिप्राय का उल्लेख मिलता है। योरोपीय देशो की लोक-कथाओ मे भी इस अभिप्राय का प्रयोग मिलता है। 'डैनिल लोक-कथा' 'सेवेड्स एक्सप्लाइट्स' (Savend's Exploits) मे उल्लेख है कि सेवेड कौवो के वार्तालाप से अपनी रक्षा का उपाय जान लेता है।

उपर्युक्त विवेचन से हम इस निष्कर्ष पर पहुचते है कि भविष्यवाणियाँ सुनने का 'मोटिफ' एक अत्यन्त व्यापक और लोकप्रिय कथा-तत्तु है और विश्व की अनेक लोक-कथाओ मे मिलता है। फ्रेजर महोदय ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'गोल्डन बॉउ' मे इस अभिप्राय का विशिष्ट अध्ययन प्रस्तुत किया है।[४]

८ वर्जित-कक्ष

वर्जित-कक्ष का अभिप्राय विश्व की अनेक लोक-कथाओ मे मिलता है। विभिन्न लोक-कथाओ मे इसके विभिन्न रूप हो गये है। वर्जित-स्थल, वर्जित वन, वर्जित कुओ तथा बावडी, वर्जित समय, वर्जित-चित्र अथवा मूर्ति, वर्जित दिशा आदि इसी अभिप्राय के विभिन्न रूप है। वर्जित-स्थल अथवा कक्ष से तात्पर्य है कि नायक अथवा नायिका वर्जित-कक्ष मे या स्थल पर जाते है और वहाँ या तो किसी के प्रेम मे पड जाते हैं या किसी सकट मे फस जाते है। रेयड डेलाम जैमसन का मत है कि इस वर्णन का मूल वर्जित-फल या वृक्ष है। इसका एक रूप आदम-हव्वा के कथानक मे मिलता है। इसमे भले बुरे के ज्ञान के पैदा होने के साधन का वर्जन

---

1. Panchatantra—by Benfy Vol. II, P. 257–258.
2. Freres old Daccan days (seventh story) P 121.
3. Folk tales of Bengal, P. 40.
4. Golden Bough Vol. VIII, P. 146.

प्रतीत होता है। यही वर्जन रूपान्तरिक होकर कक्ष-वर्जन चित्र-मूर्ति वर्जन, दिशा-वर्जन बन गया है।[1] फ्रेजर महोदय ने ऐसे वर्जन का सम्बन्ध विश्व-व्यापी उस पूर्वाग्राह से माना है जिसमे प्रथम पुष्पवती होते समय किशोरियो को पृथ्वी-स्पर्श अथवा सूर्य-दर्शन का वर्जन किया गया है। भारत मे भी 'असूर्यपश्या' स्त्री को महत्व दिया गया है। यह पृथ्वी न छूने अथवा सूर्य के दर्शन न करने की प्रथा अत्यन्त प्रचलित है। अनेक जातियो मे कुमारियो को अलग कमरे मे वन्द कर दिया जाता है। इस प्रथा के विश्व-व्यापी रूप का रोचक-दर्शन फ्रेजर ने अपनी पुस्तक 'गोल्डन वॉड' मे कराया है।[2] वर्जन के सम्बन्ध मे फ्रेजर महोदय की सम्भावना की अपेक्षा रेयड डेलाप महोदय का मत अधिक सगत जान पडता है क्योकि वहाँ वर्जन के साथ उल्लघन भी विद्यमान है।

राजस्थानी के इन प्रेमाख्यानो मे कक्ष-वर्जन का अभिप्राय तो स्पष्ट रूप से नही मिलता किन्तु इसी अभिप्राय के अन्य रूप यथा—स्थल-वर्जन, दिशा-वर्जन, मूर्तियाँ, चित्र देखने का वर्जन आदि मिलते है। उदाहरणार्थ, 'वछराज चौपई' मे उल्लेख है कि नायक वर्जित-स्थल यक्ष-वन मे जाकर सकटो मे फँस जाता है। उसी वन मे सरोवर मे नहाती हुई विद्याधरी की कचुकी चुराता है। 'उत्तम कुमार चौपई' का नायक उत्तम कुमार वर्जित वावडी मे जाकर वहा राक्षस-कन्या सुन्दरी मदालसा के प्रेम मे पड जाता है। 'राजा मन्तरसेण और राजा भोज री वारता' में वर्णन है कि राजा भोज जब मतरसेण की कन्या से विवाह करने वारात लेकर जाता है तो मार्ग मे वर्जित-मन्दिर मे सोने से अप्सरा के द्वारा अप्सरा वना लिया जाता है। 'हसराज वछराज चौपई' मे भी स्थल-वर्जन का अभिप्राय आया है। चित्रसेन पद्मावती रतनसार मत्री चौपई' तथा 'फूलमती री वारता' मे स्थल-वर्जन के अभिप्राय ने चित्र-दर्शन के वर्जन का रूप ले लिया है। नायक वावडी की भीत पर चित्रित नायिका के चित्र से लिपा हुआ कीचड धोकर उसे देखता है और उसके प्रेम में पड जाता है।

---

१ राजस्थान भारती (दिसम्बर ६६ ई०) मे प्रकाशित डा० सत्येन्द्र का लेख—'राजस्थान के लोक-साहित्य पर कुछ दृष्टियां', पृ स. २८।

२. A superstition so widely diffused as this might be expected to leave traces legends and Folk-tales and it has done so The old Greek story of Danal was confined by her father in a subterransan chamber or a broyen tower but impregnated by zeus who reached her in the shape of a shower of God perhaps belongs to this class of Tales.—The Golden Bough, P 602,

भारतीय-साहित्य में यह वर्जन प्राचीन-काल से प्रचलित है। हितोपदेश मे कदर्प केतु की कहानी मे इस वर्जन का उपयोग किया गया है।[1] भारतीय भाषाओ की लोक-कथाओ मे भी इस वर्जन का प्रयोग प्रचुर-मात्रा मे मिलता है। डा० सत्येन्द्र ने व्रज की लोक-कथा का उल्लेख किया है जिसमें सुनार वर्जित कुएँ से उसमे पडे हुए मनुष्यो को बाहर निकालने पर वह स्वय सकट मे पड जाता है।[2] इस वर्जन अभिप्राय का प्रयोग भारतीय लोक-कथाओ मे ही नही, बल्कि विश्व की अन्य लोक-कथाओ मे भी हुआ है। राल्सटन महोदय द्वारा सम्पादित रूसी लोक-कथाओ में इसके अनेक उदाहरण मिलते हैं।[3] कई अन्य योरोपीय लोक-कथाओ मे इस अभिप्राय के पाये जाने का उल्लेख पेजर महोदय ने किया है। 'बर्टन की नाइट्स' मे सग्रहित अजीब और खजीब की लोक-कथा मे ४० कक्ष थे। उनमे से एक कक्ष में जाना वर्जित था। खजीब एक दिन उस कक्ष मे चला जाता है, जिससे अजीब और खजीब दोनो मे वियोग हो जाता है।[4]

६. जादू की डोरी

राजस्थानी के प्रेमाख्यानो मे 'जादू की डोरी' नामक अभिप्राय का विविध रूपो मे प्रयोग मिलता है। इस अभिप्राय का प्रयोग विशेषकर प्रेमिका द्वारा प्रेमी के गले मे जादू की डोरी बाँधकर उसे पशु या पक्षी बना लेने के लिए हुआ है। रात्रि मे या कभी भी इच्छा होने पर प्रेमिका जादू की डोरी खोलकर अपने प्रेमी को पशु या पक्षी से पुन. पुरुष बनाकर उसके साथ भोग-विलास करती है। 'चन्द्रराज चरित्र' 'राजा चन्द प्रेमलालछी री बात' मे उल्लेख है कि रानी राजा के गले मे जादू की डोरी बाँधकर कूर्कट बना देती है। 'विद्या विलास रास' मे वर्णन है कि एक गणिका विद्या विलास के रूप पर मोहित होकर उसे जादू की डोरी से तोता बना लेती है। इसी प्रकार 'उत्तम कुमार चरित्र चौपई' में भी उल्लेख है कि एक गणिका उसे तोता बना लेती। 'लालजी हीरजी री बात' मे उल्लेख है कि लालजी के रूप पर मोहित होकर एक तम्बोलिन उन्हे 'जादू की डोरी' से मेढा बना लेती है। इन प्रेमाख्यानो मे जादू की डोरी से मानव को केवल पशु-पक्षी ही बनाने के उदाहरण नही मिलते, बल्कि मानव से अप्सरा बना लेने का भी उदाहरण मिलता

---

१. The ocean of the story by N. M. Panzer, Vol. II. P. 223.

२. राजस्थान भारती (दिसम्बर ६६ ई०) मे प्रकाशित डा० सत्येन्द्र का लेख राजस्थान के लोक-साहित्य पर कुछ दृष्टिया, पृ. स. २८।

३. Russian Folk-tales, by Ralston. P. 99.

४. Nights—by Busrton. Vol. I. P. 160.

है। 'राजा मतरसेरा री वारता' मे उल्लेख है कि मतरसेरा की कन्या को विवाहने जाते समय मार्ग मे एक देव-मन्दिर मे राजा भोज जब सोता है तो एक अप्सरा उसके हाथ मे राखी बाँधकर उसे अप्सरा बना लेती है। 'जादू की डोरी' अभिप्राय का प्रयोग न केवल राजस्थानी भाषा मे, बल्कि भारतीय भाषाओ की लोक-कथाओ मे भी प्रचुर-मात्रा मे हुआ हे। एक काश्मीरी-लोक-कथा मे उल्लेख है कि एक व्यतरी राजकुमार के रूप पर मोहित होकर उसे मेढा बना लेती है और रात्रि मे उसे पुनः पुरुप मे बदल देती है।[1]

यह अभिप्राय बहुत प्राचीनकाल से प्रचलित है। इसका प्रयोग कथा-सरित्सागर की बहुत-सी कहानियो मे हुआ है। बन्धुदत्त की कहानी मे एक विद्याधरी बन्धुदत्त को 'जादू की डोरी' देती है जिससे वह बन्दर के रूप मे अपनी प्रेमिका राजकुमारी से मिल सके। एक दूसरी कहानी मे मूर्वशर्मन जादू की डोर बाँधने से बैल बन जाता है।[2] कमलाकर हसाउली की कहानी मे भी कमलाकर को हंसाउली द्वारा जादू की डोरी से तोता बनाने का उल्लेख मिलता है।[3] रामायरा मे इस अभिप्राय का प्रयोग भिन्न रूप से हुआ है। वहाँ लक्ष्मरा एक रेखा खींच देते हैं या वृत बना देते है जिसका उल्लघन करना अनिष्ट को आमन्त्रित करना है। यह जादूई वृत्त (Magic circle) का ही रूप है।

'जादू की डोरी' नामक यह अभिप्राय इतना लोक-प्रिय और व्यापक है कि इसका प्रयोग विश्व की अन्य लोक-कथाओ मे भी हुआ है। वर्मीलोक-कथा 'थूअटस का पुत्र और उसकी तीन पत्निया' (Thohte's son and his three wives) कहानी मे जादू के अभिप्राय का प्रयोग मिलता है। यथा—एक व्यक्ति सर्प काटने से मर जाता है। शव को नदी के किनारे रख दिया जाता है। तीन बहिने उस स्थान पर आती है और उस को घर ले जाती हैं। उन लडकियो का पिता उस शव को जीवित कर देता है। उसके रूप को देखकर तीनो बहिने उसके लिए झगडती है, इस पर उनका पिता इस झगडे को समाप्त करने के लिए उसे जादू की डोरी बाँधकर तोता बना देता है। वह राजा के बाग मे जाता है और फल चुराने के अपराध मे माली द्वारा पकडा जाता है तथा राजकुमारी को मनोविनोद के लिए सौप दिया जाता है। एक दिन खेलते समय राजकुमारी की दृष्टि तोते के गले मे बन्धी डोर पर पडती है और वह

1. Folk Tales of Kashmir (2nd. Ed. 1893) P. 71
2. The ocean of the stoiy, by N M Penzer Vol III, P 191-194.
3. Do, Vol VI P 40.

उसे तोड़ डालती है, जिससे तोता पुन पुरुष हो जाता है। राजकुमारी उसे दिन मे तोता बना देती है और रात्रि मे जादू की डोरी खोलकर पुरुष बना लेती है तथा आनन्दोभोग करती है।[1] फारसी लोक-कथाओ में जादू की डोरी का स्थान ताबीज (Talis man) ने ले लिया है। एक फारसी लोक-कथा—'राउफजा और बहराम' की प्रेम कहानी मे उल्लेख है कि राउफजा ताबीज से बहराम को पक्षी के रूप मे परिवर्तित कर देती है, फिर रात्रि मे पुन: पुरुष बना लेती है। इसी प्रकार योरोपीय देशों की लोक-कथाओ मे 'जादू की डोरी' का स्थान 'लगाम' या वशीकरण डोर (Bridle) ने ले लिया है। ग्रिम्स की ८६वी लोक-कथाओ मे 'ब्राइडल' का अभिप्राय के रूप मे प्रयोग मिलता है। मलाया की लोक-कथाओ मे भी जादू की डोरी अभिप्राय का उपयोग किया गया है।[2] इस प्रकार हम देखते है कि न केवल भारत मे ही बल्कि विश्व की अनेक लोक-कथाओ मे इस अभिप्राय का विविध रूप में प्रयोग हुआ है।

भारत मे उपनयन सस्कार तथा उपनयन धारण करना इसी अभिप्राय का धार्मिक-सस्करण है। विवाह के अवसर पर वधू को मगल सूत्र पहिनाना, रक्षा-बन्धन के दिन ब्राह्मणो द्वारा मत्रोच्चारण के साथ सूत्र-बन्धन या राखी बाँधना तथा बहिन का भाई के राखी बाँधना एव धार्मिक पर्वों, देवी-देवताओ की पूजा के अवसर पर कलाई मे मोली (रगा हुआ सूत्र) बाँधना आदि 'जादू की डोरी' नामक अभिप्राय के ही अवशेष है। न केवल भारत मे, बल्कि समस्त विश्व मे आज भी बाँझपन को दूर करने के अनिष्ट से बचने एव बीमारी से मुक्त होने के लिए औषधि रूप मे डोरी या सूत्र बाँधने का रिवाज प्रचलित है।

१०. छद्म-वेश में प्रेमिका के महल में प्रवेश

'प्रेमी द्वारा छद्म-वेश मे प्रेमिका के कक्ष अथवा महल में प्रवेश'—अभिप्राय के अनेक उदाहरण राजस्थानी के इन प्रेमाख्यानो मे प्राप्त होते है। इन प्रेमाख्यानो मे इस अभिप्राय का प्रयोग मुख्यत निम्नलिखित तीन रूपो मे हुआ है :—

(१) फूलो की टोकरी मे छिपकर नायिका के महल मे पहुँचना।

(२) स्त्री का वेश बनाकर नायिका के महल मे पहुँचना।

---

1. Burmese collection—Translated to by D. C. Bandow, Rangoon 1881 (Story No. XVII).
2. The ocean of the story, by N. M. Panzer Vol. VI. Page 59. (The Magic string Motif).

(३) जादुई-वस्तु अथवा जादुई शक्ति से अदृश्य होकर नायिका के महल मे पहुँचना।

'जलाल गहाणी री वात' मे जलाल बूबना के महल मे पहरेदार को धोखा देकर उपर्युक्त दोनो उपायो से पहुँचता है। 'फूलजी फूलमती री वारता' मे भी उल्लेख है कि फूलजी फूलमती के पास फूलो की टोकरी मे छिपकर उसके कक्ष मे पहुँच जाता है। रूपसेन कुमार नो चरित्र' मे वर्णन है कि राजकुमार जादुई जडी को मुँह मे रखने से बन्दर का रूप बनाकर फिर राजकुमारी के महल मे पहुँचता है। अपने मुँह मे से जडी निकालने पर वह पुनः बन्दर से पुरुष बन जाता है। 'पुष्पसेन पद्मावती री वात' प्रेमाख्यान मे उल्लेख है कि राजकुमार पुष्पसेन अपनी आँखो मे 'जादुई-अजन' लगाकर अदृश्यता की शक्ति प्राप्त कर लेता है और राजकुमारी के महल मे पहुँचता है।

छद्म-वेश मे प्रेमिका के महल मे प्रवेश का मोटिफ इतना लोक-प्रिय है कि यह न केवल राजस्थानी के प्रेमाख्यानो मे ही, बल्कि समस्त पूर्वीय-देशो की लोक-कथाओ मे प्रयुक्त हुआ है।[1] बर्टन ने 'नाइट्स' मे इस अभिप्राय का उल्लेख किया है। उसने 'बादशाह शहरयार और उसके भाई' की कहानी का उदाहरण देते हुए लिखा है कि बादशाह के भाई ने बेगम को २० दासियो के साथ बाग मे प्रवेश करते देखा। इन दासियो ने नहाते समय जब कपडे उतारे तो इनमे से १० गोरे-रग के दास निकले।[2]

यह अभिप्राय बहुत प्राचीनकाल से प्रचलित है। 'फूलो मे छिपकर राजकुमारी के महल मे प्रवेश अभिप्राय का जातक-कथाओ मे बहुत भी प्रयोग हुआ है। अडमूत जातक मे उल्लेख है कि माणविका का प्रेमी फूलो की टोकरी मे छिपकर उसके महल मे जाता है।[3] 'कथा-सरित्सागर' की कहानियो मे भी यह अभिप्राय प्रयुक्त हुआ है। 'शशिप्रभा की कहानी' मे उल्लेख है कि मन स्वामी योग-गुटिका को मुँह मे रखने पर स्त्री बन जाता है और राजकुमारी के महल मे पहुँचता है।[4]

---

१. Smuggling men into harm is a favourite Motif of Estern Tales
Nights, by Burton. Vol. 1. P P 6 and 9.

२. Nights, by Burton. Vol. I P. P. 6–9.

३. जातक प्रथम खण्ड · भदन्त आनन्द कौसल्यायन (हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग) पृ. स. ३७६।

४. सोमदेव कृत कथा-सरित्सागर (सत्साहित्य प्रकाशन, दिल्ली) पृ. स. ४१२।

पैंजर महोदय का कथन है कि प्राचीन भारत मे स्त्रियो के कक्ष मे प्रवेश पाने की सुन्दर-कला सिखलाई जाती थी ।[१] वात्सायन के काम-सूत्र मे पहरेदारो को चकमा देकर या घूँस देकर तथा स्त्री-वेश बनाकर महल मे कैसे प्रविष्ट होना चाहिये आदि बातो का विस्तृत उल्लेख मिलता है ।[२] प्राचीन तथा मध्ययुगीन समाज मे बहु-विवाह की प्रथा प्रचलित होने से एक राजा के सैकडो रानियाँ महलो मे रहती थी, अत. उनके लिए, अपनी रानियो को जार-पुरुषो के चुगल मे पडने से बचाने के लिए छद्म-वेश मे महलो मे पहुँचने की कला सीखना बहुत आवश्यक समझा जाता था ।

११. दो भाइयों का कथा-तंतु

दो भाइयो अथवा नायक और सहायक का अभिप्राय इतना प्राचीन और व्यापक है कि किसी न किसी रूप मे विश्व की समस्त लोक-कथाओ मे पाया जाता है । केवल 'स्टिथ थामसन को ही फॉटटेल्स' के सम्पादन के समय इसके ११०० उदाहरण प्राप्त हुए थे । इसका उद्गम उतना ही प्राचीन है जितना कि लोक-कथा का प्रारम्भ । सम्भवत विश्व की प्रथम लोक-कथा के निर्माण ततुओ में इस कथा-ततु का प्रमुख स्थान रहा हो । इस अभिप्राय का मूल-रूप इन्द्र और उपेन्द्र की वैदिक कहानी मे सुरक्षित है । इस कहानी मे इन्द्र और उपेन्द्र ये दोनो अहिवृत्र को मारते है और उसके बन्धन से सूर्य अथवा उपा को मुक्त करते है । दो भाइयो के अभिप्राय मे अश्विनी की वैदिक कहानी को भी रखा जा सकता है । अश्विन दो भाई है । जो अनेक साहस के कृत्य करते हैं । दो भाइयो का यही अभिप्राय आगे चलकर राम-लक्ष्मण, कृष्ण-बलराम के रूप मे बदल जाता है ।

राजस्थानी के प्रेमाख्यानो मे इस अभिप्राय का बहुत प्रयोग हुआ है । इन प्रेमाख्यानो मे मुख्यत· इसके दो रूप मिलते है । 'प्रथम, इन्द्र और उपेन्द्र के वृत्त वाला रूप जिसे 'नायक और सहायक' नाम दे सकते हैं । डा० सत्येन्द्र के अनुसार ऐसी समस्त कहानियाँ जिनमे दो भाई हो और सुन्दरी को प्राप्त करने के लिए किसी कठिनाई को दूर करना पडे, इसी कोटि मे रखी जायेगी । इन्द्र-उपेन्द्र के वृत्त मे इन्द्र-उपेन्द्र (विष्णु) की सहायता से अपनी प्रेयसी उपा को वृत्र के बन्धन से मुक्त करता है ।

---

१. Ocean of the story, Vol. I. P. 48

२. काम-सूत्र, ५, ६७ ।

द्वितीय, दो अश्विन भाइयो वाला रूप जिसमे दोनो भाई अनेक साहसिक कार्य करते है। इस अभिप्राय के नायक-सहायक वाले रूप के अन्तर्गत हँसाउली प्रेमाख्यान का नायक राजा और मत्री मनकेसर आयेगे। मत्री मनकेसर राजा की प्रेमिका 'हँसाउली' को प्राप्त करने के लिए सहायता करता है। वह पुरुप-द्वेपिनी नायिका के हृदय मे राजा के प्रति प्रेम जागृत करता है और नायिका को प्राप्त करने मे सफल होता है। इसी प्रकार 'फूलमती री वारता' 'चित्रसेन पद्मावती रतनसार चौपई' मे भी इसी कथा-ततु का प्रयोग हुआ है जिसमे राजकुमार का मित्र मंत्री सुतनायक पर आने वाले सकटो की भविष्यवाणियाँ सुनकर, उनसे नायक की रक्षा करता है। फूलमती और पद्मावती नायिकाये भी पुरुप-द्वेषिनी नारियो के रूप मे चित्रित की गई है। अश्विनी-दो भाइयो वाले रूप का अनुसरण 'हँसाउली' प्रेमाख्यान कथानक के उत्तरार्द्ध वाले भाग मे हुआ है जहाँ हँसराज वत्सराज को सौतली माता के मिथ्यारोप के कारण देश निकाला मिलता है। वन मे दोनो भाई अनेक कष्टो को झेलते है, वियोग होता है और अन्त मे अनेक साहसिक-कार्य सम्पन्न करके मिलते है। इसी प्रकार 'हँसराज वछराज चौपई' मे हँसराज वछराज दोनो भाइयो को देश निकाला मिलता है। ये भी अनेक कष्टो को झेलकर, अनेक साहसिक कार्य सम्पन्न करके एक दूसरे से मिलते है।

दो भाइयो का यह कथा-ततु बहुत महत्वपूर्ण है। इस पर अनेक पाश्चात्य और भारतीय विद्वानो ने विचार किया है। इसका विशेष अध्ययन राके (Rauke) महोदय ने किया है। दो भाइयो की इस कहानी मे एक ड्रेगन को मारकर सुन्दरी को पाने की बात अधिकाशत. आती है। डा० सत्येन्द्र के अनुसार 'राम-लक्ष्मण के साथ धनुष तोडकर सीता को प्राप्त करने का राम-कथा का अश इन्ही दो भाइयो की कहानी का रूपान्तर है। सात मुख वाला सपक्ष अजगर 'धनुष' बन गया है। नल कहानी मे मोतिनी को प्राप्त करने के लिए भूमासुर या घूमासुर दाने का सहार नल को करना पडा है। अजगर का स्थान दाने ने ले लिया है। 'पद्मावती चरित्र' मे यह बाधा तो भयानक है, पर उसका स्वरूप कुछ कोमल हो गया है। वह सुन्दरी पुरुष-द्वेषणी है, क्योकि उसे पूर्व-जन्म मे जब वह हँसिणी थी, उसे अपने पति से घृणा होगई थी। क्योकि वह समझती थी कि वह उसे असहाय अवस्था मे छोड गया था। चित्र से पूर्व-जन्म की घटना का स्मरण दिलाकर धारणा दूर करायी गई तब राजकुमार उसे पा सका।

'दो भाइयो' वाला कथा-ततु का प्रयोग अन्य भारतीय भाषाओ की लोक-कथाओ में भी हुआ है। ब्रज की कहानी 'मारु होय तौ ऐसौ होय' मे बुन्देलखण्ड

की कहानी 'मित्रो की प्रीति' मे, दक्षिण मे प्रचलित लोक-कथा 'राम-लक्ष्मण' की कहानी मे, तथा बगाल मे प्रचलित फकीरचन्द' की कहानी मे इस अभिप्राय का प्रयोग हुआ है।

योरोपीय देशो की विविध लोक-कथाओ मे भी दो भाइयो वाले कथा-ततु का प्रयोग बहुत हुआ है। यथा—इस कहानी का मौखिक रूप ग्रिम के द्वारा संग्रह जर्मन कहानियो मे 'देर ट्रिपुइ जोहेन्नेस मे मिलता है। इसको अंग्रेजी मे फेथफुल जोह्न नाम दिया है। यह पेन्टोमेरोन (Pentamerone) मे 'दक्रो' नाम से है। बर्नार्ड स्किमिद्त के 'ग्रिस्कस्चे मार्वे' मे तीसरी सख्या की कहानी 'माइरइ (Moirei) मे भी इसी कथानक रूढि का पालन हुआ है। पेड्रोसो के पोर्तुगीज फोक टेल्स' मे भी ऐसी कहानी है। 'दो भाइयो' वाले कथा-ततु से सम्बन्धित लोक-कथा स्वामीभक्त जोह्न के बारे मे स्टिथ थामसन ने लिखा है कि 'समस्त लोक कहानियो मे सबसे अधिक रोचक एक है स्वामीभक्त जोह्न (१६वी कोटि) जिसका सम्बन्ध एक नौकर की स्वामीभक्ति से है। यद्यपि इस कहानी मे कुछ सस्करणो मे कभी-कभी नौकर के स्थान पर भाई, धर्म-भाई अथवा हेतू-मित्र का उल्लेख मिलता है। 'बेन्फी' ने इस कहानी को हितोपदेश के स्वामीभक्त सेवक की वीरवर के तुल्य माना है। यह वीरवर की कहानी बैताल पचविंशति मे भी मिलती है।

इस अभिप्राय की प्राचीनता के विषय मे लोक-वार्ता तत्व के विद्वानो का मत है कि यह अभिप्राय दो-हजार वर्ष पूर्व भारत से योरोप गया होगा जिसका स्पष्ट अर्थ है कि इस अभिप्राय का जन्म भारत मे ही हुआ होगा। सर जी काम्स महोदय ने 'माइथाला जी ऑफ दि आर्यन नेशन्स' मे इस अभिप्राय से सम्बन्धित कहानी पर विस्तारपूर्वक विचार किया है तथा वह इस निष्कर्ष पर पहुँचे है कि इस कहानी का मूल ढाँचा इतिहास पूर्व युग मे उस समय निर्मित हुआ होगा, जब आर्य लोग अपने मूल निवास स्थान पर रहे होगे और योरोप तथा भारत मे नही फैले होगे। इस दृष्टि से इस 'अभिप्राय' का जन्म-काल दूर अतीत-काल मे चला जाता है जबकि आधुनिक आर्य-जातियो की सभ्यता का नाम भी नही था।[1]

१२. प्राणो की अन्यत्र स्थिति अथवा प्राण-प्रतीक अभिप्राय

प्राणो की अन्यत्र स्थिति नामक अभिप्राय मे शरीर से प्राण को भिन्न मानकर उसको अन्यत्र सुरक्षित स्थान पर रखा जाता है। प्राणो की अन्यत्र स्थिति

---

१. लोक-साहित्य का विज्ञान—डा० सत्येन्द्र, पृ. स. ३०१–३०७।

प्राय दानव, राक्षस, दुरात्मा जोगी आदि अतिमानवीय प्राणियो मे पाई जाती है। उनके प्राण सात समुद्र पार किसी तोते मे, भौरे या हिंस्र पशुओ से घिरे भयानक जगल मे किसी वृक्ष मे पाये जाने का उल्लेख मिलता है। राजस्थानी के प्रेमाख्यान 'लखमसेन पद्मावती की कथा' मे इस अभिप्राय का प्रयोग हुआ है। रानी पद्मावती को दुरात्मा जोगी के चुगल से मुक्त करने के लिए राजा जोगी से युद्ध करता है, किन्तु उसके रक्त की जितनी बूँदे धरती पर गिरती है, उतने ही जोगी और खड़े हो जाते हैं। अन्त मे रानी जोगी के मरने का उपाय जान लेती है। जोगी के प्राण सात समुद्र पार किसी भौरे मे होते है। राजा उस भौरे को मार डालता है, इससे जोगी भी मर जाता है। प्राण प्रतीक (Life Index) भौरे का यह अभिप्राय बगाल की लोक-कथा मे भी इसी रूप मे आया है। बंगाल की लोक-कथाओ मे भी राक्षस के प्राण भौरे मे होते हैं। यह भौरा किसी तालाब मे स्थित स्तम्भ मे होता है। नायक को राक्षस के मरने का रहस्य ज्ञात होता है कि यदि इस भौरे को मार दिया जाय तो राक्षस भी मर जायेगा और रक्त की बूद न गिरने से अन्य राक्षस भी उत्पन्न नही होगा। कश्मीरी लोक-कथा मे राक्षस के प्राण मधुमक्खी मे होता है जो भयकर वन से विषैली मक्खियो के पहरे मे सुरक्षित होता है। फ्रेयर के 'ओल्ड डकन डेज' नामक लोक-कथा मे सग्रहित पचकिन (Punchkin) जादूगर की कहानी मे भी इस अभिप्राय का प्रयोग हुआ है। पचकिन जादूगर के वश में एक रानी १२ वर्ष तक रहती है। एक दिन पचकिन अपनी मृत्यु का रहस्य बतलाता है कि उसके प्राण ६ समुद्रो पार एक भयकर जगल मे वृक्ष पर बैठे तोते मे है। राजकुमार बताये स्थान पर पहुचता है और तोते को मारकर राक्षस के चुंगल से रानी को मुक्त करता है।

यह अभिप्राय इतना प्राचीन और व्यापक है कि न केवल भारतीय लोक-कथाओ मे ही बल्कि विश्व की अनेक लोक-कथाओ मे इसका प्रयोग मिलता है। फ्रेजर महोदय के अनुसार यह अभिप्राय न केवल आर्यन लोगो की लोक-कथाओ मे भारत से आयरलैड तक ही पाया जाता है, बल्कि आर्यन लोगो से भिन्न जातियो की लोक-कथाओ मे भी इसका प्रचुर मात्रा मे प्रयोग हुआ है। यह अभिप्राय इतना प्राचीन है कि मिस्र की दो भाईयो की लोक-कथा मे भी पाया जाता है जो रेमरेज द्वितीय (Rameres II) के काल मे आज से १३०० ई० पू० मे लिखी गई थी। इस कहानी मे उल्लेख है कि एक भाई अपने प्राण अकासिया वृक्ष (Acacia Tree) के फूल मे सुरक्षित रखता है किन्तु उसकी पत्नि को पता लगने पर वह अपने प्रेमी से उस वृक्ष को कटवा देती है। जिससे उसका पति मृत हो जाता है, किन्तु छोटे भाई को उसके प्राण बेरी फल मे मिल जाते हैं और वह उसे पुनः जीवित

कर लेता है। स्यामी और कम्बोडिया की लोक-कथा मे सिहल द्वीप का राजा थोसाका (Thossaka) या रावण अपने प्राण सन्दूक मे बन्द कर घर पर रखकर जाता है, किन्तु उसका शत्रु रावण का रूप बनाकर उसकी स्त्री से वह सन्दूक ले लेता है। रावण को पता लगने पर वह राजकुमार पर झपटता है, पर राजकुमार पक्षी को नोचकर मार डालता है जिससे राक्षस मर जाता है। फ्रेजर ने ग्रीक यूनानी लोक-कथाओ के भी उदाहरण दिये हैं। प्राण-प्रतीक कथा-ततु के सम्बन्ध मे पेजर महोदय ने भी विश्व की अनेक लोक-कथाओ के उदाहरण दिये है। हेगरियन लोक-कथा मे भी यह अभिप्राय पाया जाता है। इस कहानी मे प्राणो की अन्यत्र स्थिति ६६ समुद्र पार करने के बाद सौवे समुद्र मे स्थित द्वीप मे स्वर्ण मृग मे बतलाई है। रूसी लोक-कथाओ मे प्राणो की स्थिति अण्डे मे, बतख मे तथा खजूर आदि मे बतलाई गई है। तिब्बत की एक लोक-कथा मे दानव की आत्मा को एक कक्ष मे सुरक्षित रखने का उल्लेख मिलता है। फारस और अरब की लोक-कथाओ मे भी इसका उल्लेख है। जिनो के राजा को यह भविष्यवाणी होती है कि वह किसी मानव के हाथ से मारा जायेगा। सुरक्षा के लिए वह अपनी आत्मा कई डलियो मे छिपी एक सन्दूक मे रखता है। रोम की लोक कहानियो मे प्राण किसी पत्थर मे पक्षी के सिर मे तथा सात सिर वाले साप के बीच वाले सिर मे सुरक्षित रखने का उल्लेख है। अलबानिया की लोक-कथाओ मे इस अभिप्राय का प्रयोग हुआ है। पेजर ने एक मिस्री लोक-कथा 'सतनी खामोइस' (Satni Khamois) मे भी इस अभिप्राय के प्रयोग का उल्लेख किया है। इस कहानी मे प्राण सन्दूक मे बन्द करके सात समुद्र के बीच मे सर्पो से घिरे हुए सुरक्षित स्थान पर रखने का उल्लेख मिलता है।

विश्व की अनेक लोक-कथाओ के उपर्युक्त उदाहरण प्रस्तुत करने का यहा केवल यही तात्पर्य है कि राजस्थानी प्रेमाख्यानो मे प्रयुक्त इस कथा-ततु का विश्व की लोक-कथाओ मे प्रयुक्त कथा-ततु के समक्ष उसकी क्या स्थिति तथा समानता है तथा साथ ही मानव स्वभाव की मूलभूत एकता का भी आभास देना है। हार्टलैंड के अनुसार इसका मूल स्त्रोत भारत ही है। यही से अरब और भूमध्य सागरीय देशो मे होता हुआ योरोप मे पहुचा है।[1] किन्तु पेजर महोदय का मानना है कि यह अभिप्राय इतना

---

1 It is this form of life Index Motif that has spread all over the India and slowly migrated to the Europe via Persia, Arabia, and the Mediterranean. We shall first of all consider briefly the occurrence of this Motif in Hindu Fiction. The ocean of the story—N. M Penzer. Vol I. P. 130

महत्वपूर्ण है कि विश्व के समस्त देशो के पुराने रीति-रिवाजो मे यह सुरक्षित मिलता है तथा इतना व्यापक है कि पृथ्वी के कोने मे स्थित न्यूजीलैंड जैसे दूरस्थ देशो की लोक-कथाओ में भी पाया जाता है। अत. यह कहना कठिन है कि इसका उद्गम स्थल कौनसा देश है और कहा से होकर कहा गया है। यह अभिप्राय पूर्वी देशो मे, मिस्र मे, भारत और समस्त योरोपीय देशो मे पाया जाता है।

* * *

च
तु
र्थ
अध्याय

राजस्थानी प्रेमाख्यानों की प्रेम-पद्धति

च

तु

र्थ

अध्याय

राजस्थानी प्रेमाख्यानों की प्रेम-पद्धति

प्रेम एक शाश्वत और सार्वभौम अनुकूल वेदनीय मनोवृत्ति है जो किसी रूप गुण से सम्पन्न सौन्दर्यवान् व्यक्ति, प्राणी अथवा वस्तु के सानिध्य से आनन्द प्रदान करती है। इस परिभाषा से प्रेम तत्व के निम्नलिखित लक्षण प्रकट होते है —

(१) शाश्वता (२) सार्वभौमिकता (३) अनुकूल वेदनीयता (४) काम (५) सौन्दर्य (६) प्रेमी-प्रेमिका की सामीप्य कामना अथवा प्रिय-व्यक्ति पर अधिकार-भावना एवं (७) अनुभूति मूलक आनन्द।

१. शाश्वता

प्रेम शाश्वत है क्योकि यह मानव-सभ्यता के आदिम युग से ही विद्यमान है और मानव-चेतना के विकास के साथ स्थूल से सूक्ष्मतर होता गया है। पाश्चात्य विद्वान् 'हावलॉक' प्रेम को मानव-सभ्यता की अतिभौतिक घटना मानते है तथा इसका प्रथम रूप स्थूल काम-परक बतलाते है।[1] इसी प्रकार डा० एम. सी. डी. ऐरे के अनुसार प्रेम-तत्व मानव-स्वभाव जितना ही प्राचीन है।[2]

---

1. Love is the miracle of civilization among savage and very barbarous races, we find nothing but physical love of a gross character.

   —Studies in the psychology of sex, by Hevelock Ellis (Published by Randons House, New York).

2. Love is as old as human nature, but it has taken long stretches of time for its significance to be taken as seriously as its deserves.

   —The minds and heart of love, by M. C. D. Arey (Faber and Faber limited 24. Russail Square, London)

२. सार्वभौमिकता

प्रेम-तत्व का दूसरा लक्षण उसकी सार्वभौमिकता है। जिस प्रकार प्रेम सर्वकालिक है, उसी प्रकार वह एकदेशीय नहीं होकर सार्वभौमिक है, समस्त विश्व में व्यापक है। प्रेम-तत्व की व्यापकता का एक पाश्चात्य कवि ने रोचक वर्णन किया है। इस कवि के अनुसार प्रेम की व्यापकता पृथ्वी तक ही सीमित नही है, वल्कि वह स्वर्ग-नरक तक भी व्यापक है।[1]

३ अनुकूल वेदनीयता

मनोवैज्ञानिक भाषा मे तीसरा लक्षण 'अनुकूल वेदनीय मनोवृत्ति' होना है। मनोवृत्तियाँ मुख्य रूप से दो होती है—एक अनुकूल वेदनीय और दूसरी प्रतिकूल वेदनीय। प्रथम आकर्षण मूलक होती है और द्वितीय विकर्षण-मूलक। किसी वस्तु या व्यक्ति के प्रति घृणा का भाव विकर्षण-मूलक प्रतिकूल वेदनीय मनोवृत्ति का परिणाम है। कान्ट के अनुसार अनुकूल वेदनीय वह वस्तु है जिसे इन्द्रियाँ सम्वेदना मे सुखप्रद पाती है, क्योकि वह आनन्दप्रदायक होती है और अपनी विभिन्न कोटियो अथवा अन्य अनुकूल वेदनीय सवेदनो के साथ अपने सम्वन्धो के अनुसार आकर्षक, मनोरम, रुचिर और उपभोग्य होती है। अत कान्ट ने इसे तृप्तिकारक माना है।[2]

४ काम

अनुकूल वेदनीय सवेदनो मे सवसे अधिक शक्तिशाली आकर्षक मूलक सवेदन काम-प्रवृत्ति है। इसमे आकर्षण का जो गुरुत्व पाया जाता है, वह अन्यत्र मिलना दुर्लभ है। स्त्री-पुरुष के प्रेम का मूलाधार यही काम-प्रवृत्ति है। भारतीय-सस्कृति मे काम को प्रेम-देवता के रूप मे पूजा जाता है। यूनान के इरोज (Eros) और लेटिन के 'क्यूपिड' भी काम की तरह प्रेम के देवता है। सृष्टि की मूल-प्रेरक शक्ति काम है। वेदो में वर्णित सृष्टि का आधार 'विश्व रेतस' यही काम है। ऋग्वेद मे यह 'कामना' के अर्थ मे प्रयुक्त हुआ है। 'एकोअहं बहुस्याम' के मूल मे यही भावना निहित है। 'बृहदारण्यक' जैसी पुरानी उपनिषद् में याज्ञवल्क्य कहते है :—

---

१ Thus love is monarch throughout Hell today,
In Heaven we know his power was always great,
And Earth acclaimed love's mastery straight way,
Thus Hell and Heaven and Earth his rule obey.

(Falls Staff)
—Love and sex

२. सौंदर्य-मीमासा—इमैनुअल कान्ट, रूपान्तरकार : राम केवलसिंह (किताब महल, इलाहाबाद) प स. ४–५।

'स्वय वह परमात्मा (अकेला) रममाण नही होता, उसने दूसरे की इच्छा की। वह जिस प्रकार परस्पर आलगित कोई स्त्री-पुरुष होते हैं, वैसे ही परिमाण वाला हो गया और उसने अपने शरीर को दो भागो मे विभक्त कर डाला।'[१]

सृजन की आह्लादमयी प्रेरणा केवल मनुष्य तक ही सीमित नही, वरन् जडचेतन प्रकृति मे भी उसके दर्शन होते हैं। इसलिए पाश्चात्य मनोवैज्ञानिक फ्रायड ने काम-प्रवृत्ति को मूल-प्रवृत्ति माना है। फ्रायड के अनुयायी भी 'लिबिडो' को सृष्टि का मूल स्त्रोत मानते हैं। अतः काम और जीवन का घनिष्ठ सम्बन्ध है। आदिम युग से ही मनुष्य यौन-सम्बन्धो और प्रजनन प्रक्रिया को रहस्यमयी दृष्टि से देखता आया है। आदिम जातियो मे आज भी यह विश्वास किया जाता है कि खेतो मे अच्छी फसल का कारण मनुष्य के यौन-सम्बन्ध है। सभ्यता और समृद्धि का 'सेक्स' क्रियाओ के साथ रहस्यमय सम्बन्ध माना जाता है। खलिहानो मे फसल काटने से पूर्व आदिम जातियो मे त्योहारो के अवसर पर मैथुन करना अब भी शुभ माना जाता है। भारत मे होली का त्योहार इसका उदाहरण है। भारत मे ही नही, ससार के समस्त देशो मे पतझर एव बसन्त ऋतु मे ऐसे त्योहार मनाये जाते हैं जिनमे यौन-सम्बन्धो को निरावृत्त किया जाता है। हमारे यहा स्त्री-पुरुष के बीच यौन-सम्बन्धो को कभी हेय नही माना गया, बल्कि काम का सम्बन्ध धर्म से जोडा गया है। सृजन के प्रतीक के रूप मे लिंग और योनि की पूजा अब भी प्रचलित है। शिव और पार्वती के प्रजनन इन्द्रियो की पूजा इसके पवित्र उदाहरण है। प्राचीन-काल की कला मे यौन-सम्बन्धो को महत्वपूर्ण स्थान मिला है। जगन्नाथपुरी के मन्दिर मे तथा अन्य मन्दिरो मे स्त्री-पुरुष की आलिंगनवद्ध मूर्तिया बनी हुई है। राजस्थान के चितौड जिला मे बेगू ग्राम से लगभग ३९ मील दूर स्थित मैनाल के एक प्राचीन शिव-मन्दिर की मूर्तियो में भी मुझे स्त्री-पुरुष का आलिंगनवद्ध तथा प्रजनन-इन्द्रियो का निरावृत्त रूप देखने को मिला। 'लव एण्ड सेक्स' नामक पुस्तक में भी इस तथ्य को प्रकट किया गया है।[२]

---

१. हिन्दुस्तानी त्रैमासिक, भाग ३, अक २, अप्रैल १९६२ ई. (हिन्दुस्तानी अकादमी इलाहाबाद) मे प्रकाशित लोक-गाथा और सूफी प्रेमाख्यान-निबन्ध।

२ While emblems of the lingm and yoni used in sex worship are not indecent, the same can not be said to be the case with the decorative art of some of the temples in which artist have felt little to the imagination. But than, to the ancients sex was not what it is to modern prudes.

—Love and sex.

५. सौन्दर्य

प्रेम का चौथा तत्व सौन्दर्य है। किसी वस्तु, प्राणी या व्यक्ति का रूप जो हमे आकर्षित करता है तथा हमारे चित्त को उसमे रमाकर आनन्द प्रदान करता है, सौन्दर्य कहलाता है। कान्ट के अनुसार सौन्दर्य वह है जो किसी भी सकल्पना (Concept) से स्वतन्त्र किसी विषय (Object) के माध्यम से सार्वभौम रूप से आह्लादित करता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि कान्ट सौन्दर्य की विषयनुगतता (Objectivity) पर अधिक जोर देता है। उसका तर्क है कि पुष्प, स्वतन्त्र सरूप (Free Pattern) निरुद्देश्य रूप से अन्तर्जटित रेखाये, शिल्पपूर्ण ढग से विन्यस्त वर्णावली कोई सार्थकता नही रखती, किसी निश्चित सकल्पना (Concept) पर निर्भर नही करती और फिर भी वे अह्लादित करती है।[1] इसी प्रकार डा० हावलॉक भी सौन्दर्य की वस्तुनिष्ठता (opjectiveness) के पक्षपाती है।[2]

किन्तु, कुछ विद्वान ऐसे भी है जो सौन्दर्य को पूर्णतः विषयीनिष्ठ (Subjective) मानते है। डा० जेफ्रे का कहना है कि सौन्दर्य हमारी इन्द्रियानुभूति का प्रतिविम्ब है।[3] कुछ का कहना है कि नवीनता ही सौन्दर्य है। यथा—

"क्षणे क्षणे यन्नवता मुपैति तदेव रूप रमणीय ताया।"

बिहारी के निम्नलिखित दोहे मे यही भाव व्यक्त हुआ है :—

> समै २ सुन्दर सबै, रूप कुरूप न कोई।
> मन की रुचि जेति जितै, तित तेती रुचि होय।।

रीतिकालीन कवि घनानन्द ने इस भाव को अपने शब्दो मे इस प्रकार प्रकट किया है। यथा –

"रावरे रूप की रीति अनूप, नयो नयो लागत ज्यौ ज्यौ निहारिये।"

एक अन्य विद्वान् मोरमोटेल सौन्दर्य के मूल में उपयोगिता बतलाते हैं। शौफ्ट सवरी और हचेशन विविधता मे एकता को सौन्दर्य की सज्ञा देते है। अरस्तू और आगस्टाइन क्रमबद्धता और आनुपातिकता मे सौन्दर्य मानते हैं.[४]

---

१. सौन्दर्य-मीमासा—इमैनुएल कान्ट (किताब महल, इलाहाबाद) पृ. स ६–२०।
२. "Not only is there a fundamentaly objective elements in beauty throughout the human species, but it is probebly a significant fact that we may find a similar element throughout the whole animited world.
—Studies in the psycholosy of sex. P. 154.
३. Beauty is the *reflection* of our own inward sensation.
४. रीतिकालीन कवियो की प्रेम-व्यजना—डा० बच्चनसिंह, पृ. स. ६६।

किन्तु हम सौन्दर्य पर सर्वांगीण रूप से विचार करे तो इस निष्कर्ष पर पहुचते हैं कि वह केवल विषयीनिष्ठ (Subjective) ही नही होता। यदि ऐसा सम्भव है तो फिर इसके लिए आलम्बन की विशेष आवश्यकता ही नही रहती। सौन्दर्यानुभूति किसी के प्रत्येक-दर्शन से ही होती है। हॉ, ईश्वरीय प्रेम मे आलम्बन भावनामय होने से सौन्दर्य का आधार केवल सकल्पना (Concept) ही होती है। अत: ईश्वरीय सौन्दर्य अथवा आध्यात्मिक-सौन्दर्य विषयीनिष्ठ ही होगा। इसे हम आदर्शात्मक-सौन्दर्य की भी सज्ञा दे सकते है। सूफियो की प्रेम-व्यजना मे इसी प्रकार का विषयीनिष्ठ (Subjective) सौदर्य ही मिलता है। किन्तु नैसर्गिक-सौदर्य में विषयनिष्ठता (Objectiveness) और विषयीनिष्ठता (Subjectiveness) दोनो तत्वो का समावेश होता है। देशकाल सापेक्ष सौदर्य के आदर्शो मे विभिन्नता होती है।

सौदर्यानुभूति मानव-जगत की आह्लादकारी घटना है। यदि स्त्री-पुरुप के प्रेम का मूलाधार काम है तो उनका सौदय एक दूसरे के लिए आकर्षण का कारण बनता है। प्रेमिका के सौदर्य पर मुग्ध होकर ही प्रेमी उसे प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील होता है। इसी कारण वह अपने प्रेम-पात्र का सामीप्य चाहता है, उस पर अधिकार चाहता है।

६. प्रेमी-प्रेमिका की सामीप्य-कामना अथवा प्रिय व्यक्ति पर अधिकार भावना

प्रेम-पात्र के सामीप्य की अभिलाषा अथवा उस पर अधिकार की भावना प्रेम-तत्व का पाचवा लक्षण कहा जा सकता है। प्रेम-पात्र इसी एकाधिकार की भावना से प्रेम को वाइलैंट (Violent) कहा जाता है। सन्त विक्टर ने प्रेम की प्रवृत्ति का विश्लेषण करते हुए लिखा है कि प्रेम मे प्रेम-पात्र पर अधिकार प्राप्ति की इच्छा रहती है। यदि प्रेम-पात्र अधिकार मे है तो उसके निरन्तर सामीप्य की कामना रखना तथा इस सामीप्य मे आनन्दानुभूति ही प्रेम का लक्षण है। किन्तु यहाँ इस वात का भी ध्यान रखना आवश्यक है कि प्रेमिका कोई सुन्दर-वस्तु नही होती है कि जब चाहा उठा लाये। क्योकि प्रेमिका के भी मन होता है, हृदय होता है। अत. प्रेमी पहले उसके हृदय को स्पर्श करने का प्रयत्न करता है। यही प्रेमी को अपने अहम् को तोडना पडता है, तव उसके अधिकार की भावना समर्पण मे वदल जाती है। इसी बात की पुष्टि करते हुए श्री एम. सी. डी ऐरे ने 'The mind and heart of love' नामक पुस्तक मे लिखा है कि .—

'A human being can not live alone in a world of his own desires and shaping, and so love has a habit of turning the tables on him and putting him at the feet of others '[1]

इसी पुस्तक मे वह आगे लिखते है .—

'There is a desire of the self to give its all and a desire to be one self and be perfect The principle of give and take has to be harmomijed in all phases of love.'[2]

इस प्रकार हम देखते है कि प्रेम दो प्रेमियो को एक स्तर पर ला खडा करता है, जिससे वे परस्पर सबद्ध होकर एकात्म हो सके। डा० भगवानदास ने भी प्रिय से प्रेमी की मिलनेच्छा को प्रेम मानते हुए उक्त कथन की पुष्टि की है।[3] इसी भाँति कार्लमेनिगर ने भी दो व्यक्तियो के मिलन से प्राप्त अनुभूत्यात्मक आनन्द को प्रेम कहा है।[4] हमारे यहाँ भी भर्तृहरि ने प्रेम के स्थायीत्व के लिए स्त्री-पुरुष के चित्त की एकता को आवश्यक माना है। यथा—

एतत्काम फल लोकेयद् द्वयोरोकचित्तता।
अन्य चित्त कृते कामे, शवयोरिव सगम॥

७ अनुभूति-मूलक आनन्द की प्राप्ति

प्रेम का अन्तिम लक्षण अथवा उसकी परिणति अनुभूत्यात्मक आनन्द की प्राप्ति अथवा प्रेम-पात्र के सामीप्य-लाभ अथवा दो व्यक्तियो के एकात्मक होने से मिलता है। जब तक प्रेमी-प्रेमिका एक दूसरे से मिल नही पाते, तब तक वे वियोग की अग्नि मे जलते हैं। यह एक ऐसी विचित्र प्रकार की अग्नि है जिसमे जलने मे प्रेमी को आनन्द मिलता है। वियोग की अग्नि मे जलने से स्थूल-काम-वासना का

---

1 The mind and Heart of love. By M. C. D. Arey. P. 32.
2. ,, ,, ,, P. 81.
3. Love is the desire for Union with the object of loved, and therefore even tends to bring subject and object to one level in order that they may unite and become one.
Science of Emotion by Dr. Bhagwandas P. 30.
4. Love is experienced as a pleasure in proximity of a desire for fuller knowledge of one another, a yearing for mutual personality fusion.
—Love against Hate, P, 271,

क्षय होकर उसका सूक्ष्म रूप खिल उठता है। प्रेमी की स्वार्थपरता, उसके हृदय की संकुचित भावना नष्ट होकर, व्यापकता बढ जाती है, वह विशाल हृदय वाला हो जाता है। उसकी सुख दुख जनित सहानुभूति की परिधि मे जड चेतन भी सम्मिलित हो जाते हैं। कभी-कभी वियोग मे जलने की आनन्दानुभूति प्रेमी के हृदय मे इतना घर बना लेती है कि प्रेम पात्र से मिलन अथवा सामीप्य की भावना ही तिरोहित हो जाती है; बस प्रेमी को केवल प्रेम पात्र के वियोग मे जलने में ही मजा आने लगता है। सब खलक इश्क का जलवा नजर आने लगता है। वह इस प्रेम की अग्नि मे शनै शनै अपने को भस्मीभूत करके मिटना चाहता है और उसकी अन्तिम कामना यही रह जाती है कि उसकी भस्मी उस मार्ग मे उडकर जा गिरे, जहाँ उसके प्रियतम के पाँव पडेगे।[1] किन्तु प्रेम की इस अन्तिम परिणति मे तो उक्त वासना का भी क्षय हो जाता है। सब भाति की कामनाओ का क्षय होकर, प्रेम-पात्र का चिन्तन करता हुआ प्रेमी अपना विसर्जन करने मे आनन्द-लाभ प्राप्त करता है। प्रेम-तत्व के इस रूप मे इसका अन्य कोई ध्येय न होकर केवल आत्मानंद की प्राप्ति होता है। 'नारदसूक्त' मे इस प्रकार के आनन्द को अनिवर्चनीय माना गया है तथा इस प्रेम-तत्व का निरूपण निम्नलिखित रूप से किया है :—

"गुण रहित कामना रहित प्रतिक्षण वर्द्धमानमविच्छिन्न सूक्ष्मतर मनुभव रूपम्।"

बर्नाडशा ने प्रेम के इस रूप को 'आनन्दरूपात्मक' (Ecastatic love) की सज्ञा दी है।[2] किन्तु मनोवैज्ञानिक दृष्टि से प्रेम के इस रूप का विश्लेषण करें तो इसका आत्मानद वाला पक्ष फ्रायड के 'Narsissim' (Self-love) तथा आत्म-विसर्जन वाला पक्ष आत्म-पीडकतोष (Masochism) का ही परिष्कृत रूप लगता है।

प्रेम-तत्व के उपर्युक्त विश्लेषण से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि इसमे कई तत्वो का मिश्रण है। इन तत्वो मे से किन्ही तत्वो पर अलग-अलग रूप से तीन कोटियाँ निर्धारित की जा सकती है। यथा—

---

१. यह तन जारो छार कै, कहौ कि पवन ! उडाव।
मकु तेहि मारग उडि परै, कत धरै जहँ पाँव॥
—प० रामचन्द्र शुक्ल द्वारा सम्पादित जायसी ग्रथावली (नागमती का विरह-वर्णन)।

२. The mind and heart of love. B

१. शारीरिक अथवा मांसल-प्रेम

प्रेम के स्थूल काम पक्ष पर अधिक बल देने पर प्रेम का प्रथम रूप शारीरिक अथवा मांसल-प्रेम है। सभ्यता के आदिम-युग मे स्थूल-कामपरक प्रेम की ही प्रधानता थी। पशुओ की भाँति स्त्री-पुरुष का सम्बन्ध केवल काम-पिपासा की शान्ति के लिए होता था। प्रेम के इस रूप मे प्रेम-पात्र पर अधिकार की भावना प्रबल होती है तथा प्रेमिका के लिए सघर्ष से तृप्ति मिलती है। आदिम-युग मे प्रेमी द्वारा प्रेमिका का हरण करके विवाह करने की प्रथा प्रचलित थी। प्रेमिका को हरण करके उससे विवाह करने की प्रथा के अवशेष 'रुक्मणी हरण' आदि काव्यो मे सुरक्षित है। भागवत मे इस प्रकार के विवाह को राक्षस-विवाह की सज्ञा दी गई है।

२. मानसिक-प्रेम

प्रेम-तत्व मे काम के साथ मनस्तत्व पर बल देने से प्रेम का दूसरा रूप मन: शरीर प्रवृत्ति वाला अथवा मानसिक-प्रधानता युक्त प्रेम है। इसकी गति स्थूल से सूक्ष्म की ओर अग्रसर होती है। काम-प्रवृत्ति के साथ चित्त का सयोग तथा ऐन्द्रीय—उत्सव के साथ मन का उल्लास इसकी प्रमुख विशेषता है। इसमे अधिकार भावना के स्थान पर समर्पण, स्वार्थ के स्थान पर निस्वार्थ भावना मिलती है। यह प्रेम प्रेमी-प्रेमिका, दोनो की भावनाओ के आदान-प्रदान से परिपुष्ट होता है। इसलिए इसे उभयपक्षी प्रेम भी कहा जाता है।

३. काम-शून्य-प्रेम

प्रेम-तत्व मे काम-शून्यता तथा उसके आत्मानन्द और समर्पण तथा विसर्जन की भावना वाले पक्ष पर अधिक बल देने के कारण प्रेम का तीसरा रूप काम-शून्य-प्रेम होता है। आध्यात्मिक अथवा दिव्य-प्रेम इसी कोटि मे आता है। यह एकान्तिक और लोक-बाह्य-प्रेम होता है। इसमे प्रेम-पात्र अज्ञेय ईश्वर अथवा परातत्व होने से प्रेम-पात्र का सौदर्य ही सकल्पना (Concept) पर आधारित विषयीगत (Subjective) होता है और उससे प्राप्त आनन्द का आधार भी विषयीगत होता है। वैष्णवो की रागानुगा या कान्ताभाव रूपाभक्ति तथा सूफियो की रहस्यवादी प्रेम-व्यंजना, प्रेम की इसी कोटि के भीतर आती है।

राजस्थानी-प्रेमाख्यानों मे प्रेम-तत्व का रूप, स्थिति, उद्रेक तथा परिपाक का निरूपण :

राजस्थानी प्रेमाख्यानो मे प्रेम के उपर्युक्त तीनो रूप विद्यमान है, किन्तु इनमे से सबसे अधिक चित्रण दूसरे प्रकार के प्रेम का हुआ है। कामुकतापूर्ण प्रेम

के भी उदाहरण इन प्रेमाख्यानो मे इस प्रकार के प्रेम के उदाहरण अन्तर्कथाओ मे अधिक आये है, जिनका लक्ष्य नर-नारी के सच्चे एवं निस्वार्थ प्रेम की उच्चता एव कामुकतापूर्ण प्रेम की निष्कृष्टता सिद्ध करना प्रतीत होता है।

१. शारीरिक अथवा मांसल-प्रेम के विभिन्न स्तर :

इस स्थूल-काम परक मासल प्रेम के मुख्यत निम्नलिखित तीन रूप इन प्रेमाख्यानो मे प्राप्त होते है। यथा—

प्रथम, किसी स्त्री का किसी अन्य पुरुष के सौन्दर्य पर कामासक्त होकर उसके समक्ष काम-प्रस्ताव रखना, किन्तु पुरुष द्वारा इस प्रकार के काम-प्रस्ताव को ठुकरा देना। इस पर उस कामासक्त नारी मे प्रतिशोध की भावना का जगना और अपने प्रेमी पर मिथ्यारोप लगाकर उसको सकट मे फँसा देना। इसको हम तिरस्कृत-प्रेम (Scorned-love) की सज्ञा दे सकते है।

इन प्रेमाख्यानो मे इस प्रकार की कामासक्ति पटरानियो मे अधिक दिखलाई गई है। 'हसाउली' प्रेमाख्यान मे उल्लेख है कि पटरानी लीलावती हस के रूप पर मोहित होकर उसको, अपने साथ रमण करने के लिए काम-प्रस्ताव रखती है, किन्तु हस माता और पुत्र के पवित्र सम्बन्ध की याद दिलाकर उसके इस दूषित काम-प्रस्ताव का तिरस्कार कर देता है। इस पर पटरानी उस पर शील-भग करने का मिथ्यारोप लगाती है और उसके उकसाने पर राजा हस की आखे निकालने का आदेश दे देता है। 'माधवानल कामकन्दला' मे भी उल्लेख है कि पटरानी माधव के रूप पर मोहित होकर उसके समक्ष इसी प्रकार काम-प्रस्ताव रखती है। 'मलिया सुन्दरी कथा' की प्रतिनायिका पटरानी कनकावती भी ऐसा ही उदाहरण प्रस्तुत करती है। वह महाबल पर मोहित होती है और अपनी इच्छा की पूर्ति नही हो पाने पर राजकुमार को अनेक सङ्कटो मे डाल देती है। राजस्थानी प्रेमाख्यानो मे इस प्रकार के अनेक उदाहरण मिलते है। 'चन्दन मलियागिरी की बात' मे उल्लेख है कि एक सराय की मालकिन राजा चन्दन के रूप पर मोहित होकर प्रेम मे बाधा की आशका से अपने पति तक को मारने के लिए तत्पर हो जाती है। इस प्रकार की कामासक्ति केवल स्त्रियो मे ही नही मिलती किन्तु अप्सराओ और विद्याधरियो मे भी पाई जाती है। 'गजसिंह कुमार चौपई' मे उल्लेख है कि राजकुमार के रूप पर मोहित होकर विद्याधरी, उसे सोते हुए को उठाकर ले जाती है और काम-प्रस्ताव रखती है, किन्तु राजकुमार के नही मानने पर, उस पर चोरी का अपराध लगाती है।

द्वितीय, किसी पुरुष का रूपवती स्त्री पर कामासक्त होकर उसके समक्ष प्रेम-प्रस्ताव रखना, किन्तु स्त्री द्वारा उसे ठुकरा देना।

इस प्रकार के कामासक्त प्रेम मे कोई राजा अथवा सार्थवाह एव सामुद्रिक व्यापारी नायिका के अद्भुत रूप को देखकर उस पर कामासक्त होते हैं और नायिका को फुसलाकर उसका प्रेम-प्राप्त करना चाहते है। नायिका की प्राप्ति के लिए उनकी चेष्टाये इतनी उत्कृष्ट होती है कि वे नायक को समुद्र मे धकेल देते है, उसे छल से वन्दी वना लेते है, इतना ही नही, वे नायिकाओ को प्राप्त करने के लिए वडे-वडे क्रूर-आक्रमण करते है। उदाहरणार्थ, 'हमाउली' मे उल्लेख है कि राजकुमारी को प्राप्त करने के लिए सार्थवाह हस को समुद्र मे गिरा देता है। 'सिंहलसुत चौपई' की नायिका रत्नवती पर रुद्रपुरोहित इसी प्रकार कामासक्त होता है। 'बीजड बीजोगण' का प्रतिनायक शेर मोहम्मद और 'मलयावती कथा' का प्रतिनायक राजा कदर्प तथा सार्थवाह इसी प्रकार के उदाहरण प्रस्तुत करते है। 'वीरोचन मुहता री बात' मे उल्लेख है कि राजा मत्री की स्त्री पर मोहित होकर उसे प्राप्त करने के लिए मत्री को वहाने से किसी अन्य प्रदेश मे भेज देता है। 'ढोला मारू' मे ऊमर सूमरा, पद्मिनी विषयक प्रेमाख्यानो मे वादशाह अलाउद्दीन एव मृगावती रास मे चण्ड प्रद्योत इसी प्रकार के रूप-लोलुप कामासक्त प्रेमी है जो नायिकाओ की प्राप्ति के लिए वडे-वडे आक्रमण कर उत्कट कामासक्ति का परिचय देते हैं। किसी स्त्री के सौन्दर्य की महिमा सुनकर चट उसे प्राप्त करने के लिए दौड पडना, रूप-लोभ अथवा कामासक्ति ही कहलायेगी, सच्चा प्रेमी नही। ऊमर सूमरा, चण्ड प्रद्योत तथा अलाउद्दीन की चेष्टाये इसी कोटि मे गिनी जायेगी। यहा इस बात पर भी ध्यान देना आवश्यक है कि यह कामासक्ति चाहे स्त्री की ओर से हो या पुरुष की ओर से, एक तरफा होने से भोग-विलास क्रिया मे असफल रहती है, अत ये विषय कामासक्त चेष्टाओ की कोटि मे ही गिनी जायेगी।

तृतीय, स्थूल कामासक्त प्रेम की तृतीय कोटि कामासक्ति मे स्त्री और पुरुष दोनो सम्मिलित रहते है, किन्तु पहल स्त्रियो की ओर से ही होती है। किसी स्त्री के पति के परदेश चले जाने पर अथवा पति की शारीरिक-असमर्थता के कारण से अथवा केवल काम पिपासा की तृप्ति के लिए वह पर-पुरुष पर आसक्त होकर उसके साथ भोग-विलास करती है। उदाहरणार्थ—'पुरन्दर कुमार चौपई' मे उल्लेख है कि धनदत्त सेठ की पत्नि राजकुमार पर आसक्त होकर उसके साथ नित्य रमण करती है और अपनी काम-चेष्टाओ मे पति को बाधा मानकर देवी से उसके बहरा और अन्धा होने का वरदान मागती है। 'कुतुबदीन री वारता' मे उल्लिखित

कुतुबद्दीन और सेठ-पुत्री का प्रेम, राजा विजैसाल री वारता मे रानी का सुन्दरसाह के पुत्र के साथ प्रेम, 'राजा रसालु री बात' मे राजा मान की पुत्री का सुनार से प्रेम, 'राजा चन्द प्रेमलालछी री वात' मे अहीरन और राजपूत का प्रेम आदि इस कोटि के प्रेम के उदाहरण हैं।

अपनी काम तृप्ति के लिए नायक को जादुई-विद्या से मेढा अथवा तोता आदि पशु-पक्षी बनाकर रख लेना तथा रात्रि को उसे पुरुष बनाकर नित्य रमण करने के उदाहरण भी मिलते है। 'लालजी हीरजी री बात' मे तम्बोलिन द्वारा लालजी को सुग्गा बनाकर रख लेना, 'विद्याविलास चौपई' और 'उत्तम कुमार चरित्र चौपई' मे गणिकाओ द्वारा राजकुमारो को तोता बनाकर रखना, 'रतन माणक साह री वात' मे मालिन द्वारा राजकुमार को मेढा बनाकर रखने की घटनाये इसके उदाहरण है।

उपर्युक्त प्रकार की कामासक्त प्रेम चेष्टाये केवल मानव तक ही सीमित नही रही है, बल्कि इन प्रेमाख्यानो मे मानवेतर प्राणी अप्सरा और विद्याधरियो मे भी दिखलाई गई है। 'वीरमदे री वात' मे कान्हडदे और अप्सरा का 'राजा सिद्धराज जर्यासघ और 'अप्सरा री वात' में इन दोनो का प्रेम इसके उदाहरण है। 'मदन शतक' नामक प्रेमाख्यान मे उल्लेख है कि मदन मजरी नामक विद्याधरी सोते हुए राजकुमार को उसके रूप पर आसक्त होकर उठाकर ले जाती है और उसके साथ रमण करके जगल में कामदेव के मन्दिर मे छोडकर चली जाती है। यहा इस बात की ओर ध्यान देना आवश्यक है कि कामासक्त प्रेम के उदाहरण इन प्रेमाख्यानो मे अधिकाश रूप मे अवान्तर कथाओ मे ही मिलते हैं। इनमे से कुछ का उद्देश्य नायक-नायिका के सयम की और एक निष्ठ प्रेम की परीक्षा लेना है तथा कामासक्त छिछले प्रेम के समक्ष एक निष्ठ सच्चे-प्रेम की उत्कृष्टता प्रकट करना है। ऐसे कुछ उदाहरण त्रिया-चरित्र को भी प्रकट करने के लिए चित्रित किए गये है। किन्तु राजस्थानी मे कुछ प्रेमाख्यान-काव्य ऐसे भी है जिनका उद्देश्य केवल इस प्रकार के समाज वाह्य कामासक्त प्रेम का चित्रण करना ही है। 'लाखा फुलाणी री बात' मे लाखा के परदेश जाने पर सोढी रानी को 'मनफूलिया' नामक डोम के साथ कामातुर होकर भोग विलास करना इसका उदाहरण है, किन्तु सोढी को सौप दिया जाने पर भी उसके प्रति लाखा का प्रेम बने रहना और सोढी का भी लाखा के प्रेम मे, अपना शरीर विसर्जन करने से पूर्व उसके हाथ से शूले खाने की कामना प्रकट करना, उसके निम्न रूप को उच्चता प्रदान कर देता है। इससे यह स्पष्ट होता है कि सच्चा प्रेम केवल मासल ही नही होता। काम एक आकर्षक-

शक्ति होने से स्त्री-पुरुष मे स्खलन की सम्भावना हो सकती है किन्तु सच्चे प्रेम का आधार केवल काम ही नही होता।

राजस्थानी प्रेमाख्यानो मे 'चद कुँवर री बात' ही एक ऐसा प्रेमाख्यान है जिसका उद्देश्य केवल कामासक्त प्रेम का चित्रण करना है। उसका उद्देश्य नायिका द्वारा केवल अपनी काम पिपासा की तृप्ति करना है। इस काव्य मे एक विवाहिता स्त्री काम की असह्य वेदना को न सह सकने के कारण अपरिचित राजकुमार चदकुँवर को सखी के द्वारा अपने शयन कक्ष मे बुलाकर रमण करती है। दोनो का भोग-विलास एक वर्ष तक चलता रहता है। तदन्तर राजकुमार उसे छोडकर दूसरा विवाह कर लेता है। इस भाँति के विवाहित स्त्री का किसी अन्य पुरुष से प्रेम-सम्बन्धी प्रेमाख्यान राजस्थानी भाषा मे अन्य भी है। किन्तु उनमे और इस प्रेमाख्यान की प्रेम-व्यजना मे भेद यह है कि इसमे नायिका की विरह-जनित चेष्टाओ मे एकनिष्ठता और उच्च मानसिकता का अभाव होने से यह स्थूल-काम-परक रह गया है।

२. मानसिक-प्रेम

प्रेम मे एकनिष्ठता एव स्थूल कामासक्ति के स्थान पर प्रेम के भाव-मूलक रूप का उजागर मानसिक-प्रधान प्रेम मे हुआ है। राजस्थानी प्रेमाख्यानो मे प्रेम-तत्व का यही रूप अधिक निखर पाया है। यह प्रेम विशुद्ध लौकिक धरातल पर आधारित है। इसका विकास भी स्वाभाविक गति से होता है। नायक अथवा नायिका प्रत्यक्ष-दर्शन, चित्र दर्शन, अथवा गुण-श्रवण से परस्पर एक दूसरे के सौन्दर्य एव गुणो पर मुग्ध होकर एक दूसरे को प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील होते है। प्रथम बार मे ही नायक अथवा नायिका के रूप पर मुग्ध होकर, उसे प्राप्ति की अभिलाषा के मूल मे कामासक्ति ही मुख्य होती है तथा परस्पर के आकर्षण मे सौन्दर्य का मुख्य स्थान होता। अत इन प्रेमाख्यानो मे नायिका के मासल सौदर्य का हृदय-स्पर्शी चित्रण मिलता है। नायक-नायिका के विरह-वर्णन मे भी शारीरिक सम्पर्क एव कामुकता की गध होती है, किन्तु कामासक्ति के साथ शालीनता के सयोग से इस प्रेम मे रगीनी आ गई है। डा० हैवलॉक के अनुसार यह शालीनता (Modesty) प्रेम को जीवन एव रगीन-कल्पना प्रदान करती है।[1] शनै शनैः विरह की अग्नि मे भस्म होकर कामासक्ति का स्थूल रूप शुद्ध होकर सूक्ष्म

1. "It is modesty that gives to love the aid of imagination and in so doing imparts life to its.
—Studies in the Psychology of Sex, by Havelock Ellis, P. 2

होता गया है। प्रेम की इस दिशा मे स्वार्थ के स्थान पर निस्वार्थ भावना एव अधिकार के स्थान पर समर्पण की भावना का रूप खिल उठा है। सयोग पक्ष मे भी ऐन्द्रीय महोत्सव के साथ मन के उल्लास का सजीव-चित्रण मिलता है। इस प्रकार इन प्रेमाख्यानो मे प्रेम का उद्रेक एव परिपाक स्वाभाविक गति से हुआ है।

इस कोटि के राजस्थानी प्रेमाख्यानो मे प्रेम-व्यजना के मुख्यत दो रूप मिलते है —

(१) प्रथम, स्वच्छद प्रेम-व्यजना (Romantic-Love)।

(२) द्वितीय, दामपत्य-प्रेम-व्यजना।

१ स्वच्छंद-प्रेम-व्यंजना

स्वच्छद प्रेम-व्यजना मे प्रेम एकान्तिक होता है तथा इसमे लोक-मर्यादा का ध्यान नही रहता। कुल की मर्यादा जाति-पाँति अन्य सामाजिक बन्धन यहाँ कोई अर्थ नही रखते।[1] प्रेम-बन्धन के समक्ष भाई, बहिन, मामी-भानजा, पति-पत्नि के बन्धन गोण हो जाते हैं। यथा—नागजी नागवती, दोनो के पिता धर्म-भाई थे। बूबना और जलाल तथा सोरठ, बीजा का सम्बन्ध मामी-भानजे का था। सदयवत्स सावलिगा चउपई की नायिका सावलिगा के लिए सदयवत्स के प्रेम के समक्ष अपने विवाहित पति का कोई अस्तित्व नही रहता। गुलावा भवरा, पना वीरमदे, 'रतना हमीर आदि प्रेमाख्यानो में यही बात दृष्टिगोचर होती है। इस प्रकार के प्रेम मे ऊँच-नीच के भेद निस्सार लगते है। इधर राजकुमारियो को विवाहने वाराते

---

१ (क) जात-पात कुलरो जठै, न रह पावै नेम।
रहे निरन्तर एक रस, पर पख सोइ प्रेम॥
गुण, अवगुण सुख दुख गिण्या, कसर न उपजै केम।
रग एक जिण मे रहे, पर पख सोइ प्रेम॥
बाध्यो हाथु हेत मे, रखी न कुल की काण।
अब तो पडा की मोचडी, मोनु न कर जो पाण॥

(ख) लाज तजु सब जगत की, भ्राण तजु कुल माय।
बाल सनेही वालया, मो पे तज्यो न जाय॥५२॥
लोक लाज कुल कुमको, तजहु मन की आस।
आन खडी महताब तो, मोजदीन के पास॥

— मोजदीन मैताब री बात (ह. लि.)।

—रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर। फूलजी फूलमती री वारता (ह. लि.) ग्रथाक १०४७६।

आती है, माता-पिताओ द्वारा बारात का स्वागत होता है, उधर ये प्रेमिकायें अपने माता-पिताओ तथा अन्य स्वजनो का स्नेह-सूत्र तोडकर अपने प्रेमियो के साथ छद्म-वेश बनाकर भाग जाती है। वे वन मे जाकर अथवा मन्दिर मे जाकर अपने प्रेमियो के साथ गंधर्व विवाह कर लेती हैं।[1] ये प्रेमी-जीव बडे दृढ निश्चयी, बडे निर्भीक एव साहसी होते है।[2] अपने प्रेम-पात्र की प्राप्ति के लिए प्राणो को भी तुच्छ समझकर बडे-बडे सकटो का सामना करते हैं। कभी-कभी एक दूसरे से मिलने के प्रयत्न मे इन्हे अपने प्राणो का भी विर्सजन करना पडता है।

उपर्युक्त विवेचन से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते है कि इन प्रेमाख्यानो के रचयिता बडे प्रेमी व्यक्ति थे। ये कवि सासारिक मानापमान की चिन्ता किये हुए विना प्रेम-पथ पर होने वाले व्यक्ति को हीं सच्चा-प्रेमी मानते थे। इनके मतानुसार इस प्रेम की अग्नि मे भस्म होने का आनन्द-लाभ वही व्यक्ति प्राप्त कर सकता है जो स्वय इसमे जला हो।[3] किन्तु यह प्रेम-पथ है बडा कठिन, इसलिए ये कवि इस मार्ग पर चलने वालो को इसकी कठिनाइयो से सचेत भी किया करते थे।[4] एक

---

१ तिजि अवसर मई गई तिहाँ करि गधर्व-विवाह।
परण्या कुमरी कुमर बे। थयउ परम उछाव॥
—रणसिघकुमार चउपई (ह. लि)

२ भमरा कली लपेटियो कायर कपै काम।
जीवो तो जुग माणसी, मुवौ तो मोरै ठाम॥
—जलाल गहाणी री बात (ह. लि)

३ (क) विन दीठा मारग विषम, किण विध जाणे कोय।
जिण रसरी जाणे जिको, हिय तिण लागो लोय॥
—फूलजी फूलमती री वारता (ह. लि.)

(ख) मदह मदह आगज प्रेम की झरत न देखई कोई।
के जाणै उह जीवही, कै जिन लागी होई॥
—हरिया डूगरिया रा दूहा (ह. लि)

४ (क) प्रीत न साहिब कीजिये, प्रीत किया दुख होय।
प्रीत निभावन कठिन है, नाहरि-मृग गति जोय॥
—गुलाबा भवरा री वारता (ह. लि.)

(ख) पापी नेह दहइ कायानइ, दुख नही घूअउधायइ।
कुकुवरजी देह सुरगी, प्रीति-प्रेतणी खायइ॥
—रणसिंघ कुमार चउपई (ह. लि.)

वार इस प्रेम-पथ पर अग्रसर होने के बाद पीठ फेरने वाले को वे कायर की संज्ञा देते थे और उनके मतानुसार प्रेम-पथ च्युत व्यक्ति को नरक मे भी स्थान मिलना कठिन है।[1]

स्वच्छद-प्रेम-व्यजना के विविध रूप :

प्रथम, प्रेमी-प्रेमिका के प्रेम-सम्बन्ध के परिणाम की दृष्टि से स्वच्छद-प्रेम-व्यजना के मुख्यत दो रूप मिलते है। यथा—

(क) अयोगात्मक-प्रेम।

(ख) सयोगात्मक-प्रेम।

द्वितीय, प्रेम अथवा रतिभाव के आश्रय-आलम्बन की दृष्टि से भी इसके निम्नलिखित दो रूप मिलते है :—

(ग) पर-पुरुष से प्रेम अथवा परकीया-प्रेम।

(घ) गणिका-प्रेम।

(क) अयोगात्मक-प्रेम मे नायक-नायिका का मिलन नही हो पाता। इस प्रकार के प्रेमाख्यानो मे नायक-नायिका दोनो अविवाहित होते हैं या दोनो मे से एक अविवाहित होता है। प्रेमी-प्रेमिका द्वारा मिलन का उत्कट प्रयत्न होने पर भी सामाजिक बाधाओ के कारण असफल रहते है और वियोग की असह्य वेदना को सह नही पाने के कारण उनकी मृत्यु हो जाती है। इन प्रेमियो का मिलन मृत्यु के पश्चात् ही होता है—एक अदृश्य, अलौकिक, स्वर्गिक-प्रेम के ससार मे। इन प्रेमाख्यानो में नायक-नायिका मे प्रेम का उद्रेक प्रत्यक्ष-दर्शन से होता है और प्रेमासक्ति के मूल मे रूपाकर्षण ही न होकर कभी-कभी नायक-नायिका का गुण भी होता है। 'शेणी बीजाणद' की नायिका शेणी बीजाणद के कुरूप होने पर भी उसके वीणा-वादन पर मुग्ध हो प्रेम करने लगती है। इसी प्रकार लैला भी कोई विशेष रूपवती नही होती। इन प्रेमाख्यानो मे प्रेम का स्थूल काम-वासना रहित निश्छल रूप मिलता है। यह प्रेम उभयपक्षी होता है।

उदाहरणार्थ—'नागजी नागवती री वात' मे नागवती के हृदय मे प्रेम का अकुर अपनी भाभी द्वारा नागजी के रूप-गुण का श्रवण करने पर फूटता है। प्रत्यक्ष-दर्शन द्वारा दोनो का एक दूसरे पर मुग्ध होने पर यह अकुर पनपता है

---

१ चाखे जठा लग चौपडी, पछै दिखावे पीठ।
उणनु आवत आप मे, नरक ही न लेवे नीठ॥
— रतना हमीरी री वारता (ह लि)

और मिलन प्रसगो से पल्लवित होता है, किन्तु नागजी नागवंती दोनों धर्म भा॰ बहिन होते है, इसलिए यह प्रेम असामाजिक होता है, अत पिता द्वारा नागवत का अन्य व्यक्ति से विवाह कर दिया जाता है। मिलन स्थल पर नागवती के निश्चि समय पर नही पहुँच पाने पर नागजी निराश होकर आत्महत्या कर लेते है औ बाद मे सुसराल जाती हुई नागवती भी मार्ग मे, उनकी चिता मे कूदकर प्राणान्त कर लेती है। किन्तु आस्थावान् कथाकार को नायक-नायिका का यह दुखान्त स्वीकार नही होता। वह उन्हे शिव-पार्वती की कृपा से अमर-तत्व प्रदान कर देत है। यथा—

> प्रीत निवाहण अवतरया, कल मे अवी थमाह।
> सिव उमया प्रसाद कर, चिरजीव रहियाह ॥८०॥

इस प्रकार 'बीजा सोरठ' मे वर्णन है कि बीजाराव खेगार की प्रेयसी और अपनी मामी सोरठ के रूप पर मुग्ध होकर उस पर आसक्त हो जाता है और सोरठ भी बीजा को देखकर अपना हृदय खो बैठती है। बीजा अथक प्रयत्न करने पर भी सोरठ को प्राप्त करने मे असफल रहता है और सोरठ के वियोग मे तडप-तडपकर प्राण दे देता है। सोरठ भी बीजा के वियोग मे दु खी होकर एकदिन अवसर मिलने पर राज-महलो से निकल पडती है और बीजा के श्मशान मे आकर अपने प्राण विसर्जन कर देती है। इसी प्रकार का उभय-पक्षी प्रेम ससीपना, सोहनी-महियार आदि प्रेमी-प्रेमिकाओ मे होता है। इन दुखान्त प्रेमाख्यानो मे मूमल-महेदरा प्रेमाख्यान की ट्रेजेडी कुछ भिन्न प्रकार की है। इसमे महेदरा जब अन्धकारपूर्ण रात्रि मे तूफानी मरुस्थल को साँढनी पर बैठकर पार करके मूमल के महल के नीचे पहुँचता है तो प्रतीक्षारत मूमल की गोद मे पुरुष-वेश मे उसकी छोटी बहिन को सोता हुआ देखकर, मूमल के चरित्र पर उसे सन्देह हो जाता है और दुखित होकर लौट पडता है। प्रातःकाल मूमल को वस्तुस्थिति का पता चलता है तो वह दु.खित हो प्राण-त्याग देती है।

विषय-प्रेम व्यंजना

इसका उदाहरण वीरमदे सोनगरा री बात मे मिलता है। बादशाह अलाउद्दीन की लडकी फातिमा का वीरमदे के प्रति प्रेम विषम-कोटि का है। फातिमा वीरमदे के पौरुष और रूप पर मुग्ध होकर उससे प्रणय निवेदन करती है पर वीरमदे धर्म-भेद की भावनावश उसे ठुकरा देता है, किन्तु फातिमा वीरमदे को पाने का प्रयत्न नही छोडती और आक्रमण जैसे उत्कट प्रयत्नो द्वारा उसे बन्दी बनवाकर मगाती है, किन्तु उसके हाथ वीरमदे का शव ही लगता है। फातिमा अपने इस उत्कट प्रेम का परिचय वीरमदे के शव के साथ सती होकर देती है।

इन प्रेमाख्यानो की सबसे सडी विशेषता यह है कि अधिकाश प्रेमाख्यानो के नायक-नायिका राजमहलो से सम्बन्धित न होकर सामान्य जन है, अत इनमे सीधे, सच्चे एव निश्छल प्रेम की अभिव्यक्ति हुई है। 'बाजारु हुश्न परस्ती' या दरबारी वेश्या विकास की यहाँ कदाचित गध भी नही लक्षित होती और यहा राजमहलो के सोतिया डाह से दूषित प्रेम-प्रपच का ही चित्रण है। प्रेमी-प्रेमिकाओ के विरह से पूर्ण दुखी हृदय से निकले उद्गार बडे मार्मिक है जो जन-जीवन के हृदय को सदियो से छूते आ रहे है।

(ख) सयोगात्मक-प्रेम :

इस प्रेम का पर्यवसान प्रेमी-प्रेमिकाओ के मिलन अथवा विवाह मे होता है। सयोगात्मक प्रेम-परक प्रेमाख्यानो मे नायक-नायिका के हृदय मे प्रेम का अकुर प्राय स्वप्न-दर्शन, गुण-श्रवण, चित्र-दर्शन एव प्रत्यक्ष-दर्शन से फूटता है। किसी प्रेमाख्यान मे स्वप्न-दर्शन के बाद प्रत्यक्ष-दर्शन होता है तो किसी मे गुण-श्रवण के के बाद चित्र-दर्शन से पुष्ट होता हुआ दिखलाया गया है। उदाहरणार्थ—कुतुबद्दीन साहजादारी बात' मे वर्णन है कि सायबा के प्रति कुतुबद्दीन के हृदय मे प्रेम का उद्रेक ढढणी द्वारा सायबा का रूप-वर्णन सुनकर होता है। कुतुवदीन द्वारा वेश बदलकर सायबा से मिलने पर प्रत्यक्ष-दर्शन से एक दूसरे पर मुग्ध होने पर उनका प्रेम और भी पुष्ट हो जाता है। कुतुवदीन सायबा के वियोग मे बीमार पड जाता है और सायबा भी उसके प्रेम मे व्याकुल रहती है, किन्तु अन्त मे उन दोनो के सच्चे-प्रेम का पता चलने पर बादशाह दोनो का विवाह कर देता है।

'पुष्पसेन पद्मावती री बात' प्रेमाख्यान मे स्वच्छन्द-प्रेम-व्यजना के दो रूप मिलते है। प्रथम, पुष्पसेन के रूप को देखकर सुलोचना का मोहित होना तथा उससे छेडखानी करना तथा परस्पर लडते-लडते ही प्रेम कर बैठना, आजकल के दिलफेक आवारा टाइप युवक-युवतियो के प्रेम-प्रसग को ताजगी दे जाता है। प्रारम्भ मे इस प्रकार की प्रेम-व्यजना मे कामासक्ति ही अधिक व्यक्त होती है, किन्तु बाद मे दोनो का एक दूसरे के विना जीवित न रहने का सकल्प इस प्रेम को केवल कामासक्त प्रेम की परिधि से बाहर निकालकर सच्चे प्रेम की कोटि मे ले आता है। द्वितीय, पुष्पसेन को देखकर पद्मावती का उसके रूप पर मोहित होना तथा दोनो का महादेव के मन्दिर मे जाकर गधर्व-विवाह कर लेना और एक दूसरे के नही मिलने पर मरण का सकल्प भी कामासक्त-प्रेम की स्थिति से ऊपर उठा देता है। इस प्रकार इस प्रेमाख्यान मे स्थूल-काम-वासना रहित निश्छल उभयपक्षी प्रेम-व्यजना व्यक्त हुई है।

सामी प्रेम-व्यंजना

स्वच्छद प्रेम-व्यजना का एक अन्य रूप हमे 'विरह गुलजार इश्क अनवर कथा' नामक प्रेमाख्यान मे मिलता है। यह राजस्थानी भाषा मे लिखा गया 'सामी' कथानक का एक उदाहरण है। मोजदीन महताब, लैला मजनू आदि फारसी के अनेक प्रेम-कथाओ को लेकर राजस्थानी मे प्रेमाख्यान लिखे गये जिनमे से अनेक कथानको का भारतीयकरण कर दिया गया है। सामी-प्रेम-व्यजना का भी इन प्रेमाख्यानो मे भारतीयकरण हो गया है, किन्तु 'विरह गुलजार इश्क अनवर कथा' मे इसकी प्रेम-व्यजना का रूप सामी ही रहा है। बलख की शाहजादी अनवर स्वप्न में अकरम के शाहजादा इकबाल को देखती है और जब स्वप्न भग होता है तो उसके वियोग मे मूर्छित हो जाती है और उसकी यह मूर्छा कई दिनो तक बनी रहती है। अनवर की यह मूर्छा अनेक उपचार करने पर भी दूर नही होती। उधर इकबाल को भी स्वप्न मे अनवर दिखलाई देती है और वह भी स्वप्न भग होने पर उसके वियोग मे बीमार पड जाता है और उसकी भी चेतना नही लौट पाती। स्वप्न मे किसी सुन्दर व्यक्ति को देखकर उससे प्रेम कर बैठना और जागृत अवस्था मे उसके वियोग मे चेतना खो बैठना एकदम अस्वाभाविक सा लगता है। यदि यह ठीक भी मान लिया जाय तब भी स्वप्न मे किसी सुन्दर पुरुष को देखकर उसके वियोग मे व्याकुल रहना और यहा तक कि चेतना खो बैठना प्रेम-ज्वर का परिणाम नही, बल्कि अतिशय काम-ज्वर का ही चमत्कार लगता है। यहाँ एक प्रश्न यह भी उठता है कि अनवर के हृदय मे प्रेम का उद्रेक इकबाल को देखे, सुने बिना कैसे सम्भव हुआ? वस्तुतः सामी प्रेम-व्यजना की यही अस्वाभिकताये उसके गुण है। प्रेम की आलौकिकता, उसके विश्वव्यापी रूप का अतिरजित चित्रण सामी-प्रेम-व्यजना की विशेषताये है। Heart speak to heart की कहावत के अनुसार प्रेम-व्यथा का सन्देश बेतार के तार की भाति इकबाल तक पहुच जाना कोई असम्भव बात नही, क्योकि बेतार का तार तो फिर भी भौतिक-वस्तु है, किन्तु हृदय की गति तो इससे भी निराली है। 'विरह गुलजार इश्क अनवर कथा' प्रेमाख्यान की प्रेम-व्यजना मे परोक्ष सत्ता के प्रति साधक की प्रेम-व्यथा भी व्यक्त होती प्रतीत होती है।

(ग) पर-पुरुष से प्रेम अथवा परकीया-प्रेम :

इस प्रकार के प्रेमाख्यानो मे नायक-नायिका दोनो विवाहित होते है किन्तु नायिका अपने विवाहित पति से प्रेम न करके अन्य पुरुष से प्रेम करती है और विवाहित नायक भी अन्य विवाहित स्त्री से प्रेम करता है। भारतीय समाज मे प्रचलित विवाह का पवित्र बधन यहा टूटता हुआ दृष्टिगोचर होता है। परम्परागत सामाजिक मान्यताये यहा स्खलित होती नजर आती है। इन कवियो की तो यहा

तक मान्यता थी कि पुरुष का पर-स्त्री से और स्त्री का पर-पुरुष से प्रेम ही सच्चा-प्रेम होता है।[१] अब तक तो हमारे यहाँ पुरुषो को ही एक से अधिक स्त्रियो से प्रेम का सामाजिक अधिकार प्राप्त था, किन्तु इन प्रेमाख्यानकारो ने पुरुषो के इस एकाधिकार को चुनौती दी और विवाहित स्त्रियो के लिए भी अन्य पुरुष के साथ प्रेम-सम्बन्ध को वैद्य घोषित किया। स्त्री-पुरुष के सामाजिक सबधो मे यह एक क्रान्तिकारी दृष्टिकोण था। उन्होने खुलकर कहा कि स्त्री के एक ही पति होता है, पर उसके दो भेद है—एक पति और दूसरा प्रेमी। प्रेमी और पति को एक मानकर इनकी सेवा करने से नारी सद्गति को प्राप्त होती है और वह गगा की भाँति पवित्र होती है।[२] पर-स्त्री से प्रेम व्यजना की यह परिपाटी योरोपीय देशो मे मिलने वाले प्रेमाख्यानो अथवा रोमास एपिक्स मे पाई जाने वाली मध्य-कालीन राज-दरबारो मे प्रचलित प्रेम-प्रथा (Court-love) कोर्ट-लव के समान ही है। उस युग मे प्रेम और विवाह दो भिन्न बाते मानी जाती थी। वैवाहिक-जीवन स्वच्छद-प्रेम मे बाधक नही माना जाता था। वास्तव मे विवाह एक क्षणिक बधन था जो तनिक से भी आघात पर छिन्न-भिन्न हो सकता था। इसलिए इन काव्यो की प्रेम-व्यजना साधारणत वासना जनित प्रेम की ही परिचायक कही जा सकती है।[3] किन्तु मध्यकालीन योरोपीय कोर्ट-लव मे और भारतीय परकीया या

---

१. गणिका औखद जिमगिणो, जबरपणो श्रम जेम।
निजतिय कर तिय निरखये, परतिय केवल प्रेम॥
—रतना हमीरा री वारता (ह लि.)

२ नारी के पति एक है, ताके भेद जु दोय।
इक हथ लेवै हाथ दे, इक हित बन्योज होय॥६०॥
इन दोउन कौ दोय नही, करत सेव इक अ ग।
सद्गति पावै नार सौ, मानौ परसत गग॥६१॥
—गुलाबा भवरा री वारता (ह लि.)

३ (क) भारतीय प्रेमाख्यान काव्य डा० हरिकान्त श्रीवास्तव, पृ स १३२।
(ख) Marriage had nothing to do with love and no nonsense absured love was tolerated All the matches were matches of interest, that was continually changing. Any idealization of sexual love in a society where marriage is purely utiliterian must begin by being and idealization of a dultry

उपपति प्रेम-व्यजना मे बाह्य-रूप से समानता होते हुए भी सूक्ष्म अन्तर है। यह प्रेम-व्यजना वैष्णव-भक्ति परम्परा मे माधुर्य-भक्ति-भावना के अन्तर्गत उपपति 'प्रेम' से अधिक सम्बद्ध है। प्रेम की अन्यनता को प्रकट करने के लिए वैष्णव आचार्यों ने भगवान् का नैकट्य प्राप्त करने के लिए प्रेम के उपपति भाव रूपा-भक्ति का तथा असीम लोक-सौंदर्योपासना द्वारा निस्सीम दिव्य-सौंदर्य को पाने के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया था। अष्टछाप के प्रसिद्ध भक्त कवि नन्ददास ने उपपति-प्रेम भावना को लेकर 'रूपमजरी' नामक प्रेमाख्यान-काव्य की रचना की थी। वैष्णव भक्ति के इस उपपति प्रेम-भाव को लेकर ही रीतिकालीन कवियो मे परकीया प्रेम की प्रबलता रही। भगवान् श्रीकृष्ण और राधा आवारा टाइप के नायक-नायिका बना दिये गये। रीतिकाल के हिन्दी कवियो का प्रभाव राजस्थानी के प्रेमाख्यानकारो पर भी पडना स्वाभाविक था, किन्तु राजस्थानी के प्रेमाख्यानकारो ने श्रीकृष्ण और राधा तथा अन्य गोपियो के नामो को अपने प्रेमाख्यानो मे घसीटना छोड दिया और उनके नायक-नायिका जनसाधारण-व्यक्ति हो गये। इनकी प्रेम व्यजना ने भी वैष्णवो की उपपति प्रेम वाली अलौकिक, दिव्य-प्रेम-व्यजना के स्थान पर शुद्ध वासनामय लौकिक-प्रेम का रूप ग्रहण कर लिया। यद्यपि इनमे से कुछ प्रेमाख्यानकारो ने इस शुद्ध वासनामय लौकिक प्रेम से भी भगवान् के सगुण रूप की भक्ति का उपदेश देने की चेष्टा की है।[1] तथा इस लौकिक प्रेम मे दिव्य-प्रेम के रूप को पाने का सकेत किया है, किन्तु अधिकाश रूप से इनकी प्रेम-व्यजना का रूप शुद्ध वासनामय लौकिक-प्रेम ही है। मासल-सौंदर्य के उपभोग की मनोवृत्ति इन प्रेमाख्यानो मे प्रधान रूप से व्यक्त हुई है। इन प्रेमाख्यानो मे नायिकाये अनमेल विवाह के फलस्वरूप अपने पतियो से विरक्त होती दिखलाई गई हैं और किसी विवाहित रूपवान् पुरुष के चित्र-दर्शन एव प्रत्यक्ष दर्शन से उस पर मुग्ध हो प्रेमासक्त चित्रित की गई है। इस प्रेमासक्ति का कारण स्थूल कामवासना की तृप्ति है। इन प्रेमाख्यानकारो ने नायक-नायिकाओ की प्रेम-जनित चेष्टाओ का रसमय चित्रण करने के लिए तथा उनके ऐन्द्रिय महोत्सव को दिखलाने के लिए सयोग-वियोग चित्रण के अनेक अवसर निकाले है। श्रावण की तीज एक ऐसा

---

१. सहज प्रमाणौ सापरत, लहो एक रसलीन।
मुकता चुगही हसि मिलि, वल बक चुगही मीन॥
प्रिया सुमत सुइ पदमणी. परम-पुरुष सोइ पीव।
मथणहार कादो मथै, घुलियो गोरस-थीव॥
—रतना हमीर री वारता (ह. लि)

अवसर है—जिस पर नायक-नायिका किसी न किसी प्रकार से मिलते है और विषयानन्द का उपभोग करते हैं। विवाहित होने से ये नायक-नायिकाये सामाजिक मर्यादा और एव लोक-भय से दूती, खवास आदि के द्वारा प्रेम-सन्देशो का आदान-प्रदान करके लुप-छिपकर मिलते है किन्तु बाद मे घरवालो और समाज मे भेद खुल जाने पर लोक-लाज की चिन्ता किये बिना निर्भय होकर प्रेम-पथ पर चलते रहते है। विवाहित होते हुए भी इन नायिकाओ का प्रेम एकनिष्ठ होता है, अत इसमे तीव्रता होती है। ये नायिकाये लोक मर्यादा को तोडकर तथा अपने पतियो को छोडकर प्रेमियो से जा मिलती है।

उदाहरणार्थ--'रतना हमीर री वारता' मे उल्लेख है कि रतना का विवाह एक कुरूप व्यक्ति से होता है। वह हमीर का चित्र देखकर उस पर मुग्ध हो जाती है तथा कई प्रकार की बाधाओ को पार करके अपने पति को छोडकर हमीर से उसी प्रकार जा मिलती है जैसे सरिता समुद्र मे जा मिलती है।[1] 'फूलजी फूलमती री वारता' की नायिका फूलमती अपने पति से भी सम्बन्ध बनाये रखती है और फूलजी के साथ उसका प्रेम-सम्बन्ध जीवन पर्यन्त चलता रहता है। 'गुलाबा भवरा री वारता' नामक प्रेमाख्यान मे विवाह और प्रेम मे समझौता करने का प्रयत्न किया गया है। भगवान् शकर की कृपा से गुलाबा के दो रूप बना दिये जाते है। असली गुलाबा उसके प्रेमी भवर के पास रहती है और नकली गुलाबा विवाहित पति के साथ। प्रेमी-प्रेमिका की पूर्वभव कहानी देकर इनके जन्म-जन्मान्तर का प्रेम दिखलाकर प्रेम की प्रतिष्ठा की गई है और किसी अन्य व्यक्ति से विवाह को प्रेमी-प्रेमिका के मिलन मे पूर्व जन्म के कर्म-दोष का फल माना है। इस प्रकार यहाँ प्रेम की पवित्रता के समक्ष विवाह का बन्धन तुच्छ ठहरता है। 'नरबद सुपियार दे री बात' तथा 'विरमदे सोनगरा री बात' प्रेमाख्यानो की नायिकायें सुपियार दे और सोनगरा अपने पतियो से तग आकर किन्ही वीर पुरुषो को अपना हृदय-समर्पित कर देती है और स्वय ही अपने छुटकारे के लिए प्रेमियो के पास सन्देश भेजती है। फलस्वरूप उन वीर प्रेमियो द्वारा उनका हरण कर लिया जाता है। इस हरण को सामाजिक दृष्टि से वैध भी मान लिया जाता है। ये दोनो ही राजपूत रमणियाँ होती हैं और यहाँ भी विवाहित पति के साथ सतीत्व की

---

१ "रतना हमीर हूँ जाइ मिली, जाणे सरिता समुद्र हूँ आइ मिली।"
जे चेतन किण विध तजै, मन ज्यो वसियौ मोह।
चिंवुक हूँ जाइर चियै, लखौ अचेतन लोह॥
—रतना हमीर री वारता (ह. लि.)

भावना का खण्डन होता है। उपर्युक्त प्रेमाख्यानो मे उभयपक्षी प्रेम व्यजना ही मिलती है।

(घ) गणिका-प्रेम :

किसी नायक की गणिका से प्रेम की कथा इन प्रेमाख्यानो मे अवान्तर-कथा मे भी मिलती है और मुख्य-कथा के रूप मे भी। सदयवत्स वीर प्रबन्ध मे वर्णित सदयवत्स का कामसेना वेश्या से प्रेम-प्रसग अवान्तर कथा का ही रूप है। जैसा कि प्रथम अध्याय मे उल्लेख किया जा चुका है, गणिका प्रेम-सम्बन्धी प्रमुख प्रेमाख्यान 'माधवानल कामकन्दला' और स्थूलिभद्र कोशा-प्रेम सम्बन्धी प्रेमाख्यान है। इन प्रेमाख्यानो की नायिकाये गणिकाये है और प्रेमाख्यानो का नामकरण भी इनके नाम से ही सम्बन्धित है। प्रेम का जैसा पवित्र और निश्छल रूप इन प्रेमाख्यानो मे व्यक्त हुआ है, वैसा अन्यत्र मिलना दुर्लभ है। इनकी नायिकायें वेश्यायें होते हुए भी अपनी प्रेम की एक निष्ठता से इतनी ऊपर उठ गई हैं कि उनके चरित्र की समता नारी के उच्चत्तम आदर्श सीता, सावित्री के चरित्र से की जा सकती है। किन्तु इन दोनो कथाओ से सम्बन्धित प्रेमाख्यानो का मूल उत्स भिन्न २ है। प्रथम प्रेमाख्यान मे, उपलब्ध सासारिक समस्त भोगो का भोग करके अपने निश्छल प्रेम की एक निष्ठ भावना तथा समर्पण की भावना से ही जीवन का श्रेयस प्राप्त करते है, किन्तु द्वितीय मे प्रेमी-प्रेमिका उपलब्ध सांसारिक सुख भोगकर भी जीवन का श्रेयस प्राप्त करने के लिए वीतराग हो जाते है। अत प्रथम प्रेमाख्यान प्रवृत्ति प्रदान है जबकि द्वितीय मूल उत्स निवृत्ति प्रदान वैराग्य भावना है। कोशा के प्रेम मे लिप्त स्थूलिभद्र अपने समस्त सामन्ती अधिकारो को ठोकर मारकर बारह वर्ष तक कोशा के यहाँ जीवन के समस्त भोगो को भोगता है। अपने पिता की दर्दनाक राजनैतिक हत्या हो जाने से उसके मन मे वैराग्य घर कर लेता है, किन्तु मुनि बनने के बाद भी उसके हृदय के किसी निरभ्र कोने मे कोशा के प्रति उत्कट-प्रेम बना रहता है और वह चतुर्थ मास कोशा के यहा ही बिताता है। कोशा समस्त भोग-विलास के साधन प्रस्तुत करती है, पर स्थूलिभद्र पर प्रेम के इन बाह्य उपकरणो का कोई प्रभाव नही पड़ता, अन्त मे प्रेमिका भी अपने प्रेमी के पथ का अनुसरण करके वैराग्य ले लेती है।

'माधवानल कामकन्दला' मे नायक नायिका मे प्रेम का उद्रेक परस्पर के रूप गुण पर मुग्ध होने पर होता है। अपनी प्रेम-निष्ठा मे सच्चाई के कारण वे राज-कोप के भय से प्राणो की भी चिन्ता न करके परस्पर मिलते है। कामकन्दला अपने साथ अपने जीवन का समस्त वैभव माधव को समर्पित कर देती है। दोनो ही का प्रेम एक दूसरे के विरह मे तपने से तप्त स्वर्ण के समान निखर उठता है।

इनकी प्रेम-निष्ठा का उच्चत्तम रूप तब मिलता है जब राजा विक्रमादित्य द्वारा परीक्षा ली जाने के लिए एक दूसरे की मृत्यु के मिथ्या समाचार सुनाने पर दोनो प्रेमी-प्रेमियो की तुरन्त मृत्यु हो जाती है। अन्त मे मिलन की वेला आती है जिसमे समर्पण की चिरानद घडी मे नायक नायिका दोनो का स्वतन्त्र व्यक्तित्व तिरोहित होकर एकात्मक हो जाता है।[1] प्रेमी-प्रेमिका समर्पण की इस घडी मे ही अपने जीवन का श्रेयस प्राप्त करते हैं।

२. दाम्पत्य-प्रेम

प० रामचन्द्र शुक्ल ने प्रबधो मे दाम्पत्य-प्रेम का आविर्भाव वर्णन करने की पाच प्रकार की प्रणालियो का उल्लेख किया है।[2] प्रथम वह जिसमे विवाह हो जाने के उपरान्त प्रेम का स्फुरण और चरम उत्कर्ष जीवन की विकट परिस्थितियो मे दिखलाई पडता है। द्वितीय, वह जिसमे विवाह के पूर्व नायक-नायिका ससार के क्षेत्र मे घूमते हुए कही उपवन, नदी-तट, वीथी, वाटिका इत्यादि मे एक दूसरे को देखकर मोहित हो जाते है, फिर नायक की ओर से नायिका को पाने का प्रयत्न होता है। इसी प्रयत्नावस्था मे ही सयोग-वियोग आदि का सन्निवेश कर कवि दोनो के विवाह पर कथा की समाप्ति कर देता है। तृतीय वह जिसमें राजाओ के अन्त पुर मे, उद्यान आदि के भीतर भोग-विलास या रग रहस्य के रूप मे प्रेम अकित किया जाता है। ऐसी प्रेम पद्धति मे सपत्नियो के द्वेप, कलह, विदूषक, आदि के हास-परिहास और राजाओ की स्त्रैणता के दृश्य अधिक होते हैं। चतुर्थ प्रकार के प्रेम मे उसका स्फुरण, गुण-श्रवण, चित्र-दर्शन, स्वप्न-दर्शन आदि से होता है और नायक के प्रयत्न से दोनो के मिलने के बाद अन्त मे विवाह होता है। पचम प्रकार का प्रेम किसी अप्सरा या गणिका से होता है, किन्तु ऐसे प्रेम में स्थायी तत्व नही मिलता। संयोग के उपरान्त इस प्रकार की प्रेम-पद्धति मे कथा का अन्त वियोग मे ही होता है।

राजस्थानी के इन प्रेमाख्यानो मे तीसरे प्रकार की प्रेम-पद्धति के चित्रण को छोडकर शेप सब पद्धतियो का चित्रण मिलता है। तीसरे प्रकार की प्रणाली का भी एक दम अभाव नही है। इन पाच प्रणालियो मे प्रथम एव तृतीय प्रणालियो

---

१ माधव महिला थीठहइ, महिला माधव दीठ।
अन्यो अन्यइ श्या थमा, चहकु चोल मजीठ॥
— गणपति कृत माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध।

को छोडकर प्रेम-चित्रण की शेष प्रणालियो का वर्णन स्वच्छद प्रेम-व्यजना पद्धति के अन्तर्गत किया जा चुका है। दाम्पत्य-प्रेम के आविर्भाव के लिए भी उक्त प्रणालियो का उपयोग उन प्रेमाख्यानो मे मिलता है जिनका पूर्वार्द्ध स्वच्छद-प्रेम-व्यजना युक्त है। इस दृष्टि से दाम्पत्य-प्रेम-व्यजना-सम्बन्धी प्रेमाख्यानो के निम्न-लिखित दो ही रूप मिलते है जिनका कि उल्लेख प्रथम अध्याय के वर्गीकरण मे कर आये है। यथा—

प्रथम, जिनमे कथानक का पूर्वार्द्ध स्वच्छद प्रेम की पृष्ठभूमि लिए रहता है। विवाह के पूर्व ही नायक-नायिकाओ के हृदय मे प्रेम का उद्रेक स्वप्न-दर्शन, गुण-श्रवण, चित्र-दर्शन अथवा प्रत्यक्ष-दर्शन से होता है। एक दूसरे से मिलने के लिए यह प्रेमी-प्रेमिका लोक-मर्यादा एव सामाजिक-बधनो को तोडकर निर्भीकता पूर्वक साहसिक कार्यो को सम्पन्न करके कभी-कभी गधर्व विवाह भी कर लेते है। विवाह के बाद पुन. वियोग-सयोग जनित परिस्थितियो का व्यक्त किया गया है।

उदाहरणार्थ— रणसिंघ कुमर चउपई' मे वर्णन है कि वन मे यक्ष की पूजा के निमित्त आई हुई राजकुमारी कमलावती राजकुमार रणसिंह के रूप को देखकर मोहित हो जाती है और यक्ष से वरदान मे उसे पति रूप मे मागती है। यहाँ प्रत्यक्ष-दर्शन से प्रेम का उद्रेक बतलाया गया है। एक अपरिचित व्यक्ति से प्रेम की भावना का स्फुरण पहले नेत्रो द्वारा होता है।[२] जिसमे रूप-लोभ की मादकता निहित है। इसके पश्चात् नायक-नायिका के चित्त मिलकर एक हो जाते हैं, उनके हृदय मे प्रेम रूपी-कमल विकसित हो उठता है।

किन्तु लाज के बन्धन मुँह नही खोलने देते। राजकुमारी अपनी सखी के साथ प्रणय-निवेदन भेजती है और फिर विरह की असह्य-वेदना सह नही पाने के कारण[१] लोक-लाज छोडकर राजकुमार के साथ महलो से भाग निकलती है और यक्ष-

---

१. नयण पदारथ नयण-रस, नयणे नयण मिलति।
अण जाण्या से प्रीतडी, पहिली नयण करत॥
चित सु चित्त मिलि गयउ, नयणे मिली गया नइण।
हियमउ विकस्वउ कमल जिम, पिणि मुखइं न बोत वइण॥
—रणसिंघ कुमर चउपई (ह लि)

२. भूरि भूरि पीली थइ रेवाल्हा जिम पाकंड नरुपान।
कोई एहन इन विगम इरे वाल्हा निसिदिन ताहरउ ध्यान॥

मन्दिर मे आकर गधर्व विवाह कर लेती है।[1] इस प्रकार यहाँ प्रेम का उद्रेक और विकास स्वाभाविक गति से होता है। दाम्पत्य-जीवन मे रतनवती के षड्यन्त्र से गतिरोध आता है और राजकुमार कमलावती के चरित्र पर सन्देह करके क्रूरता-पूर्वक उसे घर से निकाल देता है। यहाँ नायिका के धैर्य और शील की परीक्षा होती है। भारतीय ललनाये जीवन की विभीषिकाओ से डर कर अपना धैर्य खोकर आत्म-हत्याये करने वाली नही होती। कमलावती का प्रेम, पति द्वारा अकारण त्याग देने पर भी कम नही होता। वह अनेक सकटो का सामना करती है तथा अनेक प्रलोभनो से बचकर अपने सतीत्व की रक्षा करती है। उधर राजकुमार को कमलावती की निर्दोषता का पता चलता है तो वह भी उसके विरह में दु खी होकर विलाप करता है और जीवित अग्नि-समाधि ले लेने को तत्पर हो जाता है।[2] यहाँ नायक-नायिका के उभयनिष्ठ प्रेम का पता चलता है। नायक के अनेक विवाहो के आधार पर यह कहा जा सकता है कि उसमे प्रेम की एकनिष्ठता का अभाव है, किन्तु यह तो उस युग की बहु-पत्नि प्रथा का परिणाम है, इससे नायक के प्रेम की एकनिष्ठता खण्डित नही होती। इस प्रेमाख्यान मे प्रेम के सत-पक्ष अथवा नायिका की शील निष्ठा का रूप सुन्दरता के साथ उजागर हुआ है। यह सत एक ऐसा प्रबल अस्त्र है जिसका वार विफल नही होता और उसे स्पर्श नही किया जा सकता। जिस प्रकार सूफी प्रेमाख्यानकारो ने अपने कथानको मे सूफी रहस्यवादिता का रग चढाया है, उसी प्रकार जैन-प्रेमाख्यानकारो ने भी जिन-धर्म की रगत देकर इन प्रेमाख्यानो के द्वारा शील, तप का उपदेश दिया है।[3] कमलावती चौपई, नलराज चौपई, मलयसुन्दरी कथा, विद्या-विलास, बीजड बीजोगण आदि प्रेमाख्यानो मे प्रेम का 'उद्रेक और विकास रणसिंघ कुमर चउपई' प्रेमाख्यान में चित्रित प्रेम

---

१. तिणि अवसर वन मइ तिहो करि गधर्व विवाह।
परण्या कुमरी कुमर छे, थयउ परम उछाह॥

२. रहइ सदा इम झूरता, कमरी विन्न कुमार।
जिम बापीयउ मेह विणि पीउ पीउ करइ पुकारि॥
इम कहियो ताना पुरुष तेडी एम कहेह।
चिता करउ घर बारणइ, त्रिया-काष्ठ आरोह॥

३ सील सरीखउ को नही, जगमइ परम पवित्रो रे।
सीलइ सहु सपद मिलइ, सीलइ अविचल लीलोरे॥
सीलइ सुर सा नि ध करइ, सील अकतरण मित्रोरे।
—रणसिंघ कुमर चउपई (ह लि.)

के समान ही होता है। इस प्रेम की परिणति विवाह मे होती है और सन्तानोत्पत्ति इसका फल। नायक-नायिकाये सकट के समय अपना धैर्य नही छोडते और जीवन की विभीषिकाओ का दृढता से मुकाविला करते हैं।

दाम्पत्य-प्रेम सम्बन्धी प्रेमाख्यानो की दूसरी कोटि मे नायक-नायिकाओ मे प्रेम का उद्रेक विवाह के पश्चात् होता है। विवाह के पश्चात् ही नायक-नायिकाओ मे सयोग-वियोग जनित परिस्थितियो के चित्रण से प्रेम का विकास दिखलाया गया है।

उदाहरणार्थ—'ढोला मारु रा दूहा' प्रेमाख्यान मे नायक-नायिका विवाहित होते है। मारवणी को स्वप्न मे ढोला के दर्शन होते हैं और वह उसके वियोग मे दुखी रहने लगती हैं, किन्तु ढोला के वियोग मे मारवणी की विरहातुरता कामासक्ति का ही परिणाम है। नायक-नायिका भले ही विवाहित हो, किन्तु उनका विवाह वचपन मे होने से मारवणी का स्वप्न मे ढोला को देखकर प्रेमासक्त होना पूर्वराग के भीतर ही आयेगा। यहाँ ढोला के साथ मारवणी को अपने विवाह की वात ज्ञात हो जाने से उसके प्रेम मे एक व्यक्ति निष्ठता पहले से ही निश्चित हो जाती है, अतः मारवणी की कामासक्त विरहजनित उक्तियो से उसका प्रेम लोक-वाह्य रूप ग्रहण नही कर पाता। मारवणी के समाचार सुनकर ढोला भी उसे लेने के लिए दौड पडता है। लौटते समय मार्ग मे मारवणी को पीवणो साँप के डस जाने से उसकी मृत्यु हो जाने पर ढोला भी जीवित जलने को तत्पर हो जाता है। इससे नायक-नायिका के उभयनिष्ठ प्रेम का पता चलता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि 'ढोला मारू काव्य' दाम्पत्य प्रेम का स्वाभाविक गति से विकास हुआ है।

प्रेम का स्वाभाविक विकास जैसा 'ढोल मारू रा दूहा' प्रेमाख्यान मे हुआ है, वैसा 'वीसलदेव रास' मे नही मिलता। वीसलदेव राजमती के ताना मारने पर रूठकर उडीसा चले जाते है। राजमती उनके वियोग मे विरहातुर रहती है, जिसमे कामवासना की गध अधिक है, सच्चे-प्रेम की भाव-प्रवणता कम। नायिका के समाचार पाकर नायक लौट आता है। इसमे नायिका के प्रति नायक का एकनिष्ठ प्रेम भी नही उभर पाया है।

मृगावती रास' मे उल्लेख है कि राजा सतानीक भारुड पक्षी द्वारा मृगावनी को उडा ले जाने पर उस खोजकर लाने का व्यापक प्रयत्न करता है और उसके वियोग मे दुखी रहता है। मृगावती भी जीवन की क्रूरतम त्रासदायक घडियो मे भी अपना धैर्य नही खोती और अपने शील को बनाये रखती है। अन्त मे, कालीदास के शकुन्तला नाटक मे जिस प्रकार राजा दुष्यन्त और कण्व ऋषि के आश्रम

मे शकुन्तला और भरत से मिलकर आनन्दित होता है, उसी प्रकार मुनि ब्रह्ममूर्ति के आश्रम मे मृगावती और उदयन से मिलकर राजा सतानीक आनन्द-लाभ प्राप्त करता है। मृगावती की प्रेमनिष्ठा और शील तब और भी निखर उठता है, जब वह पद्मिनी की भाँति ही राजा चण्डप्रद्योत की कामलोलुपता को ठुकराकर उसे पद्मिनी की भाँति ही छकाती है।

३. कामशून्य आध्यात्मिक अथवा दिव्य-प्रेम-व्यंजना

आध्यामिक अथवा दिव्य-प्रेम-सम्बन्धी काव्यो मे वेलि क्रिसन रुक्मिणी री, बडा रुक्मणी-मगल, रुक्मिणी-हरण, महादेव पार्वती री वेलि आदि प्रेमाख्यान लिये जा सकते हैं। इन प्रेमाख्यानो मे वैष्णवो की रागानुगा भक्ति अथवा कान्ता-प्रेमभाव रूपा भक्ति का प्रतिपादन किया गया है। सूफियो जैसी परोक्ष-सत्ता प्रेम अथवा रहस्य-वादी-प्रेम-व्यजना सम्बन्धी प्रेमाख्यानो का राजस्थानी भाषा मे प्राय. अभाव है। 'वेलि क्रिसन रुक्मिणी री' आदि प्रेमाख्यानो' मे भी प्रेम-तत्व के निरूपण की शैली प्राय लौकिक प्रेमाख्यानो के समान ही हैं, किन्तु इनके नायक-नायिकाये अवतारी अथवा दिव्य-व्यक्ति होने से इनका प्रेम भी दिव्य-कोटि मे गिना जायगा। इनके रचयिताओ ने इन काव्यो के पढने वालो को दैहिक, दैविक और भौतिक तापो से छुटकारा पाने की बात लिखकर इस प्रेम-व्यजना की दिव्यता को प्रकट किया है।

राजस्थानी प्रेमाख्यानो मे प्रेम और काम का सम्बन्ध :

राजस्थानी प्रेमाख्यानकारो ने काम को वडी महत्ता प्रदान की है। कुछ प्रेमाख्यानकारो ने तो अपने काव्य ग्र थो के मगलाचरण मे कामदेव की स्तुति की है। गणपति कृत माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध तथा 'रतना हमीर री वारता' के मगलाचरण मे कामदेव की स्तुति मिलती है। 'विल्हण पचासिका' के मगलाचरण मे तो सरस्वती से अधिक कामदेव को महता प्रदान की गई है। कवि ने साग रूपक

---

१. (क) कुवर कमलारति रमण, मयण महाभड नाम।
पकजि पूजिय पत्र कमल, प्रथम जि करू प्रणाम ।।
—गणपति कृत 'माधवानल कामकन्दला प्रवन्ध'।

(ख) कुसम तणा सर पाचकर, जग जिण लीधौ जीत।
तिणरो सुमरण करतणा, रस-ग्रंथारी रीत ।।

द्वारा काम को ससार को जीतने वाले सम्राट के रूप मे चित्रित किया है।[1] मधु-मालती प्रेमाख्यान मे काम की सर्वव्यापकता का चित्रण बडा मुग्ध करने वाला है। चतुर्भुजदास के मतानुसार तो प्रेम और काम सृष्टि के साथ ही उत्पन्न हुए हैं। वह ससार के अणु-अणु मे प्रतिविम्वित है और कोई भी मनुष्य इससे शून्य नही है।[2] इन प्रेमाख्यानकारो की दृष्टि मे काम एक मगलकारी देवता के रूप मे प्रतिष्ठित था। कुछ प्रेमाख्यानो को तो नायक-नायिकाये भी काम और रति के अवतार होती है। 'मधुमालती' मे उल्लेख है कि मधु और मालती पूर्वभव मे कामदेव और रति थे। इस प्रेमाख्यानकार ने तो 'मधुमालती' को कामविलास की कथा के नाम से सम्बोधित किया है।[3] इन प्रेमाख्यानकारो ने काम को जीवन के चार फलो मे गिनाया है।[4] कुछ प्रेमाख्यानो मे नायक-नायिकाओ का प्रथम मिलन भी कामदेव के मन्दिर मे होता है। मदन शतक प्रेमाख्यान मे उल्लेख है कि मदन और राज-कुमारी रति सुन्दरी का प्रथम मिलन कामदेव के मन्दिर मे ही होता है। ये नायक

---

१. मकरध्वज महीपति वर्णवु, जेहनु रूप अवनि अभिनवु।
कुसुम वाणि करि, कुजरि चढई, जास प्रमाणि धराधर हडई ॥
कोदड कामिनी तणु टकार, आगलि अलि झझा झझारि।
पाखलि कोइलि कलख करई, निर्मल छत्र श्वेत शिर धरई ॥
त्रिभुवन मोहि पडावई साद, दई को सुरनर माडई वाद।
अबल सैन सबल पर वरिऊ, हीडई मनमथ मच्छिरी चरिऊ ॥
माधव मास सोहई सामत, तास नणइ जल निधि सुत मित।
दूत तणु मलया निल करइ, सुर नर पन्नग आण आचरई ॥
तास तणा पत्र हु अणसरी, सरसती सामिणी हइडई धरी।
पहिलु कदर्प करी प्रणाम, गइउ ग्रथ रचिसि अभिराम ॥

२. जा दिन से पुहुमी रची, जिम जत जग नाम।
भवन-मध्य दीपक रहे, त्यो घट भीतर काम ॥
शरीर-मध्य जागृत सदा, जग की उत्पत्ति काम।
कामदेव त्यौ रहत है, ज्यौ जल बसतु तरग ॥
—चतुर्भुजदास कृत मधुमालती (ह लि)।

३. 'काम विलास की ए कथा, चतुर सुने चितलाय' ॥७८॥

४. धर्म अरथ अनइ बलि काम, आराधई प्रिय स्यु अभिराम।
सतानीक सुई मिरगावती, सुख भोग वइ जिम सचिसुर पति ॥
—समयसुन्दर कृत मृगावती रास (ह. लि)।

नायिकायें काम-ज्वर से पीडित होकर लोक-लाज की चिन्ता किये बिना 'कामदेव की साक्षी' मे गधर्व-विवाह भी कर लेते हैं।[1]

राजस्थानी के इन प्रेमाख्यानो मे यौन-प्रेम के विकास की प्रक्रिया का सहज और मनोवैज्ञानिक चित्रण निम्नलिखित रूप मे मिलता है —

तन-विलसण, मन उल्हसण, वयण सयण समवाणि।
चख निरखण, धन विद्रवण, मानव-भव सु प्रमाणि ॥१००॥
नमण मिलता मन मिले, मन मिले वयण मेलत।
वयण मिलता कर मिले, इम कायागढ भेलत ॥६०॥[2]

उपर्युक्त प्रेम-विकास की प्रकिया मे तन-मन के उल्लास मे कार्य-कारण का सम्बन्ध निर्धारित करके काम और प्रेम का घनिष्ट सम्बन्ध बतलाया गया है। इन प्रेमाख्यानो मे काम जनित प्रेम का विकास किस प्रकार से सम्पन्न होता है, इसके कुछ उदाहरण यहा प्रस्तुत किये जा रहे है। यथा -

नायिका द्वारा नायक के प्रथम-दर्शन के समय उसमे जब काम-वासना जागृत होती है, तब नायिका की शारीरिक और मानसिक दशा कैसी हो जाती है, इसका सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक चित्रण केशव कृत 'सदैवच्छ सावलिगा चउपई' मे निम्नलिखित रूप से हुआ है —

निरख्यो कुँअर कुँअरी नयण, मोहाणा मनि जाग्यो मयण।
पल देखइ नयन पसारि, खिण विहसइ खिण बिलखी नारि ॥११०॥
आलस मोडई भागइ अग, मरट धरइ लेवा मन द्रग।
खिण नीसास करे उससे, कामदेव जागत कसम से ॥१११॥
वाम चरण अगूठा नखे, खिणि नीचो जोइ भूमि लखे।
कुमर निजर साम्हो ते देखि, सभालइ निज चीर विशेष ॥११२॥

---

१. हारे लाल बी जि कर हती बेस बेसवा असवारी अनीचगरे लाल।
साथे सखी लेई सचरी आवे प्रासाद अनगरे लाल ॥
कामदेव साखी कियो, फेरा फीरोयो चार।
बोल बध दे बडील्या, आपस मे इणवाद ॥
— विद्याविलास रास (ह. लि.)।

२ सदयवच्छ सावलिगा चउपइ (सदयवत्स वीर प्रबन्ध, सा. रा. रि. इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ. स १४४, १४५।

इस वोलइ खोलइ मन वात, हसि थसि, रीस ज्ञव वोलइ गात।
आलिगन चुवन जव करइ, ओझो आवहतिणि अवसरई ॥११६॥[1]

प्रथम मिलन के समय कामातुर सावलिगा की शारीरिक चेष्टायें, उसके हावभाव का कवि ने वडी वारीकी से चित्रण किया है। नायिका का लाज से सकुचित होकर वाम चरण के अगूठे के नख द्वारा जमीन को खरोचना तथा नीची दृष्टि करके भूमि अवलोकन आदि शारीरिक चेष्टायें, इस प्रेम-प्रसग को रगीनी प्रदान कर देता है। नायिका की यह नारी सुलभ लज्जा प्रेम मे निखार ला देती है।

प्रेमिका की प्रेमी से मिलनोत्सुकता, उसके तन की तैयारी के साथ मन के उल्लास का भी वडा मनोहारी चित्रण मिलता है। रति-क्रीडा के चित्रण मे अधिकतर साकेतिकता से काम लिया गया है, किन्तु कही कही यह चित्रण अनावृत्त होकर अश्लीलता की हद तक भी पहुच गये हैं। जैन मुनि कुशललाभ ने तो काम वेलि वर्णन मे नायक-नायिका की कामिक और मानसिक चेष्टाओ के सूक्ष्म-चित्रण के साथ उत्प्रेक्षा अलकार के द्वारा आलिगनवद्ध नायक-नायिका को केतकी पुष्प और भ्रमर के समान वताकर रति क्रीडा के दृश्य को सजीव कर दिया है। यथा—

सुख सेजई माधव सचरइ, चुवन करि आलिगन करई।
प्रेम दिखाडि कत मन हरइ, कामन्दला इम उच्चरई॥
तुझ दीठइ हू मनमथ हुई, क्षिण एक तुझ विण न सकु रहि।
प्रेम प्रकासइ मोडे अग कसणा भजे जाण भुयग।
आलस अग जमाई करे, विरह वृथा जल लोचन भरे।
नयण वाँण नवधई सावाल, घालइ कठ ब्रोह सुकुमाल॥
करसु खचई कुशय माल, काम ऐम जागई ततकाल॥

दोहा—जिम मधुरा नई कमलगि, गगा-सागर वेलि।
तिय परि माधव रमे, काम कतुहल केलि।
सेज रमती माननी, कली मूक की न जाई।
जाणे विहसे केतकी, भ्रमर वइठड आई॥[2]

आलिगन वद्ध नायक-नायिका की उपमा भ्रमर और मालती पुष्प अथवा केतकी पुष्प से देने के उदाहरण मिलते है। यथा—

---

१ सदयवच्छ सावलिगा चउपई (सदयवत्स वीर प्रबन्ध, सा रा. रि इन्स्टीट्यूट, वीकानेर) पृ. स. १४६, १४७।

२. माधवानल कामकन्दला चउपई (ह. लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

"कुमर भमराइ कुमरी मालती जी माणइ भोग विलास ।[1]

'माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध' मे गणपति ने न केवल सहवास का चित्रण ही किया है, वल्कि सहवास-सुख की महिमा का भी भाव-विभोर होकर वर्णन किया है :—

गीय-रस, स्त्रीय-रस, अन्न-रस अ गिन लग्गउ जाह ।
साकलि वाध्या सुणह जिम, गयउ ते जम अ ताह ।।

इन कवियो की दृष्टि से नारी शरीर का सामीप्य सव सुखो का मूल था । विद्याविलास के रचयिता मुनि विनयप्रभ ने सुख प्रदान करने वाले साधनो में सबसे अधिक सुखदायक नारी का शरीर वतलाया है । यथा—

गुटी, पुटी, जटी, तत, जत, मत, अ त, पत, इलावसी कार
एकधु के घडे धात है ।
सुधा, सेज, तेल, फुलवारी, वाग, पटकुल, सारे ही से
सुखमूल गोरी ही को गात है ।

इन प्रेमाख्यानो मे विरह-वर्णन मे भी नायिका की काम-दशा का वडा सूक्ष्म चित्रण किया गया है । यथा—

नावे नीसासा घणा, कपे थर थर काय ।
वाली भवी रहो व्यापक लागी तण मे लाय ।।
आवेघणी उवासिया, मसले कर दोय मेल ।
काल जडो इम कलमलँ, जाणे न पीयो तेल ।।
करे कर डका काय ने, प्रकटे घणो प्रसेव ।
सीतल अ ग सगलो हुउ, दिल मे समरे देव ।।[2]

अपने प्रियतम के वियोग मे काम-ज्वर से पीडित नारी की इससे अधिक दयनीय दशा क्या हो सकती है ।

उपर्युक्त चित्रण के आधार पर हम इस निष्कर्ष पर पहुचते है कि इन प्रेमाख्यानो मे काम का सहज, स्वाभाविक और निरावृत्त रूप मिलता है । मनोवैज्ञानिक भाषा मे 'सेक्स' एक वृत्ति है । इन प्रेमाख्यानकारो ने मानव की इस सर्वशक्तिमान् मूल वृत्ति का दमन नही किया है, वल्कि इसका खुलकर चित्रण किया है । यौन-प्रेम मे 'सेक्स' का प्रथम और प्रमुख स्थान है । विना सेक्स के यौन-प्रेम

---

१. रणसिंघ कुमार चौपई (ह. लि) श्री जैन श्वेताम्वर मन्दिर, अजमेर ।
२. विनयप्रभ कृत विद्याविलास (ह. लि) श्री जैन श्वेताम्वर मन्दिर, अजमेर ।

की कल्पना नही की जा सकती। काम और प्रेम के अन्तर को हम स्पष्ट करे तो हम कह सकते है कि काम एक मूल-वृत्ति है, जबकि प्रेम भाव-मूलक होता है किन्तु यौन-प्रेम में सेक्स और भावना दोनो का सम्मिश्रण होता है। हैवलॉक एलिस ने भी प्रेमी-प्रेमिका के शरीर, मन और आत्मा के तादात्म्य मे ही प्रेम की सत्ता स्वीकार करते हुए अपने ढग से लिखा है कि साधारण भोग वृत्ति (lust) और मैत्री के सश्लेषण को ही प्रेम समझा जाता है, किन्तु न तो सामान्य और अगूढ यौन-आकाक्षाओ को प्रेम कहा जा सकता है और न विविध प्रकार के मैत्री सम्बन्धो को। यह ठीक है कि भोग-वृत्ति विरहित यौन-प्रेम की कल्पना नही की जा सकती, किन्तु जब तक यह मनस-सघटनाओ को प्रभावित नही करता तब तक वह यौन-प्रेम के नाम से नही पुकारा जा सकता।[१] फ्रैंड लेडर भी यौन-प्रेम सेक्स की मात्रा का माप करते हुए यौन-प्रेम मे सेक्स से अधिक सवेदनशीलता एव भावना को स्थान देते हुए भी सेक्स को यौन-प्रेम का सर्वाधिक आकर्षक-कारण मानते हैं।[२]

---

१. (क) रीतिकालीन कवियो की प्रेम-व्यजना—डा० बच्चन सिंह पृ स. ६६।

(ख) Love in the sexual sense is summarily considered a synthesis of lust (in the primitive and uncloured sense of sexual desire) and freindship, it is in correct to apply the term love in the sexual sense to elementry and uncomplicated sexual desire, It is equally incorrect to apply in to any variety or combination of varieties of friendship, there can be no sexual love without lust on the other hand, until the currents of lust in the organism have been so irradicated as to effect other parts of the psychic-organism at the least the effection, and the social feelings it is not yet sexual love, lust, the specific sexual impulse, is indeed the piimary and essential elements in this synthesis.

Hevlock Elis—sex in relation to society. P. 86

२. Friend lander has wisely remarked that there is more sensuatity than sexuality in love, which after all means that sex is only small part of love. It is only after the various senses have reported to the centeral nervous system the presence of num-merous fetishes symbolising peace and safety, that the sex union is not only possible, but exteremely affective and creates a durable bound between two human beings

—The Erotic Motive Litt. से उद्धृत।

राजस्थानी के प्रेमाख्यानो में काम और प्रेम का सम्बन्ध इसी रूप मे चित्रित किया गया है। इन प्रेमाख्यानो मे 'काम' का निरावृत्त चित्रण होते हुए भी उसकी प्रवृत्ति सामान्योन्मुख नही होकर व्यक्ति-निष्ठ है। अत इनमे स्थूल काम व्यक्ति-निष्ठता के कारण भावनामय होकर सूक्ष्मतर होता गया है और प्रेम की एकनिष्ठता के कारण उसमे स्वार्थपरता के स्थान पर समर्पण की भावना आ गई है।

राजस्थानी प्रेमाख्यानो मे प्रेम और सौन्दर्य :

राजस्थानी प्रेमाख्यानो मे प्रेम प्रक्रिया का चित्रण करते हुए नेत्रो के बारे मे लिखा है —

> नयण पदारथ, नयन रस, नयणे नयन मिलत।
> अण जाण्या से प्रीतडी, पेहला नयण करत॥

इस दोहे मे एक अपरिचित व्यक्ति से प्रेम होने का कारण नेत्रो को बतलाया गया है। नेत्रो का मुख्य-व्यापार रूप-दर्शन होता है। नायक-नायिका जब प्रथम बार मिलते हैं तो वे एक दूसरे के रूप पर मुग्ध हो जाते है। प्रथम-मिलन की इस रूपासक्ति से नायक-नायिका मे काम-भावना जागृत होती है और इसी रूप और काम के मिश्रित स्वाद मे प्रेम के अकुर फूटते है। उदाहरणार्थ—पद्मावती के रूप को देखकर चित्रसेन की जो दशा होती है, उसका चित्रण लीजिए —

> जिम २ निरखै तेहने रे लाल, तिम तिम मन हरसाय।
> तिण ऊपरि चित्रसेन नो रे लाल, नयण रह्यो ललचाय॥
> तत् खिण देहि धर हरि रे लाल, परसे वे प्रछलाय।
> मग मोहिलो पर वस थयो रे लाल, कुमर पड्यो मुरझाय॥[1]

'कलावती चौपई' मे भी उल्लेख है कि कलावती के सुन्दर चित्र को देखकर राजकुमार सखकुमार उसके प्रेम मे पड जाता है। यथा—

> पाटो कुँवर ले हाथ मे, चित्राम निर्वल लागोरे।
> नख-सिख सुन्दरता सहु, जोता नैन है पग आगोरे॥
> काया तो कुँअर कने, मन कुँअरी जाय लागीरे।
> नाम रूप देखाकरी, जाग्यो अति ही काम रागी रे॥[2]

---

१ चित्रसेन पद्मावती रतनसार मत्री चौपई (ह लि) रा प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्र थाक ३८९७८।

२. कलावती चौपई (ह लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

'विद्याविलास' की नायिका सोहग सुन्दरी भी धनसागर के रूप को देखकर कामान्ध हो जाती है।

'कुमरी हुई कामाध, काल जा माहि कर करे रे, वहुत भाँति ना वाँध।"[१]

'वछराज चौपइ' मे तो उल्लेख है कि वछराज के रूप को देखकर सेठ-पुत्री उससे विवाह करने का सकल्प कर लेती है और पति रूप मे उसे प्राप्त नही कर पाने पर जोगण बन जाने की प्रतिज्ञा कर लेती है। यथा—

जो ऐहिज मुझ पति हुवेरे, तो ह्विवछु भोग।
नहि तरि इण भवि मुझ मणी रे, विरति करु धरि जोग रे॥[२]

इस रूप-सम्मोहन की पराकाष्ठा हमे 'कलावती चौपई' मे मिलती है। नायक सखकुमार के रूप को देखकर नगर की युवतियो की जो दशा होती है, उसका बडा मार्मिक, सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक चित्रण किया गया है —

"नार्या रो मन अस जयो, देखण कवर रो रूप।
मोह गेहली पदमण्या, कोई एक लागी लार॥
कर कतुहल कामणी, घरनी चिता मेल।
अण भावती आधी थरु, एक एक ने ठेल॥
भूली ग्रहणो पहरती, आधो कर सिणगार।
टोले टोले सामठी, देख कुँअर अनुहार॥
काकण काना पहरीया, कडिया द्वार उदार।
मोती तो खिर खिर पडे, वल है त्रुटा री सार॥[3]
के तो अलुणो राधने, के वली लुणा दो वार।
आध्यी माणो परुसने, दौडे तज भरतार॥

नायक के रूप-सम्मोहन के ऐसे व्यापक प्रभाव का चित्रण रणसिघ कुमर चौपई, उत्तम कुमार चरित्र चौपई एव 'माधवानल कामकन्दला-प्रेम' विषयक प्रेमाख्यानो मे भी मिलता है।

रूप की इस सम्मोहनकारी शक्ति के कारण ही राजस्थानी के इन प्रेमाख्यानकारो ने अपने काव्यो मे नायक-नायिकाओ के सौदर्य का बडा मर्म-स्पर्शी सूक्ष्म चित्रण रूप-रस में डूबकर किया है। इन प्रेमाख्यानो मे सौदर्य चित्रण

---

१. विनयप्रभ कृत विद्याविलास (ह लि) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्र थाक ८१५०।

२ विनयलाभ कृत बछराज चौपई (ह लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

३. कलावती चौपई (ह. लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

अधिकाश रूप ने विषयगत (Subjective) ही है। नायिका के मासल-सौंदर्य का बडा बारीकी से चित्रण किया गया है। इन कवियो की दृष्टि से नायिका का कोई भी अ ग ओझल नही हो पाया है। नायिका के नखशिख वर्णन की प्रणाली उन्हे परम्परागत रूप से मिली थी। उपमा, उत्प्रेक्षा अलकारो के माध्यम से सौंदर्य का आहलादकारी रूप खडा कर दिया गया है। यद्यपि रूप वर्णन मे इनके उपमान परम्परागत ही है, किन्तु चारणी प्रेमाख्यानो मे स्थानीय-उपमाये इनकी मौलिक सूझ की प्रतीक है। नायिका के मस्तक की उपमा नारियल से तथा उ गलियो की उपमा मू गफली से देना इसी कोटि मे आती है। रूप-चित्रण मे इन कवियो की मौलिक देन यह है कि इन्होने न केवल नारी का ही सौन्दर्य-चित्रण किया है, बल्कि पुरुष-सौदर्य का भी वडी कुशलता से चित्रण किया है जो न केवल राजस्थानी मे ही बल्कि हिन्दी काव्य मे भी महत्वपूर्ण स्थान रखता है। पुरुष-सौन्दर्य-चित्रण के यहाँ कुछ उदाहरण प्रस्तुत किये जा रहे हैं —

पुरुषा माहि रतन कि, दीसै एस ही रेहा।
कुमर रूप निहाल थकित कुमरी रही हो।
इम चितावतात सुनी, नयन निद्रा घुली रे हा।
मद्रीत हुआ नेणा कि जाणी पकज कली रे हा।[1]

यहाँ कवि ने सादृश्य-मूलक अलकारो के माध्यम से रूप के सूक्ष्म तत्वो को पकडने का सफल प्रयत्न किया है। इसी प्रकार माधव के रूप-चित्रण मे भी कवि ने उसके शारीरिक अवयवो का सश्लिष्ट चित्र वडी सूक्ष्मता से चित्रित किया है। यथा—

कदली गर्भ जिसी कया, मत्रवल रसी जेम।
मूरति को मोहन कला, विश्व वधारण प्रेम।
खू ध निस्या खूणे खवा, वेहू बाहू आजान।
मू गफली समी अ गूली, कर वरि बसइ निधान।
अणिवाला ऊँचा असह लोचनवली विशाल।
वहू अ तरि अलणी भमुहि, चन्द्र तपइ तिणि भालि।
पय तल पद्व प्रभाकरि, रत्न-कमल परिरग।
नख-निर्मल पाहन समी, अ गुली सम अ ग।[2]

---

१ विनयलाभ कृत वछराज चौपई (ह लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।
२ गणपति कृत माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध (गायकवाड ओरियन्टल सीरीज)

माधव के इस रूप को देखकर कामकन्दला का मुख-कमल प्रेम से खिल उठता है :—

माधव दीठइ मन ठरिउ, आँखि अमी पईठ।
वदन-कमल विकसि रह्या, चद चकोरी दीठ ॥[1]

उपर्युक्त विवेचन से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि इन प्रेमाख्यानकारो ने नरनारी के मासल-सौदर्य का मनमोहक वर्णन किया है। विशेष रूप से नारी के अंगो का उपमा, उत्प्रेक्षा आदि अलकारो के माध्यम से जैसा सूक्ष्म एव आह्लादकारी चित्रण किया गया है, वह इन कवियो की सूक्ष्म पर्यवेक्षण शक्ति, नवोन्मेषशालिका कल्पना-शक्ति का परिचायक है। इस सौन्दर्य-चित्रण मे सकल्पना (concept) की अपेक्षा ऐन्द्रीय-सवेदना अधिक मुखर हुई है। नायक-नायिकाओ के परस्पर आकर्षित होने का मुख्य आधार उनका सौदर्य ही है। एक दूसरे के सौन्दर्य पर मुग्ध होने से ही उनमे कामजनित सामीप्य की तीव्र अभिलाषा जाग्रत होती है और प्रेम का उद्रेक होता है। प्रथम दृष्टि के प्रेम (First sight-love) मे रूप-सम्मोहन ही मुख्य कारण होता है। इस प्रकार हम निस्सकोच पूर्वक कह सकते हैं कि यौन-प्रेम मे काम और सौन्दर्य का प्रमुख स्थान होता है, अत राजस्थानी के प्रेमाख्यानो की प्रेम-पद्धति के चित्रण मे काम और सौन्दर्य को महत्वपूर्ण स्थान मिला है।

* * *

---

१. वही, पृ. स. १०२।

पं
च
म
अध्याय

राजस्थानी प्रेमाख्यानों के पात्र

पं
च
म
अध्याय

राजस्थानी प्रेमाख्यानों के पात्र

राजस्थानी प्रेमाख्यानो मे विविध प्रकार के पात्र पाये जाते है। इनकी सृष्टि मुख्य पात्रो के चरित्र की उत्कर्षता वढाने के साथ ही घटना-क्रम के सफल सयोजन एव विकास के लिए तथा पाठको मे कुतूहल-वृत्ति जागृत करके रोचकता उत्पन्न करने के लिए की गई है। इन प्रेमाख्यानो में मानव, अमानव, देवी-देवता, राक्षस, किन्नर, भूत तथा जादुई पशु-पक्षी आदि विविध पात्रो की सृष्टि मिलती है। यहा लौकिक, अलौकिक, मानव, अमानव का भेद लुप्त होता हुआ दृष्टिगोचर होता है और पशु भी मानवीय गुणो को धारण करके बातचीत करते है, प्रेमियो का मार्ग-दर्शन करते है और सकट के समय सहायता भी करते है। ऐसा प्रतीत होता है कि इन प्रेमाख्यानो की सवेदनशीलता का विकास इस स्तर पर पहुच गया है कि उसकी परिधि मे मानव ही नही, मानवेतर शेष सृष्टि भी समाविष्ट हो गई है। इन प्रेमाख्यानो मे ऐसे भी पात्र पाये जाते है जो अपने प्रिय तोता के दुर्घटना-ग्रस्त हो जाने पर उसके वियोग को सह नही पाने के कारण प्राण विसर्जन तक कर देते है।[1] यह सवेदनशीलता प्राणी-जगत तक ही सीमित नही रही है, किन्तु जड-जगत तक इसका विस्तार मिलता है। नायक-नायिकाओ के सुख-दु ख मे प्रकृति भी हर्षित और दु खी होती हुई दिखलाई पडती है। नायिकाओ के प्रेम-सन्देश पहुचाने मे पवन और मेघ भी पीछे नही रहते। इससे प्रकट होता है कि समस्त विश्व मे एक ही विश्वात्मा की धडकन व्याप्त है। समस्त मानव और मानवेतर सृष्टि एक ही सूत्र से सम्बद्ध है।

इसके अतिरिक्त इन प्रेमाख्यानो मे सम्भव और असम्भव के बीच कोई रेखा टिक नही पाई है। माधव को इन्द्र की राजसभा मे नृत्य करती हुई जयती अप्सरा

---

१. कमलावती चौपई (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

की कचुकी मे भौरा बनकर बैठे रहने मे किसी प्रकार की कठिनाई का अनुभव नही होता है[1] और न किसी तम्बोलिन, मालिन या गणिका के द्वारा किसी राजकुमार को उसके रूप पर मुग्ध हो, उसे मेढा या तोता बना लेने पर ही।[2] मानवीय सम्बन्धो मे भी यहा राजा और निम्न जाति के व्यक्तियो के बीच अन्तराल दृष्टिगोचर नही होता। राजा विक्रमादित्य के घनिष्ठ मित्रो मे आगिया बैताल, खापरा चोर और कोडिया जवारी होता है[3], किन्तु इन निम्न सामाजिक स्तर के व्यक्तियो से मित्रता का निर्वाह कर राजा अपने राजत्व से गिर नही गया है, बल्कि प्रजा-रक्षक के रूप मे उसका गौरव और भी बढ गया है।

राजस्थानी प्रेमाख्यानो मे आये हुए इन समस्त पात्रो को हम मुख्य रूप से दो वर्गो मे विभक्त कर सकते है प्रथम, लौकिक-पात्र और द्वितीय अलौकिक-पात्र। लौकिक-पात्रो के भी दो वर्ग किये जा सकते हैं —

(क) मानव-पात्र और (ख) मानवेतर-पात्र।

(क) मानव-पात्रो के दो वर्ग मिलते है .—देवी शक्ति वाले मानव-पात्र और साधारण मानव-पात्र। साधारण मानव-पात्रो को हम दो वर्गो मे विभाजित कर सकते है। *यथा*—पुरुष-पात्र और स्त्री-पात्र। पुरुष-पात्रो मे नायक, प्रतिनायक, स्वामी-भक्त सेवक अथवा मित्र तथा अन्य पुरुष-पात्र आते हैं और स्त्री-पात्रो मे नायिका, प्रतिनायिका, सखी, दूती तथा अन्य-स्त्री-पात्र लिये जा सकते है।

(ख) मानवेतर-पात्रो के निम्नलिखित तीन वर्ग मिलते है। (१) पशु-पात्र (२) पक्षी-पात्र एव (३) प्रकृति के पात्र।

अलौकिक-पात्रो के भी दो-वर्ग मिलते है जिनमे—(क) दिव्य-पात्र और (ख) अदिव्य-पात्र सम्मिलित है। अलौकिक दिव्य-पात्रो मे देवी-देवता, यक्ष, किन्नर विद्याधर विद्याधरियाँ तथा अप्सराये आदि-पात्र आते है। अदिव्य-पात्रो मे राक्षस, दानव, भूत प्रेत व्यतरी आदि पात्र आते है।

---

१ कुशललाभ कृत माधवानल कामकन्दला चौपई (ह. लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

२. (क) लालजी हीरजी री बात (ह लि) राजस्थानी शोध-सस्थान, जोधपुर।
  (ख) उत्तम कुमार चरित्र चौपई, पृ. स १८४, १८५।
  (ग) विद्याविलास रास (ह लि) रा प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर। ग्रथाक ८१५०।

३. कुशललाभ कृत माधवानल कामकन्दला चौपई (ह. लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर।

वर्गीकरण
पात्र
(१) लौकिक–पात्र
(२) अलौकिक–पात्र
(क) मानव–पात्र
(ख) मानवेतर–पात्र
दैवी शक्ति वाले मानव–पात्र
साधारण मानव–पात्र
पुरुष–पात्र (नायक, प्रतिनायक, स्वामीभक्त-सेवक अथवा मित्र तथा अन्य)
स्त्री–पात्र (नायिका, प्रतिनायिका, सखी, दूती तथा अन्य)
(क) दिव्य–पात्र (देवी-देवता, यक्ष, किन्नर, विद्याधर, विद्याधरियाँ तथा अप्सरायें आदि)
(ख) अदिव्य–पात्र (राक्षस, दानव, भूत-प्रेत, व्यतरी आदि)
(१) पशु–पात्र
(२) पक्षी–पात्र
(३) प्रकृति के पात्र
१. वन-पशु
२. सामान्य पशु
३. मानवीय गुण वाले पशु
४. धर्मगाथा पशु
५. जादुई पशु
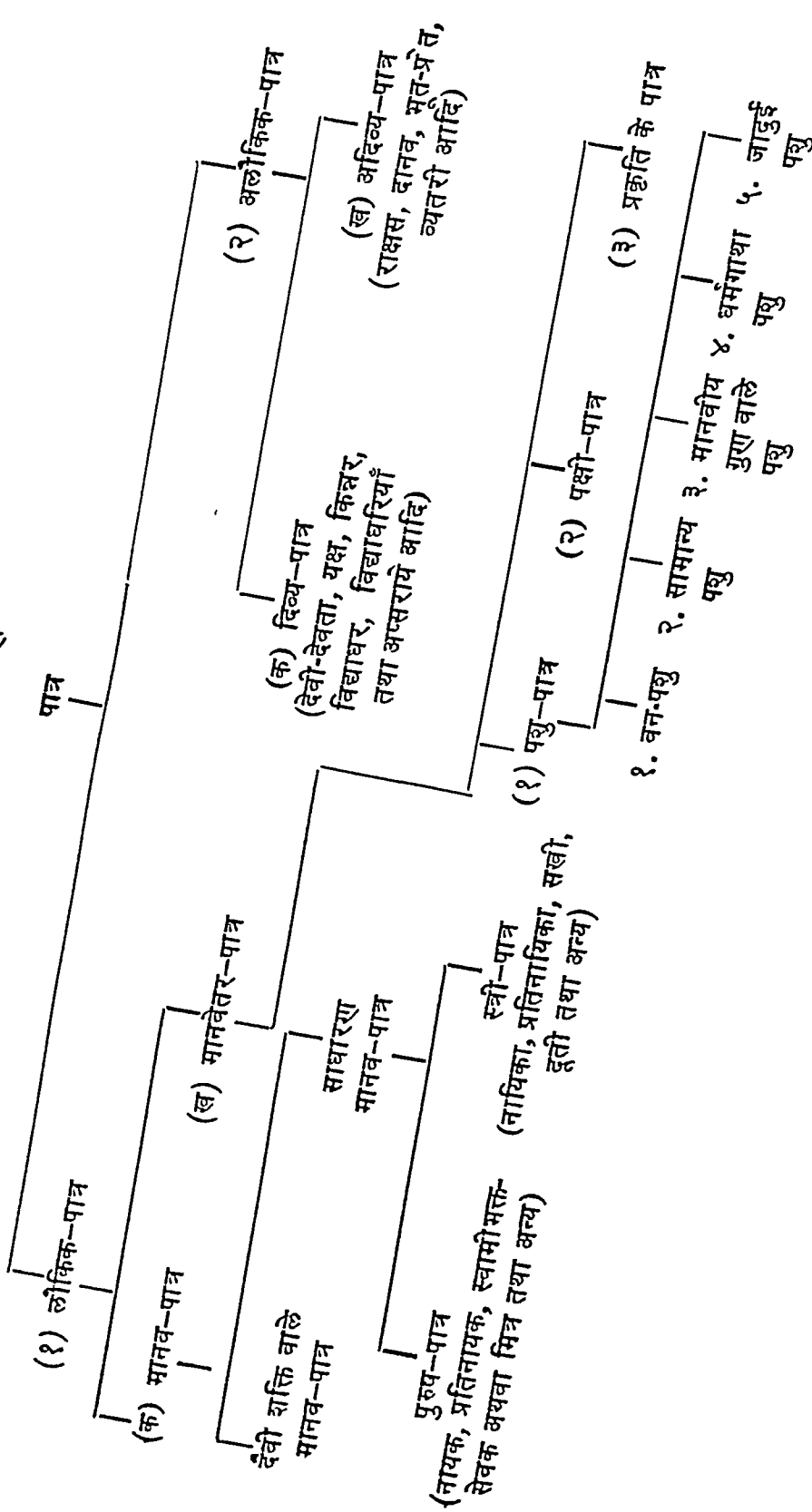
कथा में अलौकिक-पात्रों की सृष्टि का प्रयोजन :

राजस्थानी प्रेमाख्यानकारों ने अपनी रचनाओं में अलौकिक पात्रो की सृष्टि निम्नलिखित प्रयोजन से की है :—

(१) नायक-नायिका को सन्तानोत्पत्ति का वरदान देना।

(२) दुष्ट कर्म के लिए शाप देना।

(३) प्रेम-पथ के पथिकों की सकट के समय सहायता करने के लिए।

(४) नायक-नायिका या अन्य-पात्रो की परीक्षा लेने के लिए।

प्राय परीक्षाये तीन प्रकार की होती हैं। यथा—

(क) प्रेमी-प्रेमिका के सच्चे-प्रेम की परीक्षा।

(ख) नायक के साहस और धैर्य की परीक्षा।

(ग) नायक-नायिका के सत अथवा शील और धर्म की परीक्षा।

(५) कथा को सुखान्त बनाने के लिए प्रेमी-प्रेमिका की मृत्यु हो जाने पर उन्हे पुनर्जीवित करने के लिए।

(६) कथा मे कुतूहल और चमत्कार उत्पन्न करने के लिए।

अलौकिक दिव्य-पात्र

शंकर-पार्वती :

राजस्थानी प्रेमाख्यानो मे शंकर-पार्वती का स्थान प्रमुख रूप से पाया जाता है। 'ढोला मारू रा दूहा'[१], 'जलालदीन री वारता'[२], 'लालजी हीरजी री बात[३] प्रेमाख्यानो मे ये नायक-नायिका को एक दूसरे के वियोग में मर जाने पर पुनर्जीवित करते है। 'सदेवन्त सावलिगा के आठ-भवो की कहानी मे तृष्णातुर ब्राह्मण-दम्पत्ति के मरने पर पार्वती की प्रार्थना पर शिव उन्हे पुनर्जीवित करते है। इस कहानी मे ब्राह्मण दम्पत्ति द्वारा शिव मन्दिर मे शिवलिग को उखाडकर विषय-भोग करने पर शिव उन्हे शाप भी देते हैं।[४] 'माधवानल कामकन्दला चौपई' में उल्लेख है कि शिव की तपस्या भग करने के लिए प्रयत्नशील काम और रति को शाप दिया जाता

---

१. ढोला मारू रा दूहा (ना. प्र. सभा काशी) पृ. १५०।

२. जलालदीन री वारता (ह. लि,) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

३. लालजी हीरजी री बात (ह. लि.) राजस्थानी शोध सस्थान, जोधपुर।

४. सदेवन्त सावलिगा के आठ-भवो की कहानी (सदयवत्स वीर प्रबन्ध, सा. रा रिसर्च इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) प्रस्तावना, पृ. सं. (घ)।

है जिससे वे माधव और कामकन्दला के रूप मे जन्म लेते है।[1] शिव-पार्वती बडे दयालु देवता है। वे सच्चे प्रेमी-प्रेमिका का वियोग सहन नही कर पाते और समय पर पहुँचकर उनका मिलन करवाते है। 'गुलाबा भवरा री वारता' मे उल्लेख है कि अपने प्रिय के वियोग मे आत्म-हत्या को तत्पर गुलाबा को शिव-प्रकट होकर रोकते है तथा दोनो प्रेमियो का मिलन करवाते है।[2] अविवाहित कन्याये पार्वती की पूजा करके मनवाछित वर प्राप्त करती है।[3] 'महादेव पार्वती री वेलि' का तो कथानक ही शिव-पार्वती की जीवन-लीला से सम्बन्धित है।[4]

देवी :

इन प्रेमाख्यानो मे देवी के भी कई नाम मिलते है। कही वह वनदेवी है तो कही दुर्गा के रूप मे चित्रित है। चक्रेश्वरी देवी और हरसिद्धि माता आदि अनेक नाम मिलते है। हंसाउली-प्रेमाख्यान मे उल्लेख है कि मत्री मनकेसर देवी से चित्रकारिता का वरदान प्राप्त करता है।[5] 'सदयवत्स वीर प्रबन्ध' मे वर्णन है कि वनदेवी सदयवत्स के साहस और प्रेम-निष्ठा की परीक्षा लेती है।[6] 'माधवानल कामकन्दला चौपई' मे उल्लेख है कि राजा विक्रमादित्य द्वारा स्वय का सिर काट लेने के लिए तत्पर होने पर देवी माधव और कामकन्दला को पुनर्जीवित करके अपने भक्त की मनोकामना पूर्ण करती है।[7] 'मधुमालती' से विदित होता है कि मधु की सहायता के लिए 'दुर्गा' राजा की सेना को विध्वस करने के लिए अपना वाहन सिंह भेजती है।[8] 'पुण्यसार चौपई' मे उल्लेख है कि पुण्यसार द्वारा रत्नवती को प्राप्त

---

१. कुशललाभ कृत माधवानल कामकन्दला चौपई (ह लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

२. गुलावा भवरा री वारता (ह. लि) श्री राजस्थानी शोध-संस्थान, जोधपुर। ग्रथाक १७३५।

३. पना वीरमदे री वारता (ह. लि.) दादावाडी, अजमेर।

४ महादेव पार्वती री वेलि (सा रा रिसर्च इन्स्टीट्यूट, वीकानेर) स. रावत सारस्वत।

५ हसाउली (गुजरात वर्नाक्युलर सोसाइटी, अहमदाबाद)

६ सदयवत्स वीर प्रवन्ध (सा रा रिसर्च इन्स्टीट्यूट, वीकानेर) प्रस्तावना, पृ स. (घ)।

७ कुशललाभ कृत माधवानल कामकन्दला चौपई (ह. लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

८. भारतीय प्रेमाख्यान काव्य (डा० हरिकान्त श्रीवास्तव) पृ. स ४४०।

नही कर पाने पर जब वह आत्म-हत्या के लिए तत्पर हो जाता है तो कुलदेवी आकर उसे आत्म-हत्या करने से रोकती है।[1] 'उत्तम कुमार चरित्र चौपई' से विदित होता है कि 'वनदेवी' वन में उत्तम कुमार के सयम की परीक्षा लेती है और परीक्षा मे सफल होने पर उसे पुरस्कार मे बारह कोटि रत्न देती है।[2] लाखा कुलाणी प्रेमाख्यान मे उल्लेख है कि अपने वचन-पालन की प्रतिज्ञा पूरी करने के लिए लाखा जब अपनी जीभ काटने के लिए तत्पर हो जाता है तो देवी प्रकट होकर उसे रोक लेती है।[3] 'मृगलेखा चौपई' मे उल्लेख है कि चक्रेश्वरी देवी पत्नी से रुष्ट सागरदत्त को स्वप्न मे आकर अपनी पत्नी से मिलने का आदेश देते है।[4] 'श्री रूपसेन कुमार नो चरित्र' नामक प्रेमाख्यान मे वर्णन है कि राजकुमार रूपसेन देवी की आराधना करके वरदान मे जादुई वस्तुये प्राप्त करता है।[5] 'मलयसुन्दरी कथा' मे उल्लेख है कि चक्रेश्वरी देवी रानी की सहायता करती है।[6] 'चन्दन मलिया गीरी' से विदित होता है कि कुलदेवी राजा के स्वप्न में आकर उसे भावी-संकटों से सचेत करती है।[7]

देवता :

इन प्रेमाख्यानो मे देवताओ का विविध रूप मे उल्लेख मिलता है। कही वे कुलदेवता के रूप मे प्रकट होकर नायक की सकट के समय सहायता करते हैं, कही सामान्य देवता अथवा वन देवता के रूप में नायक के साहस और सयम की परीक्षा लेते है। 'पुरन्दर कुमार चौपई' मे उल्लेख कि देवता वन मे पुरन्दर कुमार के सयम और साहस की परीक्षा लेते है।[8] 'उत्तम कुमार चरित्र चौपई' मे उल्लेख है कि वनदेव वानर के रूप मे राजकुमार को आश्रय देता है।[9]

---

१. पुण्यसार चौपई (समयसुन्दर रासपचक · सा. रा. रिसर्च इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ स. १४२।
२. 'उत्तम कुमार चरित्र चौपई, पृ. स. १२४।
३. लाखा फुलारी री बात (ह. लि) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।
४. मृगलेखा चौपई (ह लि.) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।
५. श्री रूपसेन कुमार नो चरित्र, पृ. स. ३१।
६. मलयसुन्दरी कथा (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।
७. चन्दनमलिया गिरी री बात (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।
८. पुरन्दर कुमार चौपई (ह लि.) राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रंथाक ६४३७।
९. उत्तम कुमार चरित्र चौपई (सा. रा. रिसर्च इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृष्ठ स. १४८।

इन्द्र :

देवराज इन्द्र वैभव और ऐश्वर्य के अधिष्ठाता देवता के रूप मे चित्रित किया गया है। उसकी सभा मे अप्सराये नाटक एव नृत्य करती है। कुशललाभ कृत 'माधवानल कामकन्दला चौपई' मे उल्लेख है कि जयती अप्सरा इन्द्र के शाप से मृत्यु-लोक मे आकर शिला बन जाती है।[1] 'राजा गधर्वराज री वारता' मे वर्णन है कि गधर्वसेन नामक गधर्व इन्द्र के दरबार की अप्सरा से प्रेम करने के अपराध मे उसका कोप भाजन बनता है और इन्द्र उसे मृत्युलोक मे गधे के रूप मे जन्म लेने का शाप देता है।[2] 'नलाख्यान' मे उल्लेख है कि दमयन्ती के शील की परीक्षा के लिए इन्द्र भी अन्य देवताओ के साथ उसके स्वयबर मे गया था। इन प्रेमाख्यानो से विदित होता है कि इन्द्र का मुख्य कार्य कुपित होकर नायिकाओ को शाप देना तथा उनकी परीक्षाये लेना रहा है।

यक्ष :

इन प्रेमाख्यानो मे यक्ष एक 'क्रूर' देवता के रूप मे चित्रित किया गया है जो मानव का भक्षण करने वाला है। किन्तु, नायक-नायिकाओ के लिए इनका चित्रण सहायक के रूप मे ही हुआ है। 'मृगावती रास' मे यक्ष, नगर निवासियो का बारी-बारी से भक्षण करता है, किन्तु चित्रकार के द्वारा प्रसन्न कर लिये जाने पर नगर निवासियो का भक्षण करना छोडकर उसे चित्रकारिता मे प्रवीणता प्राप्ति का वरदान देता है।[3] 'रतनपाल रतनवती रास' मे उल्लेख है कि यक्ष के वरदान से जिणदत्त के पुत्र का जन्म होता है।[4] 'बछराज चौपई' मे वर्णन है कि यक्ष राजकुमार की अनेक प्रकार से सहायता करता है।[5]

किन्नर .

'किन्नर' का वर्णन एक दो प्रेमाख्यानो मे ही मिलता है। 'मृगावती रास' मे उल्लेख है कि उदयन को किन्नर-लोक में वीणा प्रदान की जाती है।[6]

---

१. कुशललाभ कृत माधवानल कामकन्दला चौपई (ह. लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

२. राजा गधर्व सेन री वारता (ह लि.) सरस्वती भण्डार, उदयपुर।

३ समय सुन्दर कृत मृगावती रास (ह. लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

४. रतनपाल रतनावती रास (ह. लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

५. वच्छराज चौपई (ह. लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

६ मृगावती रास (ह लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

गधर्व :

'वारता गधर्व सेरण री' मे वर्णन है कि गधर्वसेरण नामक गधर्व इन्द्र के शाप से मृत्यु-लोक मे आकर गधे का जन्म लेता है।[1] कुशललाभ कृत 'माधवानल कामकन्दला' मे भी उल्लेख है कि माधव पूर्व जन्म मे गधर्व था।[2]

विद्याधर और विद्याधरियां :

राजस्थानी जैन प्रेमाख्यान विद्याधर, विद्याधरियो के विविध क्रिया-कलापो से भरे पडे है। ये नायक-नायिकाओ के प्रेम-पथ मे सहायक ही नहीं होते, वल्कि कई विद्याधरियो से इन प्रेमाख्यानो के नायको ने विवाह भी किये है। 'वछराज चौपई' से विदित होता है कि राजकुमार वछराज स्वर्ण चूला और रत्न चूला नामक विद्याधरियो से विवाह करता है और वे दोनो शील धर्म का पालन मानवी-पात्रो की भाति ही करती है।[3] विद्याधरिया अधिकतर कौतुक-प्रिया के रूप मे ही चित्रित की गई है। नाट्य-कला में ये प्रवीण होती है और अपनी दैवी-माया से रूप-परिवर्तन करके भ्रमण करने निकलती हैं। 'पुरन्दर कुमार चौपई' मे वर्णन है कि राजकुमार पुरन्दर वन मे विद्याधरी को वन्धन से मुक्त करता है तथा प्रतिदान मे अनेक विद्याये प्राप्त करता है।[4] 'गजसिंह कुमार चरित्र' मे उल्लेख है कि वन मे सोते हुए राजकुमार को विद्याधरी रमरण के लिए ले उडती है। राजकुमार विद्याधर राजा की कन्या से विवाह भी करता है।[5] 'मलय सुन्दरी कथा' मे उल्लेख है कि विद्याधरी रानी चम्पक माला को काष्ठ के खोल मे वन्द कर पानी मे वहा देती है।[6]

अप्सरायें :

इन प्रेमाख्यानो मे अप्सराओ का चित्रण भी कम नही मिलता है। 'माधवानल कामकन्दला आदि प्रेमाख्यानो की नायिकाये तो पूर्व जन्म मे अप्सराये ही होती हैं। ये अधिकतर देवराज इन्द्र की सभा मे नर्तकिया होती है। अपने अनुपम रूप और नृत्य-कला के लिए प्रसिद्ध होती है। स्वच्छद-प्रेम की ओर इनकी ललक अधिक

---

१ वारता गधर्व सेरण री (ह लि) सरस्वती भण्डार, उदयपुर।

२. कुशल लाभ कृत माधवानल कामकन्दला चौपई (ह. लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

३. बच्छराज चौपई (ह लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

४ पुरन्दर कुमार चौपई (ह. लि) रा. प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।

५ गजसिंह कुमार चौपई (ह लि.) रा प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।

६. मलय सुन्दरी कथा (ह लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

होती है। अत: कभी-कभी इन्द्र के दरबार की मर्यादा भग कर प्रेम करने के अपराध मे इन्हे शापित होकर मृत्यु-लोक मे जन्म लेना पडता है। मृत्यु-लोक का मानव इनके रूप को देखकर मुग्ध होता रहा है और प्रणय-याचना करता रहा है। कभी-कभी मानव की प्रणय याचना को स्वीकार करके कुछ शर्तों पर यह उसके साथ विवाह के बन्धन मे बध जाती है, किन्तु शर्त भग हो जाने पर अपने प्रेमी को वियोग मे तडपता छोडकर पुनः स्वर्ग मे चली जाती है।[1] मानव की अप्सरा से यौन-सम्बन्धी कथानक रूढि का प्रयोग नायक का अलौकिक जन्म दिखलाने के लिए भी किया गया है। 'लोक देवता' पाबूजी का जन्म भी धाधलजी तथा अप्सरा के प्रणय-बन्धन के फलस्वरूप हुआ था।[2] 'राजा विजेराज री वारता' मे उल्लेख है कि अप्सरा राजा पर मोहित होकर उसे स्वर्ग मे ले जाती है।[3] 'कुँवर भूपतसेण री वारता' मे वर्णन मिलता है कि एक अप्सरा राजकुमार को 'अद्भुत् सफेद जानवर' उससे विवाह करने की शर्त पर देती है।[4]

अन्य देव-पात्र

इन प्रेमाख्यानो मे ब्रह्मा, विष्णु, भगवान् रामचन्द्र, कृष्ण आदि भी पात्रो के रूप मे यत्र-तत्र चित्रित किये गये है। 'वेलि क्रिसन रुक्मणि री' 'महादेव पार्वती री वेलि तथा 'उषाहरण' आदि प्रेमाख्यानो मे तो इन देवताओ की लीलाओ का वर्णन किया गया है। मधुमालती मे उल्लेख है कि राजा से युद्ध के समय माधव की सहायता के लिए श्री कृष्ण मारुड पक्षी भेजते है।[5] 'माधवानल कामकन्दला चौपई' मे वर्णन है कि भगवान् विष्णु प्रोहित को स्वप्न मे पुत्र-जन्म का वरदान देते है।[6] 'लालाजी हीरजी री बात मे' वर्णन मिलता है कि रात्रि को रामचन्द्र जी का एक वृक्ष के नीचे दरबार लगता है। रामचन्द्र जी की गोद मे बैठे हुए लालजी को

---

१. वीरमदे सोनीगरा री बात (ह लि) रा. प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।
२ धाधलजी और अप्सरा री वात (राजस्थान-भारती, जून १९५०) डॉ० कन्हैयालाल सहल का लेख, पृ स १९।
३ राजा वीजेराज री वारता (ह लि) सरस्वती भण्डार उदयपुर।
४ कुँवर भूपतसेण री वारता (ह लि) सरस्वती भण्डार उदयपुर।
५ चतुर्भुज कृत मधुमालती (काशी ना प्र सभा सम्पादक—डा. माता प्रसाद गुप्त।
६ कुशल लाभकृत माधवानल कामकन्दला चौपई (ह लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

उनकी प्रेमिका हीर जी अपने नृत्य से रामचन्द्र जी को प्रसन्न कर पुरस्कार के रूप मे प्राप्त कर लेती है।[1]

कामदेव :

इन प्रेमाख्यानो मे कामदेव का प्रमुख स्थान है। नायक नायिकाये प्रणय-सूत्र मे बन्धते समय कामदेव को साक्षी बनाते है। 'मदनशतक' में उल्लेख है कि कामदेव ही मदनकुमार को स्वप्न मे आकर देशाटन के लिये कहता है।[2] इन प्रेमाख्यानो मे कामदेव प्रेम-देवता के रूप में चित्रित किया गया है।

नागकुमार :

वैभव, ऐश्वर्य और अलौकिक शक्तियो से सम्पन्न नागकुमार पाताल लोक का वासी है। मृगावती रास से विदित होता है कि वह उदयन की सहायता करता है तथा उसे पाताल लोक में लेजाकर उसे वीणा-वादन सिखलाता है।[3] 'सिहल सुत चौपई' मे वर्णन है कि नागराज राजकुमार की सहायता करता है।[4]

अदिव्य-पात्र

दानव और राक्षस :

इन प्रेमाख्यानो मे दानव और राक्षसो की सृष्टि नायक के अद्भुत साहस और शौर्य की परीक्षा के लिए की गई है। ये पात्र क्रूर, भयकर और अलौकिक शक्ति और ऐश्वर्य से सम्पन्न, महाकाय प्राणियो के रूप में चित्रित किये गये है। कुपित होकर नगर उजाड देना इनकी चुटकी का खेल है। इनके चुगल मे कोई रूपवती राजकुमारी अथवा अप्सरा होती है और प्रेमाख्यान का नायक अपना अद्भुत साहस और शौर्य दिखलाकर, इन दानव अथवा राक्षसो को मार कर राजकुमारी अथवा अप्सरा को इनके चुंगल से मुक्त करता है। तत्पश्चात ये रूपवती राजकुमारियाँ या अप्सराये अपने उद्धारको के प्रणय-बन्धन मे बध जाती है। निहालदे सुलतान के पवाडे मे उल्लेख है कि दानव और सुलतान मे द्वन्द्व युद्ध होता है जिसमे सुलतान की विजय होती है।[5] 'मलय सुन्दरी कथा' में उल्लेख है कि राक्षस रानी चम्पकमाला

---

१. लाल जी हीरज री बात (ह. लि.) राजस्थानी शोध-सस्थान, जोधपुर।
२. मदनशतक (ह. लि.) अनूप सस्कृत लाइब्रेरी बीकानेर।
३. समयसुन्दर कृत मृगावती (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।
४. सिंहलसुत (सा. रा. रिसर्च इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) प्रस्तावना पृ. स. ६।
५. निहालदे सुलतान के पवाडे (मरु-भारती–अप्रेल १६५८) स. डा०. कन्हैयालाल सहल।

का हरण कर लेता है। इसी कथा मे राक्षस द्वारा नगर को उजाडने का भी उल्लेख मिलता है। 'कुँवर भूपत सेण री वारता' मे भी राजकुमार द्वारा राक्षस को मार कर उसके चुगल मे फँसी हुई राजकुमारी का उद्धार करता है तथा उससे विवाह कर लेता है।[1] 'कमलावती चौपई' और 'उत्तमकुमार चरित्र चौपई' के नायक राक्षसो को मार कर उनकी सुन्दरी कन्याओ से विवाह कर लेते हैं।[2] सदयवत्स वीर-प्रबन्ध मे उल्लेख है कि पूर्व-भव के वैर का बदला लेने के लिए राक्षस, राजा की नगरी उजाड देता है।[3] 'बछराज चौपई' से विदित होता है कि राजकुमार राक्षस के चुगल से राजकुमारी को मुक्त करता है।[4]

भूत-प्रेत :

ये दुष्टात्माये है और मनुष्य को पीडा पहुँचाने की चेष्टाओ मे रत दिखलाये गये है। 'कुँवर चित्रसेन री वारता' मे उल्लेख है कि राजकुमार सयोग से भूतो की नगरी मे पहुँच जाता है और वहाँ अपना शौर्य-प्रदर्शित करके भूत की कन्या से विवाह करके लौटता है। इस वार्ता मे झटाका नामक प्रेत का साहूकार की बहू के साथ रमण करने का उल्लेख भी मिलता है।[5] 'बछराज चौपई' मे उल्लेख है कि राजकुमार श्मशान मे जाकर भूतो की अद्भुत क्रीडाये देखता है।[6]

बैताल :

राजा विक्रमादित्य का सहायक मित्र आगया बैताल 'विक्रम चक्र की कथाओ' मे अपने मित्र राजा की सहायता करने के लिए प्रसिद्ध है। अन्य प्रेमाख्यानो मे वह शव मे प्रविष्ट होकर अनेक कौतुक दिखलाता हुआ चित्रित किया गया है। 'सदयवत्स वीर प्रबन्ध' मे उल्लेख है कि वह शव मे प्रविष्ट होकर सदयवत्स को जुआ खेलने के लिए आमन्त्रित करता है।[7] 'मलया सुन्दरी कथा' मे भी वर्णन है

---

१ कुँवर भूपत सेण री वारता (ह लि) सरस्वती भण्डार, उदयपुर।

२ (क) कमलावती चौपई (ह लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।
(ख) उत्तमकुमार चरित्र चौपई (विनयचन्द्र कृति कुसुमाजलि, सा रा रि. इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ स. १३८।

३ सदयवत्स वीर प्रबन्ध, (सा रा. रि इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) प्रस्तावना, पृ. स (च)।

४. बछराज चौपई (ह लि) श्री जैन श्वेताम्वर मन्दिर, अजमेर।

५. कुँवर चित्रसेन री वारता (ह लि) सरस्वती भण्डार, उदयपुर।

६. बछराज चौपई (ह. लि) श्री जैन श्वेताम्वर मन्दिर, अजमेर।

७. सदयवत्स वीर-प्रबन्ध, पृ स ९६।

कि वह शव मे प्रविष्ट होकर महाबल के साहस की परीक्षा लेता है। मृत चोर के शव मे प्रविष्ट होकर वैताल रानी वीरमती की नाक खा जाता है।[१]

बावन वीर :

'बावन वीर' भी राजा विक्रमादित्य के सहायको के रूप मे प्रसिद्ध रहे है। ये अदिव्य पात्रो की श्रेणी से कुछ उच्चकोटि के हैं, क्योकि इनके कार्य नायक के लिए सहायक ही सिद्ध होते है और इनकी वृत्ति भी अनिष्टकारी के रूप मे चित्रित नही मिलती। 'हसाउली' प्रेमाख्यान मे राजकुमार हस बावन वीरो के साथ दडी का खेल खेलकर उन्हे हरा देता है।[२] 'सदयवत्स वीर प्रबन्ध' मे बावन वीरो का उल्लेख मिलता है।[३]

व्यतरी, सिकोतरी एव खेस्वी :

ये भी दुष्टात्माओ के रूप मे चित्रित की गई है तथा निम्नस्तरीय कौतुक-क्रीडाओ मे निरत रहती हैं। इनकी सन्तुष्टि अन्य प्राणियो को पीडा पहुँचाने मे ही होती है। 'वछराज चौपई' मे उल्लेख है कि एक व्यतरी सुन्दर स्त्री का रूप बनाकर श्मशान मे रोती है और जब राजकुमार वछराज उसकी सहायता के लिए पहुँचता है तो वह उसकी पीठ पर चढकर सूली पर लटके हुए शव का माँस खाती है।[४] 'मलय सुन्दरी कथा' से विदित होता है कि वह रानी का लक्ष्मीपुज हार चुरा लेती है।[५] 'सदयवत्स वीर प्रबन्ध' मे उल्लेख है कि एक सिकोतरी ब्राह्मण कन्या को पीडा पहुँचाती है जिसे राजकुमार सदयवत्स उससे मुक्ति दिलवाता है।[६] 'गजसिह कुमार चरित्र' मे भी वर्णन है कि एक खेस्वी जगल मे स्त्री बनकर सुन्दर स्त्री का रूप बनाकर वन मे रोती है। राजकुमार उसका हाथ अपनी तलवार से काट देता है।[७]

---

१. मलय सुन्दरी कथा (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।
२ हसाउली (गुजरात वर्नाक्यूलर सोसाइटी, अहमदाबाद) सम्पादक—प० केशवराम काशीराम शास्त्री।
३. सदयवत्स वीर प्रबन्ध (सा. रा रि. इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ स. ८६।
४. वछराज चौपई (ह लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।
५. मलय सुन्दरी कथा (ह लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।
६. सदयवत्स वीर प्रबन्ध, स. ६७७ पृ. स ६५।
७. गजसिंह कुमार चरित्र (ह. लि) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।

मानवेतर-पात्र

मानवेतर-पात्रो मे पशु, पक्षी, मेघ, पवन आदि का चित्रण किया गया है। सभ्यता के आदिम युग से ही मानव का पशु पक्षियो से निरन्तर साहचर्य रहा है। वन्य-पशुओ से उसका सघर्ष रहा है और पालतू-पशु-पक्षी उसके जीवन-यापन को सुलभ बनाते रहे है। ये पशु-पक्षी मानव-जीवन के क्रिया-कलापो मे सहायक रहे हैं। यदि इन पशु-पक्षियो का सहयोग हमारे जीवन मे न हो तो हमारा लोक-जीवन सर्वथा शून्य हो जाता। ये पशु-पक्षी न केवल हमारे खान-पान, यातायात, हमारे कृषि-जीवन आदि की समस्याओ को सुलभ बनाने मे सहयोग देते रहे है, वल्कि जीवन के एकान्त क्षणो मे नायक-नायिकाओ का दिल भी वहलाते रहे है और सुख-दुख के साथी भी रहे है। वियोग मे सतप्त नायिका अपने जी का भार हलका करने के लिए किसी तोता या मैना से अपना दुख दर्द कहती है। मानव और पशु-पक्षियो के बीच मे सहानुभूति का यह आदान-प्रदान चिरकाल से चला आरहा है, अत. आदि कवि कालीदास की रचनाओ से लेकर आज तक के साहित्य मे पात्रो के रूप मे पशु-पक्षियो के चित्रण का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। पशु-पक्षी और शेप प्रकृति भारतीय वाङ्गमय मे उपदेश का माध्यम भी रही है। जातक-कथाओ मे अधिकाश उपदेशात्मक कहानियाँ पशु-पक्षियो को पात्र वनाकर कही गई है। पच-तत्र, हितोपदेश आदि मे पशु-पक्षी महत्वपूर्ण पात्रो के रूप मे चित्रित किये गये हैं। न केवल भारतीय साहित्य मे ही, किन्तु विश्व साहित्य मे भी पशु पक्षियो के चित्रण का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। मध्यकालीन लोक-सस्कृति मे तो इनका स्थान इतना महत्वपूर्ण रहा है कि बहुत से कथा-ग्र थो के नाम, यथा — 'शुकवुहोत री' आदि, पक्षियो के नाम पर ही रखे गये। राजस्थान के लोक-जीवन मे तो कोयल, पपैया, सूवा (तोता) कुरजा आदि नामो से अनेक स्वतत्र गीत भी गाये जाते हैं। मध्यकालीन प्रेमगाथात्मक साहित्य मे भी इन पक्षियो का वडा हृदय-स्पर्शी वर्णन हुआ है।

पशु :

राजस्थानी प्रेमाख्यानो मे मुख्यत पाँच प्रकार के पशु मिलते हैं—वन्य पशु, सामान्य पशु, मानवी गुण वाले पशु, धर्मगाथा के पशु और जादुई पशु।

वन्य-पशु

सिंह

वनराजसिह का लोक-कथाओ मे महत्वपूर्ण स्थान रहा है। 'देवचरित्र' मे उल्लेख है कि पृथ्वीराज के शासन मे सिंह का आतक होने से नगर से एक व्यक्ति नित्य उसकी भेट के लिए भेजा जाता है। हरीराम चहुाण की जब बारी आती है तो वह सिंह को अपनी वहादुरी से मारकर नगर निवासियो का सकट दूर करता

है ।[१] 'मृगलेखा चौपई' में उल्लेख है कि सिंह वन में से निकलती हुई सती मृगलेखा को उसके सत के प्रभाव से नमस्कार करता है ।[२] 'वगडावता री बात' मे वर्णन है कि सिंहनी वालक देवनारायण को अपना दूध पिलाती है ।[३]

हरिन :

हरिन, जहाँ एक ओर अपनी चपलता एव सुन्दर नेत्रो के लिए मन को लुभाता रहा है, वहाँ वह अहेरियो के आखेट का भी मुख्य-लक्ष्य रहा है। प्राचीनकाल से ही 'मृगया का खेल' राजपुत्रो और सामन्तो के मनोरजन का साधन रहा है। मृग के पीछे राजकुमार का घोडा दौडाना तथा किसी सघन वन मे पहुँच जाने पर प्यास लगना तथा पानी खोजते समय किसी सुन्दरी के चित्र को देखकर मुग्ध हो जाना अथवा सुन्दरी का मिलन हो जाने पर उसके प्रणय-सूत्र मे बध जाना, लोक-कथाओ की एक सामान्य कथानक-रूढि होगई है। 'कुँवर चित्रसेण री वात' मे उल्लेख है कि राजकुमार चित्रसेन कस्तूरिया हरिन के पीछे घोडा डालकर भूतो के नगर मे पहुँच जाता है और वहाँ भूतो की सुन्दरी-कन्या से विवाह करता है ।[४]

'राजा सिद्धराज और अप्सरा री वात' मे भी उल्लेख है कि राजा हरिन का पीछा करता हुआ एक मन्दिर मे मे पहुचता है जहा उसे अप्सरा मिलती है ।[५] 'निहालदे सुलतान के पवाडे' मे वर्णन है कि राजा हरिन का पीछा करता हुआ गोरखनाथ की गुफा मे पहुचता है ।[६] 'हसाउली' प्रेमाख्यान मे उल्लेख है कि पटरानी द्वारा राजकुमार हस की आखे निकलवाकर मगवाने पर मत्री राजकुमार की आखो के स्थान पर हरिन की आँखे लाकर दे देता है ।[७] सदेवन्त सावलिंगा के आठ भवो की कहानी मे हरिन-हरिनी के सच्चे प्रेम की अन्तर्कथा वर्णित है ।[८]

---

१. नाथ कवि कृत देव चरित्र (ह लि.) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर ।

२. मृगलेखा चौपई (ह. लि) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर ।

३. बगडावता री बात (ह. लि) राजस्थानी शोध सस्थान, जोधपुर ।

४. कुँवर चित्रसेन री वारता (ह. लि.) सरस्वती भण्डार, उदयपुर ।

५. राजा सिद्धराज और अप्सरा री बात (ह. लि.) सरस्वती भण्डार, उदयपुर ।

६. निहालदे सुलतान के पवाडे (मरु-भारती अप्रेल १९५८) स. डा० कन्हैयालाल सहल ।

७. हसाउली (गुजरात वर्नाक्यूलर सोसाइटी, अहमदाबाद) सम्पादक—प० केशवराम काशीराम शास्त्री ।

८. सदेवत सावलिंगा के आठ भवो की कहानी (सदयवत्स वीर प्रबन्ध, सा. रा. रि. इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) प्रस्तावना, पृ. स. (न) ।

'लाखा फुलाणी री बात' से विदित होता है कि वर्षा को रोकने के लिए महाजन लोग हरिन के सीगो मे मन्त्रित-पत्र बाधकर छोड देते हैं ।[१] इस प्रकार हम देखते है कि इन प्रेमाख्यानकारो ने हरिन-पात्र की सृष्टि करके कथा के घटना-क्रम का सयोजन किया है तथा कथानक के विकास मे भी इसका उपयोग किया गया है ।

बाघ :

यह एक भयानक हिंस्र-पशु है। 'सदेवन्त सावलिगा के आठो भवो की कहानी' मे इसका उल्लेख मिलता है जहा वह एक राजकुमार को मारकर खा जाता है ।[२]

सामान्य सहायक-पशु

ऊँट :

राजस्थान के रेगिस्तानी-जीवन में 'करहा' अर्थात् ऊँट का महत्वपूर्ण स्थान है। यह रेगिस्तान का जहाज कहलाता है। 'ढोला मारू काव्य' मे इसका मार्मिक चित्रण मिलता है। ऊमर सूमरा के षड्यन्त्र से बचने के लिए ढोला मारू ऊँट पर चढकर ही भागते हैं और अपने प्राण बचाते है ।[३] 'मूमल महिंदरा री बात' मे भी उल्लेख है कि महेन्द्र अपनी प्रियतमा मूमल से नित्य रात्रि को ऊँट पर बैठकर जाया करता था और प्रात होने से पूर्व लौट आता था ।[४] 'विद्याविलास रास' मे भी उल्लेख है कि नायक-नायिका दोनो ही साडनी पर बैठकर घर से भाग निकलते हैं ।[५]

घोडा :

राजस्थानी के इन प्रेमाख्यानो से विदित होता है कि घोडा भी सवारी का प्रमुख साधन था। कई प्रकार के घोडे प्रसिद्ध थे। 'ढोला मारू रा दूहा' मे उल्लेख है कि मालवणी से ढोला मुलतानी जाति के घोडे लाने की कहता है ।[६] 'चन्द्र लेहा चौपई' मे भी उल्लेख है कि सेठ-पुत्री चन्द्र लेहा के पास 'अश्व रत्न' जाति का घोडा

---

१. लाखा फुलाणी री बात (ह. लि.) रा. प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर ।
२. सदेवन्त सावलिगा के आठ भवो की कहानी, प्रस्तावना पृ. स. (द) ।
३. ढोला मारू रा दूहा (काशी नगरी, प्रचारिणी सभा) पृ स. १५४ ।
४. मूमल महेन्द्रा री बात (ह. लि.) रा प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर ।
५. विद्याविलास रास (ह लि) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर ।
६. मुलताणी घर मन वसी, सुहँगा नह सेलार ।
हरिणाखी, हसि नइ कहई, आणउ' हेडि तुखार ॥२२६॥
— ढोला मारू रा दूहा (काशी, ना. प्र. सभा) ।

था। 'अश्व रत्न' जाति के घोडे बहुत मूल्यवान् होते थे।[१] 'हसाउली' प्रेमाख्यान मे वर्णन है कि राजकुमार वछराज को साहूकार घोडे चराने के काम पर रखता है।[२] 'हसाउली विक्रम चरित्र' मे विवाह से विदित होता है कि राजकुमारी पुरुप वेश मे घोडे पर सवार होकर अपने घर से निकल पडती है।[३] 'चन्द्रराज चरित्र' मे उल्लेख है कि घोडे के सोदागर द्वारा प्रदत्त घोडे पर जब राजकुमार वैठता है तो वह उसे लेकर वन मे भाग जाता है जहाँ उसे जोगी के चुगल मे राजकुमारी मिलती है।[४] 'महादेव पार्वती री वेलि' मे वर्णन है कि राजा सागर के अश्वमेघ यज्ञ का घोडा मृत्यु-लोक से स्वर्ग और पाताल मे भ्रमण करता है तथा इन्द्र के द्वारा कपिल मुनि के आश्रम मे वाध दिया जाता है।[५]

हाथी :

प्राचीनकाल मे हाथी राज सवारी के लिए उपयोग मे लाया जाता था। 'सदयवत्स वीर प्रवन्ध' में उल्लेख है कि जयमगल नामक राज हाथी को मार देने पर सदयवत्स को देश निकाले का दण्ड मिला था।[६] 'पुष्पसेन पद्मावती री वात' मे उल्लेख है कि पुष्पसेन पागल हाथी को वश मे करके कनकसेन राजा का कृपा-पात्र वन जाता है।[७] 'प्रेमविलास प्रेमलता' नामक प्रेमाख्यान से विदित होता है कि राजा के निस्सतान मर जाने पर देवदत्त नामक राज हाथी द्वारा प्रेमविलास पर मगल-कलश उँडेलने पर उसे राजा के पद पर निर्वाचित कर लिया जाता है।[८]

कुत्ता :

भारतीय लोक-जीवन मे कुत्ता खेत और घर की रखवाली के लिए महत्वपूर्ण पशु रहा है। यह स्वामीभक्त पशु के रूप मे भी प्रसिद्ध रहा है। राजस्थानी के

---

१. चन्द्र लेहा चौपई (ह लि) रा प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।

२ हँसाउली (गुजरात वर्नाक्यूलर सोसाइटी, अहमदाबाद) सम्पादक–प० केशवराम काशीराम शास्त्री।

३. हँसाउली विक्रम चरित्र विवाह, प्रकाशक–श्री फार्वस गुजराती सभा, वम्बई, (१९३५)।

४ चन्द्रराज चरित्र (ह, लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

५ महादेव पार्वती री वेलि (सा रा. रिसर्च इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ स ९१०।

६ सदयवत्स वीर प्रबन्ध (सा. रा रि. इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ. स. १०१६।

७ पुष्पसेन पद्मावती री बात (ह लि.) रा प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।

८. प्रेमविलास प्रेमलता कथा · भारतीय प्रेमाख्यान काव्य, (डा० हरिकान्त) पृ स. २८९।

एक दो प्रेमाख्यानो को छोडकर इसका उल्लेख बहुत कम मिलता है। लालजी हीरजी री बात मे उल्लेख है कि भूखे कुत्ते को रोटी खिलाने से पुण्य मिलता है। लालजी जैसे भाग्यशाली पुत्र का जन्म भूखे कुत्ते को रोटी खिलाने पर ही होता है।[१]

मानव-गुण वाले पशु

राजस्थान के इन प्रेमाख्यानो मे ऐसे पशुओ का भी वर्णन मिलता है जो योनि से तो पशु है, पर मन, वाणी, बुद्धि से मानव गुण वाले हैं। ऐसे पशु पूर्व जन्म मे मानव ही थे, किन्तु अपने कर्म-फल के प्रभाव से या श्राप से पशु-योनि को प्राप्त हो गये। 'महादेव पार्वती री वेलि' मे समस्त वन-पशुओ का मानव-वाणी मे बोलने का उल्लेख है।[२]

बन्दर-बन्दरी :

'सदेवन्त सावलिगा के आठ भवो की कहानी' मे बन्दर-बन्दरी की कथा वर्णित है जिनका आचरण मानव जैसा है।[3] श्री रूपसेन कुमार नो चरित्र मे भी उल्लेख है कि राजकुमार जादुई घुटके से बन्दर बन जाता है और राजकुमारी के महल मे जाकर मनुष्य की वाणी मे बातचीत करता है।[४] उत्तमकुमार चरित्र चौपई मे भी बन्दर और राजकुमार की अन्तर्कथा वर्णित है। जिससे विदित होता है कि भयानक जगल मे एक बन्दर राजकुमार को आश्रय देता है।[५]

मृग :

मधुमालती प्रेमाख्यान मे सच्चे प्रेम के दृष्टान्त के रूप मे उदधृत की गई 'मृग सिहनी की प्रेम-कथा' का नायक है। यह सिहनी के प्रेम मे पड कर मृत्यु को प्राप्त होता है।[६]

---

१ लालजी हीरजी री बात (ह लि.) राजस्थानी शोध संस्थान, जोधपुर।

२ महादेव पार्वती री वेलि (सा. रा. रि इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) छद सख्या ६१, ६२, पृ स. ३१।

३ सदेवन्त सावलिगा के आठ भवो की कहानी (सदयवत्स वीर प्रबन्ध सा. रा. रि इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) प्रस्तावना पृ स (फ)।

४. श्री रूपकुमार नो चरित्र, पृ. स ८६।

५ उत्तम कुमार चरित्र चौपई (विनय चन्द्र कृति कुसुमाजलि : सा. रा रि. इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ. सं. १४६।

६. सचित्र मधुमालती (ह. लि) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर, ग्र थाक ४६१५।

सिंहनी :

यह भी मधुमालती प्रेमाख्यान मे वर्णित 'मृग सिंहनी प्रेम-प्रसंग' की नायिका है जो मृग के रूप को देखकर अपना हृदय-समर्पित कर देती है। यह सच्ची निष्ठावान् प्रेमिका है जो अपने प्रेमी मृग की रक्षा के लिए अपना प्राणान्त कर लेती है।[1]

गधा .

यह 'राजा गधर्व सेग्ग री वारता' का नायक है। यह राजकुमारी से विवाह करना चाहता है, अत नित्य रात्रि को कुम्हार से मनुष्य वाणी मे राजकुमारी से विवाह करने का आग्रह करता है। वस्तुत. यह गधर्व होता है जो इन्द्र की सभा मे किसी अप्सरा से प्रेम करने के फलस्वरूप इन्द्र का कोप भाजन बन कर उसके शाप से गधा बन जाता है।[2]

धर्म-गाथा के पशु

कामधेनु गाय :

यह स्वर्ग-लोक की पवित्र गाय है जो मनवाछित वरदान देने वाली होती है। 'रघुवश' मे महाकवि कालिदास ने इसका मार्मिक वर्णन किया है। महाकवि ने 'नंदनीय' गाय के पीछे चलती हुई रानी सुदक्षिणा और मार्ग के प्राकृतिक दृश्य का जैसा सूक्ष्म बिंब विधान किया है, वह काव्य-सौष्ठव का एक सुन्दर उदाहरण है।[3]

राजस्थानी के प्रेमाख्यान 'अचलदास खीची री बात' मे वर्णन है कि रानी उमादे अचलदास खीची का प्रेम-प्राप्त करने के लिए 'गो-रात्री' का व्रत करती है, तथा कामधेनु उससे सन्तुष्ट होकर एक दिन स्वर्ग से उतरती है और उमादे को एक हार देती है, वही हार अचलदास खीची का प्रेम प्राप्त करने मे सहायक होता है।[4]

शिव का वृषभ :

यह भगवान शंकर का वाहन होने से पवित्र-पशु माना जाता है। 'महादेव

---

१. सचित्र मधुमालती (ह. लि.) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर, ग्रथाः ४६१५।

२ राजा गधर्व सेग्ग री वारता (ह. लि.) सरस्वती भण्डार, उदयपुर।

३ तस्याः खुरन्यास पवित्र-पांसु लानां धुरि कीर्त्तनीया।
मार्गं मनुष्येश्वर-धर्म पत्नि श्रेतु रिवार्थं स्मृतिन्वगच्छत् ॥
—रघुवश।

४. अचलदास खीची री बात (सा. रा. रि. इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) सम्पादक श्री नरोत्तम स्वामी।

पार्वती री वेलि' मे उल्लेख है कि शिव पार्वती से विवाह के लिए जाते समय 'वृषभ' पर ही बैठते है।[1]

दुर्गा का वाहनसिंह

सिंह भी भगवती दुर्गा का वाहन होने से पवित्र गिना जाता है। 'मधुमालती' मे उल्लेख है कि राजा की सेना से लडते समय दुर्गा मधु की सहायता के लिए अपना वाहन सिंह भेजती है।[2]

जादुई पशु .

इन प्रेमाख्यानो मे जादुई पशु-पक्षियो के क्रियाकलापो का कौतूहलपूर्ण वर्णन मिलता है। जादुई पशुओ की सहायता से नायक अपने अलौकिक क्रियाकलापो तथा असम्भव कार्यों को सम्पन्न करने मे सफल होते हैं।

जादुई घोडा ·

जादुई घोडो मे तीन प्रकार के घोडो का उल्लेख मिलता है—यक्ष-अश्व, करामाती काना घोडा और उडने वाला घोडा। 'बछराज चौपई' मे उल्लेख है कि वलराज को विद्याधारियो से जादुई वस्तुओ के साथ यक्ष-अश्व भी मिलता है। यह यक्ष-अश्व आकाश मे उड सकता है और अगम्य स्थलो पर चुटकी मे पहुँच जाता है।[3] 'लाखा फुलाणी री बात' से विदित होता है कि लाखा का भानजा 'राखायव' एक दिन रात्रि को अश्वशाला मे पहुँचकर काना करामाती घोडा लेकर फूलजी के पास पहुचता है और प्रात होने से पूर्व वापिस लौट आता है। 'कुँवर चित्रसेन री वारता' मे उल्लेख है कि सुतार द्वारा प्रदत्त घोडे पर बैठकर राजकुमार आकाश-मार्ग से भूतो की नगरी मे पहुँच जाता है।[4]

जलचर

दरयाई घोडा

'कुँवर भूपत सेण री वारता' मे दरयाई घोडे का उल्लेख मिलता है। कुँवर भूपत सेण राक्षस को वश मे करके जादुई वस्तुये तथा दरयाई घोडा प्राप्त करता है।

---

१ महादेव पार्वती री वेलि सा रा. रि इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) छन्द सख्या १२४, पृ स ४२।

२ चतुर्भुजदास कृत सचित्र मधुमालती (ह लि) रा प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर। ग्रथाक ४६१५।

३. बछराज चौपई (ह लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

४ लाखा फुलाणी री बात (ह लि.) रा प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।

५ कुँवर चित्रसेण री वारता (ह लि) सरस्वती भण्डार, उदयपुर।

इस घोडे पर बैठकर राजकुमार समुद्र को पार करके एक अन्य राक्षस की नगरी मे पहुँचता है, जहाँ उसे अप्सरा से जादुई 'सफेद जानवर' प्राप्त होता है।[1]

कच्छप :

इसका उल्लेख 'लाल जी हीरजी री वात' मे मिलता है। हीरजी संकट मे फँसे हुए कछुवे की रक्षा करते हैं। इससे प्रसन्न होकर कछुवा हीरजी को प्रतिदान मे चार जादुई लाल देता है।[2]

मगरमच्छ .

यह भी सकट मे फसे नायक-नायकाओ की सहायता करता है। 'मलय सुन्दरी कथा' मे उल्लेख है कि मलिया को जब भारुड पक्षी लेकर उड जाता है तब सुयोग वह समुद्र मे मगर की पीठ पर गिर जाती है। मच्छ उसे समुद्र के किनारे पर सुरक्षित पहुँचा देता है।[3] 'रतन माणक साहजादा री वारता' मे वर्णन है कि रतन समुद्र के बादशाह की लडकी माणक को प्राप्त करने के लिए मच्छ की सहायता से पहुँचता है और दोनो प्रेमी-प्रेमिका मच्छ की पीठ पर बैठकर वहाँ से भाग निकलते है।[4]

कीट-पतग :

इन प्रेमाख्यानो मे कीट-पतग भी पात्रो के रूप मे आये है। इन्हे दो वर्गों मे रक्खा जा सकता है। प्रथम वर्ग मे, भमि पर रेंगने वाले कीडे आते हैं और द्वितीय वर्ग मे उडने वाले पतगे।

कीट :

भूमि पर रेंगने वाले कीटो मे साँप और अजगर का ही इन प्रेमाख्यानो मे उल्लेख मिलता है।

साँप :

साँप लोक-कथाओ का प्रमुख-पात्र रहा है। न केवल भारतीय लोक-कथाओ में, बल्कि विश्व की प्रमुख लोक-कथाओ में भी इसका उल्लेख मिलता है। प्राचीनकाल से ही सर्प-दंशन एक कथानक रूढ़ि के रूप मे लोक-कथाओ मे प्रयुक्त होता रहा है। 'ढोला मारू रा दूहा' नामक प्रेमाख्यान मे सोती हुई मारवणी को पीवणा साँप के डसने से, उसकी मृत्यु हो जाती है, किन्तु योगी-योगन के वेश मे आकर शिव-

---

१. कुँवर भूपतसेण री वारता (ह. लि) सरस्वती भण्डार, उदयपुर।
२. लालजी हीरजी री बात (ह. लि) राजस्थानी शोध-सस्थान, जोधपुर।
३. मलयसुन्दरी कथा (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।
४. रतन माणक साहजादा री वारता (ह. लि.) सरस्वती भण्डार, उदयपुर।

पार्वती उसे पुनर्जीवित कर देते हैं।[1] 'निहालदे सुलतान के पवाडे' मे भी उल्लेख है कि निहालदे पीवणे साँप के काटे जाने से मर जाती है। पीवणा साँप अधिकतर राजस्थान मे पाया जाता है। रात को मनुष्य जब सो जाता है, तब वह आकर उसकी स्वास पीने लगता है। इससे मनुष्य की मृत्यु हो जाती है।[2] 'सदयवत्स सावलिगा के 'आठ-भवो की कहानी' मे उल्लेख है कि एक साँप हँस-हँसनी के जोडे को निगल जाता है।[3] 'मृगावती रास' मे वर्णन है कि राजकुमार उदयन वन मे, भील से साँप की रक्षा करता है। वह साँप नागकुमार होता है और नागलोक मे उदयन को ले जाकर अलौकिक सिद्धियाँ प्रदान करता है।[3] 'सिंहलसुत चौपई'[4] एव 'नलराज चौपई'[5] के नायक साँप द्वारा काट लिये जाने पर कुरूप और कुबडे होजाते है जिससे वे भविष्य मे आने वाले सकटो के बच जाते है। वस्तुत वे नायको के कुल देवता ही होते हैं जो साँप की योनि मे नायको की सकट के समय सहायता करते हैं। इन प्रेमाख्यानो मे साँप अधिकाश रूप मे एक कृतघ्न और दुष्ट-पात्र के रूप मे ही चित्रित मिलता है। 'बछराज चौपई' एवं 'विद्याविलास' के नायको की साँप द्वारा डस जाने से मृत्यु हो जाती है।[6] 'उत्तमकुमार रास' मे उल्लेख है कि साँप के काट खाने से राजकुमारी की मृत्यु हो जाती है, किन्तु उत्तमकुमार मत्र-विद्या से साँप का विष उतारकर उसे जीवित कर लेता है।[7] 'चच राठौड री बात' मे भी उल्लेख मिलता है कि

---

१ जोगिए जोगी परचव्यउ, वयणा अधिक अपार।
पाणी मत्रे पाइयउ, हुई सचेती नार ॥६२१॥
—ढोला मारू रा दूहा (काशी ना प्र सभा),

. विस्तृत जानकारी के लिए देखिए—ढोला मारू रा दूहा (काशी ना. प्र. सभा) का परिशिष्ट १ पृ स २७०–७१।

३. सदेवत्स सावलिगा के आठ-भवो की कहानी (सदयवत्स वीर-प्रबन्ध सा रा रि इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) प्रस्तावना, पृ. स. (न)।

४ सिंहलसुत चौपई (समयसुन्दर रास पचक, सा. रा रि. इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ. सं १३।

५. मृगावती रास (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

६. (क) बछराज चौपई (ह लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।
(ख) विद्याविलास (ह लि) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।

७ उत्तमकुमार रास (विनय कुमार कृति कुसुमाजलि, सा. रा. रि. इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ स १६८।

जिस साँप को राजा चच अपने पेट मे छिपाकर उसकी गरुड से रक्षा करता है, वही साँप उसकी रानी कली को डस लेता है जिससे उसकी मृत्यु हो जाती है।[१]

अजगर

यह महाकाय भयकर विषैला कीट होता है। 'विरह गुलजार इश्क अनवर कथा' मे उल्लेख है कि शाहजाहा अनवर को एक भयानक अजगर घोडे सहित निगल जाता है किन्तु वह अजगर का पेट फाडकर बाहर निकल आता है।[२] 'मलयसुन्दरी कथा' मे भी उल्लेख है कि अन्ध-कूप मे राजकुमारी मलिया को एक अजगर निगल जाता है, किन्तु सुयोग से जगल मे राजकुमार महाबल भी पहुँच जाता है और वह अजगर का पेट फाडकर मलिया को बचा लेता है।[3]

पतग :

उडने वाले पतगो मे भौरो का वर्णन ही इन प्रेमाख्यानो मे मिलता है। वैसे तो यह कवियो का प्रिय-पात्र रहा है और इसका वर्णन किसी न किसी रूप मे प्रायः प्रत्येक काव्य-ग्रथ मे हुआ है। 'ढोला मारू रा दूहा' मे मारवणी अपने प्रेम-सन्देश मे कहती है कि यौवन रूपी कमल खिल गया है, अतः हे भ्रमर (ढोला) तुम आकर क्यो नही बैठते ? मधुमालती प्रेमाख्यान से तो विदित होता है कि भौरो की पूरी सेना ही मधु की सहायता के लिए आ जुटती है और राजा की सेना पर आक्रमण करके उसे भगा देती है।[४]

पक्षी-पात्र

राजस्थानी प्रेमाख्यानो मे पक्षी-पात्रो का महत्वपूर्ण स्थान है। इन प्रेमाख्यानों में तोता, गरुड, मोर, काग, हँस आदि पक्षी नायक-नायिका के सहायक मित्र, प्रेम-सन्देश-वाहक, प्रेम-पथ के मार्ग-दर्शक, स्वामी-भक्त सेवक, सुख दुख मे सहभोक्ता पात्रो के रूप में चित्रित किये गये है। घटना सयोजन और कथानक को गति देने मे भी इनका प्रमुख हाथ रहता है।

तोता

यह पक्षी अपनी समझदारी और सुन्दरता के लिए बडा लोकप्रिय रहा है। मध्यकालीन लोक-कथाओ मे इस पक्षी के महत्वपूर्ण कार्यों का वर्णन मिलता है।

---

१. चच राठोड री बात, लेखक— डा० मनोहर शर्मा (राजस्थान भारती, दिसम्बर १९६६) पृ. स ६६, ६७।
२. विरह गुलजार इश्क अनवर कथा (ह. लि.) रा प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।
३ मलय सुन्दरी कथा (ह. लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।
४. चतुर्भुज कृत सचित्र मधुमालती (ह. लि) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर। ग्रथाक ४९१५।

जायसी कृत पद्मावत का हीरामन तोता प्रेम-पथ के मार्ग-दर्शक और सहायक के रूप मे प्रसिद्ध है ही, साथ ही कथानक को भी अग्रसर करने का कार्य करता है।[1]

इसी प्रकार 'ढोला मारू रा दूहा' मे तोता कथानक को आगे बढाने मे योग देता है। मालवणी तोता को जब अपनी विरह-व्यथा सुनाती है तो वह पक्षी स्वय भी दुखी हो उठता है और ढोला को मालवणी के पास लौटने के लिए उसकी मृत्यु के मिथ्या समाचार कहता है।[2] 'सदेवन्त सावलिगा के आठ भवो की कहानी', 'फूलजी फूलमती री वारता' आदि प्रेमाख्यानो मे वह प्रेमी-प्रेमिकाओ के प्रेम-सन्देशो को एक दूसरे के पास पहुचाने के लिए 'पोस्टमैन' का कार्य करता है। 'मदनशतक' तथा 'कुँवर भूपतसेण री वारता' प्रेमाख्यानो मे नायको का मित्र है तथा उनके पथ-प्रदर्शन का कार्य करता है। 'राजा रसालु री बात' तथा 'लाखा फुलाणी री बात' मे वह स्वामीभक्त सेवक के रूप मे कार्य करता है। इन प्रेमाख्यानो के नायक जब परदेश मे जाते है तो तोता को अपनी रानियो के चरित्र की रखवाली करने के लिए छोड जाते हैं। अपने प्राणो को सकट मे डालकर भी वे रानियो को जार-पुरुषो से अवैध सम्बन्ध रखने के लिए मना करते है तथा रानियो के नही मानने पर अपने-अपने स्वामियो से उनकी करतूतो को प्रकट कर देते हैं। 'फूलमती री वारता' मे सुवा और सुवटी की प्रणय-कथा का वर्णन मिलता है।[3]

हँस :

नलाख्यान मे उल्लेख है कि हँस राजा नल और दमयन्ती के प्रेम-सन्देशो का आदान-प्रदान करता है तथा राजा नल के रूप व गुण का वर्णन करके दमयन्ती के हृदय मे प्रेम का उद्रेक करता है।[4] 'सदेवन्त सावलिगा के आठ भवो की कहानी' मे हँस-हँसनी की अन्तर्कथा का वर्णन मिलता है जिसमे एक दिन साँप दोनो को निगल जाता है।[5]

---

१. जायसी ग्रथावली, सम्पादक—प० रामचन्द्र शुक्ल (काशी ना प्र. सभा)

२ बोलि न सक्कू वीहतउ, हेक ज बात हुई।
राजि अपूठा वाहुडउ, मालवणी मूई ॥४०४॥
—ढोला मारू रा दूहा (काशी ना. प्र. सभा)।

३ फूलमती री वारता (ह. लि) राजस्थानी शोध-सस्थान, जोधपुर।

४ कवि प्रेमानन्द कृत नलाख्यान (प्रकाशक—गूर्जर ग्रथरत्न कार्यालय, अहमदाबाद) पृ. स १४।

५ सदेवन्त सावलिगा के आठ भवो की कहानी (सदयवत्स वीर-प्रबन्ध, सा. रा रि इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) प्रस्तावना, पृ स (न)।

चकवा-चकवी :

'सदेवन्त सावलिगा के आठ भवो की कहानी' मे चकवा-चकवी कृतज्ञ पक्षियो के रूप मे चित्रित किये गये है जो अपने आश्रय-स्थल वृक्ष के दावाग्नि से भस्म होने पर उसके साथ भस्म हो जाते है।[1] 'फूलमती री वारता' मे उल्लेख है कि चकवा-चकवी के वार्तालाप को सुनकर मत्री सुत राजकुमार पर आने वाले सकटो से रक्षा करता है।[2] 'ढोला मारू रा दूहा' मे चकवी का वर्णन प्रसिद्ध काव्य-रूढि के रूप मे हुआ है।[3]

गरुड़-पक्षी :

पुराणो मे गरुड भगवान् विष्णु के वाहन के रूप मे चित्रित किया गया है। यह महाकाय और शक्तिशाली पक्षी होता है। 'हसाउली विक्रम चरित्र विवाह' मे उल्लेख है कि हसाउली वन मे गरुड पक्षियो का वार्तालाप सुनकर विगत घटनाओ और अपने प्रेमी राजकुमार के बारे मे समाचार प्राप्त करती है। गरुड पक्षियो के उक्त वार्तालाप से कथानक मे भावी घटनाओ का विधान बनता है तथा कथानक को अग्रसर करने मे सहायक भी होता है।[4] हसाउली प्रेमाख्यान मे वर्णन है कि गरुड-पक्षी, अपने पखो से हवा करके सर्प से दशित राजकुमार के विष को उतार देता है।[5] 'मधुमालती' मे उल्लेख है कि भगवान् विष्णु मधु की सहायता के लिए राजा की सेना का विध्वस करने हेतु अपने वाहन गरुड को भेजते है।[6]

भारुड-पक्षी :

यह पक्षी भी गरुड की भाति महाकाय और शक्तिशाली होता है। 'मृगावती रास' मे उल्लेख है कि रक्त रजित रानी मृगावती को वह अपने पजो मे दबाकर

---

१. सदेवन्त सावलिगा के आठ भवो की कहानी (सदयवत्स वीर-प्रबन्ध, सा. रा. रि इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) प्रस्तावना, पृ स. (न)।

२. फूलमती री वारता (ह. लि.) राजस्थानी शोध-सस्थान, जोधपुर।

३ पाँखडियाँई किउँ नही, दौव आयाडू ज्वाँह।
चकवी कइहइ पंखडी, रमणि न मेलउ त्याँह ॥७१॥
—ढोला मारू रा दूहा (काशी ना. प्र सभा)।

४. हसाउली विक्रम चरित्र-विवाह, प्रकाशक–फार्बस गुजराती सभा, बम्बई, (१९३५ ई०)।

५. हसाउली, प्रकाशक—गुजरात वर्नाक्यूलर सोसायटी, अहमदाबाद।

६ चतुर्भुज कृत मधुमालती (ह. लि.) रा प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रंथाक ४९१५।

आकाश मे उड जाता है और वन मे रानी को पटक देता है।[१] इसी प्रकार 'मलय सुन्दरी कथा' मे भी उल्लेख है कि रक्त रजित मलया को भारूड पक्षी ले उड़ता है और समुद्र मे पटक देता है।[२]

काक-पक्षी .

काक-पक्षी अपनी स्वार्थमयी चेष्टाओ और कर्कश स्वर के कारण लोक-तिरस्कृत पक्षियो मे गिना जाता है, किन्तु इन प्रेमाख्यानों मे वह विरहणियो के दु ख मे सहानुभूति दिखलाता हुआ चित्रित किया गया है। कौवा जब घर की मुडेर पर बैठकर बोलता है तो किसी प्रिय व्यक्ति के आगमन का सूचक होता है। राजस्थानी लोक-गीतो मे इसके अनेक उदाहरण मिलते हैं। 'जेठवा रा सोरठा' मे भी ऊजली इसी भाव को प्रकट करती है।[3] अपने प्रियतम की प्रतीक्षा मे आतुर नायिका तो कौवो की चोच सोने से मढाने को तत्पर है। 'ढोला मारू रा दूहा' मे उल्लेख है कि मारवणी की बाँहे काक उडाते-उडाते थक जाती है।[४] 'कुतुबशतक' से विदित होना है कि कुतुबद्दीन ने सेठ-पुत्री के पास अपना प्रेम-सन्देश काक-पक्षी के साथ भेजा था।[५]

चातक :

चातक या पपीहा पक्षी के साथ विरहणी नायिकाओ का रागात्मक सम्बन्ध रहा है। ढोला मारू रा दूहा' मे उल्लेख है कि पपीहा का रग लाल और नीला होता है। नीले रग के पपीहे पर काली रेखाये भी बताई गई है। विरहणी मारवणी पपीहे से पीव-पीव की पुकार करने के लिए मना करती है।[६]

---

१ मृगावती रास (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

२ मलय सुन्दरी कथा (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

३ काग काय न काय, सुण सु कहे सुहावणा।
निगमी मिलसी नाय, जो जो हारी जेठवा ॥
—जेठवा रा सोरठा (ह लि.) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।

४ बाँहडिया बेथक्किया, काग उडाइ उडाइ ॥१३७॥
—ढोला मारू रा दूहा (काशी ना. प्र सभा) पृ सं. ३७।

५ कुतुबशतक (ह. लि.) रा. प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रथाक ११५२।

६. बाबहिया चढि डूगरे, चढि उचहरी पाज।
मतही साहिब बाहुडइ, सुणि मेहारी गाज ॥२६॥
—ढोला मारू रा दूहा (काशी ना. प्र. सभा) पृ. स. ७।

प्रकृति के पात्र

पवन :

प्राकृतिक वस्तुओ के साथ मनुष्य का चिरकाल से ही रागात्मक सम्बन्ध रहा है। विरहणी नायिकाओ के लिए पवन भी अपने प्रियतम के पास सन्देश-प्रेषण का साधन रहा है। माधवानल कामकन्दला की नायिका कामकन्दला माधव के पास प्रेम-सन्देश प्रेषण के लिए पवन को दूत बनाकर भेजती है।[1]

मेघ

नायिकाओ के प्रेम-सन्देश प्रेषण के लिए मेघदूत का प्रमुख स्थान रहा है। महाकवि कालीदास का 'मेघदूत' नामक काव्य प्रसिद्ध ही है जिसमे वियोगी यक्ष अपनी प्रियतमा के पास प्रेम-सन्देश नाना प्रकार की कल्पनाओ से रजित करके भेजता है। राजस्थानी-प्रेमाख्यानो मे भी प्रेम-सन्देश प्रेषण के लिए मेघ एक दूत के रूप मे चित्रित किया गया है। 'माधवानल कामकन्ला' की नायिका का जब पवन से कार्य पूरा होता हुआ दिखलाई नही देता, तब वह मेघ से अपने प्रियतम के पास सन्देश ले जाने की प्रार्थना करती है।[2]

दैवी-शक्ति वाले मानव-पात्र

दैवी-शक्ति वाले मानव पात्रो मे ऐसे व्यक्ति होते हैं जो अपनी सिद्धियो और करामातो से अलौकिक कार्य सम्पन्न करते है। सिद्ध, जोगी, आदि इसी कोटि के पात्रो मे आते है।

बाबा गोरखनाथ :

मध्यकालीन लोक-कथाओ मे बाबा गोरखनाथ का महत्वपूर्ण स्थान है। वह अपने भक्त को सन्तानोत्पत्ति का वरदान देते है तथा नायको को अलौकिक शक्तियाँ प्रदान करते हैं। सकट के समय नायको की सहायता भी करते है। राजा रसालु और सुलतान का जन्म बाबा गोरखनाथ की कृपा से ही होता है।[3]

---

१ गणपति कृत 'माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध', सम्पादक—एम. आर मजूमदार (ओरियन्टल रि इन्स्टीट्यूट, बडौदा) १९४२।

२ गणपति कृत माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध, (गायकवाड ओरियन्टल सीरीज) पृ. स १८९।

३. (क) राजा रसालु री बात (ह लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।
(ख) निहालदे सुलतान के पवाडे (मरु भारती, अप्रैल १९५८) सम्पादक—डा० कन्हैयालाल सहल।

योगी

योगी अपनी चमत्कारपूर्ण सिद्धियो से नायक का रूप परिवर्तन एव योनि परिवर्तन करने मे सिद्ध हस्त होता है। इन प्रेमाख्यानो मे योगी प्राय दुष्ट प्रकृति वाले व्यक्ति के रूप मे चित्रित मिलता है जो अपनी सिद्धि के लिए नर-बलि से भी नही हिचकता। वह अलौकिक सिद्धियाँ प्राप्त कर अपना रूप बदल सकता है तथा आकाश मे भी उड सकता है। 'लखनसेन पद्मावती कथा' मे जोगी प्रति नायक का कार्य करता है। वह रानी पद्मावती को राजा से छीनकर अपने वश मे करना चाहता है किन्तु राजा उसकी मृत्यु का रहस्य मालूम करके उसे मार डालता है।[1] 'मलय सुन्दरी कथा' मे उल्लेख है कि योगी राजकुमार महाबल को मत्र से सर्प बना देता है।[2] 'चन्द्रराज चौपई' से विदित होता है कि एक योगी सिद्धि प्राप्त करने के लिए राजकुमारी की बलि देना चाहता है, किन्तु राजा चन्द्रराज समय पर पहुच कर उसे बचा लेता है।[3] 'बागडा वतारी वात' मे भी उल्लेख है कि एक जोगी स्वर्ण-पुरुष की सिद्धि के लिए उबलते हुए तेल के कडाह मे भोज को डालना चाहता है किन्तु भोज स्वय तो बच जाता है और जोगी को कडाह मे डाल देता है, जिससे वह स्वर्ण-पुरुष हो जाता है।[4] सयणी चारणी री बात' से विदित होता है कि सयणी दैवी-शक्ति से युक्त नारी थी। वह अकबर को चमत्कार दिखलाने के लिए मृत घोडे को जीवित कर देती है तथा अकबर द्वारा उसे गडा दिये जाने पर धरती फाडकर निकल पडती है।[5]

मानव-पात्र

राजस्थानी के इन प्रेमाख्यानो के पात्रो का चरित्र बिल्कुल सादे ढग से चित्रित किया गया है, पात्रो मे मनोवैज्ञानिक अन्तर्द्वन्द्व नही मिलता। सब पात्रो का अपना एक निश्चित आदर्श है और उनके क्रिया-कलाप एक निर्दिष्ट आदर्श की ओर अग्रसर करने वाले होते है। यह आदर्श प्रेम-कथा पर अग्रसर होकर प्रिय-मिलन की प्राप्ति है। प्रेम-पथ की कठिनाइयो को पार करते समम नायक-नायिका को साहस,

---

१ लखनसेन पद्मावती कथा (परिमल प्रकाशन, प्रयाग) सम्पादक—नर्मदेश्वर चतुर्वेदी।

२ मलयासुन्दरी कथा (ह. लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

३. चन्द्रराज चौपई (ह लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

४ बगडावता री वात (ह लि) राजस्थानी शोध-सस्थान, जोधपुर।

५ बात सयणी चारणी री, राजस्थान-भारती, भाग १, अक २–३, जुलाई अक्टूबर, सन् १९४६ पृ स ८१।

निर्भीकता, कष्ट-सहिष्णुता, धैर्य, शील और प्रेम-निष्ठा का परिचय देना पडता है। सभी प्रति नायक क्रूर, रूप-लम्पट और पर-स्त्री कामी चित्रित किये गये है जो नायक और नायिका के मिलन मे बाधा डालते है। सहायक-मित्र चाहे वह मत्री का पुत्र हो या अन्य कोई व्यक्ति तथा स्वामीभक्त सेवक, खवास आदि नायक और नायिका के मिलन में सहायता देते है और सकट के समय अपने प्राणो को खतरे मे डालकर भी नायक की रक्षा करने वाले होते है। इस प्रकार इन प्रेमाख्यानो के पात्र अपने वर्ग के प्रतिनिधि पात्र होते है। इनमे कोई व्यक्तिगत विशिष्ट गुण, प्रथम तो होते ही नही, यदि होते भी है तो अल्प मात्रा मे। जैन चरित-काव्यो मे चरित्र-नायिको के जीवन का सम्पूर्ण चित्रण मिलता है, पर उनका भी आदर्शात्मक दृष्टिकोण ही व्यक्त हुआ है। प० रामचन्द्र शुक्ल ने चित्रण की मुख्यत चार प्रणालियो का उल्लेख किया है—प्रथम; आदर्श रूप मे; द्वितीय, जाति स्वभाव के रूप मे; तृतीय, व्यक्ति स्वभाव के रूप मे, और चतुर्थ, सामान्य स्वभाव के रूप मे।[1] चरित्र-विधान की इन चारो प्रणालियो मे इन प्रेमाख्यानकारो ने व्यक्ति-स्वभाव के चित्रण को छोडकर शेष तीनो प्रणालियो का उपयोग किया है। कुछ अपवादो को छोडकर, पात्र की व्यक्तिगत विशेषताओ का चित्रण कम हुआ है।

पुरुष-पात्र

नायक .

इन प्रेमाख्यानो मे नायक-पात्रो का आदर्शात्मक चित्रण मिलता है। सामान्य रूप से नायको की निम्नलिखित चारित्रिक विशेषताये मिलती है —

१ सयणी चारणी आदि कुछ प्रेमाख्यानो के नायको को अपवाद रूप मे छोडकर, प्रायः सब प्रेमाख्यानो के नायक राजवश या सामन्ती परिवार से सम्बन्धित कोई राजकुमार, पुरोहित-पुत्र अथवा श्रेष्ठी-पुत्र होते है।

२. ये नायक अत्यन्त रूपवान होते है। धीरललित नायक होने से कला-प्रेमी और विलासी प्रकृति के होते है। इनके रूप-सम्मोहन से नगर की युवतियो के कामातुर होने की घटना भी चित्रित की गई है। 'कमलावती चौपई' मे उल्लेख है कि नगर वीथिकाओ मे घूमते हुए राजकुमार शखकुमार के रूप मे सम्मोहन से नगर की युवतियाँ कामातुर हो जाती है।[2] माधवानल कामकन्दला चौपई[3] के नायक माधव

---

१. जायसी ग्रथावली : प० रामचन्द्र शुक्ल (काशी ना. प्र सभा)।

२. कमलावती चौपई (ह लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

३. कुशल लाभ कृत माधवानल कामकन्दला चौपई (ह. लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

तथा 'मधुमालती'[1] प्रेमाख्यान के नायक मधु का रूप तो पटरानियो को भी वश मे नही रहने देता। 'हँसाउली' प्रेमाख्यान मे भी उल्लेख है कि राजकुमार हँस पर मुग्ध होकर पटरानी उसके समक्ष काम-प्रस्ताव रखती है।[2] किन्तु, यह रूप ही इन नायिको के देश निकाले का कारण बनता है। राजा इन्हे नगर-निवासियो द्वारा अपनी कुलवधुओ को भ्रष्ट करने का आरोप लगाने पर अथवा पटरानियो द्वारा मिथ्यादोषारोपण पर देश निकाले का दण्ड देते हैं।

(३) प्राय सभी नायक पटरानियो के ताना मारने पर या अपनी भाभी के द्वारा व्यग बाण चलाने पर किसी पद्मनी रानी से वरण करने के लिए या स्वय ही किसी नायिका के रूप-वर्णन को सुनकर या चित्र देखकर उसे प्राप्त करने के लिए घर से निकल पडते हैं।

'पद्मिनी चरित्र चौपई' प्रेमाख्यान मे उल्लेख है कि राजा रतनसेन पटरानी के ताना मारने पर पद्मिनी नारी को वरण करने घर से निकल पडता है।[3] इसी प्रकार 'रतन माणक साहजादा री बात' का नायक रतन तथा 'हीर राझा' प्रेमाख्यान का नायक राझा अपनी भाभियो द्वारा ताना मारने पर पद्मिनी नारियो से विवाह करने के लिए घर से निकल पडते हैं।[4] 'गोरा बादल चौपई' का नायक रतनसेन तथा 'पुरन्दर कुँवर कथा' का नायक पुरन्दर कुमार भाटो द्वारा नायिकाओ के रूप-वर्णन को सुनकर उन्हे प्राप्त करने के लिए घर से निकल पडते हैं।[5] 'हँसाउली' विक्रम-चरित्र विवाह' प्रेमाख्यान मे उल्लेख है कि राजकुमार विक्रम भी मत्री से हँसाउली का रूप वर्णन सुनकर उससे विवाह करने के लिए चल पडता है।[6] 'चित्रसेन पद्मावती रतनसार चौपई' का नायक चित्रसेन तथा 'फूलमती री वारता'

---

१ सचित्र मधुमालती (ह लि) रा प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्र थाक ४९१५।

२. हँसाउली, प्रकाशक—गुजरात वर्नाक्यूलर, सोसाइटी, अहमदाबाद।

३ पद्मिनी चरित्र चौपई (सा. रा रिसर्च इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ स. १८३।

४ रतनमाणक साहजादा री बात (ह लि) सरस्वती भण्डार, उदयपुर, ग्र थाक ७०३।

५. (क) गोराबादल चौपई (पद्मिनी चरित्र चौपई, सा. रा रिसर्च इन्स्टीटूयूट, बीकानेर) पृ स १८३।

(ख) पुरन्दर कुँवर कथा (ह लि) रा प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्र थाक, ६४३७।

६ हसाउली विक्रम चरित्र विवाह फार्बस गुजराती सभा, बम्बई (१९३५ ई०)।

का नायक वन मे बावडी की भीत पर चित्रित राजकुमारी के चित्र पर मुग्ध होकर उसे प्राप्त करने के लिए चल पडते है ।[1]

(४) प्राय सभी नायक स्वाभिमानी, निर्भीक, साहसी, वीर, दृढ निश्चय वाले, अपने प्राण-सकट मे डालकर भी सकट मे फँसे हुए दूसरे व्यक्ति या प्राणी की रक्षा करने वाले परोपकारी व्यक्ति के रूप मे चित्रित किये गये है ।

'उत्तम कुमार चोपई' का नायक उत्तम कुमार इतना स्वाभिमानी है जब वह युवक होता है तब उसे अपने पिता द्वारा अर्जित राज-वैभव का सुख भोगना अपमानजनक लगता है । वह स्वय उपार्जित वैभव को बिना शौर्य दिखलाये बैठे बैठे भोगना कायरता का कार्य समझता है, अत हाथ मे खड्ग लेकर परिवार वालो को बिना सूचित किये अपनी वीरता और कर्मठता द्वारा राज्य-वैभव अर्जित करने निकल पडता है ।[2] 'रूपसेन कुमार नो चरित्र' का नायक रूपसेन कुमार भी अपने स्वाभिमान का परिचय देता है । जब राजकुमारी गुणावली के विवाह का लग्न रूपसेन कुमार के लिए आता है, किन्तु पुरोहित के हस्तक्षेप से, वह लग्न उसके बडे भाई के लिए स्वीकार कर लिया जाता है । इससे रूपसेन कुमार अपना अपमान समझकर घर से निकल पडता है तथा अपनी वीरता से राज्य-वैभव अर्जित करता है ।[3] 'सदयवत्स वीर प्रबन्ध' का नायक सदयवत्स भी बडा साहसी और वीर होता है । वह अपने साहस और वीरता का परिचय सर्वप्रथम तब देता है जब एक गर्भणी ब्राह्मणी को पागल हाथी के चु गल से बचाता है । वह अपने प्राणो की चिन्ता किये बिना पागल हाथी से भिड जाता है और उसे मार गिराता है । इस प्रकार सदयवत्स साहसी और वीर होने के साथ साथ परोपकारी नायक भी है जो अपने प्राण सकट मे डालकर एक असहाय स्त्री की रक्षा करता है ।[4] इसके पश्चात् सदयवत्स की वीरता, साहस और निर्भीकता का अनेक अवसरो पर प्रदर्शन होता है । वह राक्षस की नगरी मे पहुचकर राक्षस के चु गल से राजकुमारी को मुक्त करता है ।[5] चोरी

---

१. (क) चित्रसेन पद्मावती रतनसार चौपई (ह. लि) रा. प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्र थाक २८९४७ ।

(ख) फूलमती री वारता (ह. लि) राजस्थानी शोध-सस्थान, जोधपुर ।

२ श्री उत्तमकुमार चरित्र चौपई (विनयचन्द्र कृति कुसुमाजलि, सा रा रिसर्च इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ स ११३ ।

३ श्री रूपसेन कुमार नो चरित्र, पृ. स १४, १५ ।

४ सदयवत्स वीर-प्रबन्ध (सा. रा रि इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ स. १०, ११ ।

५. वही, प्रस्तावना, प. स (च) ।

की गुफा मे जाकर उनको 'द्यूत-क्रीडा खेलने के लिए चुनौती देता है और हारने पर अपना सिर कटा लेने की शर्त स्वीकार कर लेता है। वह उदारवृत्ति वाला व्यक्ति भी है, अत चोरो के हार जाने पर शर्त के अनुसार उनका सिर नही काटता है तथा उन्हे क्षमा कर देता है।[1] सकटपूर्ण भयानक एव अगम्य स्थलो पर जाने के लिए वह बिल्कुल नही हिचकिचाता तथा रात्रि मे श्मशान आदि स्थानो पर जाकर भूत-प्रेतो को परास्त कर देता है।[2] वह राजा की सेना को भी अपनी वीरता से हरा देता है।[3] इनके अतिरिक्त उसमे दूरदर्शिता आदि व्यक्तिगत गुण भी है। जब वेश्या कामसेना अपने साथ स्वप्न मे भोग करने के बदले मे श्रेष्ठी-पुत्र से प्रचुर धन मागती है तब सदयवत्स उसे दर्पण मे मुद्राये दिखलाकर दर्पण मे प्रतिबिम्बित मुद्राओ को लेने के लिए आग्रह करके वेश्या को निरुत्तर कर देता है।[4]

'वछराज चौपई' का नायक राजकुमार वछराज भी अपने अद्भुत साहस और वीरता का परिचय देता है। वह अपने दुर्दिनो मे धैर्य रखता है तथा अपनी कर्मठता से सौभाग्य को प्राप्त करता है। वह स्वाभिमानी भी है। सेठ के यहाँ बछडे चराने का कार्य करने की अपेक्षा जगल मे से लकडियाँ काटकर उन्हे नगर मे बेचने जैसे कठिन कार्य को अच्छा समझता है। वह यक्ष वन मे जाकर चन्दन की लकडियाँ काटने से नही हिचकता तथा सकट से पूर्ण, रहस्यमय वर्जित स्थान यक्ष मन्दिर मे रात्रि को ठहर जाता है। वह निडर होकर विद्याधारियो को छकाने के लिए उनकी कचुकी चुरा लेता है। वह परोपकारी भी है। सेठ-पुत्री को राक्षस के चुगल से मुक्त करता है। राजा उसके शौर्य की अद्भुत परीक्षाये लेता है। यथा—सिहनी का दूध मगाना, चिता मे भस्म होकर यमराज से समाचार लाकर देना, व्यतरी के देश से आभूषण लाकर देना आदि। इन सब असम्भव और कठिन कार्यो को वह निडर होकर करता है—जिससे उसके अद्भुत साहस, वीरता तथा कष्ट सहिष्णुता एव धैर्य आदि चारित्रिक गुणो का पता चलता है।[5] 'निहालदे सुलतान के पवाडे' नामक प्रेमाख्यान का नायक सुलतान भी कम वीर नही होता। वह दानव को द्वन्द्व-युद्ध मे पराजित कर देता है।[6]

---

१ सदयवत्स वीर प्रबन्ध (सा रा रि इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ स. ५५।

२ वही, पृ. स ६५।

३. वही, पृ स ८८।

४ वही, पृ स ६४।

५ वछराज चौपई (ह लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

६. निहालदे सुलतान के पवाडे (मरुभारती, अक १, अप्रेल १९५८)।

५. अनेक नारियों से विवाह करना :

इन नायको से अनेक नायिकाये प्रेम करती हैं और ये नायक उनके निश्छल प्रेम को स्वीकार कर उनके साथ विवाह कर लेते हैं। मध्ययुगीन सामन्ती समाज मे बहु-विवाह की प्रथा प्रचलित थी और नायक वही सौभाग्यशाली समझा जाता था जो प्रचुर सम्पत्ति के साथ अनेक सुन्दर स्त्रियो का पति होता था। 'मदनशतक' का नायक मदनकुमार रति सुन्दरी के साथ राजकुमारी कनकसुन्दरी, मत्री-सुता हर्ष सुन्दरी आदि पाँच राजकुमारियो के साथ प्रणय-बधन मे बधकर विवाह कर लेता है।[1] 'पुण्यसार चौपई' का नायक श्रेष्ठीकुमार पुण्यसार वल्लभी नगर के सेठ की पुत्री गुणावली आदि सात पुत्रियो के साथ विवाह करता है। उससे विवाह न करने का सकल्प करने वाली रतनवती भी उससे विवाह कर लेती है।[2] 'सिंहलसुत चौपई' का नायक सिंहलकुमार धनवती से विवाह कर लेने पर भी राजकुमारी रतनवती, तापस-कन्या एव काशी के राजा की पुत्री से विवाह करता है।[3] इस प्रकार हम देखते है कि इन प्रेमाख्यानो मे एक नायक के द्वारा अनेक सुन्दर नारियो से विवाह करने के अनेक उदाहरण मिलते है।

६ आदर्श-प्रेमी :

यद्यपि इन नायको ने अनेक नारियो से विवाह किया है, किन्तु यह प्रवृत्ति तो उस युग मे प्रचलित बहु-विवाह प्रथा का परिणाम थी। कुछ अपवादो को छोडकर प्रायः सब नायक प्रेम-व्यापार मे निष्ठावान् रहे हैं। इनमे से कुछ नायक अपनी प्रेमिकाओ की प्राप्ति के लिए जोगी होकर निकल पडते है और अनेक सकटो का सामना करते है। कुछ नायक अपनी प्रेमिकाओ को विवाह मण्डप मे से भगाकर ले जाते है, कुछ गुप्त रूप से महलो मे प्रवेश कर अपनी प्रेमिकाओ से रमण करते है और भाग निकलने की योजनाये बनाते हैं। प्रेमियो के इन लोक-बाह्य अथवा समाज-विरोधी कार्यों को देखकर समाज-सुधार का दम्भ भरने वाले कुछ व्यक्ति इनके आचरण को समाज विरोधी कहकर निंदा करेंगे, किन्तु उन्हे यह समझ लेना आवश्यक है कि प्रेम-साधना के

---

१. मदन शतक (ह. लि.) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, बीकानेर शाखा ग्रथाक (८६–६)।

२. पुण्यसार चरित्र चउपई (समयसुन्दर रास पचक, सा रा. रि इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ स. १३३–१३४।

३. सिंहलसुत चौपई (समयसुन्दर रास पचक, सा. रा. रि. इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ स ४–१८।

काल मे नायको मे साहस, कष्ट सहिष्णुता, नम्रता, कोमलता, त्याग आदि गुण तथा अधीरता, दुराग्रह चौर्य आदि अवगुण दिखाई पडते हैं, वे प्रेमजन्य है, अत वे स्वतत्र गुण या दोष नही माने जा सकते। यदि ये दुर्गुण प्रेम-पथ के अतिरिक्त जीवन के दूसरे व्यवहारो को दिखलाये होते तो इन्हे हम इनके व्यक्तिगत स्वभाव के अन्तर्गत ले सकते और तब ये अवश्य चारित्रिक दुर्बलता मे गिने जाते। किन्तु, प्रेम-पथ पर चलने वाले नायको के चरित्र का मूल्याकन तो हम इस बात से करेंगे कि वे कही अपने प्रेम के लक्ष्य से तो च्युत नही हुए है--उदाहरणार्थ, 'सदयवत्स-वीर-प्रबन्ध' के नायक सदयवत्स की प्रेम निष्ठा का हमे तब पता चलता है, जब जगल मे सावलिंगा को प्यास लगती है और सदयवत्स उसके लिए पानी लाने के लिए हरगोरी की प्रपा पर जाता है। देवी उसकी प्रेम-निष्ठा की परीक्षा लेने के लिए पानी के बदले मे उतना ही रक्त मॉगती है और सदयवत्स अपनी प्रिया की प्यास बुझाने के लिए पानी के बदले मे अपना रक्त भी देने को प्रस्तुत हो जाता है।[1] माधवानल कामकन्दला चौपई' का नायक माधव अपनी प्रिया कामकन्दला के लिए राज-कोप, लोक-निंदा आदि किसी बात की चिंता नही करता। इन दोनो प्रेमी-प्रेमिका की परीक्षा राजा विक्रमादित्य लेता है और दोनो ही उस परीक्षा मे सफल होते हैं।[2] 'जलाल गहाणी री वारता' का नायक जलाल को तो अपनी प्रेम-निष्ठा की अनेक परीक्षाये देनी पडती हैं। बादशाह द्वारा उसको मारने के बार-बार षड्यत्र किये जाते है, किन्तु वह अपने अद्भुत साहस और वीरता से बच जाता है। वह अपनी प्रेमिका बूबना तक पहुँचने के लिए घडियालो से भरे सागर को पार करता है, कई दिनो से भूखे सिंह और अजगर से अपना बचाव करता हुआ बूबना के महल तक पहुँचता है। उसकी प्रेम-निष्ठा की पराकाष्ठा का उस समय पता चलता है जब बादशाह द्वारा बूबना की मृत्यु के झूठे समाचार सुनकर उसकी तत्काल मृत्यु हो जाती है।[3] 'रणसिंघ कुमार चौपई' से विदित होता है कि अपनी प्रिया के वियोग मे राजकुमार रणसिंघ चिता बनाकर भस्म होने को तत्पर हो जाता है।[4] 'मलय सुन्दरी कथा' मे उल्लेख है कि महाराजा महाधवल अपनी रानी चम्पक माला के वियोग मे नदी किनारे पर चिता बनाकर आत्म दाह के लिए तत्पर हो जाते है।[5] 'पुरन्दर कुँवर कथा' का

---

१ सदयवत्स-वीर प्रबन्ध (सा रा रि इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ. स. २८।

२ कुशललाभ कृत माधवानल काम कन्दला चौपई (ह. लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

३. जलाल गहाणी री वारता (ह लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

४ रणसिंघ कुमार चौपई (ह लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

५ मलय सुन्दरी कथा (ह लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

नायक पुरन्दर कुमार भी अपने प्रेम की एकनिष्ठता का सुन्दर परिचय देता है। वह राज-सभा मे मगध ब्राह्मण से भोगपुर की राजकुमारी कलावती के रूप की प्रशसा सुनकर उसे प्राप्त करने लिए जोगी होकर निकल पडता है। वन मे देवता उसके प्रेम की एकनिष्ठता एव साहस की परीक्षा लेते हे और वह उस परीक्षा मे सफल होता है। राजकुमार की दूसरी परीक्षा उस स्थल पर होती है जब पटरानी उसके रूप पर मुग्ध होकर प्रणय-प्रस्ताव रखती है और राजकुमार उस प्रणय-प्रस्ताव को ठुकरा देता है।[1]

'पद्मिनी चरित्र चौपई' में भी उल्लेख है कि राजा रतनसेन पटरानी द्वारा ताना मारने पर पद्मिनी राजकुमारी से विवाह करने के लिए घर से जोगी बनकर निकल पडता है। किसी भी पद्मिनी जाति की स्त्री की प्राप्ति के लिए जोगी बनकर सिहलगढ पहुँचना, सामान्योन्मुख प्रेम की कोटि मे नही आयेगा, तथा इसको हम रूप लोम ही कह सकेगे। रतनसेन का पद्मावती के प्रति सच्चा प्रेम तब प्रारम्भ होता है, जब वह उसे देखकर प्राप्ति के लिए प्राणो की बाजी लगाकर भी पद्मिनी के भ्राता सिहलपति के साथ चौपड खेलता है। पद्मिनी भी उसके रूप पर मोहित होकर मन ही मन उसकी विजय की कामना करती है। उसका जाति-स्वाभावगत क्षत्रयोचित दर्प तब विदित होता है जब वह अलाउद्दीन द्वारा पद्मिनी की माँग पर लोहा लेने के लिए प्रस्तुत हो जाता है। गोरा बादल द्वारा उसका अलाउद्दीन की कैद से छुडाने के षड्यन्त्र को न समझने पर, जब वह जानता है कि बादल बादशाह को पद्मिनी सौपने के लिए आया है, तब वह बादल को धिक्कारता हुआ जो दर्पयुक्त वचन कहता है, उससे भी उसका जातीय स्वभाव व्यक्त होता है। रतनसेन के व्यक्तिगतगुण, उसकी सरलता, अदूरदर्शिता आदि उस समय दिखलाई पडते है, जबकि वह बादशाह अलाउद्दीन के भुलावे मे आकर गढ मे सशस्त्र तीस सैनिको को प्रवेश करने देता है और अपनी रक्षा की तैयारी नही करता। अपनी अदूरदर्शिता से वह बडी सरलतापूर्वक बन्दी बना लिया जाता है।[2]

'गोरा बादल चौपई' का नायक रतनसेन तो इतनी कायरता प्रदर्शित करता है कि बन्दी अवस्था मे अलाउद्दीन द्वारा सताये जाने पर वह अपने सामन्तो को

---

१. पुरन्दर कुँवर कथा (ह. लि) रा प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रथाक ६४३७।

२. पद्मिनी चरित्र चौपई-प्रकाशक सा. रा. रि इन्स्टीट्यूट, बीकानेर।

अलाउद्दीन को पद्मिनी सौपने के लिए लिख देता है। रतनसेन का यह कायरपन उसके व्यक्तिगत स्वभाव का अ ग ही गिना जायगा जो उसके क्षत्रियत्व पर ही धब्बा नही लगाता, बल्कि प्रेम-पथ की निष्ठा से भी नीचा गिरा देता है। किन्तु, आगे चल कर यही रतनसेन, अपनी दुर्बलता का त्याग करके बादल को अलाउद्दीन के शिविर मे पद्मिनी लाने का नाट्य करने पर धिक्कारता हुआ क्षत्रियोचित-गर्वोक्ति कहता है। रतनसेन का उक्त चरित्रगत अन्तर्विरोध उसकी अस्थिर मति को ही प्रकट करता है।

प्रतिनायक :

नायक-पात्रो के बाद पुरुष-पात्रो मे प्रतिनायक पात्र ही प्रमुख पात्र हैं। ये रूप-लम्पट, पर-स्त्रीगामी, क्रूर और स्वार्थी तथा लालची रूप मे ही चित्रित मिलते है। इनमे अधिकाश प्रतिनायक सार्थवाह होते है जो नायक नायिकाओ को प्रवहण मे बैठाकर यात्रा करते है, किन्तु इसी बीच इनकी दृष्टि नायिका पर पड जाती है और वे उसके रूप-लावण्य पर मुग्ध होकर नायिका को प्राप्त करने का सकल्प कर लेते हैं। नायिका की प्राप्ति मे नायक की उपस्थिति मुख्य बाधा होती है, अत वे नायको को धोखे से समुद्र मे गिरा देते है और फिर नायिका की सहानुभूति प्राप्त करने के लिए कपटपूर्ण सहानुभूति का नाट्य रचते हैं और भावी को प्रबल बतलाकर बडी चालाकी से अपना प्रणय-निवेदन नायिकाओ के सम्मुख प्रस्तुत कर देते है। किन्तु नायिकाये भी कम चतुर नही होती, वे अपने शील की रक्षा के लिए व्रत आदि का बहाना बनाकर उन्हे धोखे मे रखती है और अवसर पाकर उनके च गुल से मुक्त हो जाती है। अ त मे प्रतिनायको को अपने दुष्ट कर्मो का फल भी दण्ड के रूप मे मिलता है। कुछ प्रतिनायक तो बडे वैभवशाली प्रतापी राजा तथा बादशाह होते है जो नायिकाओ को प्राप्त करने के लिए बडे उत्कट प्रयत्न करते हैं। वे अपनी बडी-बडी सेनायें लेकर नायिकाओ की प्राप्ति के लिए आक्रमण करते है, युद्ध करते है जिनमे असख्य सैनिक मारे जाते हैं। ऐसे प्रतिनायक दम्भी, कामी और निर्लज्ज होते हैं और उनमे ये दुर्गुण पराकाष्ठा तक पहुच जाते हैं।

इन प्रेमाख्यानो मे प्रतिनायको की सृष्टि का उद्देश्य नायक-नायिकाओ की प्रेम-निष्ठा, कष्ट-सहिष्णुता, धैर्य, साहस-वीरता, शील आदि गुणो की परीक्षा लेना होता है। प्रतिनायक जितना उत्कट, क्रूर और बलशाली होगा, उसको परास्त

१. जटमल कृत गोरा बादल चौपई (पद्मिनी चरित्र चौपई सा. रा. रि. इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ स. १८२।

करने मे नायक की गरिमा उतनी ही बढेगी। जिस प्रकार श्याम-पट्ट पर सफेद चॉक के अक्षर सुन्दर स्पष्ट अ कित होते है, उसी प्रकार प्रतिनायको की तामसी प्रकृति की पृष्ठभूमि मे नायको के सात्विक गुण अधिक खिल जाते है। यहाँ, इन प्रेमाख्यानो मे से कुछ प्रतिनायको की चारित्रिक विशेषताओ का सक्षिप्त वर्णन किया जा रहा है।

ऊमर सूमरा :

"ढोला मारू रा दूहा" प्रेमाख्यान का नायक ऊमर सूमरा है जो मारवणी के रूप पर मुग्ध है। मारवणी को प्राप्त करने के लिए वह बहुत चेष्टाये करता है, किन्तु असफल रहता है। जब ढोला मारवणी को लेकर नरवर लौटता है तब मार्ग मे ऊमर सूमरा ढोला से मारवणी छीन लेने के लिए, उसे धोखे से मारना चाहता है। वह ढोला के प्रति भ्रातृ-भावना का नाट्य रचकर उसे कसू बा (अफीम) पीने के लिए आग्रह करता है, किन्तु मारवणी इस रहस्य को ताड जाती है और वह ढोला को संकेत से बुला लेती है। तदन्तर दोनो नायक-नायिका ऊँट पर बैठकर भाग निकलते हैं। इस प्रकार ऊमर सूमरा एक क्रूर और कपटी प्रतिनायक सिद्ध होता है।[1]

सार्थवाह पुष्पदंत :

'हसाउली' प्रेमाख्यान का प्रतिनायक सार्थवाह पुष्पदत है। वह यात्रा करते समय राजकुमारी के रूप पर मुग्ध होकर, उसे प्राप्त करने के लिए हस को कपट से समुद्र में गिरा देता है। फिर झूँठी सहानुभूति का प्रदर्शन करता हुआ अपना कुत्सित प्रस्ताव राजकुमारी के सम्मुख रखता है, किन्तु राजकुमारी छह महीने व्रत रखने का बहाना बनाकर अपने सतीत्व की रक्षा के लिए उसे धोखे मे रखती है और उचित अवसर पर उसके च गुल से मुक्त हो जाती है।[2]

सिद्धराज जोगी :

'लखनसेन पद्मावती कथा' का प्रतिनायक सिद्धराज नाम का एक जोगी होता है जो चमत्कारिक शक्तियो से राजा को पराभूत करता है और पद्मावती को अपने च गुल मे रखता है, किन्तु राजा उसकी मृत्यु का रहस्य ज्ञात कर उसे समाप्त कर देता है।[3]

---

१. ढोला मारू रा दूहा (काशी ना प्र सभा) पृ. सं. १५१-१५२।
२. असाइत कृत हसाउली, प्रकाशक—गुजरात वर्नाक्यूलर सोसाइटी, अहमदाबाद।
३. लखनसेन पद्मावती कथा, स नर्मदेश्वर चतुर्वेदी, परिमल प्रकाशन, प्रयाग।

रुद्रदत्त पुरोहित :

'सिहल सुत चौपई' मे प्रतिनायक रुद्रदत्त पुरोहित होता है। वह राज-मत्री होता है । राजा अपनी कन्या, रतनवती एव जामाता सिहलकुमार को पहुचाने के लिए मत्री को यात्रा मे साथ भेजता है, किन्तु वह इतना कृतघ्न निकलता है कि रतनवती के रूप पर मुग्ध होकर, उसे प्राप्त करने के लिए कपट से सिहल कुमार को प्रवहण मे से समुद्र मे गिरा देता है। फिर, अपने कुकृत्य को छिपाने के लिए दुःखी होकर रोने का नाट्य करता है और राजकुमारी की सहानुभूति प्राप्त करने का प्रयत्न करके उसके सम्मुख अपना कुत्सित प्रस्ताव रख देता है। रतनवती रुद्रदत्त पुरोहित का कपट समझ जाती है और अपने शील की रक्षा के लिए उसे भुलावे मे रखती है। सुयोग से समुद्र मे प्रवहण नष्ट हो जाता है, पर रुद्रदत्त किसी प्रकार बच जाता है और अपनी योग्यता दिखलाकर कुसुमपुर राज्य का मत्री बन जाता है। सिहलकुमार के बचकर कुसुमपुर पहुच जाने पर रुद्रदत कुकृत्यो का भण्डा-फोड होता है। कुमार उदारतावश उसे क्षमा कर देता है।[1] इस प्रकार रुद्रदत्त पुरोहित एक रूप-लम्पट, कामी तथा स्वामीद्रोही-कृतघ्न व्यक्ति के रूप मे चित्रित मिलता है।

समुद्रदत्त :

'उत्तम कुमार चरित्र चौपई' का प्रतिनायक वणिक् समुद्रदत्त भी कृतघ्न व्यक्ति है। समुद्री मार्ग में जब जल समाप्त हो जाता है, तब जल के अभाव से सब यात्री तृषातुर होते है, इस पर सुन्दरी मदालसा मत्र से वर्षा करके सबका सकट दूर करती है। किन्तु, इस उपकार के बदले मे समुद्रदत्त मदालसा के रूप पर मुग्ध होकर उसे प्राप्त करने के लिए उत्तमकुमार को समुद्र मे गिरा देता है और मदालसा के सम्मुख निर्लज्ज होकर अपना प्रणय-निवेदन प्रस्तुत करता है।[2] 'बीजड बीजोगण री वात' का प्रतिनायक शेर मोहम्मद भी इसी रूप मे चित्रित मिलता है।

चण्ड प्रद्योत :

'मृगावती रास' का प्रतिनायक चण्ड प्रद्योत उज्जैन का प्रतापी राजा है। वह दम्भी, लम्पट तथा कामी व्यक्ति है। रानी मृगावती का चित्र देखकर वह उस पर मुग्ध हो जाता है तथा उसे प्राप्त करने के लिए राजा सतानीक पर आक्रमण कर देता है। इस युद्ध मे अनेक सैनिक मारे जाते हैं। किसी की विवाहित स्त्री को

---

१. सिहलसुत चौपई (समय सुन्दर रास-पचक) सा. रा. रि इन्स्टीट्यूट, बीकानेर।
२. उत्तम कुमार चौपई (विनय चन्द्र कृति कुसुमाजलि) सा. रा रि इन्स्टीट्यूट, बीकानेर।

प्राप्त करना, उसकी लम्पटता तथा क्रूरता का द्योतक है, किन्तु वह अदूरदर्शी भी है। मृगावती उसे भुलावे में रखकर गढ की सुरक्षा के लिए दीवारे मजबूत करवा लेती है। सतानीक की बीमारी के कारण मृत्यु हो जाने से मृगावती भी वैराग्य ले लेती ह इस घटना का चण्ड प्रद्योत पर भी प्रभाव पडता है और वह घेराबन्दी हटाकर वैराग्य की ओर उन्मुख हो जाता है। हृदय-परिवर्तन का यह एक उत्तम उदाहरण है।[1]

बादशाह अलाउद्दीन :

चण्ड प्रद्योत की भाति ही 'पद्मिनी चरित्र चौपई' का प्रतिनायक अलाउद्दीन है। वह भी रूप-लम्पट और कामी व्यक्ति है। अपने बल, प्रताप और श्रेष्ठता के अभिमान मे अलाउद्दीन इस बात को सहन नही कर पाता कि अन्य किसी के पास ऐसी वस्तु रहे, जो उसके पास न हो। जब राघवचेतन पद्मिनी जाति की स्त्री का वर्णन करता है तब उस वर्णन को सुनकर उसे रूप-लोभ आ घेरता है और वह पद्मिनी नारी को प्राप्त करने के लिए सिहलगढ पहुचता है, किन्तु सिहलपति उसे धन-धान्य देकर लौटा देता है। बेगमो के ताना मारने पर वह पुन पद्मिनी को प्राप्त करने के लिए आतुर हो उठता है और राघव चेतन के बतलाने पर चित्तौडगढ पर आक्रमण कर देता है। किसी अन्य की विवाहित स्त्री के लिए चट दौड पडना और चित्तौड के राणा रतनसेन जैसे की पत्नी मागना उसके दम्भी स्वभाव, निर्लज्ज आचरण और कामुकता तथा लम्पटता का ही परिचायक है। वह पद्मिनी की प्राप्ति के लिए घोर युद्ध भी करता है जिससे उसकी क्रूरता प्रकट होती है। राणा के यहा अतिथि बनकर जाना और विश्वास मे लेकर धोखे से राणा को बन्दी बना लेने जैसे कार्य से उसके विश्वासघाती स्वभाव तथा कपटपूर्ण नीति का परिचय मिलता है। अन्त मे वह गोरा बादल की कपटपूर्ण नीति द्वारा ही परास्त किया जाता है।[2]

सहायक मित्र तथा स्वामीभक्त सेवक

राजस्थानी के प्रेमाख्यानो मे ऐसे पात्रो की भी सृष्टि मिलती है जो नायक को उसकी प्रेमिका की प्राप्ति मे या लक्ष्य-सिद्धि मे मित्र के रूप मे सहायक होते है या स्वामीभक्त सेवक के रूप में अपनी स्वामीभक्ति का परिचय देते है।

---

१. मृगावती रास (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।
२. लब्धोदय कृत पद्मिनी-चरित्र चौपई : प्रकाशक—सा. रा. रि इन्स्टीटूयट, बीकानेर।

मन्त्री मनकेसर :

'हसाउली' प्रेमाख्यान मे वर्णन है कि राजा नरवाहन को उसका मत्री मनकेसर राजकुमारी हसाउली की प्राप्ति मे सहायक सिद्ध होता है। मनकेसर धैर्यवान और विवेकशील व्यक्ति है। वह सकट के समय भी अपना मानसिक सतुलन नही खोता। जब राजा नरवाहन अपने मत्री मनकेसर द्वारा स्वप्न भग किये जाने पर कुपित होकर प्राण दण्ड की आज्ञा देता है, तब मनकेसर अपना मानसिक सतुलन नही खोता, बल्कि राजा को हसाउली से मिलाने का वचन देकर उसे प्रसन्न कर लेता है। मनकेसर राजा के साथ वेश बदलकर हसाउली के नगर मे पहुचता है और वहा मालिन के यहा ठहर कर हसाउली का सब भेद जान लेता है। वह बडा दूरदर्शी स्वभाव का है तथा विलक्षण बुद्धि वाला व्यक्ति है। उसकी दूरदर्शिता और विचक्षण बुद्धि का परिचय तब मिलता है जब वह देवी के पीछे छिपकर देवी की वाणी मे बोलने का नाट्य करके हसाउली से पुरुष-द्वेषणी होने का कारण जान लेता है। वह कुशल चित्रकार भी है, अतः हसाउली के पूर्व भव हस और हसनी का चित्र बनाकर तथा पूर्वभव की कहानी गढ़कर, हसाउली के मन से पुरुष-द्वेष का भाव हटाकर, राजा के प्रति उसके मन मे प्रेम जागृत कर देता है। इससे यह भी विदित होता है कि वह एक कुशल मनोवैज्ञानिक भी है।[१]

हसाउली विक्रम चरित्र विवाह' प्रेमाख्यान मे भी मत्री राजकुमार विक्रम को हसाउली से मिलाने मे सहायक होता है। वह राजा के द्वारा अनावश्यक रूप से कुपित होने पर भी अपना मानसिक सतुलन नहीं खोता तथा स्वामीभक्ति का परिचय देता है।[२]

रतनसार :

'चित्रसेन पद्मावती रतनसार चौपई' का पात्र रतनसार भी एक हितैषी मित्र के रूप मे चित्रित किया गया है। वह राजकुमार चित्रसेन के साथ छाया की भाति लगा रहता है। शिकार खेलने के लिए जाते समय वह भी राजकुमार के साथ होता है। प्यास लगने पर एक बावडी पर पहुचता है और वहाँ राजकुमारी पद्मावती का चित्र देखकर, उस पर इस भय से मिट्टी लेप देता है कि कही राजकुमार इस चित्र को देखकर मोहित नही हो बैठे। किन्तु, होता इसके विपरीत है। राजकुमार मिट्टी पोछकर उस चित्र को देख लेता है और पद्मावती को प्राप्त करने के

---

१ हसाउली, प्रकाशक—गुजरात वर्नाक्यूलर सोसाइटी, अहमदाबाद।

२ हसाउली विक्रम चरित्र विवाह, प्रकाशक—फावर्स गुजराती सभा, बम्बई (१६३५ ई०)।

लिए आतुर हो उठता है। रतनसार पद्मावती की प्राप्ति मे सहायक होता है। पद्मावती को लेकर लौटते समय मार्ग मे आने वाले सकटो से राजकुमार की रक्षा करता है और इस कार्य मे अपने प्राणो की भी चिन्ता नही करता। राजकुमार के हट करने पर, वह सकटो का रहस्य खोलने पर पत्थर का हो जाता है। पुनर्जीवित होने पर वह राजकुमार को उसकी कृतघ्नता के लिए कुछ नही कहता, इससे रतनसार की क्षमा-शीलता और उदारता का परिचय मिलता है।[1] 'फूलमती री वारता' के पात्र उत्तमीचन्द का चरित्र-चित्रण भी रतनसार की भाति हुआ है।[2]

गोरा बादल :

स्वामी-भक्ति का उज्जवल रूप हमे 'पद्मिनी चरित्र चौपई' तथा 'गोरा बादल चौपई' मे मिलता है। राणा रतनसेन द्वारा इन स्वाभिमानी वीरो की उपेक्षा की जाती है। किन्तु सकट के समय वे राणा की सहायता करते हैं। जब चित्तौडगढ के अन्य सुभट राणा को मुक्त कराने के लिए पद्मिनी को बादशाह को सौपने के लिए तैयार हो जाते है, तब अपने शील-धर्म की रक्षा के लिए पद्मिनी गोरा बादल की शरण मे जाती है। दोनो वीर अपने घर आये अतिथि का हृदय से सत्कार करते है और अपने पुराने वैर-भाव को भुलाकर पद्मिनी की सहायता के लिए तैयार हो जाते है। इस अवसर पर बादल का क्षत्रयोचित दर्प देखते ही बनता है। बादल इतना साहसी, निर्भीक, दृढ निश्चयी और बुद्धिमान है कि वह अलाउद्दीन जैसे शक्तिशाली बादशाह से राणा रतनसेन को छुडाकर लाने की प्रतिज्ञा कर लेता है। वह चित्तौडगढ के सुभटो की सभा मे अपनी नेतृत्व शक्ति का परिचय देता है और अलाउद्दीन के शिविर मे अकेला पहुँचकर, अपने अद्भुत साहस और निर्भीकता को प्रकट करता है। बादल एक कल्पनाशील और प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति है। पद्मावती का झूँठा-सन्देश सुनाकर अलाउद्दीन जैसे कूटनीतिज्ञ बादशाह को विश्वास मे लेकर उसकी सेना दिल्ली वापिस भिजवा देना, सोलह सौ पालकियो मे पद्मिनी की सखियो के बहाने मेवाड के प्रमुख वीर-सुभटो को बैठाकर बादशाह के शिविर मे ले जाना तथा युद्ध करके राणा को छुडा लाना, उसकी विलक्षण बुद्धि और वीरता का द्योतक है। वीर बादल की दृढता का उस समय पता चलता है जब अपनी माता के रुदन और नवविवाहित पत्नी के आँसूओ की भी चिंता किये बिना अपने सकल्प को पूरा करने के लिए अटल रहता है, लब्धोदय ने इस प्रसग

१. चित्रसेन पद्मावती रतनसार चौपई (ह. लि.) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रंथाक २८६४७।
२. फूलमती री वारता (ह. लि.) राजस्थानी शोध-संस्थान, जोधपुर।

को बडा मार्मिक बना दिया है।[1] गोरा भी अपनी अद्भुत वीरता और स्वामी-भक्ति का परिचय देकर वीरगति को प्राप्त होता है। क्षात्र-धर्म का जैसा उज्जवल रूप इन वीरो के चरित्र मे मिलता है, वैसा अन्यत्र मिलना दुर्लभ है।

हुसन खवास :

राजस्थानी के इन प्रेमाख्यानो मे 'खवास' भी नायक-नायिका के मिलन मे सहायक के रूप मे चित्रित किया गया है। वह नायक के प्रेम-सन्देश नायिका तक पहुँचाने मे तत्पर रहता है। 'जलाल गहाणी री बात', 'गुलाबा भँवरा री वारता', 'सदयवच्छ सावलिंगा चौपई', 'फूलजी फूलमती री बात', 'रतना हमीर री वारता' आदि प्रेमाख्यानो मे 'खवास' अथवा नाई नायक-नायिकाओ के प्रेम-सन्देशो के आदान-प्रदान मे सहायक व्यक्ति एव एक विश्वास-पात्र सेवक के रूप मे चित्रित किया गया हैं। 'ससी पना री बात' मे हुसन खवास की स्वामी-भक्ति का उज्जवल रूप मिलता है। वह ससी की प्राप्ति मे पना की सहायता करता है तथा बाद मे ससी के वियोग मे पना के प्राण-त्यागने पर हुसन भी अपने स्वामी के वियोग में प्राण-विसर्जन कर देता है।[2]

राजा विक्रमादित्य :

इन प्रेमाख्यानो मे प्रेमी-प्रेमिका के मिलन मे सहायक के रूप मे एक प्रभावशाली पात्र का और चित्रण मिलता हैं। वह प्रभावशाली पात्र उज्जैन का राजा, पर-दु ख भजनकारी विक्रमादित्य है। 'माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध' का नायक माधव जब अपनी प्रेमिका गणिका कामकन्दला को प्राप्त करने मे असफल रहता है, तो वह उसके वियोग मे दु खी होकर उज्जैन मे महाकाल के मन्दिर मे अपनी प्रेम-पीडा को व्यक्त करने वाला दोहा लिखकर मूर्छित हो जाता हैं। जब राजा विक्रमादित्य को पता चलता है तो वह दोनो प्रेमी-प्रेमिका को मिलाने के लिए तत्पर हो जाता है। किन्तु वह दूरदर्शी भी होता है, अत' पहले उनके सच्चे-प्रेम की परीक्षा लेने के लिए उनको एक दूसरे की मृत्यु के मिथ्या समाचार सुनाता है जिसे सुनकर दोनो प्रेमियो का प्राणान्त हो वह जाता है। इस पर राजा को अपने कृत्य पर बडी ग्लानि होती है और वह आत्म-हत्या के लिए तत्पर हो जाता है। किन्तु उसी समय उसकी पर-दु.ख कातरता से प्रसन्न होकर देवी प्रकट हो जाती है और राजा के कहने से दोनो प्रेमियो को पुनर्जीवित कर देती है। माधव और

---

१. पद्मिनी चरित्र चौपई (सा रा. रि. इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ. स. ७१ से ७६ तक।

२. ससीपना री बात (ह. लि.) राजस्थानी शोध-सस्थान, जोधपुर।

कामकन्दला की परीक्षा लेने के बाद विक्रमादित्य राजा कामसेन से सघर्ष करके माधव को कामकन्दला दिलवा देता है। इस प्रकार राजा विक्रमादित्य का चरित्र एक पर-दु ख भजनकारी, क्षत्रियोचित गुणो वाले वीर राजा के रूप मे चित्रित किया गया है।[1]

अन्य-पुरुष-पात्र :

प्रमुख पात्रो के अतिरिक्त घटना-सयोजन एव उसके विकास के लिए हर कृतिकार को अपने प्रबध-काव्यो मे अन्य पात्रो का चित्रण करना पडता है। इन प्रेमाख्यानो मे राजा, बादशाह, वजिर, मत्री, पुरोहित, फकीर, काजी, ज्योतिषी, वैद्य, साहूकार, कोतवाल, द्वारपाल, रक्षक, प्रेम-सन्देश प्रेषण करने वाले तथा गीत गाकर मन बहलाने वाले डोम, ढाढी, जागड, चारण, भाट, इचारज, एव कलाकार, चित्रकार, नट, नटी, चोर, जुआरी, ठग आदि अनेक पात्रो का चित्रण मिलता है।

स्त्री-पात्र

नायिका

इन प्रेमाख्यानो मे प्राय. सभी नायिकाओ का चरित्र-चित्रण आदर्शात्मक दृष्टिकोण लिए हुए है। ये नायिकाये अपने जीवन का आदर्श निश्चित किये हुए हमारे सम्मुख आती है। इनका पथ स्पष्ट रहता है, अत इनमे मनोवैज्ञानिक सघर्ष अथवा मानसिक अन्तर्द्वन्द्व नही दिखलाई पडता। इन नायिकाओ के चरित्र-चित्रण की सामान्य विशेषताये निम्नलिखित है —

(१) कुछ अपवादो को छोडकर प्राय सभी नायिकाये राजकुमारियाँ, सामन्त-कुल की कन्याये अथवा सेठ-पुत्रियाँ है।

(२) ये अत्यन्त रूपवती प्राय. सभी पद्मिनी जाति की नारियाँ होती है।

(३) कुछ अपवादो को छोडकर, प्रारम्भ मे प्रायः सभी नायिकाये अविवाहित होती है।

(४) ये नायिकाये प्रेम मे एकनिष्ठ होती है और प्रेम-मार्ग मे अपनी दृढता का परिचय देती है।

(५) ये नायिकाये निर्भीक और चतुर होती है। ये अपने प्रेम-व्यवहार मे जाति-पाँति, सामाजिक भेदभाव नही मानती तथा माता-पिता की अवज्ञा करके,

---

१. कुशललाभ कृत माधवानल कामकन्दला चौपई (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

लोक-मर्यादा की चिन्ता किये बिना अपने प्रेमी के साथ घर से भागते हुए भी निसकोच नही करती ।

(६) प्राय सभी नायिकाये शिक्षित और विदुषी है । काव्य-कला, समस्या-विनोद, नृत्य, सगीत आदि ललित-कलाओ मे निपुण है।

(७) ये नायिकाये शील-धर्म का पालन दृढता से करती हैं और अपने शील की रक्षा करना ही इनका सर्वोपरि धर्म होता है ।

(८) इन नायिकाओ का सबसे बडा गुण इनका आशावादी दृष्टिकोण तथा जीवन के प्रति दृढ-आस्था का होना है । ये नायिकाये बात-बात मे आत्म-हत्या करने वाली नही होती, वरिक जीवन की प्रतिकूल परिस्थितियो से लोहा लेने वाली होती है एव सकटपूर्ण घडियो मे अविचलित रहती हैं ।

(९) कुछ नायिकाये प्रेम-बन्धन के समक्ष विवाह के पवित्र-बधन को अस्वीकृत करने वाली होती हैं ।

कुछ प्रमुख प्रेमाख्यानो की नायिकाओं की चारित्रिक विशेषतायें

यहाँ राजस्थानी के कुछ प्रमुख प्रेमाख्यानो की नायिकाओ की चारित्रिक विशेषताओ का सक्षिप्त उल्लेख करना अनावश्यक नही होगा ।

मारवणी

'ढोलामारू रा दूहा' प्रेमाख्यान की नायिका एक आदर्श पत्नी के रूप मे चित्रित की गई है । ढोला से मारवणी का विवाह बचपन मे ही हो जाता है । जब वह युवा अवस्था को प्राप्त होती है, तब सखी से साल्हकुमार के साथ अपने विवाह की बात जानकर, उसके विरह मे व्यथित हो उठती है । मारवणी की विरह-जनित उक्तियो मे ढोला के प्रति उसकी प्रेम की एकनिष्ठता का परिचय प्राप्त होता है । वह विदुषी और चतुर नारी है । उसकी दूरदर्शिता का पता उस समय चलता है जबकि जगल मे पडाव के समय ऊमर सूमरा की चेष्टाओ से ढोला के प्रति विश्वास-घात की योजना ताड जाती है और सकेत से ढोला को बुलाकर सब रहस्य बता देती है । मारवणी में स्त्री-स्वभाव जन्य सौत के प्रति ईर्ष्या की भावना भी मिलती है । वह मालवणी के 'बडे बोल' को सहन नही कर पाती । मालवणी के साथ विवाद मे उसकी अपनी जन्म-भूमि के प्रति निष्ठा भी व्यक्त होती है ।[1]

सावलिंगा :

'सदयवत्स-वीर-प्रबन्ध' की नायिका सावलिंगा एक आदर्श प्रेमिका और पति के सुख-दु ख की सहभोक्ता, एक आदर्श गृहणी भी है । जब सदयवत्स को देश-

---

१. ढोला मारू रा दूहा (काशी ना. प्र. सभा) पृ. १६१–१६२ ।

निकाला मिलता है तो सावलिंगा भी राजसी वैभव और आराम छोडकर अपने पति के साथ हो जाती है। उसे भयानक जगलो मे भूख-प्यास से पीडित होने की भी चिन्ता नही होती। जब सदयवत्स उसे वन के कष्टो से अवगत करके राजमहलो मे ही रहने को कहता है तो वह पतिव्रत-निष्ठा को व्यक्त करती हुई उसे निरुत्तर कर देती है।[1] वन मे सब कष्टो को सहर्ष सहन करती है, जिससे उसकी कष्ट-सहिष्णुता का परिचय मिलता है। सावलिंगा का प्रेम भी एकनिष्ठ है। उसके प्रेम की एकनिष्ठता का परिचय उस अवसर पर मिलता है, जब सदयवत्स निश्चित अवधि मे उसके समीप नही पहुँचता और वह उसके वियोग मे जीवित ही चिता मे भस्म होने को तत्पर हो जाती है।

कामकन्दला

गणपति कृत 'माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध' की नायिका यद्यपि एक गणिका है, किन्तु उसमे जो चारित्रिक उच्चता मिलती है, उससे वह सीता, सावित्री के पवित्र चरित्रो के समक्ष जा बैठी है। कामकन्दला एक अत्यन्त रूपवती राज-नर्तकी है। ललित-कलाओ मे और विशेषकर नृत्य-कला मे वह पारगत है। एक दिन राजसभा मे बैठे हुए माधव के रूप व गुणो पर आकर्षिक होकर, उसे अपना हृदय समर्पित कर देती है। वह एक दृढ निश्चय वाली निर्भीक प्रेमिका है। अपने प्रेमी के लिए वह राजकोप की भी चिंता नही करती। उसकी प्रेमनिष्ठा की पराकाष्ठा उस अवसर व्यक्त होती है जब राजा विक्रमादित्य से माधव की मृत्यु के मिथ्या-समाचार सुनकर अपने प्राण-विसर्जन कर देती है।[2]

मालती

चतुर्भुज कृत 'मधुमालती'[3] की नायिका एक प्रगल्भ और चतुर-प्रेमिका है।

---

१. "डूँगय-गामिणि ! गमिसू गिरी-कदरि,
रहिरामा ! अमिय लोयणि ! मदिरि" ॥१४८॥
जे सूर नर सारिव करि, बापिइ बाधिया बेह।
सुणि सूदा ! [सामलि भणइ !] ते किम छूटइ छेह ? ॥१४९॥
शशि विण निशि, दिशि दिवस विणु, जिय नदी विणु वारि।
तिम सूदा ! [सामली भणई !] नर विणु न सोहइ नारि ॥१५२॥
—सदयवत्स वीर-प्रबध, पृ. स २२।

२. कुशललाभ कृत माधवानल कामकन्दला चौपई (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

३. चतुर्भुज कृत सचित्र मधुमालती (ह लि) रा. प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर। ग्रथाक ४९१५।

पाठशाला मे पढते समय वह मधु के रूप पर मुग्ध हो जाती है। वह मधु पर फूल फैंककर अपना प्रेम व्यक्त करती है तथा अवसर मिलने पर एकान्त मे मधु को पाकर उससे प्रणय निवेदन भी कर देती है। मधु द्वारा क्षत्रिय ब्राह्मण का जातिगत तथा सामाजिक असमानता का भेद बतलाकर उसके प्रणय-प्रस्ताव को ठुकराने पर निराश नही होती। वह माधव को अनेक दृष्टान्त देकर सच्चे प्रेम के बीच मे जातिगत एव समाजगत भेद-भाव की दीवारो को तोडने के लिए प्रोत्साहित करती है और अपनी वाक्-पटुता तथा बुद्धिमानी का परिचय देती है और अन्त मे अपनी चतुरता से मधु के हृदय को जीतने मे सफल होती है। मालती एक स्वतत्र विचारो वाली नायिका है। वह अपने प्रेम-मार्ग मे लोक-मर्यादा के नाम पर सामाजिक-भेदभाव एव रूढिगत सस्कारो को अस्वीकृत करके माता-पिता की आज्ञा लिए बिना मधु से गधर्व-विवाह कर लेती है। मालती का यह कृत्य जब उसके पिता को विदित होता है, तब वह मधु को मारने के लिए अनेक प्रयत्न करता है। इस समय मालती के हृदय की जो विह्वल स्थिति होती है, उससे उसकी प्रेम-निष्ठा का परिचय मिलता है। सक्षेप मे मालती एक आदर्श-प्रेमिका के रूप मे चित्रित की गई है।

हँसा

'हँसावली विक्रम चरित्र विवाह'[1] की नायिका हँसा भी एक आदर्श प्रेमिका है। राजकुमार विक्रम को देखकर वह अपना हृदय उसे समर्पित कर देती है। हँसा की कसी अन्य राजकुमार से सगाई पहले से हो जाती है तथा उसकी बारात भी आने वाली होती है, किन्तु वह इस बात की कुछ भी चिन्ता नही करती। हँसा अपने माता-पिता की प्रतिष्ठा की चिन्ता किये बिना निश्चित योजना के अनुसार विवाह के लग्न के समय पुरुष-वेश मे राजमहल से निकल पडती है और घोडे पर बैठकर प्रेमी के साथ भाग जाती है। सामाजिक दृष्टि से हँसा का यह कृत्य लोक-बाह्य और निर्लज्जतापूर्ण ही कहलायेगा, किन्तु प्रेम के मार्ग मे इसे अनुचित नही समझा जा सकता। हँसा जीवन की प्रतिकूल परिस्थितियो मे भी धैर्य रखने वाली निर्भीक और दृढ निश्चय वाली नायिका है। प्रात होने पर जब उसे पता चलता है कि जिस व्यक्ति के साथ वह भागकर आई है, वह उसका प्रेमी राजकुमार विक्रम न होकर कोई अन्य पुरुष है तब विचलित तो अवश्य होती है, पर तुरन्त सम्हल जाती है। वह उस व्यक्ति से सेवक का काम लेती है और अपनी

---

१. कवि मधुसूदन व्यास कृत हँसावती विक्रम चरित्र विवाह: प्रकाशक—श्री फार्बस गुजराती सभा, बम्बई, (१९३५ ई)।

बुद्धिमता से उससे मुक्त हो जाती है। हँसा वन मे अनेक कष्टो को भोगती है, जिससे उसकी कष्ट-सहिष्णुता का भी परिचय मिलता है, किन्तु जब गरुड पक्षियो के वार्तालाप से उसे अपने माता-पिता के कष्टो का पता चलने पर तथा जिस प्रेमी के लिए भागकर आई है, उससे मिलने की आशा धूमिल होने पर, वह काशी करवत लेने पहुँच जाती है। सयोगवश काशी का राजा निस्सतान होता है। वह पुरुष-वेश मे हँसा को कोई होनहार राजकुमार समझकर गोद लेता है तथा अपनी राजकुमारी का उसके साथ विवाह कर देता है। हँसा इस अवसर पर भी अपनी दक्षता और धैर्य का परिचय देती है और असली भेद को प्रकट नही होने देती। सयोगवश अपनी प्रेमिका के वियोग से दुखी होकर राजकुमार विक्रम भी काशी करवत लेने पहुँचता है, तब हँसा बडे नाटकीय ढग से अपने वास्तविक रूप मे प्रकट हो जाती है।

कमलावती :

'रणसिंघ कुमार चौपई'[1] की नायिका कमलावती प्रारम्भ मे निष्ठावान् प्रेमिका तथा बाद मे एक उत्तम गृहणी के रूप मे चित्रित मिलती है। वह यक्ष-पूजा के समय वन मे रणसिंघ कुमार के रूप को देखकर मोहित हो जाती है और यक्ष से रणसिंघ कुमार के साथ वरण का वरदान मागती है। प्रारम्भ मे वह इतनी अधीर होती है कि रणसिंघ कुमार का वियोग सहन नही कर पाने के कारण आत्म-हत्या को तत्पर हो जाती है। अपने प्रेमी के साथ वरण करने के लिए वह माता-पिता की आज्ञा भी नही लेती और गधर्व-विवाह कर लेती है। कमलावती के चरित्र की उज्जवलता उसके विवाहित जीवन के बाद प्रकट होती है। कनकवती के द्वारा भेजी गई कूटनी जब रणसिंघ कुमार के मन मे कमलावती के चरित्र के प्रति सन्देह उत्पन्न कर देती है तो वह कमलावती को मत्री के द्वारा जगल मे छुडवा देता है। ऐसे दुर्भाग्य के समय कमलावती वन के भयकर कष्टो को भोगकर भी अपना धैर्य नही छोडती। देवता, बडे-बडे प्रलोभन देकर उसकी परीक्षा लेते है, किन्तु वह अपना शील-व्रत छोडने को तैयार नही होती। वह एक दूरदर्शी नायिका भी है। अपने पति द्वारा अकारण रुष्ट होने तथा असहाय अवस्था मे छोडने का कारण वह ब्राह्मण-वेश बनाकर उससे ज्ञात कर लेती है। वह एक क्षमाशील नारी है। अपनी सौत कनकवती के दुष्ट कृत्य पर राजकुमार जब कुपित होता है तो वह अपना अनिष्ट करने वाली कनकवती को, अपने ही कर्मो को दोष बतलाकर क्षमा करवा देती है। इतना ही नही, उसका हृदय इतना विशाल है कि वह कनकवती को अपने से प्रथम स्थान देने के लिए राजकुमार से आग्रह करती है।

---

१. रणसिंघ कुमार चौपई (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

रतनवती :

'रतनपाल रतनवती रास'[1] की नायिका रतनवती भी एक आदर्श प्रेमिका है। विवाहोपरान्त रतनपाल का वियोग सहन नही कर पाने के कारण, रतनपाल के मनाकर देने पर भी वह पुरुष-वेश मे 'रावल' नामक व्यक्ति का छद्मवेश धारण करके रतनपाल से मित्रता स्थापित करती है और उसके दु ख-दर्द मे सहायक होती है। वह रतनपाल के माता पिता जहा अपना दु खी जीवन व्यतीत करते है, पहुँचकर उन्हे सकट से मुक्त करती है। वह अपनी बुद्धिमानी से साधारण लकडियो के मूल्य मे चन्दन की लकडिया लेने वाले लोभी सेठ को भी उसके कुकृत्य के लिए अच्छी सीख देती है। रतनपाल को उसके माता-पिता से मिलाकर रतनवती अपना वास्तविक रूप प्रकट कर देती है। एक आदर्श गृहणी के रूप मे वह अपने सास-श्वसुर तथा पति की सेवा करती है।

दमयन्ती :

समयसुन्दर कृत 'नलराज चौपई'[2] की नायिका प्रारम्भ मे एक प्रेमलुब्धा नायिका के रूप मे चित्रित मिलती है। उसकी प्रेम निष्ठा का सर्व-प्रथम परिचय उस समय प्राप्त होता है जबकि स्वयवर मे देवराज इन्द्र जैसा प्रतापी और वैभवशाली देवता भी उसका प्रणयार्थी होता है, किन्तु दमयन्ती इतने वडे प्रलोभन को भी ठुकरा देती है। विवाह के वाद वह सुख-दु ख मे पति के जीवन-साथी एव आदर्श-गृहणी के रूप मे चित्रित मिलती है। अपने दुर्भाग्य के समय मे वह विचलित नही होती तथा पति को धैर्य देती है। जव नल उसे वन मे सोता हुआ छोडकर चले जाता है, तव भी वह अपने धैर्य का परिचय देती है और पीहर पहुच जाती है तथा अपनी दूरदर्शिता से अपने स्वयवर के मिथ्या समाचार नल के पास भेजकर उसे प्राप्त कर लेती है।

मृगावती :

'मृगावती रास'[3] की नायिका मृगावती भी एक आदर्श-गृहणी है। वह भी विपत्ति के समय धैर्य रखती है। वन मे ऋषि के आश्रम मे उदयन को जन्म देती है और उसका पालन-पोषण करती है। वह एक अत्यन्त रूपवती रानी है। चित्रकार से मृगावती के रूप की प्रशसा सुनकर चण्ड प्रद्योत उसे प्राप्त करने के लिए आक्रमण कर देता है, किन्तु मृगावती चण्ड प्रद्योत जैसे प्रतापी राजा को भी अपने शील के

---

१ रतनपाल रतनवती रास (ह लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

२ समयसुन्दर कृत नलराज चौपई (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

३. समयसुन्दर कृत मृगावती रास (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

आगे तुच्छ समझती है। वह दूरदर्शी और बुद्धिमान रानी है तथा कूटनीतिज्ञ भी है। जब उसे मालूम होता है कि चण्ड प्रद्योत जैसे शक्तिशाली राजा से प्रतिरोध किले की दीवारे मजबूत किये बिना करना कठिन है, तब कुछ अवसर पाने के लिए वह चण्ड प्रद्योत को उदयन की सुरक्षा के लिए किले की दीवारे मजबूत करवाकर, उसके पास पहुचने का मिथ्या-सन्देश भेज देती है और इस भाँति से चण्ड प्रद्योत जैसे कूटनीतिज्ञ राजा को भी अपनी कूटनीतिज्ञता से परास्त कर देती है। अपने पति के स्वर्गवासी होने पर वह भी वैराग्य ले लेती है।

पद्मिनी :

'पद्मिनी चरित्र चौपई'[1] की नायिका पद्मिनी भी प्रारम्भ मे एक आदर्श-प्रेमिका के रूप मे ही चित्रित मिलती है, किन्तु विवाह के बाद, उसमे एक स्वाभिमानी क्षत्राणी के गुण मिलते है। वह अपने प्रेम मे निष्ठावान् होती है। अलाउद्दीन जैसा प्रतापी बादशाह भी उसको अपने शील से हटाने मे असमर्थ रहता है। विपत्ति के समय, वह अपना धैर्य नही खोती। जब समस्त वातावरण उसके प्रतिकूल होता है तब भी वह अपने शील की रक्षा के लिए गोरा बादल के पास जाती है और अपनी विनम्रता तथा वाक्-पटुता से उनका हृदय जीतकर अलाउद्दीन को अपनी कूटनीतिज्ञता से परास्त कर राणा रतनसेन को छुडा लाती है।

उपर्युक्त नायिकाओ के चरित्र-चित्रण से हम इस निष्कर्ष पर पहुचते है कि इन प्रेमाख्यानो की नायिकाये जहाँ एक ओर आदर्श-प्रेमिकाये हैं, वहाँ विवाहोपरान्त आदर्श-गृहणी का भी परिचय देती है। विपत्ति के समय ये बात-बात पर आँसू नही बहाती तथा जीवन की प्रतिकूल परिस्थितियो मे भी दृढ धैर्य, कष्ट सहिष्णुता और दूरदर्शिता का परिचय देती है। जीवन के प्रति इन नायिकाओ मे अटूट आस्था है।

सोढी रानी :

यह सत्य है कि पात्रो के चरित्र-चित्रण मे इन प्रेमाख्यानकारो ने कोई मनोवैज्ञानिक उलझन अथवा मानसिक अन्तर्द्वन्द्व नही दिखलाया है। इनके अधिकाश चरित्र केवल 'टाइप' चरित्र है, किन्तु कही-कही ऐसे चरित्र उनकी कलम से उभर गये है, जिनमे मानसिक अन्तर्द्वन्द मिलता है। ऐसे चरित्रो मे 'लाखा फुलाणी री बात'[2] की नायिका सोढी रानी का चरित्र लिया जा सकता है। परदेश जाते समय

---

१. पद्मिनी चरित्र चौपई, सा रा रिसर्च इन्स्टीट्यूट, बीकानेर।

२. लाखा फुलाणी री बात (ह. लि) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रथाक ३५५५ (२७)।

लाखा पीछे से सोढी का गीतो से मन बहलाने के लिए मनफूलियाँ डोम को छोड जाता है। कुछ दिन बीत जाने पर सोढी मनफूलियाँ डोम का साहचर्य पाकर उसके प्रति आकर्षित हो जाती है और कामातुर होकर स्खलित हो जाती है। जब लाखा को इस बात का पता चलता है तो वह परदेश से लौटकर सोढी को मनफूलियाँ डोम को ही सौप देता है और सोढी भी इस स्थिति को स्वीकार कर लेती है। किन्तु समय बीतने पर सोढी को डोम की क्षुद्रता का आभास होने लगता है और उसे लाखा की याद आने लगती है। वह लाखा के प्रेम को भूल नही पाती तथा अपने स्खलन के प्रति पश्चाताप प्रकट करती है। अन्त मे सोढी के मन मे इतना सघर्ष होता है कि वह अपने प्राण-त्याग का निश्चय कर लेती है किन्तु अपने प्राण-विसर्जन से पूर्व लाखा के हाथ से बनाये हुए 'शूले' खाने की इच्छा रहती है, जो उसे बहुत प्रिय थे और लाखा उसे खिलाया करता था। यद्यपि लाखा ने भी क्रोधित होकर सोढी को मनफूलियाँ डोम को सौप तो दिया था, किन्तु वह भी उसका प्रेम नही भूल पाया था। उसके मन मे सोढी को लेकर मानसिक-सघर्ष छिडा रहता था, किन्तु सामाजिक मर्यादा ही सोढी को पुन अपनाने के लिए बाधा थी। अन्त मे, लाखा सोढी को अपने हाथ से 'शूले' खिलाना स्वीकार कर लेता है और सोढी के प्राण-विसर्जन पर उसे चन्दन की लकडियो की चिता बनवाकर जलाता है।

प्रतिनायिकायें :

प्रतिनायको की भाति प्रतिनायिकाये भी नायक-नायिका के मिलन मे बाधा डालने वाली नारियो के रूप मे चित्रित मिलती है। ये नायको के रूप पर मुग्ध होकर उनके समक्ष प्रणय का प्रस्ताव रखती हैं, किन्तु नायक इनके प्रणय-प्रस्ताव को ठुकरा देते है। अपने प्रणय-व्यापार मे असफल होने पर, प्राय प्रतिनायिकाये नायक-नायिकाओ से प्रतिशोध लेने के लिए अनेक षड्यत्र रचती हैं। प्रायः सभी प्रतिनायिकाये ईर्ष्यालु स्वभाव की होती है। ये अपने दुष्ट-स्वभाव को अन्त तक नही छोडती।

कनकवती :

'मलय सुन्दरी रास' मे प्रतिनायिका राजा महाधवल की छोटी रानी कनकवती होती है। महाबल जब मलय सुन्दरी से मिलने जाता है तो भूल से कनकवती के महल मे पहुँच जाता है। कनकवती महाबल के रूप पर मुग्ध हो जाती है और उससे रमण का प्रस्ताव रखती है। महाबल मलया से मिलकर लौटने का वचन देकर अपना पीछा छुडाता है, किन्तु वह छिपकर महाबल तथा मलया की प्रणय-लीला देख लेती है तथा ईर्ष्या-अग्नि मे जल उठती है। वह राजा के पास महाबल को पकड़ने के लिए समाचार भेजती है किन्तु महाबल भाग निकलता है।

लेकिन कनकवती अपनी हार नही मानती। वह मलया की माता (पटरानी) का लक्ष्मीपु ज हार स्वय चुराकर उस पर मिथ्याआरोप लगाती है कि उसने लक्ष्मीपु ज हार महावल को दे दिया है तथा पटरानी और मलया महावल से मिलकर राज्य पर आक्रमण कराना चाहती हैं। राजा कनकवती की वात पर विश्वास कर मलिया को अन्धकूप मे गिरवा देता है। जब कनकवती के झूठे पड्यत्र का पता चलता है तो वह भागकर अपनी सखी मागधी वेश्या के यहाँ आश्रय लेती है। इससे पता चलता है कि वह एक नीच प्रकृति की प्रतिनायिका है। वह अपने प्रणय सम्बन्धो मे भी एकनिष्ठ नही रहती। वाद मे वह एक चोर को अपना हृदय समर्पित कर देती है। उसकी दुर्दशा को देखकर महावल उसे अपने यहाँ आश्रय देता है, किन्तु वह उन्हे सुखी देखकर ईर्ष्या की आग मे जल उठती है। वह इतनी कृतघ्न प्रकृति की नारी है कि महावल द्वारा उसके प्रति उपकार करने पर भी वह उसके परदेश गमन पर पीछे से षड्यत्र रचकर मलिया सुन्दरी को राक्षसी वतलाकर राजा से राज्य के वाहर निकलवा देती है।

रतनवती :

'रणसिंघ कुमार चौपई'[1] की प्रतिनायिका रतनवती राजकुमार रणसिंघ के रूप की प्रशसा सुनकर उससे मनसावरण कर लेती है और पिता के समक्ष अपने मन की वात प्रकट कर देती है। राजा रणसिंघ कुमार के साथ उसकी सगाई निश्चित कर देता है। किन्तु, जब कमलावती और राजकुमार के प्रणय सम्बन्ध के वारे मे रतनवती को ज्ञात हुआ, तो वह ईर्ष्या की अग्नि मे जल उठती है। रतनवती कमलावती के प्रति राजकुमार का मन फेरने के लिए गन्ध मूसिया कूटनी को भेजती है और वह पड्यत्र रचकर राजकुमार के मन मे कमलावती के चरित्र के प्रति सन्देह उत्पन्न कर देती है। राजकुमार कमलावती को महलो से निष्कासित करके वन मे छुडवा देता है। इसके वाद वह रतनवती की ओर उन्मुख होता है, किन्तु कमलावती के प्रति अगाध प्रेम होने से उदास रहता है। जब रतनवती को उसकी उदासी का कारण ज्ञात होता है तब वह फिर ईर्ष्या की अग्नि मे जल उठती है और क्रोध मे अपने षड्यत्र को स्वय ही प्रकट कर देती है। इस प्रकार रतनवती एक ईर्ष्यालु, क्रोधी स्वभाव की तथा अदूरदर्शी प्रतिनायिका है।

नायिका की सहायिकायें-सखी, दूती एव खवासिन आदि :

इन प्रेमाख्यानो मे सखी, दूती एव खवासिन आदि नायक-नायिका के मिलन मे सहायक नारियो के रूप मे चित्रित की गई है। प्रेमी-प्रेमिकाओ के प्रेम सन्देशो

---

१. रणसिंघ कुमार चौपई (ह लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

का आदान-प्रदान भी इनके द्वारा होता है। 'ढोला मारू रा दूहा' काव्य मे ऊमर सूमरा के षडयन्त्र से ढोला को मारवणी के पीहर की ढोलिन गीत गाकर सचेत करती है और उनके प्राणो की रक्षा करती है।[1] 'वीरमदे सोनगिरारी बात' 'जलाल गट्टाणी री वारता', 'नागजी नागवती री बात', 'गुलाबा भवरा री वारता', 'रतना हमीर री वारता', 'पना वीरमदे री वारता' आदि प्रेमाख्यानो मे खवासिन प्रेमी-प्रेमिकाओ के प्रेम-सन्देशो का आदान-प्रदान करती है। 'मधुमालती'[2] प्रेमाख्यान मे उल्लेख है कि मालती की सखी जैतमाल मधु के हृदय मे मालती के प्रति प्रेम का उद्रेक करती है तथा निराशा की घडियो मे उसे धैर्य देती है। 'कुतुबशतक'[3] मे ढढणी नायक-नायिका के मिलन मे सहायिका के रूप मे चित्रित मिलती है। 'अचलदास खीची री वात'[4] मे उल्लेख है कि झीमी चारणी मीठा प्रेम-राग गाकर अचलदास खीची के हृदय मे उमादे के प्रति प्रेम उत्पन्न करती है। कठिन समय मे वह उमादे को धैर्य देती है तथा उसका मार्ग-दर्शन भी करती है।

नायिकाओ की सखियाँ प्रायः नायक-नायिकाओ के मिलन मे सहायक के रूप मे चित्रित की गई है, किन्तु कही-कही नायिका को उसके प्रेमी से मिलाने के स्थान पर स्वय ही सौत बन मे बैठती हैं। 'राजा सुसील री वारता'[5] मे उल्लेख है कि जब राजकुमारी सुमित्रा की सखी, राजकुमारी के मगेतर राजा सुसील के रूप को देखती है तो वह उस पर मुग्ध हो जाती है तथा अपनी सखी को धोके से समुद्र मे गिराकर तथा उसके वस्त्र स्वय पहिनकर राजा से विवाह कर लेती है। सयोगवश सुमित्रा वच जाती है। उसकी सखी, प्रधान-पुत्री के विश्वासघात का भण्डाफोड होता है, पर सुमित्रा उसको क्षमा कर देती है।

मालिन :

राजस्थानी के प्रेमाख्यानो मे मालिन महत्वपूर्ण-पात्र के रूप मे चित्रित मिलती है। कुछ अपवादो को छोडकर यह नायक-नायिका के मिलन में सहायिका के रूप मे ही वर्णित है। अपनी प्रेमिका से मिलने के लिए, प्राय. नायक मालिन

---

१ ढोला मारू रा दूहा (काशी नागरी प्रचारणी सभा, काशी)।

२ चतुर्भुजदास कृत सचित्र मधुमालती (ह. लि) रा प्रा. वि प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रथाक ४९१५।

३ कुतुबशतक (ह लि.) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रथाक ११५२।

४. अचलदास खीची री बात (रा. प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रथांक १५२९५।

५. राजा सुसील री वारता (ह. लि.) सरस्वती भण्डार, उदयपुर) ग्रथाक ७०२।

के घर या बाग मे आश्रय लेते हैं। मालिन के द्वारा ही वे अपनी प्रेमिकाओ की गतिविधियो का पता लगाते हैं तथा मालिन ही उनके प्रेम-सन्देशो का आदान-प्रदान करके उनके मिलन का सुयोग जुटाती है।

'हसाउली' के प्रेमाख्यान का नायक राजा नरवाहन अपने मत्री मनकेसर के साथ मालिन के घर पर ही ठहरता है और उसके द्वारा ही वे राजकुमारी 'हंसाउली' के बारे मे पता चलाते हैं तथा आगे का कार्य-क्रम निर्धारित करते हैं। इसी काव्य मे उल्लेख है कि राजकुमार बछराज बाग मे विश्राम करता है और बाग के वृक्ष फल-फूलो से लद जाते है। मालिन उसे भाग्यशाली समझ कर अपने घर पर ले जाती है। राजकुमार मालिन के यहा रहकर मालायें गूंथता है और राजकुमारी के पास अपनी उपस्थिति की सूचना मालाओ मे 'सकेत-चिन्ह' बनाकर पहुचा देता है। 'हसाउली विक्रम चरित्र विवाह'[२] का नायक विक्रम भी मालिन के यहा विश्राम करता है। इसी भाँति 'रूपसेन कुमार नो चरित्र'[३] का नायक रूपसेन भी बाग मे पैर रखता है तो बाग लहलहा उठता है। मालिन उसे अपने घर ले जाती है और राजकुमारी से रूपसेन का गुप्त-मिलन करवा देती है।

इन प्रेमाख्यानो में कही-कही मालिन नायक-नायिका के मिलन मे सहायक होने की अपेक्षा बाधक के रूप मे भी चित्रित मिलती है। रतन माणक साहजादारी बात'[४] मे उल्लेख है कि मालिन राजकुमार रतन के रूप पर मुग्ध होकर उसे मेढा बनाकर रख लेती है। बाद मे भेद खुलने पर उसे अपने दुष्ट-कर्म का दण्ड भी मिलता है।

अन्य-स्त्री पात्र

अन्य स्त्री-पात्रो में पटरानियो का महत्वपूर्ण स्थान है। प्राय. सभी पटरानियाँ कामुक चित्रित की गई हैं। वे इतनी कामुक और निर्लज्ज होती है कि अपने सौतेले-पुत्रो के रूप पर मुग्ध होकर उनके सम्मुख प्रणय प्रस्ताव रखने में भी लज्जित नही होती। उनमे बदले की भावना कूट-कूट कर भरी हुई होती है। अपने प्रणय-प्रस्ताव के ठुकराये जाने पर वे नायिकाओ पर मिथ्या दोषारोपण करके उन्हे सकटो मे

१. हसाउली : प्रकाशक—गुजरात वर्नाक्यूलर सोसाइटी, अहमदाबाद।
२ कवि मधुसूदन व्यास कृत हसाउली, विक्रम चरित्र विवाह, प्रकाशक : श्री फार्बस गुजराती सभा, बम्बई (१९३५ ई.)
३. श्री रूपसेन कुमार नो चरित्र, पृ. स. ३४ से ३८।
४. 'रतन माणक साहजादा री बात' (ह. लि.) सरस्वती भण्डार, उदयपुर।

डालती है। इन प्रेमाख्यानो मे स्त्री-पात्रो मे वेश्यायें भी मिलती हैं जो या तो नायक की सहायक सिद्ध होती है या फिर स्वय नायक के रूप पर मुग्ध होकर उसके साथ रमण करने के लिए जादुई विद्या से मेढा या तोता बनाकर अपने घर रख लेती हैं। उत्तमकुमार चरित्र चौपई' तथा 'विद्या विलास' के नायको को वेश्यायें तोता बना कर अपने यहा रख लेती हैं। इनके अतिरिक्त स्त्री-पात्रो मे नायक-नायिका की माता, दासियाँ, डोमरण, चारणी, धोबिन, कुम्हारिन, तमोलिन आदि अनेक स्त्री पात्रो का चित्रण इन प्रेमाख्यानो मे मिलता है।

* * *

---

१ उत्तमकुमार चरित्र चौपई (विनयचन्द्र-कृति कुसुमाजलि, पृ. स १८४।

२ विद्या विलास रास (ह. लि.) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर, ग्रंथांक।

ष

ष्ठ

म

अध्याय

प्रकृति-चित्रण, दृश्य-विधान एवम् अन्य वस्तु-वर्णन

ष

ष्ठ

म

अध्याय

प्रकृति चित्रण, दृश्य विधान एवं अन्य वस्तु-वर्णन

प्रकृति और मानव का सम्बन्ध चिरकाल से चला आरहा है। प्रकृति की गोद मे ही मानव-शिशु का पालन-पोषण हुआ है तथा उसके निरन्तर साहचर्य से ही प्रकृति के विविध रूपो को देखकर मानव हृदय मे विस्मय, प्रेम, भय आदि सवेदनाओ का प्रस्फुटन हुआ है। जहाँ एक ओर प्रकृति सौन्दर्य से परिपूर्ण मृदु और कोमल रूप मानव के मन को मोहता रहा है तथा उसमे सुकोमल भावनाये जागृत करता है, वहाँ प्रकृति का कठोर रूप उसे विस्मित तथा भयभीत करता रहा है और साथ ही उसे सघर्ष की प्रेरणा भी देता रहा है। मानव और प्रकृति के इस अटूट सम्बन्ध की अभिव्यक्ति धर्म, दर्शन, साहित्य और कला मे चिरकाल से होती रही है। साहित्य मानव-जीवन का प्रतिबिम्ब है, अत उस प्रतिबिम्ब मे उसकी सहचरी प्रकृति का प्रतिबिम्ब होना स्वाभाविक है। वैदिककाल का ऋषि भी प्रकृति के रहस्यमय और विस्मयजनक व्यापारो को देखकर विस्मित और उल्लसित हो उठा था। ऋग्वेद मे उषा, सूर्य, मरुत्, इन्द्र आदि को अलौकिक शक्तियो के रूप मे स्वीकार करते हुए, उसके मानवी क्रियाकलापो का चित्रण किया गया है जिसमे वैदिक ऋषि के प्रकृति से निकट सम्बन्ध की व्यजना सम्यक् रूप से हुई है। आदि कवि बाल्मीकि की काव्यगत प्रेरणा का स्रोत ही प्रकृति के सजीव प्राणी, क्रौच वध रहा है। बाल्मीकि रामायण मे मानवीय भावनाओ के उद्दीपन के लिए स्थान २ पर प्रकृति का आश्रय ग्रहण किया गया है। उद्दीपन के अतिरिक्त रूप-सौन्दर्य की साज-सज्जा (अलकार) के रूप मे भी प्रकृति का प्रयोग बाल्मीकि रामायण मे हुआ है। परवर्ती सस्कृत साहित्य मे तो प्रकृति का चित्रण इतनी मात्रा मे हुआ है कि हमे सर्वत्र प्रकृति सौन्दर्य की ही छटा दृष्टिगोचर होती है। प्रकृति चित्रण का ऐसा कोई रूप

नहीं जो सस्कृत के काव्य भण्डार मे उपलब्ध नही होता। महाकवि कालीदास माघ, भारवी, दडी और हर्ष की रचनाये प्रकृति के रम्य चित्रण से भरी पडी हैं। इन कवियो ने प्रकृति का चित्रण इतने परिणाम मे किया है कि वह महाकाव्य के एक आवश्यक लक्षण के रूप मे स्वीकार कर लिया गया। 'कादम्वरी और दशकुमार चरित' जैसी गद्य रचनाये भी प्रकृति-सौन्दर्य के ऐश्वर्य से भरपूर है।

प्राकृत और अपभ्र श के जैन कवियो ने प्रकृति वर्णन का पर्याप्त विस्तार दिया है किन्तु उसमे सस्कृत कवियो की ही उक्तियो को पिष्टपेषण अधिक है, मौलिकता कम है। हाँ, अपभ्र श के परवर्ती युग मे अब्दुर्रहमान जैसे कवियो ने उद्दीपन रूप मे प्रकृति के कई चित्र उपस्थित किये हैं। इस प्रकार हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि वैदिक युग से लेकर अपभ्र श युग के साहित्य मे प्रकृति चित्रण का प्रमुख स्थान रहा है।

साहित्य मे प्रकृति-चित्रण के कई रूप प्रचलित हैं। कवि प्रकृति के बहुविध रूपो, दृश्यो और व्यापारो से तादात्म्य स्थापित करता है। वह मानव-मन के साथ प्रकृति का सामजस्य भी स्थापित करता है जहाँ प्रकृति उसके सुख दु ख के क्षणो की सहभोक्ता बनकर उल्लसित होती है, हँसती है और विषाद के आँसू बहाती है। कवि कभी प्रकृति का सश्लिष्ट चित्रण कर बिम्ब ग्रहण करवाता है तथा प्रकृति का आलम्बन रूप से चित्रण करता है। कभी वह प्रकृति के माध्यम से उपदेश भी देने लगता है। इस प्रकार हमे मुख्य रूप से साहित्य मे प्रकृति चित्रण निम्नलिखित रूप मे मिलता है :—

(१) आलम्बन रूप मे (२) उद्दीपन रूप मे (३) अलकारिक रूप मे (४) मानवीकरण और (५) उपदेशात्मक।

राजस्थानी के प्रेमाख्यानो मे प्रकृति चित्रण उपर्युक्त सभी रूपो मे मिलता है किन्तु प्रकृति के उद्दीपन रूप और अलकारिक रूप का विशद् चित्रण हुआ है। चूँकि इन प्रेमाख्यानो का प्रमुख विषय नायक-नायिका के प्रेम-व्यापारो का चित्रण है, तथा शृ गार-रस की प्रमुखता है, अत शृ गार-रस के सयोग और वियोग पक्ष मे षट्ऋतु वर्णन तथा बारहमासा आदि का चित्रण प्रमुख रूप से हुआ है। उपवन, वन, सरोवर नदी, समुद्र आदि प्राकृतिक दृश्यो का चित्रण भी यत्र-तत्र मिलता है।

आलम्बन रूप में प्रकृति-चित्रण :

इन प्रेमाख्यानो मे प्रकृति के आलम्बन रूप का चित्रण दो प्रकार से मिलता है :—(१) वस्तुपरिगणनात्मक और (२) बिम्बात्मक अथवा चित्रात्मक।

१. प्रकृति का वस्तुपरिगणात्मक रूप :

प्रकृति के वस्तु परिगणनात्मक रूप चित्रण मे कवि का हृदय उतना रम नही पाता जितना कि प्रकृति के बिम्ब ग्रहणात्मक रूप मे रमता है। वस्तु परिगणात्मक रूप मे कवि की बाहुलता का ही पता चलता है। प्रकृति-चित्रण का यह रूप गणपत कृत 'माधवानल कामकन्दला मे कवि ने अपने पाडित्य प्रदर्शन के लिए पेडो, विषधरो एव विविध औषधियो आदि के नाम गिनाए हैं। इस प्रकार के वर्णनो मे लालित्य की कमी हो गई है। पेडो की गणना करते हुए कवि ने अडतालीस स्वरो और व्यञ्जनो के आधार पर पेडो की एक नामावली लगभग १४ पृष्ठो मे दी है।[1] ऐसे ही विविध धातुओ का वर्णन किया गया है।[2]

'सदयवत्स वीर प्रबध मे भी प्रकृति का चित्रण मिलता है। सावलिगा अपने पति के साथ वन मे से निकल रही है। कवि को वन श्री के वैभव को दिखलाने का यहा सुन्दर अवसर मिलता है, किन्तु कवि इस अवसर का पूरा लाभ नही उठा पाया है। उसने तो मार्ग मे पडने वाले निर्झरो का कल-कल स्वर, मयूरो का मधुर कलरव, पेडो की शीतल छाया तथा निर्जन वन आदि का उल्लेख मात्र कर दिया है।[3] यथा—

---

१. आवा आलू आविली, उबर नह अखोड।
आसो पल्लव अभि भला, अ बरि अडता छोड।
आउलि अरणी अगथीआ, अकुलि अरही आक।
ऐलचि, अर्जुन आमली, अमृत फल ऊलाक।
कल्पद्रुमनइ केत की, कठल वठल कुकुण्ट।
कमरण अनइ कालुवरी केसर सुर सन्तुष्ट।
कतक कलव का भाईउ, केलि किरातु कग्ग।
काली चित्रा काकडा, शीग समाडी शग्ग।
पृष्ठ स. २४३–२५६

२. वाटइ वारू विविध रस, बोधक बली पवाण।
पाणी टीपी पर्वतु, हुइ हेम प्रमाण।
कमठ कया पारा तण, कन्या कँहि धाइ।
मणि मोटेरी ऊमटइ, जेणि अमर पद काय।
पृ. २५६–२५७

३. कवि भीमकृत सदयवत्स वीर प्रबन्ध, पृ स. २६ (सा रा. रि. इन्स्टीट्यूट बीकानेर।

मारगि नई नीझरण निनाद, मधुरा मोर सुहावा साद।
तरु अर, तणइ तलि सीली छाह, वाट घाट विलगइ वरवाँह।
कद मूल फल अ व अहार, इणि परि गम्या दिवस दस वार ।।१७८।।

निर्जन वन का वर्णन :

पुहुता परवत पइली-तीर, आगलि खारू रण, नही नीर।
सीसि सुर, तलइ वेल-ताप, सार्वलिगी त्रणि त्रिसा प्रलाप ।। १७९ ।।

कवि भीम ने भी गणपति की तरह वन का वर्णन करते समय विविध पेडो के नाम गिनाये हैं,[1] यथा—

तिहा दिट्ट तरु अर अति कमाल।
जा वित्तीय जाईफल तज तमाल ।।
वनि अगर तगर चदन किवार।
ककोल कलव घन घनसार सार ।। २११ ।।
कदली दल कोमल फल अलव।
सहकार फणय फोफिल वुलव।
तरूअर सिरि गुण गहीगही गेलि।
नवरग निरुपम नाम वेल्लि ।। २१२ ।।

रूप सेन कुमारनो चरित[2] में भी उपवन के वर्णन मे पेड पौधो के नाम गिनने की प्रकृति दिखलाई पडती है।

जाई जुई गुलाव नारे, केतकि ने मच कु द।
चपा चेण्ली घणा रे, मरवा मोगर कु द।
अ व नि व ने नागनारे, पडते असोक क द व।
नारि केल तरु ताड नारे, ताल तमाल सु ज व।

इस प्रकार हम देखते हैं कि मध्य युग मे काव्य प्रकृति की वस्तु परिगणनात्मक शैली एक परपाटी के रूप मे प्रचलित थी।

(ख) प्रकृति का संश्लिष्ट बिम्बात्मक रूप :

प्रकृति के आलम्बन रूप के चित्रण मे उसका बिम्बात्मक-सश्लिष्ट रूप भी इन प्रेमाख्यानो मे प्रचुर मात्रा मे मिलता है। राठौर पृथ्वीराज कृत 'वेलि क्रिसन

---

१. कवि भीम कृत सदयवत्स वीर प्रबन्ध, (सा. रा रि इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ. स. ३१।
२. श्री रूपसेन कुमार नो चरित्र पृ. स. ३४।

रुक्मिणी री' में प्रकृति के आलम्बन और आलंकारिक रूप का बडा ही हृदय-स्पर्शी और रम्य चित्रण हुआ है। वेलि के प्रकृति चित्रण मे कवि की सूक्ष्मदर्शिता, भाव प्रकरणता, उक्ति चातुर्य तथा रम्य रूप विधायनी कुशलता का परिचय मिलता है जो सस्कृत कवियो को छोडकर अन्यत्र मिलना दुर्लभ है। पृथ्वीराज ने प्रकृति के आलम्बन चित्रण मे सन्ध्या, प्रभात, रजनी, षट्-ऋतुयें आदि का बडा ही भाव प्रयण चित्रण किया है जिसमे कवि की प्रकृति के साथ तादात्म्यता का पता चलता है।

सध्या :

सध्या का वर्णन दो स्थलो पर मिलता है। एक तो उस समय जब द्विज रुक्मिणीजी का सन्देश लेकर द्वारिका के लिए गमन करता है और सन्ध्या हो जाती है—

"गई रवि किरण ग्राह मई गहमह,
रह रह कोई कह रहै रह।"[1]

केवल एक ही पक्ति मे सूरज की किरणो का सिमटना घर-घर मे दीप पक्तियो का झिलमिला उठना कवि के 'शब्द-लाघव' की कुशलता का परिचय मिलता है। दूसरा, सध्या वर्णन का रम्य चित्रण रतिवाछिता रुक्मिणी के हृदय मे मिलनोत्सुकता पैदा करता है—

सकुडिनी समसमा सध्या समयै,
रति वाछिता रुकमणि रमणी।
पथिक वधु द्रिठि, पख पखगिया,
कमल-पत्र सूरिजि किरणी ॥१६०॥[2]

स्वर्गीय पारीकजी के अनुसार यह वर्णन न केवल प्रकृति मे सन्ध्या के सकोच और विस्तार का ही हृदय-स्पर्शी रम्य चित्रण है, बल्कि भाव-जगत् मे दो हृदय के मिलन के समय का सकोच एव हृदय के विस्तार का राग रजित चित्रण भी है।

प्रभात :

सन्ध्या के ही समान प्रभात का भी वर्णन अपनी समता नही रखता—

गत प्रभा-थियौ ससि रयणि गलन्ति,
वर मन्दा सइ वदनि वरि।

---

१. किसन-रुक्मिणी री वेलि, स० श्री नरोत्तम स्वामी, पृ. स. २४।
२. वही, पृ. स. ८५।

दीपक पर जल तो-नही दीपै,
नास फरिम सु रतन नरि ॥१७६॥[1]

पतिव्रता स्त्री के पति के बीमार हो जाने पर उसके मुँह पर छाई हुई मुर्दनी के पीलापन की उपमा चन्द्र ज्योत्स्ना की मन्दता से देकर कितना सूक्ष्म चित्रण किया गया है। इसके अतिरिक्त रति श्रान्ता के भावो तथा सयोग जनित सुख का साकेतिक चित्रण निम्नलिखित पक्तियो मे अ कित हुआ है—

छडिवास प्रफूले फूले ग्रहण सीतलता ग्रही।[2]

नायिका के आभूषणो की शीतलता के अनुभव से प्रभात की प्रतीति 'पन्ना वीरमदे' प्रेमाख्यान की नायिका भी होती है। 'पन्ना वीरमदे' मे प्रभात का वर्णन वडी सरसता के साथ हुआ है—

"इतरै परभात हुवौ। नरु विमास विलावल को वखत आयो। गुणी जणा राग मिलायो। चकवा चकवी को मिलाप। कूकडा वोलीया। जेवरसीलत हुवौ हर कवल फूलिया। रात वर प्रगासियौ तारा विलाया। चिड्या चहकी। ओस का मोती निजर आया।"

दोहा—केसरी काट्ट कूकडा। वोल्यो मुन अभाग।
सेज्या प्यारा सजन रै, सूती छीगल लाग।
मोतीहल सीतल हुआ, रेण गलती दीवै।
प्रात विछोहो सज्जणा, ऊठी विरै अगीवै ॥[3]

प्रभात के समय कमल, केतकी आदि विविध पुष्पो का महकना, भौरो का गुजार, कोयल की कूक तथा तालावो मे हँसो का तैरना आदि प्राकृतिक अवयवो के साथ प्रभात का सजीव वर्णन 'विद्या विलास' प्रेमाख्यान मे भी मिलता है—

इण अवसर उदया चले, उग्यो दिनकर आय।
करे हस कीलोल सर, विकसी सब वनराय।
कमल, केतसी, केवडो, कुद कली महकाय।
मधुकर गुजे मालती, केकी करे किंगार।
कोयल कहके चहचहे, चकवा अने चकोर।[4]

---

१ वही, पृ. स ६५।
२. क्रिसन रुक्मिणी री वेलि—सम्पादक श्री नरोत्तमदास स्वामी, प स ६५।
३. पना वीरमदे री बात (ह लि) दादावाडी, अजमेर, पृ स २६।
४. विनयप्रभ कृत विद्या विलाम (ह लि) (रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर)।

'रतना हमीरी री वार्ता' मे प्रभात का राग रंजित चित्र मिलता है—

"इतरै प्रभात हुवो। कलावता भैरव विनासटी सुरावट भरी। कूकडा सरल साद किया नै मोत्यारा हार री लडा सीली हुई। भास्कर उदै होण नू आयो नै प्राची दिशा पीली हुई।[1]

प्रभात के समय दिशाओ का पाण्डुरता ग्रहण कर लेना, आकाश मे चन्द्रमा का मन्द पड जाना, उदयाचल से सूर्य का उदय होना, पक्षियो का कलरव एव भौरो का गुजन आदि का सरस-वर्णन विनयलाभकृत 'वछराज चउपई' की निम्नलिखित पक्तियो में हुआ है। यथा—

पाडुरता दश दिशिग्रही, भगन स्यामता मास।
विरला अता मडरह्यो, चन्द्र मद आकास।
उदया चालै पर्वत समर, उग्यौ सूरज देव।
जगत तिमिर दूर कियौ, सहस किरण नितमेव।
पथीजन मन फूले, उडै पखी वृद।
कमला कर सौरभ बहु, छूटे गुण मरकद ॥[2]

षट्ऋतु वर्णन

ग्रीष्म :

राजस्थानी प्रेमाख्यानो मे षट्ऋतुओ का भी बडा मनोरम चित्रण हुआ है। राजस्थान मे ग्रीष्म ऋतु का कैसा उग्र रूप हो जाता है? इसका एक सजीव चित्रण वेलि क्रिसन रुक्मिणी से उद्धृत किया जाता है —

अपडि घुडि रवि अम्बरि लागा,
खेतिए अजम भरिया खाद्र।
मृग सिरि वाजि वाजि किंकर मृग,
आद्रा वरिस कीध धर आद्र ॥१९०॥[3]

ग्रीष्म ऋतु मे किस भाँति से तेज हवा चलती है, हर राजस्थानी 'मिरग वाजे है' इस कहावत से परिचित है। 'ढोलामारू रा दूहा' मे भी इस भाव से समता रखने वाला दोहा बडा मार्मिक है—

---

१. रतना हमीर री वारता (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर, अजमेर।
२ विनय लाभ कृत वछराज चउपई (ह लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।
३. वही, पृ. स. १०१।

थल तत्ता लूद्द सामुहि, दाझोला पहियाँह ।
म्हाँकउ कहवउ जउकर अउ, घर वइठा रहियाँह ।।२४१।।[१]

उपरोक्त दोहे मे ग्रीष्म ऋतु का चित्र—वालू रेत का तपना, लू का चलना आदि कितने साकार रूप से व्यजित हुए है ।

गणपति कृत 'माधवानल कामकन्दला' मे भी ग्रीष्म ऋतु के उत्ताप का वर्णन बडा सजीव हुआ है । कवि ने पात्रो की रागात्मिका वृत्ति का साम्य प्राकृतिक व्यापारो से स्थापित किया है । विरहणी की तपन भी उसी प्रकार है जिस प्रकार 'वैशाख' मे वालू दग्ध होती रहती है, यथा—

आम जलइ, धरती जलइ दिनि दिनि जलती राख ।
भायग माहरइ भेटयु, वारू मई वैशाख ।।[२]

ग्रीष्म ऋतु की तीक्ष्ण दग्धता को प्रकट करते हुए कविवर विहारी ने 'जेठ मास की दोपहरी मे छाया चाहति छाँह' मे वडी रम्य कल्पना की है, किन्तु 'क्रिसन रुक्मिणी' का रचनाकार तो रम्य-कल्पना विधान मे विहारी से भी आगे वढ गया है । यहाँ तो अपने उत्ताप से व्यथित होकर स्वय सूरज ने हिम दिशा (उत्तर दिशा) की शरण ली है और वृक्ष राशि (वृप राशि) का आश्रय ढूँढा है ।

शरण हेम दिशि लीधो सूरज,
सूरज ही व्रिख आसरित ।।[३]

वर्षा ऋतु

'ढोला मारू रा दूहा' मे वर्षा ऋतु का बडा ही सुन्दर और रमणीय चित्रण मिलता है । वर्षा ऋतु मे अपने प्रियतम को पूगल जाने से रोकती हुई मारवणी कहती है कि प्रियतम, स्थल स्थल पर जादूगरनी बदलिया छाई हुई हैं । वे मेह बरसने से सूख जाती हैं और लू से घिरकर हरीभरी हो जाती है । यथा—

प्रीतम कामण गारिया थल थल बादलियोह ।
घर बसते सूफिया लू सू पाग़ुरियोह ।।२४८।।[४]

वर्षा ऋतु मे मारवाड की वर्षाकालीन शोभा का वर्णन लीजिए—

---

१. ढोलामारू रा दूहा (ना प्र स. काशी) पृ स. ५५ ।
२. माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध (गायकवाड ओरियन्टल सीरीज) पृ. स २६० ।
३. क्रिसन रुक्मिणी वेलि—सम्पादक श्री नरोत्तमदास स्वामी, पृ स ६८ ।
४. ढोला मारू रा दूहा (ना. प्र सभा, काशी) पृ सं ५७ ।

बाजरिया हरिमालिया बिच बिच बेला फूल ।
जदु भरि बूढउ भाद्र वह मारू देश अमूल ।।२५०।।[1]

भारत देश मे उत्पन्न होने वाले बाजरे के अतिरिक्त वर्षा ऋतु मे खेतो की हरियाली और बेला के फूलने के कारण राजस्थान की प्राकृतिक सुषमा का चित्र कितना सुन्दर बन पडा है । इस वर्णन मे मरुदेश का आचलिक रग गहरा हो उठा है ।

'वेलि क्रिसन रुक्मिणी री' मे भी वर्षा ऋतु के मनोरम चित्र अ कित किये गये हैं । वर्षा का वर्णन करता हुआ कवि कहता है कि जोर से वर्षा होने के कारण पहाडो के नाले शब्दायमान होने लगे हैं । सघन मेघ गम्भीर शब्दो मे गरजने लगा है तथा जल समुद्र मे नही समाता और बिजली बादलो मे । यथा—

बरसतै दडड नड अनड वाजिया,
सघण गजियाउ गुहिर सदि ।
जलनिधि हो सामाइ नही जल,
जलवाला न समाइ जलदि ।।[2]

'वरसतइ दडउ नड अनड वाजिया' पक्ति में नाद सौन्दर्य ध्वनित हो उठा है । भाषा की समासिकता के साथ-साथ ध्वनि की अर्थ प्रतीति का कितना मोहक उदाहरण बन पडा है यह ? पोप ने ठीक ही कहा है—The sound must seem an echo to the sense" पोप का यह कथन उक्त दोहे मे साकार हो उठा है । श्रावण ऋतु के बादलो का एक मनोरम उदाहरण और लीजिए—

काली करी काठल ऊजल कोरण,
धारे श्रावण धरह दिया ।
दसो दिसि डाल ग्रमि,
थमै न विहरण नयण थिया ।।[3]

उक्त 'दोहले' मे कवि की सूक्ष्म निरीक्षण शक्ति तथा भाव-मग्नता तो लक्षित होती ही है, साथ ही चित्रमय बिम्ब विधान का भी सुन्दर उदाहरण है । काली-काली बदलियो मे उज्जवल शरवतिया रग की झालर को केवल पृथ्वीराज की ही

१. ढोला मारू रा दूहा, (ना प्र सभा, काशी) पृ स ५७ ।
२. क्रिसन रुक्मिणी री वेलि, सम्पादक—श्री नरोत्तमदास स्वामी, पृ स १०२ ।
३. वही, पृ. स १०२ ।

दृष्टि देख पाई है। वस्तुत. पृथ्वीराज के ऐसे वर्णन संस्कृत के महाकवि भवभूति की याद को ताजी कर देते है।

इसके अतिरिक्त वर्षा ऋतु का आलम्बन रूप से वर्णन अन्य राजस्थानी प्रेमाख्यानो मे भी मिलता है। यहा माणिक्य सुन्हा सूरी कृत पृथ्वी चन्द्र वाग्विलास मे से वर्षा ऋतु के चित्रण का एक उदाहरण प्रस्तुत किया जा रहा है जिसमे कवि की सूक्ष्म पयवेक्षण शक्ति का तो पता चलता ही है, साथ ही इसमें अनुक्रमणात्मक शब्दो के चयन, रूपक एव उपमाओ के हृदयग्राही प्रयोग से चित्रोपमता आ गई है। यथा—

"विस्तारिउ वर्षाकाल जे पथी तणउ दुकाल जाणिह वर्षा कालि। मधुर ध्वनि मेघ गाजइ। चहु दिशि बीज झल हलइ, पथी गरमणी पुलइ। विरीत आकाश, सूर्य, चन्द्र परिपास राति अधारी लवइ' तिमिरी। उत्तर नउ ऊनयण, छायउ गयण। दिसि घोर, नाचइ' मोर। सधर वरसइ धरावर। पाणीतणा प्रवाह खलहलइ', वाडि ऊपर वेल वलइ। चीखलि चालता शकट स्खलइ, लोकतणा मन धर्म, उपरिवलइ। नदी महापूरि आवइ, पृथ्वी पीठ प्लावइ'। नवा किसलय गहनहइ, वल्ली वितान लहलहइ। कुटुम्ब तोक माचइ। महात्मा बइटा पुस्तक वाचइ'। पर्वतनी झरण विछूतइ', भरिया सरोव फूटइ।"[1]

बसंत ऋतु

इन प्रेमाख्यानो मे बसत ऋतु का भी बडा हृदयस्पर्शी वर्णन हुआ है। बसत ऋतु का उद्दीपन 'रूप' मे तो वर्णन मिलता ही है। राजस्थानी के फागु काव्य में बसत ऋतु का सश्लिष्ट एव मधुर रूप उजागर हुआ है, किन्तु अन्य प्रेमाख्यानो मे इसका आलम्बन रूप निखर उठा है। 'चन्द्रराज चरित्र' से एक उदाहरण प्रस्तुत किया जाता है। यथा—

ऋतु बसत प्रगटि तिसे, सफल थया सहकार।
कामकला कोकिल कहे, जन नै बारबार॥
केसू अति कुसुमति थया, रग सुरग गुलाल।
खेलै फाग बसत नृप तेहनो लाल गुलाल॥[2]

बसत ऋतु का सबसे मार्मिक चित्रण हमे 'वेलि क्रिसन रुक्मणी री' मे मिलता है। कवि ने भावतल्लीनता के साथ बसत को नाना रूपो मे देखा है। बसत

१. राजस्थानी गद्य साहित्य, डा० शिव स्वरूप शर्मा 'अचल' पृ. सं ५४।
२. चन्द्रराज चरित्र (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

ऋतु मे भीना-भीना पवन जिस मथर गति से चलता है, उसका वर्णन बिहारी ने भी बडे ही कौशल एव हृदयहारी ढग से किया है। यथा—

रतन भृ ग घटावली, ग्रुवन स्रमित मद नीर।
मन्द मन्द आवत चल्यो, कु जर कु ज समीर ॥

उपमा की सादृश्यता का वडा ही मनोहर वर्णन है यह ? किन्तु पवन की इस गति का भी निरीक्षण कीजिए जो पृथ्वीराज ने देखी है—

ताइ झरणि छटि ऊनसत मलयपति रजमय धूसर अ ग।
मधु मद प्रवति, मन्दगति मात्हपति, मत्तोन्मत्त मारुत मातग ॥[1]

झरनो के छीटे उडाता हुआ, रज विखेरता हुआ 'मारुत' मातग मे जो मदनोन्मत्तता परिलक्षित होती है, वह कु जर कु ज समीर मे कहाँ ?

शीत ऋतु

इन प्रेमख्यानो मे वर्षा और बसत के चित्रण बहुत मिलते हैं। शीत ऋतु का वर्णन भी आलम्बन रूप से यत्र-तत्र मिल जाता है। कविवर पृथ्वीराज ने शीत रात्रि का वर्णन निम्न प्रकार से किया है—

दिन जेहारिणी रिणाई दरसणी क्रिमक्रिम लागा सकुडिण आकासपोस निसि, प्रउढा कर सणि पु ग्रुरिण ।[2]

पोस माह की रात्रि की लम्बाई का कितना मार्मिक चित्रण है। इसी भाति शरद रात्रि मे रम्य कल्पना विधान, उपमाओ और उत्प्रेक्षाओ का सजीव चित्रण मिलता है। शरद् रात्रि मे स्वय चाँद भी अपनी शुभ्र ज्योतिस्ना मे लुप्त होता दिखलाई देता है तथा हस अपनी प्रिया हसनी को पहिचानने मे भी कठिनाई अनुभव करता है। यथा-- 'हस न देखइ हसनी।'[3]

प्रभात, सध्या, रजनी, षट् ऋतुओ के मार्मिक वर्णन के अतिरिक्त वन, सरोवर, समुद्र आदि प्राकृतिक दृश्यो का भी आलम्बन रूप से सजीव चित्रण इन प्रेमाख्यानो मे पाया जाता है।

वन .

प्रकृति के वस्तु परिगणात्मक रूप की विवेचना करते समय वन के विविध पेड पौधो की नामावली गणना का उल्लेख हम कर चुके है किन्तु इसके अतिरिक्त

---

१. क्रिसन रुकमणी री वेलि, सम्पादक श्री नरोत्तमदास स्वामी, पृ स. १३६।
२. वही, ,, ,, ,, ,, पृ सं. १३४।
३. वही, ,, ,, ,, ,, पृ. स. १०५।

वन का सश्लिष्ट एव प्रभावोत्पादक रूप से चित्रण भी मिलता है। गणपति कृत माधवानल कामकन्दला से एक उदाहरण लीजिए —

किहि दिणभर दोसइ नही, किही कोलूरी जाय।
किहि-किहि काटै कम्पडा, भाल भालन्ता भराय।
किहि-किहि तरू, उपरि चढी, उतरन्तु जइ अग्नि।
किहि-किहि चढि कोले कावडे, वाड व परि-परि विघ्न।
दिवस नवि रमणी दीसइ, आमि न इन्दु अदीस।
काई चालइ कौतुक गणी, काई चालइ भयभीत।[1]

यद्यपि वन का यह वर्णन इति वृत्तात्मक है किन्तु फिर भी प्रभावोत्पादक बन पडा है। इसमे वन की गहनता और भयानकता का सजीव चित्र साकार हो गया है। वन की इस भयानकता के अतिरिक्त उसका रम्य चित्रण निम्नलिखत पक्तियो मे व्यक्त हुआ है—

नगि-नगि नीझरण वहइ, माहि जलूका मच्छ।
कातरिया नइ कछिवा, आडा अवइ लक्ष।
मोर कलाइ मडता, चातक चोरइ चीत।
किन्नर वासी कोकिला, चाव न चूरइ मीति।
एक पर्वत अवरि अडया, खोहणि खोह पताल।
शृ ग शिखिर सोहयणा, जाने जिमपुर पालि।[2]

माणक्य सुन्दर सूरि कृत 'पृथ्वीचन्द्र वाग्विलास' मे भी वन का वर्णन कवि ने बडी कुशलता से किया है। कवि के वर्णन कौशल से वन की भयकरता व सघनता का चित्र साकार हो गया है—

मार्ग जाता आवी एक अटवी। हिव ते किसी परिवर्ण विधि। जेह अटवी माहि तमाल, ताल (आदि अनेक वृक्षो की नामावली) प्रमुख वृक्षावली दीसइ, वीहता सूर्य तणा किरण माहि न पइसइ। अनइ किहाइ सिवा तणा फेत्कार, घूक तणा घूत्कार, व्याघ्र तणा धुरहरात, न लाभई वाट नइ घाट। माहि वानर परम्परा उछ लइ, मदोन्मत्ता गजेन्द्र गुलाग लइ। सिहनाद भयभीत मयगल खल भलइं जिस्मा दवि दाधा खील, तिस्या भील। सूअर घुरकइ चीत्रा बुरकइं। वेताल किल-किलइ, दावानल प्रज्वलइ, विरुत्तणा यूथविचरई। इसी महारौद्र अटवी।"[3]

---

१. गणपति कृत माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध, (गायकवाड ओरियन्टल सीरीज) पृ स. २५६।
२. भारतीय प्रेमाख्यान काव्य–डा. हरिकान्त श्री वास्तव पृ. स. २६४।
३. राजस्थानी गद्य साहित्य–डा. शिव स्वरूप शर्मा अचल पृ. स. ५२।

वन की सघनता का एक अन्य उदाहरण सदयवत्स वीर प्रबन्ध मे देखिए :—

आगलि अनोपम अरि कातार, काठ-समुद्र न लाभइ पार।
नव जाणीय सवार अमूर, वनमाहि पइसी न सकई सूर ॥[१]

किन्तु मयूर और कोयल की मधुर ध्वनि से युक्त वन का मनोरम वर्णन इसी काव्य मे 'सदाशिव-वन' प्रसग मे लिखता है—

जिणि वनि बाहर मास बसत, दीसइ कोइ न पामइ अन्त।
नही पापीया जीव प्रवेज, इसी अछइ मर ज्याद महेस।
मोर मधुर सरि करइं निनाद, कोइलि तथा सुहावा साद।
सुसर शब्द सूडा सालही, भमई मभ्रर माल्हइ मालेही।
सुरहा सीत सू आला वाइ, जे लाहा तनि तालइ ताइ ॥[२]

महाकवि समयसुन्दर कृत 'मृगावती रास' मे भी 'मलयाचल वन' का बडा सरस वर्णन मिलता है—

'भीम कहइ सुणि भूपति मलयाचल वन एह।
बालक जिहा अहि छोडियउ, दीधउ ककण तेह।
चन्दन रूख घणा इहा, परमिल घणा प्रधान।
भोगी लपटणा रहइ, जोगीसर जिम ध्यान।
पवन कपायइ तरु नमइ ते तुम करइ प्रणाम।
स्वागत पूछइ तु झनइ विनय घणउ इण ठाम।
काइल करइ टहुकडा, मोर करइ किगार।
स्वागत पूछइ राम नइ, तरुवर पिणसु विचार।
वाजइ सीतल वायरउ, धूजइ विरही देह।
विरहानल आपइ घणउ, सीलइ अधिक ससनेह।[३]

वन का एक अन्य रमणीय वर्णन 'लैला मजनू री वात' नामक राजस्थानी प्रेमाख्यान से लीजिए। इसमे वार्ताकार के वर्णन कौशल की कितनी मनोरम चारूता लक्षित होती है।

---

१. कवि भीम कृत सदयवत्स वीर प्रबन्ध—पृ सं. ३०।
२. कवि भीम कृत सदयवत्स वीर प्रबन्ध-(सा. रा. री इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ. स. ५२।
३. समय सुन्दर कृत मृगावती रास (ह. लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

'ठोर-ठोर अवा दासी, हरी-हरी दूव, जगल की सवजी खूव। सारो सूआ चकोर मोर, भाति-भाति के जानवरो का सोर। पहाड की किनारी। पचरगी गुल क्यारी। दरखतो की झाड। भ्रमरो की गु जन। फूलो की महक, कोइल की कुहक, साह की मौज। देखने की चीज। पवन का थामा। आसमान का गुम्वज। चाद सूरज की चिराग। वादर की चादर। जमी का डुलीया। पथर का तख्त। तिम पर मजनू देखा।'[१]

उद्यान :

राजस्थानी के इन प्र माख्यानो मे वन-वर्णन के अतिरिक्त उपवन और उद्यानो के सरस वर्णन भी वहुत मिलते हैं। उदाहरण के लिए 'मान तु ग मानवती रास' से उद्यान का एक सरस वर्णन लीजिए—

इम वहतॉं दिन पाच मे, पाड्या एक उद्यान।
सरल सरल मही सुहषणा, ऊँचा लसि असमान।
छाया डम्वर थई तिहा, रवी न कसकै जोर।
द्रुव गुछै वैठा थका, मधुरा तुहि कै मोर।
सजल सरोवर तिहा, तिहा अरमणीय वन्न।
देखि महिपति नो थपो, घणु आनन्दी मन्न॥[२]

सरोवर वर्णन

'मानवती मानुतु ग रास' मे सरोवर का सुन्दर वर्णन मिलता है। यथा—

सरवर घणो सुहावणो रे, चहुदिशि भरउइ नीर।
मछ कछप तारे पुछा आछाटती रे, उछले छान जल तरू तीर।
हस चकोर रे वग ने सारसी रे, तिणै तट करता केलि।
कइ कउड तारे, केइक वैसता रे, कई रह्या जलती चचा मेल॥[3]

'दामो' रचित लखनसेन पद्मावती कथा मे भी सरोवर का मनोरम वर्णन मिलता है--

सजल सरोवर अगम अपार, पउवणि घणी सयल विस्तार।
पदमणि कमल भमर भमाय, तिणि सर हस तितु केलि कराय।

---

१. लैला मजनू री बात (ह. लि.) रा. प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रंथाक ५८६६।
२. मानतु ग मानवती रास (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।
३. वही „ „ ।

सोम कमल परिमल महकाई, सुर त्रतिस कोउ तिण ठाई।
तिण सर विप्र जपइ गाइत्री, पूजई देव हाथ कर बती।[1]

'चतुर्भुजदास' ने भी 'मधुमालती' नामक प्रेमाख्यान मे राम सरोवर का वर्णन बडी सरसता से किया है। राम सरोवर मे खिले हुये सफेद रग के कमल मुनियो के मन को भी लुभा लेते हैं—

राम सरोवर ताल की सोभा कही न जाय।
सेत वरण पकज तिहा, मुनिवर रहै लोभाय।
सोभा कोण सामसर कहै, बहुतक तिहा बिहगम रहै।
प्रफुल्लित कमल बास महमहै, सो भया मान सरोवर कहै।
अबला कितीइक पानी भरै, चितवत कुभ सीस ते परै।[2]

सादृश्य मूलक सुन्दर उपमानो से युक्त दरियाव का वर्णन हमे 'पन्ना वीरमदे री बात' मे मिलता है। कवि ने सरोवर पर पनिहारियो का सरस और सजीव वर्णन किया है जिसमे राजस्थानी आचलिक रग गहरा हो गया है—

"जी कौ दरियाव किसौकइ कछै। कठोरा सरीखो भर्यो थकौ पाजा सूं थ बोला खाय चादणी रात के समै विलाक आवै तौ दूध के भोलै पी जाय। दरीयाव र घाट पणियारह्या भरै छै। कवल फूल रह्या छै। सारसा रा टोला अ गोर करै छै। दरियाव रै ऊपर पणियार्या किसेक छै।"

सीस सुरगा बेहडा, गय दमसन गति चाल।
सैणा निरषै रीझ सौ, नैणा करे निहाल ॥२॥
चीर सुरगा सावट्ट, अलका घूटै अछाह।
केल गरभ सी कामण्या, लाल सुरगी बाह ॥३॥
सज अणियालो सारिया, लागे नैण निराट।
अजब अनौपो देषजे, घू घटै हालौ गात ॥४॥[3]

समुद्र-वर्णन :

समुद्र वर्णन उन्ह प्रेमाख्यानो मे मिलता है जहा नायिका को प्राप्त करने के लिए नायक को समुद्र पार करना पडा है। अतः 'पद्मिनी चरित्र चौपई' आदि

---

१ दामो कृत लखमसेन पद्मावती कथा, (परिमल प्रकाशन, प्रयाग, स १९५९)।
२. चतुर्भुज कृत सचित्र मधुमालती, (ह. लि) रा. प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्र थाक।
३. पना वीरमदे री वारता (ह. लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर अजमेर, पृ. स. ९।

कुछ प्रेमाख्यानों को छोडकर अन्य प्रेमाख्यानो मे समुद्र वर्णन नही मिलता। पद्मिनी चरित्र चौपई मे समुद्र वर्णन निम्न प्रकार से हुआ है—

जल भरीयो दरीयो घणो, उछलता उद्धान।
कल्लोले कल्लोले थी, उदक वध्यो असमान।
मच्छ कच्छ माहि घणा, न सके जाय जीहाज।
न चले जोरो नीरस्यू, कीजे किसो इलाज॥[१]

कवि ने समुद्र की उपमा आकाश से देकर उसकी विशालता और अनन्तता की ओर बडी चतुराई से सकेत कर दिया है।

प्रकृति का उद्दीपन रूप में चित्रण :

राजस्थानी प्रेमाख्यानो मे उद्दीपन विभाव के रूप मे प्राकृतिक व्यापारो का चित्रण संयोग और वियोग पक्ष के अन्तर्गत मिलता है। 'ढोलामारू रा दूहा' प्रेमाख्यान से वर्षा ऋतु के उद्दीपन रूप से किये गये चित्रण का एक उदाहरण लीजिए—

विज्जुलियो नीलज्जियो, जलहर तू ही लज्जि।
सूनी सेज, विदेश प्रिय, मधुरइ मधुरइ गज्जि॥५०॥[२]

मारवणी अपने प्रिय के वियोग मे दग्ध है। उसे बादलो मे बिजलियो का चमकना अच्छा नही लगता। किन्तु वे इतनी हठी है कि नायिका के निवेदन पर भी उसकी चिन्ता नही करती और चमकती रहती हैं। अतः मारवणी उन्हे कोसती हुई बादलो से मधुर-मधुर गर्जन करने के लिए विनय कर रही है। वर्षा ऋतु मे बादलो की मधुर-मधुर गर्जना का कितना भाव-मीना सरस चित्रण है यह!

मानव सापेक्ष्य अनुभूतियो के अनुकूल प्रकृति का चित्रण गणपत कृत 'माधवानल कामकन्दला' में भी बहुत सुन्दर बन पडा है। विरहनी नायिका के लिए सुखद प्राकृतिक उपमान दुखप्रद हो जाते है। उसे कोयल, पपीहा, मोर आदि किसी का भी स्वर अच्छा नही लगता।

'कण्इल तू काली सही, स्ववर पणि ताहस काल।
प्रिउ पारवइ पेरनी प्रिया, प्राण हरइ तत्काल।[3]

---

१. पद्मिनी चरित्र चौपई (सा. रा. रिसर्च इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ. स ६।
२. ढोलामारू रा दूहा (ना प्र. सभा काशी) पृ. स. १२।
३. गणपति कृत माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध (गायकवाड ओरियन्टल सीरीज) पृ. सं. १८८।

गणपति ने बारह-मासे मे प्रकृति के उद्दीपन रूप का संयोजन किया है, यथा —

कालि ज बहु क्रीडा करी, आज तिजनी आस ।
माधव मुझ भूमीगय, फटि रे फागुन मास ।
तरु तरु चुटइ पन्नडा, गिरि गिरि चुटइ बाहु ।
फागुन का गुण ताहरू, नीगमिउ मोरू नाह ।[१]

कुशललाभ कृत 'माधवानल कामकन्दला' मे भी प्रकृति का उद्दीपन रूप से वर्णन बहुत सुन्दर हुआ है। कवि ने पात्रो की रागात्मिका वृत्ति का साम्य प्राकृतिक व्यापारो मे स्थापित किया है जैसे बेल से विछिन्न होकर उसके पत्ते पीले पड जाते है उसी भाँति नायिका के हृदय मे भी विरह की अग्नि प्रज्वलित हो रही है और उसके धुँआ से अन्दर ही अन्दर घुट कर वह पीली पड गई है। यथा--

हियडा भीतरि दव वलइ, धूँआ प्रगट न होई ।
वेलि विछोह्या पानण्डा, दिन दिन पीला होइ ॥[२]

गणपति की नायिका तो अपने प्रियतम माधव के वियोग मे उसी भाँति से शुष्क और निरस हो गई है जिस प्रकार पानी के बिना पृथ्वी सूखी और नीरस रहती है या चन्द्रमा के विना रात्रि श्रीहीन प्रतीत होती है, यथा--

मेह बिना जिम मही, थली शशिहर बिना प्रदोष ।
तिम माहरइ माधव विना, पासइ पाखइ पोस ।[3]

'उत्तम कुमार चरित्र चोपई' मे बसत ऋतु का उद्दीपन वर्णन बडी सरसता से किया गया है—

आव्यौ मास बसत रे रसीया रो राजा ।
सुख छै साजा, तरु होइ ताजा जेहनै तू ग रे मौज लही जीयैरे ॥
सवली रे शोभा वन माहे वणी रे, मउरया जिहा सहकार रे ।
ऊपरि बैठी कुहकै कोयली रे, महिलानानी हार रे ॥[४]

---

१. गणपति कृत माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध (गायकवाड ओरियन्टल सीरिज) पृ. सं. ८८ ।

२ कुशललाभ कृत माधवानल कामकन्दला चउपई (ह लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर ।

३. गणपति कृत माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध (गायकवाड ओरियन्टल सीरीज) पृ. सं. २६० ।

विनयलाभ कृत 'वछराज चौपई' मे भी बसत ऋतु का मोहक वर्णन मिलता है यथा--

मास वसत रखाणियेजी, तिम वली न वली न वलो नेह।
जो वन वय अति दीपतोजी, पचम राग सुणेह ॥[1]

इसी भाँति पावस ऋतु का भी उद्दीपक रूप मे वडा सरस वर्णन इन वाक्यो मे मिलता है--

'रतना हमीर री वात' से वर्षा ऋतु की उद्दीपक वर्णन लीजिए--

वीजलिया हलवल हुई, आभा किया वणाव।
घर मण्डण घर आवियौ, घर मण्डण घर आव।
डूगरियाँ हरिया हुआ, मोर हुआ मैमत।
पर हर जौ परदेश नै, कामणि आपै कत ॥[2]

पावस ऋतु का एक अन्य मादक उद्दीपक रूप 'पन्ना वीरमदे री वारता' से लीजिए--

'घटा लूवि आई छै। गहरो मधुरो गाये छै। मोरा री कौहुक सुणि प्यारौ मन छाजै छै। घटा लूवि आई जीको घटारौ रूप अधीया वणौ निजर आवे छै। वीजै आभा नभावे छै। पावस री रुवण छौला पडै छै।[3]

राजस्थानी ललित गद्य शैली मे रचनाकार ने पावस का अपनी सूक्ष्म पर्यवेक्षण शक्ति से चित्रकार के समान साकार चित्र अकित कर दिया है। राजस्थानी के इन प्रेमाख्यानो मे वारहमासा का वर्णन, षट्-ऋतु वर्णन एव अन्य प्राकृतिक उपकरणो का उद्दीपन रूप से चित्रण बहुत मिलता है। विस्तारभय से यहाँ कुछ चित्रण ही उदाहरण दिये गये है।

आलंकारिक वर्णन

इन प्रेमाख्यानो मे प्रकृति का आलकारिक वर्णन भी बडा सुन्दर और सरस हुआ है। यह आलकारिक वर्णन स्वतत्र रूप से भी हुआ है। इसमे प्रकृति के उपदानो अथवा दृश्यो की उपमा प्राकृतिक उपकरणो से ही दी गई है उदाहरणार्थ, सघन वन मे निर्मल जल से भरे हुए सरोवर की उपमा मेघ घटाओ से आवेष्टित रात्रि के चन्द्रमा से ही दी गई है जो कितनी सरस और सुकोमल बन पडी है। यथा--

---

१. विनयलाभ कृत बछराज चउपई (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।
२. रतना हमीर री वारता (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।
३. पना वीरमदे री वारता (ह. लि) दाद्रावाडी, अजमेर, पृ स. ७।

एक सरवर तिण वन विचै जी जल भरीयौ भरपूर ।
जणिक मेघ घटा विचैजी, चन्द्र रमणि नूर ।[1]

इसके अतिरिक्त आलकारिक वर्णन का सहारा इन प्रेमाख्यानो में नायिका के रूप-वर्णन मे बहुत लिया गया है । 'महादेव पारवती री वेलि' मे कवि को पार्वती का अग-प्रत्यग प्राकृतिक उपमानो से सजा हुआ मिलता है । पार्वती के तन के तेज की समता प्रभात मे उदय होते अरुण से की गई है तथा कोमल गात्र की उपमा कमल से दी गई है जिसमे कवि की कोमल-कल्पना उजागर हो उठी है, यथा--

ऐकीकइ निमख तेज तनु अधिकउ,
भाण जाहि अगतउ प्रभात ।[2]
कमल ताय अत राजकुमारी,
गोरी कमल सरीखइ गात ।

पार्वती के कमल-सदृश-चरण बीर बहूटी की कोमलता और लालिमा से भी बढकर थे, यथा—

माडिया सरोज भयगचइ माथइ ।
हरणाखी चित सावन दूरि ।
अति रमता विराजइ ऊपर ।
पगयलिया मीमलइ परि ।[3]

इसके अतिरिक्त कवि ने आभूपणो युक्त पार्वती के सौन्दर्य-वर्णन मे प्राकृतिक उपमानो का मौलिक और हृदयहारी प्रयोग किया है । सादृश्य-मूलक अलकारो, उत्प्रेक्षा आदि के माध्यम से नाना प्रकार की राग-रजित कल्पना की गई है । यथा-

पार्वती के पायलो की ध्वनि ऐसे प्रतीत होती थी मानो भाद्रपद मे समुद्र का गर्जन होता है तथा पर्वत शिखरो पर गरज की ध्वनि होती है । यथा--

पग पहरी सकत वाजणी पायल,
ने प्राचइ आगली नद ।
गोडी रव भाद्र वइ तणी गति,
सेहरा ऊपरि साण सद ।।[4]

---

१. चित्रसेन पद्मावती रतनसार मत्री चौपई (ह लि.) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्र थाक–२८६४७, पत्राक १२ ।
२ महादेव पारवती री वेलि (सा रा रि. इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) प. स. १८ ।
३. वही, पृ. स. १९ ।
४. महादेव पारवती री वेलि (सा. रा. रि. इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ. स. ११० ।

कवि ने, पार्वती के हाथी दांत से बने चूडे की उपमा मान सरोवर के हस से दी है और उसे पार्वती के हाथ मे नग जडा ककरण ऐसा प्रतीत हुआ है मानो चारो ओर सूर्य जड दिये हो अथवा कमल के फूल के किनारे कु दन के कगारे किए गए हो। तावूल के रग मे रचे हुए अधर, दशन और रसना इस प्रकार अनुपम रूप से शोभित हुए है मानो भाद्रपद मास मे नाना रगो से भरे हुए बादल आकाश से लगे हुए झूम रहे हो। इस भाति कवि ने नाना भाति की कल्पना की है। इसके लिए 'महादेव पार्वती री वेलि' के ३२६ से ३४१ तक के दोहले द्दटव्य है।[1]

पृथ्वीराज राठौड कृत 'वेलि क्रिस्न रुक्मिरिण री' मे भी प्रकृति का आलकारिक वर्णन इतना सरस हुआ है कि उसकी समता सस्कृत-काव्य के अतिरिक्त अन्य ग्रन्थो मे मिलना दुर्लभ है। एक ओर कवि रुकमरिण के शरीर की कान्ति की उपमा मेरुगिरि पर अ कुरित दो पत्तो वाली कनकलता से देता है तो दूसरी ओर वह सखियो के मध्य मे नक्षत्रो के बीच निष्कलक चन्द्रमा के समान सुशोभित है, यथा--

सग सखी सील कुलवेस समानी,
पेख कली पद्मरणी परि।
राजत राजकु वरी रायगरिण,
उडयरण वीरज अम्व हरि ॥[2]

अपनी समान वय, कुलशील सखियो मे रुकमरिणजी कमल की पखुडियो के मध्य पद्मिनी सी लगती है। साथ ही कवि ने निर्मल आकाश मे झिलमलाते नारो के मध्य रुकमरिणजी को चन्द्रमा बताया है। इसमे उपमा का सादृश्य एव साधर्म्य का ही कथन नही हुआ है बल्कि समस्त वातावरण का चित्र भी बडे मनोरम ढग से उपस्थित हो गया है। इससे भी बढकर कार्य है कवि का—'सैजेस्टिव नैस'। 'दोहले' की प्रथम दो पक्तियो मे केवल रुकमरिणजी को पद्मनी बताया गया है तथा सखियो की उपमा कमल की पखुडियो से दी गई है, किन्तु सरोवर का वर्णन नही किया गया है, पर नीचे की दो पक्तिया पढने से निर्मल आकाश की अवतारणा पाठको के सामने स्वय ही पद्मिनी युक्त सरोवर का दृश्य खिल उठता है। इसको कहते है व्यजना की अनुपम शक्ति का चमत्कार जो पृथ्वीराज मे स्थान २ पर पाया जाता है। केवल व्यजना का चमत्कार ही नही, रम्य-रूप-विधान का माधुर्य भी अपने आप मे निखर उठा है। यथा—

---

१. महादेव पारवती री वेलि (सा. रा. रि. इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ. सं. ११० से ११४।

२. क्रिसन रुकमरणी री वेलि, स० श्री नरोत्तम दास स्वामी, पृ. स ८।

रामावतार नाम ताहि रुकमणि ।
मान सरोवर मेरु गिरि ।
बालक गति करि हस चौ बालक,
कनक वेलि विहुपान करी ।।[1]

मेरुगिरि पर दो कोमल पत्तो से युक्त कनकलता मे जो लावण्य एव भाव-सुकुमारता है, वह बिहारी द्वारा वर्णित 'कनकछरी सी कामनी' मे उपलब्ध होना कठिन है। महाकवि कालिदास ने भी 'कुमारसम्भव' मे पार्वती जी की उपमा 'रत्न शलाका' से दी है। 'शलाका' चाहे रत्न की ही हो, उसमे कान्ति, चमक-दमक तो भले ही मिल सकती है, किन्तु वह लचक एव लजीलापन लिए मादक सुगन्ध-युक्त यौवन परिलक्षित नही होता जो वेलि की 'कनक वेलि विहुपानकरी' मे होती है।

युद्ध के वर्णन मे भी कवि को वर्षा का मनोरम रूप झलक पडा है। उदाहरणार्थ—

कलक लिया कुन्त किरण रवि ऊकलि,
वरजित विसस विवरजित वाऊ।
धडि धडि धबकि धार धारुजल,
सिहरि सिहरि समखै सिलाऊ ।।[2]

युद्धजनित त्वरा का ही नही, वर्षा का भी नाद-सौन्दर्यपूर्ण वर्णन बडा ही गरिमायुक्त बन पडा है। शब्द जैसे नाचते हुए प्रतीत होते है। भावो का गुम्फन, चित्रोपमता तथा शब्द की ध्वनि से अर्थ की प्रतीति ऐसे वर्णनो का प्राण है।

उपमाओ का साधर्म्य युक्त कथन का एक सरस उदाहरण 'श्री उत्तम कुमार चौपई' से लीजिए। नायिका के उभरते हुए यौवन की उपमा नव कुमोदनी से देकर कवि ने रूप लावण्य के साथ नायिका के सुकोमल शरीर का चित्र अ कित कर दिया है। यथा—

'नवली भली कुमुदिनी विकसै, रवि ऊगमतै जेम रे।
भर यौवन रवि ऊगै दिन दिन, कुमरी विकसै एम रे ।।[3]

---

१. क्रिसन रुकमणी री वेलि, स० श्री नरोत्तम दास स्वामी, पृ. स. ७।

२. वही, पृ. स. ६२।

३. श्री उत्तम कुमार चरित्र चौपई (विनयचन्द्र कृति कुसुमाजलि) सा. रा. रि. इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ. स. १३३।

अपने प्रियतम से मिलन के लिए निकली हुई अभिसारिका नायिका का प्राकृतिक उपादानो से युक्त आलकारिक चित्रण 'जलाल गहाणी री वारता' मे हष्टव्य है—

काजल तिलक तबोल करि, चलि पिया दिस जाह ।
जाणक नीकस्यो जात है, मयकस बदल माह ।।[1]

नायिका गहन अन्धकारमयी रात्रि मे ऐसे चली, जैसे बादलो मे से चन्द्रमा निकला हो । नायिका के मुख की उपमा चन्द्रमा से देना तो परम्परागत रूढि उपमानो की श्रेणी मे ही आयेगा किन्तु घू घट की ओट मे नायिका की मन्द-मन्द मुस्कान 'पन्ना' वीरमदे' के रचयिता को ऐसी प्रतीत होती है मानो नायिका ने घू घट की ओट मे चन्द्रमा को चुराकर छिपा लिया हो । नूतन-कल्पना का यह एक सरस उदाहरण हष्टव्य है—

मुख शोभा दे मयक जु, मुलके मद सु मद ।
पट घू घट की ओट मे चोर लीयौ घण चद ।।[2]

'पृथ्वीराज राठौड' द्वारा रुकमणि जी के शरीर यष्टि के लिए प्रयुक्त 'कनकलता' की उपमा की कोमलता का वर्णन कर चुके है । पन्ना वीरमदे के रचनाकार ने भी इसका प्रयोग नूतन सदर्भ मे किया जो कवि की मौलिक सूझ और सूक्ष्म पर्यवेक्षण शक्ति का परिचायक है । यथा—

"इण भाति तीजण्या बाग मे आई । हरी लता मे फीरती जाणै कनकलता सी दरसाई ।"[3]

'पन्ना वीरमदे री वात' से प्रकृति के आलकारिक वर्णन के कुछ अन्य उदाहरण भी प्रस्तुत किये जाते हैं—

'जरी की किनारी से युक्त घू घट की ओट मे नायिका का मुँह कवि को ऐसा दिखलाई पडता है मानो श्रावण महीने के बादलो मे बिजली चमक उठी हो । साथ ही कमल के समान गात्र वाली पना अपनी सखियो मे ऐसे प्रतीत हो रही है जैसे नक्षत्रों के बीच चन्द्रमा सुशोभित हो रहा हो । यथा—

जरी ओट घू घट जठै, भणकण भण इण भाव ।
कजल घटा माहि ओपीयौ, श्रावण बीज सिलाव ।

---

१. जलाल गहाणी री वारता (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर ।
२. पना वीरमदे री वारता (ह लि.) दादावाडी अजमेर, पृ स २२ ।
३. वही, पृ. स १४ ।

सरस कमल मुख उरवसी, हुआ मद अह नाण ।
संख्या नखत नव लाख सी, पना चद परवाण ॥[1]

इसी भाति 'रतना हमीर री वारता' मे भी रूप-वर्णन मे प्राकृतिक उपमानो का सरस प्रयोग किया गया है । उदाहरणार्थ—

पाखा बीजल सलकती, जोत्या चवनो मुख ।
दीवाली वाली चमक, दीठाइ भाजै दुख ॥
इण विध आभा अगरी, सीणै पट सलकैह ।
बीजक जाणै बादला, मल बीजल मलकैह ॥[2]

प्रकृति का मानवीकरण :

राजस्थानी प्रेमाख्यानो मे प्रकृति को मानवी रूप देने का प्रयास किया गया है । प्रकृति के उपकरण मेघ, पवन आदि इन प्रेमाख्यानो मे नायिका के प्रेम-सन्देशो को पहुचाने वाले दूत के रूप मे कार्य करते है । पेड, पौधे, पशु-पक्षी नायिका के सुख-दुख मे सहभोक्ता होते है तथा दुख मे सहानुभूति प्रकट करते है । इन प्रेमाख्यानो मे प्राकृतिक पदार्थ हँसते, बोलते चित्रित किये गये है । प्रकृति के इस मानवी रूप मे अलौकिक तत्वो का आश्रय लिया गया है । इसके अतिरिक्त मानवीकरण अलकार के रूप मे प्राकृतिक पदार्थो मे मानवीय भावनाओ के आरोप के कारण मानवीकरण का यत्र तत्र चित्रण मिलता है । प्रकृति मे मानवीय भावनाओ के आरोपण का उदाहरण हमे 'वेलि क्रिसन रुक्मणि' मे भी मिलता है । कवि ने प्रकृति को मानवीय भावनाओ और क्रिया-कलापो से प्रेरित नायिका के रूप मे चित्रित करके उसका शृंगारिक वर्णन किया है । उदाहरणार्थ–वर्णन सहित घन वर्षा, हरियाली रहित पृथ्वी पर स्थान-स्थान पर जल भरा पडा है, जैसे प्रथम सम्मिलन मे पद्मिनी स्त्री के वस्त्र उतार लेने पर आभूषण शोभा पाते है ।

निहसे वूठौ घण विणनी लाणी,
वसुधा थलि-थलि जल वसइ ।
प्रथम समागमू वस्त्र पद्मणी,
लीधे किरि ग्रहण लसइ ॥१६४॥[3]

ऐसे ही वर्षा-ऋतु का वर्णन करता हुआ कवि कहता है कि तरु, लता पल्ल-

---

१. वही, पृ सं. १६ ।

२ रतना हमीर री वारता (ह. लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर ।

३. क्रिसन रुक्मणि री वेलि, सम्पादक श्री नरोत्तमदास स्वामी, पृ. स १०३ ।

वित हो गए है, तृणो के अ कुर निकल आये है, पृथ्वी हरी साडी पहने नायिका के समान सुशोभित हो रही है। उसने नदी रूपी हार धारण कर रखा है और पैरो में दादुर रूपी नूपुर स्वरित हो रहे हैं।[1] 'मृगावती रास' मे वन के वृक्षो को राजा सतानीक के स्वागत मे प्रणाम करते चित्रित किया गया है। यथा--

पवन कपाय तरु नयइ, ते तुम कइ प्रणाम।
स्वागत पूछइ तुझनई, विनय घणउ इणठाय ॥[2]

उपदेशात्मक अथवा नीति-कथन शैली के रूप प्रकृति चित्रण

इन प्रेमाख्यानो मे उपदेशात्मक अथवा नीति-कथन शैली के रूप मे भी प्रकृति का चित्रण मिलता है। 'ढोला मारू दूहा' मे मालवणी ओछे पुरुषो के प्रेम की तुलना पर्वतीय नालो से करती है जो बहते तो बहुत वेग से हैं परन्तु सूख तुरन्त जाते हैं—

डूगर केरा वाहला, ओछा-केरा नेह।
वहता वहइ उतामला झटक दिखावइ छेह ॥३३८॥[3]

प्रकृति के दृश्य और व्यापार के आधार पर नीति कथन की शैली की परम्परा का अनुसरण वेलि मे भी प्राप्त होता है। पृथ्वीराज राठौड का कथन है कि आश्विन के व्यतीत होते ही आकाश मे बादल, पृथ्वी पर कीचड और जल मे गदलापन वैसे ही विलीन हो गया जैसे सतगुरु की ज्ञानाग्नि का प्रकाश प्रकट होते ही मनुष्य के कलिकाल के पाप विलीन हो जाते हैं।

वितए आसोज मिले नभि बादल,
पृथ्वी पक जलि गडल पण।
जिमि सतगुरु कलि कलुख तणा जण,
दीपति ज्ञान प्रगटे दहण ॥[4]

प्रकृति के माध्यम से नीति-कथन शैली का एक अन्य उदाहरण गणपति कृत माधवानल कामकन्दला से भी उद्धृत किया जा रहा है--

---

१. वही, पृ. स. १०३।
२. समयसुन्दर कृत मृगावती रास, (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।
३. ढोला मारू रा दूहा (ना. प्र. सभा, काशी) पृ. स. ७६।
४. वेलि क्रिस्न रुकमणि री, स० श्री नरोत्तमदास स्वामी, पृ. स. १०८।

एक पर्वत उपरि चढइ, एक उतरइ हेठि ।
काम क्रोध मद मरतु जिम राउ रमइ आखेटि ।।२६०।।[1]

'पद्मिनी चरित्र चौपई' में भी यत्र-तत्र प्रकृति के माध्यम से नीति-कथन प्रयुक्त हुए है । यथा--

हसा ने सरवर घरणा कुसुम घरणा भमराह ।
सुगुरणा ने सज्जन घरणा, देश विदेश गयाह ।।[2]

'पुण्यसार चरित्र चौपई' मे मानव शरीर की नश्वरता को व्यक्त करने के लिए वृक्ष के पके हुए पीले पत्तो का दृष्टान्त दिया गया है तथा सध्या के अस्थायी रग से समता की गई है । इसी प्रकार जीवन-मरण के सयोग को तरु और पक्षी के सयोग के समान अस्थिर बताया गया है[3]—

पाका पान ज्यु खिर पडइ, अथिर अछइ ए काइ ।
सझ राग सिरखी कही, जल बिंदु जिउ मजाइ ।।६।।
तरु पखी मेलउ तिसउ, एकठा आवि थाय ।
जनम मरण थी जीवनइ, राखइ नही को राय ।।८।।

'सदयवत्स वीर प्रबन्ध' मे भी प्राकृतिक पदार्थों के माध्यम से नीति-कथन का उल्लेख मिलता है । उदाहरणार्थ, कवि ने नर विहीन नारी की उपमा चाद विहीन रात्रि, दिशाओ से वियुक्त दिन एव बिना पानी की नदी से दी गई है ।[4]

शशि-विरण-निशि, दिशि दिवस विरण, जिम नदी विरण-वारि ।
तिम सूदा [सामली भरणई] नर विरण न सोहइ नारि ।।१५।।

दृश्य-विधान और अन्य वस्तु-वर्णन :

राजस्थानी प्रेमाख्यानो की सबसे बडी विशेषता, उनमे दृश्य-विधान का सरस और सश्लिष्ट चित्रण है । प्राचीन सस्कृत, प्राकृत और अपभ्र श साहित्य मे जिस प्रकार दृश्यो का मनोहर और हृदयहारी चित्रण मिलता है वैसा ही चित्रण इन राजस्थानी प्रेमाख्यानो मे प्राप्त होता है । वस्तुत राजस्थानी प्रेमाख्यानो की परम्परा सस्कृत, प्राकृत और अपभ्र श के ही प्रेमाख्यानो की विरासत है । इनमे भी आश्रमो और वन, पर्वतो आदि प्राकृतिक दृश्यो तथा लोक-जीवन से सम्बन्धित

---

१. गरणपति कृत माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध, पृ स २६० ।
२. लब्धोदय कृत पद्मिनी चरित्र चौपई, पृ स १२ ।
३ पुण्यसार चरित्र चौपइ (समयसुन्दर रास पचक) पृ स १४६ ।
४. सदयवत्स वीर प्रबन्ध (सा. रा. री. इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ. स २२ ।

पनघट-वर्णन, जलकेलि-वर्णन, प्रतिमा पूजन-वर्णन, स्वयवर-वर्णन, यात्रा, आखेट, युद्ध आदि विविध वर्णनो का भावपूर्ण चित्रण मिलता है।

कथानक की पृष्ठ-भूमि के रूप में दृश्य-विधान की योजना

राजस्थानी प्रेमाख्यानो मे इस प्रकार की दृश्य-विधान की योजना प्रचुर मात्रा मे मिलती है। इन प्रेमाख्यानो की नायक-नायिकाओ का प्रथम मिलन प्राय. पवित्र स्थल पर ही होता है जो या तो वन मे कोई ऋषि का आश्रम होता है, या शिव, यक्ष, देवी अथवा कामदेव का मन्दिर होता है। कथा-वस्तु का मुख्य कार्य-व्यापार इन पवित्र स्थलो पर ही घटित होता है जिनसे नायक-नायिका के प्रेम की पवित्रता प्रकट होती है। 'रणसिंघ कुमार चौपई' मे उल्लेख है कि नायक-नायिका का प्रथम मिलन वन के एक मनोरम उद्यान मे स्थित यक्ष के मन्दिर मे होना है। यात्रा करते समय सयोग से नायक उस उद्यान मे विश्राम के लिए ठहरता है और राजकुमारी कमलावती उसी समय यक्ष पूजा के लिए आती है। उसकी दाहिनी आँख फडकने लगती है जिससे उसको इष्ट प्राप्ति का शुभ शकुन होता है। अन्त मे यक्ष मन्दिर मे नायक-नायिका का मिलन होता है और दोनो के हृदय मे प्रेम का अकुर नयनो के मिलन से प्रस्फुटित हो जाता है। यथा—

तेह नगर नउ छइ उद्यान, झई उतरीया विहाराजान।
तिण वन माही चिंतामणी जक्ष, देवल देखी कुमर सुदक्ष।
देहरई आवी करी प्रणाम, वइसी आगलि करई गुण ग्राम।
क्रिमणी आखि फुरकी तिणिवार, कुमरइ निजमन कीध विचार।
कोईकवल्लभ माणस आज, मुझ नई मिलिस्यइ फलिस्यइ काज।

× ×

कुमर अनइ कुमरी भणी, माहो मा अनुराग।
नयणे उपनउ हीयमइ, हरख अगाध।
नयणे लागी प्रीतडी, नयण लागउ मोह।
नयणे नयण मिली गया, जिय चबक नई लोह।[1]

तुलसी कृत रामायण मे गौरी पूजन के लिए आई हुई जनक-सुता सीता को दाहिनी आँख फडकने का मगलकारी शकुन हुआ था और उसके हृदय मे राम के प्रति नेत्र-व्यापार द्वारा ही प्रेम का अकुर प्रस्फुटित हुआ था।

पवित्र स्थल पर नायिक-नायिका के प्रथम मिलन के दृश्य-विधान का एक अन्य उदाहरण 'सदयवत्स वीर प्रबन्ध' से भी उद्धृत करना यहाँ अनुचित नही होगा।

---

१. रणसिंघ कुमार चउपई (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

'सदाशिव वन' मे 'हरगौरी' के आश्रम मे लीला मनोवाछित वर की प्राप्ति के लिए पूजा करती है। सयोग से सदयवत्स इसी आश्रम मे ठहरता है और दोनो का मिलन होता है। कवि ने सदाशिव के वन, कैलासपति के मन्दिर एव लीलावती की पूजा का बडा सजीव चित्र अकित किया है। वन का वर्णन हम प्रकृति के वर्णन से कर चुके है। कैलासपति मन्दिर के वर्णन का उदाहरण प्रस्तुत किया जारहा है—

'तस अग्गलि उमया पति-अवास।
कैलास छडि जिणि कीधु वास।
मड निवीड तुंग तोरण पयार,
अपुव पुष्प दीसइ दूआर ॥२१७॥
थिर पथरि मडीय थोर थम।
पूतलीय रूप्प विभ्रम रम।
मडपि गवक्ख चिहुँ पक्खि चार,
मणिमइ सलाका सिखर सार ॥२१८॥
कणयमइ दड ऊडइ सहित्त।
लहलहइ धवल धज वड विचित्त।
आसन्नउ आगलि सोहइ सड,
पढिआर नदी चडी प्रचड ॥२१९॥[1]

गलता मे नायिका का स्नान और शिव की पूजा का भी बडा मार्मिक और चित्रात्मक वर्णन हुआ है—

गलते कृति का किद्ध सनान,
धवली धोती-तणू परिधान।
निर्मल नीरिइ भरवि शृगार,
ढालइ ईश अखडित धार ॥२२७॥
कार्पाडस्यू आलू छइ अग,
बावनि चदनि चरचइ चग।
वहु विल-पत्र कुसुमा करि लेउ,
स्वइ विविध-परिपूजा दइ ॥[2]

कथा या आख्यान की दृश्यात्मक पृष्ठभूमि का यह रूप हमे कोऊहल रचित प्राकृत के प्रेमाख्यान 'लीलावती' मे भी मिलता है। कथा की नायिका लीलावती

---

१. भीमकृत सदयवत्स वीर प्रबध, पृ स ३१।

२. सदयवत्स वीर प्रबन्ध (सा. रा रि. इन्स्टीयूट, बीकानेर) पृ स. ३३।

और नायक सातवाहन का प्रथम मिलन गोदावरी के तट पर स्थित दक्षाश्रम मे भीमेश्वर महादेव के मन्दिर मे होता है जहाँ नायिका शिव-पार्वती की पूजा के लिए आती है।[1] रामायण और महाभारत मे भी नायक-नायिका का प्रथम मिलन गौरी के मन्दिर मे हुआ है। श्रीकृष्ण ने रुकमणि का हरण गौरी के मन्दिर से ही किया था।

कथानक की भूमिका के रूप में दृश्य-विधान की योजना

अधिकाश प्रेमाख्यानो मे विशेषकर जैन प्रेमाख्यानो मे कथानक का प्रारम्भ जम्बू द्वीप के वर्णन से तथा नगर-वर्णन से किया गया है। नगर-वर्णन के अन्तर्गत उद्यान, सरोवर, पनघट, बाजार, व्यवसाय आदि का चित्रात्मक रूप से वर्णन किया गया है। इस वर्णन मे रचनाकार के वर्णन कौशल के साथ ही उसकी सूक्ष्म पर्यवेक्षण शक्ति का पता चलता है। समयसुन्दर कृत मृगावती रास से एक उद्धरण प्रस्तुत किया जाता है। यथा—

जबू दीप लख जोयण ना मान, भरत खेत तिहा अभिराम।
साठा पचवास आरिज देस, अवरदेस तिहा नही ध्रुमलेस।
कव देश एहवो अभिधान, जस कैलाश तणो उपमान।
गोरी इसर वृषभ निवास, धन सहुनी पूरइ आस।
श्रुरकट सपातइ व्रज ग्राम, सोलइ खेत्र दिसई अभिराम।
गोपी गावइ गीत रसाल, पथीजन थमइ तत्काल।[2]

नगर-वर्णन :

तिण देसइ कोसबी पुरी, जाणे इन्द्रपुरी अवतरी।
विवुध लोक गुरू नइहोइ मान, जम सोभित तबहु सुख सतान।
जमुना नदी वहइ जसु पासि, जाणे जलधि कहइ तास।
रतन माहरा लीधी मथी। दे मुउ तुझ अणु रतन की।
प्रासाद श्रृग उपरि पूतली, कमल नेत्र नइकटि पातली।
जानी नगर रिधि जोवा भणी, सुर सुन्दरी आवी घणी।[3]

उत्प्रेक्षा अलकार के माध्यम से कमल नेत्र वाली पूतली मे नगर की रिद्धि

---

१. देखिये कोऊहल कृत लीलावती की भूमिका, सम्पादक—डा० आदिनाथजी नेमीनाथ उपाध्ये (प्र. मा. विद्या भवन, बम्बई)।
२ समयसुन्दर कृत नलराज चौपइ (ह. लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।
३. समयसुन्दर कृत मृगावती रास (ह लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

देखने के लिए आई हुई अप्सरा की उद्भावना करके कवि ने अपनी सूक्ष्म सूझ तथा कोमल कल्पना का परिचय दिया है।

नगर-वर्णन का अन्य उदाहरण विनयचन्द्र कृत श्री उत्तम कुमार चरित्र चौपाई से दिया जाता है—

'नयरी तिहा वणारसी, अलिकापुरि सम तेहो रे।
जहाँ सुर सरिखा मानवी, निशदिन वढते नेहो रे।
वलि तेहनै चौ पारवती, विकट दुरग विराजै रे।
घण वाजित्र सदा घुरै, घन गर जाख लाजै रे।
ऊँचा मन्दिर अति घणा, दीठा आवै दायौ रे।
तिम चित चोरै कोरणी, जोता दिन वहि जायो रे।[1]

इन्द्र सभा का दृश्य

दृश्य विधान का एक अन्य मनोरम उदाहरण कुशललाभ कृत 'माधवानल कामकन्दला' से उद्धृत किया जाता है। कवि ने देवराज इन्द्र की सभा का चित्रात्मक दृश्य अकित किया है। स्वर्ग-लोक का मनोरम करते हुए देवराज-इन्द्र की सभा तथा अप्सराओ के नृत्य आदि का सजीव चित्र इस रूप से चित्रित किया है मानो रगमच पर कोई नाटकीय दृश्य प्रस्तुत किया जा रहा हो। यथा—

एक दिवस मति धरि आणद, इन्द्र सभाइ बैठो इन्द्र।
अपछर नई दीधो आदेश, रचऊ आज नाटक नो वेस।
सामलि वचन सज्या सिणगार, वाजइ पच शब्द तिणिवार।
जोवइ इन्द्रपति घरी जगीस, माँड्यो नाटक बछ बत्रीस।[2]

आश्रम-वर्णन

समयसुन्दर कृत 'मृगावती रास' मे आश्रम का बडा सरस और सजीव चित्रण किया गया है। आश्रम की प्राकृतिक सुपमा के साथ प्रकृति से ही शत्रु स्वभाव वाले पशुओ को एक साथ खेलते दिखलाकर कवि ने आश्रम की पवित्रता को उजागर किया है। साथ ही आश्रम मे रानी मृगावती का पुत्र-जन्म एव सतानीक का अपनी खोयी रानी से मिलन, महाकवि कालीदास के द्वारा 'अभिज्ञान शाकुन्तल'

---

१. श्री उत्तम कुमार चरित्र चौपई (विनयचन्द्र कृति कुसुमाञ्जलि, सा.-रा. रि. इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ. स. १०६।

२. कुशललाभ कृत माधवानल कामकन्दला चउपई (ह लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

में वर्णित, कण्व-आश्रम मे शकुन्तला-दुष्यन्त के मिलन के दृश्य को सम्मुख ला देता है।[1]

आश्रम के दृश्य का एक अन्य चित्रण उपमा, उत्प्रेक्षा अलकारो द्वारा राग-रगित चित्र खीचा है। केशव मुनि कृत 'सदेवच्छ सावलिगा चउपई' मे भी उपलब्ध होता है। जिसमे कवि ने आश्रम की प्राकृतिक सुषमा को सदेवच्छ सावलिगा अपने गुरु के पास इसी आश्रम मे विद्या अध्ययन करते थे। यथा—

तिणि ओझानइ अति अभिराम, गृह पासइ इक छइ आराम।
वृक्ष अनेक अछइ जेहमइ, जिण दीठा दिन सुख मा गमइ।
जाई जूही मुचकुंद सकुंद, पुहकरणी जलमइ अरविंद।
बोलसिरी पसरी चहुँ ओर, मदोन्मत्त नाचइ जिहा मोर।
मालती तरु महकइ महुकार, गू गू सवद करइ गुंजार।
खिण बईसइ, खिण ऊडी जाइ, रतिवाछिक जिय आतुर धाय।
नालि केरी जंमीरी द्राख, लूखा लूंबि रही जिहां सराव।
कोइल टहुकइ अंब संयोग, जिम-नव-त्रीय, प्रथम सयोग।
शालि-खेत्र तिण बाग-मझारि, ओझा आरोगइ सु विचार।
शाली तणी रखवाली मणी, वारी माडी जण जण तणी।[2]

प्रकृति के इस राग-रजित चित्रण से कवि ने बडी चतुरता से भविष्य मे घटने वाली प्रेमी-प्रेमिका की प्रणय क्रीडाओ की ओर सकेत कर दिया है।

कैलाश-पर्वत का वर्णन

'महादेव पार्वती री वेलि' मे कवि ने कैलास वर्णन का बडा मनोरम वर्णन किया है। चन्दन के वृक्ष, कलरव करते पक्षी, कल कल करते झरने, बाँसो की ध्वनि, मृगो की उछाल, सरोवर और नदियो का उमडना आदि प्राकृतिक व्यापारो का बडा भावपूर्ण चित्रण किया गया है। यथा—

जोयन वीस हजार जोवता, सहस दस पहिलउ कइलास।
असडउ रूप अनोपम आखियइ, एकण थभ तणउ आवास।

यथा—

नृप आगलि निरखइ तीर, तापस आश्रम गुहिर गमीर।
अ ग, कदंब, चयक कणवीर, अगर तगर नालेर जबीर।

---

१. समयसुन्दर कृत मृगावती रास (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।
२. सदेयवच्छ सावलिगा चउपई (सदयवत्स वीर प्रबन्ध सा. रा. रि. इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ. स १३।

मध्य भागइ मठ उजट कुटीर, वइठा तापस वृद्ध शरीर।
हरि मृग अहि न कुलाण (नेवला) न पीर।
रिखि चातइ नही जिहाँ वह वह सीर।
कापइ मूल की दु ख करीर, अद्‌भुत महकइ सील अबीर।
पहिरण बलकल सुन्दर चीर, खजण वन फल पद मजीर।
निज बालक धवरावति वीर, ताप मखी तनु वरणादि मीर।
नाग, नकुल, एकल सुख माणइ, वेयर विरोध नही इण ठाय।
वृखराव तिसा गिरराव विराजइ, अति साखा सवलकता अ ग।
सिसहर तणी पारवती सोहइ, ग्रह जाणे लागा गयणाग।
तिण पग पग चदण तणा तरोवर, विविध विविध फूली वणराइ।
पखी मुखि हरिनाम पुणंता, सुरताम मानव तणँ सुहाय।
छिलता झिलता घणू छछोहा, ताढी तट छाया वृख ताड।
मदझरता इतरा मयगल, पाएले चालस्यइ पहाड।
कसतूरी नाभि निसधि निकेवल, उडियण जाइ लागा आकास।
मृग तेथि थकत हुथा वन माहे, वाजइ पवन तणा सुरवास।[१]

स्नान-वर्णन :

इन प्रेमाख्यानो मे नदी या सरोवर पर स्नान-वर्णन के भी सजीव चित्र उपस्थित किये गये हैं। यथा—

सरगहूँती अपछर उतरइ, ईस गवर की पूजा करई।
जाणे करिचद उग्यो जामिनी, तिणि सरीर मल करइ कामिनी।
झलके कुडल सरवर पालि, जाणि हीरा मेल्हया ढालि।[२]

दृश्य-विधान का सरस और सजीव चित्रण लब्धोदय कृत 'पद्मिनी चरित्र चौपई' मे बहुत पाया जाता है। सिंहलद्वीप प्रस्थान, पद्मिनी विवाह, पद्मिनी से विवाह कर आने पर राजा रतनसेन के स्वागत मे चित्तौड मे प्रवेशोत्सव, युद्ध वर्णन, अतिथि सत्कार एव राज-प्रासादों आदि के वर्णन मे कवि की भाव तल्लीनता व्यक्त होती है तथा ऐसे चित्रण पाठक को रस-मग्न कर देते हैं। यथा—

राज प्रासाद तथा अतिथियो के लिए भोजन सत्कार के लिए बने मण्डप का चित्रण लीजिए—

---

१ महादेव पारवती री वेलि (सा. रा रि इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ स २८, २६।

२. दामो कृत लखमसेन पद्मावती कथा, परिमल प्रकाशन प्रयाग।

ऊंचा अमर विमाग सा, मोटा महेल अनेक ।
गोख झरोखा जालिया, घोलति शुद्ध विमेक ।
सरग मृत्यू पाताल सव, सुन्दर वन आराम ।
चात्रक मोर चकोर वहु, चित रोया चित्राम ।
कनक थभ कलसे करी, मडित मोहण गेह ।
झिगमगि ज्योति जडाव की, चलकती चन्दरु एह ।
रगित मडप माहि हिव, जाजिम लावी जेह ।
वारु करै वीछामणा, मोल घणा छै जेह ।
मोखमल मोटा मोल रा, पच रग पट कूल ।
जरी कथीपा जुगति सु, सखर विछावै सूल ।
तरहदार विण मड ठव्यो, सिंहासण तिणवार ।
माणिक मोती लाल वहु, जडीया रतन अपार ।[1]

चित्रोपमता का कितना सजीव और मनमोहक उदाहरण है यह ?

भोजन-सत्कार वर्णन :

पहरी पटोली रे लाल, दासी सुन्दर देह ।
एक आवी आसण ठवै रे लाल, रूप अधिक गुण मेह ।।
भोजन भगति भलि करे रे लाल, सुन्दर रूप अचभ ।
दासी पदमणि सारखी रे लाल, रूपै जाणे रभ ।।
सोवन झारी जल भरी रे लाल, कनक-कचोला थाल ।
ले आवै भावै घणे रे लाल, कामणि अति सुकपाल ।।
नाना व्यजन नवा नवा रे लाल, चतुर समाह्या चाख ।
खाटा मीठा चरपरा रे लाल, रूडै स्वादै चाख ।।[2]

इसके पश्चात् नाना प्रकार के व्यंजनो का विस्तृत वर्णन कवि ने किया है ।

लब्धोदय का युद्ध-वर्णन भी चित्रात्मकता लिए हुए है । कवि मे उपयुक्त शब्द-चयन की कुशलता के कारण युद्ध का चित्र साकार हो गया है तथा शब्दो की ध्वनि से युद्ध की गूंज सुनाई देने लगती है । यथा—

होय हुसीयार हथीयार गहि ऊठीया ।
मीर वड वीर रिणधीर रोसइं ।।

---

१. पद्मिनी चरित्र चौपई (सा. रा. रि. इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ. स. ५४ ।
२. वही, पृ. सं. ५५ ।

सुणो पतिसाहि अल्लाह् अब क्या करे।
देखि तुझ साधरा हाथ मोसे ॥
इमकहि मुगल सिर चुगल जिम मूडिया।
धाय गढ कगुरे आय लागा ॥
पीठ परि रीठ पाधर तणी पड पडै।
अड वडै लड धडै भिडै आगा ॥
भडा भडि भडा भडि नाल छूटै भली।
कडाकडि कूट बाजे कुठारा ॥
तडातडि तडातडि सबद गढ ढावता।
भूबीया लूबीया मीर गढ ऊपरा ॥
गो फणा फण-फणा वहे गोला।
गडा गडि गिर तणा गडागरि गिर पडै,
चडा चडि ऊछलै मुगदल्ल रहोला।[1]

युद्ध-वर्णन मे पावस-ऋतु के मार्मिक चित्रण का उदाहरण दृष्टव्य है—

ऊडी रज आकाशे जाय, रवि जिण थी मालिन न थाय।
घोर अधारे जाणे घोर, गाजै वाजै नाचै मोर।
धड धड वलय धारू जलधार, चमकै बीजल जिम जलधार।
तू है सन्नाटे तलवार, उडइ तिणगा अगन सुझाल।
खलहल खलक्या लोही खाल, पावस रित जाणे परनाल ॥[2]

ओज गुण के उपर्युक्त शब्द-चयन की कुशलता 'सदयवत्स वीर प्रबन्ध' मे वर्णित युद्ध-वर्णन मे लीजिए। यहाँ शब्द स्वय नाचते हुए दृष्टिगोचर होते है तथा शब्द-ध्वनि से ही अर्थ की प्रतीति हो जाती है। यथा—

ढम ढम विसमा वाजइ ढोल, उर कमक मइ ति कायर निटोल।
झब्ब झब्ब झब्बकइ भालोह धसमसत धसमसिया जोह।
घूसण तणा कसण कसकसइ, गाढइ गुणि सीगिणि त्रसत्रसइ।
सावलोह सिरि तोमर तीर, भाले सिउ भेदीर शरीर।
जे मच्छरि मुहि आवी चडइ, ते पायक पग आगलि पडइ।[3]

---

१. पद्मिनी चरित्र चौपई, पृ स. ४५, ४६।
२. वही, पृ. स. ६६।
३. सदयवत्स वीर प्रबन्ध, पृ सं. ८८।

इन प्रेमाख्यानो मे स्वयवर वर्णन[1] और वसन्तोत्सव[2] आदि सार्वजनिक उत्सवो का भी बडा मनोरम और सरस वर्णन मिलता है। स्वयवर-वर्णनो मे कवि की भाव रमणीयता के साथ सुन्दर शब्द योजना एव सूक्ष्म पर्यवेक्षण शक्ति के साथ कला-पटुता का मणि-काचन सयोग हुआ है। समयसुन्दर कृत 'नलराज चौपई' मे दमयन्ती के स्वयवर का चारु-चित्रण तो रघुवश मे महाकवि कालीदास द्वारा वर्णित इन्दुमति के स्वयवर-वर्णन की चारुता का स्मरण दिला देता है। इन प्रेमाख्यानो मे दृश्य-विधान एव अन्य वस्तु वर्णन मे कृतिकारो की भावप्रवणता, निरीक्षण पटुता एव सरल अभिव्यजना का सन्तुलित समन्वय हुआ है।

आंचलिक-वर्णन

इन प्रेमाख्यानो मे राजस्थानी रग से ओत-प्रोत आचलिक-वर्णन भी बडी सरसता और सजीवता के साथ हुआ है। मरुभूमि की प्राकृतिक और भौगोलिक विशेषताये, राजस्थानी जन-जीवन, उनका रहन सहन, पहनावा, आनन्द-प्रमोद के साधन एव त्यौहारो मे स्थानीय रग की गहराई दर्शनीय है। 'ढोला मारू रा दूहा' मे राजस्थानी रग-रूप के मार्मिक चित्रण अपनी सहज अभिव्यक्ति एव सरस भाव-व्यजना के लिए प्रसिद्ध हैं। इसमे राजस्थान की आत्मा अपने सरल एव स्वाभाविक रूप से झाकती दृष्टिगोचर होती है। यह आचलिक रग, जिनके प्रयोग से राजस्थान की आत्मा साकार हो उठी है, वीच २ मे आये हुए कथा प्रसगो के रूप मे राजस्थान देश का वर्णन, ऋतु वर्णन, राजस्थान का नारी-सौन्दर्य वर्णन एव करहा-वर्णन मे पाया जाता है। वीसू चारण ढोला से राजस्थान के लोगो का वर्णन करते हुए कहता है—

देश सहावणउ, जल सजल मीठा बोला लोई।
मारन कामण भुइ दखिण, जइ हरि दियतत होइ ॥[3]

राजस्थान देश कितना मनमोहक है। यहा का जल तो मीठा है ही, साथ ही उस मीठे जल को पीने वाले राजस्थानियो की बोली भी उतनी ही मीठी है। यहा जैसी रूपवती नारिया दक्षिण देश मे तो परमात्मा की विशेष कृपा होने पर ही मिल सकती हैं।

राजस्थान मे किस प्रकार 'पडाव' जमता है, किस प्रकार दारू की मनुहार

---

१ देखिए सदयवत्स वीर प्रबन्ध ग्र थ का अध्याय-८ की पाद टिप्पणी न. २।
२. ,, ,, ,, ,, न ४।
३. ढोला मारू रा दूहा (ना. प्र. सभा, काशी) पृ स ११५।

चलती है तथा पास मे वैठा ऊँट किस प्रकार जुगाली करता है, इसका हृदयग्राही वर्णन इस पक्ति मे हुआ है[1] —

'तत कणवकई, पीड पिवइ, करहा जुगालेह ।'

शव्द-लाघव के साथ व्यजना का कितना सुन्दर उदाहरण है यह ? केवल एक ही पक्ति मे पूरा दृश्य अ कित कर दिया गया है। राजस्थान के गहरे कु ओ का वर्णन भी वहुत सुन्दर वन पड़ा है। यथा—

वालहउ वावा देसडउ, पाणी सदी ताति।
पाणी केरइ कारणेइ, पिउ छडि अधिरात ॥६५६॥
ऊँडा पाणी कोहरे, दिसई तारा जेम।
उस्यार हेउ थाकस्या, कछुउ काडि इस्याई केम ॥[2]

मालवणी राजस्थान की निंदा करती है, किन्तु उसकी यह निंदा ही राजस्थान की विशेषता वन गई है। यथा—

मारू थकई देशडे, एक न भाजइ रिड्डु।
ऊँचा अलऊ, अवरस वड, कइ फाकइ कई तिड्डु ॥[3]

मालवती के इस कथन मे वर्णन की स्वाभाविकता दृष्टव्य है।

ऋतु-वर्णन मे राजस्थान का आचलिक रूप निखरा है जिसका उल्लेख इस प्रकृति वर्णन के समय कर चुके है। ग्रीष्म ऋतु मे वालू रेत का तपना, लू का चलना राजस्थान मे एक सर्व विदित तथ्य है। इस प्रकार वर्पा ऋतु मे भी राजस्थान के ग्रामो मे वाजरे के दूर-दूर तक फैले हुए खेत किसका मन आकर्पित नही करते ? वस्तुत वर्षा ऋतु मे राजस्थान की धरती अमूल्य हो जाती है।

मारवणी के शृ गार वर्णन मे भी ठेठ राजस्थानी नारी का मनोहारी चित्रण मिलता है। यथा—

घण घमन्तइ घाघरई, जानइ उलटइ गमद।
मारू चलइ मन्दिरे, झीणे वादल चन्द।[4]

राजस्थान के जीवन मे 'करहा' अर्थात् ऊँट का महत्वपूर्ण स्थान है। यह

---

१. ढोलामारू रा दूहा (ना. प्र. सभा, काशी) पृ स १५२।
२. वही, पृ. स. १५९।
३. वही, पृ सं. १६०।
४. वही, प. सं. १२९।

रेगिस्तान का जहाज कहलता है। रेगिस्तान मे बैठकर ऊँट किस प्रकार जुगाळी करता है तथा जहा ऊँट बाधने के लिए दूर-दूर तक वृक्ष आदि न हो, वहा ऊँट के पग को पग से किस भाति बाधा जाता है इसका एक साकार चित्र लीजिए—

'तत कणक्कइ, पीव पिउई, करहा उगा दूलेह।
पग सू ही पग कूटइ, मुहरी झाली नारि ॥'[1]

शब्द-सौष्ठव के साथ चित्रोपमता का कितना सजीव चित्रण है यह।

इसी प्रकार पन्ना वीरमदे री वात' से भी 'राजस्थानी आचलिक रग' के अनेक सरस उदाहरण प्रस्तुत किये जा सकते है। राजस्थान मे श्रावण महीने मे गोठ (पिकनिक) का रिवाज प्रचलित है। सामन्ती सरदारो मे किस प्रकार दारू की मनुहारें चलती है तथा गोठ मे आमोद-प्रमोद होते हैं, इसमे ठेठ राजस्थानी रग उभर आया है। यथा—

"सघन दरखता री छाया आगै छिडकाव करि विछायत्या हुई छै। मसद की तयारी वणि रही छै। गुलाब छिडकावै छै। फरास पखारी झपटावा अनर री लपटा आव छै। रग रग रा दारूवा की तु गाआई प्याली फेरै छै। जागडारी जोडी गावै छै। जिके मल्हार माहे दुहा सुणावै छै। मनवार्या करि करि प्याला भगे छै। इण भाति रीझो करै छै। अतर खसबोय लगावै छै। × × गोठ की तयारी छै। × × पावस री सघण छैला पडै छै। जिणा माहि घोडा खडै छै। पागारी रग रग रा धोरा ऊतरीया छै।"[2]

राजस्थान मे स्त्रियो के मनमोहक पहनावे का एक सजीव चित्रण 'रतना हमीर री बात' मे से लीजिए—

"घूमालो घाघरो पहरीजै है, लहरियो ओढियो जिण मैं तन मन लहरीजै है। लक जिका लचैडे है, तिणहू करि मेखला रचै है।"[3]

राजस्थानी सामन्ती सरदारो के रहन-सहन का एक चित्रण 'पन्ना वीरमदे' से उद्धृत किया जा रहा है—

चनण अगरजा गाता ऊपरै लगावै छै। मुहावरा जिकै भवारा सू अडरह्या छै। लट पटीया पेच मे उलझिया थका मोतीयारी लडाँ रा पेच उधडिरह्या छै।

---

१ ढोला मारू रा दूहा (ना. प्र. सभा, काशी) पृ. स. १५१।
२ पना वीरमदे री वारता (ह. लि.) दादावाडी, अजमेर, पृ स. ६।
३. रतना हमीर री वारता (ह लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

पुषराजी प्याला सु अराक छाक पीवै छै। घणी घूमरधारिया जामा रा वध छाती ऊपरा सू खोलि दीधा छै। मद माता पटा छूट हुआ थका बागरी सैला फिरै छै।"[१]

राजस्थान के जन जीवन मे श्रावणी तीज के त्यौहार का बडा महत्व है। 'पन्ना वीरमदे री बात' मे तीज का वर्णन बडा मनोरम हुआ है। बाग मे जाकर स्त्रियो का रग-बिरगे कपडे पहनकर झूला झूलना, भाभी का अपनी नणद से पति का नाम कहलवाना और जब तक नाम नही ले, छडी से मारने आदि का चित्रण बडी सरलता एव चित्रोपमता के साथ किया है। इन प्रसगो मे कवि की सजीव वर्णन-पटुता दृष्टव्य है। यथा—

"कपडा भीना कुमकुमैं, अलका अतर उँडेल।
चद बदन्या आवै, चतुर रमणि तीज रग रेल।
सरब कसू बलै साज रग, अनत जडाव बणाय।
त्रिया सिरै पुंगल तणी, झूल पर्‌या छिप जाय॥"[२]

'दोय दोय साथण्या चढि हीडा चलावै छै। जिके आव की डाब तोडि तोडि ल्यावै छै। घणि झूकि गोडी मोडै छै। अपछरा का सा विवाण आमा सामा दोडै छै। तीज गलै छै जीसू तीजण्या लाजै छै। गोडी की साथै पायल को ठमको वाजै छै। ज्यारा पीठ पर चोटी ऊछलती निजरि आवै छै। जाणै घडो फेरता मदन चामडी वावै छै। साथण्या साटक्याँ वावै छै। हर नाव लीरावै छै।'

'सौस दिराय सुहाग री, सुणता सख्या तमाम।
अब तो लेस्यौ आप ही, नणद तूज बर नाम।
अगै ऊपडिया आपरै, साटकीया सहनाण।
आवी लाज अपार छै जी भाभी घण जाण॥[3]

तीज के अवसर पर गणगौर की पूजा का भी एक सरस चित्रण लीजिए—

'डेरे आय गणगौरि की पूजा कीनी। कुकुहर काजल की टीक्या दीनी। हास रस मे फूल बावै छै। मा हौ माहि साथण्या पर मोती ढलकावै छै। ऊ उछाव की तौ वौथमाइ (उपमा) न आवै छै। वास मे तौ देख्या ही वणि आवै छै। पना वारवार गणगौरि का पगा लागै छै। गणगौरि कना सूवाही का अभिलाषा मागै छै।"[४]

---

१ पना वीरमदे री बात (ह लि.) दादावाडी, अजमेर पृ स. ११।

२. वही, पृ. स १२।

३. वही, पृ. स. १५, १६।

४. पनाँ वीरमदे री बात (ह. लि.) दादावाडी, अजमेर, पृ. स. १२।

उपर्युक्त विवेचन से हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते है कि राजस्थानी के इन प्रेमाख्यानकारो मे काव्य मे मार्मिक स्थलो के चयन करने की तथा उनका सरस और सजीव चित्रण करने की असाधारण क्षमता थी। इनके प्रकृति के चित्रण मे, सूक्ष्म पर्यवेक्षण शक्ति, भाव-प्रवणता एव प्रकृति के साथ तादात्मय सम्बन्ध प्रकट होता है। वस्तु वर्णन मे भी इनकी बहुलता एव वर्णन-कौशल की अद्भुत क्षमता एव प्रतिभा का पता चलता है। आचलिकता के सजीव और सरस चित्रण मे इनकी सहृदयता व्यक्त होती है।

* * *

स

प्त

म

अध्याय

काव्य-सौष्ठव

स

प्त

म

अध्याय

काव्य-सौष्ठव

रस

'रसो वै स '—इस श्रुतिवाक्य मे रस को ब्रह्म-स्वरूप बतलाया गया है। तथा आचार्यों ने काव्य को ब्रह्मानन्द सहोदर कहा है। अत काव्य मे रस के स्थान का निर्णय करते हुए अधिकाश आचार्यो ने रस को काव्य की आत्मा माना है। आचार्यों ने कुल नौ रस माने हैं, किन्तु परवर्ती आचार्यो के द्वारा 'वात्सल्य रस' को दसवा रस मान लेने पर रस की कुल सख्या दस हो गई। इन सब मे शृ गार-रस को 'रस-राज' माना गया है।

शृ गार रस की महत्ता और उसका स्वरूप

साहित्य दपर्णकार प. विश्वनाथ ने शृ गार-रस के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए लिखा है—

शृ गहि मन्मथोद्भेदस्तदा गमन हे तुकः।
उत्तम-प्रकृति प्रायो रसः शृ गार इष्यते ॥

शृ ग का अर्थ 'कामोद्रेक' है। कामोद्रेक की उत्पत्ति का कारण शृ गार कहलाता है। किन्तु उत्तम प्रकृति का कामोद्रेक ही शृ गार कहलाता है, ऐन्द्रिय वासनायुक्त कामोद्रेक जिसमे शारीरिकता का हो प्राधान्य ही शृंगार के अन्तर्गत नही आ सकता। शृ गार-रस का स्थायीभाव रति है। जिसका अर्थ प्रिय वस्तु के प्रति मन के उन्मुख होने का भाव अर्थात् नायक-नायिका का पारस्परिक अनुराग है। यथा—

'रतिर्मनोनुकूलेऽर्थे मनसः प्रवणायितम् ॥'

इस प्रकार शास्त्र के अनुसार स्त्री-पुरुष के हृदय मे एक दूसरे के प्रति एक सहज आकर्षण—'उन्मुखी भाव' वर्तमान रहता है जो अनुकूल परिस्थिति में उद्बुद्ध

होकर विशेष मानसिक एव शारीरिक क्रियाओ द्वारा अभिव्यक्त होता है, इसे ही शृ गार या प्रेम कहते है। डा० नगेन्द्र ने शृ गार-रस की मनोवैज्ञानिक व्याख्या करते हुए लिखा है कि "जीवन की एक प्रमुख वासना है-काम मिलनेच्छा। काम पर आश्रित मनोविकार ही शृ गार या रति है। शृंगार या रति का कारण अर्थात् आलम्बन है स्त्री अथवा पुरुष (नायक-नायिका), अनुभूति मूलत सुखद है (इसलिए विश्वनाथ ने शृ गार को सत्प्रकृति कहा है), परिवर्तित भाव रूप असूया, हर्ष, आदि है, ऐन्द्रिय सवेदनाएँ रोमाच, स्वरभग, विवर्णता, स्वेद-अश्रु आदि हैं, और शारीरिक चेष्टाएँ है—स्मिति, कटाक्ष, चुम्बन, आलिंगन आदि। मनोविज्ञान की दृष्टि से रति काम पर आश्रित भावविशेष है, जो हर्ष, असूया आदि सहचारी भावो को जन्म देकर उनसे पुष्ट होता हुआ रोमाच, स्वरभग, आदि सूक्ष्म ऐन्द्रिय सवेदनो और स्मिति, कटाक्ष, चुम्बन, आलिगन, रति आदि स्थूल शारीरिक क्रियाओ मे अभिव्यक्त होता है।"[1]

शृ गार-रस की महत्ता का प्रतिपादन करते हुए आचार्य भरत ने लिखा है—

यत्कि चिल्लोके शुचि मेध्ययुज्जवल दर्शनीय वा तच्छृ गारे णोपमीयते।

अर्थात् ससार मे जो कुछ पवित्र, उत्तम, उज्जवल और दर्शनीय है वही शृ गार है। भोज ने शृ गार प्रकाश मे शृ गार को ही एकमात्र रस मानते हुए उसकी पूर्ण प्रतिष्ठा की है। हिन्दी के लगभग सभी आचार्यो ने एक स्वर से उसे रसराज माना है। इसके अतिरिक्त साहित्य का वृहदश शृ गार-रस से ही अनुप्राणित है। आध्यात्मिक दृष्टि से स्त्री-पुरुष का प्रेम प्रकृति और पुरुष की प्रणय लीला का प्रतिबिम्ब है।

राजस्थानी के प्रेमाख्यानो में शृंगार रस की प्रधानता

शृ गार-रस की इस अनुराग-भावना अर्थात् प्रीति का प्रतिपादन राजस्थानी के प्रेमाख्यानो मे बडी सरसता एव सजीवता के साथ मिलता है। शृ गार-रस प्रधान इन प्रेमाख्यानो मे नायक के उत्कर्ष का चित्रण करने के लिए कतिपय प्रेमाख्यानो में आये हुए युद्ध के प्रसगो मे वीर, भयानक और वीभत्स का भी सयोजन मिलता है। इन प्रेमाख्यानो मे अलौकिक घटनाओ और चमत्कारो के समावेश से अद्भुत रस भी मिलता है तथा कुछ प्रेमाख्यानो मे जीवन की व्यापक मनोवृत्तियो का चित्रण होने से वात्सल्य और शान्त-रस का भी प्रतिपादन हुआ है, किन्तु इन रसो के सयोजन से 'रस-राज' शृ गार की पुष्टि मे कोई अडचन नही पडी है। इन प्रेमाख्यानो मे शृंगार भावना अत्यन्त परिष्कृत और सस्कृत रूप मे हमारे सामने

---

१. देव और उनकी कविता-डा० नगेन्द्र पृ. स ८२।

आती है। शारीरिकता की उसमे स्वीकृति है, पर वह शरीर की प्राकृत भूख नही है, (कुछ अपवादो को छोडकर) अधिकाश रूप में उनमे मन की कोमल सौन्दर्य-वृत्तियो को ही अधिक मूल्य दिया गया है, किन्तु मासलता की भी कम स्वीकृति नही। इन प्रेमाख्यानो मे मासलता और मानसिकता का सन्तुलित समन्वय हुआ है। इसलिए इसमे तीव्रता और उत्कटता के साथ माधुर्य और मसृणता भी मिलती है।

शृगार-रस के दो मूल-भेद हैं— सयोग और वियोग। सयोग मे आश्रय-आलम्बन का मिलन रहता है, अतएव वह सुखात्मक है। रूप-वर्णन अर्थात् नख-शिख एव आभूषण-वर्णन, हाव-चित्रण अष्टयाम, उपवन, उद्यान, जलाशय आदि के क्रीडा-विलास, परिहास विनोद सुखान्त इसके अन्तर्गत आते है। वियोग मे प्रेमी-प्रेमिका का विच्छेद रहता है, अतएव स्वभावत वह दुखात्मक है। उसके चार भेद है—पूर्वराग, मान, प्रवास और करुण। पूर्वराग सयोग से पहले उत्पन्न होने वाली आकुलता है। मान, किसी अपराध के कारण नायिका के रूठ जाने को कहते हैं। राजस्थानी कवियो मे नायक के रूठ जाने का भी वर्णन मिलता है। प्रवास मे नायक का विदेश गमन होता है। करुण में किसी आधि-दैविक अथवा अन्य प्रबल व्यवधान के कारण सयोग की आशा अत्यन्त क्षीण अथवा नष्टप्राय हो जाती है। वियोग के अन्तर्गत कवियो मे दस कामदशा, पत्र, दूती, बारहमासा आदि का वर्णन करने की परिपाटी है। षड्ऋतु का अतर्भाव सयोग-वियोग दोनो मे हुआ है।

सयोग

सयोग के दो मुख्य अग हैं—एक रूप-वर्णन, दूसरा मिलन, जिसके अन्तर्गत पारस्परिक शरीर सुख के विनिमय के अतिरिक्त विनोद और विहार आदि आते हैं।

(१) रूप-वर्णन ·

सौन्दर्य तत्व की व्याख्या हम अध्याय चार मे कर चुके है। मनोविज्ञान की दृष्टि से सौन्दर्य का मूल-तत्व सामजस्य है। यह सामजस्य पहले वस्तु के विभिन्न अगो मे होता है, फिर वस्तु और व्यक्ति के मन अर्थात् भाव के विभिन्न अगो मे होता है, फिर वस्तु और व्यक्ति के मन अर्थात् भाव के बीच। प्रथम को वस्तुगत सौन्दर्य तथा द्वितीय को भावगत सौन्दर्य की सज्ञा दे सकते हैं। रूप, सौन्दर्य का वह पक्ष है जो नेत्रो के द्वारा मन का प्रसादन करता है। डा० नगेन्द्र ने रूपात्मक अनुभूति की तीन अवस्थाये मानी हैं :—

(१) वस्तुगत रूप की अनुभूति, जिसमे वस्तु के विभिन्न अगो के सामजस्य का तटस्थ रूप से ग्रहण मात्र होता है।

(२) रूप-जन्य मानसिक आनन्द की अनुभूति। इसके मूल मे वस्तु और भाव का सामंजस्य होता है।

(३) रूप के प्रति वासना की अनुभूति। इसमे केवल आनन्द की भावना ही नही, वरन् रूप के ऐन्द्रिय उपभोग की वासना का भी गाढा रग रहता है।

रस-शास्त्र की दृष्टि से सौन्दर्यानुभूति मे विस्मय, आनन्द और रति इन तीनो भावो की पृथक्-पृथक् अथवा सम्मिश्रित अनुभूति होती है।[1]

राजस्थानी के इन प्रेमाख्यानो मे रूपात्मक अनुभूति की इन तीनो अवस्थाओ का सम्यक्-चित्रण हुआ है।

(१) **वस्तुगत रूप की अनुभूति** :—राजस्थानी के इन प्रेमाख्यानो मे वस्तुगत रूप की अनुभूति नायिका के नख-शिख वर्णन मे मिलता है। इन प्रेमाख्यानो मे नायिका के नख-शिख का वर्णन परम्परागत रूप मे ही हुआ है। इसमे परपाटी-बद्ध उपमान आदि का परिगणन होने से वस्तुपरकता का प्राधान्य मिलता है। उदाहरणार्थ :—

जस जघ-जू अल वर रंभ-थभ।
पिथल कि उरथल केरिण कुंभ।।
कर-पल्लव नव-शाखा अशोक।
सोवन्न वन्न साम-शरीर रोक।।
तिल-फुल्ल नास-संजुत मत।
त्रुटि दाडिम दत, अहर राग रत्त।।
अंजन सह खजन सरिस नेत्त।
सीमत कुंत किरि मयूर केत्त।।[2]

कुशल लाभ कृत माधवानल कामकन्दला चौपई से एक अन्य उदाहरण और प्रस्तुत किया जा रहा है। यथा—

चपक वर्ण सु कोमल अग, मस्तक वेणि जाणु भुयग।
अधर रग परवालि वेलि, गय वर हँस हरावे गेलि।
नाक जिसी दीवानी सिखा, बाहे रतन जडित बहिर खा।
सीसफूल सोवन राखडी, कचन मय घड़ी, रतने जडी।[3]

---

१. देव और उनकी कविता, डा० नगेन्द्र, पृ. सं. १००।
२. भीमकृत सदयवत्स वीर प्रबन्ध (सा. रा. रि. इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ. स. २३।
३. कुशललाभ कृत माधवानल कामकन्दला चौपई (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

उपर्युक्त नख-शिख चित्रण मे रूप के वस्तु-परक पक्ष का उद्घाटन हुआ है, भाव-परक रूप का नही। सादृश्य और साधर्म्य उपमानो के द्वारा वस्तु का चित्र तो सामने उपस्थित कर दिया है, किन्तु नायिका की उमडती हुई भावना की अभिव्यक्ति इनमे नही हुई है। सौन्दर्य के इस प्रकार के रीतिबद्ध चित्रो का चित्रण इन प्रेमाख्यानो मे बहुत हुआ है।

सादृश्य एव साधर्म्य उपमानो के माध्यम से रूप-चित्रण के अन्य उदाहरण और प्रस्तुत किये जा रहे है। यथा—

"नासिका जाणँ दीपक री लोय, मुख जेसो पूनो रो चन्द। दातू जाणे डाडिम बीजा कपोल जके कचन तक कठ। घणो कोमल दरसाव। जीको पीवता पाणी निजर आवे। कुच जाणे काचो अनार। आगला मु गफली सी।[1]

इसी प्रकार 'माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध' मे साधर्म्य उपमानो के युक्त रूप-चित्रण का एक उदाहरण लीजिए—

दीप शिखा, सोविन सली, तेल तणह ते धार।
निरखी निरखी नासिका, जग सहि करइ विचार ॥[2]

इस उद्धरण मे नायिका की नासिका की उपमा दीपक की लौ से दी है तथा उसे स्वर्ण की सली बताया है। 'स्वर्ण की सली' उपमा से नासिका का तीखापन प्रत्यक्ष हो उठा है। नवीन उपमानो का प्रयोग कवि की सूक्ष्म सूझ, नवोन्मेषशालिनी कल्पना का द्योतक है, किन्तु उक्त रूप चित्रण मे कवि का बौद्धिक-विलास और उसकी चमत्कार-प्रियता ही प्रकट होती है, भाव-प्रवणता नही।

(२) भावना परक रूप-विधान ·

इन प्रेमाख्यानो मे भावना परक रूप-लावण्य का आनन्दानुभूतिमय चित्रण भी कम नही हुआ है। उदाहरणार्थ कविवर पृथ्वीराज राठौड कृत 'वेलि क्रिस्न रुक्मणि री' का रूप चित्रण लीजिए जिसमे कवि ने रुकमणि के रूप-सौन्दर्य—वय सन्धि, यौवनागम एव नख-शिख आदि के रम्य चित्र सजाये हैं। यथा—

पहिलउ मुख राग प्रकट थिउ प्राची,
अरुण कि अरुणोद अम्बर।

---

१. पना वीरमदे री बात (ह. लि.) दादावाडी, अजमेर, पृ सं १७।

२. गणपति कृत माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध (गायकवाड ओरियन्टल सीरीज) पृ स. १०८।

पेखे किरि जगिया पयोहर,
सझा वन्दण रिसे स्वर ॥१६॥[1]

कपोलो पर यौवन की अरुणिमा और अंबर मे झाकती हुई उषा की रक्तिम आभा के साथ ऋषिवरो के निद्रावस्था से पूजन के लिए उठने की क्रिया का साम्य, यौवन आगम पर उरोजो की उठान से सम्बद्ध कर कवि ने अपनी उर्वरा कल्पना की परिचय दिया है।

लज्जा नारी का भूषण है। वर्डसवर्थ ने तो कहा है कि लजीला पुष्प चित्ताकर्षक होता है। लज्जा नारी के शील का परिचायक है। इस लज्जा-भावना से नारी का सौन्दर्य द्विगुणित हो उठाता है। 'प्रसाद' जी के शब्दो मे – "मैं एक पकड हूं जो कहती है। 'कुछ ठहरो सोच विचार करो'। लज्जा नारी को सकोचशील बनाती है और कानो की लाली तथा आँखो का अजन बनकर उसे लजीला पुष्प बना देती है। पृथ्वीराज ने रुकमणि के ऐसे ही मनोमुग्धकारी लज्जा समन्वित रूप का राग-रजित चित्र खीचा है जो उन्हे अन्य शृंगारिक-काव्यो से ऊचा उठा देता है। यथा—

आगलि पित मात रमति आगणि,
काम-विराम छिपाडन काज।
लाजवती अगि ओह लाज विधि,
लाज करति आवइ लाज ॥१८॥[2]

यौवन के आगमन के फलस्वरूप रुकमणि जी की शरीर यष्टि बसन्त के कुसुम सी खिल रही है। वह अपने काम-विरामो को छिपाना चाह रही है, किन्तु इस क्रिया मे रुक्मणिजी को लाज करते हुए भी लाज आरही है। कितनी सुकोमल भावना है। यहा बिहारी की नायिका की भांति रुकमणि जी इतनी प्रगल्भ नही है कि अपनी छाया को भी—'छिनुक निहारि छाह' निहारने के लिए व्याकुल है। विद्यापति की नायिका का हाल तो इससे भी बढता है—

मुकुर लेत छिनु नेकु निहारी,
पूछइ सखिइन कत सुरत विहार।
यौवन रूप हरइ कत बेरि,
हँसई अपन पयोधर हेरि॥

---

१. क्रिसन रुकमणी री वेलि, सं० श्री नरोत्तमदास स्वामी, पृ. स ६।
२. वही, पृ. स १०।

यहा रुक्मणि की तरह लज्जित होकर कुचो को छिपाया नही जाता बल्कि उनको देखकर स्वय नायिका ही आनन्द विभोर हो रही है। इन उद्धरणो से यह तो परिलक्षित हो जाता है कि शृ गार-रस का शील समन्वित रूप जो वेलि मे पाया जाता है, अन्यत्र दुर्लभ है। इसी प्रकार 'महादेव पार्वती री वेलि' मे भाव-परक रम्य रूप-विधान के सुन्दर उदाहरण भी मिलते है। पार्वती के वक्षस्थल पर पडे हुए मोतियो के हार का एक मनमोहक चित्रण लीजिए—

मोती अति नृमल कोर सिर काढे,
खासइ हीर पोविया खास।
मिलती गग समुद्र जल मेली,
ऊजल उदक तणइ ऊजास ॥३३४॥[1]

मोतियो के हार मे गगा का अपने उज्जवल जल के उजास के साथ समुद्र मे मिलने की उद्भावना करके कवि ने बडी चतुरता से अपने प्रियतम से मिलनोत्सुक नायिका की ओर सकेत कर दिया है।

आभूषणो से सुशोभित नायिका का ऐसा ही भाव-परक चित्रण हमे 'पना वीरमदे री बात' मे मिलता है। इसमे नायिका के वक्षस्थल पर पडी हुई मोतियो की माला मे गगा की धाराओ की उद्भावना की गई है—

"मोत्या री हार री लडा कुचा दोन्यो दोली फीरे छै। जाणै सुमेर सिखर पर सु गगा दोय धारा कर उतरै छै। अ गिया री कसा शरीर में गडी छै, जाणै सोना के उपरै कसौटी चमी छै।"[2]

अ गिया की कसो के गडने से नायिका के कोमल शरीर मे ऐसी रेखाये पड जाती है मानो कसौटी पर स्वर्ण रेखाये अ कित हो गई हो। कितनी सूक्ष्म और नूतन कल्पना है यह ? इस प्रकार के रूप चित्रण के अनेक मनोरम उदाहरण इन प्रे माख्यानो मे भरे पडे हैं।

(३) उपभोग मूलक रूप-विधान :

रूपात्मक अनुभूति की तीसरी स्थिति उपभोग मूलक होने से वासनामयी होती है। नायिका की पहिचान यही है कि जो देखने वालो मे अपने यौवन से रतिभाव जागृत करे। अत इस प्रकार के रूप-चित्रण मे यौवन की मादक-गध लिए तीव्रता और प्रगाढता मिलती है। रस भीने गन्ध-युक्त मासल-सौन्दर्य का चित्रण

---

१ महादेव पार्वती री वेलि (रा. रा. रि. इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ. स. ११२।
२, पना वीरमदे री वारता (ह. लि.) दादावाडी, अजमेर, पृ. स ४१।

इन प्रेमाख्यानो की विशेषता है। 'वेलि क्रिस्न रुक्मिणी री' की नायिका रुक्मिणी के उन्मद यौवन में रति भाव को जागृत करने का गुण कूट-कूट कर भरा हुआ है। यथा—

आकरखण, वसीकरण, उनमादक,
परिठि द्रिविण सोखण सरपच।
चितवणी, हसणी, लसणी तणि सकुचिणि,
सुदरि द्वार, देहुरा-सच ।[1]

उपर्युक्त रूप-चित्र मे कवि ने काम के पाँच बाणो का शृगार की पाच चेष्टाओ के रूप मे बडे लाघव से वर्णन किया है। इसी प्रकार पार्वती के मादक रूप का चित्रण भी उपभोग भावना जागृत करता है। यथा--

प्रीतम रइ कारण पारवती,
राखीयउ जाणे आम-रस।
भीडीयउ उर ऊपर काचू भर,
कसणा रेसम तणा कस ॥३३३॥[2]

पार्वती के उभरे हुए उरोजो का वर्णन करते हुए कवि ने कल्पना की है कि मानो उसने अपने प्रियतमा के आस्वादन के लिए अमृत-रस के कुम्भ भर रखे हो और उन्हे वक्ष-स्थल पर कचुक से ढँक का रेशम के बन्धनो से कस कर बाँध रखा हो। रस-भीने यौवन को प्रियतम के लिए समर्पित करने की तैयारी का बडा सजीव चित्रण है यह !

इन प्रेमाख्यानो मे अवस्था भेद के अनुसार नायिका के विविध रूप-- वयसन्धि, यौवनागम, नव-यौवना, अज्ञात-यौवना, मुग्धा नायिका के ज्ञात यौवना, नवौढा, मध्या और प्रौढा आदि का भी चित्रण यत्र-तत्र मिलता है। यह चित्रण परम्परागत ही है। 'रतना हमीर री वारता' मे वयसन्धि, नव-यौवना, अज्ञात यौवना आदि नायिका के चित्रण मे रीतिकालीन काव्य-प्रणाली का स्पष्ट प्रभाव लक्षित होता है। यथा—

वय-सन्धि :

तीर पहुति नाचै तिय, सिसुता जोबन सार।
चित उतरण अर चढण री दलबल हुई हुकार ॥

---

१. क्रिसन रुक्मिणी री वेलि, स० श्री नरोत्तमदास स्वामी, पृ. स. ५७।
२. महादेव पार्वती री वेलि (सा. रा. रि. इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ स. ११२।

नव-यौवना

सिसुता जल सुसियाह, जिण जोबन स्व जेठ रै।
ऊँचा उस सियाह, अद्‌भुत उरज उरस्थली ।।

अज्ञात-यौवना :

उर उकसाणा ऊपरै, सखि हँस पडसा जैह।
मिटवि निथारी सकमन, लोयण अति लाजैह ।।[1]

कविवर पृथ्वीराज ने भी 'वय सन्धि' का बडा मनोवैज्ञानिक और सूक्ष्म चित्रण किया है। यथा—

सैसव तनि सुसुपति जो वरणन जाग्रति,
वैस सन्धि सुहिण सुवरि।
हिव पल पल चढतो जि होइ स्यइ,
प्रथम ग्यान एहवी परि ।।[2]

'वय सन्धि' के चित्रण मे उपमा का सयोजन स्थूल से सूक्ष्म की ओर उन्मुख है। सुषुप्ति, स्वप्न और जागृति के बीच निखरती हुई चेतना का साम्य सुन्दरी के अ गो के क्रमिक विकास के साथ इतना सुचारू रूप से सगठित किया जाता है कि अन्य कवियो मे मिलना दुर्लभ है।

नायिका के 'यौवनागम' रूप का चित्रण 'महादेव पारवती री वेलि' मे अपनी नूतन कल्पना और सरसता के लिए दृष्टव्य है। यथा—

आँकुस मदन चा तन ऊपडिया,
घट महिमा जोवता घणी।
देवल जाहि सिखर चा देवल,
ईडा चा झल किया अणी ।।[3]

नायिका के वक्षस्थल पर अण्डो की नोक की तरह उठते हुए उरोजो की उपमा देवालय के शिखर स्थित गोलाकार से देकर कवि ने अपनी सूक्ष्म अन्तर्दृष्टि का परिचय दिया है।

रूपमुग्धा-नायिका ·

रूपमुग्धा नायिका का भी सरस और सजीव चित्रण इन प्रेमाख्यानो में पाया है। यथा—

---

१ रतना हमीर री वारता (ह लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।
२. क्रिसन रुकिमणी री वेलि, स श्री नरोत्तमदास स्वामी, पृ. स ८।
३. महादेव पारवती री वेलि (सा रा रि इन्स्टीट्यूट बीकानेर) पृ. स. २२।

काहैवत भई कामनी, भयो जोवन को जोर।
निरवत कर गहै खासती (आरसी) अपनी आप मरोर।
देखत अपनी छवि अपा, हुलसे जीव विशेप।
त्यो-त्यो निरखे हुसुन को, ज्यो-ज्यो वटत विवेक ॥[1]

आरसी मे अपने ही रूप को देखकर आनन्द विभोर होने वाली विद्यापति की रूपमुग्धा नायिका का हम पिछले पृष्ठ मे उल्लेख कर चुके है। कवि खेतसी की नायिका भी विद्यापति की नायिका की भाँति ही दर्पणो मे अपने यौवन के उभार को देखकर उल्लसित हो रही है। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से इसे हम आत्म रति (Narcissim) की सज्ञा दे सकते है।

सद्यस्नाता नायिका

इन प्रेमाख्यानो मे 'सद्य स्नाता' नायिका के भी रसभीने अनेक चित्र चित्रित किये गये है। कुछ भी उदाहरण यहा प्रस्तुत किये जाते है :—

उठी ताइ करे माजणउ उमया,
वेणी झर अब ग्रह वड।
वादल स्वास तणउ ताइ वरसइ,
झीणी बूदा केर झड ॥[2]

स्नान करके उठी नायिका की जल से भीगी हुई वेणि झरने की क्रिया मे हलके बादल का झीनी बून्दो की झडी लगाकर वरसने की रम्य कल्पना करके कवि ने सूक्ष्म पर्यवेक्षण शक्ति एव नवोन्मेषशालिनी प्रतिभा का परिचय दिया है। इसी भाँति पृथ्वीराज कृत वेलि मे भी सद्यस्नाता रुकमणी का नूतन-कल्पनायुक्त सरस चित्रण मिलता है। यथा—

कुम-कुमइ मँजण करि धडत बसन्त धरि,
चिहुरे जल लागौ चुवण।
छीणे जाणि छछोहा छूटा,
गुण मोती मख तूल गुण ॥८१॥

रूक्मिणी के गुलाब जल से स्नान करने के उपरान्त उसकी लटो से जल-कण

---

१. कवि खेतसी कृत विरह गुलजार इश्क अनवर कथा (ह. लि.) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्र थाक ५२०३।

२. महादेव पारवती री वेलि (सा. रा. रि. इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ. सं. ११०।

टपक रहे है। उनके केश-कलाप से टपकते हुए जल बिन्दु ऐसे प्रतीत होते हैं। मानो काले रेशम के टूट जाने पर उसमें गुथे हुए मोती जल्दी-जल्दी गिर रहे हो।[१]

मानतुंग मानवती चरित्र मे भी सद्यस्नाता नायिका का मनमोहक चित्रण हुआ है। यथा—

> कै मज्जन करी नै जल की बाहिरे रे, आवि केशनि चोवे नारि।
> टब-टब के बूंद बिहुआरे, जाणि के टुट्टो मोतिहार॥
> कैसर अंवर रे पीतांबर तणोरे, काव्य वीणा माहि की ताम।
> कै पहर्यो झिलकैरे झीणा अंग थी रे, जिणै छवि मोहै सुर नर गाम॥[२]

योग वेश मे रानी मानवती के नदी से स्नान कर निकलने पर उसकी अलको से पानी की बूंदे ऐसे टपकती है, मानो मोतियो के हार के टूट जाने पर मोती बिखर पडे हो। भीगी अलको से जल-बिन्दुओ के टपकने मे मोती बिखर जाने की कल्पना पृथ्वीराज ने भी की है, किन्तु पृथ्वीराज ने सादृश्यता और साधर्म्यता के आधार पर केश कलाप मे काले रेशम के डोरे की कल्पना करके अपेक्षाकत अधिक रमणीयता लादी है।

मिलन और उपयोग

मिलन के अन्तर्गत संयुक्त प्रेमियो के समस्त मानसिक और शारीरिक सुख आते हैं। रीति-परम्परा के अनुसार कवि इस प्रसंग मे नव दम्पति की रस चेष्टाएँ, सूरत, अष्टयाम, विहार आदि का वर्णन करते रहे है। इन प्रेमाख्यानो मे नायक-नायिकाओ की रस-चेष्टाओ के जो चित्र अंकित किये गये हैं, उनमे मानसिक और शारीरिक सुख का गाढा रंग हैं। उनमे मन और शरीर दोनो ही तन्मय होकर उत्सव मनाते है। अपने प्रियतम के मिलन पर नायिका के उल्लास का एक सजीव चित्रण लीजिए :—

> सोई सज्जण आविया, जाँह की जोती बाट।
> थामा ना चड, घर हँसइ, खेलण लागी खाट॥[३]

मारवणी जिसकी आतुरता से प्रतीक्षा कर रही थी, वही प्रियतमा जब एक दिन आगया तब उसके हर्ष का पारावार न रहा और समस्त वातावरण आनन्दित हो उठा। उल्लास के इस उच्छलन मे जड-वस्तुये भी पीछे नही रही। 'ढोला मारू रा दूहा' के कवि ने कितनी सहज और सरल भाषा मे नायिका के मन

---

१. क्रिसन रुकमणी री वेलि, स. श्री नरोत्तमदास स्वामी, पृ स ४२।
२ मानुतुंग मानवती चरित्र (ह लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।
३. ढोलामारू रा दूहा (ना प्र. सभा, काशी) छंद स ५४१, पृ. स. १२६।

और तन के उल्लास का सजीव चित्र अ कित कर दिया है । इससे भी अधिक दृष्टव्य है कवि की गूढ़ साकेतिकता । 'नाचण लागी खाट' मे कवि ने नायक-नायिका के बीच होने वाले रति-क्रीडा के उल्लास का भी बडी चतुराई से सकेत कर दिया है। इसे कहते है व्यजना-शक्ति का अद्भुत् चमत्कार ।

प्रियतम के मिलन पर नायिका के मन के उल्लास के साथ तन के उल्लास का एक अन्य सजीव चित्रण और लीजिए—

> प्रिय दिट्ठो भर प्रेम प्रकास, अ गि अ'गि वाध्यो उल्हास ।
> सकट कचुअति उल्हसइ, प्रिय सगति हुई तिणहसइ ॥[1]

प्रियतम को पाकर नायिका के अ ग ही नही वल्कि प्रियतम के वियोग मे उदास, शुष्क कचुकी भी उल्लसित हो रही है । यही नही मन के उल्लास के साथ तन के प्रफुल्लित होने तथा प्रेमिका के द्रवित होने की प्रक्रिया का कवि ने सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक चित्रण निम्नलिखित दोहे मे किया है —

> तन विलसण मन उल्हसण, वयण सयण सम वाणि ।
> चख-निरखत धन विद्रवण, मानव भव सुप्रमाणि ॥[2]

विविध अनुभावों का संयोजन

शृ गार-रस मे स्त्रियो की चेष्टाओ और उनके मनोविकारो के वर्णन करने की प्रवृत्ति ही प्रधान होती है, इसी कारण विविध अनुभावो का सयोजन ऐसे काव्यो का मुख्य अ ग है । आचार्यो ने स्त्रियो के तीन अ गज, अलकार-भाव, हाव और हेला माने हैं । रतिभाव के उद्रेक के लिए प्रत्यक्ष-दर्शन, चित्र-दर्शन, स्वप्न-दर्शन, गुण श्रवणादि का प्रयोग इन काव्यो मे मिलता है । यहाँ कुछ उद्धरण प्रस्तुत किये जाते हैं । नायक के प्रथम-दर्शन के समय नायिका के निर्विकार मन मे प्रथम-विकार रति भाव के स्फुरण का एक चित्रण लीजिए :—

> वयण नयण सयणह तणे, इ गित नइ आकारि ।
> कुमरी जाँण्यउ कुँवरनउ, चित थयु सुविकारि ॥
> निरख्यो कुँअर कुँअरि नयण, मोहाणा मनि जाग्यो मयण ।
> पल पल देखइ नयन पसारि, खिण विहँसइ खिण बिलखी नार ॥[3]

---

१. केशवकृत सदयवत्स सावलिगा चउपई (सदयवत्स वीर प्रबन्ध सा रा रि इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ. सं. १५१ ।

२ वही, पृ. स १४५ ।

३. केशव कृत सदयवत्स सावलिंगा चउपई (सदयवत्स वीर प्रबध, सा. रा. रि. इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ. स. १४६ ।

प्रेम लुब्धा नायिका के मनोभावो का कितना मनोवैज्ञानिक सरस चित्रण इन पक्तियो मे हुआ है? इसमे हर्ष और अश्रु नामक हावो का चित्रण भी द्रष्टव्य है।

प्रियतम से मिलने पर नायिका की प्रेम-जनित रोमाचक-दशा का चित्रण निम्नलिखित पक्तियो मे कितना सजीव बन पडा है —

"रोम जिणारा हरसिया, आख्या मे आनन्द बरसिया।
बदन मुलकिया, अग अग पुलकिया ॥"[1]

नायिका की अगज चेष्टाओ मे हाव और हेला का भी इन प्रेमाख्यानो मे विशद् चित्रण मिलता है। हाव नामक अगज अलकार के कुछ उद्धरण यहाँ प्रस्तुत किये जाते है। यथा—

"तिरछी नीजर कुवरनु जोवै छै। अर चमक चवद हुय लचकाणी पड गई। जाणे अग मे ही जवड गई।"[2]

नायक के प्रथम-दर्शन के समय नायिका के मन की कैसी विचित्र दशा हो जाती है। 'जाणे अग मे जवड गई' मे 'स्थम्भ हाव' का चित्रण हुआ है। 'स्थम्भ हाव' का एक अन्य मार्मिक उद्धरण और लीजिए —

"आ बार बार देखै उणाकानी तिण वेला इसी फबी जाणै सबी देख हुई आप सबी।"[3]

यहाँ रूप विमुग्धा नायिका की प्रेम-जनित जडता कितनी सुन्दरता के साथ व्यक्त हुई है।

'अश्रु' नामक हाव का उद्धरण 'गुलाबा भवरा री वारता' से उद्धृत किया जा रहा है। यथा—

"देदे वचन अपार ले चली सखिया, परिहा।
निकसै नाहि बैन, डबी डबी अखियाँ।"[4]

प्रथम समागम के समय नायिका के सात्विक भाव तथा 'किल किंचित हाव' का एक सरस उद्धरण छिताई वार्ता से उद्धृत किया जा रहा है—

"छारत कचुकी लजाइ। फूकइ द्रिष्ट दिया बुझाय ॥
भौ वियान मुखि कपह देह। चल्यौ प्रसैद प्रथम सितनेह ॥

---

१ रतना हमीर री वारता (ह. लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।
२. वही,
३. वही,
४. गुलाबा भवरा री वारता (ह. लि.) राजस्थानी सस्थान, जोधपुर, ग्रथांक १७३५।

अधर प्रकार कुच गहन न देइ । छुवन न अंग छिताई देई ।।
घूंघट वदन तर हडी कीउ । दोउ हाथ लगावत हीउ ।।
कठिन गाठि दृढ विधना दइ । छोरत जवहि सुरसी लइ ।।
नाना नामि नारि उचरइ । तव चित्त चउप चत्रग्णी करइ ।।
सकइ सकुचइ वीरी न खाइ । रही पीठ दे हाथ छुडाइ ।।[१]

नायिका की अंगज चेष्टा हाव का एक मनोवैज्ञानिक सरस चित्रण निम्न-लिखित रूप से किया गया हे—

आलस मोडइ माजई अंग, मरट धरइ लेवा मन दंग ।
खिण निसास करे ऊससे, कामदेव जागत कसमसे ।।
वाम चरण अंगूठा नखे, खिणि नीचो जोई लिखे ।
कुंगर-निजर साम्हो ते देखि, संभालइ निज चीर विशेषि ।।[२]

लजालु नायिका का नीचे झुककर अपने वाम चरण के अंगूठे को निहारने का चित्रोपमता लिए हुए कितना सूक्ष्म सूझ-जनित चित्रण है यह ?

नायिका की अंगज चेष्टा 'हेला' के भी इन प्रेमाख्यानो मे अनेक उदाहरण मिलते है । यहाँ 'पन्ना वीरमदे री वारता' से एक उदाहरण प्रस्तुत किया जा रहा है :—

वार-वार वालम वचनै, हरपि आय हस देतै ।
एक तणी मुठीरन, खोलि-खोलि ढकि लेतै ।।[३]

इसके अतिरिक्त इन प्रेमाख्यानो मे स्वभाव-सिद्ध अनुभावो मे विलोक, कुट्टमित और केलि का तो प्रधान रूप से चित्रण मिलता ही हे, किन्तु वैवर्ण्य, विभ्रम आदि के उदाहरण भी यत्र-तत्र पाये जाते है । शोभा, काति, दीप्ति, माधुर्य, प्रगल्भता, औदार्य आदि अयत्नज अलकार तो इन प्रेमाख्यानो की प्राय सभी नायिकाओ मे मिलते हैं ।

इन प्रेमाख्यानो मे सुरत और सुरतान्त के अनेक सरस उदाहरण मिलते है। सुरत–चित्रो मे कवियो ने शालीनता, सूक्ष्म सुरुचि तथा कोमल भावना का परिचय दिया है । तथा अधिकतर साकेतिकता से कार्य चलता चलाया है । सुरत–क्रिया का साकेतिक वर्णन अलकारिक शैली मे कुशल लाभकृत

---

१ भारतीय प्रेमाख्यान काव्य (छिताई वार्ता) डा. हरिकान्त श्रीवास्तव, पृ स. २१५ ।

२. केशव कृत सदयवत्स सावलिंगा चउपइ (सदयवत्स वीर प्रबन्ध सा. रा रि इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ. स १४६ ।

३. पन्ना वीरमदे री बात (ह. लि) दादावाडी सजमेर पृ. स २४ ।

'माधवानल–कामकन्दला चौपई' मिलता है जिसमे कलुषता नहीं मिलती । यथा—

जिम मधुकर नई कमलरिण, गगा सागर वेलि ।
तिरिण परि माधव रमे, काम कतु हल केलि ।।[1]

इसी भाति कमलावती चौपई मे नायक-नायिका की केलि-क्रीडा का अलकारिक-शैली मे वर्णन किया गया है । यथा—

'कुमर भमराइ कुमरी मालती जी माणइ भोग रसाल ।'[2]

नायक-नायिका के आलिगन-बद्ध एकाकार का एक मनोरम चित्र गणपत कृत माधवानल कामकन्दला प्रबध से उद्धृत किया जा रहा है । यथा—

'माधव महिला थी ठरइ, महिला माधव दीठ ।
अन्यो अन्यइ श्या थमा, चटकु चोल मजीठ ।।[3]

सलज्ज रति मुग्धा नायिका का एक राग-रजित चित्र 'पना वीरमदे री वारता' से उद्धृत किया जा रहा है—

"ढोला की निवार चौपडी करि नीची नाटवी, डोर सू चडि झरोखै ढोले आयो । जाणे कँवल पराग कै ऊपर भवर लुभायौ । पना कै लाज को वदण तो मजबूत ही लखावै छै । परिण चाह को समद पा जा मे न मावै छै ।"[4]

घू घट ओट सलाय गैहै, कँवल कवल विगसाय ।
हसती, लजती, उमगती, उभी मन मुसकाय ।।
मुख सोभा दे मयक ज्यौ, मुलके मद सुमद ।
पट घू घट की फडक मे, चोर लियो घण चद ।।
कर गहि लीनी ढोलीये, साय घण कत सकाज ।
हाथा हाथ मिलावीयौ, रति जाणै रति राज ।।
हठ धण, हुलसरिण, हरख मन रीझरण खीजरण रूप ।
लाज सुरगा लोयणा, आई पिलग अनूप ।।

---

१. कुशल लाभ कृत माधवानल कामकन्दला चउपइ (ह लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर ।

२ कलावती चौपई (ह लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर ।

३. गणपति कृत माधवानल कामकन्दला प्रवध (गायकवाड ओरियन्टल सीरीज) पृ. स. १०८ ।

४. पना वीरमदे री वात (ह. लि.) दादावाडी, अजमेर, पृ. स २२ ।

पट घू घट हठ खोलियो, उमड्यो मुख उजास।
सकै क पून्यू सरद री, कीदो चद प्रकास ॥[१]

उपर्युक्त उद्धरण मे नायिका के मानसिक उल्लास का वडा सरस वर्णन किया गया है। रमण के लिए सेज पर वैठी पना का जव घू घट हटाया गया तो लगा कि शरद् की पूर्णिमा को चन्द्रमा अपनी सम्पूर्ण स्निग्ध आभा लिए प्रकाशित हो रहा हो।

रति-क्रीडा के कुछ अनावृत चित्रण भी इन प्रेमाख्यानो मे मिलते हैं। अनावृत्तता या नग्नता को अश्लीलता का पर्यायवाची नही समझ लेना चाहिये, क्योकि नग्नता सदैव अश्लील नही होती और न आवरण सर्वथा शोभनीय ही हो सकता है। ऐसी दशा मे अश्लीलता का सम्वन्ध कुरुचि से ही माना जा सकता है।

सुरतात या रतिश्रांता नायिका का भाव-परक रम्य चित्रण भी इन प्रेमाख्यानो मे वहुत हुआ है। उदाहरणार्थ –

"मर गजे चीर अलसाये सरीर पना सेज सू ऊठी छै। नीद नही, सरव निसा मदन पूरी लूठी छै। आयवलती अलका वेसर मै उलजी छै। नोसरहार की लडा विसस्या सू न भूल छै। कु वार ऊपरै नख खित ईण भाति ऊगडिया छै, जाणै कनक माहि माणकै के कणै जडीया छै।"[२]

नायिका के कान्तियुक्त शरीर मे नायक द्वारा 'नखक्षत' के चिन्ह ऐसे प्रतीत हो रहे है मानो स्वर्ण मे माणक के कण जड दिये हो। इसी भाति वेलि मे भी सुदतान्त मे रुक्मिणी के ललाट पर पसीने के कणो मे शोभित कुंकम-विन्दु पृथ्वीराज को ऐसा प्रतीत होता है मानो कामदेव रूपी कारीगर ने स्वर्ण मे हीरे जड़कर बीच मे माणिक मिला दिया हो।[3] किन्तु वेलि मे कवि की कल्पना का कलात्मक निखार अधिक उभर पाया है।

सयोग-सुख से वचित होने की आशका नायिका को विचलित करती है। वह चाहती है कि यह मादक रात्रि कभी समाप्त न हो। ऐसे ही एक रम्य-चित्रण का उद्धरण 'ससी पूना री वात' से उद्धृत किया जा रहा है—

'तारा मण्डल जी नीखवी सो, मती यह रैन बिहाय।
तू मती बोले कूकडा, मती पनो ऊठी जाय ॥[४]

---

१. पना वीरमदे री बात (ह लि.) दादाबाडी, अजमेर।
२. वही, पृ. सं. २७।
३. वेलि क्रिसन रुक्मिणी री।
४. ससीपना री बात (ह. लि) राजस्थानी शोध सस्थान, जोधपुर।

इसी प्रकार सयोग-सुख मे बाधक हर वस्तु नायिका को बुरी लगती है। प्रभात होने की चेतावनी देने वाले कूकडे की आवाज 'पना वीरमदे री वारता' की नायिका को बहुत बुरी लगती है और वह विचार करती है कि प्रियतम और उसके बीच मे रात्रि को हार जितनी दूरी असह्य रही तो प्रभात के समय प्रियतम का विछोह वह कैसे सहन कर पायेगी। यथा—

"केसरी का दू कूकडा, बोल्यौ मुन अभाग।
सेज्या प्यारा सजन रैं, सूती छी गल त्याग।
हार जितौ ही आन्तरौ, हिये न सहियौ राति।
राजि हलग़ रो आतरो, क्यू सहस्या परभात।।[1]

जहा एक ओर अपने प्रिय से दूर करने वाली अथवा सयोग-सुख मे बाधक वस्तुयें अप्रिय लगती हैं, वहा प्रियतम से मिलने वाली वस्तुये नायिका को उतना ही प्रिय लगती है। अपने प्रियतम की प्रतीक्षा मे आतुर नायिका को जब उसका प्रिय मिल जाना है तब वह हर्ष से फूली नही समाती। वह अपने प्रियतम को लाने वाले घोडे पर बलिहारी होती है—

ल्यू बलिहारी नीलडा, पैतै ल्यायौ पीव।[2]

सयोग के आनन्द और प्रेम के गर्व को प्रकट करने के लिए इन प्रेमाख्यानो मे नायक-नायिका के बीच परिहास प्रसगो की भी सरस सृष्टि की गई है। विनोद का अपना ही माधुर्य होता है और इसमें कवि का भी वाग्वैदग्ध्यता प्रकट होती है। नायक-नायिका के बीच परिहास का सुन्दर चित्रण 'ढोला मारू रा दूहा' मे भी मिलता है। मारवणी की कचन काया को देखकर ढोला मारवणी से विनोद करता है कि जो बहुत से दु खो से विद्ध है, वे सुरगे कैसे रह सकते हैं? मारवणी ढोला के व्यग को समझ जाती है और हँसते हुए प्रत्युत्तर देती है कि आपको आये तो एक पहर हो गया, मेढक तो घन बरसते ही क्षण भर मे सजीवित हो जाते हैं। इसलिए यदि मैं सुरगी लगती हू तो इसमे आश्चर्य कैसा ?[3]

नायक-नायिका मे विनोद के लिए समस्या-विनोद, पहेलियो आदि का प्रयोग भी इन प्रेमाख्यानो मे बहुल पाया जाता है। सयोग-शृगार के अन्तर्गत नायक-नायिका के विहार का भी अत्यन्त महत्व है। इसके अन्तर्गत प्राय अष्टायाम, षड ऋतु-वर्णन, उपवन, एव उत्सवो का राग-रजित वर्णन होता है। इस प्रकार के

---

१. पना वीरमदे री वात (ह. लि.) दादावाडी, अजमेर, पृ स. २५।
२. वही, पृ. स. ३३।
३. ढोला मारू रा दूहा (ना. प्र. सभा, काशी) दूहा स. ५४६, ५४८ पृ. स. १३१।

विहार-प्रसगो का इन प्रेमाख्यानो मे वडा सरस और सजीव वर्णन मिलता है। इनका उल्लेख हम अध्याय छह मे प्रकृति चित्रण तथा वस्तु-वर्णन के अन्तर्गत कर चुके है।

विरह :

काव्य मे विप्रलम्भ-शृगार की सबसे वडी उपादेयता यह है कि इसमें कवि को मानव-हृदय की उन रागात्मक, सुख-दु ख से पूर्ण निश्छल, निष्कपट मनोवृत्तियो का सूक्ष्म और हृदयग्राही वर्णन करने का अवसर मिल जाता है, जिससे काव्य की आत्मा खिल उठती है। इसलिए प्रत्येक कवि ने विप्रलम्भ शृगार का वर्णन कम व अधिक रूप से किया है।

आचार्य विश्वनाथ ने विरह के चार अग माने हैं—पूर्वराग, मान, प्रवास और करुण।[1] कुछ विद्वानो ने 'शाप' का भी उल्लेख किया है। आज कुछ विद्वान् 'मिलकै विछुरे की विथा' न होने से पूर्वराग को वियोग के अन्तर्गत नही मानते तथा मान को तो वे सयोग का ही अग मानते है। वस्तुत मान एक प्रकार से सयोग की एकरसता को तोडने के लिए परिवर्तन मात्र है। डा० नगेन्द्र का कथन है कि 'पूर्व राग या मान मे अवसाद का वह गाम्भीर्य नही होता जो प्रवास मे होता है। उनके अनुसार पहले मे चाचल्य है, दूसरे मे अस्थिरता है जिसका जन्म निष्ठा के अभाव से होता है। इसलिए स्वभाव से गभीर आलोचक प० रामचन्द्र शुक्ल को नागमती और सीता का प्रवास-जन्य विरह-वर्णन ही ग्राह्य हुआ, क्रीडारत गोपियो का मान उन्हे खिलवाड लगा।'[2]

राजस्थानी के प्रेमाख्यानो मे विप्रलम्भ शृगार के उपर्युक्त चारो अगो का चित्रण मिलता है।

पूर्व-राग :

पूर्वराग रति का अग अवश्य है परन्तु पूर्ण रति नहीं। साहित्य-दर्पणकार ने पूर्वराग की परिभाषा इस प्रकार दी है .—

श्रवणाद्दर्शनाद्वापि मिथ. सरूढ रागयो।
दशा विशेषोयोऽप्राप्तौ पूर्वराग. सउच्येत।[3]

इन प्रेमाख्यानो मे नायक-नायिकाओ मे पूर्वराग का उद्रेक रूप-गुण-श्रवण,

---

१. 'सच पूर्वराग मान प्रवास करुणात्मकश्चचतुर्द्धास्यात्।' साहित्य दर्पण, ३/२१३।

२ देव और उनकी कविता : डा० नगेन्द्र, पृ स १०८।

३. साहित्य दर्पण, ३/२१४।

चित्र-दर्शन, स्वप्न-दर्शन तथा प्रत्येक-दर्शन होता है। 'ढोला मारू रा दूहा' प्रेमाख्यान मे यद्यपि मारवरणी और ढोला का विवाह हो चुका होता है, किन्तु मारवरणी का पूर्वराग स्वप्न-दर्शन से ही मानना होगा क्योकि ढोला से उसका विवाह बचपन मे ही हो गया था तथा उसे अपने विवाह की बात, स्वप्न मे प्रियतम देखने के बाद सखियो से ज्ञात हुई थी। इस प्रकार अन्य प्रेमाख्यानो मे भी स्वप्न-दर्शन, चित्र-दर्शन अथवा रूप-गुण-श्रवण के द्वारा पूर्वराग-जन्य विरह के अनेक उदाहरण मिलते हैं जिसकी विवेचना हम इसी ग्रथ के, प्रेम-पद्धति नामक चौथे अध्याय में कर चुके है।

करुण

करुण के उदाहरण हमे नागजी नागवती री बात, शैणी बीजाणद, ससी पना, मूमल महेन्द्र तथा उन सब प्रेमाख्यानो मे जहाँ प्रतिनायक द्वारा नायक को समुद्र मे गिराकर नायिका के अपहरण की घटनाओ का उल्लेख है, यथा—हसाउली, उत्तम कुमार चरित्र चौपई, सिंहलसुत चौपई, बीजा बीजोगण री बात आदि— मे मिलते हैं। इन प्रेमाख्यानो मे नायक-नायिकाओ के मिलन की आशा समाप्त होती है। प्रथम तीन प्रेमाख्यानो मे तो नायक-नायिकायें विरहजन्य दुख को सहन नही कर पाने से मर जाते हैं।

प्रवास :

'ढोला मारू' मे मारवणी का विरह प्रवासजन्य है; अत उसके विरह मे मारवणी की अपेक्षा अधिक तीव्रता मिलती है। 'पच सहेली रा दूहा' और बीसलदेव रास मे भी प्रवास-जन्य विरह का बडा मार्मिक-चित्रण हुआ है।

मान :

इन प्रेमाख्यानो मे 'मान' का चित्रण प्राय. कम हुआ है। 'अचलदास खीची री बात' मे लाल मेवाडी का रूठना मान-जन्य विरह के अन्तर्गत ही आयेगा।

विरह-चित्रण में भाव-सौंदर्य

अधिकाश राजस्थानी प्रेमाख्यानो मे प्रेमियो का कथा के आरम्भ मे ही मिलन नही होता, जिससे कवियो को उनके प्रेम-जन्य औत्सुक्य, प्रेमी को प्राप्त करने की व्याकुलता, चिन्ता आदि नाना मनोदशाओ का विस्तारपूर्वक वर्णन करने का अवसर मिला है और जिन कवियो ने अपनी रस-सिद्ध भावुकता का परिचय दिया है, उनके प्रेमाख्यानो मे भाव-सौन्दर्य के सजीव और सरस उदाहरण मिलते है। इन प्रेमाख्यानो मे विरह-चित्रण मे भाव-सौन्दर्य को प्रकट करने वाले कुछ उद्धरण प्रस्तुत किये जा रहे हैं :—

मारवणी अपने प्रियतम से मिलने को व्याकुल है। वह कुरझो (क्रौंच-पक्षी) से उनकी पखडियाँ माँगती है ताकि उन्हे लगाकर समुद्र पार कर अपने प्रियतम के पास पहुँच सके। कुरझे भी मारवणी के करुण विलाप से द्रवित होकर उसके साथ सम्वेदना प्रकट करती है। यथा—

कुंझा, द्यउ नइ पखडी, थाँकउ विनउव हेसि।
सायर लघ प्री मिलउँ, प्री मिलि पाछी देसि ॥६२॥[1]

कुरझे मारवणी को अपनी पखडियाँ देने मे तो असमर्थ है, किन्तु वे मारवणी की सहायता के लिए तत्पर है। यथा—

माणस हवाँत मुखचवाँ, म्हे छाँ कु घडियाँह।
प्रिउ सदेसउ पाठविसु, लिखि दे पखडियाँह ॥६५॥[2]

अपने प्रियतम के वियोग से दुःखी विरहणी नायिका के हृदय-गत वेदना की कितनी मार्मिक झाकी है, यह। इस वेदना से पक्षियो तक का हृदय पिघल जाता है। सहानुभूति और सम्वेदना का इतना व्यापक विस्तार केवल विरह-अवस्था मे ही पाया जाता है। जायसी की नागमती पर भी एक पक्षी को इतनी दया आती है कि वह उसके प्रेम-सन्देश को ले जाने के लिए तैयार हो जाता है। तभी तो प रामचन्द्र शुक्ल ने नागमती के विरह-वर्णन की मार्मिकता का उद्घाटन करते हुए कहा था—'वह पुन्य दशा धन्य है जिसमे ये सब अपने सगे लगने लगते है और यह जान पडने लगता है कि इन्हे दुःख सुनाने से भी जी हलका होगा। × × × हृदय की इस व्यापक दशा का कवियो ने केवल प्रेम-दशा के भीतर ही वर्णन किया है, यह बात ध्यान देने योग्य है।[3]

जिस प्रकार नागमती अपने प्रियतम के वियोग मे उपवनो के पेडो के नीचे रात रात भर रोती फिरती है। इस दशा मे पशु-पक्षी, पेड-पल्लव जो कुछ सामने आता है, उसे वह अपना दुःख सुनाती है, उसी प्रकार 'ससी पना री वारता' की नायिका ससी भी पना के वियोग मे वन मे भटक रही है और उसको मार्ग मे पशु-पक्षी तथा अन्य जड पदार्थ—यथा तीतर, पहाड आदि मिलते है, उनसे अपने प्रियतम का पता पूछती फिरती है। यथा—

औ आडा औ बाप, बेहू डूगर सथल हूँ।
ईमरा तरस न लाग, सझे मीलौ हो सजना ॥[4]

---

१. ढोला मारू रा दूहा (ना. प्र सभा, काशी) पृ स १५।
२. ढोला मारू रा दूहा (ना. प्र. सभा, काशी) पृ स. १५।
३. जायसी ग्रंथावली (ना प्र सभा, काशी) पृ. सं. ३९.
४. ससी पना री बात (ह लि.) राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।

विरहणी नारी के कोमल हृदय की कितनी मार्मिक पीडा व्यक्त हुई है इस सोरठे मे। हृदय की रागात्मक वृत्ति का प्रसार चेतन जगत तक ही सीमित नही, जड जगत तक पहुँच गया है। यह करूणोक्ति, वैसी ही है जैसी प्रेमातुर अवस्था मे राम का सीता की खोज मे वन के मृग और वृक्षो से सीता का पता पूछना अथवा विरह-विधुरा गोपिकाओ का ब्रज की लताओ से कृष्ण के विषय मे पूछना। 'सझे मिलौ हो सजना मे नायिका की विरहातुर मानसिक दशा 'अभिलाष' का भी सुन्दर चित्रण हुआ है।

सयोग अवस्था मे जो प्रकृति के मनोरम उपादान एव ऋतु परिवर्तन तथा अन्य वस्तुये नायक-नायिका को बडे सुखप्रद होते है, वे ही वियोग की अवस्था मे दु खप्रद हो जाते हैं। प्रकृति का एक एक दृश्य, समय का एक एक क्षण और वसुधा का एक एक पदार्थ उसे पीडा पहुचाने लगता है। उदाहरणार्थ, गणपति कृत 'माधवानल कामकन्दला' की नायिका कामकन्दला की मानसिक स्थिति के चित्रण मे कवि ने प्रकृति के सारे क्रिया-व्यापार एव नित्य प्रति के जीवन से सम्बन्धित वस्तुओ का सयोजन करके उनके प्रति नायिका की मानसिक प्रतिक्रिया का आयोजन किया है। सयोग के समय दीपक, चन्द्रमा, कोयल उसे सुख पहुचाती थी, आज वे ही उसके लिए पीडादायक हो गई है। कामकन्दला दीपक से कह रही है—

'दाखिन राखू दीवडा का दहइ मुझ शरीर।
पवन कारी पर हो कहू, उपरि नामू नीर।
तेल बलइ बाती बलइ, आपि बलइ अपार।
बलनु बल अधिकु करइ, मुझनइ मार खहार।[1]

इसी प्रकार वह चन्द्रमा से कहती है—

पापी तू प्रछइ नही, परमेश्वर परतक्ष।
पूनिम निशि पीडिया आहे, बलतु करिउ विपक्ष ॥[2]

विरह मे विरहणी को कोयल, पपीहा, मोर आदि किसी का भी स्वर अच्छा नही लगता। यथा—

'कोइल तू काली सही, स्वर परिण ताहरु काल।
प्रिउ पाखइ पेखी प्रिया, प्राण हरइ तत्काल ॥[3]

इसी भाति से मारवणी को भी पपीहे का स्वर अच्छा नही लगता। कभी

---

१. गणपति कृत माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध, पृ. सं १९०।
२ वही, ,, ,, ,, पृ स १८३।
३. वही, ,, ,, ,, पृ स १८८।

वह पपीहे को ठग बतलाती है और उसकी चोच कटवाने की धमकी देती है। विहरनी को कभी ऐसा लगता है कि पपीहा नमक लगाकर उसे काट रहा है। कभी उसके मन मे 'असूया' भाव जागृत होता है और वह कहने लगती है कि 'प्रिय मेरा है, और मे प्रिय की हू', भला "पिउ-पिउ" कहने वाला तू कौन होता है ? यथा—

बाबहिया, तूँ चोर, थारी चोच कटा विसूँ।
राति ज दीन्ही लोर, महँ जाण्यउ प्री आवियउ ॥३०॥
बाबहिया निल पखिया, वाढत दइ दइ लूण।
प्रिउ मेरा मँह प्रीउ की, तूँ प्रिउ कहइस कूण ॥३३॥[1]

मारवणी के प्रेम-सदेशो मे भी उसकी मानसिक दशाओ की उथल-पुथल और भाव विकारो का मनोवैज्ञानिक चढाव-उतार वडी मार्मिकता के साथ व्यक्त हुआ है। अपनी हृदयगत पीडा को मारवणी अनुनय, विनय, क्षोभ, पश्चाताप, आशका, भय इत्यादि के रूप मे नाना प्रकार से व्यक्त करती है।[2] इसी प्रकार 'फूलजी फूलमती री वारता' की नायिका फूलमती भी तोता के साथ अपने प्रियतम के पास सन्देश भेजती है जिसमे उसकी विरह-वेदना का मार्मिक चित्रण हुआ है। यथा—

सुवा एक सन्देशडो, वेगो जाय कहेस।
कागद दीजो हाथ मे, था विन उवाय रेस ॥[3]

श्रावण महीना आगया है और घटाये घुमड रही हैं तथा बिजलिया चमक रही है। ऐसी अवस्था मे नायिका के प्राण अपने प्रिय के वियोग मे निकले जा रहे हैं। यथा—

सावण श्रायो फूलजी, घटा उमगी जाय।
बीजलीया चमकै घणी, था विन जिवडो जाय ॥[4]

अपने प्रियतम के वियोग मे नायिका सब श्रृगार, आभूषण त्याग देती है तथा उसे नीद भी नही आती, क्योकि उसके हृदय मे तो प्रियतम बसे हुए है और विरह रूपी भुजग उन पर वैसे ही सुशोभित है, जैसे महादेव के सिर पर गगा सुशो-

---

१. ढोला मारू रा दूहा, (नागरी प्रचारिणी सभा, काशी) पृ स. ८।

२ देखिए–ढोला मारू रा दूहा, (नागरी प्रचारणी सभा, काशी) के ११५ से १३० तक तथा १३७, १५६, १५८, १६८, १७५, १७६, १८२ दोहे पृ स, २६ से ४०।

३ फूलजी फूलमती री वारता (ह लि) रा प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्र थाक १०४७६।

४. वही, ,, ग्र थाक १०४७६।

भिन हो रही हो—

थारे कारण फूलजी, छोड्या सब सिणगार।
गहणे तो पहरू नहीं, बीदला न धरू ँ लीलार।
मेरा मन तुम सो लग्यो, तुम तो जाणे म जाण।
नीद सुता आवै नही, थाहरा जीव री आण।
सजन निरदैवस रह्या, तीम रह सै भुयग।
नीलकण्ठ रे सीस पर, सदा रहत ज्यो गंग ॥[1]

वेदना का निरीह और निरावरण रूप कितनी सहजता के साथ इन उद्धरणो मे व्यक्त हुआ है।

अपने प्रिय के वियोग मे व्याकुल नायिका की विवशता, आशका, अभिलाषा का मार्मिक चित्रण निम्नलिखित पक्तियो मे हुआ है—

'अखर पियु के नाम के, लिखे कलेजे माहि।
डरती पाणी न पिउ, मत ने धोऊइ जाइ ॥[2]

विरहणी नायिका इतनी विवश है कि हृदय मे अकित अपने प्रियतम के नाम के अक्षर धुल जाने के भय से पानी भी नही पीती। इतना ही नही उसके प्राण तो प्रियतम के साथ चले गये है, पीछे तो केवल उसके शरीर का ककाल रह गया है, उसे भी नायिका अपने प्रियतम के सिर पर वार करके फकीरो को दान करना चाह रही है। समर्पण भावना का कितना निश्छल रूप उजागर हुआ है इन निम्न-लिखित पक्तियो मे—

जीव हमारा थे लिया, पजर रही अवलेह।
तेरे सिर ऊपर वारि कै, खैर फकीरा देह ॥[3]

नायिका का प्रियतम विदेश जा रहा है, किन्तु वह उसे रोकना चाह रही है। अपने प्रियतम को रोकने के लिए नाना प्रकार से अनुनय विनय करती है। वह उसे अपने हृदय मे उसी प्रकार रखना चाहती है जैसे गगा को शिव अपने सिर पर रखते हैं तथा जिस प्रकार सीता दमयन्ती अपनी सास की सेवा करती है, उसी भाति वह अपने प्रियतम की सेवा करने को भी आतुर है। यथा—

कहि तु कालिज माहा धरू, राखू हृदय मझारि।
मूर्भनि मूकी माधवा, पगलू रखे पधारि ॥

---

१ फूलजी फूलमती री वारता (ह. लि) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रथाक १०४७६।

२. जलाल गहाणी री वात (ह. लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

३. वही,।

आव अमोडा माहि धरू, ईश तणई जिम अग।
हू विलपति विरहणी, स्वामी ! म छडिसि सग ॥
माधव ! करि माहरु कहिउ, जु मुझ वछइ खेम।
सास लगइ सेवा करिसि, सीत दमयती जेम ॥[1]

इसी भाति मालवणी भी नाना प्रकार की उक्तिया देकर ढोला को मारवणी के पास जाने से रोकना चाहती है और एक वर्ष तक वह रोक भी लेती है, किन्तु अन्त मे विदा का हृदय-स्पर्शी दृश्य आ ही जाता है। यथा—

ढोलउ हल्लाणउ करइ, धण हल्लिवा न देह।
झब झब झूंबइ पागडइ, डब डब नयण भरेह ॥[2]

चित्रोपमता, एव भाव-व्यजना का कितना मार्मिक चित्रण है यह ?

प्रेमिका को छोडकर प्रियतम चले जा रहे हैं। वह उन्हे पुकार कर रोकना चाह रही है पर लाज के बन्धन उसे अपना मुँह नही खोलने देते और यदि वह उनके पास दौडकर भी जाना चाहे तो दूरी के कारण नही पहुच सकती। विरहनी नारी की विवशता और व्यथा का एक सजीव उद्धरण लीजिए—

"हैलो द्यू तो लाजी हू, जे दौडू तो दूरि।"[3]

अपने प्रियतम के जाने के बाद तो विरहनी के पास हृदय की ज्वाला को शान्त करने के लिए केवल यही एक उपाय रह गया कि जाते समय प्रियतम अपने पद-चिन्ह जिस धरती पर छोड गये हैं, उनकी मिट्टी उठा उठाकर शीश पर चढाये। यथा—

पना चलता भर गया, आगणी भीबडिया।
ते मैं सीस चढाइया, भरी भरी मुठडिया ॥[4]

अपने विरह दग्ध-हृदय को शान्त करने के लिए मारवणी के पास भी यही एक उपाय रह जाता है। इसी भाव को लिए 'ढोला मारू रा दूहा' मे से भी उद्धरण लीजिए—

'साल्ह चलतइ परठिया आँगण बीखडियाँह।
सो मह हियइ लगाडियाँ, भरि भरि मूठडियाँह ॥[5]

---

१. गणपति कृत माधवानल कामकन्दला प्रबध (गायकवाड, ओरियन्टल सीरीज, बडौदा, पृ. स ११० ।
२ ढोला मारू रा दूहा (ना. प्र. सभा, काशी) पृ स ७० दोहा न. ३०४।
३ ससी पना री वात (ह लि) राजस्थानी शोध सस्थान, जोधपुर।
४. वही, ,, ,, ,, ।
५. ढोला मारू रा दूहा (ना. प्र सभा, काशी) पृ. स ८५ दोहा न ३६६।

प्रेमिका की विरह विह्वल दशा, उसकी व्याकुलता, निरीहता का साकार चित्र निम्नलिखित पंक्तियों मे व्यक्त हुआ है :—

कर कापे भरता कलम, अंग उठै अकुलाय ।
चखं उलटै छाती फटे, कागद लिखो न जाय ।।[1]

नायिका अपने प्रियतम को प्रेम-पत्र लिखना चाह रही है किन्तु कैसे लिखे ? विरह-वेदना इतनी तीव्र है कि वह पत्र लिखने मे असमर्थ है। किन्तु मारवणी किसी प्रकार धैर्य रखकर प्रेम-पत्र लिखने भी बैठती है तो उसके सम्मुख यह समस्या उत्पन्न हो जाती है कि वह पत्र किस प्रकार से प्रारम्भ करे, उसमे क्या २ बाते लिखे जिससे उसके प्रियतम का हृदय पसीज उठे और वह पत्र पढते ही उसके पास चला आये। यथा—

भरइ पल हुई, भी भरइ, भी भरि भी पलटेहि ।
ढाढी हाथ सन्देशसडा, धण विलवती देहि ।।१८२।।[2]

उक्त दोहे मे कवि ने कुशल मनोवैज्ञानिक चित्रकार की भाँति अपनी सूक्ष्म पर्यवेक्षण शक्ति, शब्द-कौशल और भाव-सुकुमारता का परिचय दिया है।

भाव-सुकुमारता, चित्रोपमता एव मनोवैज्ञानिक सूक्ष्म सूझ तथा नायिका की विरहजनित विह्वल मानसिक दशा का एक अन्य उद्धरण और लीजिए :—

पथी हाथ सँदेसडइ, धण विललती देह ।
पन सू काढइ लीहटी, उर आसुआँ भरेह ।।१३७।।[3]

नायिका की लज्जाजनित विवशता, प्रियतम का अपनी ओर ध्यान आकर्षित करने के लिए तत्पर बुद्धि और चातुर्य, विरह-वेदना जनित कोमल भाव एव समर्पण-भावना का सहज और सजीव चित्रण निम्नलिखित पंक्तियो मे हुआ है। यथा—

बीजा थाकई कारणइ, तोडयउ नवसरहार ।
लोग जाणइ मोती चुणइ, निम निम करु जुहार ।।[4]

नायिका के रोम रोम मे व्याप्त प्रेम के क्षण मे निराशा से मुरझाता और दूसरे क्षण मे आशा की दीप्ति से प्रदीप्त होती दशा का एक मार्मिक चित्रण कुशललाभ कृत 'माधवानल कामकन्दला चउपई' के निम्नलिखित दोहे मे हुआ है।

---

१ पना वीरमदे री वात (ह लि.) दादावाडी, अजमेर ।
२ ढोला मारू रा दूहा (ना. प्र. सभा, काशी) पृ स ४० ।
३ वही, पृ स ३१ ।
४. सोरठ रा दूहा (ह लि.) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, बीकानेर, शाखा, गुटका न. ७२ पृ. स. २२ ।

यथा —

हीयडा भीतरि पेसकरि, ऊगा सज्जन रूख।
नित सल्ले, नित पल्लवई, नित नित नवला दुख।।[1]

यही दोहा 'ढोला मारू रा दूहा' मे भी मिलता है।[2]

उपर्युक्त उद्धरणो मे कृशता, ताप, वेदना, निरव लम्वता आदि का सुन्दर चित्रण हुआ है। इस विरह-वर्णन मे वेदना का निर्मल और कोमल स्वरूप, दाम्पत्य-जीवन का मर्मस्पर्शी माधुर्य, चतुर्दिक व्याप्त प्रकृति और व्यापारो के साथ हृदय की साहचर्य-भावना तथा प्रसगानुकूल स्वच्छद भाषा का प्रवाह देखते ही बनता है।

विरह की दस काम दशाओं का चित्रण

साहित्य-दर्पणकार ने विरह की दस काम दशाएँ मानी हैं। यथा—

अभिलाषाश्चिन्ता स्मृति गुण कथनोद्वेग सम्प्रलापाश्च।
उन्मादोऽथ व्याधि जडिता मृतिरिति दशाच काम दशा।।[3]

इन प्रेमाख्यानो मे उपर्युक्त काम की सब दशाओ का सम्यक् चित्रण हुआ है। यहाँ इनके कुछ उद्धरण प्रस्तुत किये जा रहे हैं —

अभिलाषा :

माधव जिहा पगला भरि, तिहा पड्यो मुझ राख।
पवन बसई तिणि बीजणि, शब्द सारजे लाख।।[4]

नायिका की हार्दिक अभिलाषा है कि उसके शरीर की भस्मी उसी मार्ग मे गिरे जहाँ उसके प्रियतम के पाव पडेगे। इसी प्रकार 'पद्मावत' की नागमती भी यही कामना व्यक्त करती है।[5] नायिका की 'अभिलाष' मनोदशा का कितना सूक्ष्म, और सवेदनात्मक चित्रण है यह? इसी प्रकार अपने प्रियतम के विरह मे व्याकुल सोरठ की अभिलाषा का वेदना-जनक चित्रण लीजिए —

---

१. कुशललाभ कृत कामकन्दला चउपई (ह लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

२ ढोला मारू रा दूहा (ना. प्र. सभा, काशी) दूहा सख्या १५८, पृ स ३५।

३ साहित्य दर्पण, ३/२१४।

४. गणपति कृत माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध (गायकवाड, ओरियन्टल सीरीज) पृ सं. १८८।

५. देखिये अध्याय चार की पाद-टिप्पणी, क्रमाक १, पृ स. २७३।

बीजा म्हाकइ आँगणइ, नित आवउ नित जाइ ।
घट की वेदन वालहा, कहउ तउ कोई न जाइ ॥[1]

एक अन्य उदाहरण कुशललाभ कृत माधवानल कामकन्दला चउपई से उद्धृत किया जाता है । यथा—

जिम मन परसई चिहु दिसा, तिमइ कर पसरति ।
दूर थका ही सज्जणा, कठा ग्रहण करति ॥[2]

अपने से बहुत दूर बसे प्रियतम का आलिंगन करने के लिए नायिका मन की व्यापक गति के समान ही अपने हाथो की शक्ति चाहती है । किन्तु इससे भी अधिक नायिका की अभिलाष मनोदशा का मार्मिक वर्णन निम्नलिखित रूप मे व्यक्त हुआ है, जहाँ वह प्रियतम का सामीप्य प्राप्त करने के लिए उसे अपनी पलको पर पाव रखकर आने की कामना व्यक्त करती है । यथा—

नैनन की पाती करुँ, असुवन को छिरकाव ।
स्याम स्नेही आवियौ, दे पलका पर पाव ॥[3]

चिन्ता :

नायिका की मानसिक दशा 'चिन्ता' का रम्य उदाहरण पृथ्वीराज राठौड कृत 'वेलि क्रिस्न रुक्मणि री' मे भी मिलता है । रुक्मणि को उस समय चिन्ता होती है जब शिशुपाल बारात लेकर आता है, किन्तु उसके आराध्य देव श्रीकृष्ण आते नही दिखलाई पडते हैं । 'चिन्तातुर चितिइम चितवती' से यही भाव व्यक्त होता है ।[4] नायिका के चिंताजनित मुद्रित नेत्रो का एक सूक्ष्म और चित्रात्मक चित्रण निम्नलिखित पक्तियो मे व्यक्त हुआ है —

इम चिता वृतात सुनी, नयन निद्रा घुली रेह ।
मुद्रीत हुआ नेणा कि, जाणी पकज कली रेह ॥[5]

स्मृति :

प्रेमी को प्रिय-पात्र से सम्बन्धित हर वस्तु अच्छी लगती है क्योकि उनसे

---

१. सोरठ रा दूहा (रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, बीकानेर शाखा) गुटका न ७२, पृ स. २२ ।

२. कुशललाभ कृत माधवानल कामकन्दला चउपई (ह लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर ।

३. बडा रुक्मणि मगल, (श्री विङ्कतेश्वर प्रेस, बम्बई, स १९९६) पृ. स १२० ।

४. क्रिसन रुकमणी री वेलि, स० श्री नरोत्तम दास स्वामी, पृ. स ३६ ।

५. विनयलाभ कृत बछराज चउपई (ह लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर ।

उसकी आत्मीयता स्थापित हो जाती है। विरहणी मालवणी को भी अपने प्रियतम की हर वस्तु देख के उसकी स्मृति निरन्तर वनी रहती है। यथा—

सज्जण ज्यूँ ज्यूँ समरइ, देख्या आहि ठाँण।
झुरि झुरि नइ पजर हुई, समर समर सहिनाण ॥३८२॥[1]

गुण-कथन :

विरहणी नायिका द्वारा अपने प्रियतम के गुण-कथन का एक सरस उदाहरण वेलि क्रिस्न रुक्मणि से उद्धृत किया जाता है। ब्राह्मण के साथ भेजे जाने वाले अपने प्रेम-पत्र मे रुक्मणि श्रीकृष्ण के अनेक गुणो का वर्णन करती है। यथा—

हरि हुए वराह हुए हरिणाकुस,
हूँ ऊधरी पताल हूँ।
कहउ तई करुण मैं केसव,
सीख दीध किणि तुम्ह सू ॥६१॥[2]

उद्वेग

विरहणी नायिका के मानसिक उद्वेग का मनोवैज्ञानिक चित्रण निम्नलिखित दोहे मे व्यक्त हुआ है। मालवती अपने प्रियतम को ढाढी के साथ प्रेम पत्र भेजना चाहती है किन्तु विरह जनित मानसिक उद्वेग के कारण उसकी विचित्र दशा हो जाती है। यथा—

भरइ पलट्टइ, भी भरइ, भी भरि भी पलटेहि।
ढाढी हाथ से सदेशडा, धण विलवती देहि ॥[3]

प्रलाप :

विरह जनित मानसिक दशा प्रलाप का चित्रण निम्नलिखित पक्तियो मे मिलता है। यथा—

प्राण पियारी जउगइ रे काई, हउ जाअउ पापी प्राण रे।
काम नही मुझ प्राण सु रे, काई माइ वडइ वाण रे।
हीयडउ कापइ विरह लउ रे, काई जिम करवतनी धार रे।
ते दुख किमहु सहि सकुरे, काइ गई दुख मेटण हार रे।[4]

---

१. ढोला मारू रा दूहा (ना, प्र. सभा, काशी) पृ स. ८८।
२ क्रिस्न रुकमणी री वेलि, स. श्री नरोत्तमदास स्वामी, पृ.स ३२।
३. ढोला मारू रा दूहा (ना प्र. सभा, काशी) पृ स. ४०।
४. कलावती चौपई (ह लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

उन्माद :

अपनी प्रियतमा के विरह मे दग्ध माधव की उन्माद अवस्था का चित्रण निम्नलिखित छद मे व्यक्त हुआ है—

कामकन्दला कही कही, ऊठि आलिगन देय ।
सबल भुजा भीडी करी, पुढई पच्छेर लेय ॥[1]

उज्जैन नगर के शिवालय मे कामकन्दला के विरह मे तसप्त माधव कल्पना मे अपनी प्रिया को देखता है और उन्मादित होकर आलिगन करने के लिए अपनी भुजाओ से स्वय के वक्ष को ही कस रहा है। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से उन्मादावस्था मे भ्रम-दृश्य (Hallucation) का यह एक अच्छा उदाहरण है।

व्याधि :

विरह जनित व्याधि के निम्नलिखित उदाहरण द्रष्टव्य है। बेचारा वैद्य भी इस व्याधि को समझने मे असमर्थ है। यथा —

राजा वेद बुलाय कै, कुँवरि देखाई बाह।
वैदा वेदन जान ही करक कलजा माहि ॥[2]

विरह-जनित वेदना का तीव्र रूप निम्नलिखित पक्तियो में व्यक्त हुआ है—

नाखे नीसासा घणा, कपे थर थर काय।
वाली भवी रहो व्यापता, लागी तन मे लाय ॥
आवे घणी उबातिया, मसले कर दोय मेल।
काल्जडो इम कलमेल, जाणे न पीयो तेल ॥
करे करडका काय ने, प्रगटे घणो प्रसेव।
सीथल अंग सगलो हुउ, दिल मे समरे देव ॥[3]

जड़ता

विरह-जनित जडता का मार्मिक-चित्रण निम्नलिखित रूप मे व्यक्त हुआ है। यथा—

---

१. गणपति कृत माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध (गायकवाड, ओरियन्टल सीरीज) पृ. स, ३२५।

२. नागजी नागवती रो बात (ह. लि.) रा प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रंथाक ११५८५।

३. विनयलाभ कृत विद्याविलास (ह. लि.) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रथाक १८५०।

ना गावे ना मुखि हँसे, ना कछु करे विलास।
रजनी परिमुंई साथ रै, लम्बे लइ उसास॥[1]

मरण :

इन प्रेमाख्यानो मे वियोग जनित असह्य-वेदना को सहन नही कर पाने के कारण नायक-नायिका की एक दूसरे के वियोग मे मृत्यु हो जाने के उदाहरण भी मिलते हैं। 'जलाल गाहणी री वात' तथा गणपति कृत 'माधवानल कामकन्दला प्रवध' मे उल्लेख है कि नायक-नायिका एक दूसरे के मरण के समाचार सुनकर मर जाते हैं और फिर दैवी-कृपा से पुनर्जीवित होते है।

वीर-रस .

जैसा कि इससे पूर्व उल्लेख किया जा चुका है, इन प्रेमाख्यानो मे रसराज-शृगार के अतिरिक्त अन्य रसो का भी चित्रण मिलता है। शृगार-रस के वाद सवसे अधिक चित्रण वीर-रस का हुआ है, क्योकि नायक को या तो विवाह के उपरान्त लौटते समय या विवाह के लिए ही युद्ध करना पडता है। इन प्रेमाख्यानो मे नायक द्वारा वीरता-प्रदर्शन का एक मुख्य लक्ष्य यह भी है कि प्रेमाख्यानकार इसके द्वारा नायक की तेजस्विता, उसका शौर्य और नायिका के रक्षण की सामर्थ्य दिखलाकर नायिका का प्रेम उसके प्रति और भी प्रगाढ कर देते थे। इसलिए इन प्रेमाख्यानो मे 'वीर-रस का वर्णन', शृगार रस की पुष्टि मे वाधक न होकर साधक होता है, क्योकि वीर और शृगार रस के आलम्वन भिन्न-भिन्न होने से रस-विरोध का प्रश्न खडा नही होता।

वीर-रस का स्थायी भाव उत्साह होता है। इसके आश्रय उत्तम प्रकृति के व्यक्ति होते है। इसका आलम्वन विभाव विजेतव्य शत्रु आदि होते हैं और उन शत्रुओ की चेष्टाये इसके उद्दीपन विभाव होते है। युद्धादि की सामग्री तथा अन्यान्य साधनो के अन्वेषण इसके अनुभाव होते है। धृति, मति, गर्व, स्मृति, तर्क आदि इसके व्यभिचारी भाव माने गये है।

इन प्रेमाख्यानो मे वीर-रस के स्थायी भाव उत्साह नायक की वीरता, आतक, निर्भीकता, साहस तथा आत्म बलिदान के चित्रण मे हुआ है किन्तु इन कवियो की काव्य-प्रतिभा विशेषरूपेण युद्ध-वर्णनो में ही खिली है। इन युद्ध-वर्णनो मे केवल बाहरी सैन्य-वैभव, राजसी ठाठ-बाठ, हाथियो की चिंघाड, घोडो की हिनहिनाहट, शस्त्रो की झकार और युद्धो की भीषणता का ऊपरी वर्णन ही नही है,

---

१. मदन शतक (ह. लि,) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, बीकानेर शाखा, ग्रथाक ८६ (६)।

बल्कि युद्धस्थल में योद्धा के युद्ध-समय की मनोदशा का चित्रण तथा मानसिक-संघर्ष के भी सुन्दर चित्र मिलते है। भीम कृत सदवत्स वीर प्रबन्ध'[1] से युद्ध का एक सजीव चित्र उद्धृत किया जाता है—

ढम ढम विसमा वाजइ ढोल, उर कमकमइ तिकाया निटोल।
झब्ब झब्ब झबकइ मालोह, धसमसत धसमसिया जोह।
घूसण-तणा कसण कस कसइ, गाढइ गुणि सीगणि त्रम त्रसइ।
सावलोह सिर तोमर तीर, माले सिद भेदीइ शरीर।
जे मच्छरि मुहि आवी चडइ, ते पायक पग आगलि पडइ॥

कवि की सूक्ष्म-पर्यवेक्षण शक्ति के साथ ओजगुण के अनुरूप शब्द-योजना दृष्टव्य है। शब्द की ध्वनि से युद्ध की प्रतीति होने लगती है।

सेना का आमने सामने होकर भिडना, सिन्धु राग का बजना, युद्ध की धूलि से आसमान मे सूर्य का छिप जाना तथा योद्धाओ का उत्साह व रणकौशल, 'मानतु ग मानवती रास'[2] मे निम्नलिखित शब्द-चित्र के माध्यम से व्यक्त हुआ है—

सेन वेहु उलटी आमुही सामुही, गुणी अणै राग सिंधु बजाया।
रच चढी अ बरे, अश्व पडताल थी तरण ना किरण नै तैण छाया।
बडा योध जूटा धरा मीहि छूटै पटा, लटपटा लालशेर लपेटा।
अटपटा झटपटा झपट करता भटा, खरपटा तेहुवा मेट मेटा।
धम धमे धिगति हा कायर कमकमैं, चम चमै घाव वही शुक्र धारा।

युद्धजनित त्वरा का दिग्दर्शन निम्नलिखित युद्ध वर्णन मे देखिए :—

इण भाति साबला री धमाधम वागी।
जाणै दोनु ही तरफ आग सी लागी।
कहे कह रजपूत अब साण साजै छै।
तरवारीयाँ रा कडाका माथा रा दडाका वाजै छै।
नट री सी तैहरी रजपू तव वट री चोट खेले छै।
फूल धारा रा वाट चाचका पर झेले छै।[3]

वीरो के मुद्रा-चित्रण मे इन कवियो ने बडी कुशलता का परिचय दिया है। वीर की रोद्र पूर्ण मुद्रा, उसकी भयानक शक्ति और तलवार की त्वरा का सूक्ष्म-

---

१. भीम कृत सदयवत्स वीर प्रबन्ध (सार्दूल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ. स ८८।

२ मानतु ग मानवती रास (ह लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

३. पना वीरमदे री वात (ह. लि.) दादावाडी अजमेर, पृ. स ५२।

निरीक्षण युक्त चित्रण निम्नलिखित पक्तियो मे व्यक्त हुआ है। कवि ने वीरता का एक साकार दृश्य चित्रित कर दिया है। यथा—

चलतै मग नाग सेला चढियो, करि क्रोध खड्ग ले घाव कीयो।
सिल नाग समेत कटी सबली, अडता धर से रज सी जली ॥१६३॥[1]

वीरो की शत्रु को 'ललकार' का उद्धरण लीजिये .—

भुजा बले आलिम सु एम, बोलै बादल गोरो जेम।
दिली सु चढि आयो साहि हिवै भिडतो मार्ग मति जाय।
मुडियो तो हिव जासी माम, माटी छै तो करि सग्राम ॥[2]

'पद्मिनी चरित्र चौपई' प्रेमाख्यान मे वीर-भावना तथा वीरो की मनो-दशाओ का सुन्दर चित्रण हुआ है।[3] युद्ध-वर्णन के अन्य उद्धरण हम प्रकृति-चित्रण एव वस्तु-वर्णन वाले अध्याय मे भी दे चुके है जिनमे कवि की सूक्ष्म-निरीक्षण शक्ति के साथ, ओज गुण अनुरूप विधान से युद्धजनित त्वरा आदि के साकार दृश्य अकित हो गये है।[4]

रौद्र-रस

इसका स्थायी भाव क्रोध है। इसमे आलम्बन रूप से शत्रु का वर्णन किया जाता है और शत्रु की चेष्टाये उद्दीपन विभाव का काम करती है। इसकी उद्दीप्ति भयकर काटमार, शरीर-विदारण आदि से होती है। भ्रूभग, बाहु-स्फोटन, गर्जन-तर्जन, क्रूर-दृष्टि आदि इसके अनुभाव होते हैं तथा मोह अमर्ष आदि इसके व्यभि-चारी भाव होते हैं।

'महादेव पार्वती री वेलि' से रौद्र-रस का एक उद्धरण प्रस्तुत किया जाता है। जब सती अपमानित होकर दक्ष के यज्ञ मे कूदकर भस्म हो जाती है, तब इस समाचार को सुनकर महादेव राजा दक्ष पर क्रोधित हो उठते हैं। महादेव का रौद्र-रूप निम्नलिखित पक्तियो मे प्रकट हुआ है।

रउदल कियउ तिणवार रूप रुद्र,
घणइ रुती जइ नेत्र धियाग।
कोट अनइ ब्रहमड कापिया,
जडाहुती काढीउ ज्याग ॥२०१॥

---

१ नाथ कवि कृत देव चरित्र (ह. लि.)।

२ लब्धोदय कृत पद्मिनी चरित्र चौपई (सादूल राजस्थानी, रिसर्च इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ. स ९५।

३. वही, पृ. स. ९१ से १०० तक।

४. देखिये अध्याय छह मे युद्ध वर्णन।

चढिया जाइ पन्नग कोप चढि,
रोस सरोस थरकिया रोम।
पावक धूवइ परवइ पर जलिउ,
विकटी जटा विलागी वोम ॥२०२॥
धन नख तणइ धनकार करइ धन,
विढवा भुवनी मिजइ जिवार।
इक वीसे ब्रह्मड अउइ वइ,
सहइन वासग मार सहार ॥२०३॥
सूरातन जाही घणइ सूरातन,
ईसर तणा वाधिया अग।
प्रलय काल हुसी ताइ प्रिथमी,
द्रोही तणा थरकिया द्रग ॥२०४॥[१]

रौद्र-रस का एक अन्य उदाहरण 'पना वीरमदे री बात' से उद्धृत किया जाता है। पना का हरण कर लौटते समय मार्ग मे भाटी रतनसिह के आक्रमण करने की सूचना सुनकर वीरमदे का रौद्र-रूप द्रष्टव्य है --

'आवत सूणता ई कवर वीरमदे नै इसरौ रौस चडयौ। जाण दारू रा गज मैं आगिरौ दौग पडयौ। माहेस रा तीसरा नेतर रा री पलका उघडी किना प्रलय कालै की झाल आकास जाय अडी। खिजाया नाग ज्यू दकालीया, वाघ ज्यू रीसियौ।[२]

वीभत्स-रस

इन प्रेमाख्यानो मे वीभत्स-रस का चित्रण भी यत्र-तत्र मिलता है, युद्ध के वर्णन मे तो मिलता ही है किन्तु सदयवत्स वीर-प्रवन्ध आदि मे वर्णित श्मशान मे व्यतरियो द्वारा मुर्दे का मास नोच नोचकर खाना आदि अनेक प्रसगो मे भी वीभत्स आदि अनेक प्रसगो मे भी वीभत्स-रस का चित्रण हुआ है। युद्ध मे योगनियो का रुधिर पीना, डायनो का मास खाकर डकारना आदि का स्वाभाविक चित्रण लीजिए—

जासक पीवे योगणी, भरि भरि पात्र रगत।
डड कारा डाकणि करै जिण दीठइ डरै जगत ॥[३]

---

१ महादेव पार्वती री वेलि (सा रा. रि इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ. स. ६७।
२. पना वीरमदे री वारता (ह. लि) दादावाडी, अजमेर। पृ. स ५०।
३. पद्मिनी चरित्र चौपई (सा. रा. रि इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ. स. ६७।

इसी प्रकार युद्ध के प्रसग मे 'महादेव पारवती री वेलि' मे भी वीभत्स-रस का वर्णन हुआ है । यथा—

आगइ पत्र जोगणिया तणा पूरिया,
ग्रीझण गूद गिलइ अउगाढ ।
वीजा गिरवर किया वहादर,
चणिया सुरज भडजर चाढ ॥२२१॥
वेणी द्र ड वालियउ वला के साम्हउ,
साम्हो अणी लियउ दिख माहि ।
तिल तिल तिल करे पुरजा तन,
होमइ चउण हीज हुतासण माहि ॥२२३॥[1]

श्मशान भूमि मे व्यतरी द्वारा सूली पर लटके शव के मास खाने के प्रसग मे वीभत्स-रस का चित्रण निम्नलिखित रूप से हुआ है । यथा—

भोजन दियत मिसी डाकणी, खाइ मास मच्छरि चडीय ।
उत्तम तिवार अभिवावरी, करिय चूडि त्रुट्टवि पडी ॥[2]

इस प्रकार के वीभत्स-रस के उदाहरण विनयलाभ कृत 'वछराज चौपई' एव 'मलय सुन्दरी कथा' मे भी मिलते है ।

भयानक-रस

इस रस का स्थायी भाव भय होता है, इसके आलम्बन भयोत्पादक पदार्थ हैं और पदार्थों की भीषण चेष्टाये उद्दीपन विभाव होती है । कम्प, गद्गद् आदि इसके अनुभाव हैं और आवेग, त्रास, दीनता, शका आदि व्यभिचारी भाव होते हैं । 'सदयवत्स वीर-प्रबन्ध' मे श्मशान मे भूतो का खीर पकाना तथा उनका सात पुरुषो की खिचडी के साथ खाने के लिए वाध रखना, मृगावती रास मे राजा और सेना के देखते-देखते भारुड-पक्षी द्वारा रानी मृगावती को अपने पजो मे पकड कर उडा ले जाना, मलय सुन्दरी' मे मलया को अन्धकूप मे गिराना तथा वहा उसे अजगर का निगल जाना, राक्षस द्वारा नगरी का उजाडना, हिंसक पशुओ से युक्त भयकर वन आदि अनेक प्रसगो मे भयानक रस का वर्णन हुआ है । यहा कुछ उद्धरण दिये जाते हैं—

बीजइ पुहरि प्रधान-पुत्र, बलवत बईट्ठउ ।
ता उल्लाणउ अगनि, तेज दुरिट्ठिय दिट्ठउ ।

---

१. महादेव पारवती री वेलि (सा. रा. रि. इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ स ७४, ७५ ।
२. सदयवत्स वीर प्रबन्ध (सा. रा. रि इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) प स ६५ ।

पायक कज्जि पहुत, प्रेत पर वरियउ पल्यलि ।
विचि खीचड कलकलइ, वद्ध, बावीस कुमर तलि ।
मुझ स्वामि होमसइ पचनउ, एक्क गहीय बीजा गहिसि ।
घसि लिद्ध धगतउ लक्कडू, तीणि ऊडी ग्या सइ सहसउ ।।६७८।।[1]

रात्रि के समय श्मशान भूमि मे भूत खिचडी पका रहे है । अग्नि की ज्वाला उठ रही है और अनेक राजकुमार वहाँ अग्नि मे पकाने के लिए बधे हुए हैं । कितना भयानक रोगटे खडे करने वाला दृश्य है यह ?

वन की भयानकता का चित्रण गणपति कृत माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध से लीजिए—

किहि किहि बाघ बरु घणा, रोझ रीझडा जाय ।
किहि किहि रमता मोगला, केडि केसरि धाय ।
किहि किहि काली नागना, राति उमटइ राफ ।
बनस्पति प्रज्वलि पडइ, तेहना मुहनी बाफ ।[2]

अद्भुत-रस

इसका स्थायी भाव विस्मय होता है । इसमे अलौकिक वस्तु आलम्बन होती है और उस वस्तु के गुणो का वर्णन उद्दीपन विभाव होता है । स्वेद, स्यम्भ, रोमाच, गद्गद् स्वर आदि इसके अनुभाव होते हैं और वितर्क, आवेग, सवेग, हर्ष आदि व्यभिचारी भाव होते हैं ।

इन प्रेमाख्यानो मे विस्मय उत्पन्न करने वाले अर्थात् अद्भुत-रस के तो अनेक स्थल पाये जाते हैं । सिद्धो और देवी-देवताओ से वरदान रूप प्राप्त सिद्धियाँ और उनसे साक्षात्कार, मत्र-तत्र की विलक्षण करामातें. अलौकिक शक्तियो के अद्भुत चमत्कार यथा वैताल का हाथ पसार कर राजमहल से जुआ खेलने का सामान उठा लेना । जादूई विद्याओ से रूप परिवर्तन, यौन परिवर्तन तथा आकाश मार्ग से उडना आदि अनेक अद्भुत घटनाओ का सयोजन इन प्रेमाख्यानो मे प्राप्त होता है । दामो कृत 'लखमसेन पद्मावती कथा' मे तो अद्भुत-रस के अनेक उदाहरण उपलब्ध होते है । यथा—जोगी की अद्भुत करामाते, उसका आकाश मे उडना, उसके रक्त की बून्दो से अनेक वीर उत्पन्न होना । बालक के चार टुकडे

---

१. सदयवत्स वीर-प्रबन्ध (सा रा. रि इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ. सं ९५, ९६ ।

२ गणपति कृत माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध (गायकवाड सीरिज) पृ. सं. २५७, २५८ ।

करने पर धनुष-बाण, मणि, धोती और सुन्दरी नारी का प्राप्त होना आदि। अद्भुत-रस से सम्बन्धित कुछ उद्धरण यहाँ प्रस्तुत किये जाते है।

श्री 'उत्तम चरित्र चौपई' का नायक उत्तम कुमार प्रवहण मे पानी समाप्त हो जाने पर, पानी के लिए जगल मे एक कुऍ पर जाता है और कुऍ मे उतरता है तो वहाँ उसे अद्भुत दृश्य दिखलाई पडता है। उम कुऍ मे उसे स्वर्ण की जाली लगी हुई मिलती है तथा भ्रमरकेतु राक्षस का महल मिलता है। यथा—

रज्जु विलवी नै कुमर, पइ सै कूप मझार।
तिण माहे इक इण परै, निरखै देव प्रकार ॥
जाली कचन माहि सुभ, जल अपरि तिहा कीध।
मनू मा, अचरिज अपनौ, आडी किण ए दीध ॥
सुणो सुणो रे लोक सहु, विस्मय वाली वात।
जाली सोवन नी अछै, दीठा उल्लसै गात ॥
तिण नीचै जल देखिनै, वड वखती वड वीर।
उरी परही करि जालिका मा जै धर मन धीर ॥[1]

सिद्धराज के द्वारा मत्रित आसन पर बैठकर राजा रतनसेन का आकाश मार्ग से सिंहल द्वीप मे पहुचने का चमत्मार युक्त-वर्णन जटमल कृत 'गोरा वादल चौपई' मे लीजिए—

मृग त्वचा बिछाई सिद्ध तव, पढो मत्र तव बैठ करि।
उड गये सिंघल द्वीप को, रतन सेन जोगेन्द्र वरि ॥२१४॥[2]

अद्भुत-रस का अन्य उदाहरण सदयवत्स वीर-प्रवन्ध से भी उद्धृत किया जा रहा है। यथा—

चउ थइ चतुर चकोर, वर वस धर जग्गइ।
ता अट्ठवि मढ्ढ मुरेडिउ, जूअ जीअ उद्ठवि मग्गइ ॥
सुद्द भणइः "तन सार, पट्ट कवडी न कडतह"।
तिणि तत खिणि आण्यउ पाट, जिणि राय रमतस ॥
सिर-कमल हराविउ हेलि रीस, प्राण प्रेत-गृह टालिउ।
त्रिहु मित्र अजगिगइ, एकलइ, निह ति पिंड प्रजालिउ ॥६८०॥[3]

---

१. श्री विनयचन्द्र कृति कुसुमाजलि से उत्तमकुमार चरित्र चौपइ (सादूल रा रिसर्च इन्स्टीट्यूट) पृ स. १३० ।

२. पद्मिनी चरित्र चौपई (सादूल–रा. रिसर्च इन्स्टीट्यूट) पृ स १८ ।

३. कवि भीम कृत सदयवत्स वीर-प्रबन्ध (सादूल रा. रिसर्च इन्स्टीट्यूट) पृ स. ६६ ।

यहा बेताल का जूआ खेलने के लिए हाथ पसार कर राजमहल से सामग्री उठाकर ले लेने का विस्मयकारिक वर्णन अद्भुत-रस की सृष्टि करता है।

करुण-रस

करुण-रस का स्थायीभाव 'शोक' है भूमि-पतन, क्रदन, उच्छ्वास, प्रलाप आदि इसके अनुभाव हैं तथा निर्वेद, मोह, स्मृति व्याधि आदि व्यभिचारी भाव होते हैं —

करुण-रस के प्रसग भी इन प्रेमाख्यानो मे यत्र-तत्र मिलते है। 'हसाउली' मे राजकुमार हस की जब जगल मे साँप के काट खाने से मृत्यु हो जाती है तो उसका बडा भाई बछराज करुण-विलाप करता है। इस प्रसग मे करुण-रस का मार्मिक चित्रण हुआ है। जगल मे, मारवणी की पीवणा साँप के डसने से मृत्यु हो जाने पर ढोला का करुण-विलाप, रानी मलयसुन्दरी की जादूई मृत्यु पर महाधवल का करुण'विलाप, उत्तम-कुमार का समुद्र मे गिरा देने पर मदालसा का करुण क्रदन आदि ऐसे अनेक प्रसग है, जिनमे करुण-रस का चित्रण मिलता है। नागजी की मृत्यु पर नागवन्ती की मार्मिक करुणोक्तियो के उद्धरण लीजिए, जिन्हे पढकर हृदय पसीज उठता है। यथा—

सज्जन दुरजन हुय जले, सयण सीख करेह।
धण विलपती यू कहै, आवा साख भरेह।
नागडा निरखू देस एरड थाणो थापियो।
हस गया विदेस, बुगला ही सू बोलणो॥
नागडा सूतो खू टी ताण, बतलाया बोलै नही।
कदेक पडसी काम, नोहरा करस्यो नागजी॥[1]

करुण-रस का एक उद्धरण श्री उत्तमकुमार चरित्र चौपई से उद्धृत किया जाता है। जब उत्तम कुमार को सेठ समुद्र मे गिरा देता है तो उसके वियोग मे मदालसा के करुण-क्रदन को सुनकर वन के पशु-पक्षियो का हृदय पसीज उठता है। यथा—

वारवार मदालसा, कहै निस्वासो नाखि।
किण आधारै जीवियै, छेदी मोहरी पाँख॥
सामलि सजनी प्रिउनै पाछलै रे, करिस्यू झपापात।
वारिधि पिण जाणैस्ये प्रीतिडीरे, जगि रहसी अखियात॥
इम सुणि ते आकुल थई रे, इण विध जपै रोइ।
काँइ व ऊगै वीरा चाँदला रे, एह अधोमुख जोइ॥

---

१. नागजी नागवती री वात (ह. लि) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रंथाक ११५८५।

कमल विलासी क्यो विकस्यो नही रे, इण तो कर सकोचि ।
हीयडा आगलि देग्रीयुडा तणोरे, माडयो सबलो सोच ॥
वलि वनवासी पसुवा हिरणलारे, जीवो मन धरि नेह ।
विरह वियोगइ नयणा मीचिया रे, तिण कारण कहु एह ॥
इम कहती सहुनै रो वरा विचार रे, वलि भाखै उपदेश ।
होवण हार पदारथ नवि मिटैरे, पकरि मकरि अ देश ॥[1]

वात्सल्य-रस

पुत्र विषयक रति को वात्सल्य कहते हैं। वात्सल्य-रस के प्रसग भी इन प्रेमाख्यानो मे पाये जाते है। सदयवत्स वीर-प्रबन्ध मे उल्लेख है कि जब राजकुमार सदयवत्स को देश निकाला दिया जाता है, तो उसकी माता का वात्सल्यपूर्ण हृदय उमड पडता है। वह अपने पुत्र-वियोग के असह्य दु ख को सहन नही कर पाती। यथा—

चित्ति चटकउ नीसरिउ, गहवर गलइ न माइ ।
ऊसासे नीसासडे, जाणे जीवी जाइ ॥१३५॥
वाला के रे वीजणे, वारिणी छटइ वाउ ।
मइ हत्थइ सूदउ करइ, जणनी जीवे वाउ ॥१३६॥
महूरति एकनि माडली मनि-मूरछा जिभग्ग ।
जावा दिवणी ! भलू '[बेटउ बोलण लग्ग] ॥१३७॥[2]

इस भाति से उत्तमकुमार चरित्र चौपई मे बहुत वर्षों के बाद पुत्र के लौटने पर वत्सल भाव से आपूर्ण राजा की मानसिक दशा का चित्रण लीलिए :—

उत्तम नृप मिलीयो जई, बाप भणी धरि नेह ।
मन विकस्यौ, तन उल्लस्यो, रोमाचित थयौ देह ॥१॥
मकरध्वज भूपाल पणि, सुत ऊपरि करि मोह ।
अ गइ आलिंगन दीयौ सखदी वधारी सोह ॥२॥[3]

हास्य-रस

इसका स्थायी भाव 'हास' है किसी वस्तु या व्यक्ति मे अप्रत्याशित विसगति

---

१. श्री विनयचन्द्र कृति कुसुमाजलि (सादूल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट) उत्तमकुमार चौपइ, पृ स १५४, १५५ ।
२. सदयवत्स वीर-प्रबन्ध (श्री सादूल रा. रिसर्च इन्स्टीट्यूट) पृ स २० ।
३ विनयचन्द्र कृति कुसुमाजलि (सादूला रा रिसर्च इन्स्टीट्यूट) मे सकलित श्री उत्तमकुमार चरित्र चौपई, पृ सं २०१ ।

विकृति अथवा हास्यास्पद परिस्थिति यथा, पेट्ट पण्डित, विचित्र वेश, भूषा या स्वर, कूबडा, समाचार पत्रो मे निकलने वाले कार्टून आदि इसके आलम्बन हैं। आखो का खिलना, हसना, रोमाच, कम्प, अश्रु आदि इसके अनुभाव है तथा चपलता, हर्ष, आलस्य, निद्रा, श्रम, ग्लानि, मूर्छा आदि सचारी है। उक्त हास्य-रस के प्रसंग राजस्थानी के इन प्रेमाख्यानो मे अनेक स्थलो पर आये हैं। उदाहरणार्थ, 'महादेव पारवती री वेलि' मे वर्णित शरीर मे भभूत लगाये, मृगछाला और मुण्डमाला पहिने बैल पर सवार दूल्हे के रूप मे शिव तथा इस प्रकार के विचित्र दूल्हे को देखकर सती की सखियो का ताली बजा-बजा कर हसने का प्रसग हास्य-रस की सृष्टि करता है। यथा—

मृग त्वचा पहिरी-पहिरी रु डमाला,
भोली चक्रवति बणियो भेख।
चढियो वृख भव बभूति चढावे,
वर तोरण वाँदिया विसेख ॥१२४॥[1]

× × × ×

देखइ' वीद तालियाँ देदे,
साला हेली हसइ सहि ॥१२७॥[2]

इसी प्रकार हास्य-रस का अन्य उदारहण 'वीरमदे सोनगरा री बात' मे भी मिलता है। अशक्त और वृद्ध नामक लाखणसी की बरात लौटते समय मार्ग मे उनसे नव विवाहिता वधू सौनगरा को युवक नीवा द्वारा छीन लेने पर कई मील की दूरी से नीबा को मारने वाला भाला वनाने के लिए लुहारो को आज्ञा देना, (यथा— इसो भालो घडो तिनसु एथ बैठा निबा ने मारा।) तत्पश्चात् उनके मन मे यह आशका उत्पन्न कर दिये जाने पर यदि नीवा ने भाला छीन कर उन्ही पर वार कर दिया तो क्या उपाय होगा ? इस पर लोहारो के द्वारा भाला नही बनाया जाने पर भी उसे तुडवाने की आज्ञा देना और पारिश्रमिकभी देना आदि। नायक की हास्यास्पद चेष्टाये तथा "रावलजी सोनिगरी गमाय—बैठा", जैसे—हसाने वाले कथन हास्य-रस के मनोरजक उदाहरण हैं।[3] इस प्रकार अन्य प्रेमाख्यानो मे भी हास्य के अनेक प्रसग मिलते है।

---

१ महादेव पार्वती री वेलि (सा रा रि. इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ. स. ४२।
२. वही, पृ. स. ४३।
३. वीरमदे सोनीगरा री बात (ह लि) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, गुटका क्रमाक ३५५५ मे पत्र सं. १६२ से १६८ तक।

शान्त-रस

शान्त रस के प्रसग जैन प्रेमाख्यानो मे विशेष रूप से पाये जाते हैं। मुनियो द्वारा धार्मिक उपदेश और नायिकाओ द्वारा दीक्षा ग्रहण करने के प्रसगो मे शान्त-रस का ही परिवार हुआ है। शान्त-रस का स्थायीभाव निर्वेद होता है। इसमे ससार की असारता का ज्ञान अथवा ईश्वरचिन्तन आलम्वन, तीर्थाटन तथा धार्मिक ग्रंथो का पठन-श्रवण आदि उद्दीपन, कातर होना, पुलक अश्रु आदि अनुभाव और मति, हर्ष, स्मृति, ग्लानि, दैन्य, जडता, धृति आदि सचारी होते हैं। जैन प्रेमाख्यानो मे ससार की क्षणभंगुरता तथा जीव की अनित्यता प्रदर्शित कर 'विरक्ति' या सासारिक वस्तुओ के प्रति 'निर्वेद' की भावना ही व्यक्त की गई है। किन्तु यह निर्वेद मीठी वस्तु का स्वाद चख-चख कर अघा जाने पर नमकीन वस्तु की चाह के अनुरूप ही लगता है क्योंकि जीवन धर्म, अर्थ, काम से पूर्ण उपभोग करने के पश्चात् शारीरिक अंग शिथिल हो जाने पर, वृद्धावस्था मे राजपाट अपने पुत्र को सम्हला कर राजाओ ने वैराग्य लिया है। शान्त-रस का उक्त चित्रण इन प्रेमाख्यानो मे वर्जित-रसराज शृंगार की पुष्टि मे किसी प्रकार का व्यवधान उपस्थित नही करता।

अलंकार-योजना

भाव की रमणीयता और उक्ति की रमणीयता अथवा अनुभूति के सौन्दर्य अभिव्यक्ति के सौन्दर्य मे सहज सम्बन्ध है। आनन्दवर्धन ने भी 'न तेषा बहिरगत्व रसाभिव्यक्तौ' कहकर अलंकार और अलंकार्य की अभिन्नता अथवा उक्ति और भाव रमणीयता का सहज सम्बन्ध सिद्ध किया है। किन्तु इतने पर भी हमारे आचार्यों ने अनुभूति और अभिव्यक्ति के पार्थक्य का लोप नही होने दिया। इसके विपरीत पश्चिम के नवीन सौन्दर्य शास्त्र के प्रवर्तक क्रोचे ने उक्ति को ही भाव-रमणीयता का आधार मानकर वस्तु और आकार की एकता का प्रतिपादन किया है। किन्तु डा० नगेन्द्र का कथन है कि यह सिद्धान्त चाहे पूर्ण रूप से सगत नही हो, पर इसमे सन्देह नही किया जा सकता कि वस्तु की समृद्धि बहुत कुछ आकार की समृद्धि पर आश्रित है। अनुभूति की उत्तेजना अथवा रमणीयता को अभिव्यक्त करने में अभिव्यजना के साधारण उपकरण समर्थ नही होते। उसके लिए कवि को चेतन अथवा अचेतन रूप में विशिष्ट उपकरणो का प्रयोग करना अनिवार्य हो जाता है। काव्य से भावोत्कर्ष को बढाने के लिए अथवा रमणीयता को अभिव्यक्त करने के इन विशिष्ट उपकरणो मे अलकार योजना का प्रमुख स्थान है।

राजस्थानी के इन प्रेमाख्यानो में वस्तु के रूप को गहराई के साथ हृदयगम कराने के लिए एव भावोत्कर्ष के लिए अलकारो का प्रयोग सहज एव स्वाभाविक रूप

से हुआ है। साथ ही अभिव्यक्ति मे रमणीयता और चमत्कार उत्पन्न करने के लिए सचेतन प्रयास भी किया गया है। इन प्रेमाख्यानो मे अप्रस्तुत विधान के अन्तर्गत साम्य-मूलक तथा सम्भावना मूलक अलकारो का अधिक सहारा लिया गया है। उपमा, रूपक और उत्प्रेक्षा का इन कवियो ने प्रचुर मात्रा मे प्रयोग किया है। रीतिकालीन प्रभावोपन्न रचनाओ मे वैषम्य मूलक तथा चमत्कार मूलक अलकार योजना का भी सचेतन प्रयास व्यक्त होता है। इस प्रकार के अलकारो मे विभावना, विरोधाभास, अतिशयोक्ति और श्लेष अलकारो का अधिक प्रयोग मिलता है। 'रतना हमीर री वारता' आदि प्रेमाख्यानो मे रीतिबद्ध-परिपाटी के अनुरूप नाना प्रकार के अलकारो को उद्धरण रूप मे भी प्रस्तुत किया गया है।

उपमा :

सादृश्य मूलक अप्रस्तुत का प्रयोग वस्तु के स्वरूप को स्पष्ट करने के लिए होता है। सस्कृत मे नायक-नायिका के प्रत्येक अग के लिए उपमानो की एक परम्परा सी निश्चित हो गई थी। रीतिकाल मे इसी रूढिबद्ध प्रणाली का प्रचलन रहा। राजस्थानी के इन प्रेमाख्यानो मे 'नखशिख-वर्णन' इस परम्परागत रूढिबद्ध परिपाटी का अनुसरण किया गया है, किन्तु सादृश्य एव साधर्म्य-मूलक उपमा अलकार के ऐसे सूक्ष्म और कोमल प्रयोग भी इन प्रेमाख्यानो मे सहज रूप से उपलब्ध होते हैं जो छवि के अत्यन्त रम्य-गोचर रूप को प्रकट करने में समर्थ हैं।

सादृश्य-मूलक उपमा :

माडियां सरोज मयग चइ माथइ,
हरणाखी चित लावन हरि।
अतिरंगेती विराजइ ऊपर,
पगथलियां मीमलइ परि ॥५६॥[1]

पार्वती के चरणो की उपमा पहले कमल से दी गई है, फिर कमल सदृश्य चरणो के पृथ्वी तल पर रखने पर शरीरयष्टि के भार से उत्पन्न लालिमा की उपमा वीर बहूटी से दी है। शरीर की कोमलता के साथ वर्ण की सादृश्यता कितने मनोरम रूप से उजागर हुई है? यद्यपि यहाँ कवि ने पुराने उपमानो का चयन किया है। इसी प्रकार उपमा अलकार के माध्यम से रूप के सूक्ष्म विधान इन प्रेमाख्यानो में प्रचुर-मात्रा मे मिलेंगे। यथा—

---

१. महादेव पार्वती री वेलि (सा रा रि. इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ स १४।

भरिया रग सुरग माद्रवड,
लु'बीया ताइ अवर लगस।
अहर डसण ओपिमा अनोपम,
रसण जुडीया तबोल रस ॥३४१॥[1]

यहाँ तावूल के रंग से रचे अधर, दशन और रसना की उपमा भाद्रपद मास के नाना प्रकार के रगो से युक्त बादल से दी है। रगो के मिश्रण का यह चमत्कार बिहारी के "जा तन की झाई परे, श्याम हरित द्युति होय" मे भी मिलता है, किन्तु उसमे कवि की सूक्ष्म सूझ के साथ केवल चमत्कार उत्पन्न करने का वैशिष्ट्य ही है, किन्तु वह रस-मग्नता और भाव-प्रवणता नही मिलती जो वेलि के उक्त कथन मे निहित है।

रूप की सूक्ष्म अनुभूति कराने वाले सादृश्य मूलक अलकार उपमा का एक अन्य उदाहरण और प्रस्तुत किया जा रहा है। यथा—

"ईणि भाँति तीजण्या बाग मे आई। जाणै हरी लता मे निसरती जाणै कनकलता सी दरसाई।"[2]

कंचन-वर्णी नायिका की शरीर-यष्टि की उपमा कनक-लता से दी गई है। उपमान और उपमेय मे यहाँ केवल वर्ण-साम्यजनित सादृश्यता ही नही मिलती, कनकलता की उपमा से नायिका के शरीर की सुकोमलता और स्निग्धता भी उजागर हो गई है। वेलिकार पृथ्वीराज ने भी रुक्मिणी के रूप-लावण्य को प्रकट करने के लिए इसी भाँति की उपमा का प्रयोग किया है। यथा—

रामा अवतार नाम ताइ रुषमणि, मान सरोवर मेरु गिरि।
बालकति किरि हस चौ बालक, कनक वेलि बिहुपान करि॥[3]

इसी प्रकार महाकवि कालीदास ने पार्वती के शरीर की कान्ति को अनुभव गम्य बनाने के लिए उसकी 'रत्न शलाका' से उपमा दी है तथा रीतिकालीन कवि रसलीन ने नायिका के शरीर-यष्टि की काति को प्रकट करने के लिए 'कनक छरी सी कामनी' कहा है। इन उपमाओ से वर्ण-साम्यता के कारण शरीर की सुकोमलता और स्निग्धता कहाँ प्रकट होती है? 'रत्न शलाका' और 'कनक-छरी' दोनो मे ही कठोरता है, सुकोमलता और स्निग्धता नही जो पृथ्वीराज द्वारा प्रदत्त उपमा 'कनक वेलि बिहु-पान करि' मे है।

---

१. महादेव पार्वती री वेलि, पृ. सं. १४।
२ पना वीरमदे री वारता (ह. लि.) दादावाडी, अजमर।
३. वेलि क्रिस्न रुक्मिणी री, सम्पादक—नरोत्तमदास स्वामी।

साधर्म्य-मूलक उपमा :

अ ग मलकै आरसी ।
सरल करल सारसी ॥[1]

यहाँ नायिका के अ गो की जगमगाहट मे दर्पण के जगमगाहट की सादृश्यता है, किन्तु 'सरल करल सारसी' मे रूप-साम्य न होकर स्वर-साम्य है, अत साधर्म्य-मूलक उपमा का उदाहरण माना जायेगा ।

सादृश्य और साधर्म्य-मूलक उपमा का एक अन्य उदाहरण 'पद्मिनी चरित्र चौपई' से उद्धृत किया जा रहा है । यथा—

काया सोवन तसु वर्णी रे, गोरा गाल रसाल रे ।
आरीसा कदर्प तरणा रे, चद सरीसो भाल रे ॥[2]

प्रभाव-साम्य-मूलक उपमा :

धरण करणयर री कब ज्यउ, मूकी तोइ सुरत्त ॥१३५॥[3]

विरहणी नायिका की उपमा सूखी हुई कनेर से दी गई है । यहाँ विरह-जनित ताप की अनुभूति कराने के लिए प्रस्तुत और अप्रस्तुत के बीच प्रभाव-साम्य का आश्रय लिया गया है ।

प्रभाव-साम्य मूलक उपमा के माध्यम मे घू घट मे छिपे रम्य-रूप-विधान का एक अन्य उदाहरण और प्रस्तुत किया जाता है । यथा—

"बादला मे बीजली की भलकी ज्य घू घट मैं टीकी को पलको पड छ ।[4]

नायिका के भाल पर लगी बिन्दिया का 'पलका' ऐसे पडता है जैसे बादल मे बिजली चमक उठी हो । यहाँ बिजली और बिंदिया मे किसी प्रकार सादृश्यता नही है । हाँ, दोनो की चमक मे गुण-साम्य अवश्य है, किन्तु यहाँ इससे अधिक प्रभाव-साम्य के आधार पर आँखो मे चकाचौध उत्पन्न करने वाले नायिका के रूप की तीक्ष्णता को प्रकट करना है । जिस प्रकार बादलो मे बिजली की चमक देखकर व्यक्ति चकाचौध हो जाता है, वैसे ही झीने घू घट मे नायिका के भाल पर चमकती बिंदियाँ को देखकर व्यक्ति चकाचौध हो उठता है । रूप को देखकर चकाचौंध होना प्रभाव-साम्य उपमा का उदाहरण हुआ ।

---

१. पना वीरमदे री वारता (ह. लि.) दादावाडी अजमेर ।
२. पद्मिनी चरित्र चौपई (सा. रा. रि. इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) ।
३. ढोला मारू रा दूहा (ना. प्र. सभा, काशी) पृ. स. ३० ।
४ पना वीरमदे री बात (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर ।

रूपक :

इसमे उपमेय मे उपमान का आरोप किया जाता है। प्रस्तुत मे अप्रस्तुत का यह आरोपण भी साम्य-मूलक ही होता है। 'ढोला मारू रा दूहा' मे से एक उदाहरण लीजिए :—

मारू-तन मडप रच्यउ, मिलण सुहावा कत ॥५३५॥[1]

यहाँ मारवणी के शरीर पर मण्डप का आरोप किया गया है, किन्तु शरीर और मण्डप मे आकार या रूप-साम्य तो है नही, किन्तु प्रभाव-वृद्धि के लिए मण्डप के रूप मे उसकी कल्पना की गई है।

निरग-रूपक :

"नाक जिको सुवैरी चच। वाह तो चपला री डाल सार, हाथ पग जिके कमल सु ही कमाल।"[2]

यहाँ सादृश्य तथा साधर्म्य के आधार पर नायिका की नाक मे तोते की चूच का, वाहो मे चम्पा की डाल का आरोप किया गया है। यह सब परम्परागत उपमान है। इनके प्रयोग मे भी कोई नवीनता नही मिलती।

सांग-रूपक :

जहाँ उपमेय पर उपमान का आरोप किया जाय और साथ ही उपमान के अगो का भी उपमेय के अगो पर आरोप किया जाय, वहाँ सागरूपक अलंकार होता है। उदाहरणार्थ—

छट्ठै प्रहरे दिवस के, हुईज जीमण वार।
मन चावल, तन लावसी, नेंणज घी की धार ॥५८७॥[3]

यहाँ उपमानो की आचलिकता दृष्टव्य है। इनके प्रयोग मे भी नवीनता झलकती है और आरोप का आधार सादृश्यता एव साधर्म्यता न होकर प्रभाव साम्यता है।

साग-रूपक के कुछ अन्य उद्धरण और प्रस्तुत किये जाते हैं :—

उर बर जोवन राजइ आप,
पूरण परिघल तेज प्रताप।

---

१. ढोला मारू रा दूहा (ना. प्र. सभा, काशी) पृ. स. १२८।
२. रतना हमीर री वारता (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।
३ ढोला मारू रा दूहा (ना. प्र. सभा, काशी) अजमेर, पृ स. १४२।

कुच दुंदुभि जोडि बाजति,
कचुकी दल-बादल छाजति ॥६८॥[1]
धड धड वलय धारू जल धार,
चमकै बीजल जिम जल धार ।
टूटे सन्नाटे तलवार,
ऊडइ तिणगा अगन-सुझाल ॥[2]

यहा युद्ध-वर्णन मे वर्षा-ऋतु का सागोपाग आरोप किया गया है ।

परपरित-रूपक :

१. धण कमलाणी कमदणी, सिसहर ऊगइ आइ ॥१२६॥

२. धण कमलाणी कमलनी, सूरिज ऊगई आई ॥१३०॥[3]

उपर्युक्त उद्धरणो मे नायिका पर क्रमशः कुमुदिनी और कमलिनी का आरोप करने के कारण नायक पर उसी क्रम मे चन्द्र और सूर्य का आरोप किया गया है । अतः यह परपरित-रूपक के उदाहरण हुए ।

उत्प्रेक्षा ·

कुछ अलकार इस प्रकार के होते हैं कि जिनका सौदर्य किसी प्रकार के साम्य पर आश्रित न होकर सम्भावना पर ही आश्रित होता है । हेतुत्प्रेक्षा और फलोत्प्रेक्षा इसी प्रकार के अलकार हैं । उत्प्रेक्षा मे साधारणत उपमेय-उपमान सम्बन्ध की स्थिति आवश्यक मानी गई है, किन्तु इन दोनो भेदो के लिए यह अनिवार्य नही है । डा० नगेन्द्र के अनुसार "इनमे काव्यमय सम्भावना का ही चमत्कार रहता है । इसलिए कल्पना की ललित-क्रीडा के लिए इनमे विशेष अवकाश रहता है और भावुक कवि उसमे भावुकता का मधुर पुट देकर एक अद्भुत सौन्दर्य उत्पन्न कर देते है । यही कारण है कि जिन कवियो मे कोमल भाव और ललित कल्पना का प्राधान्य रहता है, उनमे इन अलकारो के प्रति एक सहज मोह होता है ।" राजस्थानी के इन प्रेमाख्यानो मे काव्य मे चमत्कार उत्पन्न करने के लिए इस प्रकार की ललित सम्भावनाओ के अनेक उदाहरण मिलते है ।[4] कुछ उदाहरण यहा प्रस्तुत किये जाते हैं । यथा—

---

१. सदयवच्छ सावलिंगा चउपई (सदयवत्स वीर प्रबन्ध, सा. रा. रि. इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ. स. १४१ ।

२. पद्मिनी चरित्र चौपई (सा. रा. रि. इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ. स. ६६ ।

३ ढोला मारू रा दूहा (ना. प्र सभा, काशी) पृ. स ४८ ।

४. देव और उनकी कविता–डा० नगेन्द्र पृ. स. १९९ ।

'मोत्या रा हार री लडा कुचा दोन्यो दोली फीरे छै । जाणै सुमेर रा सिखर पर सु गगा दोय धारा कर उतरै छै ।'[1]

अर्थात् मोतियो के हार की लडे नायिका के उरोजो पर ऐसे सुशोभित हो रही हे, मानो सुमेर के शिखर पर से गगा दो धाराओ मे विभक्त होकर उतर रही हो । यहा नायिका के उरोज तथा सुमेर के शिखर मे तथा मोतियो के हार की लडो और गगा की दो धाराओ मे साम्य का आधार तो निश्चित रूप से है ही, किन्तु वास्तविक सौन्दर्य का कारण उपर्युक्त मधुर सम्भावना ही है जो हमारी सौन्दर्य-चेतना को उद्बुद्ध करती है । इसी प्रकार की सौन्दर्यानुभूत सूक्ष्म-चेतना का मनोरम दृश्य मैथिल कोकिल विद्यापति ने रूप के सूक्ष्म-तत्वो को सजोकर किया है । यथा—

"गल विच मोतिक हारा,
काम कम्भुभरि, कनक सिम्भू परि,
ढारत सुरसरी धारा ।"

हेतु-उत्प्रेक्षा :

मुख सोभा दे मयक ज्यौ, मुलकै मद सुमद ।
पट घू घट की फडक मैं, चोर लियौ धण चद ।।[2]

यहा नायिका का चाद सा मुख होने के कारण उसके द्वारा चन्द्रमा को चुरा लेना नही है, किन्तु फिर भी ऐसी सम्भावना व्यक्त की गई हे । अत हेतु-उत्प्रेक्षा का उदाहरण हुआ ।

गम्योत्प्रेक्षा ·

गयोत्प्रेक्षा का एक सरस उदाहरण 'वेलि क्रिस्न रुक्मिणी री' से उद्धृत किया जाता है—

कीधइ मधि माणिक हीरा कु दणि,
मिलिया कारीगण मयण ।
साम्या तणइ लिलाटि सोहिया,
कु कुम-बिंदु-प्रसेद-कण ।।१७३।।[3]

यहा सम्भावना मूलक अप्रस्तुत विधान अर्थात् उत्प्रेक्षा अलकार के कुछ अन्य उद्धरण भी प्रस्तुत किये जा रहे है जिनमे कवि का सूक्ष्म-निरीक्षण, सुकोमल-

---

१. पना वीरमदे री बात (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर ।
२. वही, पृ स. ४१ ।
३. क्रिसन रुकमणी री वेलि, स० श्री नरोत्तमदास स्वामी, पृ. स. ६१ ।

भावना, एवं कल्पना के साथ वस्तु के रूप को चित्रकार की तूलिका के समान चित्रित किया गया है। यथा—

१. प्रासाद शृंग उपरि पूतली, कमल नेत्रइनइ कटि पासली।
जाणी नगर रिधि जोवा मणी, सुर सुन्दरी आवी घणी ॥[1]

२. कै कज्जल रे रेखा सारै नैण थीरे,
जाणै समस्या मन मथ बाण।
कै कीधि राती रे कुंकुम बिंदका रे,
मानइ उदयौ शैशव-भाण ॥[2]

३. माग भरी गज मोतीए, हंस उडी रहे धनलो।
लाल बीचे बीदी वणी, सध्या खी सी रखीलो ॥[3]

४. एक सरवर तिन वन विचैजी, जल भरीयौ भरपूर।
जाणिक मेघ घटा विचैजी, चन्द्र रमणी नूर ॥[4]

५. चिहु दिसी चलकइ कुंडल नूर,
जणि किसे वइ ससि नइ सूर॥
मधुर अधर वर चंग सुरंग।
हिंगलू नइ परवाली रंग ॥[5]

६ सीस फूल तारा भलारे, अरध चंद सम फाग रे।
बींदी जाणे मणि धरी रे, पीवत-अमृत नाग रे ॥[6]

७. जाणे करि चंद उग्यो जामिनी,
तिणि सरीर मल करइ कामिनी।
झलके कुन्डल सरवर पाल,
जाणि हीरा मेल्हया ढालि ॥[7]

---

१ समयसुन्दर कृत मृगावती रास (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

२ मानतुंग मानवती रास (ह. लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

३ विनयप्रभ कृत विद्याविलास (ह. लि.) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रंथांक १८५०।

४. चित्रसेन पद्मावती रतनसार मंत्री चौपई (ह लि.) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, ग्रंथांक २८६७२।

५. मुनि केशव कृत सदयवच्छ सावलिंगा चउपई (सदयवत्स वीर प्रबन्ध, सा. रा. रि. इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ. स. १४२।

६. विनयलाभ कृत वछराज चउपइ (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

७. लखमसेन पद्मावती कथा, परमिल प्रकाशन, प्रयाग।

विस्तार-भय से यहा अधिक उद्धरण न दिये जाकर इतना ही लिखना पर्याप्त होगा कि इन प्रेमाख्यानकारो मे उत्प्रेक्षा अलकार के प्रति बडा मोह था और इसके रग-बिरगे इन्द्रधनुषी अनेक उदाहरण प्रस्तुत किये गये है।

उक्ति मे विचित्रता लाने के लिए वैषम्य और श्लेष-मूलक अलकार प्रमुख होते है। इन प्रेमाख्यानो मे इनका प्रयोग साधन रूप मे ही हुआ है, साध्य नही बन पाये हैं। इनके कुछ उद्धरण यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे है।

विरोधाभास :

१. अगन जल्यो सेकै अगन, सीतल होय सभाव।
नैणा ही सु सेकीयै, नैणा हृदो घाव॥

—जलाल गहाणी री बात (ह लि)

२. नयणा तणा वाण नीछटता।
निमख निमख ताइ वाधइ नेह॥

—महादेव पारवती री वेलि

३. गत प्रभा थियउ ससि रयणि गलती
वर मदा सइ वदन वरि।
दीपक पर जलतउइ न दीपइ,
नास फरिम सू रतन नरि॥१७६॥

—वेलि क्रिस्न रुक्मणी री, पृ. स ६५

उपर्युक्त उद्धरणो मे विरोधाभास है, क्योकि यहाँ दो वस्तुओ मे परस्पर विरोध लगता है, वस्तुतः विरोध नही है।

विभावना .

१. बीण बादल बीण बीज, आगण चीखण कुण कीयो।
सैणा मांगी सीख, नैणा धारालो नाखिया॥

—जलाल गहाणी री बात (ह. लि.)

२. अण पीयइ वारगग, ज्यू नयणे छाक चचत॥५३४॥

– ढोला मारू रा दूहा, पृ. स. १२८

३. निय नाम सीत, जालइ वण नीला।
जालइ नलणी थकी जलि॥
पातिगि तिणि द्वारिका पइसइ।
भजियइ विणु मन तणइ मलि॥

(यहाँ हेतुत्प्रेक्षा अलकार भी निहित है)

—वेलि क्रिस्न रुक्मणी री, पृ. स ११६

इन उद्धरणो में बिना कारण के कार्य सम्पन्न हो जाने से विभावना अलकार है।

बिशेषोक्ति ·

नव पाडा नगर बसइ, मोमन सू नड अज्ज ।३५४॥

—ढोला मारू रा दूहा, पृ स. ८२

जिणि सेस सहज फल, फणि फणि, बिबि जिह,
जीह, जीह नव नव उजस ।
तिणि ही पारन पायउ त्रीकम !
वयण डेडरां किसउ-वस ?

—वेलि क्रिस्न रुक्मणी री, पृ. स. ३

असंगति .

जइ करहउ खोडहु हुवइ, गादहु दीजइ दग्ग ।३३३॥

—ढोला मारू रा दूहा, पृ. स. ७८

विषम .

१. कत दुरडो काकरी, रतना तिका रतन ।
विधना की रचना वडी, जिणको क्यू जतन ॥

—रतना हमीर री वारता (ह. लि.)

२. नाह अमावस रैन सो, गुलाबा पुनम चद ।

—गुलाबा भँवरा री वारता (ह. लि.)

असम :

१. ओर ही इण मृघा ओपमा किसडी ।
आ तो करतार हाथा घडी हुवै जिसड़ी ॥

—रतना हमीर री वारता (ह. लि.)

२. इसडउ रूप अनूप आखियइ,
देवांगना न कोइ देव ।५१॥

—महादेव पारवती री वेलि, पृ. स. १८

३. देखि आलम ऊचरिच भयो,
नही एहवी नारी ससारिकि ।

—पद्मिनी चरित्र चौपई, पृ. स. १९

४. सामी धर्म बादल समो, हुओ न होसी कोय ।
युद्ध जीतो दिल्ली धणी, कुल उजवाल्या दोय ॥

(द्वितीय पंक्ति में असगति अलकार का चमत्कार भासित होता है।)

—पद्मिनी चरित्र चौपई, पृ. स. १०।

श्लेष :

१. एक नारी अति सावली, पाणी मे प्रवीसत।
प्रिय मुख-पकज पेखवा, ऊलजो अतिय करत॥

— विनयप्रभ कृत विद्या विलास (ह लि

२ दधि वीण लियउ जाई, वणतउ दोठउ,
साखियात गुण-पइ सु सत।
नासा अग्रि मुताहल निहुसति,
मजति कि सुक मुख मागवत॥६८॥

(श्लेष और सन्देह अलकार के समिश्रण से कथन को चमत्कारपूर्ण बनाय गया है।)

—वेलि क्रिस्न रुक्मणी री, पृ स. ५

श्लेस

३. कल कलिया कुत किरण, कलि ऊकलि,
वरजित विसिख विवरजित वाउ।
धड धड धडकि धार धारू जल,
सिहर सिहर समर वह सिलाउ॥११६॥

यहाँ यमक के साथ श्लेष पर आश्रित रूपक अलकार की छटा दृष्टव्य है युद्ध मे पावस ऋतु का दृश्य साकार हो उठा है।

—वेलि क्रिस्न रुक्मणी री, पृ. स. ६

४. वीजलियाँ हल बल हुई, आभा किया बणाव।
घर-मण्डण घर आवियो, घर मण्डल घर आव॥

—रतना हमीर री वारता, (ह लि)

काव्यलिग :

१. आकुल थ्या लोक केह वउ अचिरज?
वछित छाया, अे विहित।
सरण हेम-दिसि लीधउ सूरिज,
सूरजि ही त्रिख आसरित॥१८५॥

काव्यलिग के साथ यहाँ श्लेष के मिश्रण से दृश्य मे प्रभावोत्पादकता आगई है।

—वेलि क्रिस्न रुक्मणी री, पृ स. ६८

२. दस मास उधरि धरि, वले वरस दस,
जो इहाँ परिवालइ जिन्नडी ।
पूत हेत पेखता पिता प्रति,
वलि विसेखइ मातवडी ॥

—वेलि क्रिस्न रुकमणी री, पृ. स. ५

३. प्रीतम तोरइ कारणइ, ताता भात न खाहि ।
हियडा भीतर प्रिय बसइ, दाझणती डरपाहि ॥१६०॥

—ढोला मारू रा दूहा, पृ. स. ३६

परिकरांकुर, श्लेष

कुसुमित कुसुमाउध उदउ केलि कित,
तिहि देखे थिउ खीण तण ।
कत संजोगणि कि सुख कहिया,
विरहणी, कहे, पलास-वण ॥२५३॥

—वेलि क्रिस्न रुक्मणी री, पृ. स. १३२

इस दोहले मे अनुप्रास, छेकानुप्रास, उल्लेख, परिकराकुर, श्लेष और यथा-सख्या के सम्मिलित प्रभाव से भावोत्कर्षता का अनुपम रूप दिखलाई पडता है। एक ही दोहले में एक साथ इतने अलकारो का समावेश सहज रूप से ही हो गया है, जिससे स्वाभाविकता आगई है।

सन्देह

१. पहिलउ मुखि राग प्रगट थिउ, प्राची,
अरुण कि अरुणोदय, अबर ।
पेखे किरि जागिया पयोहर,
सझा वदन, रिखे सर ॥

—वेलि क्रिस्न रुक्मणी री, पृ. सं. ६

यहाँ सन्देह अलकार द्वारा जहाँ हमारी विस्मय वृत्ति को जागृत किया गया है, वहाँ उत्प्रेक्षा अलकार के द्वारा चित्र को सजीव एव प्रभावोत्पादक बनाया गया है।

२. मुलकत ढोलउ चमकियउ, बीजल खिवी क दत ।५४२॥

—ढोला मारू रा दूहा, पृ. स. १३०

३. मलयाचल सुतनु, मलय मन मउरे,
कली कि काम अकुर कुच ।

तणउ दखिण-दिसि दखिण त्रिगुण मई,
अरध सरस-समीर उच ॥२१॥
—वेलि क्रिस्न रुक्मणी री, पृ. स. ११

यहाँ सन्देह अलकार के साथ साग-रूपक विद्यमान है।

४. कइ रमा इन्द्राणी जाणि, कइ गोरी आई घरि माणि।
कइ रति-पति रामा रति रूप, चितइ मनिए किस्यू सरूप॥
—सदयवच्छ सावलिगा चउपई, पृ स १४१

५. तुरत देखी ने पदमणी बोल,
आलम है नागकुमारि कि।
भद्र कि नाथा रुकमणि,
किन्नर किम होय अपछर नारि कि।
वाह वाह पदमणि ऐसी नही है,
इन्द्र घरि इन्द्राणि कि।
—पद्मिनी चरित्र चउपई, पृ. स ५६

६ राय मन चीतवै देखीय जै रूप,
मनुष्य लोके किसू देव सरूप की।
मनमथ बाण वीध्यो थको,
कामवशी देखतै मिण पडै कूपकी॥
—विनयलाभ कृत बछराज चउपई (ह. लि.)

भ्रांति :

१. चकड भयो विछोह, अरुण कवल सपुट दीयो।
चाहत रह्यो चकोर, देखि वदन छवि-मालती॥
—चतुर्भुज कृत मधुमालती

२. झबरै जाणे बीजली, अंधारै हे करती उजासकि।
भमर सदा रुणझुण करइं, मोह्या परिमल हे नवी छडै सुन्दर मनी पासकि॥
—पद्मिनी चरित्र चौपई, पृ स. ६८

यहाँ भ्रातिमान् अलकार के साथ उत्प्रेक्षा अलकार, दोनो की ससृष्टि है।

३. भूली सारस-सहउइ, जाणइ करहउ थाम।३८८॥
—ढोला मारू रा दूहा, ८६

तद्‌गुण और भ्रांति :

१. मोती निरमल, कर अरुण, कजल री चख रेह ।
जाणे गु जाहरा जीरा समे, तीरा तजदीना तेह ।।

—विनयप्रभ कृत विद्या विलास (ह. लि)

२ नासा शुक सोबन तणी रे, बेसर मोती जेह रे ।
आब सोवट छे चच मैं रे, विधु-बालक सस्नेह रे ।।

—पद्मिनी चरित्र चौपई, पृ. स २२

३ कर रत्ता उज्जव बहुल, नयणे कज्जल रेह ।
धन भूली गु जाहले, हँसि करि नाख्या तेह ।।

४. अधर रग रत्तो हुवउ, मुख तम्बोल मसिवन्न ।
जाण्यो गु जाहल अछे, तिण इन ढुक्योमन्न ।।

—कुशल लाभ कृत माधवानल कामकन्दला चउपइ (ह. लि)

उक्त दोनों दोहे 'ढोला मारू रा दूहा' मे भी इसी रूप मे मिलते है ।[1]

तद्‌गुण :

१. मोती लड पोइ धर्‍या रे, अधर-विद्रुम विचिदत रे ।
चमके चूनो सारिखारे, दाडिम कूलीय दीपत रे ।।

—पद्मिनी चरित्र चौपई, पृ स २३

यहा क्रमशः उत्प्रेक्षा, रूपक, उपमा और तद्‌गुण की ससृष्टि से छवि को रमणीय बनाया गया है ।

२. मारुवणी मुँहवन्न, आदित्ताह उज्जली ।
सोइ झांखउ सोवन्न, जो गलि पहिरउ रूपकउ ।।४६४।।

—ढोला मारू रा दूहा, पृ स ११०

व्याघात :

१. मेली तदि साध्र सु रमण कोक मणि,
रममण कोकमनि साधु रही ।

---

१ (क) कर रत्ता मोती नूमल, गमणे काजल रेह ।
घण भूलि गु जाहले, हसि करि नाख्या तेह ।।५७४।।

(ख) अहर-रग रत्तउ हुवइ, मुख काजल मसि व्रन्न ।
जाँण्यउ गु जाहल अछइ, तेण न ढुकउ मन्न ।।५७२।।

—ढोला मारू रा दूहा (ना. प्र. सभा, काशी) पृ सं. १३८

फूले छडीवास प्रफूले,

ग्रहणे सीतलता ग्रही ॥१८०॥

—वेलि क्रिस्न रुक्मणि री, पृ स. ६५

२. सज्जण चाल्या हे सखी, पडहुउ वाज्यउ द्र ग ।

काही रली-ववामणाँ, वाही अवलउ अग ॥३५१॥

—ढोला मारू रा दूहा, पृ स. ८२

शुद्धापन्हुति :

१. साजनिया सालइ नही, सालइ आही ठाण ॥३७५॥

—ढोला मारू रा दूहा, पृ स ८७

कैतवापन्हुति :

१. होइ छडि चरणे लगता हँस,

मोती लगि पाण ही मिसि ॥१००॥

—वेलि क्रिस्न रुक्मिणी री, पृ. स. ५२

२. चाच रिकइ मिस खेलती, होली झपा वेसि ॥१४५॥

—ढोला मारू रा दूहा, पृ स ३२

३. पूजा व्याजि काजि प्री प्रसण ।

श्यामा आरंमिया सिणगार ।

कल मोतिया सु सरि हरि कीरति,

कठ सिरी सरसती किरि ॥८ ॥

—वेलि क्रिस्न रुकमणि री, पृ स ४१, ४

४ श्रवण किना सोवन तणी रे, सीप सुघट मन छद रे ।

कु डाल रे मिसि देखवा रे, आया सूरज चंद रे ॥

—पद्मिनी चरित्र चौपई, पृ. स २२

५. दीन हुवइ कर देखि, वेदन न अग विमाइ ।

नीकालइ नीसास मिसि, पिणि न विआधी जाइ ॥

—केशव मुनि कृत सदयवच्छ सावलिंगा चउपई, पृ. स. १६६

पर्यस्तापन्हुति :

जे नर चिंता वस करइ, ते माणस नहिं सिध्य ॥२२०॥

—ढोला मारू रा दूहा, पृ. स. ४६

अतिशयोक्ति :

डा० नगेन्द्र ने अतिशयोक्ति के उद्देश्य को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि इसका कार्य उत्तेजना को सवेदनीय बनाना है, अर्थात् अपनी उत्तेजना को व्यक्त

करना और दूसरे को उत्तेजित करना है। उत्तेजना के लिए चित्त के और उत्कर्ष के-लिए अपनी बात को बढा-चढा कर कहना आवश्यक होता है। भाव की उद्दीप्ति काव्य का मुख्य ध्येय होने के कारण अतिशय प्राय कथन की सभी प्रणालियो मे प्रच्छन्न अथवा प्रकाश रूप मे वर्तमान रहता है। इस प्रकार वास्तव मे इसका मूल सम्बन्ध भावोद्दीप्ति से ही है।[1] उदाहरणार्थ—

कसतूरी नाभि निसधि निकेवल,
उडियण जाइ लागा आकास।
मृग ते थि थकत हुया वन माहे,
वाजइ पवन तणा सुरवास ॥८६॥

—महादेव पार्वती री वेलि, पृ. सं. २६

उपर्युक्त दोहले मे मृगो को उडकर आकाश मे लगने वाला बताया है। अत यहा अतिशयोक्ति की सफलता, मृगो की चपलता तथा उनकी ऊँची कूद की तीव्र अनुभूति कराने मे ही है।

पइता कवल देख जइ परगर,
नाम कमल ऊतरउ नीर ॥६१॥

—महादेव पारवती री वेलि, प. स २१

यहा मुख से पिया हुआ जल नाभि के शरीर की कोमलता और मसृणता की तीव्र अनुभूति करने का सफल प्रयास किया है।

अतिशयोक्ति का एक रम्य और भावपूर्ण रूप पृथ्वीराज राठौड कृत 'वेलि' के निम्नलिखित दोहले मे प्रकट हुआ है—

देहली घसति हरि जहडी दीठी,
आणद की ऊपनउ अमाप।
तिणि आप ही करायउ आदर,
ऊभा करि रोया सू आप ॥१६६॥

एक प्रेम-विह्वल हृदय की आतुरता और आनन्दातिरेक का इससे बढकर रस-रिक्त और सजीव-चित्रण अन्यत्र-मिलना दुर्लभ है।

यहा स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि जहा अतिशयोक्ति अलकार के माध्यम से रस-सिद्ध कवियो ने वस्तु के रूप अथवा भाव की तीव्र-अनुभूति कराने का कार्य किया है, वहा कुछ चमत्कार-प्रिय कवियो के हाथ मे पडने पर इसका कार्य उडाने भरना तथा चमत्कार की सृष्टि करना ही रह गया। रीतिकालीन कवि बिहारी की

---

१. देव और उनकी कविता, डा० नगेन्द्र, पृ. स. २०२।

अतिशयोक्ति चमत्कारपूर्ण करिश्मो से कौन अवगत नही है। इस प्रकार के चमत्कार-पूर्ण करिश्मो के कुछ उदाहरण इन प्रेमाख्यानो मे भी यत्र-तत्र मिलते हैं। यथा—

जइ रुंख मारू हुई, छवडउ पडयउ ताउ।
तइ हुंती चन्दउ किमइ, लइ रचियउ आकास।।४३७।।
—ढोला मारू रा दूहा, पृ. सं. १०२

अर्थात् जिस वृक्ष से मारू उत्पन्न हुई, उसकी छाल का टुकडा गिर गया था। विधाता ने उससे चन्द्रमा वनाया और लेकर आकाश मे रख दिया। इस अन्योक्तिपूर्ण कथन का आशय नायिका के अनुपम रूप की तीव्रतर अनुभूति कराना है, पर पाठक केवल विस्मित होकर ही रह जाता है। इस चमत्कार-प्रियता की सीमा यहा तक तो फिर भी उचित मानी जा सकती है किन्तु कभी २ वह वहुत भीषणता धारण कर लेती है और रसपूर्ण स्थलो की सृष्टि करने की अपेक्षा मन में जुगुप्सा उत्पन्न कर देती है। यथा—

तीखा नैण तण आरसी, सायक कजल सार।
छाती छदे छयल की, नीकस्यो पैलैं पार।।
—जलाल गहाणी री वात (ह. लि.)

आजकल तो शायद ही ऐसा कोई नायक मिले जो अपनी प्रिया की नयन-कटारी से आर-पार छाती छिदवाने के लिए तैयार हो। इस प्रकार की प्रवृत्ति फारसी साहित्य के प्रभाव का कारण है। जायसी ने 'पद्मावत' मे इस प्रकार के प्रयोग किये हैं। यथा—

मकु पिउ दिस्टि समानेउ सालू, हुलसी पीठि कढावौं फालू।
कुच तूंवी अब पीठ गडोवौ, गहै जो हूकि, गाढ रस धोवो।।[1]

यहा तो प्रियतम की छाती मे धँसे नयन-कटाक्ष रूपी काटा जो हृदय को बेधकर पीठ की ओर जा निकला है, उसे निकालने के लिए कुच रूपी तूम्बी को पीठ मे गडाने की योजना बनाई जारही है। अत्युक्ति का कितना हास्यास्पद प्रयोग है यह? रस-मर्मज्ञ शुक्लजी ने इस प्रकार की प्रवृत्ति के प्रति गम्भीर आपत्ति की है और इसे रस के प्रति प्रतीति मे व्याघात माना है। सौभाग्य से राजस्थानी के इन प्रेमाख्यानों मे इस प्रकार की प्रवृत्ति का कुछ एक स्थलो को छोडकर अधिक प्रदर्शन नही हुआ है।

---

१. पद्मावत (गोरा बादल युद्ध-यात्रा खण्ड) स० श्री राजनाथ शर्मा, पृ. स. २७५।

व्यतिरेक

१ मिलि माह तणी माहुटि सूं मसि व्रन,
तपि आसाढ तणउ तपन ।
जण मीजण पण अधिक जाणियउ,
मध्य-रात्रि प्रति मध्याह्न ।।१८७।।
—वेलि क्रिस्न रुक्मणी री, पृ. स. ६६

२. गड गडत ग्रुहीर नीसाण गाजै देखि लाजे मेह ।
—पद्मनी चरित्र चौपई, पृ. स. ६८

३. कमल ताय अत राजकुमारी,
गोरी कमल सरीखइ गात ।।५३।।

४. सुर राणी चरणी तइ सोमा, तवता अधिक ओपमा तिण ।।५७।।
—महादेव पारवती री वेलि, पृ. स. १८, २०

५. यो बरसइ रितु आपणी, नइण हमारे मित ।।४१।।

६. आदी ता हूं ऊजलो, मारवणी-मुख-व्रन्न ।।४६३।।
—ढोला मारू रा दूहा, पृ. सं. १०३

७. छटा देखि अपछर छिपै, एची छिपै कर सक ।
छतिया अन्नारा छिप, मुख सौ छिपै मयक ।।२।।
—पना वीरमदे री बात (ह. लि.) पृ. स. १७

८. कामत्रिया सु पिणख्यु हिंक इणरी छटा अनूप ।
—रतना हमीर री वारता, (ह. लि.)

६. तिहा बसतु पुरनियर प्रधान ।
जिणँ आगे अलका किण ज्ञान ।।
—पद्मनी चरित्र चौपई, पृ. स. ६८

प्रतीप :

१. बे हरि हर मजइ, अ तारू बोलइ,
ते ग्रव भागीरथी, मतूं ।
अंक देस-वाहणी न आणा,
सुर सरि समसरि वेलि सूं ।।२४७।।
—वेलि क्रिस्न रुक्मणि री, पृ. सं. २८७

२. वालिम गरथ वसीकरण, बीजा सहु अकथ्य ।।१६६।।
—डोला मारू रा दूहा, पृ. स. ३७

३. 'जिण रे मुख री ओपमा तो पूर्ण चन्द्रमा ही न पावै।'
—रतना हमीर री वारता (ह लि.)

अधिक ।

१. वरसतइ दडउ नड अनड वाजिया,
सघण गाजियउ गुहिर सदि ।
जल निधि ही सामाइ नही जल,
जल वाला न समाइ जल दि ॥१६३॥
—वेलि क्रिस्न रुक्मिणी री, पृ स. १०२

२. हियडउ हेमागिर भयउ, तन पजरे न माइ ॥५२६॥
--ढोला मारू रा दूहा, पृ. स. १२७

रूपका अतिशयोक्ति ·

१. कडि लक तिसी उपमा कहता,
पोरम तणी वाधियइ पाल ।
सादूल कुंजर घड सामुहउ,
अणभाव लियइ करतो आतम ॥६०॥
—महादेव पारवती री वेलि, पृ. स. २१

२. कोमल कमल ऊपरे रे, त्रिवली समर सोपान रे ।
कटि तटि अति सूछिम कही रे, थूल नितब वखान रे ॥
—पद्मनी चरित्र चौपई, पृ. स. २३

३. सरस सुकोमल कुच कठिण, गम गति लक विसाल ।
हसा चचल, कनक खम्भ, चढी भुयगा-माल ॥
—दामोकृत लखमसेन पद्मावती कथा

४. मारू घू घटि दिटठ मइ, एता सहित पुर्णिद ।
कीर, भमर, कोकिल, कमल, चद, मयंद, गयद ॥४५५॥
--ढोला मारू रा दूहा, पृ स. १०७

अन्योन्य :

निमिख पल वसति सारिखा अहो निसि,
अेकण अेक न दाखइ अ त ।
कते गुणै वसि आपइ कता,
कता-गुण वसि थायइ कंत ॥
--वेलि क्रिस्न रुक्मणि री, पृ स. १३७

मीलित :

१. बोलति मुहुरमुहु विरह गम हवे,
तिसी सुकल निसि सरद तणी ।

हँसणी ति न पासइ देखइ हँस,
हँस न देखेइ हँसणी ॥

२. ऊजले अदरिसण निसि उजुआली,
घण् किसू बाखाण घणइ ।
सोलह कला समाइ गयउ ससि
उजासाहि आप आपणइ ॥२०८॥
—वेलि क्रिस्न रुक्मणी री, पृ. स. १०६, ११०

३ चँद मुखी मिल चदसु, चली जोन मे जाय ।
सग सखी हू ना लखी, ओर न कहा लखाय ॥
—गुलाबा भँवरा री वारता

४. लखमसेन पद्मावती नारि, दोइ सरिखा मिलिया समार ।
चोल रग जिमि कापड मिलइ, जाणे चन्द्र रोहणी मिलई ॥
—दामो कृत लखमसेन पद्मावती

दृष्टान्त :

इन प्रेमाख्यानो मे दृष्टात अलकार का प्रचुर मात्रा मे प्रयोग मिलता है ।
यथा—

१. सरसती न सूझइ, ताइ तू सोझइ,
वाउआ, हुअउ कि वाउलउ ।
मन सरिसउ धावतउ मूढ मन,
पहि किम पूजइ पागुलउ ?
– वेलि क्रिस्न रुक्मिणी री, पृ. स ३

२. जे चेतन किण विध तजै, मन ज्या बसियौ मोह ।
चिब्रुकइ जाहर चिपै, लषौ अचेत न लोह ॥
– रतना हमीर री वारता (ह. लि)

३. मणिधरी लाल हेम विन सूनी ।
त्रिया नव जोवन कत विहूनी ॥

४. भलौ भलाइ नही तजै, परितिखे दु खण जाणि ।
चदन तरु काटै घणी, तो पिण गुण हव खाणि ॥
—विनयलाभ कृत बछराज चउपई

निदर्शना :

अम्ह कजि तुम्ह छडि अवर वर आणइ,
अइठति किरि होयइ अगनि ।

सालिगराम सूद्र ग्रहि सग्रहि,
वेद-मत्र मेधा वदनि ॥७०॥
—वेलि क्रिस्न रुक्मिणी री, पृ. स. ३१

अनुमान :

रहिया हरि सही, जाणियउ रुकमणि,
कीध न इतरी ढील कई।
चितातुर चिति इम चतवती,
थयी छीक तिम धीर थयी ॥

उल्लेख :

१. कामिणि कहि काम, काल कहि केवी,
नारायण कहि, अवर नर।
वेदारथ इमि कहइ वेदवत,
जोग तत्त जोगेसवर ॥३६॥

२. इम कु भ अधारी, कुचसु कुंचुकी,
कवच सभु काम किकलइ।
मनु हरि आगम मडप मडे,
वधण दीध कि वारि गह ॥
—वेलि क्रिस्न रुकमणि री, पृ स ३६, ४६

उक्त दोहले मे उल्लेख, सन्देह, उत्प्रेक्षा का सश्लिष्ट रूप व्यक्त हुआ है।

३. नयण पदारथ, नयण रस, नयणे नयण मिलत।
अण जाण्या सू प्रीतडी, पहिला नयण करत ॥
—केशव कृत सदयवच्छ सावलिगा चउपइ, पृ. स १४३

४. वाही थी गुण वेलडी, वाही थी रस वेलि ॥६१०॥
—ढोला मारू रा दूहा, पृ. स १४७

अन्योक्ति .

मरा वै लोरे मोरिया ऊंची मकर किगाह।
जेथ पारधी झूपडा, तेथ चूगहमती जाह ॥
—जलाल गहाणी री बात, (ह. लि.)

यथा संख्या :

१. आकरसण वसीकरण, उनमादक,
परठि द्रविण सोखण सरपच।

चित वणि हसणि लसणि तिण सकुचणि,
सु दरि द्वारि देहुरा सच ॥१०६॥
—वेलि क्रिस्न रुकमणि री, पृ. स ५७

२ रतन विलसण मन उल्हसण, वयण समण सम वाणि।
चख निरखण, धन विद्रवण, मानव-भव सुप्रमाणि॥
--सदयवत्स सावलिंगा चउपई

कारण माला :

नयण मिलता मन मिले, मन मिले वयण मेलत।
वयण मिलता कर मिले, इम काया गढ भेलत॥
—केशव कृत सदयवच्छ सावलिंगा चउपई पृ. स. १४४

परिकरांकुर :

गावइ करि मगल चढि चढि गउखइ,
मनइ सूर सिसुपाल मुख।
पदमणि अति फूलइ परि पदमणि,
रुकमणि कामोदणिय, रुख॥४२॥
--वेलि क्रिस्न रुकमणि री, पृ. सं. २२

एकावली

जोवइ जा ग्रहि ग्रहि, जगन जानवइ,
जगनि जगनि कीजइ तप जाप।
मारगि मारगि अ ब मवरिया,
अ बि अ बि कोकिल आलाप॥४६॥
--वेलि क्रिस्न रुकमणि री, पृ स. २६

इस दोहले मे पुनरुक्ति प्रकाश अलकार भी विद्यमान है।

सहोक्ति :

सकुडित ससमा सध्या समयइ,
रति वछति रुकमणि रमणि।
पथिक वधू-द्रिठि, पख-पखिया,
कमल-पत्र सूरिज किरणि॥१६०॥
--वेलि क्रिस्न रुकमणि री पृ. स. ८५

स्वाभावोक्ति :

१ उक्कबी सिर हथ्थडा, चाहती रस लुध्ध।
ऊँची चढि चातु'गि जिऊ, मागि निहालई मुग्ध॥५॥

२. तन तरणक्कइ, पिउ पीयइ, करहउ ऊगालेह ॥६३१॥

—ढोला मारू रा दूहा, पृ. स. १५२

३. ऊमी सहु सखिअे प्रससिता अति,

क्रितारथी प्री मिलरण क्रित।

अटत सेज द्वारे विचि, आहुटि,

स्त्रुति दे, हरि घरि समा स्त्रित ॥१६॥

—वेलि क्रिस्न रुक्मिरणी री, पृ स. ८६

समासोक्ति :

पीडँत हेमत सिसर रितु पहिलउँ,

दुख टालयउ वसति हित दाखि।

व्याअे वेली तरणी तरुवरा,

साखा विसतरिया वइसाखि ॥२४६॥

—वेलि क्रिस्न रुक्मिरणी री, पृ. स १३०

लोकोक्ति :

पान पदारथ सुघड नर, अरण तोल्या विकाय।
जिम जिम भूरणे सचरे, (तिम) तिम मोल मुहगा थाय ॥
हसा ने सरवर घरणा, कुसुम घरणा ममराह।
सुगुरणा ने सज्जन धरणा, देश विदेश गयाह ॥

—पद्मनी चरित्र चौपई पृ स १३

क्रम

गति, मति, छति, सत, महत गुरण, दीपति सुन्दर देह।
खिरण खिरण सगला खूटनइ, नारी केरो नेह ॥३४१॥

—केशव मुनि कृत सदयवच्छ सावलिगा चउपई पृ सं. १७२

पर्यायोक्त :

ढोला मिलिसिम वीसरिसि, नवि आविसि, न लेसि।
मारू तरणइ करकंउइ वाइस ऊडा वेसि ॥१५७॥

—ढोला मारू रा दूहा, पृ स. ३५

दीपक :

गति अति आतुर पीया मुख पेखरण,

निसा तरणउ मुख दीठ निठि।

चन्द्र-किररण, कुलटा सुनिसा चरि,

द्रविडत अभिसारिका द्रिष्ठि ॥१५१॥

—वेलि क्रिस्न रुक्मरणी री पृ. स. ८५।

उदाहरण :

१. बेडी घाली वेसाखियो रे, राह ग्रह्यो जिम चद ।
जोरो कोइ चालीयो, सिंह पड्यो जिम फद ॥
—पद्मनी चरित्र चौपई पु स. ६१ ।

२. करि सिर कुम्भ लिए जहाँ जैसे ।
चितवत चकित चित्र फुनि तैसे ॥
—चतुर्भुज कृत मधुमालती ।

उपर्युक्त वर्णित अलकारो के अतिरिक्त इन प्रेमाख्यानो मे शब्दालकारों का का भी सहज, स्वाभाविक और भावोत्कर्ष के लिए प्रयोग प्रचुर मात्रा मे मिलता है। इनमे अनुप्रास, छेकानुप्रास, वृत्यानुप्रास, लाटानुप्रास, यमक, पुनरुक्ति प्रकाश, श्लेष आदि का विशेष प्रयोग मिलता है, जिनका उल्लेख हम पिछले पृष्ठो मे यत्र-यत्र कर चुके है। शब्दालकारो मे डिगल का एक विशिष्ट अलकार 'वयरण सगाई' है। इसका प्रयोग डिंगल शैली की रचनाओ में अनिवार्य माना गया है। 'महादेव पार्वती री वेलि' 'वेलि क्रिसन रुक्मिणी री' तथा 'ढोला मारू रा दूहा' में इस अलकार का प्रयोग प्रचुर मात्रा मे मिलता है।

राजस्थानी प्रेमाख्यानो के उपर्युक्त वर्णित अलकार-विधान के निरूपण से हम इस निष्कर्ष पर पहुचते है कि इन कवियो ने अलकारो का प्रयोग वस्तु के रूप को हृदयगम कराने के लिए तथा भावोत्कर्ष के लिए किया है। कही-कही रीतिकालीन रूढ-परिपाटीबद्ध प्रणाली का भी प्रभाव मिलता है और चमत्कार-प्रियता के लाभ का भी सवरण नही किया जा सका है, किन्तु इस चमत्कार-प्रियता से भावों के निरूपण मे व्याघात उत्पन्न नही हुआ है।

छन्द-विधान

काव्य और छन्द का सम्बन्ध बडा घनिष्ठ है। कविवर पंत ने तो यहां तक लिखा है कि 'कविता हमारे प्राणो का सगीत है। छद हृत्कम्पन, कविता का स्वभाव ही छन्द मे लयमान होना है।'[1] इसी भांति पश्चिम के प्रसिद्ध दार्शनिक मिल के शब्दो मे "जब से मनुष्य, मनुष्य है, तभी से उसके सभी गम्भीर और सम्बद्ध भावों की अपने आप को लययुक्त भाषा में व्यक्त करने की पवृत्ति रही है। भाव जितने ही अधिक गम्भीर हुए है, लय उतनी ही विशिष्ट और निश्चित हो गई है।' इसी कारण रस-विशेष का छद विशेष से एक आन्तरिक सम्बन्ध रहता है। भारतीय साहित्याचार्यों में सर्वप्रथम दण्डी ने महाकाव्य में पढने एवं सुनने में मधुर एवं

---

१. पल्लव की भूमिका पृ. २१।

मणीक छन्दो की आवश्यकता का उल्लेख किया है तथा वतलाया है कि प्रत्येक सर्ग मे एक ही छन्द का प्रयोग करना चाहिये तथा सर्ग के अन्त मे भिन्न छन्द का प्रयोग अपेक्षित है ।[१] आगे चलकर आचार्य विश्वनाथ ने दण्डी की वात का समर्थन करते हुए इतना और जोड दिया है कि महाकाव्य मे एक सर्ग ऐसा भी हो सकता है, जिसमे नाना प्रकार के छन्दो का प्रयोग किया जा सकता है ।

कविता और छन्द के पारस्परिक सबध को स्पष्ट करने के लिए हम कुछ पाश्चात्य एव भारतीय विद्वानो के विचार देना असगत नही समझते । पाश्चात्य कवि कॉलरिज ने लिखा है कि छद साधारण मनोवेगो और ध्यान सम्बन्धी चेतना एव सवेदनशीलता की वृद्धि मे वडी सहायता पहुचाते है ।'[२] यही वात कविवर कीट्स ने दुहराई है कि छद मस्तिष्क को जाग्रत-मूर्छा की स्थिति मे सुलाने का कार्य करता है ।[3] अग्रेजी के प्रसिद्ध आलोचक आई. ए. रिचर्ड्स भी काव्य की प्रभावोत्पादक शक्ति के लिए छन्दो का होना आवश्यक मानते हैं ।[४] भारतीय मनीषियो मे से आचार्य शुक्ल ने लिखा है कि 'छद के वधन के सर्वथा त्याग मे हमे तो अनुभूत नाद-सौन्दर्य की प्रेषणियता का प्रत्यक्ष ह्रास दिखलाई पडता है ।'[५] वस्तुत· काव्य मे छन्दो का प्रयोग भावोत्कर्ष मे सहायक होता है । यह तभी सम्भव हो सकता है जव अर्थ या भाव के अनुरूप छन्द-योजना हो । आचार्य हेमचन्द्र ने 'अर्थानुरूप छन्द स्वत्वम्' लिखकर इसी तथ्य को प्रकट किया है ।[६] अत सस्कृत, प्राकृत, अपभ्रश और हिन्दी के कवियो ने रसो के अनुरूप ही छन्दो का प्रयोग किया है । सस्कृत के कवियो ने वीर-रस के लिए षट्-पदी छन्द का प्रयोग किया है । हिन्दी मे यह छप्पय कहलाता है । इसी प्रकार पाश्चात्य विद्वानो मे से अरस्तू ने भी वीर महाकाव्य (Epic) के लिए हेक्सामीटर का प्रयोग आवश्यक माना है, यह हेक्सामीटर भी सस्कृत के षट्-पदी के छद के अनुरूप षट्-पदी छद ही होती है । पाश्चात्य विकसनशील महाकाव्यो मे छन्दो के साथ-साथ कथा-सूत्र को मिलाने के लिए बीच-बीच मे गद्य का प्रयोग भी

---

१. काव्यादर्श १/१८-१६ ।

२ Principles of literary critcism, p. 143.

३. वही, पृ. स. १४३ ।

४. वही, पृ. स. १३६ ।

५. चिंतामणि, भाग २, पृ. १५६ ।

६. उभय वैचिभ्यं । यथा—

रसानुरूप सदर्भत्वम्, अर्थानुरूपच्छन्दस्त्वम् ।

—हेमचन्द्र काव्यानु शासन, अध्याय, ८

मिलता है। संस्कृत के आख्यान-काव्यों मे भी इसी प्रकार छन्दो के साथ बीच-बीच मे गद्य का प्रयोग किया गया है। यही प्रणाली प्राकृत और अपभ्रंश मे तो आख्यान काव्यो के लिए भी प्रयोग मे लाई गयी। राजस्थानी के प्रेमाख्यानो मे भी इसी प्रणाली का प्रचुर मात्रा मे प्रयोग मिलता है। जिस भाति पाश्चात्य विकसनशील महाकाव्यो मे उनके जनता के मध्य मे तथा राज दरबारो के बीच वाद्य-यन्त्रो के साथ गाये जाने तथा सस्वर सुनाये जाने के फलस्वरूप गेय एव सुपाठ्य छन्दो का प्रयोग हुआ है उसी प्रकार राजस्थानी के प्रेमाख्यानो मे भी शृंगार-रस के लिए दोहा, चौपई, सोरठा, गीत आदि गेयात्मक छन्दो का प्रयोग किया गया है। राजस्थानी प्रेमाख्यानो मे दोहा, चौपई, छन्द, अपभ्रश के आख्यानक-काव्यो से प्राप्त हुए है तथा अपभ्रश के अन्य छन्द यथा-गाहा, छप्पय, पद्धडी, यत, वस्तु तोटक, अडयल्ल आदि का प्रयोग भी इन प्रेमाख्यानो मे मिलता है। इसके अतिरिक्त इन प्रेमाख्यानो में मिलने वाले छन्दो मे, कवित, सवैया, भुजग, मोतीदाम, चौरसी, बेक्खरी, भुजगी, कुण्डलिया, चन्द्रायणा, वीरारस जात रसावलू, रिसावला के नाम उल्लेखनीय है। इन विविध छन्दो के अतिरिक्त इन प्रेमाख्यानो मे विशेष कर, विद्या विलास, व पद्मिनी चरित्र चौपई, रणसिंध कुमर चौपई, श्री उत्तमकुमार चउपई, सिंहल सुत चौपई, आदि जैन-प्रेमाख्यानो मे विविध राग-रागनियो का प्रयोग मिलता है। इन चरित-काव्यो मे ५–६ से लेकर १५–२० तक ढाल पाये जाते है और प्रत्येक ढाल के प्रारम्भ मे राग-रागनियो का नामोल्लेख होता है। इन प्रेमाख्यानो मे मुख्यत राग रामगिरी, मल्हार, मारू केदारा, धन्यासी, गौडी, आसा सिन्धु, आसाउरी, वयराडी, अलवोल्यारी, सोहलारी, आसा, मारू, खम्भाइनी, वेलाउल जयश्री हमीरानी, रसीमानी, योगिनारी, सामेदी, बिदलीनी, नणदलनी, ओलगडी, गूजरी आदि शास्त्रीय एव लोक-रागो का प्रयोग मिलता है। राजस्थानी प्रेमाख्यानो मे गद्य का प्रयोग भी लययुक्त हुआ है। इस लय युक्त गद्य के लिए राजस्थानी का प्रसिद्ध छद दवावैत प्रयुक्त हुआ है। 'वचनिका' भी गद्य ही की शैली है।

गीत अथवा दोहला

राजस्थान मे एक कहावत प्रसिद्ध है कि जिसमे गीत की महिमा और लक्ष्य का पता चलता है। 'गीतडा कै भीतडा' अर्थात् मनुष्य का यश या तो गीतों से अमर होता है या देवालय, जलाशय आदि बनाने से। अत: मानव कीर्ति को अक्षुण्ण रखने के अभिप्राय से लिखे गये गीत डिंगल मे हजारो की सख्या मे मिलते हैं। डा० मोतीलाल मेनारिया का कथन है कि डिंगल के यह गीत गाये नही जाते, विशेष ढग से पढे जाते हैं और इनके लिखने की भी एक खास शैली है। एक गीत में तीन या तीन से अधिक पद होते हैं। प्रत्येक पद 'दोहला' कहलाता है। पूरे गीत

में एक ही घटना अथवा तथ्य का वर्णन रहता है जिसे सभी दोहलो में प्रकारान्तर मे दोहराया जाता है।[1] पृथ्वीराज राठौड कृत वेलि क्रिस्न रुक्मिणी री, और 'महादेव पारवती री वेलि' मे 'दोहला' का ही प्रयोग हुआ है। इनके अतिरिक्त इन प्रेमाख्यानो मे जिन जिन छन्दो का प्रयोग किया गया है, उनके उद्धरण यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे हैं:--

गाहा:

माई महामाई-मज्झे, वावन्न वन्न जो सारो।
सो विंदु ओकारो, स ओकारो नमस्कारो॥

--भीमकृत सदयवत्स वीर-प्रवध, पृ स. १

पद्धडी

विक्रमादित्य तिह्न करे राजि।
वृवि तिण उरण करीय काजि॥
पर नारि वधव रिणयग।
सरणागत वछल सावलिंग॥
अति सूर वीर नई साहसीक।
वत्तीस लाख चालइ अलीक॥

--कुशललाभ कृत माधवानल कामकन्दला चउपई (ह. लि)

त्रोटक.

सिर पाव करै मन छाहे सीरी। अवला सव हाजिर छी अतरी।
दिल सुछवा गोट ढलाइ दियो, लगते कर नीर मगालीयो॥
मुक गहल सापडी मेल मही, सुवनात कै मु दलै वैठि रही।
ले सिझिले किणका गुडका चलही, मुकता रलेंके मखतूल मही॥

--कविनाथ कृत देव-चरित्र (ह. लि)

छप्पय:

राय कला नल कूप, रूपि कदप्प-सरिच्छो।
वाचि जुधिष्ठर राउ, साचि गागेय परिच्छो॥
प्राणि जिसिउ भउ भीम, माणि बीजु दुज्जोहण।
दादि कन्न अवतर्यउ, वाणि अज्जुण वइरोहण॥
खित्ति साहसि सुयसि, लीला अगि अणुप्पयो।
इत्तिय गुणि पहुवच्छ सूनु, नकोदू सुभट सूदोसयो॥

--सदयवत्स वीर प्रबन्ध, पृ. स ४०

---

१. राजस्थानी भाषा और साहित्य--पृ. स. ६६।

षट्पद :

आगइ अहर रस रत्त, अनइ अहर विलासीय।
आमइ लोयण लोइ, अनइ कज्जलिहिं कलासीय॥
आगइ थणहर थोर, अमइ हाराउलि भारीय।
आगइ काय गायम धारि, अनइ झझरि झम कारीय॥
आगइ काम कीय कामिनी, अनइ वस तन सि ऊजली।
पहुवच्छ-तणउ भमर रगि रसि, इसी नारि सूदा मिली॥

—भीमकृत सदयवत्स वीर प्रबध, पृ स ४४

उक्त षट्पद छद छप्पय का ही एक रूप है। सदयवत्स वीर प्रबन्ध मे इसका नाम कही छप्पय लिखा मिलता है और कही षट्पद।

अडयल्ल :

जिम जिम केसरि पइ ऊहटइ, जिम जिम विसहर नुलीवटही।
दीन वयण जिम जपइ सूरु, देसि देसि कीधइ बहु पूरु॥

—भीमकृत सदयवत्स वीर प्रबन्ध, पृ. स. १७

वस्तु :

राउ रिज्झउ, राउ रिज्झउ, सिद्ध सहि कज्ज।
सयल लोक आणदीउ, बदी जण सुयसतस बोलइं।
विप्प वेद-झुणि ऊचरइ, हसगमणि हरखति बोलइ।
ताडीय चउरा चग तिहिं, बिहु राजा रहि आवासि।
अत्र-दल सिउ अधिकारीउ, मू किउ सूदा पासि॥

—भीमकृत सदयवत्स वीर प्रबन्ध, पृ. स. ४४

दूहा-सोरठीया .

रमणी सा ससारि, जस त्रिहु भुवन ओपम नही।
अवला अवरि विचारि, कहीयइ निच्चइ कवीयण॥

—मुनि केशवकृत सदैवच्छ सावलिगा चउपई, पृ. स. १४२

दूहा-गाहा

अण जाणियाण सगो, नयण कुन्वति धरति बहु विम्मो।
लग्गा कह विन फुहइ, अलख गई परम सामणीया॥

—केशवकृत सदैवच्छ सावलिगा चउपई, पृ. सं. १४३

यत :

दृढ-कच्छा कर-वरसणा, बोलता मूँठ मिट्ठ।
रण सूरा जगि वल्लहा, ते मइ विरला दिट्ठ॥१५१॥

—मुनि केशवकृत सदैवच्छ सावलिगा चउपई, पृ. स. १५१

कवित्त :

पदमगध पदमनी, भमर चहु फेर भमत अत,
चद वदन, चतुरग, अग चदन सो वासत।
सेत, स्याम अरु अरन, नयन-राजीव विराजत,
कीर चुच नासिका, रूप रमादिक लाजत।
गुणवत दद दाडिम कुली, अधर लाल, हीरा दसन,
आहार पान कोमल अधिक, रस-सिंगार नव सत वासन।।३५।।

—जटमल कृत गोरा वादल चउपई, पृ. स १८६

सोरठा :

आडा औ वाप, वेहू डूगर सम लहूं।
इमरा तरस न लाग, सभे मीलो हो सजना।।४६।।

—ससी पना री वात (ह लि.)

नागजी ! तुमीणा नेह, रात-दिवस साले हीये।
किण नै कही यै तेह, नित नित साले नाग जी।।२३।।

—नागजी नागवती री वात (ह. लि)

कुडलियो :

कह रांनी पदमावती, रतनसेन राजांन।
नारि न दीजै आपणी, तजियै, पीव पिरांन।।
तजियै, पीव पिरांन, और कूं नारि न दीजै।
काल न छूटै कोय, सीस दै जग जस लीजै।।
कलक लगावै आपको, मो सत खोवै जांन।
कह रानी पदमावती, रतनसेन राजांन।।

—जटमल कृत गोरा बादल चौपई, पृ. स. १६८

मोतियदाम :

लडै जब गोरल बॉवन वीर, कमांणक चोट चलावत तीर।
न चूकत रावत एकण चोट, लडै गजलोट सपोटा लोट।।

जात रसावलू :

कर खग लिए करि करि, विहुउ भुजदड दिखावै।
पाडलियै पाखरी उलट, अपने दल आवै।।
निज सांम-काज भूपत लडै, काट काटलावै कमल।
गोरा लगावत जिहां खड़ग, तिहां पाड़ करै दौड़ धड।।

वीर रास ·

जुहाये जग, उलसे अ ग।
गोरा बादल, ताने तग ॥१२७॥
—जटमल कृत गोरा बादल चौपई, पृ. स. २०५

रिसावला :

वसै मोछ अडोल अविचल, सुखी रइयत लोक।
आणद घरि घरि होत ऊछब, देखियत नही सोक ॥१५०॥
—जटमल कृत गोरा बादल चौपई, पृ. स २०८

भुजग :

हुला बोल पोसारखा, हिंद कीत् ह्वाराँ।
लगी लाजरी सामला, कामणा वहै माराँ ॥
—शेरसिंह कृत पना वीरमदे री बात, (ह, लि.)

सवैया (घनाक्षरी) :

तारे चद प्यारे नैन दीपे दीप सुर गेन,
माहा जस आगे बस तेज तस जात है।
गुटी, पूटी जटी, तत, जंत, मत अ त, पत,
इलावसी कार एकघुके धडे धात हैं॥
सुधा सेज, तेल फुलवारी, वाग, पट, कुल,
सारे ही से सुख मूल गोरी ही को गात है।
तेसे तप्प होम, जप्प, खोटी विद्या ही की रूप,
जग्ग बोल जाणे तो तो वात करामात है॥
—विनयप्रभ कृत विद्याविलास (ह लि)

चन्द्रायणा

बणि रसदेना गुलजार धार जल घर हरै।
कौकिल मोर कगोर सोरऊ तितरर करै॥
कोयल काम पुकारि पपीहा बौलीया।
परिहा बैसुणि मदन अवाज लोभ चितडोलिया॥
—पना वीरमदे री बात, पृ. स. ६२

इस प्रकार हम देखते हैं कि राजस्थानी के इन प्रेमाख्यानो मे छन्द-योजना बडी पुष्ट और परिमार्जित रूप से बन पडी है। छन्दो की इन विविध योजना से इन के रचयिताओ का भाषा पर अधिकार एव रचना-कौशल की प्रतिमा का पता चलता है। राजस्थानी के इन प्रेमाख्यानो मे सस्कृत और प्राकृत-अपभ्रश के ही

छन्द नही मिलते, बल्कि इन्होने सोरठियो दूहो, दोहला आदि विविध नये छन्दो का भी आविष्कार किया है । इन कवियो ने न केवल कविता को ही छन्द मे ढाला, किन्तु 'दवावैत' एव वचनिका जैसे गद्य की शैली का आविष्कार कर राजस्थानी गद्य को भी लययुक्त बना दिया है जो हिन्दी साहित्य मे अपनी एक अलग विशेषता रखता है। जहाँ एक ओर इन रचनाकारो का छन्दो पर अपना अधिकार चलता है, वहाँ इनका प्रयोग भी औचित्यपूर्ण रसानुकूल एव भावोत्कर्ष के लिए हुआ है। उदाहरणार्थ 'वस्तु छन्द' का जहाँ कही प्रयोग हुआ है वहाँ विस्मयजनक परिस्थितियो मे अथवा अद्भुत-रस की अभिव्यक्ति मे अथवा विस्मयजनक आह्लादकारी भावोद्वेग को व्यक्त करने के लिए हुआ है तथा इनके अभिव्यक्तिकरण में इस छद को सफलता भी मिली है। कविवर जटमल नाहर ने तो 'वीरा रस' जैसे लघु छन्दो का भी आविष्कार करके अपनी मौलिक प्रतिभा का परिचय दिया है ।

* * *

अ
ष्ट
म
अध्याय

राजस्थानी प्रेमाख्यानों में तत्कालीन समाज और संस्कृति

अ
ष्ट
म

अध्याय

राजस्थानी प्रेमाख्यानों में तत्कालीन समाज और संस्कृति

राजस्थानी प्रेमाख्यानो मे नर-नारी के प्रणय सम्बन्धो का चित्रण, सयोग वियोग पक्ष, नायक-नायिकाओ की मानसिक और दैहिक क्रियाओ का चित्रण ही मुख्य रूप से हुआ है। किन्तु, वर्ण्य विषय के प्रतिपादन मे घटनाओ के क्रम मे, नायक-नायिका के परस्पर के व्यवहार मे, घटनाक्रम के बीच मे आने वाली परिस्थितियो के चित्रण मे, पात्रो के सवाद अथवा कथोपकथन तथा अवान्तर कथाओ मे वर्णित इन प्रेमाख्यानो मे तत्कालीन लोक-जीवन, उसका रहन-सहन, आस्था और विश्वास, लोक-रीति नीति आदि के चित्रण से तत्कालीन समाज और सस्कृति का स्पष्ट चित्र दृष्टिगोचर होता है। इन प्रेमाख्यानो मे प्राचीनकाल तथा मध्ययुग के कथानक विद्यमान हैं। इनका रचनाकाल सवत् १४०० से १९०० तक है, अतः रचनाकार ने अपने समय की आधार-पीठिका पर वर्णित कथानक को वाणी दी है। प्राचीनकाल से लेकर लेखक के समय तक की परिस्थितियो व सास्कृतिक उद्भावनाओ का चित्रण इन प्रेमाख्यानो मे हुआ है। कही-कही पर दोनो के समन्वय से विचित्र सी परिस्थितिया उत्पन्न हो गई है। उदाहरण के लिए समयसुन्दर की कृति नलराज चौपई मे कथानक तो महाभारत का है पर नल के महलो मे चित्रकार द्वारा जो चित्र अ कित किये गये हैं, उनमे मुगल सिपाहियो के चित्रो के साथ योरोपीय वेश-भूषा वाले व्यक्तियो का चित्रण भी मिलता है जिससे पता चलता है कि लेखक के समय योरोपीय लोगो का आगमन भारत मे हो गया था। साहित्य-समीक्षा की दृष्टि से विचार करने पर कविवर समयसुन्दर द्वारा महाभारत काल की चित्रसारी मे मुगल और योरोपीय लोगो का चित्रण देशकाल दोष ही गिना जायगा।

अत: तत्कालीन समाज और सस्कृति का चित्रण प्रस्तुत करते समय इस बात का ध्यान रखना भी आवश्यक हो जाता है कि कृतिकार जिस समाज का चित्रण कर रहा है, वह कौनसे युग का समाज है। यदि उस चित्रण मे कवि के जीवनकाल के समाज का चित्रण भी समाविष्ट हो गया है तो उस तथ्य का काल-क्रम भी अलग से निर्धारित करना पडेगा, अन्यथा कवि के चित्रण के आधार पर महाभारत कालीन वेश-भूषा का वर्णन करते समय योरोपीय वेश-भूषा को भी उसी में समाविष्ट कर देने की भूल कर बैठेंगे। मैंने इसी दृष्टि को सामने रखकर इन प्रेमाख्यानो मे वर्णित समाज और सस्कृति का कालक्रमानुसार चित्रण प्रस्तुत करके गतिशील सस्कृति के रूप को प्रकट करने का प्रयास किया है।

वर्ण-व्यवस्था

वर्णाश्रम-व्यवस्था का भारतीय सस्कृति मे महत्वपूर्ण स्थान रहा है। प्राचीन काल मे यह भारतीय समाज-सगठन का मूलाधार था। राजस्थानी प्रेमाख्यानो मे भी वर्ण-व्यवस्था का चित्रण मिलता है। 'माधवानल कामकन्दला प्रवन्ध' मे गणपति ने लिखा है कि वर्ण चार है और अपने-अपने धर्म का पालन करने वाले हैं।[1] कविवर समयसुन्दर ने 'नलराज चौपई' मे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र, इन चार वर्णों का उल्लेख किया है और साथ मे यह भी लिखा है कि चार वर्ण अपने-अपने धर्म का पालन करते हैं और किसी को पीडा नही पहुचाते है।[2] तत्कालीन समाज मे ब्राह्मणो का स्थान ऊँचा था।[4] वे अपराधी होने पर भी अवध्य माने जाते थे।[3] ब्राह्मण के शाप से वडे-वडे राजा डरते थे। गणपति ने माधवानल

---

१. वरण च्यारि आपापणा, अह निशि पालई धर्म।
कूड पणइ बोलइ नही, को न कहि कहि नु भर्म॥
—गणपति कृत माधवानल कामकन्दला प्रवन्ध, (तृतीय अंग)

२. ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य नइ सुध, वरण चारि बसई अक्षाई।
आप आपनी धरम करनी करइ, पर नइ पीडा करता डरइ॥
—समयसुन्दर कृत नलराज चौपई, (ह. लि.)

३. विद्य सु विजनउ ऊलखिउ, कीउ पहुवच्छि प्रणाम।
आदरि आसण अप्पीउ, कहि न देव ! केण ठग्म॥११॥
—सदयवत्स वीर प्रबन्ध, पृ. सं. ३

४. स्त्री, ब्राह्मण, बालक, गाय, वेद पुराण अवध्य कहाई।
ब्राह्मणवइ किम मारीइ ? शास्त्र तणउ अन्याय।
चालउ सविहुनर मिली, जई बीन वीइ राय॥३८॥
—गणपति कृत माधवानल कामकन्दला, पृ. स. ४४६

कामकन्दला मे ब्राह्मण शाप के माहात्म्य का वर्णन किया है। समाज मे इनकी प्रतिष्ठा का कारण इनके उच्च सस्कार तथा कर्म थे। गणपति ने ब्राह्मण कर्म का वर्णन करते हुए लिखा है कि "वह लालची न हो, स्त्री के प्रति उसे आसक्ति न हो। शील व सदाचार मे रत रहे, ससार से उदासीन रहे, तिथियो और नक्षत्रो पर वह सदैव मनन करता रहे व छह मास मे कभी एक बार चारपाई पर शयन करे।

आश्रम-व्यवस्था

समाज की सुन्दर-व्यवस्था, एकता, सगठन और सतुलन के लिए वर्ण की तरह आश्रम-व्यवस्था की महत्ता कम नही है। जीवन के चार पुरुषार्थों मे धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की गणना की गई है। अत प्राचीनकाल मे ऋषियो ने जीवन को इन्ही चार भाग—ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ एव सन्यास आश्रम मे विभक्त किया है। प्रथमाश्रम समाज को योग्य सदस्य देता था।[1] यह आवश्यक नही था कि हर व्यक्ति हर आश्रम को क्रमश पार करता हुआ सन्यास आश्रम तक पहुचे। प्राचीन धर्म-शास्त्रो मे इसके लिए विकल्प भी है। यह व्यक्ति पर निर्भर था कि वह ब्रह्मचर्य के बाद गृहस्थाश्रम मे प्रवेश करे अथवा परिव्राजक बन जाय। जाबालोपनिषद्, वशिष्ठ-धर्म सूत्र और आप्रस्तम्ब धर्म-सूत्र इसके समर्थक हैं। गौतम और बोधायन केवल एक ही आश्रम गृहस्थाश्रम को मानते है। श्री काणे ने इन सब मतो का विस्तृत विवेचन किया है।[2] राजस्थानी के प्रेमाख्यानो मे आश्रम-व्यवस्था का भी उल्लेख मिलता है। अधिकाश प्रेमाख्यानो के पात्र राजा-रानी, श्रेष्ठी आदि गृहस्थाश्रम का सुख भोग कर तथा वृद्धावस्था में राज्य अपने पुत्र को सौपकर वानप्रस्थ एव सन्यास आश्रम ग्रहण करते हुए चित्रित किये गये है। 'उत्तम कुमार चरित्र चौपई' मे उल्लेख है कि राजा मकरध्वज उत्तमकुमार को राज्य सौपकर वानप्रस्थाश्रम ग्रहण कर लेते हैं।[3] इसी भाति 'सिंहल सुत चौपई' मे भी गृहस्थाश्रम, वानप्रस्थ तथा सन्यास आश्रम का उल्लेख मिलता है।[4] 'मलय सुन्दरी कथा' मे राजा महाधवल राजकुमार महाबल को राज्य सौपकर वानप्रस्थ आश्रम ग्रहण करते चित्रित किये गये है।

जाति-प्रथा

राजस्थानी प्रेमाख्यानो मे वर्णाश्रम-व्यवस्था का उल्लेख इस बात को

---

१. आप स्तम्ब, १/६/१८/१।

२ धर्मशास्त्र का इतिहास, पृ. स ४२४।

३ विनयचन्द्र कृत उत्तम कुमार चौपई, पृ. सं. २०१।
(सादूल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट, बीकानेर)

४. प्रिय मेलक चौपई (समयसुन्दर रास पचक, सा. रा. रि. इन्स्टीट्यूट) पृ. सं. २२।

प्रमाणित नही करता कि उस समय वैदिक-काल मे वर्ण-व्यवस्था का जो रूप प्रचलित था, वह विद्यमान था। वैदिक-काल मे वर्ण-व्यवस्था गुण-कर्म के अनुसार थी और उसमे गतिशीलता भी थी। कभी-कभी अपने गुण-कर्म के अनुसार व्यक्ति वर्ण-परिवर्तन भी कर सकता था, किन्तु कालान्तर मे इस व्यवस्था मे जडता आने लगी थी और इसका सम्बन्ध व्यक्ति के गुण-कर्म पर आधारित न रहकर जन्म से होने लगा। ऊँच-नीच की भावना भी उत्पन्न हो गई। फलस्वरूप अनुलोम और प्रतिलोम विवाह होने से तथा व्यवसाय के आधार पर अनेक जातियाँ बन गई। वर्णाश्रम की प्रतिष्ठा केवल सैद्धान्तिक रूप मे ही रह गई, व्यवहारिक रूप मे आगे चलकर उसका मूल रूप सुरक्षित नही रह सका। 'माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध' मे अनेक जातियो का वर्णन मिलता है। गणपति ने प्रचलित व्यवसायो के आधार पर धोबी, धाइ, कापडिया, केदार, जोगी, लोहार, कायस्थ, काछी, कुम्हार, कोली, कलावत, चितारा, तेली, दोसी गन्धी आदि अनेक जातियो का उल्लेख किया है।[1] 'सदयवत्स वीर प्रबन्ध', 'ढोला मारू रा दूहा'[2] 'नलराज चौपई'[3] आदि मे भी अनेक जातियो का उल्लेख मिलता है। मध्यकालीन समाज मे भिन्न-भिन्न व्यवसायो के आधार पर चौरासी जातियाँ प्रचलित थी। इन जातियो की भी कई-कई उप-जातियाँ

---

१. धोबी, धाइ, घसमल, कापडिया, केदार।
जोगी, जेहनइ, योगिनी, दिहा, डीनी दस वार॥१७१॥
लोहारा, लेखू नही, काछीया नइ कुमार।
कोली, कडू, कसु, भीया, कलावत चीतार॥१७२॥
कणीया, घीया, तेलिया, निरति नेसती होई।
दोसी, गान्धी, सुरहीया, कापडीया कहि कोइ॥१९५॥
—गणपति कृत माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध (चतुर्थ अग) पृ. स. ७४ से ७६ तक।

२. राजा प्रोहित राखि जइ, जिण की उत्तम जाति।
मोकलि घरा रा मगता, विरह जगा वइ राति॥१०३॥
—ढोला मारू रा दूहा (ना. प्र. सभा, काशी)

३. महाजन लोक धएमति हा सुखी, चोर, जार, चुगलते दुखी।
कंदोई, काठी, सोनार, कुम्हार, माली. मरदीया, सुतार॥
तडसापत. तबोली सार, नव मउ नारू कह्यउ ठठार।
घाची, मोची, बसह अपार, वरण च्यार नव नारु सार॥
—समयसुन्दर कृत नलराज चौपई (ह. लि.)

हो गई थी। गोत्रो की सख्या भी बढ़ गई थी। गणपति ने ब्राह्मण जाति के ही कई गोत्रो का वर्णन किया है। मध्ययुग मे ब्राह्मणो की प्रतिष्ठा पहले जैसी नही रही। गणपति ने 'ब्राह्मण-निंदा प्रसग' मे उन्हे लोभी और कर्म से च्युत बतलाया है। फिर भी जन-साधारण मे ब्राह्मण वर्ग के प्रति आदर भाव था। वे राजपुरोहित होते थे। विवाह आदि मागलिक कामो मे उनकी उपस्थिति आवश्यक मानी जाती थी। वैश्य लोगो का भी समाज मे प्रभाव कम नही था। समाज का अर्थ-तंत्र उनके ही हाथो मे था। राजाओ के मत्री वैश्य लोग भी होने लगे थे। अनेक राजाओ के प्रधान 'मुहता-पुत्र' ही होते थे। गणपति ने तत्कालीन ब्राह्मण-वर्ग और वैश्य-वर्ग की वेश-भूषा का भी वर्णन किया है। ब्राह्मण-सफेद धोती पहिनते थे और उनके कन्धे पर चादर पडी रहती थी। हाथ मे मुद्रा और कमण्डल सुशोभित होता था। वैश्य-वर्ग का वर्णन करते हुए कवि ने उनके कानो मे अटकी हुई लम्बी लेखनी का भी उल्लेख किया है।[1] तत्कालीन समाज मे जातीय दम्य तथा अस्पर्श्यता की भावना बहुत प्रबल थी। अन्त्यजो को नगर के बाहर रहना पडता था। उन्हे सिर मे कच्चा सूत बाधना पडता था तथा कमर मे हिरण का सीग लटकाना पडता था, जिससे लोगो को पता चल सके कि वह व्यक्ति अन्त्यज जाति का है। राजपूतकाल मे चारण, भाट, ढाढ़ी आदि कुछ नवीन जातियाँ भी पनप गई थी। राजपूत चारणो का बहुत आदर करते थे। सन्देश-प्रेषण मे ढाढ़ी और जागडी काम देते थे। खवास, मालण, कुम्हार का भी तत्कालीन समाज मे महत्व-पूर्ण स्थान रहा है। नायिक-नायिकाओ के मिलन मे खवास और मालिन महत्वपूर्ण भाग लेते हुए चित्रित किये गये हैं। 'सदयवत्स' अपनी प्रेमिका के नगर मे कुम्हार के घर पर ही ठहरता है।[2] नायक लोग प्राय: मालिन के घर पर ही ठहरते थे और अपनी प्रेमिकाओ से मिलन की योजना मालिन के सहयोग से बनाते थे। अन्त-

---

१. ब्राह्मण :

पाहिरी पावन धोतिया, मुद्रा कमडल पाणि।
माथइ सणीया सावट्ट, अढ़ि खीरोदक ताणि॥

वैश्य :

लाबी लेखण लकनि, तेलेई खोसी कान।
मन सिद्धि माहाजन सचरई, देवतणाइ देवानि॥

—गणपति कृत माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध (तृतीय अंग)

२. 'कुम्भकार घरि डेरो लियो।'

—सदयवत्स वीर प्रबन्ध, प. सं. ६-७

र्जातीय-विवाह के फलस्वरूप नवीन जातियाँ भी बन जाती थी। 'बगडावता री बात' से विदित होता है कि बगडावत हरिराम चह्वाण के पौत्रो अथवा बाघा के पुत्रो तथा गूजर-कन्याओ से उत्पन्न सन्तान थे। इसी भाँति से बाघा के फेरे कराने वाले ब्राह्मण तथा 'बलाई' की कन्या से उत्पन्न सन्तान 'इचारज' कहलाये। ये 'इचारज' जाति शूद्र जाति की कोटि मे आती है। इस भाँति से मध्ययुग मे अनेक नई उपजातियाँ भी बन गई थी।

पारिवारिक-जीवन

आर्यो के प्राचीन सगठन का आधार कौटुम्बिक सम्बन्ध था। इसी सगठन के परिवर्तित आधार पर सब राष्ट्रो का जन्म हुआ। राजस्थानी के प्रेमाख्यानो मे इस परिवार प्रथा का भी सम्यक् चित्रण मिलता है। तत्कालीन समाज मे आज ही की भाँति सयुक्त परिवार प्रणाली प्रचलित थी। परिवार मे माता-पिता, पुत्र, पुत्रियाँ, भाई, चाचा आदि सम्मिलित रूप मे एक ही घर मे निवास करते थे। माता-पिता के प्रति पुत्र की भक्ति-भावना होती थी। माता-पिता की आज्ञा पालन करने वाला ही पुत्र उत्तम प्रकृति का गिना जाता था। अपने पिता के द्वारा अकारण देश निकाले की आज्ञा मानकर सदयवत्स सावलिगा के साथ घर से निकल पडता है। इस प्रकार के प्रसग अन्य प्रेमाख्यानो मे भी उपलब्ध होते है। सुख-दुख के अवसर पर पति-पत्नि सहभोक्ता होते थे। देश निकाले के समय नल के साथ दमयन्ती भी राजमहल के सुख को छोडकर निकल पडी थी। इसी भाँति राजा चन्दन के साथ रानी मलियागिरि भी। पुत्र-वधू सास का आदर करती थी। पुत्र-वधू द्वारा सास के चरण छूने की प्रथा थी और सास बदले मे आशीर्वाद देती थी।[1] भाभी को माता के समान समझा जाता था। दमयन्ती पर कूबर ने जब मलीन दृष्टि डाली थी, तब उसे भाभी-देवर के माता-पुत्र तुल्य पवित्र सम्बन्ध की याद दिलाकर सचेत किया था। परिवार मे पुत्र का बडा महत्वपूर्ण स्थान था। वह कुल का दीपक कहलाता था। जिस प्रकार बिना दीपक के घर मे अन्धकार रहता

---

१. सामली सासू पयनमी,
साथई थई सुजाणि ॥१५६॥
पय लगता प्रीय जणाणि,
'होयो अविचल आयु।'
एहि विधिनू वयण सुणि,
अमृत आरोगु माई ॥१५७॥
—भीम कृत सदयवत्स वीर प्रबन्ध, पृ. सं. २३

है, उसी प्रकार बिना पुत्र के कुल अन्धकारमय गिना जाता था।[1] इसलिए पुत्र गोद लेने की प्रथा भी प्रचलित थी। 'उत्तम कुमार चरित्र चौपई' मे उल्लेख है कि पुत्र के अभाव मे काशीराज ने करवत लेना चाहा था तब उसे पुत्र-गोद लेने की आकाशवाणी हुई थी। ससुराल के लिए विदाई के समय माता अपनी कन्या को परिवार की समुचित सेवा करने की सीख देती थी।[2] समाज मे मैत्री-सम्बन्ध उच्च कोटि का गिना जाता था। मित्र अपने प्राणो को सकट मे डालकर भी विपत्ति मे फँसे अपने मित्र की सहायता करता था। 'चित्रसेन पद्मावती रतनसेन चौपई' मे मुहता पुत्र अपने प्राणो को सकट में डालकर भी अपने मित्र राजकुमार के आने वाले सकटो से रक्षा करता है। इसी प्रकार नायिकाओ की सखियाँ भी सकट के अवसर पर अपने प्राणो की चिन्ता किये बिना उनकी सहायता करती है।

संस्कार

धर्म-शास्त्र के इतिहास मे श्री काणे ने कहा है कि सस्कार नये गुणो का उत्पादक है और तप से दोष अथवा पाप, अपराध आदि का निवारण होता है।[3] सस्कार शुद्धि और योग्यता के लिए किए जाते हैं। मनु का कहना है कि 'द्विजातियो के बीज तथा गर्भ से उत्पन्न पाप गर्भावस्था मे किए गये होम के द्वारा, जन्म लेने के पश्चात् जात, कर्म, चोल आदि के द्वारा शान्त हो जाते है।'[4] याज्ञवल्क्य की भी

---

१ (क) अपुत्रस्य ग्रह शून्य, मुख शून्य अनेत्रता।
राति दिवस सुत चिन्ता रहर, करवत सरिखी कवित्रण के हइ ॥१०॥
—पुण्यसार चौपई, पृ. स. १२१

(ख) मण चोसठ दीव बले, बारे रवि दीयत।
तोहूी सखी अ धियारडो, जी घर पुत न हुत ॥
पुत्र विहीन ने आगणे, पखी न आवे कोय।
प्रात समय ते पुरुखंनु, नाम न लेवे कोय ॥
—रतनपाल चरित्र, पृ. स. १७

२. प्रिय पहिली उठजे प्रभाते, देव गुरु नाम ग्रहण सधाते।
सासू, जेठानी, नणद पाए पहि जे।......... ....
पीव पहली भोजन मत कीजे, उत्तम कल आचार आदरि जे॥
—नलराज चोपई (ह. लि.)

३. धर्म शास्त्र का इतिहास, (लेखक—श्री काणे) अध्याय ६, पृ स. १६१।

४. मनुस्मृति, २/२७, २८।

ऐसी ही धारणा है—'एवमेनः शमयाति बीज गर्भ समुद्भवम् ।'[१] शुद्धि और पवित्रता के अतिरिक्त सस्कारो का एक आशय यह भी है कि मानव मन उत्सव प्रिय होता है। नाचना, गाना, आनन्द मनाना, हृदय के स्नेह एव उमग का परिचायक है। अतः नामकरण, अन्न प्राशन, आदि सस्कारो का यही आशय और उद्देश्य है।[२] गौत्तम ने सस्कारो की सख्या ४० कही है[३], पर मुख्य सस्कारो की सख्या १६ ही मानी गई है। इनमे गर्भाधान, पु सवनि समीन्तोन्नयन, विष्णु वलि, जातकर्म नामकरण, निष्क्रमण अन्न प्राशन, चौल, उपनयन, वेद व्रत, चतुष्टय समावर्तन और विवाह आदि आते है।

राजस्थानी-प्रेमाख्यानो मे इन सस्कारो का प्रसगवश यत्र-तत्र उल्लेख मिलता है। 'सदयवत्स वीर प्रवन्ध' मे सीमन्तोत्सव का वर्णन मिलता है। इस अवसर पर गर्भवती स्त्री का जलूस निकाला जाता था। उसके मस्तक पर छत्र सुशोभित होता था तथा पञ्च प्रकार के वाजे वजते थे।[४] रतनपाल रतनवती रास' मे भी सीमन्तोत्सव का वर्णन कवि ने किया है। तत्कालीन समाज मे सीमन्तोत्सव मनाने की प्रथा का प्रचलन अत्यधिक था। स्त्री की प्रथम गर्भावस्था मे यदि यह उत्सव नही मनाया जाता तो कुल की मर्यादा के कलक लगना माना जाता था। अत भानुमति ने अर्थाभाव मे भी अपने गर्भ का वालक गिरवी रखकर सीमन्तोत्सव मनाया था।[५] तत्कालीन समाज मे 'जन्मोत्सव' भी धूमधाम के साथ मनाने की प्रथा प्रचलित थी। 'उत्तम कुमार चरित्र चौपई' मे उल्लेख है कि उत्तमकुमार के जन्म के अवसर पर राजा ने जन्मोत्सव वडी धूमधाम के साथ मनाया था। घर-घर मे तोरण वाधे गये थे। राजा ने इस अवसर पर दान भी वहुत दिया था।[६]

---

१. याज्ञवल्क्य स्मृति, २/१३।

२. कवि कालीदास के ग्रथो पर आधारित तत्कालीन भारतीय सस्कृति, डा० गायत्री वर्मा, पृ. स. ५३।

३. गौत्तम धर्म सूत्र, ८/१४, २४।

४. वभण एक तणइ तिणिवार, आघरणि अवसरि जयकार ॥४४॥
गय गामिणी धवलधुणि करई, वारु विच वेअ उच्चरइ।
मस्तकि मेघाडबर छत्र, वाजइ पञ्च शब्द वाजिय ॥५५॥
—सदयवत्स वीर प्रबन्ध (ब्राह्मण सीमान्तिषी गृहागमन प्रसग)

५. श्री दानवीर रत्नपाल चरित्र (गुजराती भाषा मे) पृ. स. २९।

६ राजा अति उच्छव थकै, जनम महोच्छव कीध।
घरि घरि तोरण बाधीग, दान-दान वली तहाँ दीध ॥१६॥
—उत्तम कुमार चरित्र चौपई, पृ. स. १११

'माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध' मे गणपति ने जात कर्म सस्कार, उपनयन सस्कार आदि का वर्णन किया है।

विवाह

सस्कारो मे सबसे अधिक महत्व विवाह को दिया गया है। ऋग्वेद के अनुसार विवाह का उद्देश्य गृहस्थाश्रम मे प्रविष्ट हो, देव कार्यो को करने का अधिकार प्राप्त था तथा वशानुक्रम के लिए सन्तान प्राप्ति थी।[1] ऐतरेय ब्राह्मण[2] तथा शतपथ ब्राह्मण[3] भी सतान प्राप्ति को ही पूर्णता समझ कर विवाह को महत्व प्रदान करते हैं। मनु[4] अपत्य, धर्म कार्यों को करने की क्षमता, उत्तम रति, पितरो एव अपने लिए स्वर्ग प्राप्ति मे उद्देश्य विवाह के मानते हैं।

राजस्थानी प्रेमाख्यानो मे भी विवाह का उद्देश्य धर्म, काम, मोक्ष माना गया है। सन्तानोत्पत्ति पर इन प्रेमाख्यानकारो ने विशेष बल दिया है। 'माधवानल कामकन्दला' मे कुशललाभ ने विवाह का उद्देश्य सन्तानोत्पत्ति और भोग बतलाया है तथा यह दोनो कार्य पुण्य के फल बतलाये गये हैं।[5] राजा और जनसाधारण भी सन्तान के लिए कई विवाह कर सकते थे। कभी-कभी काम की तुष्टि के लिए भी विवाह करना आवश्यक गिना जाता था। 'सदयवत्स वीर प्रबन्ध' मे कामातुर सावलिगा को देखकर उसकी भाभी ने अपने पति से सावलिगा का शीघ्र ही विवाह करने के लिए कहा था।[6] विवाह के लिए वर-वधू की आयु के सम्बन्ध मे मनु ने कहा है कि ३० वर्ष की आयु वाला पुरुष १२ वर्ष की कन्या से विवाह कर सकता

---

१. ऋग्वेद १०, ८५, ३२६, ५, ३, २, ५, २८, ३।

२. ऐतरेय ब्राह्मण ३३, १, १ का २, ४।

३. शतपथ ब्राह्मण ५, २, १, १०।

४. अपत्य धर्म कार्माणि शुश्रूषा रतिरुत्तमा।
दाराधी नस्त था स्वर्ग पितृणमात्मनश्चह॥

—मनु ९ का २८

५ च्यार पुत्र जाया सन्तानि, प्रगद्या मन्दिर नवइ निधान।
विविध विषई सुख भोगई, राज सिद्धि मडाण।
कुशल लाभ पण्डित कहै, एसह पुण्य प्रमाण॥

——कुशललाभ कृत माधवानल कामकन्दला (ह. लि.)

६. सुण प्रीतम ! बाई तुम तणी। कामवंती मन इच्छा घणी।
जोवन विरहइ अे व्याकुली। परणावो पूरी मन रली॥१८०॥

——सदयवत्स वीर प्रबन्ध, पृ. स. १५५

है। याज्ञवल्क्य स्मृति[१] के अनुसार रजोदर्शन से पूर्व अवश्य ही कन्या का विवाह हो जाना चाहिये, अन्यथा प्रत्येक रजोदर्शन पर माता-पिता को गर्भ-नष्ट करने का पाप लगेगा। इससे यह प्रकट होता है कि मनु व याज्ञवल्क्य बाल्यावस्था मे ही कन्या का विवाह कर देने के पक्षपाती थे। राजस्थानी प्रेमाख्यानो मे भी बाल्यावस्था मे ही कन्या का विवाह कर देने के उदाहरण मिलते हैं। 'ढोला मारू रा दूहा' मे उल्लेख है कि विवाह के समय मारवणी की आयु डेढ वर्ष और ढोला की आयु केवल तीन वर्ष की थी।[२] कुछ अवसरो पर कवारी-कन्या को देखना समाज मे अपशकुन माना जाता था।[3] यद्यपि इन प्रेमाख्यानो मे बाल्यावस्था मे विवाह के उदाहरण मिलते हैं, किन्तु बहुत ही कम। जहाँ बाल्यावस्था मे कन्या के विवाह का वर्णन किया है, वहाँ उससे उत्पन्न बुराई को भी प्रकट किया है। राजा रसालु से राजा मान ने अपनी ६ महीने की बालिका का विवाह कर दिया था, किन्तु वह राजा रसालु से प्रेम नही कर पाती, और हठमल से प्रेम करके इस अनमेल विवाह के प्रति विद्रोह प्रकट करती है।[४] इन प्रेमाख्यानो की समस्त नायिकायें, युवतियाँ हैं और अधिकाश प्रेमिकाये अपने प्रेमी के साथ घर से भागने वाली हैं। इन कवियो ने अविवाहित नायिकाओ के नख-शिख का जो वर्णन किया है, उससे भी यही प्रतीत होता है कि विवाह से पूर्व कन्याओ की आयु १४ वर्ष से कम नही रही होगी। 'लखनसेन पदमावती कथा' मे विवाह के समय 'पदमावती' की आयु १५ वर्ष की थी।[५] 'विद्या विलास' से प्रकट होता है कि विवाह के समय कन्याये इतनी समझदार होती थी कि वे दाम्पत्य-सुख के लिए अपने भावी पति के गुणो की जाँच के लिए सतर्क रहती थी।[६] इससे प्रकट होता है कि तत्कालीन समाज मे विवाह के समय कन्या पूर्ण युवती होती थी।

---

१. याज्ञवल्क्य स्मृति ३/६४।

२. ढोला मारू रा दूहा (नागरी प्रचारिणी सभा, काशी)।

३. राजा रसालु री वारता (ह. लि.) रा. प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।

४. 'कुवारी कन्या मिली रे, पाछे सीधउ थान रे।'

—मृगावती रास (ह. लि.)

५. पनर बरस की बाली वैस, रूप अचल अनै ऊपम वेश॥

—दामो कृत लखनसेन पदमावती कथा

६. जोवन आयो जीण समेजी, कुंअरी कीधो सोच।
मुरख पति मुझ जो मिले जी, सबलतो हांसी सोच॥

—विद्या विलास चौपई (ह. लि.)

वर चयन की पद्धति :

कन्याओ के वर चयन मे प्रमुख भाग परिवार वालो का ही होता था। कभी-कभी ब्राह्मण अथवा नाई को भेजकर, उसकी सूचना के आधार पर ही वर वधू का चयन कर लिया जाता था।[1] वर चयन की इस प्रणाली मे कभी-कभी धोखा भी हो जाया करता था। 'प्रेमलता प्रेम विलास' प्रेमाख्यान तथा 'चन्द्रराज चरित्र' मे राजकुमारी प्रेमलता और प्रेमलालछी के लिए कोढी वर चुन लिये गये थे। मध्ययुग मे यह प्रथा मुसलमानो मे भी प्रचलित थी। रिश्वत लेकर काजी ने बूवना के विवाह का नारेल जलाल को देने के स्थान पर बादशाह को दे दिया था।[2] ब्राह्मण, नाई या काजी को प्रलोभन देकर धोखाधडी सरलता से की जा सकती थी। विवाह के लिए शुभ 'लग्न' निकलना आवश्यक था। किन्तु इन प्रेमाख्यानो से यह भी स्पष्ट विदित होता है कि कन्याओ को वर-चयन की पूरी स्वतन्त्रता भी थी। 'पुण्यसार चौपई'[3] मे उल्लेख है कि जब रतनवती के पिता बिना उससे पूछे पुण्यसार से उसकी सगाई कर देते है तो, वह अग्नि मे जलने को तत्पर हो जाती है और जब गुण सागर को देखती है तो उसके रूप पर मुग्ध होकर अपने पिता से उसके साथ विवाह करने को कहती है। 'मानतुंग मानवती रास' मे भी रतनवती अपनी

---

१. सिह सुणि मनि थयो विचार,
ब्राह्मण एक तेड्यो तिणवार।
सात दिन साहो थापीयो,
पहुपावती पुरी कागल दीयो ॥१८१॥
—सदयवच्छ सावलिगा चउपई, पृ. स. १५५

२. जलाल गहाणी री बात (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

३. सुणज्ये तात सभाण,
बोलइ रतनवती वचन।
पावक पइससि प्राण,
पुण्यसार परणण पात ॥१॥
एक दिवस दीठा आवत, गुण सुन्दरि गज गेलि।
रतन सुन्दरी राग धरमा अति, मन मइं अपणइ मेलिजी।
तेडी तातनइ तुरत कहइते, मन मान्यो मुझ खत जी।
परणावउ गुण सुन्दर परयइ, खरी अछइ मण खत।
सेठइ जाण्यो भाव सुता को तुरत गयो तस पास जी।
—पुण्यसार चौपई, पृ. सं. १४०

इच्छानुसार वर का चयन करती है।[1] वर चयन मे कन्याये वर के रूप और गुण दोनो पर ध्यान देती थी। आजकल की भाँति ही तत्कालीन समाज मे वर-वधू की पसन्दगी के लिए उनके चित्रो के आदान-प्रदान की प्रथा थी। अधिकाश नायिकाओ ने नायको के गुण-श्रवण के पश्चात् चित्र-दर्शन से उनको पसन्द किया था।[2] विद्या विलास प्रेमाख्यान मे जीवन साथी के चुनाव के लिए आजकल की भाँति कोर्टशिप की प्रथा का भी सकेत मिलता है।[3]

विवाह के प्रकार :

गृह्य-सूत्र, धर्म सूत्र और स्मृतियो के समय से ही विवाह के आठ प्रकार कहे गए है, यथा—ब्राह्म, प्राजापत्य, आर्ष, दैव, गान्धर्व, आसुर, राक्षस और पैशाच। इन आठो प्रकारो को दो वर्गों में विभक्त कर सकते हैं। प्रथम वर्ग मे उस प्रकार के सभी विवाह आते थे जिनमे पिता का समस्त उत्तरदायित्व रहता था और वह अपनी इच्छानुसार योग्यवर ढूँढकर उसे कन्या देता था। इस वर्ग मे ब्राह्म, प्राजापत्य, आसुर, दैव और आर्ष विवाह आते हैं। दूसरे वर्ग मे वे विवाह आते थे जहा पिता योग्य वर ढूँढने मे असमर्थ होता था और लडकी को अपना वर ढूँढने की अनुमति देदी जाती थी या वह स्वय अपनी इच्छानुसार वर ढूँढकर विवाह कर लेती थी या उसे कोई व्यक्ति हरण कर लेता था। इस वर्ग मे गान्धर्व-विवाह, राक्षस विवाह आते है। स्वयवर भी दो प्रकार से होता था। एक मे कन्या को वरचयन की पूरी स्वतन्त्रता थी और दूसरे मे वर के लिए कोई शर्त को पूरा करना होता था।

राजस्थानी के प्रेमाख्यानो मे प्राजापत्य, गान्धर्व और राक्षस विवाह का

---

१. पथिक वचन सुण्या इसा, रतनवती लह्यो राग ॥
आतुर हुई परणवा, उजेतिश नै तेह।
गुणनि सुण्यो पर गरजी गया, रोये रोये नेह ॥
वर वखो उजेण पति नहि तो पावक पीऊ।
पुत्री कहायो मात ने वेग परणाओ मोहि ॥

—मानवती मानतु ग रास, (ह. लि)

२. पाटो कुँअर ले हाथ मे, चित्राम निर्मल लागो रे।
नख शिख सुन्दरता सहु, जोता बेन हे पग आगो रे ॥

—कमलावती चौपई (ह. लि.)

३. पहला परखी परणीए, तो न होवे तिल सोच।
सकल जनम सफलो हुवे, इसो कीयो आलोच ॥

—विद्या विलास (ह. लि.)

उल्लेख मिलता है। इन प्रेमाख्यानो मे स्वयंवर-प्रथा के ता अनेक उदाहरण मिलते है। अधिकाश नायिकायें स्वच्छद प्रेम की पक्षपाती होने से गधर्व विवाह के भी अनेक उदाहरण मिलते है, किन्तु इससे प्राजापत्य विवाह प्रणाली की प्रमुखता समाप्त नही हो पाती। गधर्व विवाह कर लेने के बाद भी नायक-नायिकाओ का विवाह प्राजापत्य, रीति से पुन सम्पन्न किया जाता था। रानी मृगावती[१], राजमती[२], पार्वती[३], मारवणी[४] आदि नायिकाओ का विवाह प्राजापत्य रीति से हुआ था।

स्वयवर प्रथा :

स्वयवर मे भी दो रीतिया प्रचलित थी। प्रथम मे वधू इच्छानुसार वर-चयन मे स्वतन्त्र रहती थी। 'मानतु ग मानवती रास' मे कनकवली स्वयवर मे आये अन्य सब राजाओ को छोडकर अपनी पसन्द के राजकुमार के गले मे वरमाला डालती है।[५] इस प्रकार दमयन्ती भी स्वयवर मे नल के गले मे वरमाला डालकर इच्छानुसार वर-चयन करती हैं। इनमें वर को किसी प्रकार की शर्त को पूरा नहीं करना पडता। स्वयवर की द्वितीय प्रणाली मे नायिका की प्राप्ति के लिए नायक को किसी शर्त को पूरा करना पडता है। उदाहरणार्थ 'चित्रसेन पद्मावती रतनसार चौपई' की नायिका पद्मावती के स्वयंवर मे धनुर्भ ग की शर्त रखी जाती है।[६] इसी भाँति 'मलय सुन्दरी कथा' मे भी 'वज्रसार' धनुष से लक्ष्य-बेध की शर्त रखी जाती है।

---

१. समयसुन्दर कृत मृगावती रास (ह लि.)।

२ नाल्ह कृत बीसलदेव रास।

३ महादेव पार्वती री वेलि, स० रावत सारस्वत (सा रा रिसर्च इन्स्टीट्यूट बीकानेर)।

४ ढोला मारू रा दूहा (ना. प्र सभा, काशी)।

५. कनकावती इम मलपती।
 करलेइ वरमाल ॥
 —मानतु ग मानवती रास (ह लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर

६. तीन प्रदिक्षणा धनुष नैं,
 देहने करे प्रणाम रे।
 धनु ग्रहीयो हाथ धनुष चढाय,
 कसीसी यौ टकार वलि कियो ताम रे ॥
 —चित्रसेन पदमावती रतनसार चौपई (ह. लि.)

स्वयंवर मण्डप की सजावट ·

जहा स्वयवर मण्डप वनाया जाता था, पहले वहाँ की धरती समतल की जाती थी। तदन्तर पानी का छिडकाव किया जाता था। फर्श पर जाजम बिछाई जाती थी। मण्डप के तोरण-द्वार वनाये जाते थे। तोरण द्वारो पर स्वर्ण की लटकनें झूलती थी। मोतियो की झालरें लटकाई जाती थी। भाति-भाँति के पुष्पो से सुशोभित मण्डप किन्नर और देवताओ के भी मन को मोहता था। मण्डप द्वार के स्थम्भो की पुतलिया वस्त्राभूपणो से सुसज्जित अप्सरायें प्रतीत होती थी।[1]

गधर्व-विवाह :

इन प्रेमाख्यानो मे वर्णित समाज मे स्वच्छन्द प्रेम की प्रथा प्रचलित थी। नायक-नायिका मे प्रथम दृष्टि मे ही प्रेम हो जाता था और प्रेमी-प्रेमिका अनेक प्रेम मे परिवार वालो और समाज को वाधा समझकर घर से भाग निकलते थे। वे वन में किसी देवी-देवता के मन्दिर मे अथवा कामदेव के मन्दिर मे जाकर गधर्व-विवाह कर लेते थे। इन प्रेमाख्यानो मे इस प्रकार के अनेक उदाहरण मिलते हैं। 'रणसिध कुमार चौपई' में राजकुमारी कमलावती राजकुमार रणसिध के साथ राजमहलो से भागकर वन मे दोनो गंधर्व-विवाह कर लेते हैं।[2] 'मानुतु ग मानवती चौपई मे मानवती वन मे अप्सरा वनकर राजा मानुतुंग से गधर्व-विवाह करती है। ये प्रेमी युगल वन मे गधर्व-विवाह के लिए रेत की ढेरी बनाकर उसकी चारो दिशाओ मे चार कलश रखते हैं और नदी को साक्षी वनाकर गंधर्व विवाह कर लेते

---

१. आणद सु राजा आवइ, सवटा मण्डप मडावई।
सरिषा धरती समरावइ, निरमल नीर छटावई॥
जाजिम जरवा फवि विछावइ, सकलाति कथीपउ सुहवाई।
लटकण सोनारा लटकइ, गुण पाम्पाते मणी गटकई॥
मोतियारा झालर झोल झाबकई, डूब करम झोलइ लाबी लटकई।
फूल माला परिमल महइ, सुर किन्नर मन मोहेए॥
पुतली थमा सिणगार गृहणे, गढे करी साज जाणे।
अपछर जोवाई, आजा यह नही रही लपटाई॥
—समयसुन्दर कृत नलराज चौपई (ह लि)

२. तिणि अवसर वन मइ तिहां, करि गंधर्व विवाह।
परण्या कुमरी कुमर छे, थयउ परम उछाह॥
—रणसिंघ कुमर चौपई (ह लि)

हैं ।[1] 'विद्या विलास' प्रेमाख्यान मे भी राजकुमारी सोहग सुन्दरी का धनसागर से पाठशाला मे पढते-पढते प्रेम हो जाता है और दोनो प्रेमी-प्रेमिका कामदेव के मन्दिर मे जाकर गधर्व-विवाह कर लेते हैं। वे अपने विवाह की साक्षी कामदेव को बनाते हैं और नीले बाँस रोपकर उसके चार फेरे लगाते हैं तथा जीवन-साथी होने के लिए परस्पर वचनबद्ध होते हैं ।[2] इस प्रकार हम देखते हैं कि इस युग मे गधर्व-विवाह की भी भिन्न-भिन्न रीतिया प्रचलित थी। नायक की तलवार के साथ भी फेरे देकर विवाह करने के उदाहरण मिलते हैं ।[3] मध्ययुग मे यह प्रथा प्रचलित थी कि जब वर-वधू बहुत दूर होते थे और निश्चित लग्न मे फेरे होना आवश्यक था तब नायक के खड्ग के साथ वधू के फेरे हो जाने पर विवाह वैध समझा जाता था। राजा रसालु के साथ राजा मान की लड़की का विवाह इसी रीति से हुआ था ।[4]

राक्षस-विवाह :

इस विवाह प्रथा के उदाहरण रुक्मणी मगल, 'वेलि क्रिस्न रुकमणि री' तथा 'उषा हरण' मे मिलते हैं। श्रीकृष्ण और उसके वशजो मे यह विवाह प्रथा बहुत प्रचलित थी। इन प्रेमाख्यानो मे नायक के द्वारा नायिका के हरण मे नायिका की भी सम्मति होती है। नायक द्वारा नायिका-हरण के अन्य भी उदाहरण मिलते हैं, यथा—राजपूत नीबा द्वारा सोनगिरा का हरण, नरबद द्वारा सुपियारदे का

---

१. चिहु दिशि च्यार कलश मिसै, रेण ना तु ग बनाय।
तरणी ना साखी करि, तिहा परण्यो प्यारी ने है राय ॥
—मानुतु ग मानवती चौपई (ह. लि.)

२ कामदेव साखी कीयो, फेरा फीरीयो चार।
बेल बध दे बेडील्या, आपस मे इणवार ॥
मूमा मूली फुली मानती, सर ज्याम करे स सनेह रे।
लेहने लीख मीतणा, कुट करे तिहा चार।
बीच मे नीला बास धर, कर ग्रहे कर तीण वार ॥
—विद्या विलास रास (ह लि)

३ हीरा मुंठ नग जडीले, आइ खडग हीरा,
जय रासम री लाइ, खेजडी जुगत।
डवडी दुधारा मूठ मुद्रा छडी तणै आरे,
सात फेरा ले खडी यो सादिया संगत ॥६६॥
—देव-चरित्र (ह. लि)

४. राजा रसालु री बात (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

हरण, वीरमदे द्वारा पना का हरण। किन्तु इन प्रेमाख्यानो में नायिकायें पहले से ही अन्य व्यक्तियो के साथ विवाहित होती है, अत यह उद्धरण राक्षस-विवाह के अन्तर्गत नही आ सकते, क्योकि राक्षस विवाह मे हरण की जाने वाली नायिका अविवाहित होती है।

विवाह के लिए शर्त रखने की प्रथा :

स्वयवर मे विवाह के लिए शर्त रखने की प्रथा का उल्लेख किया जा चुका है। प्राचीन काल मे सामान्य रूप से विवाह के लिए शर्त रखने के उदाहरण भी प्राप्त होते हैं। 'पद्मिनी चरित्र चौपई' मे पद्मिनी के लिए विवाह की शर्त थी कि वह उसी व्यक्ति के साथ विवाह करेगी जो उसके भाई को चौपड के खेल मे जीत लेगा।[1] 'बीजड बीजोगण री वात' प्रेमाख्यान मे बीजोगण के विवाह की शर्त गणित के कठिन प्रश्न हल कर देने की थी।[2] 'रतनपाल रतनवती रास' मे रतनवती के विवाह के लिए शर्त थी कि जो व्यक्ति राजा (रतनवती के पिता) का नेत्र रोग ठीक कर देगा, उसके साथ रतनवती का विवाह किया जायगा तथा दहेज मे आधा राज्य भी दिया जायगा।[3]

मनसा-वरण की प्रथा :

प्राचीनकाल मे कन्याओ द्वारा मनसा-वरण की प्रथा प्रचलित थी। कन्या किसी पथिक अथवा चारण ढाढी से किसी राजकुमार, श्रेष्ठी-पुत्र के गुण-सौन्दर्य का वर्णन सुनकर अथवा चित्र देखकर उस पर मुग्ध हो जाती थी और उससे विवाह करने का सकल्प कर लेती थी। अपने परिवार वालो को सखी के द्वारा या कभी-कभी स्वय भी अपने विवाह का निर्णय प्रकट कर देती थी और पिता को अपनी पुत्री का सकल्प पूरा करना पडता था।'चन्द्रराज चरित्र' मे राजकुमारी चन्द्रावती राजा वीरसेन के गुणो की प्रशसा सुनकर उससे मनसा-वरण कर लेती है।[4] 'मानतुग मानवती चरित्र' मे राजकुमारी रतनवती पथिक से राजा मानतुग के रूप की प्रशसा सुनकर मनसा-वरण कर लेती है और उसके पिता को राजा मानतुग के

---

१. जीपे बाधव नइ जिकारे, ते परणे भरतार।
तिण कारण मुझ राजीयो रे, पडह दीयो तिण बार ॥१५॥
—पद्मिनी चरित्र चौपई पृ स. ११

२. बीजड बीजोगण री बात (ह लि) बिडला सेन्टर लाइब्रेरी, पिलानी।

३. रतनपाल रतनवती रास (ह लि,) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

४. चन्द्रराज चौपई (ह लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

पास विवाह का प्रस्ताव भेजना पडना है ।[1] कभी-कभी खेल-खेल में ही विवाह हो जाता था और उस खेल मे हुए विवाह को भी वैध मानकर शास्त्रोक्त रीति से विवाह सम्पन्न कर लिया जाता था। 'बगडावता री बात' मे 'बाघजी' तीज के अवसर पर खेल-खेल मे ही कन्याओ से विवाह कर लेते हैं और बडी होने पर उन कन्याओ का लग्न नही निकलता तो 'बाघाजी' से उनका विवाह कर दिया जाता है ।[2]

बारात का वर्णन

वर आभूषणो से सुशोभित घोडे पर बैठता था। चारो ओर चार व्यक्ति चँवर ढोलते थे। वर के सिर पर छत्र-धारण होता था और आगे-आगे विप्र मत्र पढते चलते थे। वर के आगे नाना प्रकार के वस्त्र पहिने गणिकाये नाचती चलती थी और बन्दीजन यश का वर्णन करते चलते थे। बाराती वर के आगे पैदल चलते थे। नाना प्रकार के वाद्य-यन्त्र बजाते थे। घोडो और हाथियो पर नौबत निशान चलते थे। नगर-प्रवेश के समय गवाक्षो से आभूषणो से सुसज्जित सुन्दरिया वर को देखती थी ।[3] बारात के डेरे की शोभा का वर्णन 'देव-चरित्र' मे बडा सुन्दर हुआ है। बारात का 'ध्वज' जरी का बनाया जाता था। कनाते रेशमी वस्त्र की होती थी तथा जरी के तारो से चमकती थी ।[4] बाराती केसरिया कुसुमल रग के कपडे पहिनते थे। बारातियो की 'अफीम' से मनुहार की जाती थी और शराब के प्याले चलते थे। आतीशबाजी की भी प्रथा प्रचलित थी ।[5]

---

१ मानुतु ग मानवती चौपई (ह. लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

२. बगडावता री बात (ह. लि.) राजस्थानी शोध संस्थान, जोधपुर।

३. कवि भीम कृत सदयवत्स वीर प्रबन्ध, पृ स. ४५ से ४७। पद्य ३१७ से ३३० तक।

४. जरी दो वणायो भडा चालीयो नीसाण जरी,
तणाए रेसमा डोरी खडा खड हेम तणा,
जरी तार डेरा री, हवाह दीसै इसी झलै ।"

—देव-चरित्र (ह लि)

५. सारे ही साथ कसुमल केसरिया कीया, जलूस रा साज सारा ही साथलीया। बडा-बडा कस त्यारा नामफालारै है, तिके राग रग उचारै है। साथ मे ही अमला री मनवार करै है। नसारा पीवणरा प्याल भरै है। आतीस बाजी हवाया आसमा न छूटे है ।"

— रतना हमीर री वारता (ह. लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

दहेज-प्रथा :

समाज मे दहेज प्रथा प्रचलित थी। 'हथलेवे' मे राजा अपनी कन्या को वस्त्राभूषणो के अतिरिक्त हाथी, घोडे तथा सैकडो दासिया देता था। अपने राज्य के कुछ प्रात अथवा कभी-कभी आधा राज्य भी राजा अपनी कन्या को दहेज मे दे देता था।[1] मुसलमान बादशाहो मे भी दहेज देने की प्रथा प्रचलित थी।[2]

वधू-प्रस्तान के समय माता की सीख :

जब वधू वर के साथ अपने पितृ-गृह मे प्रस्थान करती थी तो माता उसे सुसराल मे समुचित रूप से रहन-सहन की तथा व्यवहार की सीख देती थी।[3] वर वधू रथ या पालकी मे बैठते थे।[4]

वर-वधू के लौटने पर नगर की सजावट :

राजकुमार जब वधू को लेकर नगर मे लौटता था, नगर की सजावट की जाती थी। सडको पर निर्मल जल से छिडकाव किया जाता था। मार्ग मे फूल

---

१. आधो हे सखि आधो हे देस मण्डार,
दासी हे सखी दासी हे दोय हजार,
हाथी हे सखि हाथी है हेवर हेम,
परिघल हे सखि परिघल छै पहिरावणी ॥१५४॥
—पद्मिनी चरित्र चौपई, पृ. सं. १३

सोवन जडित सिंगार बहु, मारवणी मुरलाई।
गय, हेय वर, दासी बहुत दीन्ही पीगल राई॥
साथे दीन्ही छोकरी, दीन्ही पीगल राव।
ढोलउ नरवर खडइ, आणंद अधिक उछाव॥
—ढोला मारू रा दूहा (ना. प्र. सभा, काशी)

२. "जलाल नै पातिसाह नै, दत्त दाय चौ देने सीख दीनी।"
—जलाल गाहणी री बात (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर

३. प्रिय पहिली उठनो प्रभाते, देव गुरू नाम ग्रहण सघाते। सासू, जेठानी, नणद पाए पड़िजे, पीव पहली भोजन मत कीजे। उत्तम कुल आचार आदरि जे।
—समयसुन्दर कृत नलराज चौपई (ह. लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर

४. भली परि भरतार सुवइटी बहिल मझारि।
पगि-पगि प्रेम वचनइं करी, संतोषी नल नारि॥
समय सुन्दर नलराज चौपई (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

बिछाये जाते थे। तोरण-द्वार बनाये जाते थे तथा घरो पर पंतग उडाये जाते थे।[1]

अन्तर्जातीय विवाह :

समाज मे जाति-भेद था। अपनी जाति को छोडकर अन्य जाति मे विवाह वर्जित था। 'पद्मावती पुष्पसेन' प्रेमाख्यान मे राजा जब अपने पुत्र पुष्पसेन का विवाह सेठ-पुत्री सुलोचना से करने की कहता है तो सुलोचना का पिता वैश्य-क्षत्रिय का जाति-भेद बतलाकर राजा के अनुरोध को अस्वीकृत कर देता है, पर अपनी पुत्री का सकल्प ज्ञात होने पर उसका विवाह पुष्पसेन से कर दिया जाता है।[2] इस भाति 'मधुमालती' में भी मालती के प्रणय-प्रस्ताव पर मधु ब्राह्मण और क्षत्रिय के जाति-बन्धन की बात उठाता है, किन्तु मालती का सच्चा प्रेम देखकर, दोनो गधर्व-विवाह कर लेते है।[3] इन उदाहरणो से यह विदित होता है कि विवाह में जाति-भेद की बाधा थी, किन्तु युवक-युवतियो के प्रेम-विवाह मे यह जाति-भेद की दीवार ढह जाती थी। विवाह मे नर-नारी का प्रेम बन्धन ही मुख्य था। राजस्थानी के प्रेमाख्यान अन्तर्जातीय-विवाह के उदाहरणो से भरे पडे हैं; विद्या-विलास में उल्लेख है कि, राजकुमारी सोहग-सुन्दरी जाति से क्षत्रिय थी और धन सागर वैश्य था, किन्तु दोनो ने प्रेम-विवाह किया था।[4] 'देव-चरित्र मे उल्लेख है कि बाघा ने जिन कन्याओ से विवाह किया था, उनमे ब्राह्मण, अग्रवाल आदि जातियो की कन्याये थी।[5]

---

१. लाखा फुलाणी रा जीत री करहुउ तिहा कोटवाल।
कचरउ बहुरासी गली, आबा करी निरमल नीर।
छाटवी फूल विषे स्वागत लिए बहुपरी॥
बाध्या तोरण बारि, घरि-घरि गुडी ऊँची ऊछलाई॥
नलराज चौपई (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

२. पुष्पसेन पद्मावती री बात (ह. लि.) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।

३ मधु जप मालती सुन्दरी जे, सत छोड केरा दिन जीजै।
तो मो गुरु एक पाठ पढाई, दूजी तू नृपति नी जाई॥
मधुमालती (ह. लि.) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।

४. विद्या विलास (ह लि.) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।

५. अगरवाल को भाणेज दादो, वरमाणी का पेट को।
वाघसिह रो पूत दादो, ग्यारह लोढो बारह बडो।
गुरुदेव री आण तेजो, ऊड़ता कागज बाचलै।
— देव-चरित्र (ह. लि.)

'मानुतुंग मानवती रास मे भी उल्लेख है कि राजा मानुतुग क्षत्रिय था तथा मानवती जाति से वैश्य थी ।[1] 'उत्तमकुमार रास' के नायक उत्तमकुमार ने जो जाति से क्षत्रिय था, राक्षस पुत्री मदालसा से विवाह किया था ।[2] 'सिंहल सुत चौपई' के क्षत्रिय नायक सिंहलकुमार ने वैश्य-कन्या धनवती तथा तापस की कन्या से विवाह किया था ।[3] 'प्रेमलता, प्रेमविलास प्रेमाख्यान की नायक-नायिका क्रमश क्षत्रिय और वैश्य जाति के थे ।[4] 'सदयवत्स वीर प्रबध' का नायक सदयवत्स भी जाति से क्षत्रिय था और सावलिंगा वैश्य-पुत्री थी ।[5] अनुलोम और प्रतिलोम दोनो ही प्रकार के विवाह होते थे । सोहग सुन्दरी जाति से क्षत्रिय थी, किन्तु उसका विवाह वैश्य-पुत्र से हुआ था ।[6]

बहु-विवाह :

समाज मे बहु-विवाह की प्रथा प्रचलित थी । कुछ तो सन्तानोत्पत्ति के लिए ही, एक पत्नि से सन्तान उत्पन्न नही होने पर दूसरा विवाह करना पडता था । राजा लोग राजनैतिक दृष्टि से भी अनेक राजकुमारियो से विवाह करते थे । इसके अतिरिक्त भी तत्कालीन समाज में एक पुरुष अनेक स्त्रियो से विवाह कर सकता था । राजाओ के रनवासो, बादशाहो के 'हरमो' मे अनेक स्त्रियां रहती थी । बादशाह अलाउद्दीन ने राधवचेतन से अपने 'हरम' की अनेक बेगमो की परीक्षा करके 'पद्मनी जाति की नारी छाटने के लिए कहा था ।[7]

समाज में नारी का स्थान

राजस्थानी-प्रेमाख्यानो के अध्ययन से प्रकट होता है कि तत्कालीन समाज मे पुरुष के समक्ष नारी का व्यक्तित्व हीन समझा जाता था । नारी के व्यक्तित्व का विकास नही हो पाया था । उसकी शोभा पुरुष की अधीनता मे ही समझी जाती

---

१. मानुतुग मानवती चरित्र (ह. लि) श्री श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर ।
२. उत्तमकुमार चरित्र चौपई (सा. रा. रिसर्च इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ. स. १४० ।
३. सिंहल सुत चौपई (समय सुन्दर रास पचक) सा. रा. रिसर्च इन्स्टीट्यूट, बीकानेर ।
४. भारतीय प्रेमाख्यान काव्य (डा० हरिकान्त श्रीवास्तव) पृ स. २८६ ।
५. कवि भीमकृत सत्यवत्स वीर प्रबंध (सा. रा. रिसर्च इन्स्टीट्यूट, बीकानेर ।)
६. विद्या विलास (ह लि.) रा. प्रा. वि. प्रतिष्ठान, जोधपुर ।
७. पद्मनी चरित्र चौपई (सा. रा. रिसर्च इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ. सं. ३४ ।

थी । नर के बिना नारी के करोड कलक लगने की सम्भावना रहती थी[1] तथा नर के समक्ष नारी की स्थिति गरुड के समक्ष चिडिया जैसी समझी जाती थी।[2] नारी पुरुष की दासी गिनी जाती थी[3] तथा उसका जन्म भी अधम गिना जाता था।[4] पति के स्वर्गवास पर पत्नि का मरना तो सतीत्व का प्रतीक था, किन्तु पत्नि के लिए पति मरने को तत्पर पुरुष की पग-पग पर निंदा होती थी।[5] पुरुष नारी के चरित्र पर सन्देह कर असहाय अवस्था मे घर से निकाल देता था अथवा वस्तु की भाति दूसरो को सौप देता था। 'रणसिंध कुमार चौपई' मे उल्लेख है कि कमलावती के चरित्र पर सन्देह कर रणसिंधकुमार उसे मत्री के द्वारा जगल मे छुड़वा देता है।[6] राजा रसालु[7] व लाखा फुलाणी[8] अपनी पत्नियो को वस्तु की तरह दूसरे व्यक्तियो को दे देते हैं। जटमल कृत गोरा बादल मे राणा रतनसिह 'पद्मावती' को अलाउद्दीन को देने के लिए तत्पर हो जाता था।[9] तत्कालीन समाज मे नारी पुरुष की

---

१. नर विण नारी एकली, लग्गई कोडि कलक ।
अग्गइ एक मह सस हिऊ, मुख उपयजि मयक ॥१५०॥
शशि विण निशि, दिशि दिवस विणु, जिम नदी विणु बारि ।
तिय सूदा ! (सम्मली भणई), नर विणु न सोहइ नारि ॥१५२॥
—सदयवत्स वीर प्रबन्ध, पृ स. २२

२ पालव बाध्यो जेहसुहो लाल, तेह थी किम हुई कूड ।
गुरुड आगलि चिडकलुहो लाल, किहा लगि जाइ गडि ॥
—मानतु ग मानवती रास (ह. लि.)

३. कीधउ मन मइ एणउ, नारी अधम अवतारो रे ।
—रणसिंध कुमार चौपई (ह. लि.)

४. नारी दासी नर तणी, जे जाणो सकल ससारो रे ।
—मानतु ग मानवती रास (ह. लि.)

५ नर केडइन नारी बलइ, निंदा करइ न कोई ।
नारी केड़उ नर बलमइ, पग-पग निंदा होई ॥
—रणसिध कुमार चौपई (ह. लि.)

६. रणसिंध कुमार चौपई (ह. लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर ।

७ राजा रसालु री बात (ह लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर ।

८ लाखा फुलाणी री बात (ह. लि.) रा प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर ।

९. जटमल कृत गोरा बादल चौपई (सा. रा रिसर्च इन्स्टीट्यूट, बीकानेर), पृ. सं. १९७ ।

सम्पत्ति समझी जाती थी। पुरुष की सम्पत्ति जर, जमीन, जोरू मे जोरू अर्थात स्त्री का स्थान तीसरी श्रेणी मे था। कन्या का जन्म लेना परिवार पर भार समझा जाता था। माता-पिता अपनी कन्या को निकालने के लिए अनमेल विवाह भी कर देते थे। गुलाबा का कुरूप व्यक्ति से[1] तथा 'रतना' का वृद्ध व्यक्ति से विवाह किया था।[2] इस प्रकार के अनमेल विवाहो से कभी-कभी सामाजिक समस्यायें उत्पन्न हो जाती थी। नारी के चरित्र की सदोपता के बारे मे भी अनेक धारणाये समाज मे प्रचलित थी। वह अविश्वसनीय समझी जाती थी, यहा तक कि सदयवत्स ने उसे कार्तिक मास मे कुतिया के स्वभाव वाली कहा है।[3] गणपति ने माधवानल काम-कन्दला प्रबध मे नारी की सदोपता पुराणो से अनेक उदाहरण देकर पुष्टि की है।[4] इन प्रेमाख्यानो मे नारी के दुर्बल पक्ष लेकर लिखे गये त्रिया-चरित्र के अनेक उदारहण मिलते हैं।

तत्कालीन समाज मे नारी के प्रति जहा हीनता का दृष्टिकोण था, वहा नारी के प्रति उच्च भावना के भी अनेक उदाहरण मिलते है। पटरानी के रूप में नारी का व्यक्तित्व ऊँचा था। वह राजा को शासन सचालन मे परामर्श दिया करती थी। उसका सम्मान भी समाज मे बहुत था। मलियासुन्दरी प्रेमाख्यान मे राजा महा-धवल अपनी रानी चम्पक माला के लिए वियोग मे 'आत्मदाह' के लिए तत्पर हो जाता है।[5] इस भाति रणसिंध कुमार भी अपनी पत्नि की निर्दोषता का पता लगने पर उसकी प्रताडना करने का प्रायश्चित करने के लिए चिता मे जलने को तत्पर हो जाता है।[6] रानी मृगावती, दमयन्ती, मलयासुन्दरी, कमलावती, मारवणी आदि अनेक नारिया अपने शील-धर्म के कारण आदरणीय हुई है।

---

१. नाह अमावस रैन सौ, गुलाबा पुनम चद।
—गुलाबा भवरा री वारता (ह. लि.) रा शोध सस्थान, जोधपुर

२. रतना हमीर री वारता (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

३. खिणिक दोस, खिणि रोस, खिणि इक्या वहइ।
परिहा, काती कुत्ती जेम, फिस्ती तिम रहइ ॥२८५॥
तिय वेसास मत करो, तिया किसकी नाहि।
मुझ मूक्यो इहा विलवतो, रग रली रसमाहि ॥२८८॥
—केशव कृत सदयवच्छ सावलिगा चउपई, पृ. सं. १६६

४. गणपति कृत माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध, पृ. स. १५८, २८१ से २८४।

५. मलय सुन्दरी कथा (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

६. रणसिंध कुमार चौपई (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

मध्यकालीन समाज में नारी के प्रति जो हीनता की भावना समाज में व्याप्त होगई थी, उसके प्रति नारी मे आक्रोश और विद्रोह की भावना के भी अनेक उदाहरण मिलते हैं। अनेक कुमारियो ने अपने जीवन-साथी के चयन मे माता-पिता की अनुमति तथा अन्य सामाजिक रूढ़ियो को ठुकरा दिया था और अपने स्वतन्त्र व्यक्तित्व का परिचय दिया था। 'पुण्यसार चौपई' मे उल्लेख है कि रतनवती का पिता जब उसकी सगाई पुण्यसार से कर देता है तो वह अपने पिता के निर्णय को ठुकरा कर विरोध मे चिता मे जलने को तत्पर हो जाती है। पुण्यसार के प्रति रतनवती के आक्रोश का कारण पाठशाला मे पढते समय दोनो मे हुआ परस्पर का विवाद होता है जिसमे पुण्यसार के नारी के प्रति हीन विचार सुनकर, उससे विवाह न करने का सकल्प कर लेती है। वह अन्य युवक गुण सुन्दर पर मोहित होकर अपने पिता से उसके साथ विवाह करने के लिए स्पष्ट शब्दो मे कह देती है और पिता को अपनी कन्या की इच्छा के सम्मुख झुकना पडता है।[1] कुछ उदाहरण, अपने अधिकारो के प्रति नारी की सचेष्टता के भी मिलते हैं। 'मानतु ग मानवती रास' मे उल्लेख है कि उपवन मे सम्पन्न रात्री कालीन गोष्ठी मे मानवती और उसकी सखियो मे स्त्री-पुरुष के अधिकारो को लेकर वाद-विवाद चलता है, जिसमे मानवती पुरुष से नारी को अधिक गुणवान् बतलाकर भावी पति को अपना 'चरणोदक' पिलाने का सकल्प करती है।[2] तत्कालीन समाज मे पतिव्रत धर्म की महत्ता थी, किन्तु कुछ क्षत्रिय नारियो ने अशक्त, कायर क्रूर पति से मुक्ति पाने के लिए विद्रोह भी किया था। 'वीरमदे री बात' से विदित होता है कि राजकुमारी सोनिगरा का विवाह जब वृद्ध लाखणसी से कर दिया जाता है तो मार्ग मे सोनिगरा नीबा राजपूत के पोरुप को देखकर मुग्ध हो जाती है और दासी के साथ नीबा को अपना हरण करने के लिए सन्देश भेजती है। सकेत पाकर नीबा सोनिगरा का

---

१. पुण्यसार चौपई (सा. रा. रिसर्च इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ. स. १२७।

२. मानवती तदा हो लाल,
बोली भ्रूकुटी चढाव।
जुवती जोरावर जो हई लाल,
वालिम थई रहे दास॥
प्रीउ ने वशि नारी थह हो लाल,
जनम अलेखे तास।
"पीस्यई चरणोदक प्रीउ,
जीमस्ये जूठू अन्न॥"
मानतुंग मानवती रास (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

हरण कर लेता है।[3] 'सुपियारदे री बात' मे भी उल्लेख है कि सुपियारदे अपने विवाहित पति नरसिंघदास के उत्पीडन से मस्त होकर 'नरवद' को हरण कर ले जाने के लिए गुप्त-सन्देश भेजती है तथा नरवद नरसिंघदास को युद्ध मे मारकर सुपियारदे को ले जाता है।[1] ये दोनो ही क्षत्रिय रानियाँ थी और इनका व्यक्तित्व भी ऐतिहासिक है।

तत्कालीन समाज मे नारी शिक्षा का प्रचलन था तथा सह शिक्षा का भी प्रचलन था। स्त्रियो को ललित-कलाओ की शिक्षा दी जाती थी। इन प्रेमाख्यानो की अनेक नायिकाये नृत्य-कला, नाट्य-कला, चित्र-कला, काव्य आदि ललित-कलाओ मे निपुण थी। मध्ययुगीन समाज मे बहु-पत्नि प्रथा का तो प्रचलन था, किन्तु नारी का पति एक ही हो सकता था। पतिव्रत धर्म की महिमा का बहुत महत्व था। विवाह का बन्धन पवित्र समझा जाता था। किन्तु इन प्रेमाख्यानो मे उल्लेख मिलता है कि कुछ नारियो ने इस क्षेत्र मे भी पुरुष के एकाधिकार के प्रति विद्रोह किया। निम्न-वर्ग मे 'नाता' अर्थात् तलाक प्रथा प्रचलित थी, किन्तु उच्च वर्ग मे नही। अत. 'फूलजी फूलमती री वारता', 'पना वीरमदे री वारता', 'रतना हमीर री वारता', 'गुलावा भवरा री वारता', 'जलाल गहाणी री बात' आदि प्रेमाख्यानो की नायिकाओ ने विवाह के क्षेत्र मे पुरुष के एकाधिकार के प्रति विद्रोह किया और इनमे विवाह के पवित्र-बन्धन की मान्यता को ठुकरा दिया। इनमे से कुछ नायिकाये तो अपने विवाहित पति को छोडकर प्रेमी के साथ भाग गई तथा गुलावा, फूलमती आदि कुछ नायिकाओ ने पति और प्रेमी, दोनो के साथ सम्बन्ध बनाये रखा। कुछ प्रेमाख्यानकारो ने नारी को भी उपपति रखने का समर्थन किया था। 'गुलावा भवरा री वारता' का लेखक तो उपपति-प्रथा का समर्थन करता हुआ लिखता है कि नारी को पति के अतिरिक्त प्रेमी को भी रखने का अधिकार है। वस्तुत ये दोनो ही उसके पति है किन्तु अन्तर केवल यही है कि एक विवाह-सस्कार से प्राप्त है और दूसरा प्रेम-बन्धन से। इन दोनो मे कोई भेद नही है और जो नारी इन

---

१. "इसो सुणै ने छोकरी जार वनै पाछो कह्यो। सोनिगरा पाछी मेली। तू जा पूछे आवी राव लाखण सी री परणी सोनिगरा कान्हडदे री बेटी थाहसु राखणी आवै तो थाहरो घरै आवु। रथ जोताय नै सोनिगरा चाली। तिसै नीवोजी अध कोस साभा आया। घोड़ा सु उतर नै रथ माहै पधारीया। सोनीगरा सु मीलीया।"
वीरमदे सोनगिरा री बात (ह. लि.) रा प्रा. प्रतिष्ठान, जोधपुर।

२. सुपियारदे री बात (ह. लि.) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।

दोनो की निष्ठापूर्वक सेवा करती है वह गगा के समान पवित्र है तथा उसकी सद्गति होती है।[1] उक्त दृष्टिकोण तत्कालीन समाज मे नर-नारी के बदलते हुए सम्बन्धो को प्रकट करता है।

विधवा-विवाह :

साधारणतः उच्च वर्ग मे विधवा-विवाह का प्रचलन नही था, किन्तु इसके भी अपवाद मिलते हैं। अजमेर के सेठ लीलासाह की पुत्री लीलावती विधवा थी, किन्तु विधवा होते हुए भी हरिराम चौहान से उसे गर्भ रह जाने के कारण उसका पुनर्विवाह हरिराम से कर दिया था।[2]

पर्दा-प्रथा ·

तत्कालीन समाज मे पर्दा प्रथा का प्रचलन था। रानिया अन्त पुर में निवास करती थी। अन्त पुर मे राजा के अतिरिक्त कोई भी पुरुष प्रवेश नही कर सकता था। बादशाह अलाउद्दीन के 'हरम' मे भी अनेक बेगमे थीं और बादशाह के अतिरिक्त हरम में अन्य पुरुष के प्रवेश का निषेध था। 'हरम' मे काम करने के लिए दासियो के अतिरिक्त 'खोजे' रहते थे। बादशाह के आदेशानुसार राघव चेतन ने भी 'हरम' की बेगमो में से पद्मिनी स्त्री की जाच बेगमो का प्रतिबिंब देखकर ही की थी।[3] 'जलाल गहाणी री बात' से विदित होता है कि महिलायें पर्दे मे रहती थीं। बादशाह की बारात जब लौट रही थी तो मार्ग मे विश्राम करते समय बेगमो के लिए अलग कनाते तनाई गई थी।[4] जिन महलो मे रानिया तथा बेगमे रहती थी,

---

१. नारी के पति एक है, ताके भेद जू दोय।
इक हथलेवै हाथ दे, इक हित बध्योज होय।
इन दोउन को दोय नही, करत सेव इक सग।
सद्गति पावै नारि सौ, मानौ परसत गग॥
गुलाबा भवरा री वारता (ह. लि.) रा. शोध सस्थान, जोधपुर।

२. बगडावता री बात (ह. लि.) राजस्थानी शोध सस्थान, जोधपुर।

३. राघव कहै नरिंद 'सुनि गर महल मे न जाय।
छाप देखू तेल मे, नारी देउ बताय॥५०॥
सकल नारि प्रतिबिब निरखयो रे, बैठी मणिगृह माहि।
देखी हरम हस्तनी, चित्रणी रे, यामें पद्मणी नाहि॥५४॥
—गोरा बादल चौपई, पृ. स. १९२

४. जलाल गहाणी री वारता (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

वहाँ सख्त पहरा दिया जाता था। मध्ययुग के समाज में घूंघट प्रथा का भी प्रचलन था।[1]

सती प्रथा :

मध्ययुगीन समाज मे सती-प्रथा का महत्वपूर्ण स्थान था। जौहर की प्रथा भी प्रचलित थी। शत्रुओ के स्पर्श द्वारा कलंकित होने से बचने के लिए क्षत्रिय नारियां सामूहिक रूप से अग्नि-कुण्ड मे कूदकर भस्म हो जाती थी। कुछ मुस्लिम महिलाओ ने भी इस प्रथा को अपनाया था। यद्यपि ऐसी मुस्लिम नारिया मुसलमान पिता और क्षत्रिय नारी से उत्पन्न सन्ताने थी। बादशाह अलाउद्दीन की शाहजादी फातिमा का वीरमदे के साथ विधिवत् विवाह नही हुआ था, किन्तु उसके द्वारा वीरमदे को मनसा-वरण कर लिए जाने पर भी वह वीरमदे की मृत्यु हो जाने पर उसके साथ सती हो गई थी।[2] हिन्दू-मुस्लिम सांस्कृतिक समन्वय का यह एक अच्छा उदाहरण है।

वेश्या-वृत्ति :

प्राचीनकाल से ही भारत मे वेश्या-वृत्ति का प्रचलन रहा है। जातककालीन समाज मे वेश्या का पद प्रतिष्ठा का था। जातको मे उसे 'जन-पद-कल्याणी' के नाम से सम्बोधित किया गया है। तत्कालीन शासन-व्यवस्था मे भी उसका प्रमुख स्थान था। 'कुसधम्म जातक' के वेश्या को भी कुरु धर्म अपनाना पडता था।[3] भगवान् बुद्ध ने वेश्याओ के लिए भी 'पंचशील' का व्रत लेने की बात कही है। भगवान् महावीर स्वामी के मतानुसार भी वेश्याये धर्म मे दीक्षित हो सकती थी। कौटिल्य ने भी अपने प्रसिद्ध अर्थ-शास्त्र मे सर्वांगपूर्ण शासन के लिए वेश्या का अस्तित्व

---

१. 'गूंघट उजरा गाठसू, अ घूठो लजकाणों।'
—पनां वीरमदे री बात (ह. लि.) दादावाड़ी, अजमेर

२. चदण रो घर करनै गोद मैं धड माथो मेल नै सती हुई। साह बेगम कै ने वीरमदे कै रूसणो भागो। पातिसाह पाछो दिली गयो।
वीरमदे सोनगिरा री बात (ह. लि.) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।

३. राजा, माता, महेशीच, उपराजा, पुरोहितो।
रज्जु को सारथी, सेट्ठी, दोणो, दो वरिको तथा,
गणिका तेका दस जना कुरु धम्मे पतिट्ठिता॥

माना है, किन्तु उनके लिए शील धर्म के पालन की चर्चा नही की है।[1] 'सिरिथूलि फागु' नामक राजस्थानी के प्रेमाख्यान से विदित होता है कि मगध के राजा नद के मत्री शकटार का पुत्र स्थूलिभद्र कोशा नाम की गणिका के प्रेम-पाश मे बधकर, उसके यहा १२ वर्ष तक रहा था और जैन-धर्म मे दीक्षित होकर मुनि बनने के बाद भी 'चतुर्थ मास' अपनी पूर्व प्रेमिका कोशा के निवास स्थान पर व्यतीत किया था। बाद मे कोशा ने भी अपने प्रियतम का अनुसरण करके जैन-धर्म की दीक्षा लेकर वैराग्य ले लिया था।[2] इससे विदित होता है कि यद्यपि कोटिल्य ने वेश्याओ के लिए 'शील-धर्म पालन' का उल्लेख नही किया है, किन्तु तत्कालीन समाज मे कुछ वेश्याये भी शील-धर्म का पालनकर मान्य पदवी को प्राप्त हुई थी। विक्रमादित्य के समय भी यह परम्परा प्रचलित थी। 'माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध' की नायिका कामकन्दला भी गणिका थी और राज नर्तकी के रूप मे उसकी बहुत प्रतिष्ठा थी। कामकन्दला का माधव के साथ प्रेम होने पर जिस प्रेम-निष्ठा, त्याग, समर्पण और शील-धर्म का परिचय दिया, उससे प्रभावित होकर राजा विक्रमादित्य को भी बीच मे पडकर माधव को कामकन्दला दिलवाने के लिए कामावती के राजा से सघर्ष करना पडा था। अपने शील-धर्म के कारण उसकी सीता, सावित्री से समता की गई है।[3] तत्कालीन समाज मे गणिका से राजकुमार विवाह तक कर लेते थे। 'उत्तम कुमार चौपई' मे वर्णन है कि राजकुमार उत्तम कुमार गणिका अनग सेना के प्रेम मे पडकर उससे विवाह कर लेता है।[4] सदयवत्स के प्रेम में पडकर गणिका कामसेना अपने प्राणोत्सर्ग के लिए तत्पर हो गई थी।[5]

---

१. सज्ञा भाषान्तर ज्ञाश्च, स्त्रियस्तेषाम नात्यसु।
चार घात प्रमादार्थं प्रयोज्या बन्धु वाहना.॥
—अर्थ शास्त्र, अधि. २, पृ. स. ४४, २३

२. सिरिथूलि भद्र फागु (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

३. उत्तम कुल जे अवतरे, पालइ उत्तम रीति।
अचरज केहो चित्र भो, जो वास बासइ मीति॥
इक वेश्या कुल अवतरी, सर जोवन धन लीन।
तोहि निरमल पालिउ, कामकन्दला सील॥
—कुशललाभ कृत माधवानल कामकन्दला (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

४. उत्तम कुमार चरित्र चौपई (सा. रा. रि. इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ स. १८७।

५. सदयवत्स वीर प्रबन्ध (सा. रा. रिसर्च इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ. सं. ६५।

समाज मे वेश्याओ का अस्तित्व अनैतिकता का द्योतक है, किन्तु तत्कालीन समाज में वेश्या-वृत्ति का बाहुल्य था। 'सदयवत्स वीर प्रबन्ध' मे वेश्या-समुदाय का वर्णन मिलता है। कामसेना वेश्या को सूली के दण्ड से मुक्ति दिलवाने के लिए वेश्याओ का समुदाय राज-सभा मे राजा से विनय करने गया था। वेश्याये धनी व्यक्ति से किस प्रकार प्रपच रचकर धन हडपती थी इसका भी उदाहरण सदयवत्स वीर प्रबन्ध' मे मिलता है। स्वप्न मे गणिका के साथ-साथ रमण करने पर सेठ-पुत्र से उसने पाच सहस्त्र मुद्राये मागी थी।[1] कुशललाभ ने तत्कालीन समाज की विलासप्रियता का वर्णन करते हुए लिखा है कि राजा के अन्त पुर मे सोलह सहस्त्र स्त्रिया थी और नगर मे छह सहस्त्र वेश्यायें निवास करती थी।[2] गणपति ने 'माधवानल कामकन्दला' मे वेश्या-जीवन का विस्तारपूर्वक वर्णन किया है। कामकन्दला के यहां से माधव के चले जाने के उपरान्त कामकन्दला को वेश्याओ ने समझाने का प्रयत्न किया। उस समय उनके प्रकट किये विचारो से तत्कालीन वेश्या-समाज के रहन-सहन तथा विचारो का पता चलता है।[3] मध्ययुग मे वेश्यावृत्ति का प्रचार रहा। सैनिको के मनोरजन के लिए रण-क्षेत्र मे भी वेश्याओ को ले जाया जाता था। विवाह आदि मागलिक कार्यों मे भी वेश्याओ का स्थान था। बारात के आगे-आगे वेश्याये मागलिक गीत गाती चलती थो।

सामाजिक रीति-रिवाज और मान्यतायें :

तत्कालीन समाज में तिथि विशेष की महत्ता पर विशेत बल दिया जाता था। ऐसी मान्यता थी कि कलयुग मे त्रियोदशी एवं चतुर्दशी देवताओ के दिन हैं। 'अमावस्या' और पूर्णिमा को पति-पत्नि के ससर्ग का विषेध था। गणपति ने 'माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध' मे तिथियो के महात्म्य का उल्लेख किया है। यथा—देवदशमी एव एकादशी के दिन विष्णु भगवान् का विशेष महात्म्य

---

१. सदयवत्स वीर प्रबन्ध (सा. रा. रिसर्च इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ. स. ६३, ६४ (छन्द स. ४४४ से ४५६ तक)।

२. सोलह सहस अ तेऊरि धरिय नारि।
छह सहस वेस्या नगर मझारि ॥
—कुशललाभ कृत माधवानल कामकन्दला (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

३. गणपति कृत माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध, पृ. स. १४० से १४३ तक।

बतलाया है ।[1]

तत्कालीन समाज में स्त्री, ब्राह्मण, बालक, गाय को अवध्य समझा जाता था। वेद और पुराणो की निंदा करना अथवा उन्हे हानि पहुचाना भी अक्षम्य अपराध गिना जाता था।[2] पूर्व जन्म मे लोगो का विश्वास था। अनेक प्रेमाख्यान पूर्व जन्म सम्बन्धी विश्वासो से भरे पडे हैं। माधव और कामकन्दला पूर्व जन्म मे गंधर्व और अप्सरा थी।[3] जैन प्रेमाख्यानो मे नायक-नायिकाओ पर जो सकट आये हैं, वह पूर्व-जन्म के कार्यों का ही फल बतलाया गया है। सदयवत्स सावलिगा की तो आठ भवो तक की कहानी उपलब्ध है। बादशाह अलाउद्दीन की बेटी फातिमा वीरमदे को अपने पूर्वभव का पति मानकर अविवाहित होते हुए भी उसके साथ सती हो गई थी।[4] स्वप्न मे घटित घटनाओ पर भी विश्वास किया जाता था। 'उत्तम कुमार चरित्र' से विदित होता है कि रानी ने जब स्वप्न में सफेद हाथी देखा तो उसे उत्तम गुणो वाले राजकुमार के जन्म का द्योतक बतलाया गया।[5] स्वप्न मे कुल देवता अथवा भगवान् द्वारा वरदान देने का विश्वास भी प्रचलित था।[6] लोग भाग्य

---

१. देव दसमी एकादशी, हरि वासर जे होई।
पुण्य प्रथमते पारण्ह, द्वादस की दिन जोई॥
कलियुग आदि त्रयोदशी, चौदशी ईश अनंत।
आमा नइ पूनिम प्रगट, नारि न देखइ कंत॥
—गणपति कृत माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध, पृ स. १४३, १४४

२. स्त्री, ब्राह्मण, बालक, गाय। वेद पुराण अवध्य कहाई॥
—गणपति कृत माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध

३. चिहु कुच विच भमरो आवियो, पूख भव तिहा जणावियो।
जाति स्मरण लहे विरतत, हूं अपछर मुझ माधव कत्त॥
माहे माहे निरखे जेम, तिम तिम विहु जणा वाधे प्रेम॥
— गणपति माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध

४. तिसै दूसरे दिन दरवार आवता वेगम नै वीरमदे दिखायो। तिसै कवर ने देखने सनेह जागीयो सो पुरवला भवरा खावद छै।
—वीरमदे सोनगिरा री वात (ह लि) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर

५. उत्तम कुमार चरित्र चौपई, (सा रा. रिसर्च इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) छद सख्या २ व ३, पृ. स १११।

६. एक रति प्रोहित दुखधरी, सुतहं सुहिणइ ओयाहरि।
सामलि प्रोहित सकर दास, हू तूठो तुझ पुरु आस॥
—गणपति कृत माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध

पर अटूट विश्वास रखते थे।[1] जन साधारण का 'शकुन' पर भी दृढ विश्वास था। उनका जीवन शुभ, अशुभ शकुनो के अनुसार संचालित होता था। परदेश जाते समय घर से निकलने पर यदि मार्ग मे दाहिनी ओर गधा मैथुन करता हुआ मिले, सधवा स्त्री तथा दक्षिण दिशा मे हिरण मिले तो शुभ शकुन समझा जाता था।[2] 'सदयवत्स वीर प्रवन्ध' मे भी शकुन-मीमांसा विस्तृत रूप मे दी है। सीमन्तोत्सव के लिए जाती हुई गर्भवती ब्राह्मणी को जो अपशकुन हुए थे, उन अपशकुनो से स्त्रियो ने गर्भपात होने, अस्वस्थ होने आदि की कल्पना की थी।[3] तत्कालीन समाज मे यह भी विश्वास प्रचलित था कि यदि परदेश जाते हुए सूर्योदय के समय मार्ग मे दाहिनी ओर भरा हुआ खप्पर लिए योगण मिले तो व्यक्ति को वहुत वडी सम्पति मिलती है।[4] ज्योतिष मे तथा भविष्य-फल मे लोगो की गहरी आस्था थी। समाज मे ज्योतिषियो का वडा सम्मान होता था। राजा भी उनका वहुत आदर करता था। राघव चेतन की पहुच पहले राणा रतनसिंह के और वाद में अलाउद्दीन के दरबार मे ज्योतिष-विद्या के कारण हुई थी।[5] 'सदयवत्स वीर प्रवन्ध' मे उल्लेख है कि

---

१ जु रवि पश्चिम भग गइ, मेरु चलइ मही माही।
विहि तणा पणि जे लख्या, चतुरन-वूकइ क्याहि॥
—गणपति कृत माधवानल कामकन्दला प्रवन्ध

लाख सयापण कोड़ वुध, कर देखो सव कोय।
अण हुणी हुणी नही, होनी हुवै सु होय॥
—नागजी नागवती री वारता (ह. लि.) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर

२. मारगि खर मिथुन करइ, जिमणा जाजहर्ण।
साहमी, सधव मिलइ बहु, वाहू पहिरी आपर्ण॥
गाम नमी जव चालिउ, दक्षिण हुवउ कुरंग।
माधव नम सिउ चितवइ, अ्हे शकुन सुचंग॥
—गणपति कृत माधवानल कामकन्दला पवन्ध, पृ. म. ४५१

३ सदयवत्स वीर प्रवन्ध (सा रा. रिसर्च इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ. स ८।

४. भरि खप्पर भणती उदउ, जोगिणि जियणी जाई।
सुणि सामली (सूदउ भणइ) तू सह त्रिभुवन पाई॥
—सदयवत्स वीर प्रवन्ध (शकुन मीमासा, छद १६७ से १७५ तक) पृ स. २४, २५।

५. पद्मिनी चरित्र चौपई (सा. रा. रिसर्च इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ. स २४ व २६।

राजा ज्योतिषी-ब्राह्मण से जयमगल हाथी का मृत्यु-दिन जानना चाहता है।[1] लोगों का नक्षत्रो पर अटूट विश्वास था। 'पुख नक्षत्र' मे कन्या का जन्म लेना शुभ माना जाता था।[2] 'ससी पना री बात' मे उल्लेख है कि मूल-नक्षत्र मे कन्या का जन्म लेना अशुभ गिना जाता था। मूल-नक्षत्र मे जन्म लेने पर अनिष्ट की आशका से ससी को नदी मे बहा दिया गया था।[3] जन साधारण मे साधुओ के प्रति भक्तिभाव था तथा अथिति सत्कार श्रद्धा पूर्वक किया जाता था। द्वार पर आये भिक्षुक को खाली हाथ नही लौटाया जाता था।[4] स्त्रिया अपने बिछुडे हुए पति की प्राप्ति के लिए तीर्थों पर जाकर मौन-व्रत लेती थीं। धनवती ने अपने प्रियतम की प्राप्ति के लिए प्रियमेलक तीर्थ पर जाकर मौन-व्रत लिया था।[5] कन्याये उत्तम वर की प्राप्ति के लिए गोरो की पूजा किया करती थी। हँसाउली ने पार्वती की पूजा करके राजा विक्रम को वर के रूप मे मागा था।[6] समाज मे 'कुटनिया' भी होती थी जो भोली-भाली स्त्रियो को बहकाकर पर-पुरुष से सम्भोग के लिए प्रेरित करकी थी। प्रेमी-प्रेमिकाओ मे एक दूसरे के प्रति सन्देह उत्पन्न करने के लिए इनका उपयोग किया जाता था। रतनवती, कमलावती और रणसिंघ कुमार मे 'गधमूसिया' कूटनी भेजकर भेद उत्पन्न करती है। प्रायश्चित के रूप मे 'आत्मदाह' की प्रथा भी प्रचलित थी। रणसिंघ कुमार को अपनी पत्नि कमलावती की निर्दोषता का जब पता चलता है तो वह अपने क्रूर व्यवहार के प्रायश्चित के रूप मे चिता मे जलने को तत्पर हो जाता है।[7] विष कन्याओ का प्रयोग भी प्रचलित था। कोढी राजकुमार सिंहरथ ने

---

१. सदयवत्स वीर प्रबन्ध (सा. रा. रिसर्च इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) श्लोक स १८, १९, पृ. सं. ४, ५।

२. पना वीरमदे री वारता (ह. लि.) दादावाडी, अजमेर।

३. 'तब काजी कह्या-यह लडकी राखणी नही, बुरे न खी हुई।'

—ससी पना री वात (ह. लि.) राजस्थानी शोध सस्थान, जोधपुर

४. सदयवत्स वीर प्रबन्ध, छद सख्या ३५९ से ३६४, पृ. स १७४।

५. सिंहल सुत चौपई (समय सुन्दर रास पचक, प्रकाशक—सा. रा. रिसच इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) छद सख्या १२ व १३, पृ. स ६।

६. हंसावती विक्रम विवाह, प्रकाशन—श्री फार्बस गुजराती सभा, बम्बई, (१९६५)।

७. इम कहियो ताना पुरुष तेडा एम कहहे।
चिता करउ घर बारणई काष्ठ आणह॥

—रणसिंघ कुमार चौपई (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर

प्रेमला पर विष-कन्या होने का मिथ्यारोप लगाया था।[1] यह मान्यता भी प्रचलित थी कि अधिक दिनो तक स्त्री का पीहर रहना तथा पुरुष का सुसराल रहना परिवार की 'रिद्धि-सिद्धि' के लिए हानिकारक था।[2] वचन-पालन के प्रति दृढ आस्था थी। 'सदयवच्छ सावलिगा चउपई' मे उल्लेख है कि चाहे व्यक्ति को धन, धरती, धर्म, सतीत्व एव पतिप्रेम, इन सबका त्याग भी करना पडे तो दिये गये वचनो का पालन अवश्य करना चाहिये।[3] तत्कालीन समाज मे स्वामी धर्म का पालन बडे पुण्य का कार्य समझा जाता था। 'गोरा बादल' ने पद्मावती के शील की रक्षा के लिए अपने प्राणो की भी बलि देदी थी।[4] मध्ययुग मे वीरो की शुभ कामना के लिए 'लूण उतारने' की प्रथा भी प्रचलित थी।[5] तोरण पर आये हुए वर पर से भी 'लूण उतारने' का कार्य डावडी (कन्या) करती थी। वधू पर से भी 'राई लूण' उतारा जाता था। जब नागवन्ती के विवाह के लिए बारात आई थी, तब उसके प्रेमी नागजी ने स्त्री-वेश मे जाकर नागवन्ती पर से 'राई लूण' उतारा था।[6] समाज मे 'पगडी बदल' भाई होने की प्रथा थी। नागवन्ती का पिता जाखडा अहीर और नागजी का पिता दोनो पगडी-बदल भाई थे।[7] तत्कालीन समाज मे हाथी पानी से भरा कलश, दही, फल पुष्प, दीप, हरी दूब, चाँवल सूप, लौंग, छत्र चँवर, किस्तूरी, घी आदि वस्तुयें तथा कन्या, वेश्या और सौभाग्यवती स्त्री मागलिक मानी

---

१. चन्द्रराज चरित्र (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

२. स्त्री पीहर, नर सासरई, सजुडोया घिर-वास।
एता हुई अलखा मणा, जउ मडई रिधि नास॥
—रणसिंध कुमार चौपई (ह लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

३. जावो धन धरणी वरण, गुण गाढिम पति-प्रेम।
सति आसति जावो सहू, पिण वाचम जाज्यो तेम॥२२२॥
—केशवकृत सदयवच्छ सावलिगा चउपई, पृ स १५६

४. सामी धरम सु पसाउ लै, नई तुम्ह सत पसाय रावत॥३॥
—जटमल कृत गोरा बादल चौपई, पृ. स. ७२

५. विरद बखाणी पदमणी, सिर पर लूण उतारि रावत।
—जटमल गोरा बादल चौपई

६. 'जे नागवती कनै जावो तो या डावडी लूण उतारै छै तठै जायनै थे थाली उरी लेनै लूण उतारण लागज्यो।'
—नागजी नागवती री बात (ह. लि.) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।

७. नागजी नागवंती री बात (ह लि.) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।

जाती थी।[1] समाज मे नाना प्रकार के अ धविश्वास प्रचलित थे। लोग टोने, मन्त्र-तन्त्र, मे विश्वास करते थे। भूत-प्रेत, डायन आदि पराप्राकृतिक तत्वो एव अलौकिक शक्तियो मे भी अटूट विश्वास था।[2] लोग भाति-भाति के 'बहमो' के शिकार थे। मत्र से मनुष्य से पशु या पक्षी बना लेना, परकाया-प्रवेश, जादू से उडना, जादुई वस्तुये प्राप्त करना, नाना प्रकार की सिद्धियो आदि के असख्य उदाहरण इन प्रेमाख्यानो मे उपलब्ध होते है, जिनसे तत्कालीन समाज की अन्धविश्वासी मनोवृत्ति का पता चलता है। किसी पुरुष को वश मे करने के लिए गारुडी नाग-मत्र का उल्लेख 'माधवानल कामकन्दला' मे मिलता है। माधव को वश मे करने के लिए नगर की स्त्रियो ने तत्र-मत्र का प्रयोग किया था।[3] अपने पापो के प्रायश्चित के लिए अथवा जीवन से ऊब होने पर 'काशी-करवत' लेने की प्रथा भी प्रचलित थी।[4] तत्कालीन समाज मे नर-बलि प्रथा के भी सकेत मिलते है। सिद्धराज जयसिंह ने सरोवर के सूख जाने पर, उसमे पानी ठहराने के लिए ब्राह्मणो की सम्मति से अन्त्यज जाति के मनुष्य की बलि दी थी।[5] मध्ययुग मे प्रतिशोध लेने की भावना भी प्रबल थी। क्षत्रियो मे कुलाभिमान की मात्रा इतनी अधिक थी कि लाखा ने

---

१ हाथी, पूरण-घट, कन्यका, दधि-फल, पुष्प-दीप वन्हिका।
वेस्या, सूह्लस्त्री सुकुमाल, पुलकित नयणी नयण रसाल॥
हरि द्रोव, अक्षत ऊजला, सूप, लौग तेजी अतिभला।
भद्रपीठ, चामर नइ छत्र, गोरोचना घृत, मइ सत-पत्र॥

—सदयवत्स वीर-प्रबन्ध, पृ. स. १८०

२. सूदइ प्रेत पराक्रम कहिउ, तीणि राज्य रोमाचित रहिउ।
एहसू खिति नही सयानि, एक एक नइ, विसमा मानि॥७०३॥

—सदयवत्स वीर प्रबन्ध, पृ. स ९८ से १०० तक

३ गारुडी नाग मत्र गुण्यारे, मरधा गोरी गह।
हिव वैधे हाथ झाटक्यारे, उपज नहिं उपाय॥
वेद भणइ ते वरणना, अपरि अक्षरि मत्र।
जम लगइ जै जिउडी, जाणइ ज्योतिष जत्र॥
सूकी मु डी सणगई, सुण ज्यो तेह विचार।
यागनवल कि जब लगई, अक्षत मूकत वारि॥

—माधवानल कामकन्दला, पृ. स. १४९, १५०

४ हंसावती विक्रम-चरित्र-विवाह, श्री फावर्स गुजराती सभा, बम्बई (१९३५)।

५. जसमा ओड़ण री वात (ह लि) रा प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर। --

अपने बहनोई का चौपड खेलते समय मामूली सी बात पर सिर काट डाला था। बाद मे इसका बदला लाखा के भानजा राखायचा ने लिया था।[1] जातीय स्वाभिमान की भावना भी कम नही थी। वीरमदे ने विजातीय और विधर्मी बादशाह अलाउद्दीन की लडकी फातिमा से विवाह करने की अपेक्षा अपनी मृत्यु को वरण किया था।[2] सामन्ती-समाज मे सेवको को भी अपने स्वामी की मृत्यु पर जीवित ही जलना पडता था। 'ससीपना री बात' मे उल्लेख है कि पना के साथ उनका सेवक 'खवास' उसके साथ दफन हो गया था।[3]

आर्थिक-जीवन

रहन-सहन :

तत्कालीन समाज मे राजा, सामन्त, सेठ आदि उच्च-वर्ग का रहन-सहन आडम्बरपूर्ण और उच्च स्तर का था, किन्तु जन-साधारण का जीवन सरल और सादगी युक्त था। राजा विशाल महलो मे रहता था। उसे आनन्दोपभोग के समस्त साधन उपलब्ध रहते थे। रानियो की सेवा मे सैकडो दासियाँ रहती थी।[4] राजकुमार अथवा कोई सामन्त जब भ्रमण करने निकलता तो वस्त्राभूषणो से सुसज्जित होकर निकलता था। 'कमलावती चौपई' मे उल्लेख है कि नगर-भ्रमणार्थ निकले हुए राजकुमार सखकुमार के हाथ मे गुलाब का फूल सुशोभित हो रहा था और

---

१. लाखा फुलाणी री बात (ह. लि) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।
२. वीरमदे सोनगिरा री बात (ह लि) रा प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।
३. ससीपना री बात (ह. लि) राजस्थानी शोध सस्थान, जोधपुर।
४. एक दिन तेइ गुणावली, भोजन की प्रीउ तोष।
पौते पिण नृपत थई, आवी बैठी गोख॥
करे सखी केइ एवन, आयँ केइ मुख-वास।
कई जल की अमृते भरी, दासी ऊभी पास॥
कई विलेपन ग्रही रही, कुकु छाटे केम।
कइक उभी आगले, आरीसा कर लेय॥
कईक हसाडे, कइ हसे, दीपे दत मझदार।
वायु दाडिम कुली, जाणै थइ दरार॥
कराणी घठै ठवै, पच बाण कुसुम दाम।
जाणत अति फूल्लत थयो, मदन तणो आराम॥
—चन्द्रराज चरित्र (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

वह दिव्य वस्त्रालकारो से सुसज्जित था ।[1] सामन्तलोग गुलाव के पानी से स्नान करते थे । आगन मे छिडकाव भी गुलाव के पानी से होता था तथा आगन को लीपने के लिए भी गुलाबजल मे भीमसेनी कर्पूर डालकर तथा केशर मिलाकर 'गारा' तैयार किया जाता था ।[2] राजकुमारो के अनेक अमीर उमराव मित्र होते थे । गोले-गोलियाँ निरन्तर सेवा मे निरत रहती थी । मूँछे रखने की भी प्रथा थी और वे भवो तक तनी हुई रहती थी ।[3] बडे वडे उपवन होते थे । शाहजादियाँ अपनी असख्य सखियो के साथ उन उपवनो मे भ्रमण करती थी । शाहजादी अनवर चन्द्रावती, मनभावती आदि सवालाख सखियो के साथ नवलखा वाग मे भ्रमण करने निकलती है ।[4] 'विद्या विलास रास' मे उल्लेख है कि राजा के दो हजार हाथी और दो लाख घोडे थे । अन्तपुर मे अथवा हरम मे अनेक रानियाँ तथा बेगमे रहती थी[5] तथा विश्वसनीय व्यक्ति पहरे पर रहते थे । रथ की सवारी की जाती थी ।[6]

वस्त्राभूषण एव श्रृ गार :

राजा मस्तक पर मुकुट धारण करता था । कसुमल रग का 'जामा' पहिनने का भी प्रचलन था । द्वि-जातियाँ 'जनेऊ' धारण करती थी । पुरुष भी स्त्रियो की तरह आभूषण पहिनते थे । पुरुषो के आभूषणो मे, हाथो मे पहिनने के

---

१ हाथा मे फूल गुलाव रो, महके वास सुवास ।
चपो, नेवलो, केवडो, सु घता जाय हुलास ।।
—कमलावती चौपई (ह लि) श्री जैन श्वेताम्वर मन्दिर, अजमेर ।

२. "सापडे जमैं, गुलाव रा पानी सु सिनन की जै । तुगारी चू गा ढोलै । झडकाव गुलाव रा पानी सु की जै । केसर रो नीपणो कीजे, जिण मै भीमसेनी कपूर नै गुलाव रा पानी सु गारो कीजै । इण भाँति जलाल रहे ।"
—जलाल गहाणी री वारता (ह. लि.)

३ पना वीरमदे री वारता (ह. लि) दादावाडी, अजमेर ।

४ विरह गुलाजार इश्क अनवर कथा (ह लि.) रा प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर ।

५ एक एक हुती अधिक, गोरी गजगत गेल ।
प्रेमवती पति वल्लभा, भानुमति मन गेल ।।
—विद्या विलास (ह लि) रा प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर ।

६. जलाल गहाणी री वारता (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्वर मन्दिर, अजमेर ।

मोती से जडे कडे तथा गले मे मोतियो की माला तथा मुद्रिका मुख्य थी।[1] रानियो के आभूषणो मे रत्न-जडित वहिरखा, सीसफूल नवसर हार, ककण, नेउर, चूडियां, करधनी आदि का उल्लेख मिलता है।[2] स्त्रियां शरीर मे केशर और गोरोचन का लेप करती थी। नयनो मे अ जन अथवा काजल डाला जाता था, हथेलियो को लाल रग से रगा जाता था और अधर ताम्बूल से रँगे रहते थे।[3] अधरो को रगने के लिए नायिकायें आधुनिक नारियो की भाँति 'लिपस्टिक' के समान ही ललाई का प्रयोग करती थी।[4] मध्ययुग मे स्त्रियां विशेषकर राजस्थानी

---

१. मस्तक मुकुट सुहावणो, रतन जडित सुविलास।'
पुणच्या मोतीना कडा, गल मोत्या का माल।
ऊपर नी तोही राजडी, सुरराज वारा रो उद्योत।
देव आकास सु उतरयो, जगमग करतो जोत।
जामो कसुमल घणा घेर रो, उतरासण सुखदाय।
जनेऊं जामा ऊपरे, कदोरो झिललाय॥
—कमलावती चौपइ (ह. लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

२. नाक जिसी दीवानी सिपा, वाहे रतन जडित वहिरखा।
सीसफूल, सोवन राखडी, कचन मयघडी, रतने जडी।
गले एकावल नवसर हार, ककण नेअर झंकार।
खलके चुडी सोवन तणी, शुद्र घटिका सोहामणी।
केहर सिघ जिसी कटि लक, रतन जडित करि मेखलाक।
—कुशललाभ कृत माधवानल कामकन्दला (ह. लि)

माणक बहठी मुद्रड़ी, करि नव ग्रहु अनत।
कठि जनोई तग तगइ, ग्रथि त्रिणि भय तत॥११॥
—गणपति कृत माधवानल कामकन्दला-प्रबन्ध, पृ. स. ५३ (४)

३. अगे चन्दन केसरि खोली, अधर दसन रजित तम्बोली।
अजन सु अजी आखडी, जाणे विकसी कमल पाखडी॥
—कुशललाभ कृत माधवानल कामकन्दला (ह. लि.)

४ कर रत्ता उज्जल बहुल, नयणे कज्जल रेह।
धन भुल्ली गुजाइले, हसि करि नाख्या तेह।
अधर-रग रत्तो हुउ मुख तम्बोल मसि वन।
जाण्यो गु जाहल अछे, तिणइक ठुक्यो मन्न॥
—कुशललाभ कृत माधवानल कामकन्दला (ह. लि.)

स्त्रियाँ घाघरा, चीर, काचली, अ गिया पहिनती थी। पुरुष सिर पर पगडी बांधते थे तथा लम्बी अँगरखी और धोती पहिनते थे।

खान-पान :

राजा महाराजा स्वर्ण के थाल-कटोरो मे भोजन करते थे। पानी के लिए भी स्वर्ण की झारी हुआ करती थी। 'पद्मिनी चरित्र चौपई' मे नाना प्रकार के व्यजनो का उल्लेख मिलता है। सत्तर प्रकार के नित्य नये भोजन बनाये जाते थे।[1] भग और अमल का नशा किया जाता था। नाना प्रकार के चूर्ण भी बनाये जाते थे।[2] लोग पानी-सुपारी भी खाते थे।[3] आसव पीने की प्रथा प्रचलित थी। मध्ययुग में सामन्ती घरो मे स्त्री-पुरुष दोनो आसव पीते थे।[4] 'माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध' मे गणपति ने कामी-पुरुषो के भोजन के बारे मे लिखा है कि वे मास, मदिरा का प्रयोग करते थे। भाग, धतूरा आदि नशीली वस्तुओ का सेवन कर भोग-विलास, मे रत रहते थे और अपनी स्त्री को छोडकर पर-स्त्री-कामी होते थे।[5]

क्रीड़ा एव मनोरजन :

तत्कालीन समाज मे नाना प्रकार के मनोविनोद के साधन प्रचलित थे।

---

१ सतर भक्ष भोजन सझेजी, नित नित नवली भाँति।
व्यजन रूडी विध करइजी, खाता उपजै खाति ॥२॥
— पद्मिनी चरित्र चौपई, पृ स ४ व (भोजन सत्कार-प्रसग) छद १ मे २२ तक) पृ स ५४।

२ आक विजयादिक अमल, चूरण करि चख चोल।
सदय कुमर बैठो जई, देवल अधिकइ लोल ॥२१५॥
—केशव कृत सदयवच्छ सावलिंगा चौपई, पृ. स. २१५

३ नस काही निर्मल किया, आणि अपूरब पान।
सोपारी नी कातली, अरुण ऊगता भाण ॥६७॥
—गणपति कृत माधवानल कामकन्दला-प्रबन्ध, पृ स. १०५ (५)

४ 'आरे नीद की माती गुलाबी सराब की उतारने के वासते घबराकै सीतावी से खडी हो गई।'
—विरह गुलजार इश्क अनवर कथा (ह. लि.)

५ पोस, पीआ, भगी भला, मद्यप मिलिया कोडि।
धरा, रूधी धतूरी अे, खिति पति देवा खोडि ॥१६७॥
—गणपति कृत माधवानल कामकन्दला-प्रबन्ध, पृ. स. १४७

चौपड का खेल बहुत प्रचलित था। इस खेल को स्त्री-पुरुष, दोनो खेलते थे।[1] 'जलाल गहाणी री बात' मे उल्लेख है कि बूबना एव मूमना दोनो बहिनें चौपड खेला करती थी।[2] स्त्रिया बाग मे चौथ का खेल भी खेला करती थी। शाहजादी अनवर नोलखा बाग मे सखियो के साथ चौथ का खेल खेला करती थी।[3] शतरज खेलने की प्रथा प्रचलित थी।[4] पतग उडाने का खेल भी प्रचलित था।[5] राजा या सामन्त मृगया या आखेट के लिए जाते थे।[6] स्त्रिया सरोवर मे जल-क्रीडा करती थी। 'चन्द्रराज चरित्र' मे गुणावली और वीरमती रानियो द्वारा पुष्करणी मे जल-क्रीडा करने का उल्लेख है। राममरोवर मे मालती भी सखियो सहित जल-क्रीडा के लिए जाती थी। सरोवर पर राजकुमार भी क्रीडा के लिए चले जाया करते थे। मधु गिलोल से निशाना साधता था और उसमे प्राय' पनिहारियो के घडे फूट जाया करते थे।[7] 'पनघट' उस समय सूचना-केन्द्रो का कार्य करते थे। नाव मे बैठकर घूमने का शौक विद्यमान था। शाहजादी अनवर और इकबाल नाव मे बैठकर सैर करते थे। लोग उपवन मे जाकर 'गोठ' करते थे। कभी-कभी रात्रि को बाग मे ही डेरा डालकर विश्राम किया जाता था।[8] साथ मे गोलियाँ रहती थी। जागडे लोग

---

१ रामति रमवा रगस्यु, बैठा बेउ आय।
जाणे सूर अने ससी, मिलिया एकण ठाय ॥३॥
—पद्मिनी चरित्र चौपई, पृ. स १२

सावलिगा सइ तस भरतार। चोपड खेलइ मेइलर मझारि ॥३५१॥
- सदयवच्छ सावलिगा चउपई, पृ. स १७३

२. जलाल गहाणी री बात (ह. लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

३ विरह गुलजार इश्क अनवर कथा (ह लि.) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।

४. 'आपस मे सैतेरज खेलने लगे। × × अर चौपड शतरज खेलने लगे।'
—विरह गुलजार इश्क अनवर कथा (ह. लि)

५. तोरण बाध्यावार हो, पोलि आरीस सूरीज जल हले।
बाजे गुहीर नीसाण हो, घरि घरि ऊँची गुडी ऊछले जी ॥१०॥
—पद्मिनी चरित्र चौपई, पृ स १८

६. (क) चन्द्रराज चरित्र (ह. लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।
(ख) जलाल गहाणी री बात (ह लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

७. चतुर्भुज कृत मधुमालती (ह लि) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।

८. विरह गुलजार इश्क अनवर कथा (ह. लि) रा. प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।

गीत गाकर दिल बहलाया करते थे। चारण लोग भी साथ मे रहते थे।[1] किस्सा कहानी भी मनोरजन का साधन थी। कभी-कभी मानसिक उपचार के लिए भी कहानियो का प्रयोग किया जाता था। अचारज ने अनवर की मानसिक दशा, कहानिया सुनाकर ही ठीक की थी।[2] घुड सवारी और मलयुद्ध-कला भी प्रचलित थी। पजुपायक ने अलाउद्दीन के दरबार मे मल युद्ध-कला दिखलाकर ही उसे प्रसन्न किया था।[3] समाज मे द्यूत-क्रीडा भी प्रचलित थी। चोर, जवारी कभी-कभी भोले पथिको को द्यूत-क्रीडा मे फँसाकर लूट लेते थे।[4] कभी-कभी जुवे मे शिर काट लेने की शर्त भी रखली जाती थी। राजा नल द्यूत-क्रीडा मे अपना राजपाट और रानी तक को हार गया था।[5] दडी का खेल भी प्रचलित था। राजकुमार हम ने बावन वीरो को दडी के खेल मे हरा दिया था।[6] नट-कला का प्रचार था। नट लोग अनेक प्रकार के शारीरिक सतुलन के खेल दिखलाकर मनोरजन किया करते थे। स्त्रिया भी नट-दल मे होती थी। 'चन्द्रराज चरित्र' मे उल्लेख है कि शिव नामक नट ने अपने खेलो से वीरमती को प्रसन्न कर कूर्कट का पीजरा प्राप्त किया था। नट लोग अपना खेल दिखाने के लिए अनेक प्रदेशो मे भ्रमण करते थे।[7]

---

१ पना वीरमदे री वारता (ह. लि) दादावाडी, अजमेर।

२ विरह गुलजार इश्क अनवर कथा (ह. लि) रा प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।

३ वीरमदे सोनगिरा री बात (ह लि) रा प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।

४. दह दिसि नयणइ निरखई वाट, सुणिउ सुरग माहि गाहि गाट।
गिरवर तलि-वन गहन मझारि, गुरुइ शिला दीठी गुफा वारि ॥३७०॥
सिला उघाडी साहस वीर, पइठउ विवर माहि वडवीर।
गख करहि गेला केतला, भला माहि भड भेटइ भला ॥३७१॥
पाचे वई सारिउ पड् माहि, रमि राउ तू जूड रमिवा आहि ॥३७३॥
राउत! ए पड न जाणि, शिर ओडी नइ रमु सुजाण ॥३७४॥
— सदयवत्स वीर-प्रबन्ध, पृ. स. ५०, ५१

मात पिता मन रग, कुमर न वरज्यु तिहा कीयइ।
सदा फिरइ ते सगि, जुआरया माहे जुडयउ ॥५॥
—पुण्यसार चौपई, पृ स. १२०

५ समयसुन्दर कृत नलराज चौपई (ह. लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

६ हसाउली (गुजरात वर्नाक्यूलर सोसायटी, अहमदाबाद)।

७. चन्द्रराज चरित्र (ह. लि.) बीजा उल्लास, १६वी ढाल, पृ. स. ६६ (श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर)।

मनोरजन के उत्कृष्ट साधनो मे नृत्य, सगीत, लोक-गीत एव नाटक का बहुत प्रचार था। मध्ययुग मे ख्यालो का भी प्रचलन था। नाटक देखने मे राजा और सामन्तवर्गीय प्रजा भी भाग लेती थी। 'मानुतु ग मानवती रास' मे उल्लेख है कि राजा मानुतु ग की सभा मे एक प्रहर रात्रि तक नाटक होता था।[1] राजा रतनसेन को भी नाटक देखने का शोक था।[2] इन नाटको मे पात्र उच्च वर्ग के लोग भी होते थे। राजकुमार सोहगसुन्दरी और मत्री विद्या-विलास ने नाटक मे 'समूह-नृत्य' किया था।[3] नाटक मे स्त्रिया भी अभिनय करती थीं। इन्द्र की सभा मे तो नाटक मनोरजन का मुख्य साधन था।[4] वीणा वादन द्वारा मनोरजन होता था। उदयन वीणावादन के लिए प्रसिद्ध था।[5] सयणी बीजाणद के वीणावादन पर ही मुग्ध हुई थी।[6] स्त्रिया उत्सवो मे सामूहिक लोक-गीत गाती थी। नृत्य भी मनोरजन का

---

१. मानुतु ग मानवती रास (ह. लि) श्री जैन श्वेताम्वर मन्दिर, अजमेर।

२ थानिक थानिक नवा नवारे, नाटक निरखे राय।
हय, गय, हाट पटण घणा रे, जोता आधा गाय रे ॥१०॥
—पद्मिनी चरित्र चौपई, पृ स ११

३. वाला वाको ने पीवावो ने रे आली जे।
मृदग वावो ने जीदामे, धरती पग धमके छै।
तद ठम ठम ठमके छै, कई झाझरिया झमके छै।
चपल चाल मुहतो चालियो, पदमणी पग नढवाये।
वोहमणी नयने नीरखने, लुली लुली लागे पाये।
—विद्या विलास रास (ह. लि.) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर

४. एक दिवस नाटक आदेश, हुओ अपछरा वडयो अन्देश।
भमरा रूपइ माधव कीयो, कुच विच छाने राखियो॥
विविध प्रकार नाटक करै, कचू विच प्रीतम समरे।
जोवइ इन्द्र सभा सुर मिली, नाचे पात्र जाणे पूतली॥
—कुशललाभ कृत माधवानल कामकन्दला (ह. लि.)

५ कुमर कला गुण आगलउ, तिणि वीणा वजाइ से।
राग सभा रजी घणउ, तिणि माथ धुणइ हो।
नाव समुद्र मइ वूडती, जाणे सिर धकधू धुण रहे।
नादइ मृग मोहिस्या, पडइ माणस माहे हो।
रसिक सहइ धूण आकरउ, पणि नावइ छानइ हो।
—मृगावती रास (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर

६ सयणी चारणी री बात (ह. लि) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।

प्रमुख साधन था।[1] राजकुमारी कमलावती, सोहगसुन्दरी आदि राजकुमारिया स्वय नृत्य करके अपना मनोरजन किया करती थी।[2] राजसभाओ मे राज नर्तकियो का नृत्य होता था।[3] मध्ययुगीन समाज मे ढाढी, ढोली, डोम, चारण आदि जातिया नाना प्रकार की रागो मे गीत गाकर तथा कविता पाठ के द्वारा सामन्ती-प्रजा का मन बहलाया करते थे। लाखा अपनी नवयुवती रानी सोढी का गीतो द्वारा मन बहलाने के लिए मनफूलिया डोम को छोडकर परदेश गया था।[4] सामान्य जनता मे ख्यालो का प्रचलन था। ग्वाले अलगोजे बजाकर मन बहलाते थे।

बौद्धिक-विलास :

कोई भी समाज जितना सुसभ्य तथा सुसस्कृत होता है, उसमे बौद्धिक-विलास के साधनो का विकास भी प्रचुर-मात्रा मे होता है। बौद्धिक-विलास के साधनो मे मनोविनोद के स्थूल उपकरणो का प्राय अभाव होता है। इसमे मनोविनोद के साथ मानसिक विकास भी होता है। प्राचीनकाल मे तथा मध्ययुग मे बौद्धिक-विलास का पर्याप्त प्रचार था। बौद्धिक-विलास के साधनो मे गाहा, गूढा, कवित्त-रस नई बात अथवा कहानी, गीत, हास्य-व्यग आदि उल्लेखनीय है। पहेली और समस्या विनोद बौद्धिक-विलास के मुख्य अ ग थे। कुशललाभ ने लिखा है कि 'मूर्ख व्यक्ति तो निद्रा मे या कलह करने मे ही अपना अमूल्य समय खो देते है, किन्तु बुद्धिमान् व्यक्ति

---

१ मादल, सख, दमामा वीण, मगल गीत अनइ जुग कीन।
पुत्र महित युवती स्त्री गाई, विप्र तिलक, मुखि वेद सुहाई ॥

—गणपति कृत माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध

२ माडयौ नाटक तता थेई, नाचती हो लाल सझ सोल सिणगार।
कोयल सरसा कठ, गावै गीत गाजता हो लाल।
सधड सारगी राग, मेल गीत गावती हो लाल।
घू घट ना घमकार, ठमक ठमक पग ठवे हो लाल।
फिर फिर फूदी लेय, मधुर सारे लवे हो लाल।

—कमलावती चौपई (ह. लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर

३ पडहा तती पवन उडइ, आलति ऊठइ अेक।
घमकइ घू घरि नेउरा, पय तलि प्रकट विवेक ॥

—गणपति कृत माधवावल कामकन्दला प्रबन्ध

४ लाखा फुलाणी री बात (ह लि) रा प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।

बौद्धिक-विलास के उपर्युक्त साधनो से अपना स्वस्थ मनोविनोद करते हैं।[1] 'मानतु ग मानवती रास' मे उल्लेख है कि जिस प्रकार चतुर व्यक्ति को पान खाने से आनन्द मिलता है, उसी प्रकार रसिक व्यक्ति को कथा-सुनने से आनन्द मिलता है।[2] पहेलियाँ तो प्रारम्भ से ही मनुष्य के मनोविनोद का साधन रही हे । नायक के चातुर्य का परीक्षण करने के लिए नायिका प्राचीनकाल से ही पहेलियो का प्रयोग करती रही है । राजस्थानी के प्रेमाख्यानो में इस प्रकार के बहुत से उदाहरण मिलते है । 'ढोला मारू रा दूहा' मे ढोला और मारवणी परस्पर पहेलियाँ पूछकर मनोविनोद करते है।[3] बौद्धिक-विलास का दूसरा साधन समस्या विनोद था । 'समस्या-बध' के भी कई रूप प्रचलित थे । इससे मनोविनोद के साथ नायक-नायिका के चातुर्य का परीक्षण भी हो जाता था।[4] गणपति कृत 'माधवानल कामकन्दला प्रबध' मे उल्लेख है कि कामकन्दला और माधव ने अनेक प्रकार के समस्या-बध एक दूसरे को पूछकर मनोविनोद किया था । मृगावती रास मे उल्लेख है कि मनोविनोद के लिए कभी सरस श्लोक बोले जाते थे, कभी गीत गाये जाते थे, कभी कठिन हियाली (पहेली का प्रकार) पूछी जाती थी और कभी-कभी समस्या पूछते थे।[5]

---

१. कामकन्दला इम कहे, अजि अवे बहुरात ।
गाहा, गूढा कवित-रस, कहि को नवली वात ॥
गीत, विनोद, विलास-रस, पण्डित दोहली वान ।
कइ निद्रा कइ कलह करि, मूरखि दिवस गमात ॥

—कुशललाभ कृत माधवानल कामकन्दला (ह लि.)

२. सुरजन सामलियो कथा, रसिक थई देइ कान।
चतुर नर उपजस्ये रस गता, चाख्या ही जिम पान ॥

—मानतु ग मानवती रास (ह. लि.)

३. ढोला मारू रा दूहा (काशी नागरी प्रचारिणी सभा, काशी)।

४. सु दरि चोर सग्रही, सवि लिधा सिणगार ।
नकफूली लिधी नही, कहि सखी कवण विचार ॥

—कुशललाभ कृत माधवानल कामकन्दला (ह. लि)

५. कब ही सरस सिलोक बखानइ, कब ही राग अलापरे।
कब ही कठिन हियाली पूछइ, कब ही समस्या आपई रे॥

—मृगावती रास (ह. लि.)

सार्वजनिक उत्सव :

आमोद-प्रमोद के अवसर सामान्य-जन को होली, बसन्तोत्सव, तीज आदि उत्सवो पर उपलब्ध होते थे । पुत्र जन्मोत्सव, सीमन्तोत्सव, विवाहोत्सव मे भी मनोविनोद होता था । धार्मिक उत्सवो मे 'इन्द्र-महोत्सव'[1] एव 'जल-झूलनी एकादशी'[2] आदि उत्सव मनाये जाने का उल्लेख मिलता है । तत्कालीन समाज उत्सव-प्रिय समाज था । कवि भीम ने 'सदयवत्स वीर-प्रबध' मे लिखा है कि 'उजेरा नगरी' मे बारह महीनो नित्य नये-नये उत्सव होते थे ।[3] ऋतुओ के आधार पर मनाये जाने वाले उत्सवो मे बसन्तोत्सव का बडा महत्वपूर्ण स्थान था । इस उत्सव मे राजा और प्रजा दोनो भाग लेते थे ।[4] 'चन्द्रराज चरित्र' मे बसन्तोत्सव का बडा सरस वर्णन मिलता है ।[5] बसन्तोत्सव का तत्कालीन समाज मे इतना प्रभाव

---

१. 'इन्द्र महोत्सव आव्यो तिसे, राम मडा वइ नाटक तिसैं ।
—कुशललाभ कृत माधवानल कामकन्दला (ह. लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

२ गुलावा भवरा री वारता (ह. लि) राजस्थानी शोध-सस्थान, जोधपुर ।

३ नव बारहि अजेरिए, नितु नव नवा महोत्सव तेरिए ।।४४।।
—सदयवत्स वीर प्रबध, पृ स ७

४ एहवई मास बसत आवियउ, भोगी पुरुषा मानिया वियउ ।
फटरा गीत गायइ फागना, रसिक तेह कहइ रागना ।
ऊडई लाल गुलाल अबीर, चिहु दिशि चीजइ चरणा चीर ।
नगर माहिस नर-नारि, आणद करई अपार ।
—सिहलसुत चौपई, पृ. स २

५ ऋतु बसत प्रगटि तिसे, सफल थया सहकार ।
कामकला कौकिल कहै, जन नै बारम्बार ।।
केसू अति कुसुमित थया, रग सुरग गुलाल ।
खेलै फाग बसत नृप, तेहनो लाल गुलाल ।।
सपरिवार आभा नृपति प्रजा सहित सोहत ।
आव्यो वन मे कामवशी, रमवा काज वसत ।।
छाटे केसर छाटका, लाल गुलाल सुहात ।
सोहै मध्या ने गगन, जाणीक थयो प्रभात ।
चन्द्र कुँवर सह त्रिया सहित, कुसम थकी क्रीडत ।
सुत केडें धरीरे, उमि चम्पक छाड रे ।
आम्बा डोल झूलणा, बाधि हिंडोलें डाल रे ।।
—चन्द्रराज चरित्र (ह लि.) श्री जैन श्वेताम्बर, मन्दिर, अजमेर ।

था कि वैराग्यवान् मुनियो ने भी वसंत-ऋतु को लेकर अनेक काव्य-ग्रंथो की रचनायें की है जो राजस्थानी मे 'फागु' काव्य के नाम मे प्रसिद्ध है। आजकल की भाति प्राचीन-काल मे भी होली का उत्सव बडी धूमधाम से मनाया जाता था । चावर के समय लोग गाते बजाते निकलते थे, रग-बिरगे कपडे पहिनते थे एव अबीर गुलाल की धूल उडती थी ।[1] श्रावणी तीज का त्योहार भी मनाया जाता था। मध्ययुग मे पूगल की तीज प्रसिद्ध थी। स्त्रिया केसरिया, कसूमल रग के वस्त्र पहिन कर तथा आभूषणो से सजकर निकलतीं थी। हाथ मे रूमाल और मुख मे पान का बीडा होता था। हिंडोला और लहरिया आदि लोक-गीत गाती थी। 'पना वीरमदे री बात' मे तीज के त्योहार का सरस वर्णन किया गया है।[2]

युवराज पदाभिषेक-उत्सव पर घर-घर मे तोरण द्वार बनाये जाते थे। 'मगलाचार' गाया जाता था।[3] राजा के नगर-आगमन पर प्रवेशोत्सव भी मनाया जाता था। 'पद्मिनी चरित्र चौपई' मे उल्लेख है कि जब राणा रतनसिंह सिंहल द्वीप से पद्मिनी लेकर लौटे थे, तब नगर-प्रवेश के अवसर पर बडे धूम-धाम से उत्सव मनाया गया था।[4]

व्यवसाय-वाणिज्य

इन प्रेमाख्यानो मे नगरो का जैसा चित्रण मिलता है, उससे विदित होता

---

१. गणपति कृत माधवानल कामकन्दला प्रबध, पृ स. ३१३।

२. इण भाति तीज मडवा रो वखत आयौ। आणद को समद जाणै राका निसिर सायौ। सहर माहि सू तीजणया निसरै छै। × × केसरिया कसूमल पौसाका करिया। घणा गहणा मैं लू मा झू मा हुई थकी मोहोला मोहोला मा सु नीसरी छै। राग-रग करै छै। हिंडोला लहरिया गावै छै।"

—पना वीरमदे री वारता (ह लि) पृ स. १२ से १६ तक

३. ते महूरत ते मगलाचार, सेसि भरायउ सदय कुमार।
राउ अप्पइ राणि मनइ राज, सूदउ भणाई न राजइ काज ॥७०॥
घरि घरि तणीया तोरण बहू, उजेणी आणद्यउ सहू।
हऊउ हरिस राजा मनि घणउ, पेखि पवाडउ सूदा तणउ ॥७१॥

—भीम कृत सदयवत्स वीर-प्रबन्ध, पृ स १२

४. बोलावी कोटवाल हो राज, बूहारी जल छाट्यांवली जी।
फूल अबीर बिछाय हो राज, सिणगार्या बाजार हो सोभा भली जी ॥९॥
तोरण बाध्या बार हो राज, पोलि आरीसा सूरीज जलहले जी।
बाजे, गहीर नीसाण हो राज, घरि घरि ऊँची गूठी ऊछले जी ॥१०॥

—पद्मिनी चरित्र चौपई, पृ स. १७, १८

है कि तत्कालीन समाज आर्थिक-दृष्टि से बडा सम्पन्न था और देश समृद्धशाली था। उज्जैन, पाटण, वाराणसी, गोपाचल, अयोध्या आदि बडे-बडे नगर बसे हुए थे। इन नगरो का विस्तार क्षेत्र लगभग बारह-योजन तक होता था। इनमे कई मजिल ऊँची भव्य अटालिकायें थी। उपवन, सरोवर एव बडी-बडी बावडिया बनी हुई थी। भिन्न-भिन्न चौरासी प्रकार के व्यवसायो के बाजार थे, जो 'चौरासी चौहटे' कहलाते थे। स्त्रियाँ रेशमी वस्त्र पहिनकर झूला झूलती थी। सब तरह के लोग इन नगरो मे बसते थे। ये नगर रिद्धि-सिद्धि से भरपूर होते थे। नगर-सभ्यता का पूर्ण विकास हो चुका था।[1] इस नगर-सभ्यता मे आजकल की भाति 'अजनबीपन' की भावना भी व्याप्त हो रही थी। कुशललाभ ने तत्कालीन नगर-जीवन की उस 'अजनबीपन' की भावना को व्यक्त करते हुए लिखा है कि दिन भर नगर मे घूमते रहने पर भी न किसी से कोई बात करता है और न कोई सत्कार करता है। अत. यह कहावत

---

१. ऊँचा मन्दिर अति घणा, दीठा आवै दायो रे।
जिण मन्दिर रलियामणा, दंड कलश करि सोहै रे ॥६॥
अति ऊँची धज लहलहै, सुर नर ना मन मोहै रे।
चौरासी वलि चौहटा, मिलिया बहुजन वृन्दो रे ॥७॥
देश अने परदेश ना, पावै परमाणदो रे ॥८॥

—उत्तम कुमार चरित्र चौपई, पृ स १०६, ११०

नगर गोपाचल छइ गुण मिलउ,
तिहा पृथ्वी तरुणी सिद्ध तिलउ।
गढ, मढ मण्डित गुणह निधान,
सरा कूआ सूथरा सब थान।
वन, उपवन, बाडी, वावडी,
पुण्यसाल जिहा बहु जावडी॥

—पुण्यसार चौपई, पृ स १२१

आरिज नगर अयोध्यापुरी, इन्द्रपुरी जाणे अवतरी।
गढ मढ, मन्दिर, पोलि बाजार, सोहइ नगरी सरु प्रकार॥
चउरासी चउहठा अति चग, सात भूमि आवास उत्तग।
हिचइ स्त्री हिंडाल खाट, पहिरण चीर परवट चार॥
कोटि धवल खेसरी लोक, वसइ तिहा धरि सगला थोक।
बार (बारह) जोयण तेहना परिमाण, राजा निषध करइ तिहा राज॥
—समयसुन्दर कृत नलराज चौपई, (ह लि) श्री जैन श्वेताम्बर मदिर, अजमेर।

प्रचलित हो गई थी कि 'उस देश मे नही जाना चाहिए जहाँ अपना कोई व्यक्ति नही हो, गली-गली घूमने पर भी जहाँ कोई बात करने वाला न मिले।'[1]

विविध प्रकार के व्यवसाय :

गणपति ने चौरासी प्रकार के भिन्न-भिन्न व्यवसायो का वर्णन किया है, जिनमे कपडे का व्यवसाय, किराना, स्वर्ण-कारी, लोहारी, चित्रकारी, लेखन आदि विविध व्यवसाय प्रचलित थे।[2] 'नलराज चौपई' मे उल्लेख है कि वैश्य-वर्ग वडा सम्पन्न था। कदोई, कुम्हार, माली, खाती, तम्वोली, ठठेरे, मोची आदि का भी उल्लेख मिलता है।[3] 'सदयवत्स वीर-प्रवन्ध' मे भी कपडे का व्यवसाय, किराना की दुकाने, मदिरा की हाटें, स्वर्णकारी आदि व्यवसायों का वर्णन मिलता है।[4] मध्ययुग मे उक्त व्यवसाय या धन्धे पैतृक आधार पर प्रचलित थे। इन धन्धो के अतिरिक्त 'चदन की लकडी' का भी व्यवसाय प्रचलित था।[5] 'ढोलामारू रा दूहा' से विदित होता है कि प्राचीनकाल मे पशुओ का भी व्यापार होता था। पशुओ के व्यापार मे 'घोडो' का व्यवसाय वहुत प्रचलित था। उस युग मे मुलतान के घोडे और कच्छ देश के वडी थूही वाले ऊँट काफी प्रख्यात रहे हैं।[6] प्राचीनकाल मे अश्व-रत्न जाति के घोडे वडे मूल्यवान होते थे। 'चन्द्रलेहा चौपई' मे उल्लेख है कि सेठ-पुत्री चन्द्रलेहा ने 'अश्व-रत्न' जाति का घोडा मागने पर राजा को भी मनाकर दिया था।[7] 'चन्द्रराज चरित्र' मे भी घोडो के सौदागर तथा उनके व्यवसाय का उल्लेख

---

१ 'मारे दिन तिन नगर फिरी, कोइ न पूछई आदर करि।
सुभाषित· तिण देसउ न जाइये, तिहा आपणो न कोई ॥
सेरी सेरी हीडता, बात न पूछे कोई ॥
– कुशललाभ कृत माधवानल कामकन्दला चउपई (ह. लि)

२. देखिये, इसी अध्याय की पाद-टिप्पणी, क्रमाक १, पृ स ४६८।

३. देखिये, इसी अध्याय की पाद-टिप्पणी, क्रमाक ३, पृ स. ४६८।

४. भीम कृत सदयवत्स वीर-प्रवन्ध, (छद स ३५, ३६, ३७, ३८) पृ. स ६।

५. 'चन्दन केरा लाकडा, आवै मोली माही।'
—रतनपाल रतनवती रास (ह. लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

६. मुलताणी घर मन वसी, सुहगा जड सेलार।
हरिणाखी, हसि नइ कहई, आणाउँ हेडि तुखार ॥२२६॥
काछी करह, बिथूँनिया, घडिमउ जोइण जाई।
हरणाखी, जउहसि कहइ, आणिसि ऐथि विमाह ॥२२८॥
—ढोलामारू रा दूहा (ना. प्र. सभा काशी)

७. चन्द्रलेहा चौपई (ह लि) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।

मिलता है।[1] ईडर के आभूषण तथा गुजरात का दक्षिणी चीर प्रसिद्ध था।[2] रेशमी-वस्त्रो का व्यवसाय भी होता था।[3]

तत्कालीन समाज मे व्यापारी-वर्ग बडा समृद्ध था। 'उत्तमकुमार चौपई' से विदित होता है कि महेशदत्त नामक वणिक् के पास ५६ कोटि स्वर्ण-मुद्राये निधान मे, ५६ कोटि उधार मे, ५६ कोटि व्यापार मे, ५०० जहाज, ५०० गोकुल, ५०० हाथी, ५०० घोडे, ५०० पालकियाँ, ५०० कोठे, ५०० सुभट तथा ५ लाख सेवक थे। कभी-कभी फिजूल खर्ची के कारण राज-कोष खाली हो जाने पर राजा को नगर-सेठ से धन लेना पडता था। यह सेठ लोग कभी-कभी राज भोज भी देते थे जिनमे राजा और उसके अनेक सामन्त तथा उच्च-वर्ग की प्रजा आमत्रित होती थी। व्यापारी लोग देश-विदेश से व्यापार करते थे। 'रत्न-कम्बल' का भी व्यवसाय होता था। यह बडा मूल्यवान् होता था। एक 'रत्न-कम्बल' का मूल्य एक लक्ष स्वर्ण-मुद्रा से अधिक होता था। विदेशो से व्यापार स्थल और जल, दोनो मार्गो से होता था। 'लका' आदि पडोसी देशो से व्यापार के लिए समुद्री मार्गों से जाते थे।[4] 'उत्तम कुमार चरित्र चौपई' मे उल्लेख है कि कुबेरदत्त 'विवहारियाँ' के पास पाँच सौ प्रवहण थी, जिन्हे वह मुग्धद्वीप' मे व्यापार के लिए ले गया था। महीनो तक समुद्र की यात्रा चलती थी, अतः जहाजो मे पर्याप्त भोजन और पीने के जल की व्यवस्था रखनी पडती थी। मार्ग मे कभी-कभी पानी समाप्त हो जाने पर बडी कठिनाई पडती थी।[5] 'सिंहलसुत चौपई' मे उल्लेख है कि सिंहलकुमार प्रवहण पर

---

१ चन्द्रराज चरित्र (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

२. ईडर की धर अड लगउँ, जह तू कहइ तु जाह।
अउथि घडाऊँ आभरन, माल्हवण मेलांह ॥२२४॥

३. सहसे लाखे साट विसु, परिघल आणा वेसु।
घरि बइठा हा प्रीतमा, पट्टोला पहिरेसु ॥३३३॥
—ढोलामारू रा दूहा (ना प्र सभा, काशी)

४. मध्य भाग लवणोदधि नै रह्या, तिहा लका कवहाय।
द्रव्य उपावण साथे मानवी, त्या सु पूरी रे प्रीत ॥
सायात्रिक सद्यातइ तेमणी, पूछि चढु तिहा खेम।
—उत्तम कुमार चरित्र चौपई, पृ. स. ११६

५. कुबेरदत्त नामा विवहारीयौ, आज चले स्यो रे जात,
पिण प्रवहण पूरे पाँच सौ, द्वीप मुगध माटे जाय।
ते तो अष्टादश योजन शत, मान इसु कहिवाय ॥६॥
—उत्तम कुमार चरित्र चौपई, पृ स ११६

आरूढ होकर देशाटन के लिए गया था।[1] 'विद्या विलास' मे वर्णित धनपति वैवहारिया और उसके पुत्रो के वार्तालाप से पता चलता है कि अन्य देशो से व्यापार होता था, पर इसमे जोखिम रहती थी। दूसरा, बिना जोखिम का व्यवसाय कृषि गिना जाता था, पर यह हेय समझा जाता था। धनपति के तीसरे पुत्र ने कृषि के धन्धे का विरोध इस आधार पर किया था कि इस धन्धे मे नीच व्यक्तियो की 'सगत' करनी पडती है। उसने व्याज पर रुपया उधार देने के व्यवसाय को उचित ठहराया था।[2]

वैश्य-वर्ग कृषि के धन्धे को कुछ हेय समझने लगे थे, किन्तु तत्कालीन समाज का प्रमुख धन्धा कृषि ही था। भारत मे वैदिककाल से लेकर आजतक इस धन्धे की महत्ता कम नही हुई है। 'नागजी नागवती री वात' से विदित होता है कि स्वय गृहपति खेत की रखवाली करता था। नागजी स्वय खेत मे दिन भर काम करते थे और उनकी भाभी वहाँ ही भोजन लेकर जाती थी। खेती के कार्य के लिए मजदूर रखे जाते थे।[3] जब कभी अकाल पडता था तो लोग उस प्रदेश को छोडकर अन्य प्रदेश मे जाकर बसते थे। कच्छ का स्वामी जाखडा अहीर अकाल पडने पर बागड प्रदेश मे पहुचा था और वहा के राजा से सहायता प्राप्त की थी।[4] ढोला मारू रा दूहा' मे भी अकाल पडने पर अन्य प्रदेश मे जाकर रहने का उल्लेख मिलता है।[5]

राजनैतिक-जीवन

राजा :

राज्य की सर्वोच्च सत्ता राजा मे निहित होती थी। राजा निरकुश होता था। वह ईश्वर का अवतार माना जाता था।[6] राजा की आज्ञा ही कानून होती थी, यद्यपि लोक रीति-नीति का भय उसे अवश्य बना रहता था। वह अपने राज्य की जनता और जमीन दोनो का स्वामी होता था। राजा अपने राज्य के प्रदेशो को तथा पूरे राज्य को भी किसी अन्य को सौप सकता था। उस युग मे राजा लोग

---

१. सिंहल सुत चौपई (ह. लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।
२. विद्या विलास (ह लि) रा प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।
३. नागजी नागवती री वात (ह लि) रा प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।
४. नागजी नागवती री वात (ह लि) रा प्रा. विद्या प्रतिष्टान जोधपुर।
५. ढोला मारू रा दूहा (ना प्र सभा, काशी)।
६. आलिम पति अलावदी, ईश्वर नो अवतार रे भाई।
   मुगल महाभड जेहनै, लाख सतावीस लार रे भाई ॥१॥
   —पद्मिनी चरित्र चौपई, पृ, स ८१

अपना आधा राज्य राजकुमारियो की दहेज मे दे देते थे ।[१] ऐसे भी उदाहरण प्राप्त-होते हैं कि यदि कोई व्यक्ति राजा को असाध्य रोग से मुक्त कर देता था, तो उसे पुरस्कार मे अपनी कन्या तथा आधा राज्य दे दिया जाता था । 'रतनपाल रतनवती रास' मे उल्लेख है कि रतनपाल के द्वारा राजा का नेत्र-रोग ठीक कर दिये जाने पर पुरस्कार मे उसे राजकुमारी रतनवती एव आधा राज्य मिला था ।[२]

शासन-प्रबन्ध :

शासन-प्रबन्ध मे प्रमुख सहायक प्रधान होता था ।[3] राजा प्रधान पर बहुत निर्भर रहता था । वह राजा का विश्वास पात्र होता था । उसका राजा पर इतना प्रभाव होता था कि युवराज तक को वह देश निकाला दिलवा सकता था । राजा प्रभुवत्स प्रधान के षड्यन्त्र का शिकार होकर युवराज सदयवत्स को देश निकाले का दण्ड दे देता है । प्रधान अधिकाश रूप मे धनाढ्य वैश्य होते थे । राजकोष पर इनका नियन्त्रण होता था ।[४] प्रधान के ही समकक्ष राजपुरोहित का पद भी होता था । राजपुरोहित राजा को धार्मिक एव प्रशासनिक, दोनो विषयो पर परामर्श देता था । राजा के अनेक रानिया होती थी जिनमे पटरानी का सर्वोच्च स्थान होता था । वह राजा को शासन-सचालन मे, व्यक्तिगत रूप मे प्रभावित करती थी । मध्ययुग मे बारहठ, वन्दीजन, चारण, भाट आदि होते थे जो राजा की विरुदावली गाते थे और उसे शौर्य प्रदर्शन के लिए उत्साहित करते रहते थे ।[५] चारण, भाटो को 'सरपाव' मोती के कडे, घोडे, जमीन आदि दान मे दी जाती थी ।[६] जन-धन की रक्षा के लिए कोतवाल और सिपाही होते थे ।[७] राजद्वार के पहरे पर प्रतिहारी

---

१. (क) उत्तम कुमार चरित्र चौपई, पृ स. १६६ ।
   (ख) विद्या विलास रास (ह लि) रा. प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर ।
२ रतनपाल रतनवती रास (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर ।
३. भीम कृत सदयवत्स वीर-प्रबन्ध, छद सख्या ६६, १०२, पृ स १४, १५ ।
४ बीजड बीजोगण री वारता (बिडला सेट्रल लाइब्रेरी, पिलानी) ।
५. (क) कवि भीम कृत सदयवत्स वीर-प्रवन्ध, पृ स ४२, ५७ ।
   (ख) नागजी नागवती री बात (ह. लि) रा. प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर ।
६ नागजी नागवती री बात (ह लि) रा. प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर ।
७ तब कोतवाले हो दिलामा देई ने, पूछ्यो इक कहो न्यारी लेइ ने ।
   रे सठ भाखी रे जेहवी वरती, मोत कुमोते होस्युं मरी करथी ।
   कहै ते तुम पग हो हाथ लगावू, जे ए वाते हो माँहरा दावू ॥
   —रूपसेन कुमारनो चरित्र, पृ. सं. ५७

होते थे।[1] 'मुद्रिका' अथवा कोई अन्य राज-चिह्न मे व्यक्ति कही भी आ-जा सकता था। महत्वपूर्ण व्यक्ति एव गुप्तचर 'मुद्रिका' से पहिचाने जाते थे।[2] राजा प्रजा का हाल जानने के लिए रात्रि मे वेश बदलकर निकला करता था।[3] अपने राज्य के हर वर्ग की सूचना प्राप्त करने के लिए प्रसिद्ध चोर, जुआरियो से भी सम्पर्क रखता था। राजा विक्रमादित्य के तो आगिया वेताल, खापरा चोर और काडिया जुआरी अन्तरग मित्र थे।[4] राज सवारी के लिए राज हाथी होता था। राजा प्रभुवत्स की सवारी के लिए 'जयमगल' नाम का हाथी प्रसिद्ध था।[5] चोर आदि व्यक्तियो को पकडने के लिए वेश्याओ को भी गुप्तचरी का कार्य करना पडता था।[6] नगर के चारो ओर परकोटा होता था और रात्रि मे नगर के द्वार बन्द हो जाते थे। रात्रि मे कोई भी व्यक्ति नगर मे प्रवेश नही कर सकता था। सुरक्षा की दृष्टि से नगर के चारो ओर विशाल खाई होती थी, जो पानी से भरी रहती थी। इस खाई में विषैले सर्प भी होते थे।[7] राजा की निस्सतान मृत्यु हो जाने पर, यह प्रथा भी प्रचलित थी कि राज-हाथी जिस व्यक्ति पर मगल-कलश उंडेल दे, उसे राजा बना दिया जाता था। 'प्रेमविलास प्रेमलता' प्रेमाख्यान मे उल्लेख है कि राजा

---

१. "तव प्रतिहार्य हो राय तेडाव्या।
तेसहु मिलने हो तत खिण आया॥"
—रूपसेन कुमारनो चरित्र, पृ. स. ५६, ५७

२. विद्या विलास रास (ह. लि) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।

३. मानुतुग मानवती रास (ह. लि,) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

४. आगियो नाम वेतालि जास.............. ....।
खापरो चोर सगले प्रसिद्ध, कोडियो जवारिवा वाचा दीध॥
—कुशललाभ कृत माधवानल कामकन्दला चौपई (ह. लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

५. ऐरावत सुणीइ इन्द्र नइ, जय मगल हूं तउ तम्ह तणई।
बीजउ कोइ न त्रिभुवनि कन्हइ, प्रापति पास इन रहिवा लहई॥१०२॥
—सदयवत्स वीर प्रबन्ध, पृ. स. १५

६. वेस्यां कहणे मुंकीयारे, नृपति में प्रतिहार रे जीत।
हिवै मुखा वेस्या करीरे, चोर पकड़वा दाव रै एहवौ॥
—रूपसेन कुमारनो चरित्र, पृ. सं. ६०

७. विद्या विलास रास (ह. लि.) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।

की निस्सतान मृत्यु होने पर 'प्रेमविलास' पर देवदत्त नामक राज-हाथी के द्वारा मगल-कलश उँडेल देने पर मत्रियो ने उसे राजा बना दिया था।[1]

न्याय व्यवस्था :

व्यक्ति राजा के पास बिना रोक टोक के अपनी फरियाद लेकर पहुच सकता था। गणिका कामसेना की शिकायत लेकर सेठ सीधा ही राजा के पास पहुच गया था और गणिका के पास चोरी का कचुक प्राप्त होने पर राजा ने उसे सूली का दण्ड दिया था।[2] दण्ड बडे कठोर दिये जाते थे। चोर को सूली की सजा दी जाती थी।[3] पर-स्त्री से अनुचित सम्बन्ध रखने वाले पुरुष को 'सिर छेदन' का दण्ड दिया जाता था। दण्ड-व्यवस्था से राज-पुत्र भी मुक्त नही था। राजा ने राजकुमार पुष्पसेन को सुलोचना से अनुचित सम्बन्ध रखने पर 'सिर छेदन' की सजा दी थी।[4] बादशाह ने शाहजादा कुतबदीन को भी सेठ-पुत्री से अनुचित सम्बन्ध रखने की शिकायत पर देश निकाले का दण्ड दिया था।[5] देश निकाले की अवधि प्राय. १२ वर्ष हुआ करती थी। अग-भग का दण्ड भी प्रचलित था। सिपाही की हत्या करने पर बादशाह ने जलाल के हाथ काट लेने का दण्ड दिया था।[6] अपराधी का सिर मुण्डवाकर तथा मुँह काला करके उसे गधे पर बैठाकर नगर मे घुमाया जाता था।[7] वध के लिए चाण्डाल नियुक्त थे।[8]

---

१ भारतीय प्रेमाख्यान काव्य (प्रेमविलास प्रेमलता कथा) डा० हरिकान्त श्रीवास्तव, पृ स. २६१।

२. सदयवत्स वीर-प्रबन्ध, (छद स. ५३८, ५३६, ५४७) पृ स. ७५, ७६।

३. क्रोध करी रणसिध नृप, आण दीध अखड।
सूली थालउ लेगइ, चोर तणी ए दड॥
—रणसिंध कुमार चौपई (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर

४ पद्मावती पुष्पसेन चौपई (ह. लि.) रा प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।

५ कुतबदीन शाहजादा री वारता (ह लि) रा प्रा विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।

६. जलाल गहाणी री वात (ह लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

७. पाटी पाडी मस्तकइ अवलइ रासभ चाडि।
फेरी सगलइ चउ हटइ, करणी भल देखाडि॥
—रणसिंध कुमार चौपई (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर

८ राजा अति कोपइ चडिउ, भिवली चाडी निलाउ।
तुरत चडाल हूतेहनउ, माथउ मुडय उज्जालि।
रासभ चड परि चाढिउ, मसि लाइ मुखि गालि॥
—मृगावती रास (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर

सैन्य-बल एवं युद्ध प्रथा।

मध्ययुग मे देश छोटे-छोटे राज्यो मे विभक्त था। प्रत्येक राजा के पास सुरक्षा के लिए सेना होती थी। दिल्ली के सुलतान अलाउद्दीन के पास तो बहुत बडी फौज थी। जब उसने चित्तौडगढ पर आक्रमण किया था, तब सत्ताइस लाख सेना उसके साथ थी।[1] सुलतान अलाउद्दीन के सैन्य-बल मे तीन लाख घुडसवार सेना थी। घोडे भी तुरकी और ईरानी जाति के थे। घोडों के स्वर्ण की लगामें थी। हाथी भी फौज मे होते थे। रथ और पैदल सिपाही तो असख्य थे। सेना के पडाव का भी वर्णन मिलता है। रग-बिरगे तम्बूओ पर ध्वज लहराते थे।[2]

तत्कालीन समाज युद्ध-प्रिय समाज था। छोटी-छोटी बातो पर युद्ध ठन जाता था। युद्ध का प्रमुख कारण कोई सुन्दर रमणी, शौर्य-प्रदर्शन की लालसा, मिथ्या अभिमान की तुष्टि और प्रतिशोध की भावना होती थी। क्षत्रिय लोग युद्ध मे प्राप्त मृत्यु से जीवन की सार्थकता समझते थे। ऐसा भी विश्वास प्रचलित था कि युद्ध मे मरने से स्वर्ग मे भोग-विलास के लिए अप्सरायें मिलेंगी। वीरागनायें पति को हँसते-हँसते युद्ध में भेजती थी। वे स्वय योद्धाओ का शृ गार करती थी। बादल की पत्नी ने युद्ध मे जाते समय बादल का हथियारो से शृ गार किया था तथा उसकी आरती उतारी थी।[3] युद्ध लम्बी अवधि तक चलते थे। 'वीरमदे सोनगिरा री बात' से विदित होता है कि सुलतान अलाउद्दीन जालोर के गढ को जीतने के

---

१. सतावीस लख दल सहित, साहि करू चक चूर।
—पद्मिनी चरित्र चौपई, पृ स. ७६

२. असवार भय लाख, अद्भुत पाखरे ज तुरग।
ता जीन तुरकी और अराकी, सबज नीले रग ॥५२॥
लगाम सोवन मुक्ख सोहै, जेर बध सुपाट।
अब रेसमी कसि तग ताणे, लटकणा के थार ॥६०॥
हलकै पचावन, साथ हाथी, ढलके तेजा ढाल।
राजे वहाँ पच रग तंबू, फर हरे नीसाण।
फूले पलास बसत आगम, जु दे कवि वाण ॥६६॥
—गोरा बादल चौपई, पृ स. ६४

३. सुभट तणो सिणगार करायो नारीइ।
बंधाया हथियार भला निज करि लाहि ॥१७॥
—जटमल कृत गोरा बादल चौपई, पृ. स. ७८

लिए १२ वर्ष तक घेरा डाले रहा ।[1] युद्ध मे मुख्य रूप से तलवार और भाले काम मे आते थे । चारण, ढाढी उत्साह दिलाने के लिए युद्ध मे साथ रहते थे ।

राजा और प्रजा का सम्बन्ध

'चन्द्रराज चरित्र' मे उल्लेख है कि 'राजा तो चन्द्रमा है और उसकी वाणी अमृत है । प्रजा के कान सीपी के समान है जिसमे राजा के अमृत-वचन पड़कर मोती बनते हैं ।'[2] इससे तो यही ध्वनित होता है कि आज्ञा पालन मे ही प्रजा का कल्याण निहित है । राजा प्रजापालक होता था और उत्सवो मे प्रजा भी राजा से साथ मनोरजन मे सम्मिलित होती थी । राजा जब प्रदेश से लौटता तो प्रजा उसका धूम-धाम से स्वागत करती थी । स्त्रियाँ गवाक्षो से राजा के स्वागत-जलूस को देखती थी ।[3] राजा व्यापारियो के जीवन और धन की रक्षा लिए अपने पुत्र या सामन्तो को व्यापारियो के साथ परदेश भेजता था ।[4] राज्य मे अकाल के समय राजा प्रजा की हर प्रकार से सहायता करता था तथा राजकीय अन्य भण्डारो को बिना मूल्य के जनता मे अन्न वितरण के लिए खुलवा देता था ।[5] अन्य प्रदेशो से भी अन्न मग-वाने का प्रयत्न किया जाता था । किन्तु तत्कालीन युग में राजा सर्वाधिकार सम्पन्न होता था, अत ऐसे भी अनेक उदाहरण मिलते है कि विवेक शून्य राजा प्रजा पर अत्याचार भी करते थे । सामन्तो, सेठ, साहूकारो तथा ब्राह्मण-वर्ग के अतिरिक्त सामान्य-जन की स्थिति पशुओ से भी अधिक खराब हो जाती थी । राजा के एका-धिकार का उदाहरण केसवकृत 'सदयवच्छ सावलिगा चउपई' मे मिलता है, जिसमे राजा धनदत्त सेठ की विवाहिता पत्नी को, उससे छीनकर सदयवच्छ को

---

१. वीरमदे सोनगिरा री बात (ह. लि.) रा प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर ।

२. नृप-मयक, वाणी-सुधा, प्रजा करण जिमि सीप ।
आवि तिथि मोती निपजे, सदा सुरद्दो दीप ।।
—चन्द्रराज चरित्र (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर

३. आणद वरत्या नगरी, सु दरु चन्द्र मुखी चन्द्राजु उखिहेए ।
जोवइ राज नइ राणी, प्रेम सूं ए राजावउ भागहेस ।।
—मृगावती रास (ह लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर

४. ससी पना री बात (ह. लि) रा प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर ।

५. "चवदै चाल कछ रो धणी, जाखडो अहीर, तिणरी नगरी मे दुकाल पडीयौ । तरै जाखडै अहीर कामदारा नु कहियौ—"आपणे कोठार सु सब लोका नै चाहिजै सु धान रुपीया वैगरा देवौ ।"
—नागजी नागवंती री बात (ह. लि.)

दिलवा देता है।[1] गणपति ने 'माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध' मे तत्कालीन भ्रष्ट-राजनैतिक जीवन का सजीव चित्रण किया है।[2]

ललित-कलाये

तत्कालीन समाज मे ललित-कलायें उन्नत अवस्था मे थी। विद्यालयो मे सगीत, नृत्य, नाटक, चित्रकला एव काव्य-कला की शिक्षा दी जाती थी।[3] राजकुमारो को नाना प्रकार की कलाये सिखाने के लिए कलाचार्य भी नियुक्त किये जाते थे।[4]

वास्तु-कला :

तत्कालीन समाज मे वास्तु-कला वडी उन्नत थी। 'पद्मिनी चरित्र चौपई' मे उल्लेख है कि विमान के आकार के विशाल महल बनाये जाते थे। इन महलो के पिछले भाग मे सुन्दर उपवन होता था जिसमे चातक, मोर, चकोर आदि नाना प्रकार के पशुपक्षी कलरव किया करते थे।[5] भवन-निर्माण-कला उन्नत अवस्था मे

---

१. केशव कृत सदयवच्छ सावलिगा चउपई।

२. राज चरित्र कुण केलवइ। कूड कपट नी कोड।
चासन थापइ चोर नइ, साधु लगाडई खोड॥
—गणपति कृत माधवानल कामकन्दला-प्रबन्ध

३ पिगल भणइ भणाविउ, सामुद्रिक-सगीत॥१५६॥
नाना नृत्य कलालहइ, नाटक, रूपक, छन्द।
तेज पणि त्रिभुवन तपइ, कोडि-कला जिम चन्द॥१६०॥
पाटी लेई, अक्षर पढइ, अनइ अनुभवइ अ क।
श्लोक, समस्या, पेहली, कहानी कहइ निशक॥
'साडगई, सारस्वत पढी, काव्य-कथा रस केलि।'
—गणपति कृत माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध, प स. २० व २६

४. बछराज चौपई (ह. लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

५. (क) ऊँचा अमर विमाण सा, मोटा महल अनेक।
गोख, झरोखा, जालियाँ, घोलति शुद्ध विवेक॥१॥
सरग, मृत्य, पाताल सब, सुन्दर वन आराम।
चात्रक, मोर, चकोर बहु, चितरीया चित्राम॥२॥
—पद्मिनी चरित्र चौपई, पृ स. ५४

(ख) गढ, मढ, मन्दिर मालीया, सुन्दर जाली झरोखा रे।
ऊपर अवल विराजता, मनगमता बले गोखा रे॥
—कर्मरेखावती चौपई (ह. लि,) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर

थी। राजाओ के गढ तथा महल सुन्दर जाली-झरोखो से युक्त होते थे। 'मृगावती रास' मे उल्लेख है कि विशाल महलो के शृंग पर पुतली बनाई गई थी जिसके नेत्र कमल के समान सुन्दर थे तथा कटि-प्रदेश क्षीण था। वह ऐसी प्रतीत होती थी मानो नगर की रिद्धि-सिद्धि ने अवतार लिया हो अथवा कोई स्वर्ग की कोई अप्सरा हो।[1] इससे विदित होता है कि मूर्ति-कला भी उस समय बडी उन्नत अवस्था मे थी। नगर-निर्माण की कला भी उन्नत थी।[2]

चित्रकला :

चित्रकला का विकास भी बहुत उन्नत अवस्था मे था। इन प्रेमाख्यानो की रचनाकाल की अवधि मे राजस्थान मे बहुत सी चित्र शैलियाँ प्रचलित थी। जोधपुर, बीकानेर, किशनगढ, बूंदी आदि देशी रियासतो के नाम पर भिन्न-भिन्न शैलियाँ प्रचलित थी। मुगल शैली बहुत प्रसिद्ध थी। सचित्र प्रेमाख्यानो के अवलोकन से तत्कालीन समाज मे चित्रकला की उन्नत अवस्था का पता चलता है। चतुर्भुज कृत 'मधुमालती प्रेमाख्यान' की अनेक प्रतियाँ विभिन्न प्रकार के चित्रो से सुसज्जित हैं। 'वेलि क्रिसन रुक्मणी री' आदि कई प्रेमाख्यानो की कथाये चित्रो मे चित्रित की गई है, जिनसे तत्कालीन समाज मे प्रचलित चित्र-कला की महत्ता को व्यक्त करती है। मध्ययुग मे विवाह के अवसर पर वधू को सखियो की ओर से सचित्र प्रेमाख्यान भेट किये जाते थे। इन प्रेमाख्यानकारो ने जिस समाज का चित्रण किया है उससे भी विदित होता है कि उस समाज मे चित्रकला का पर्याप्त विकास था। 'मृगावती रास' मे उल्लेख है कि जिस प्रकार तिलक के बिना स्त्री का रूप नही खिलता, उसी प्रकार चित्रकारी के बिना आवास शोभा नही पाते। राजा सातवाहन ने दूर-दूर से चित्रकार बुलाकर अपने महलो मे चित्रकारी करवाई थी।[3] उस युग मे अन्त पुर मे चित्र बनवाने की प्रथा प्रचलित थी। चित्रकार मानव, पशु, पक्षी, प्रकृति आदि विविध प्रकार के चित्र बनाने मे पटु थे। अन्तःपुर

---

१. प्रासाद-शृंग उपरि पूतली, कमल नेत्र नइ कटि पातली।
जाणी नगर रिधि जोवामणी, सुर सुन्दरी आवी घणी ॥
—मृगावती रास (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर

२ देखिये इसी अध्याय के पृ. स. ५०९ की पाद टिप्पणी, क्र. स १।

३. पणि सेहइ नही ताहरइ, विन चित्राम आवासो रे।
तिलक परवइ जिम स्त्री, तणउ मुख न धरिउ उजासो रे ॥
- मृगावती रास (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर

मे मृगावती के चित्र को देखकर राजा विस्मय मे पड गया था।[1] कमलावती के चित्र को देखकर राजकुमार भी विस्मय विमुग्ध हो गया था।[2] 'गुलाबा भवरा री वात' मे उल्लेख है कि प्रेमिका अपने प्रेमी का चित्र बनाकर पास मे रखती थी।[3]

नृत्य, नाट्य एव सगीत कला :

तत्कालीन समाज मे नृत्य, नाट्य एव सगीत कला का प्रचुर प्रचार था। कई प्रकार के नृत्य प्रचलित थे। गणिका कामकन्दला नृत्य-कला मे इतनी प्रवीण थी कि उसने अपने कुचो पर बैठे भ्रमर को 'न्यास-पवन' नृत्य के द्वारा चतुराई से उडा दिया था।[4] इसी प्रकार गणिका कोशा का 'सूचिका नृत्य' बहुत प्रसिद्ध था।[5] कत्थक-नृत्य का भी प्रचलन था। राजकुमारी सुरसुन्दरी ने देव मन्दिर मे राजा और सभा-सदो के सम्मुख कत्थक-नृत्य किया था।[6] कुशललाभ ने इन्द्र की सभा मे

---

१. गुरुड, मयूर, सुक सारिका, पखी रुप अनेक रे।
निपुण चीतारइ सगला, चीता स्यारे वारु जाणि विवेक रे ॥
'मृगावती रुप देखकर, विसमउ पडयउ ए राय रे।'
—मृगावती रास (ह लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर

२. पाटो कुँअर ले हाथ मे चित्राम निर्मल लागो रे।
नख शिख, सुन्दरता सहु, जोता नेन हे पग आगा रे ॥
—कमलावती चौपई (ह लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर

३. तू छै प्राणाधार ओ जीव छै थाहरो।
परि हाँ चित्र रखी जै पास, प्यारी जी माहरो ॥६॥
—गुलाबा भवरा री वारता (ह. लि.) राजस्थानी शोध-सस्थान, जोधपुर

४ चन्दन केरी कचुकी, रविस्यु अति राजति।
कुच ऊपरि क्रीडा करइ, खट्ट-पद बइठउ खति ॥
शिर चलाइ शोणित घणऊँ, प्रमदा पीडी अपार।
'न्यास-पवन' प्रगगडउ करी, अडाडिउ तिणि नारि ॥
— गणपति कृत माधवानल-कामकन्दला-प्रबन्ध

५. स्थूलि भद्र कोशा प्रेम-विलास फागु (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

६. सुरसुन्दरी कीनी सुलरीवा, जय जय जय जय।
वा धीग धीग तीरे झील मलती धरती पग धरिवा।
तत, थेइ, थेइ, थेइ, थेइ, थेइ, थेइ उचारे।
काइ फर हर फुदी देता, फावे फुदरी वा मुख उपर लड दोडनो।
अंजन सु अति नीभट नीजर मे राखी सुराखी सुरे हो ॥
—विद्या विलास रास (ह. लि.) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर

अप्सराओ के नृत्य और संगीत का सरस वर्णन किया है।[1] नाट्य-कला भी बहुत विकसित अवस्था मे थी।[2] वाद्य और शास्त्रीय सगीत प्रचलित था। माधव सगीत का पारखी था। उसने सगीत सभा से दूर रहकर. बाहर से ही वाद्यो की ध्वनि से, बजाने वालो की कमी पहिचान ली थी।[3] सगीत मे सात स्वर और बत्तीस रागनियो का प्रमुख स्थान था। वाद्य-यत्रो मे वीणा-वादन का बहुत प्रचलन था।[4]

काव्य-कला :

काव्य-कला का भी समुचित विकास था। सस्कृत, अपभ्र श एव प्रादेशिक भाषाओ मे सरस काव्य-ग्रथ लिखे गये। राजस्थानी भाषा की रचनाये तो गद्य और पद्य दोनो मे १४वी शताब्दी से उपलब्ध होती है। इन प्रेमाख्यानो मे वर्णित-समाज मे भी काव्य कला के प्रचलन का उल्लेख मिलता है। काव्य-रचना की विद्यालयो मे शिक्षा दी जाती थी। इन काव्य ग्रथो की अनेक विद्वानो द्वारा समीक्षा भी की जाती थी। समीक्षा-शास्त्र तथा काव्य मे नव-रस आदि का उल्लेख मिलता है।[5]

तत्कालीन समाज मे विद्या का बडा महत्व था। विद्या ही असली धन समझा जाता था। विद्वान् पुरुप सौभाग्यशाली गिना जाता था। विद्या के द्वारा

---

१ वाजइ तत्री वीणा, कसाल, बत्रीसे मिली अपछर बाल।
मोडि अ ग नई तोडे ताल, मन सकइ अपछर ततकाल ॥
कर ग्रही वीणा अलापइ नाद, सुधा मधुर वीणा-रस सवाद।
—कुशललाभ कृत माधवानल कामकन्दला चौपई (ह. लि.)

२. देखिए इसी अध्याय की पाद-टिप्पणी क्र. स ४, पृ स ५०४।

३. दक्षिण दिशि दूरी रहिउ, हीण अ गूठउ हत्थि।
वीणाकार वाड सुसर, तास दत दोई नत्थि ॥
—गणपति कृत माधवानल कामकन्दला-प्रबन्ध

४ सात स्वर पठराज विलास, मिलि बत्रीस रागिनी बाल।
तंत्री तारमइ नइ घोर, कोमल-रस, कर-घात-कठोर ॥
— गणपति कृत माधवानल कामकन्दला-प्रबन्ध

५. शास्त्र अनेक वाचै भणै, नव-रस पोपई नित लाव।
सौ सौ अरथ नवा करै, चतुरा मोहै चितलाल ॥
—पद्मिनी चरित्र चौपई, पृ. सं. ११

व्यक्ति को यश और आदर मिलता था।[1] विद्या विलास मे उल्लेख है कि विद्या से यश, भोग और सुख प्राप्त होता है।[2] 'सदयवत्स सावलिंगा चउपई' मे भी उल्लेख है कि विद्या के बिना नर पशुतुल्य होता है। जिस प्रकार प्रेमी अपनी प्रिया के वियोग मे दुखी रहता है, उसी प्रकार मनुष्य विद्या के बिना दुःखी रहता है।[3] विद्वान् पुरुषो का राजसभा मे भी सम्मान होता था। सेठ-पुत्र धनसागर को 'पुरा-लेख' पढने पर विद्या विलास की उपाधि दी गई थी तथा मत्री का पद दिया गया था।[4] पण्डित राघव चेतन ने श्लोक, कवित्त, कथा आदि सुनाकर बादशाह अलाउद्दीन को प्रसन्न कर लिया था और उसे राज-सभा मे आदर मिलने के साथ पाँच सौ गाँव भी प्राप्त हुए थे।[5]

शिक्षा-प्रणाली :

शिक्षा गुरु के आश्रम मे दी जाती थी। गुरु का वडा आदर किया जाता था।[6] विद्यार्थियो को चाहे वह राज-पुत्र ही हो, बारी बारी से आश्रम के उपवन की रखवाली करनी पडती थी। सदयवच्छ को भी पढते समय आश्रम के उपवन

---

१. सद् विद्या धन सरसतो, विद्या रूप सुहाग।
मान महातम, जस अधिक, विद्या मोटो भाग ॥१॥
—पद्मिनी चरित्र चौपई, पृ स. १७

२. जग मे विद्या जानीए, आवे नीधान अपार।
पाडीत नर पामे सकल, आदर लाख अन्नत।
पाहवीये परसीध वदे, बुधीवत बलवत ॥
—विद्या विलास (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर

३. केशवकृत सदयवच्छ सावलिंगा चउपई, छद सख्या १७, १८, १९, २०, पृ. स. १६६ व १३७।

४. सुवि चवदह ही विद्या, साचवतो उपजाव उलास।
नाम दीयो तद नगर तणे, मिलि विद्या तणो विलास ॥
—विद्या विलास (ह. लि.)

५. श्लोक, कवित्त कथा करके लाल, रीझ्यो निपट पतिसाह रे ॥१॥
गाव पाचसै अति भला रे लाल, मन मइ धरीय विवेक रे सोभागी ॥२॥
—पद्मिनी चरित्र चौपई, पृ. स. १७

६. कर जोडी मुहतो कहइ ! सुणि ओझा ! सुविचार।
एह भणावो अम्ह तणी, पुत्री रति अणुहार ॥
—केशव कृत सदयवच्छ सावलिंगा चौपई, पृ स १३७

की रखवाली करनी पडी थी ।[1] बडे-बडे विद्यालय भी होते थे । श्रीपुर नगर के विद्यालय मे पाच सौ छात्राये पढती थी[2], विद्यार्थियो की संख्या अलग है। विद्यालय मे अथवा गुरु-गृह मे प्रथम-प्रवेश के समय उत्सव मनाया जाता था ।[3] विद्यालय मे प्रवेश के समय विद्यार्थी की आयु आठ वर्ष की होती थी ।[4] बडी आयु के छात्र भी अपनी प्रतिभा दिखलाकर प्रवेश पा सकते थे। श्रीपुर की शाला मे धनसागर ने ओझा को अपनी प्रतिभा मे प्रसन्न कर प्रवेश लिया था ।[5]

विषय :

पढाई का आरम्भ 'सिद्धो वरणा' से होता था। इसके पश्चात् 'क' वर्ग के वर्णाक्षर प्रारम्भ कराये जाते थे। मात्राओ का ज्ञान देने के लिए 'बारहखडी' सिखलाने का प्रचलन था ।[6] प्रारम्भ मे, लिखने का माध्यम 'काष्ठ-पट्टिका' होती थी। इसके बाद मे अनेक विषयो की शिक्षा दी जाती थी। राजनीति, व्याकरण, अमर-कोष, पिंगल, लीलावती (गणित) की शिक्षा दी जाती थी। आयुर्वेद, रसायन शास्त्र, ज्योतिष आदि अनेक विषय पढाये जाते थे ।[7] शास्त्रो का भी अध्ययन कराया जाता

---

१. केशव कृत सदयवच्छ सावलिगा चौपई, पृ स. १३७ ।

२. विद्याविलास रास (ह लि.) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।

३ आडम्बर करि कुमर नै मुक्यो भणवा नै काज रे ।
हारे लाल, लेखक शाला माहिजे, जुडि बैठा छात्र अनेक रे लाल ।
ते सहु पाछलि तैहने, अध्ययन करै सु विवेक रे ।।४।।
—उत्तम कुमार चौपई, पृ. स. ११२

४. आठ वरस नु अनुक्रमइ रे, पुत्र हुओ परिधान।
माता पिता मन रग सु, मुक्यउ पढिबा बहुमान रे ।।
—पुण्यसार चरित्र चौपई, पृ स. १२५

५. विद्याविलास (ह. लि.) रा प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।

६. "उ नम सिद्ध प्रथम पढाई। मुनि 'कक्का' दाउ कक्काई।
बावन अक्खिर अक्खिर चीने, बारे खरी बोहीरि लिख दीने ।
चाणायक, व्याकरण, समेत । सारस्तुत को सघलो हेत ।
अमर-कोष, पिंगल, लीलावती । जेकरि कमल दिये सर सती ।।
—चतुर्भुज कृत मधुमालती, पृ. स. १५२

"गुटी, पुटी (रसायन-शास्त्र) जटी, तत, जत (यन्त्र) मत, अ त, पत, इलावसी कार एक धुरे घडघात है।"
—विद्याविलास (ह लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर

था। चारो वेद, अठारह पुराण, स्मृति शास्त्र, आदि शास्त्र पढाये जाते थे।[1] आयुर्वेद, पिंगल, समुद्रकी के अतिरिक्त सगीत, नृत्य, नाट्यकला, श्लोक, समस्या, पहेली, कहानी, रचना अथवा कहानी-कथन की कला, काव्य-कला आदि विविध ललित-कलाओ की शिक्षा दी जाती थी।[2] शस्त्र-विद्या के साथ शास्त्र विद्या भी सिखलाई जाती थी। 'सदयवत्स वीर-प्रबन्ध' मे उल्लेख है कि सदयवत्स ने गुरु-गृह मे दण्ड-विद्या अर्थात् विधि-शास्त्र और शास्त्र-विद्या का अध्ययन किया था।[3] राजकुमारो को शास्त्र-विद्या तथा अन्य कलाओ के सिखलाने के लिए कलाचार्य नियुक्त किये जाते थे।[4] उत्तम कुमार चौपई' मे उल्लेख है कि 'अश्व-विद्या' का भी प्रशिक्षण दिया जाता था।[5] स्त्री-शिक्षा का प्रचलन भी प्रचुर मात्रा मे था। सावलिगा, मालती, सोहगसुन्दरी, कामकन्दला, रतनवती आदि नायिकाओ ने विद्यालयो मे शिक्षा प्राप्त की थी। 'मानुतु ग मानवती रास' मे उल्लेख मिलता है कि मानवती गुरु-गृह मे पढती थी।[6] श्रीपुर के विद्यालय मे पाच सौ छात्रो के पढने का उल्लेख हम कर चुके है। नायिकाओ द्वारा अपने प्रेमियो को प्रेम-पत्र-प्रेषण से भी यही ध्वनित होता है कि तत्कालीन समाज मे स्त्री शिक्षा का प्रचार प्रचुर मात्रा मे था।[7]

---

१ अेम अठार पुराण पढि, वेद वखाणइ चारि।
अ गि कला अधिकी चउइ, जाणइ अवर पुरारि ॥१५१॥
—गणपति कृत माधवानल कामकन्दला, पृ स २०

२. गणपति कृत माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध, पृ. स २१ से २६ तक।

३. भणइ गुणइ सवि विद्यासार, वडइ वडावड चड्या कुमार।
भणइ दडामुध नउ मर्म, बेउ भाति उदयवत कर्म॥
—केशव कृत सदयवच्छ सावलिगा चउपई, पृ. स. १०२

४ वछराज चौपई (ह लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

५ उत्तम कुमार चरित्र चौपई, पृ. स. ११३।

६. सेठ वदे ते बालिका, गई अबे सुणो देव।
भणवा अध्यापक गृहे, जिमबा आवस्ये हेव ॥
—मानुतु ग मानवती रास (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर

७. स्वस्ति श्रीपुर कामावती, कामकन्दला सुणि विमती।
माधव तणा सन्देश बहू, कठा लिगण बाच सहू ॥
कामकन्दला मोकलो कागद माधव काजि।
तिण मेथि आणवीयो, सीधा सगला काज ॥
—कुशललाभ कृत माधवानल कामकन्दला (ह. लि.)

सह-शिक्षा :

आजकल की भांति ही तत्कालीन समाज मे भी सह-शिक्षा का उल्लेख मिलता है। वस्तुत केशव कृत सदैवच्छ सावलिंगा चउपई विद्या विलास, मधु-मालती, पुण्यसार चौपई, प्रेमविलास प्रेमलता आदि अनेक प्रेमाख्यानो की नायक-नायिकाओ मे प्रेम-सम्बन्ध विद्यालयो मे साथ-साथ पढते हुए हुआ था। इस प्रकार ये विद्यालय प्रेम-विवाह के केन्द्र होते थे। श्रीपुर के विद्यालय में राजकुमारी सोहगसुन्दरी के साथ धनसागर भी पढता था और साथ-साथ पढते दोनो मे प्रेम हो गया था।[1] 'पुण्यसार चौपई' मे भी उल्लेख है कि रतनवती और पुण्यसार मे विद्यालय मे जब दोनो साथ-साथ पढते थे, तभी एक दिन दोनो मे नर नारी के अधिकारो को लेकर वाद-विवाद हो गया था और वही प्रारम्भ की लडाई आगे चलकर प्रेम-बन्धन मे बदल गई थी।[2] 'सदेवच्छ सावलिगा चौपई' मे उल्लेख है कि जब आश्रम मे मन्त्री-पुत्री सावलिंगा और सदैवच्छ साथ-साथ पढते हैं तो वह सदैवच्छ को सयमपूर्वक रहने के लिए सचेत करती है तथा दोनो के प्रेम मे पडने की आशंका से एक दूसरे के प्रति अन्धी और कोढी होने का मिथ्या भ्रम उत्पन्न कर देता है। किन्तु इतनी सावधानी के पश्चात् भी पर्दे का वर्जन भग कर दोनो प्रेम-बन्धन मे बध जाते हैं।[3] इसी प्रकार मधु मालती भी एक ही पाठशाला मे साथ-

---

१ भेली वेसी ने भणे, मुलके देखी मुख।
नेह भरे भर नयण डे, नीरखे निमख निमख ॥
हेत देखाडी हीयडे, नेह देखाडी नेमण।
एक दिन अवसर देखी ने, कहे कुअरीए वेण ॥

—विद्याविलास (ह लि) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर

२. तिण नगरी निवसइ तिहा रे, रतनसार रिद्धि वत।
सुता तेहनी सुन्दरी रे, रत्नवती रूपवत रे ॥
तेपिण भणइ सदा तिहारे, बुद्धिवती बलवत।
पढता ते पुण्य सारस रे, होड करइ हठवत रे ॥

—पुण्यसार चौपई, पृ. स. १२४

३. कहइ ओझो ! सुणि सदय कुमार, जेछइ माहरइ गेह मझारि।
अे पुत्री साम मत्री स्वर तणी, सावलिगा सज्जम तिण भणी ॥४३॥

—सदयवच्छ सावलिगा चउपइ, पृ. सं. १३९

साथ पढते समय प्रणय-सूत्र मे बध जाते है ।[1]

धर्म और विश्वास ·

इन प्रेमाख्यानो से विदित होता है कि तत्कालीन समाज मे धर्म का बाह्य रूप ही अधिक प्रचलित था। साधारण जनता भाति-भाति के अन्धविश्वासो से जकडी हुई थी। वह यक्ष, विद्याधर, भूत-प्रेत तथा भाति-भाति के लोक देवताओ का पूजन किया करती थी। परा-प्राकृतिक शक्तियो की पूजा मे भय की भावना अधिक थी। भिन्न-भिन्न मत और सम्प्रदाय प्रचलित थे। तान्त्रिक और वामाचार मतो का बोलबाला था। जनता चमत्कारो मे विश्वास करती थी। नाथ पथी योगियो की चमत्कारपूर्ण सिद्धियो की बातें बहुत प्रचलित थी। योगी अपनी सिद्धि की सफलता के लिए नर-बलि देते थे।[2] वामाचार मे तीन 'मकार' मदिरा, मास और मैथुन की प्रमुखता थी। मध्ययुग मे 'गोरखपथ' का प्रभाव था। सुलतान[3] और रसालु[4] को बाबा गोरखनाथ ने अनेक सिद्धिया दी थी और सकट पडने पर इन दोनो नायको की सहायता भी की थी। लघुलाघ की विद्याओ का प्रचार था। वाम-मार्गीय और तान्त्रिक विश्वासो के अतिरिक्त पौराणिक और सनातनी धार्मिक भावनाओ के प्रति जनता की गहरी आस्था थी। पौराणिक अवतारो और देवी-देवताओ मे विश्वास था। भगवान श्रीकृष्ण को रुक्मणि का

---

१. पण्डित अच्छर जे जे कहे। सुनत मालती जब सीख लहे ॥
नावा वाचै आगम चढी। मानु उदर माझ ते पढी ॥
मत्री सुत कुछ अधिक पढै। सुनत मालकी चुप जीय वढै ॥
मधु मालती दोउ प्रवीण। दोऊ सरस न कोई हीण ॥
पटेट पच थोरी गहि फारी, कर ग्रहि गैद फूल सू मारी ॥
मधु चितै अरु ऊचो देषै। मालती वदन कलानिधि पेसै ॥
मो तन मध्य सकल तू बसै। मो तन चितवत एक न दसै ॥
मो तन मन तब तौर पर दीनो। कनक सुहागलो तै कित किनी ॥

—मधुमालती

२. (क) चन्द्रराज चरित्र (ह. लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।
(ख) बगडावता री बात (ह लि) राजस्थानी शोध सस्थान, जोधपुर।

३. निहालदे सुलतान के पवाडे, मरुभारती (अप्रेल १९५८) डा० कन्हैया लाल सहल।

४. राजा रसालु री बात (ह लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

पत्र एक भक्त हृदय का आत्म-निवेदन ही है।[१] 'महादेव पारवती री वेलि' का रचयिता शिव का भक्ति-भाव पूर्ण वर्णन करता हुआ पाठको को उनकी श्रद्धापूर्वक भक्ति करने के लिए प्रेरित करता है।[२] गगावतरण मे भगवान् विष्णु और ब्रह्मा का भी वर्णन किया गया है। 'सदयवत्स वीर-प्रबन्ध' मे वन मे स्थित शिव मन्दिर का वर्णन मिलता है। राजकुमारी लीलावती मनवाछित वर की प्राप्ति के लिए नित्य शिव पूजन करती है तथा बिल्व-पत्र चढाती है।[३] माता हरसिद्धि की प्रथा भी प्रसिद्ध थी। सूर्य को जलधारा दी जाती थी।[४] ब्रह्मा, विष्णु, महेश, सरस्वती और गणेश की पूजा का वर्णन 'देव-चरित्र' मे मिलता है। लोक-देवताओ पर सामान्य जनता विश्वास करती थी।[५] देव नारायण लोक-देवता के रूप मे पूजित हुए थे। लोक-देवताओ के 'देवरो' को सोने के कलश से मडाया जाता था।[६] 'लखनसेन पद्मावती कथा' से विदित होता है कि तत्कालीन समाज मे शिव-पार्वती की पूजा बहुत प्रचलित थी।[७] सामान्य जनता पूजा, अर्चना, आराधना, तीर्थाटन, स्नान,

---

१. बलि बधण मूझ स्याल सिंह बलि,
पासै जो बीजौ परण।
कपिल धेनु दिन पात्र कसाई,
तुलसी करि चण्डाल तणै॥

× × ×

हरि हुए बराह हुए हरिणकस,
हू अधरी पाताल हूं।
कहौ तई करुण मैं केसव,
सीख दीध किण तुम्हा सू॥

—वेलि क्रिस्न रुक्मणि री

२. महादेव पार्वती री वेलि (सा. रा. रिसर्च इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ. स. २, ३।

३. गलते वृति, कीद्ध स्नान, धवली धोति तणु परिधान।
निर्मल नीरिइ भरवि श्रृगार, ढालइ ईश अखडित धार॥२२७॥

—सदयवत्स वीर-प्रबन्ध, पृ. स. ३०

४. नागजी नागवती री बात (ह लि.) रा. प्रा. विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।

५. सिवरु देवी सारदा, नमण करू गुणेस।
पाच देव रक्षा करे, ब्रह्मा, विष्णु महेश॥

—देव-चरित्र (ह. लि)

६. नाथ कवि कृत देव-चरित्र (ह लि.)।

७ सरग ते अपछर उतरई, ईस गवर की पूजा करई।

—लखमसेन पद्मावती कथा

सध्या, व्रत आदि में बहुत विश्वास करती थी। तीर्थों मे स्नान करने से आध्यात्मिक सुख मिलता था। गणपति कृत 'माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध' मे उल्लेख है कि जब विरह से व्याकुल माधव तपस्वी के पास गया, तब उसने माधव के पूर्व जन्म के पापो के शमन के लिए प्रयाग, गया, पुष्कर कालिजर, काश्मीर, विमलेश्वर, गगा-सागर आदि अडसठ तीर्थों का वर्णन किया है तथा हरेक तीर्थ का माहात्म्य बतलाया है।[1] 'लखनसेन पद्मावती कथा' मे लिखा है कि तीर्थों पर तैंतीस करोड देवता निवास करते हैं।[2] 'चन्द्रराज चरित्र' मे उल्लेख है कि सिद्धराज तीर्थ मे स्नान करने से मुक्ति मिलती है।[3] गणपति ने स्नान सध्या के माहात्म्य का भी वर्णन किया है। भारत मे नदियो का माहात्म्य सदा से ही रहा है। गगा, यमुना, सरस्वती, गोमती, जिस प्रकार उत्तर भारत मे अपनी पवित्रता के लिए प्रसिद्ध है, उसी प्रकार दक्षिण भारत मे नर्मदा का माहात्म्य रहा है। गणपति ने माधव से नर्मदा नदी की स्तुति जिस तन्मयता से कराई है, उससे भारतीय पौराणिक-विश्वास का पता चलता है।[4] गगा और यमुना का तो इतना माहात्म्य था कि जिस प्रदेश मे बहती है, वे प्रदेश तीर्थ के समान ही समझे जाते थे।[5] जनता का व्रत, उपवासो मे बडा विश्वास था। 'हसाउली विक्रम विवाह' मे पता चलता है कि पुत्र वियोग

---

१. वीर बडी वाराणसी, तीरथराज प्रयाग।
निरखे नैमुख नइ गया, करि करु देव त्रिह सुहाण ॥४॥
पुष्कर पेखि प्रयास पण, कालिञ्जर कास्मीर।
विमलेश्वर वरजावली, गगा-सागर तीर ॥५॥
—गणपति कृत माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध, पृ स. १३६

२. सोम कमल परमिल सहकाइ, सुर त्रेतीस कोडि तिण ठाई।
तिण सर विप्र जपई गाइत्री, पूजई देव हाथ करबती ॥
— लखनसेन पद्मावती कथा

३. चन्द्रराज चरित्र (ह लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

४ 'नमो नमो तू नर्मदे, जल कैवल्य कल्लोल।
चौद कल्प चासन थया, भोगवता भूगोल ॥
शकर स्वेद थिरीसरी, स्वर्ग, मृत्यु, पातालि।
चारि पदारथ पूरवह, कामधेनु कलि काल ॥
—गणपति कृत माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध, पृ स २६०-२६१

५. तीरथराज तिहाथमु, गिहावड जमुना गग।
—गणपति कृत माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध, पृ स १०६

से दु खी रानी सत्यवती ने पुत्र-मिलन की कामना लेकर 'शक्ति व्रत' लिया था, तथा कनक भोज ने 'अशोक-व्रत' लिया था।[1] प्रियमेलक तीर्थ स्थान पर 'धनवती' ने पति से मिलन-कामना की पूर्ति के लिए 'मौन-व्रत' लिया था।[2] 'देव-चरित्र' मे उल्लेख है कि बाल विधवा लीलावती पुष्कर की पहाडियो मे तपस्या करती थी और पुष्कर मे नित्य स्नान करके सूर्य को जलधारा देती थी।[3] विशेष तिथियो पर भी व्रत उपवास रखा जाता था। 'झूलना एकादशी' को उत्सव मनाया जाता था और व्रत भी रखा जाता था।[4] लोक-धर्म मे गाय के प्रति बडी निष्ठा थी। गायो की रक्षा करते हुए मारे जाने वाले वीर लोक-देवता के रूप मे प्रतिष्ठित हुए थे।[5] काशी करवत लेने की भी प्रथा थी। ऐसा विश्वास था कि काशी करवत लेने से स्वर्ग प्राप्ति होती है।[6]

जैन-धर्म

राजस्थानी जन-प्रेमाख्यानो मे जैन-धर्म का विस्तृत वर्णन मिलता है। इन जैन मुनियो का प्रेमाख्यानो की रचना करने का मुख्य उद्देश्य ही यही था कि धर्म को मीठी गोली बनाकर लोगो के गले में उतारा जाय। अतः इन जैन-प्रेमाख्यानो मे जैन-धर्म के सिद्धान्तो के प्रतिपादन के साथ-साथ दान, शील, तप-भावना के माहात्म्य का प्रमुख रूप से वर्णन किया गया है। जन्म जन्मान्तरवाद और पूर्व भव के पाप-पुण्यो मे अटूट आस्था भी व्यक्त की गई है।[7] जैन-मुनि ससार को नश्वर और क्षणिक मानते है, अतः वे स्वय तो वीतराग होते थे, अपने श्रावको को भी वीतराग होने का उपदेश देते थे। मरौंच मे उत्तम कुमार ने मुनि सुव्रत स्वामी से दीक्षा ली

---

१ हसाउली विक्रम चरित्र विवाह (फार्बस गुजराती सभा, बम्बई–१९३५)।
२ प्रिय मेलक चौपई (सा रा. रि. इन्स्टीट्यूट, बीकानेर) पृ स. ६।
३ नाल कवि कृत देव चरित्र (ह. लि)।
४ गुलावा भवरा री वारता (ह. लि.) राजस्थानी शोध सस्थान, जोधपुर, ग्र थाक १७३५।
५. नाथ कवि कृत देव-चरित्र (ह. लि)।
६ हसाउली विक्रम चरित्र विवाह (श्री फर्बस गुजराती सभा बम्बई, १९३५)।
७. जउ उदयगत आवद आपणई, पूरव कृत पुण्य पाप।
विण भोग वियाते नवि छूटियई, करता कोडि कलाप।।४।।
किण जाण्यो थी एहवा कष्ट मे रे, पडती रतन पडूर।
पिणह एहवी भावी वणी रे, जे हवो कर्म-अंकूर।
—सिहलसुत चौपई, पृ स. ७०

थी।[१] राजा विजयसेन मुनि के उपदेश सुनने पर राजपाट त्याग कर स्वय भी 'धर्मगणि मुनि' बन गया था।[२] जैनियो मे यक्ष-पूजा का प्रचलन बहुत था।[3] दान, शील, तप, भाव को मुक्तिपथ बतलाया गया है, किन्तु इसमे दान की महिमा अधिक थी।[४] यह भी लिखा गया है कि दान योग्य-पात्र को ही दिया जाना चाहिये। शील-धर्म के प्रति भी अटूट आस्था व्यक्त की गई है।[५]

देश की अखंडता और भावात्मक एकता का चित्रण

मध्ययुगीन राजस्थानी-काव्य की सबसे बडी विशेषता यह है कि अधिकाश काव्य-ग्रथो मे देश की अखण्डता और भावात्मक एकता का सुन्दर चित्रण मिलता है। अनेक जैन-चरित-काव्यो का प्रारम्भ ही मगलाचरण के पश्चात् जम्बूद्वीप के साथ ही भरत खण्ड की भौगोलिक अखण्डता के दिग्दर्शन से होता है। इस देश मे राजनैतिक एकता भले ही नही रही हो, पर सास्कृतिक एकता यहा प्राचीनकाल से ही रही है। राजनैतिक एकता की दृष्टि से यह देश भले ही टुकडो मे बँटा हुआ था, किन्तु कभी-कभी चक्रवर्ती सम्राट होते थे और उनके राजसूय-यज्ञो के महान् आयोजनो से राजनैतिक एकता स्थापित करने के भी प्रयत्न होते रहे। इस विशाल देश मे लोगो की विविध वेश-भूषा, विविध भाषाये, विविध धार्मिक विश्वास और मत मतान्तर को देखकर, अपरिचित व्यक्ति को यह भ्रम हो सकता है कि भारत-देश एक देश नही,

---

१. 'तिहा जिनवर मुनि सुव्रत स्वामि नै, देव गृह निज आपस ही सु।'
—उत्तम कुमार चरित्र चौपई, पृ. स. ११८

२. रणसिंध कुमर चौपई (ह लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

३. रणसिंध कुमार चौपई (ह. लि) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

४. मुगति पथ च्यारे अछै, दान, शील, तप-भाव।
पिण जग गुरु पहिलि कीयो, दान तणो प्रस्ताव॥
दान पात्र ने दीजिए, ततो लाभ अपार।
पिण दान भणी अनुमोदना, सुख लहियै श्रीकार।
—चित्रसेन पद्मावती रतन सार चौपई (ह. लि.) श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर, अजमेर।

५ सीलन खडु जीभडी खड स्युरे कैनाखु सिरकाट।
पच्छिम ऊगै रवि पूरब थकीरे वारिधि चूके ठीक।
जलणी जलु कै जल मे, पडु रे, पिणनहु लोपु लीक।
—सिंहल सुत चौपई, पृ. सं. ७०

बल्कि अनेक देशो से युक्त एक उपमहाद्वीप है। किन्तु, यह भ्रम इस देश की सस्कृति से अपरिचित व्यक्ति को ही हो सकता है। विविध धर्म, विश्वास, और सम्प्रदायो के होते हुए भी भारत-धर्म एक और अविभाज्य रहा है। भारत की इन विविधताओ मे ही उसकी विशिष्टताये निहित हैं और इन्ही से मिलकर भारतीय सस्कृति बनी है। विविधता मे एकता ही 'भारतीय सस्कृति' का मुख्य लक्षण है। उत्तर मे हिमालय से लेकर दक्षिण मे कन्याकुमारी तक जितनी नदियाँ, तीर्थ-स्थान, देव मन्दिर हैं, भारतीयो के आध्यात्मिक और धार्मिक प्रेरणा के स्त्रोत रहे हैं। 'गगेच यमुने चैव गोदावरी, सरस्वती, नर्मदे सिन्धु कावेरी जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु'—आदि श्लोको मे हम उत्तर दक्षिण का भेद भूल जाते है और एक अखण्ड भारत की तस्वीर हमारे नेत्रो के समक्ष उभर आती है। यह भावना केवल सस्कृत की पुस्तको तक ही सीमित नही है, बल्कि भारत के जन-मानस मे व्याप्त है। भारतीय नदियो की पवित्रता लोक-धर्म का अ ग बन चुकी है तथा इस ध्वनि को हम भारत के किसी प्रदेश की ग्रामीण महिला से स्नान करते समय 'आओजी गगा, आओजी सरस्वती, आओजी गोदावरी, नर्मदा' आदि वाक्यो के रूप मे सुन सकते है। इसी लोक-धर्म मे जो भारत-धर्म की आधार-शिला है, हमे भावात्मक एकता के दर्शन होते है। हमारे मनीषियो, चिन्तको और दार्शनिको ने सदैव ही अखण्ड भारत का चित्र अपने समक्ष रखा और भावात्मक एकता का अपनी रचनाओ द्वारा व्यापक सन्देश दिया। महाकवि कालीदास की रचनाये इन्ही भावनाओ से अनुप्राणित है। देश की भौगोलिक अखण्डता का चित्रण करते हुए कालीदास ने लिखा है कि भारत एक विशाल भूखण्ड है, जिसके उत्तर मे नगाधिराज हिमालय अपनी दोनो बाहे फैलाये हुए है। पूर्व और पश्चिम उनसे सटे खडे है और ये सब यो सुशोभित हो रहे है, मानो हिमालय पृथ्वी का मानदण्ड बन गया है।[1] स्पष्ट है कि हिमालय और समुद्र के मध्य स्थित भूखण्ड ही कालीदास की कृतियो मे अपने आध्यात्मिक और आधिभौतिक रूप से प्रकट है। इन्दुमति के स्वयवर वर्णन मे भी देश की अखण्डता और भावात्मक एकता के दर्शन होते है। उस स्वयवर मे जिन प्रदेशो के राजा सम्मिलित होते हैं। वे सब इसी भरत-खण्ड के होते है और इनकी भिन्न-भिन्न विशेषताओ का वर्णन किया जाता है।[2] एक भी राजा ऐसा नही है जो भारत से बाहर के राज्य का हो।

---

१ अस्त्यु तरस्या दिशि देवतात्मा हिमालयोनाम नगाधिराज.।
पूर्वा परौ तोय निधि वगाह्य, स्थित पृथ्वीव्या इव मानदण्ड ॥

—कुमारसम्भव

२. रघुवश ६/२०-७९।

जिस प्रकार कालिदास की रचनाओ मे देश की अखण्डता और भावात्मक एकता प्रकट हुई, उसी प्रकार बल्कि एक दृष्टि से उससे भी अधिक मुखरित रूप मे राजस्थानी के इन चरित-काव्यो मे प्रकट हुई है। जैसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है, कि अधिकाश चरित-काव्यो का प्रारम्भ ही देश की भौगोलिक अखण्डता के वर्णन से होता है। 'श्री रूपसेन कुमार नो चरित्र' मे उल्लेख है कि जबू द्वीप स्वर्ण के थाल के समान गोल है और इसका वृत्त एक लाख योजन है। इसमे हिम, महाहिम, निषद्, नीलवत, रूपी और शिखरी आदि छह विशाल पर्वत हैं। इस देश के मध्य मे लाख योजन विस्तारवाला विशाल पर्वत है। भरत, हेमवन, हरिवास, महाविदेह, रम्य, एरन्य, एरवत् ये सात प्रदेश हैं। जबू द्वीप के दक्षिण मे विशाल भारत है, जहाँ सिन्धु और गगा जैसी विशाल नदियाँ बहती हैं।[1] 'उत्तम चरित्र चौपई' मे भी भरत-खण्ड को जबू द्वीप के दक्षिण मे बतलाया गया है।[2] 'मृगावती रास'[3] तथा 'नलराज चौपई' मे भी जम्बू द्वीप को लाख योजन विस्तार

---

१. जबू द्वीप सकल मध्य तेह, जबू विटप युक्त सनेह।
समते सोवन थाल आकार, वृत्त लक्ष योजन विस्तार।
हिम, महाहिम, निषढ, नीलवत, रूपी, शिखरी कह्या भगवत।
षट गिरि वर्ष धरे करि मुक्त, मध्य मेरु लक्ष योजन युक्त।
भरत, हेम वयने हरिवास, महाविदेह रम्य एरन्य तास।
एरवत सात क्षेत्र ना नाम, च्यार युगल त्रिण मनुज सुठाय।
तेह मे दक्षिण भरत नूर, षट खडे करि सोभित पूर।
सहंस बतीस देस सु विसाल, आर्य्य साड्ढ पण वीस विचाल ॥४॥
गंगा सिंधु नही बिहु भली। अठवीस सहे से जल निधि मिली ॥
—रूपसेन कुमारनो चरित्र, पृ स १ व २

२. इणहिज जबू द्वीप मां, दक्षिण भरत उदारो रे।
काशी देश जिहा भलो, पृथिवी नो सिणगारो रे ॥२॥
—श्री उत्तम कुमार चरित्र चौपई, पृ. स. १०६

३. जबू द्वीप लख जोयण ना मान, भरत खेत तिहा अभिराम।
साठा पचवास आटिज देस, अवर देस तिहा नही धुमलेस।
कब देस एहवो अभिधान, जस कैलास तणो उपमान।
गोरी इसर वषभ निवास, धन सहुनी पूरइ आस।
त्रुरकट हा पातइ ब्रज ग्राम, लहु क्षेत्र दिसह अभिराम।
गोपी गावइ गीत रसाल, पथी जन थभंइ ततकाल ॥
—समयसुन्दर कृत मृगावती रास (ह. लि.)

वाला द्वीप बतलाया गया है। 'नलराज चौपई' मे भरत खण्ड के बत्तीस विशाल प्रदेशो का भी उल्लेख मिलता है। मगध (राजगृह), अग (चपा), वग (तामली), कलिंग, कासी (वाणारसी), अयोध्या, मलय देस, (मछपुर) पाटण, सिन्धु, सौवीर, करु जन-पद, गजपुर, कुसावर्त, सोरीपुर, कपिला, पाचाल, द्वारिका, सोरठ-देश, विदेह (मिथिला) बच्छ देश, कोसाम्बी, नदीपुरी, भदिलीपुर, वेराट्, अछ देश, चेदस (श्रुतिवती), शूरसेन (मथुरा), उज्जेण, लाट आदि प्रदेश भारत मे सम्मिलित थे।[1]

राजस्थानी के इन प्रेमाख्यानो मे स्वयवर प्रथा की वर्णन शैली मे भी हमे देश की अखण्डता तथा भावात्मक एकता के दर्शन होते है। 'नलराज चौपई' मे दमयन्ती के स्वयवर मे भारत के सब प्रदेशो के राजाओ का तथा प्रदेशो का उनकी स्थानीय विशेषताओ सहित मनोरम वर्णन मिलता है।[2] इस स्वयवर वर्णन मे कवि ने किसी भी ऐसे प्रदेश अथवा राजा का वर्णन नही किया है जो भारत के

---

१ जबू द्वीप ए जोयण लाख, जगती सहित सिधाते साख।
भरत खेत्र तिहा सोहै, भलउ देस-बत्तीस सहम सायउ।
साटा पचवीस आरिज देस, तेहनी वात कउ लव लेस।
मगध देश, राजगृहपुरी, अग देश चपा गुण भरी।
व्रग देश नगरी तामली, देश कलिंग कचणपुर वली।
कासी देस वाणारसी नाम, सकित अयोध्या ढाम।
मलय देस मछिलपुर भलउ, वयराट् देस मछपुर तिलउ॥

—समयसुन्दर कृत नलराज चौपई (ह लि)

२. हिव दवदती कुमरी सजि, करि सोल श्रृगार।
आवी सवरा मडयइ, पूठइ बहु परिवार।
जे जाणइ बसावली, ते स्त्री लीधी साथि।
मणि माणिक मोती जडी, कनक छडी छई हाथि।
नयणे राजा निरखती, कुमरी अति सुकुमाल।
गज गति चाली मलयती, हाथे ले वरमाल।
एक कुमर देस कबोजनो, तिण देसी अश्व रतन।
लखि पणि लाभइ नही, वेगइ पवन के मन्न।
ऐ छयल छबीलउ राजवी, कासमीर देस नो जाणि।
जिण देस केसर नीपजइ, रतन कवल नी खान॥

—समयसुन्दर कृत नलराज चौपई (ह. लि.)

बाहर का हो। इसी भांति 'चन्द्रराज चौपई' मे भी अखण्ड भारत का चित्रण अपने प्रादेशिक विशेषताओ सहित मिलता है। जब शिव-नट रानी वीरमती को अपनी नट-कला दिखलाकर पुरस्कार मे कूर्कट बने राजा चन्द्र का पीजरा प्राप्त करता है तथा उसे लेकर विभिन्न प्रदेशो मे अपनी नट-कला को दिखलाने के लिए घूमता है, तब इन प्रदेशो की विभिन्न विशेपताओ का भी वर्णन किया जाता है।[1] प्रादेशिक विशेपताओ के इस वर्णन मे वहाँ के निवासियो की सभ्यता एव सस्कृति का रूप प्रकट होता है। सब प्रदेशो के इस सांस्कृतिक विवरण को पढने पर एक अखिल सस्कृति का रूप उजागर होता है जो विविधता मे एकता लिए हुए है। भावनात्मक एकता का ऐसा सजीव चित्रण अन्यत्र मिलना दुर्लभ है। अखण्ड-भारत के इस चित्रण मे एक महत्वपूर्ण विशेपता जो प्रकट होती है, वह है हमारे तत्कालीन मनीषियो, साहित्यकारो का राष्ट्रीय दृष्टिकोण। विभिन्न प्रादेशिक विशेपताओ के चित्रण मे हर प्रदेश की विशेपताओ का सम्यक्-चित्रण हुआ है, किसी प्रदेश विशष को एक दूसरे से ऊपर नीचे रखने का प्रयत्न नही किया गया है। इससे विदित होता है कि ये मनीषी प्रान्तीय भावनाओ से ऊपर उठे हुए थे और उनके हृदय-पटल पर एक विशाल गौरवपूर्ण राष्ट्र का चित्र अंकित था जो उनकी लेखनी से अपनी कृतियो मे उजागर हुआ।

* * *

---

१. 'ऐ देशी मनोहर सिधु देश, परि सीर सीधू नदीरी।
गगा, समुद्र हुउती आवी सरत वदीरी॥'
सिन्धु देश सिंहलपुरी, अलकाने अवतार।
राज्य करे तिहा कनक रथ, गुण पुरण वसुधार॥
एहवे आव्या अनुक्रमोरे, सुन्दर-देश बंगाल।
पृथ्वी भूषणपुर तिहारे, सुरपुर हु ति विशाल॥१०॥
जिहा अरी मर्दन नर वसरे, जेहनो प्रबल प्रताप।
तेहने चदना तात थीरे, हुतो माहा मा मिलाप।
पोतनपुर सुरपुर समो, कमला निलय विधान।
राजे तिहा जयसिंह नृप, वेयरी ब्रण आदान।
—चन्द्रराज चरित्र चौपई (ह. लि.) पृ. स. ६६

न

व

म

अध्याय

सामान्य विशेषतायें

न

व

म

अध्याय

सामान्य विशेषताएँ

कवि के रुचि-वैचित्र्य, रचना के लक्ष्य एव उद्देश्यगत वैभिन्य तथा प्रतिभागत काव्य-वैशिष्ट्य के आधार पर प्रत्येक रचना की अपनी विशिष्टता होती है। किन्तु, जिन कृतियो मे प्राय सर्वत्र एक ही विशिष्ट धारा काम करती है, उनमे एक परिपाटी अथवा परम्परा का अनुसरण करने पर कृतियो का अपना निजि वैशिष्ट्य होते हुए भी उनमे कुछ ऐसी सामान्य विशेषताये होती है जो विषयगत और शैलीगत दोनो ही हो सकती हैं। राजस्थानी के इन प्रेमाख्यानो मे स्त्री पुरुष के प्रेम-तत्व की एक ऐसी सामान्य भावधारा सर्वत्र-व्याप्त है, जिसके द्वारा ये सब प्रेमाख्यान एक सूत्र मे बद्ध है और प्राय एकसी काव्यगत परिपाटी का अनुसरण करने के कारण शैली मे भी सामान्य विशेषताये मिलती है।

वर्ण्य-विषय अथवा वस्तुगत सामान्य विशेषताएं

१. इन प्रेमाख्यानो की नायक-नायिकाये प्रायः राजकुल के राजकुमार-राजकुमारियो अथवा सामन्तीय कुलोत्पन्न मत्री, पुरोहित, सामन्त अथवा किसी सेठ की पुत्र-पुत्रिया होती हैं।

२. नायक-नायिकाओ मे प्रेम का उद्रेक प्राय. चित्र-दर्शन, स्वप्न-दर्शन, गुण-श्रवण अथवा प्रत्यक्ष-दर्शन से होता है। चित्र-दर्शन द्वारा प्रेमोद्रेक की घटनायें प्राय निम्नलिखित रूप मे घटती हैं:—

(क) नायक-नायिका के नगर मे अथवा राजसभा मे कोई चित्रकार आता है और विभिन्न चित्र दिखलाता है। उन चित्रो मे से किसी एक चित्र पर नायक अथवा नायिका मुग्ध हो जाते है और उस चित्र से सम्बन्धित व्यक्ति से विवाह करने का सकल्प कर लेते है।

(ख) राजकुमार भ्रमण हेतु कही जाता है अथवा शिकार का पीछा करता हुआ किसी निर्जन-वन मे पहुच जाता है। वहा उसे प्यास सताती है और वह पानी की खोज मे किसी जलाशय अथवा बावडी पर पहुचता है। वहा बावडी की भीत पर किसी सुन्दर स्त्री का चित्र देखकर मोहित हो जाता है।

(ग) कभी-कभी नायिका स्वय ही अपनी कलाप्रियता की तुष्टि के लिए सकल्पना (Concept) के आधार पर किसी सुन्दर पुरुष का चित्र बना लेती है और उस चित्र पर मुग्ध होकर उसी के समान रूप वाले व्यक्ति से विवाह करने का सकल्प कर लेती है।

रूप-गुण-श्रवण के माध्यम मे भी विविधता पाई जाती है। यथा –

(१) किसी पक्षी के द्वारा अधिकाश रूप मे हस या तोते के मुँह से रूप-गुण-श्रवण कर मुग्ध होना।

(२) सरोवर या पनघट पर किसी पथिक से नायिका द्वारा नायक का रूप-गुण श्रवण कर मुग्ध होना।

(३) राजसभा मे आये किसी चारण, भाट अथवा ज्योतिषी से किसी राज कुमारी के रूप, गुणो का श्रवण कर मुग्ध होना।

३. निश्छल प्रेम की सर्वत्र विद्यमानता

इन प्रेमाख्यानो मे चित्र-दर्शन, स्वप्न-दर्शन अथवा रूप-गुण श्रवण द्वारा प्रेमासक्ति के मूल मे रूपगत-सौन्दर्य ही विद्यमान मिलता है। प्रत्यक्ष-दर्शन मे तो सौदर्य का हाथ रहता ही है, किन्तु कवि को जहा गुण-श्रवण के आधार पर प्रेम-भाव जागृत करने का भी कोई अवसर मिला है तो वहा भी वह विशेषत रूप-लावण्य को ही प्रतिष्ठित करके उसे अतिशयोक्तिपूर्ण-वर्णन के द्वारा प्रेम के बीज अकुरित करा देता है। इसीलिए इन प्रेमाख्यानो मे नायिका-भेद और नख शिख के वर्णन की परिपाटी मिलती है। अतएव प्रत्यक्ष है कि प्रारम्भ मे इन प्रेमासक्ति के मूल मे यौन-सम्बन्ध की उत्कट इच्छा अथवा काम वासना रहती है किन्तु कालान्तर मे विरह-जन्य-अग्नि से तपकर यह कामासक्ति भस्म हो जाती है और प्रेम का निर्मल और निश्छल रूप उजागर हो उठता है। इस प्रकार इन प्रेमाख्यानो मे निर्मल एव निश्छल प्रेम-तत्व सर्वत्र विद्यमान है।

४. नायिका की प्राप्ति के लिए नायक का घर से निकल पड़ना :

प्रायः सभी प्रेमाख्यानो मे नायिका की प्राप्ति के लिए नायक के घर से निकल पडने की घटनाओ का निम्नलिखित रूप से उल्लेख मिलता है —

(क) नायिका के चित्र-दर्शन, स्वप्न-दर्शन अथवा रूप-गुण-श्रवण के द्वारा मुग्ध हो, उसे प्राप्त करने के लिए चुपचाप किसी को बिना बताये घर से निकल पडना।

(ख) पटरानी द्वारा पद्मिनी स्त्री को विवाह कर लाने के लिए ताना मारने पर अथवा भाभी द्वारा रूपवती वहू लाने के लिए व्यग्य करने पर नायक का घर से निकल पडना।

(ग) कभी-कभी शौर्य-प्रदर्शन की अभिलाषा से प्रेरित होकर राजकुमार का घर से निकल पडना और किसी राजा के नगर मे पहुचने पर वाटिका मे या सरोवर पर, कामदेव के मन्दिर मे अथवा यक्ष, देवी, शिव आदि देवताओ की पूजा के लिए आई हुई नायिका से आकस्मिक रूप से भेट होने पर एक दूसरे के रूप मे मुग्ध होकर प्रेमासक्त होना।

५. प्रेम-मार्ग मे नायक के सहायक :

प्राय: सभी प्रेमाख्यानो मे प्रेम-मार्ग मे नायक की सहायता के लिए अथवा पथ-प्रदर्शन के लिए सहायक-पात्रो की सृष्टि मिलती है। नायक-नायिका के प्रेम-मार्ग के सहायक पात्र प्राय निम्नलिखित होते हैं —

(क) **पक्षी :** तोता अथवा हस नायिका की प्राप्ति के लिए नायक का पथ-प्रदर्शन करते हैं और प्रेमी-प्रेमिका के प्रेम सन्देशो के आदान-प्रदान मे भी सहायता पहुचाते हैं।

(ख) नायक का सहायक कही मत्री अथवा प्रधान होता है, कही मत्री का पुत्र उसका मित्र होता है और वह निरन्तर नायक के साथ रहता है।

(ग) खवास (नाई) अथवा मालिन भी नायिका की प्राप्ति के लिए स्वामी-भक्त सेवक के रूप मे चित्रित किये गये हैं।

६. नायक-नायिका का गुप्त मिलन :

नायक के अपनी प्रेयसी के नगर मे पहुच जाने पर प्राय वह उपवन मे अथवा मालिन के घर ठहरता है। दूती, सखी, सखा, मालिन अथवा खवास या हस, तोता के द्वारा प्रेम के सन्देशो का गुप्त रूप से आदान-प्रदान कर लेने के पश्चात् नायक-नायिका किसी सकेत-स्थल पर मिलते हैं। यह सकेन-स्थल किसी देवी-देवता का मन्दिर होता है (यथा—कामदेव, यक्ष, देवी, महादेव आदि के मन्दिर) अथवा राज-उपवन होता है। नायक, नायिका के महल मे भी जादूई-शक्ति से अदृश्य होकर, स्त्री का वेश बनाकर अथवा फूलो की टोकरी मे छिपकर पहरेदारो को धोखा देता हुआ गुप्त रूप से पहुच जाता है और अपनी प्रियतमा के साथ रमण

करता है। किसी देव-स्थान पर जाकर नायक-नायिका अपना गधर्व-विवाह भी कर लेते है। कुछ नायिकाये तो नायको के साथ वेश बदलकर घर से भाग निकलती हैं।

७. प्रेम-मार्ग में बाधाओं का विधान :

नायक-नायिका के मिलन मे अथवा प्रेम-मार्ग मे कठिनाइयो एव बाधाओ का विधान प्राय: सब प्रेमाख्यानो मे मिलता है। इन बाधाओ का विधान दो अवसरो पर चित्रित किया गया है —

(क) प्रथम, नायक द्वारा नायिका को प्राप्त करने से पूर्व बाधाओ का विधान।

(ख) द्वितीय, नायक द्वारा नायिका की प्राप्ति अथवा दोनो का विवाह हो जाने के बाद नायिका को साथ लेकर नायक के घर लौटते समय बाधाओ का विधान।

(क) इन प्रेमाख्यानो मे नायक-नायिका के प्रेम-मार्ग मे बाधाओ के प्राय निम्नलिखित रूप मिलते है :—

(१) नायिका का पुरुष-द्वेषणी होना। उस बाधा निराकरण नायक अपने मित्र की सहायता से नायिका के पुरुष-द्वेषणी होने का कारण ज्ञात करके, उसके द्वेष-भाव को दूर करने की तदानुकूल योजना बनाते है और उसमे सफल है।

(२) विवाह के लिए कठिन शर्ते रखना, यथा—

(क) नायिका के भाई को चौपड के खेल मे हराना, स्वय हारने पर अपना सिर कटाने के लिए तत्पर रहना।

(ख) लक्ष्य-वेध अथवा धनुर्भंग।

(ग) असम्भव एव भयकर कठिन कार्य सौपना—

(i) सिंहनी का दूध मगाना।

(ii) बोलता नीर, वर्जन-स्थलो से आम्रफल, विद्याधरियो के आभूषण एव वस्त्र आदि अलभ्य वस्तुये मगाना।

(iii) यमराज के यहा से पूर्वजो के समाचार लाना।

(iv) निश्चित अवधि मे नवचन्दी गाये अथवा नौ करोड की धनराशि लाकर देना।

(घ) नायिका का किसी द्वीप या जल-कूप मे अथवा जोगी एव राक्षस के बन्धन मे होना तथा घडियालो से भरे द्वीप को पार करना।

(ङ) नायिका के महल के प्रवेश-द्वार पर भूखे सिंह तथा अजगर का रखना।

(च) नायिका के पिता का प्रतिकूल होना एवं नायक का उससे युद्ध होना ।

(छ) स्वयवर मे प्रतिनायिक राजाओ से युद्ध ।

(ख) नायिका के साथ नायक के घर लौटते समय प्रायः निम्नलिखित सकटो का विधान चित्रित मिलता है —

(१) नदी या सागर मे, प्रवहण मे बैठकर नायक-नायिका घर लौट रहे होते हैं, उस समय प्रवहण के स्वामी किसी सार्थवाह अथवा पुरोहित की दृष्टि नायिका पर पड जाती है और वह नायिका के रूप पर मुग्ध होकर प्राप्त करने के लिए नायक को धोखे से समुद्र मे डाल देता है । नायिका अपने प्रियतम का श्राद्ध होने तक, बारहवा तक अथवा छ महीने की अवधि मागकर किसी प्रकार अपने शील की रक्षा करती है ।

(२) लौटते समय ठगो के फन्दे मे फस जाना अथवा डाकुओ से मुठभेड होना ।

(३) प्रतिनायक द्वारा सशस्त्र सेना सहित मार्ग रोकना तथा नायक से युद्ध करना ।

(४) वन मे या शयन-कक्ष मे सर्प दशन ।

(५) विप मिश्रित भोजन ।

(६) दरवाजा टूटकर गिरना या नायक की मृत्यु के लिए बनाये गये आमोद-गृह का ढह जाना ।

(७) दुष्ट घोडा ।

(८) वृक्ष की शाखा का गिरना ।

८. बाधाओं का निराकरण :

इन प्रेमाख्यानो मे नायक-नायिका के मिलन मे आने वाली बाधाओ के निराकरण अथवा सकटो पर विजय के साधन भी सामन्यतया सबमे समान मिलते है । यथा—

(क) आने वाले सकटो की पक्षियो द्वारा अथवा यक्ष-यक्षणी द्वारा अथवा ज्योतिषी द्वारा भविष्यवाणियाँ होना और नायक के सहायक मित्र अथवा स्वामी-भक्त सेवक द्वारा सुन लेने पर ठीक अवसर पर नायक को सकटो से बचा लेना ।

(ख) दैवी शक्तियो जैसे—अप्सरा, विद्याधरिया, यक्ष-यक्षणिया, बैताल, कुलदेवता, सर्प आदि के द्वारा सकटो के निराकरण मे सहायक होना ।

(ग) शिव-पार्वती द्वारा नायक नायिका के मिलन मे सहायक होना तथा उनकी मृत्यु हो जाने पर पुनर्जीवित करना ।

(घ) गुरु गोरखनाथ अथवा अन्य सन्त पुरुप, जोगी के द्वारा नायक को सिद्धिया मिलना और उन सिद्धियो तथा अन्य जादूई-शक्तियो के द्वारा नायक का सकटो पर विजय पाना ।

९. नायक-नायिका के प्रेम की परीक्षा :

प्राय' इन सभी प्रेमाख्यानो मे नायक-नायिका के सच्चे प्रेम की अथवा नायिका के शील की परीक्षा के लिए भी विविध घटनाओ का सयोजन मिलता है जिनमे प्रमुख है .—

(क) देवी-देवताओ द्वारा नायक की परीक्षा लेने के लिए रूपवान स्त्री बन-कर नायक को लुभाने की चेष्टा करना।

(ख) नायक-नायिका की मृत्यु के झूठे समाचार एक दूसरे को देना तथा इन झूठे मृत्यु के समाचारो पर विश्वास करने पर दोनो का एक दूसरे के वियोग मे प्राण विसर्जन कर देना। शकर-पार्वती द्वारा अथवा अन्य दैवी-शक्तियो के द्वारा उन्हे पुनर्जीवित कर देना।

(ग) नायिका के शील की परीक्षा के लिए उसे नायक से अपहरण करके सुख-सुविधा के बडे-बडे प्रलोभन देना तथा भयकर कष्टो मे डालना।

यहा यह बात भी उल्लेखनीय है कि नायक-नायिका की प्रेम-निष्ठा की परीक्षा के लिए जहा उपर्युक्त घटनाओ का संयोजन मिलता है, वहा अनेक प्रेमा-ख्यानो मे नायक अपनी प्रेमिका की प्राप्ति के प्रयत्न-काल मे अन्य नायिकाओ से भी प्रेम-सम्बन्ध स्थापित करता चलता है, किन्तु अपने मूल-लक्ष्य को नही भूलता और अपनी हृदयेश्वरी को प्राप्त कर लौटते समय वह इन स्त्रियो से भी यथोचित विवाह कर राजधानी मे लौट आता है। नायक का अनेक नायिकाओ से विवाह का वर्णन करना उस समय मे प्रचलित बहु-विवाह की प्रथा का ही परिणाम है। इस बहु-विवाह से नायक के प्रेम की एकनिष्ठता मे जो विरोध लगता है, वह केवल विरोधाभास ही है क्योकि अन्य नायिका से विवाह करने पर वह अपने मूल-लक्ष्य से अलग नही होता। यहा यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि जहा नायक की प्रेम-परीक्षा के लिए किसी रूपवान् नारी के द्वारा प्रणय निवेदन किया जाता है और नायक के द्वारा उसका तिरस्कार करने पर उसकी प्रेम निष्ठा का पता चलता है, तब उसी नायक के द्वारा किसी अन्य राजकुमारी के प्रणय निवेदन को स्वीकार करके उससे विवाह कर लेने पर क्यो नही नायक के प्रेम की शिथिलता समझी जाय। वस्तुतः यह बात ठीक लगती है, किन्तु यहा एक बात ध्यान मे रखने की है कि नायक के प्रेम की परीक्षा वाली रूपवती नायिका उसके मूल-लक्ष्य प्रेयसी की प्राप्ति मे बाधक नही होती, बल्कि अनेक प्रेमाख्यानो मे तो ये नायिकाये नायक को अपनी हृदयेश्वरी की प्राप्ति मे सहायता पहुचाती है।

१० नायक का नायिका के साथ घर लौटना

प्राय' सभी प्रेमाख्यानो मे नायिका के साथ नायक के घर लौटने पर नायक के माता-पिता एव उस नगर की प्रजा नायक का स्वागत करती है और आनन्द-

उत्सव मनाती है। जैन प्रेमाख्यानो मे नायक को धर्म में रत बतलाया है और पुत्र लाभ के बाद नायक अपने वयस्क पुत्र को राज्य-भार सौपकर वानप्रस्थ लेते चित्रित किये गये है।

११. अधिकाश प्रेमाख्यानो की कथा-वस्तु सुखान्त होती है किन्तु, प्रेमाख्यानो की कथा-वस्तु दु खान्त भी है जिनमे नायक-नायिका का मिलन नही हो पाता। जैन प्रेमाख्यानो मे नायक को जीवन के समस्त उपभोगो का आस्वादन करने के बाद धर्म मे रत दिखलाया जाने से तथा उसके द्वारा पुत्र को राज्य सौपकर वानप्रस्थ ले लेने से, इनकी कथा-वस्तु को प्रसादान्त की कोटि मे रखा जा सकता है।

१२ रहस्य रोमांच तथा अलौकिकता की प्रधानता :

इन प्रेमाख्यानो मे रहस्य रोमॉच एव अलौकिक तत्वो का प्राचुर्य है। इन अलौकिक तत्वो का समावेश निम्नलिखित रूप से हुआ है —

(क) अलौकिक-पात्रो तथा जादूई शक्तियो का समावेश।

(ख) अलौकिक एव रहस्य रोमाचयुक्त घटनाओ का सयोजन।

(ग) जादूई-वस्तुओ के चमत्कार-पूर्ण कार्य।

इन प्रेमाख्यानो मे अलौकिक-पात्रो के रूप मे देवी-देवता, शिव पार्वती, यक्ष, किन्नर, गधर्व, विद्याधर-विद्याधरियो आदि दिव्य योनि के पात्र; राक्षस, दानव, दैत्य, भूत, बैताल, डायन, व्यतरिया आदि आदि योनि के पात्र तथा बाबा गोरखनाथ, जोगी, सिद्ध आदि अलौकिक शक्ति वाले मानव-पात्रो की अद्भुत शक्तियो और अलौकिक कार्यों का चित्रण मिलता है। इसी भाति नायक का जादूई धोती पहिनकर आकाश-मार्ग से नायिका के नगर मे पहुँचना, परकाया प्रवेश आदि चमत्कारपूर्ण अद्भुत घटनाओ का सयोजन भी मिलता है। जादूई-गुटका को मु ह मे रख लेने से यौन परिवर्तन, जादूई डोरी बाध देने से मनुष्य से पशु या पक्षी बनने जैसी अनेक जादूई वस्तुओ का चित्रण भी इन प्रेमाख्यानो मे प्रचुर-मात्रा में मिलता है। अन्ध-कूप, निर्जन-नगर, राक्षसो का नगर, भयकर वन, श्मशान भूमि, आदि वर्जनीय भयंकर स्थल तथा पाताल लोक, किन्नर लोक, गधर्वलोक, स्वर्ग आदि अद्भूत लोको का भी रहस्यपूर्ण रोमाचक-वर्णन इन प्रेमाख्यानो मे हुआ है।

१३. अन्धविश्वास एव भाग्यवादिता :

प्राय सभी प्रेमाख्यानो मे अलौकिक शक्तियो मे आस्था, जादू, टोने, मत्र-तत्र में विश्वास, ज्योतिषियो की भविष्यवाणियो में श्रद्धा, स्वप्न-फल और शकुनो मे विश्वास रखने की बातो का प्रचुर-मात्रा मे उल्लेख मिलता है। पूर्व-जन्म के कर्म-फल मे विश्वास तथा मुनियो और साधु-सन्तो की वाणियो मे श्रद्धा रखने के

उदाहरण भी प्राय सब प्रेमाख्यानो मे मिलते है। 'होणी होइ सो होई'—होणी अर्थात् भाग्य पर अटूट विश्वास रखना भी इन प्रेमाख्यानो के पात्रो की एक प्रमुख चारित्रिक विशेषता है। प्राय' सभी प्रेमाख्यानो मे ज्योतिषी एक महत्वपूर्ण पात्र होता है जिसके प्रति राजा और जन-सामान्य के हृदय मे बडी श्रद्धा होती है। यह ज्योतिषी भविष्यवाणियाँ प्रसारित करते हुए चित्रित मिलते हैं और नायक-नायिकाओ के कार्य इन भविष्यवाणियो से सचालित होते है। प्राय सभी प्रेमाख्यानो मे शकुन-मीमासा अथवा शकुन-विचार का तो एक परिपाटी के रूप मे चित्रण मिलता है। जन-सामान्य ही नही, राज-पुरुषो मे भी भाग्यवादिता अपनी चरम सीमा मे व्याप्त मिलती है, यहाँ तक कि राजा जैसे महत्वपूर्ण पद के चुनाव मे भी भाग्यवादिता का आश्रय लिया जाता है। निस्सतान राजा के स्वर्ग-वासी होने पर नये राजा का चुनाव किसी व्यक्ति पर हाथी द्वारा मगल-घट उँडेल देने अथवा माला पहिना देने पर कर लिया जाता है। प्रात काल नगर मे सर्वप्रथम प्रवेश करने वाले व्यक्ति को भी राजा बना लिये जाने की घटनाओ का उल्लेख मिलता है।

१४ मानव की मूल-प्रवृत्तियो स निरन्तर साहचर्य :

इन प्रेमाख्यानो की एक प्रमुख विशेपता इनमे मानव की मूल-प्रवृत्तियो के निरावृत और स्वाभाविक वर्णन की चारुता है। प्राय सभी पात्रो का जीवन-व्यापार एव क्रिया-कलाप मानव की मूल-प्रवृत्तियो के अनुसार सचालित होते हैं। इन मूल-प्रवृत्तियो मे काम (Sex) और आत्म-प्रदर्शन (Self-assersation) की मूल-प्रवृत्तियो के चित्रण की प्रधानता मिलती है। नायक-नायिकाओ के समस्त क्रिया कलाप 'सेक्स' की मूल-प्रवृत्ति से प्रभावित मिलते है। इनमे परस्पर प्रेम का उद्रेक भी रूपाकर्षण से होता है। नायक-नायिकाओ मे उत्कट मिलनोत्सुकता के मूल मे यही रूपाकर्षण एव मासल सुख-प्राप्ति की तीव्र लालसा है। चुम्बन, आलिगन तथा सम्भोग का चित्रण प्राय सब प्रेमाख्यानो मे मिलता है। नायिका के नख-शिख वर्णन तथा प्राकृतिक-व्यापारो के राग-रजित चित्रण मे सेक्स की भावना ही विद्यमान है। विरह-वर्णन मे भी कामान्धता की गध मिलती है। अपने प्रियतम के वियोग से नायिका को कोई वेदना है तो वह यही कि उसका रस-गध युक्त यौवन बिना उपभोग के व्यर्थ नष्ट हो रहा है। अत वह अपने प्रियतम के पास प्रेम-सन्देशो के प्रेषण मे यौवन-रूपी पके हुए आम्रफल को चखने के लिए, उमडते हुए यौवन रूपी तालाब को टूटने से बचाने के लिए पाल बाधने आदि के लिए आमत्रित करती है। उक्त मासल यौवन के उपभोग की पिपासा जैन प्रेमाख्यानो मे भी मुनियो के द्वारा मैथुन-दोष के लाख धार्मिक उपदेश देने पर भी दब नही पाई

है, बल्कि वहाँ इसे धार्मिक भीरुता से आवृत्त कर दिये जाने पर और भी उग्ररूप से झाकती हुई दृष्टिगोचर होती है।

इस प्रकार इन प्रेमाख्यानो मे गधयुक्त उष्ण मासल क्षुधा, अदम्य अभिलाषाओ एव आकाक्षाओ तथा मानसिक आवेगो का सहज, स्वाभाविक एव खुला चित्रण मिलता है। नायक के शौर्य-प्रदर्शन, उसके साहसिक अभियान, वर्जित एवं भयकर स्थलो पर भ्रमण की इच्छा के मूल मे आत्मा-प्रदर्शन (Self-assersation) एव कुतूहल-तुष्टि की मूल-प्रवृत्तियाँ कार्य करती है। इन्ही मूल-प्रवृत्तियो, सेक्स और आत्म-प्रदर्शन की अदम्य इच्छा ने काव्य-शृगार और वीर-रस के चित्रण को जन्म दिया है। इस प्रकार इन प्रेमाख्यानो के घटना-सयोजन एव पात्रो के क्रिया-कलापो के चित्रण मे मानव की मूल-प्रवृत्तियो का निरन्तर साहचर्य पाते है।

१५ कथा-वस्तु में लोक-कथा तत्वो की प्रधानता एवं लोक-संस्कृति का चित्रण :

इन प्रेमाख्यानो की कथा-वस्तु का आधार प्राय प्रचलित लोक-कथायें हैं। कुछ प्रेमाख्यान ऐतिहासिक वृत्तो को लेकर लिखे गये है, किन्तु उनमे भी लोक-कथा-तत्वों की प्रधानता रहती है। जैन-पुराणो तथा जैनेतर पुराणो की कथाओ को लेकर भी प्रेमाख्यान रचे गये है। इन सब प्रकार के प्रेमाख्यानो की मूल विशेषता यह है कि इन सब मे एक ही प्रकार के लोक-वार्ता तत्वो का समावेश मिलता है, जिससे इनकी आन्तरिक एकता परिलक्षित होती है। इन प्रेमाख्यानो मे तत्कालीन समाज के लोक-विश्वास, लोकेच्छा एव आकाक्षाओ का सहज व अकृत्रिम रूप से दिग्दर्शन हुआ है। तत्कालीन लोक-समाज की रीति-नीति सभ्यता और लोक-सस्कृति का भी सहज और निरावृत रूप मिलता है।

१६ सांस्कृतिक-समन्वय

इनमे से कुछ प्रेमाख्यानो के कथानको की एक सबसे बडी विशेषता यह है कि इनमे दो परस्पर विरोधी किन्तु महत्वपूर्ण हिन्दू मुस्लिम सस्कृतियो का सुखद समन्वय हुआ है। भारतीय सस्कृति की महत्वपूर्ण विशेषता यह रही है कि इसने अपनी विशाल-हृदयता एव उदारता के कारण सब आक्रमणकारियो की सस्कृतियो को अपने मे समाविष्ट कर लिया। केवल मुस्लिम-सस्कृति अपने इस्लाम-धर्म की कट्टरता के कारण समाविष्ट न हो सकी। किन्तु उदारचेता मनीषियो, सन्तो, साहित्यकारो के द्वारा दोनो सस्कृतियो के समन्वय की विराट चेष्टायें होती रही। जहा कबीर ने अपनी ओजस्वी वाणी से दोनो ही धर्मो के कट्टर-पथियो को फटकारा, वहा जायसी आदि सूफी प्रेमाख्यानकारो ने अपनी रचनाओ के लिए कथानक हिन्दू-

परिवारो को लेकर हिन्दू-मुस्लिस सास्कृतिक समन्वय का भावनात्मक स्तर पर प्रयत्न किया गया। जिस प्रकार सास्कृतिक समन्वय का प्रयत्न एक ओर सूफी प्रेमाख्यानो की ओर से हो रहा था, उसी प्रकार दूसरी ओर राजस्थानी भाषा के प्रेमाख्यानकारो ने मुस्लिम परिवारो के कथानक लेकर अपने प्रेमाख्यानो की रचना की। इन प्रेमाख्यानकारो ने जहा एक ओर 'लैला मजनू' जैसे सुप्रसिद्ध सभी कथानको को लेकर सामी प्रेम-पद्धति का अपने प्रेमाख्यानो मे चित्रण किया तो दूसरी ओर मुस्लिम परिवारो की प्रचलित लोक-कथाओ को लेकर उनमे भारतीय एव सामी-प्रेम पद्धति का समन्वय किया। इस प्रकार के प्रेमाख्यानो मे हिन्दू-मुस्लिम, दोनो ही जातियो के रीति-रिवाजो का सुखद समन्वय मिलता है। ये प्रेमाख्यान भावनात्मक स्तर पर हिन्दू-मुस्लिम-सस्कृति की समन्वय की दृष्टि से बडे महत्वपूर्ण हैं।

शैलीगत अथवा रचनागत सामान्य विशेषतायें

१. कथा का प्रारम्भ और अन्त करने की शैली में प्रकार की रूढी का अनुसरण :

इन प्रेमाख्यानो मे कथा प्रारम्भ करने की शैली मे एक रूढि का अनुसरण पाया जाता है। प्रायः सभी प्रेमाख्यानो के प्रारम्भ मे मगलाचरण होता है। इस मगलाचरण मे अधिकतर गणेश और सरस्वती की वन्दना रहती है। ईश्वर की स्तुति के बाद गुरु की वन्दना भी मिलती है। किसी किसी प्रेमाख्यान मे मगलाचरण कामदेव की स्तुति से प्रारम्भ होता है। जैन प्रेमाख्यानो मे भी सरस्वती वन्दना तो होती है, तदन्तर जिनप्रभू की स्तुति एव गुरु-वन्दना मगलाचरण के रूप में मिलती है। कुल प्रेमाख्यानो में मगलाचरण के बाद कवि का परिचय तथा उसके आश्रयदाता का उल्लेख भी रहता है। जैन-प्रेमाख्यानो मे मगलाचरण के पश्चात् जम्बू द्वीप मे स्थित भारतवर्ष की भौगोलिक और सास्कृतिक एकता का परिचय मिलता है, तदुपरान्त नगर-वर्णन जिसमे उद्यान, सरोवर, चौरासी चौहटे, नगर निवासियो के व्यवसाय आदि का वर्णन किया जाने के बाद तत्कालीन राजा तथा उसके ऐश्वर्य का चित्रण भी मिलता है।

इन प्रेमाख्यानो मे आधिकारिक कथा का प्रारम्भ प्रायः किसी निःसन्तान राजा द्वारा सन्तान प्राप्ति के प्रयत्न के वर्णन से होता है। देवी, देवता ऋषि या मुनि के प्रताप से उस राजा के यहा पुत्र या पुत्री का जन्म होता है। राजकुमार के युवा होने पर किसी अपराध मे अपने पिता द्वारा उसे देश निकाले का दण्ड मिलता है या कभी-कभी नायक स्वय अपने शौर्य-प्रदर्शन की इच्छा से तथा यश एव सम्पदा प्राप्त करने के लिए घर से निकल पडता है। इसी निष्कासित नायक की पराक्रम और प्रेमगाथा का वर्णन इन प्रेमाख्यानो मे मिलता है।

इन प्रेमाख्यानो मे कथा के अन्त मे भी एक ही प्रकार की रूढि का अनुसरण मिलता है। कथा के अन्त मे कवि द्वारा पाठको के लिए मगल-कामना व्यक्त की जाती है तथा काव्य के महात्म्य का वर्णन रहता है। प्राय इन प्रेमाख्यानो के अन्त मे कवि के आश्रयदाता अथवा तत्कालीन राजा का वश सहित परिचय के बाद लेखक की स्वय की गुरू परम्परा एव वश परिचय लिखने की रूढि मिलती है। रचना की पुष्पिका मे रचना-काल का भी उल्लेख रहता है।

२. राजस्थानी के यह प्रेमाख्यान प्राय सस्कृत की सर्ग-बद्ध प्रणाली अंगो, अध्यायो, खण्डो, प्रकाशो मे विभक्त है। कुछ प्रेमाख्यानो मे उपर्युक्त विभाजन न मिल कर घटनाओ के शीर्षक दे दिये गये हैं। प्रायः सब जैन-प्रेमाख्यान ढालो मे विभक्त हैं। प्रत्येक ढाल का क्रमाक दिया गया है। ढाल के प्रारम्भ मे राग-रागनियो का नामोल्लेख होता है। लघुरास या चउपई काव्यो मे ५–६ से लेकर १५–२० तक ढाल पाये जाते है। प्रत्येक ढाल मे १०–२० से लेकर २०–२५ तक छद होते है। बीच-बीच मे लोकोक्तियो, मुहावरो, सुभाषितो एवं दृष्टान्तो से यह काव्य सुशोभित है। बीच २ मे नीति-कथन भी मिलते हैं।

३. रस-निरूपण की शैली में समानता :

रस-निरूपण की दृष्टि से भी इन प्रेमाख्यानो मे समानता पाई जाती है। प्राय सभी प्रेमाख्यानो मे शृगार-रस की प्रधानता मिलती है। वीर और अद्भुत रसो का भी सयोजन इन प्रेमाख्यानो मे मिलता है, किन्तु ये रस शृगार-रस में विरोध पैदा नही करते हैं। वीर-रस का सयोजन नायक के शौर्य-साहस-धैर्य आदि नायकोचित चारित्रिक गुणो को प्रकट करने के लिए हुआ है, उसी प्रकार अद्भुत-रस भी अलौकिक चमत्कारो तथा घटना-वैचित्र्य को प्रकट करने के लिए मिलता है। जैन प्रेमाख्यानो की कथा-वस्तु का पटाक्षेप मुनियो के धार्मिक उपदेशो द्वारा प्रभावित होकर नायक-नायिका द्वारा अपने पुत्र को राज्य सौपकर वानप्रस्थ लेने से होता है, अत नायक-नायिका की निर्देशजनित मानसिकता मे कथानक का अन्त शान्त-रस मे होता है, किन्तु इन प्रेमाख्यानो मे प्रधानता शृगार-रस की ही है। शृगार-रस के दोनो पक्ष-सयोग और वियोग के चित्रण मे एकसी परिपाटी मिलती है। प्रायः सभी प्रेमाख्यानो मे नायिका का नख-शिख वर्णन, हाव, हेला आदि नायिका की मानसिक दशाये तथा रति के चित्रण मे समानता पाई जाती है। नख-शिख वर्णन मे लगभग एकसे ही उपमानो का प्रयोग किया गया है। संयोग-शृगार वर्णन में उद्दीपन के रूप में प्रकृति चित्रण मे भी समानना मिलती है। वन, उपवन, ताल, तडाग तथा पट्ऋतु-वर्णन मे एकरसता मिलती है। इसी प्रकार वियोग-शृंगार के चित्रण मे नायिका की रीति-शास्त्र मे उल्लेखित दशो दशाओ का चित्रण

मिलता है तथा नायिका की विरह-जनित उक्तियो मे भी विचित्र समानता मिलती है। 'बारहमासा' वर्णन भी प्राय. अनेक काव्यो मे हुआ है। शृगार, वीर, अद्भुत, शान्त रस के अतिरिक्त इन प्रेमाख्यानो मे रौद्र, वीरता, भयानक, करुण एव वात्सल्य-रस का भी चित्रण मिलता है।

४. अलकार योजना .

इन प्रेमाख्यानो की अलकार-योजना भी प्राय. एकसी है। प्राय: सभी प्रेमाख्यानो मे वस्तु के रूप को हृदयगम कराने के लिए तथा भावोत्कर्ष के लिए सादृश्य एव सादृश्य-मूलक अप्रस्तुत-विधान मिलता है। इसके अन्तर्गत उपमा, रूपक एव उत्प्रेक्षा अलकारो की बहुलता मिलती है। वैषम्य-मूलक अलकारो मे विरोधाभास और विभावना तथा अतिशय-मूलक अलकारो मे अतिशयोक्ति का प्रयोग बहुलता के साथ हुआ है। शब्दालकारो मे श्लेष और यमक तथा अनुप्रास की छटा दृष्टव्य है। इनके अतिरिक्त विशेषोक्ति, असगति, विषम, असम, श्लेष, काव्यलिंग, परिकराकुर, सन्देह, भ्रातिमान्, तद्गुण, व्याघात, अपन्हुति, पर्यास्तापन्हुति, व्यतिरेक, प्रतीप, अधिक, रूपकातिशयोक्ति, अन्योन्य, दृष्टान्त, निदर्शना, अनुमान, उल्लेख, अन्योक्ति, यथासख्य, कारणमाला, एकावली, सहोक्ति, स्वभावोक्ति, समासोक्ति, लोकोक्ति, क्रम, पर्यायोक्त, दीपक, उदाहरण आदि अलकारो का भी प्रयोग मिलता है। राजस्थानी का मुख्य शब्दालकार 'वयण सगाई' का भी कतिपय प्रेमाख्यानो मे प्रयोग मिलता है। अलकारो के प्रयोग मे जहा परम्परागत उपमान लिखे गये है, वहा नई उद्भावनाये भी मिलती हैं। इन प्रेमाख्यानो की अलकार योजना की मुख्य विशेषता यह है कि इनमे आचलिक-उपमानो का बडा सहज और स्वाभाविक रूप से प्रयोग किया गया है। यथा—नायिका की उंगलियो की उपमा मूंगफली से तथा सिर की उपमा नारियल से दी गई है। इस प्रकार के ग्राम्य अथवा आचलिक उपमानो के अनेक उदाहरण मिलते है जिनसे भावोत्कर्षता मे सहजता एव स्वाभाविकता आगई है।

५ भाषा-रचनागत समानता :

राजस्थानी के ये प्रेमाख्यान गद्य-पद्य और चम्पू—तीनो शैलियो मे लिखे मिलते हैं। राजस्थानी के गद्य की अपनी एक अलग विशेषता है। गद्य मे लिखी रचनाये राजस्थान की वचनिका शैली मे लिखी गई है और इन प्रेमाख्यानो मे गद्य का लयात्मक प्रसाद गुणमय रूप मिलता है जो राजस्थानी के 'दवावैत-गद्य छन्द' के प्रयोग से निखर उठा है। 'दवावैत-गद्य छन्द' राजस्थानी गद्य साहित्य की अपनी एक उल्लेखनीय विशिष्टता है, जो अन्य भारतीय भाषाओ मे नही मिलती। कलात्मक गद्य में लिखा गया 'पृथ्वीचन्द्र वाग्विलास' नामक प्रेमाख्यान राजस्थानी

का पहला प्रेमाख्यान है। लगभग इसी समय चारणी-गद्य-साहित्य का पहला ग्रथ-वचनिका शैली मे लिखा गया शिवदास गाडण कृत 'अचलदास खींची री वचनिका' है। ये दोनो ही १५वी शताब्दी के उत्तरार्द्ध मे लिखी गई रचनाये हैं। गद्य मे लिखे गये इन प्रेमाख्यानो की सबसे बडी विशेषता यह है कि इनके बीच-बीच मे नीति-कथन तथा शृगार-रस से सम्बन्धित रस-सिक्त सूक्तियो के रूप मे सोरठे और दूहे भी लिखे मिलते हैं। इस प्रकार पद्य-बद्ध रचनाओ मे कथा-सूत्र को मिलाने के लिए बीच-बीच मे 'वात' 'वार्ता' के रूप मे गद्य में कथा-वस्तु चल पडती है। यह गद्य लययुक्त होता है। पद्य मे लिखी गई रचनाओ मे 'दूहा' छन्द का इन प्रेमाख्यानो मे बहुलता के साथ प्रयोग हुआ है। राजस्थानी का प्रसिद्ध प्रेमाख्यान 'ढोला मारू' रा दूहा' छन्द मे ही लिखा गया है।

६ छन्द योजना :

राजस्थानी के प्रेमाख्यानो के छन्द-विधान की यह विशेषता है कि छन्दो का प्रयोग रसानुकूलता के साथ अर्थ की प्रतीति मे सहायक सिद्ध हुआ है। इन प्रेमाख्यानकारो ने अपभ्रश-प्रेमाख्यानो मे प्रयुक्त छन्द, दोहा, चौपई के साथ-साथ गाहा, छप्पय, पद्धडी, अतः वस्तु, तोटक, अडयल्ल आदि छन्दो को भी अपनाया है। इसके अतिरिक्त इन प्रेमाख्यानो मे कवित्त, सवैया, भुजग, मोतीदाम, चोरसी, बेक्खरी, कुण्डलिया, चन्द्रायण, जातरसावलू, रिसावला आदि विविध छन्दो का प्रयोग हुआ है। जटमल आदि कुछ प्रेमाख्यानो ने 'वीरारस' जैसे लघु छन्दो का आविष्कार भी किया है। इन प्रेमाख्यानो में अधिकतर मात्रिक छदो का प्रयोग हुआ है।

७. भाषा :

राजस्थानी-भाषा के यह प्रेमाख्यान भाषा-प्रयोग की दृष्टि से एक प्रकार से म्यूजियम है। इनमे १४वी शताब्दी से लेकर १६वी शताब्दी तक की राजस्थानी भाषा के विविध स्तरो का पता चलता है। जहा एक ओर कुछ प्रेमाख्यानो मे इकारान्त, उकारान्तमयी अपभ्र श से प्रभावित राजस्थानी का रूप मिलता है, तो कुछ प्रेमाख्यानो मे गुजराती प्रभावापन्न राजस्थानी का रूप मिलता है। किसी २ प्रेमाख्यान मे ब्रजी-भाषा का बाहुल्य है, तो किसी मे अवधी भाषा का प्रभाव भी मिलता है। कुछ प्रेमाख्यानो मे पजाबी-भाषा का भी प्रभाव मिलता है। अरबी, फारसी के शब्दो की भी कुछ प्रेमाख्यान-काव्यो मे भरमार मिलती है। कतिपय प्रेमाख्यानो की भाषा मे खडी बोली का वर्तमान रूप उभरता हुआ दृष्टिगोचर होता है। इन प्रेमाख्यानो की भाषा को देखने से पता चलता है कि खडी बोली का विकास शनै शनै राजस्थानी भाषा से ही हुआ है। अत खडी बोली के विकास-क्रम को समझने के लिए इन प्रेमाख्यानो की भाषा का अध्ययन अति आवश्यक जान

पडता है। सामान्यतः इन प्रेमाख्यानो मे राजस्थानी भाषा का सरल, सहज, एव स्वाभाविक चलता रूप मिलता है। भाषा भावानुकूल, माधुर्य, ओज एव प्रसादगुण-मयी होती गई है। ध्वन्यात्मक शब्दो का प्रयोग, रसानुकूल शब्द-योजना, शब्द-समूहो की आवृत्ति, लोकोक्तिया, रसात्मक-सूक्तिया, एव वाग्धाराओ का प्रयोग इन प्रेमाख्यानो मे प्रयुक्त भाषा की कतिपय विशेषतायें हैं। इन प्रेमाख्यानो में बीच-बीच मे सस्कृत के श्लोक भी मिलते है, किन्तु इन श्लोको मे भी प्रयुक्त सस्कृत-भाषा प्राय: अशुद्ध मिलती है। राजस्थानी भाषा के विकास-क्रम को समझने के लिए इन प्रेमाख्यानो की भाषा का अध्ययन आवश्यक है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि इन प्रेमाख्यानो मे वस्तुगत तथा शैलीगत कुछ सामान्य विशेषताये ऐसी मिलती है जो इन विविध रूप, आकार, प्रकार वाले समस्त प्रेमाख्यानो को एक सूत्र मे बाध देती है। भावगत एव कलागत कुछ ऐसी सामान्य प्रवृत्तियो के कारण इन प्रेमाख्यानो मे विविधता मे भी एकता पाई जाती है।

सं
हा
य
क

ग्रन्थो

की

सूचि

सहायक ग्रन्थों की सूची

(क) प्रकाशित मूल विवेच्य ग्रन्थ (रचनाकाल क्रमानुसार)

(१) ढोला मारू रा दूहा   स० सर्व श्री रामसिंह, सूर्यकरण पारीक एव नरोत्तम दास स्वामी

(२) बीसलदेव रासो : स० डा० माताप्रसाद गुप्त

(३) हंसाउली : स० केशवराम काशीराम शास्त्री

(४) सदयवत्स वीर प्रबन्ध ' स० डा० मंजुलाल मजूमदार

(५) लखमसेन पद्मावती कथा . स० नर्मदेश्वर चतुर्वेदी

(६) माधवानल कामकन्दला : स० एम. आर मजूमदार

(७) चतुर्भुज कृत मधुमालती : स० डा० माताप्रसाद गुप्त

(८) हंसाउली विक्रम चरित्र विवाह   स० शकरप्रसाद छगनलाल रावल

(९) माधवानल कामकन्दला   कुशललाभ

(१०) वेलि क्रिसन रुक्मिणी री : राठौड पृथ्वीराज

(११) महीराज कृत नलदमयती रास   स० डा० भोगीलाल साडेसरा

(१२) छिताई वार्ता   स० डा० माताप्रसाद गुप्त

(१३) सिंहल सुत चौपई . समयसुन्दर

(१४) पुण्यसार चौपई   समयसुन्दर

(१५) गोरा बादल चौपई : जटमल

(१६) महादेव पारवती री वेलि : स० रावत सारस्वत

(१७) पद्मिनी चरित्र चौपई . स० श्री अगरचन्द नाहटा

(१८) माधवानल कामकन्दला : दामोदर

(१९) उत्तमकुमार चरित्र चौपई . विनयचन्द्र

(२०) बडा रुक्मिणी मगल   पद्मा तेलाकृत

(२१) रूपसेन कुमारनो चरित्र . स० जोरावरमल

(२२) रतना हमीर री वारता   राजा मानसिंह

(ख) अप्रकाशित हस्तलिखित विवेच्य ग्रन्थो का विवरण यथा स्थान पाद-टिप्पणियों मे दे दिया गया है, अतः इस सूची में उनका निर्देश नहीं किया गया है।

सहायक-साहित्य

(अकारादि क्रमानुसार)

(क) वैदिक एवं संस्कृत

(१) अग्निपुराण

(२) अर्थशास्त्र कौटिल्य

(३) अभिज्ञान शाकुन्तलम कालीदास

(४) आप स्तम्भ

(५) कादम्बरी-बाण

(६) काम सूत्र वात्सायन

(७) काव्यादर्श . दण्डी

(८) काव्यानुशासन आचार्य हेमचन्द्र

(९) कुमारसम्भव कालीदास

(१०) गौतम धर्म-सूत्र

(११) पार्वती परिणयम् बाणभट्ट

(१२) ब्रह्म पुराण

(१३) मनुस्मृति

(१४) महाभारत

(१५) मालती माधव भवभूति

(१६) मेघदूत कालीदास

(१७) याज्ञवल्क्य स्मृति

(१८) रघुवश कालीदास

(१९) रत्नावली श्रीहर्ष

(२०) रुक्मिणी परिणाम् . रामवर्मन

(२१) वासवदत्ता : सुबन्धु

(२२) विक्रमोर्वशीय : कालीदास

(२३) विष्णु पुराण

(२४) गृहत्कथा कोपम् : हरिवेणाचार्य

(२५) वृहत कथा मजरी . क्षेमेन्द्र

(२६) स्वप्न वासवदत्ता : भास

(२७) सिंहासन बत्तीसी

(२८) शतपथ ब्राह्मण

(२९) श्रीमद्भागवत्
(३०) हरिवंश पुराण
(३१) ऋग्वेद

(ख) प्राकृत एवं अपभ्रंश साहित्य

(३२) जातककट्ठ कथा स० त्रिपिटकाचार्य भक्षु-धर्म
(३३) तरंगवई कहा
(३४) पउम सिरि चरिउ . धारिल
(३५) भविसयतकहा ' स० श्री दलाल व श्रीगुण (बडौदा)
(३६) मलयसुन्दरी कथा
(३७) लीलावई कोउहल
(३८) सन्देश रासक कवि अब्दुल रहमान स० मुनि जिन विजय

(ग) हिन्दी राजस्थानी

(३९) अचलदास खीची री वचनिका शिवदास
(४०) अपभ्रंश काव्यत्रयी गायकवाड ओरियन्टल सीरिज बडौदा (१९२७)
(४१) अपभ्रंश साहित्य डा० हरिवंश कोछड
(४२) आधुनिक हिन्दी साहित्य डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय
(४३) आधुनिक मनोविज्ञान श्री लालजीराम शुक्ल बनारस
(४४) आधुनिक हिन्दी कविता मे प्रेम और सौदर्य डा० रामेश्वरलाल खण्डेलवाल
(४५) आधुनिक हिन्दी कथा साहित्य और मनोविज्ञान डा० देवराज उपाध्याय
(४६) आंध्र सातवाहन साम्राज्य का इतिहास . श्री चन्द्रभान पाण्डेय
(४७) ऐतिहासिक जैन काव्य सग्रह श्री अगरचन्द नाहटा
(४८) ओझा निबन्ध सग्रह भाग १ से ४ तक डा० गौरीशकर हीराचन्द ओझा
(४९) उत्तरी भारत की सन्त परम्परा श्री परशुराम चतुर्वेदी
(५०) उदयपुर राज्य का इतिहास (जिल्द पहली व दूसरी) डा० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा
(५१) उर्दू साहित्य का इतिहास : डा० सज्जाज हुसैन
(५२) कवि कालीदास के ग्रन्थो पर आधारित तत्कालीन भारतीय सस्कृति : डा० गायत्री वर्मा
(५३) कान्हड दे प्रबन्ध-पद्मनाभ राजस्थान पुरातन ग्रथमाला जयपुर
(५४) कोटा राज्य का इतिहास : डा० मथुरालाल
(५५) कृष्ण रुक्मिणी री वेलि ' स० डा० टेसी टरी

(५६) कृष्ण रुक्मिणी री वेलि . नरोत्तमदास स्वामी
(५७) ,, ,, आनन्दप्रकाश दीक्षित
(५८) ,, ,, श्रीकृष्ण शकर शुक्ल
(५९) ,, ,, हिन्दुस्तानी एकेडेमी इलाहाबाद
(६०) कथामखासा कविवर जान (राजस्थान पुरातत्व मन्दिर, जयपुर)
(६१) गुजराती साहित्य : श्री के. एम मुन्शी
(६२) डिंगल साहित्य डा० जगदीश प्रसाद
(६३) चिन्तामणि भाग २ प० रामचन्द्र
(६४) छिताई वार्ता डा० माताप्रसाद गुप्त
(६५) जातक (चार खण्ड) भदन्त आनन्द कौसल्यायन (हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग)
(६६) जातक कालीन भारतीय सस्कृति प० मोहनलाल मेहता
(६७) जायसी ग्रथावली : डा० माताप्रसाद गुप्त
(६८) जायसी ग्रथावली . आचार्य रामचन्द्र शुक्ल
(६९) जायसी के परवर्ती सूफी कवि और काव्य डा० सरला शुक्ल
(७०) जैन ऐतिहासिक गुर्जर काव्य सचय : स० मुनि जिनविजय
(७१) जोधपुर राज की ख्यात जिल्द १, स० डा० गौरीशकर हीराचन्द ओझा
(७२) तसव्वुफ अथवा सूफीमत श्री चन्द्रबली पाण्डेय
(७३) धर्मशास्त्र का इतिहास श्रीकात
(७४) देव और उनकी कविता डा० नगेन्द्र
(७५) नागरी प्रचारिणी सभा की खोज रिपोर्ट
(७६) नाथ सम्प्रदाय डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी
(७७) पद्मावत डा० वासुदेव शरण अग्रवाल
(७८) पल्लव . श्री सुमित्रानन्दन पत
(७९) पाली साहित्य का इतिहास : भरतसिह उपाध्याय
(८०) प्राकृत साहित्य का इतिहास : डा० जगदीशचन्द्र जैन
(८१) प्राचीन राजस्थानी गीत (भाग १ से १२ तक) साहित्य सस्थान, उदयपुर
(८२) प्राकृत और उसका साहित्य : डा० हरदेव बाहरी
(८३) पृथ्वीराज रासो मे कथा रूढ़िया . श्री ब्रजविलास श्रीवास्तव
(८४) पश्चिमी भारत की यात्रा : कर्नल टाड
(८५) प्रेम गाथा काव्य परम्परा . श्री सतीशचन्द्र जोशी व्योमेश
(८६) प्रेमानन्द कृत नलाख्यान · स० मुनि जिनविजय

(८७) पुरातन प्रबन्ध सग्रह : स० मुनि जिनविजय
(८८) पुरानी राजस्थानी-अनुवाद · नामवर सिंह (ना. प्र. सभा, काशी)
(८९) पुरानी हिन्दी : श्री चन्द्रधर शर्मा गुलेरी
(९०) फ़ार्बस कृत रास माला . अनुवादक श्री गोपाल नारायण बहुरा
(९१) पाषण नगरी डा० वासुदेव शरण अग्रवाल
(९२) बीसलदेव रास डा० सहय जीवत्त वर्मा
(९३) बीसलदेव रासो . डा० तारकनाथ अग्रवाल
(९४) भारतीय लोक साहित्य श्याम परमार
(९५) भारतीय प्रेमाख्यान की परम्परा . प० परशुराम चतुर्वेदी
(९६) भारतीय प्रेमाख्यानक काव्य : डा० हरिकान्त
(९७) मध्ययुगीन हिन्दी साहित्य का लोकतात्विक अध्ययन : डा० सत्येन्द्र
(९८) मध्ययुगीन प्रेमाख्यान डा० श्याम मनोहर पाण्डेय
(९९) मधुमालती डा० माताप्रसाद गुप्त
(१००) मधुमालती : डा० शिवगोपाल मिस्र
(१०१) मध्यकालीन प्रेम साधना · प० परशुराम चतुर्वेदी
(१०२) मनोविश्लेषण फ्रायड
(१०३) मारवाड का इतिहास : विश्वेश्वरनाथ रेउ
(१०४) मुहता नैणसी री ख्यात (नागरी प्रचारिणी सभा, काशी)
(१०५) मुहता नैणसी री ख्यात : अनुवादक-रामनारायण दूगड
(१०६) मूमल . लक्ष्मीरानी चूडावत
(१०७) रस और मनोविज्ञान · छैल बिहारी राकेश
(१०८) राजस्थान : कर्नल टाड
(१०९) राजस्थानी गद्य साहित्य, उद्भव और विकास · डा० शिवस्वरूप शर्मा
(११०) राजस्थान भारती (वेलि क्रिसन रुकमणि विशेषाक) सार्दूल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, बीकानेर
(१११) राजस्थानी भाषा और साहित्य · डा० हीरालाल महेश्वरी
(११२) राजस्थानी लोक-कथाये : डा० कन्हैयालाल सहल
(११३) राजपूताने का इतिहास : डा० गौरीशकर हीराचन्द ओझा
(११४) राजस्थान का पिंगल साहित्य डा० मोतिलाल मेनारिया
(११५) राजस्थानी भाषा और साहित्य : प० मोतीलाल मेनारिया
(११६) राजस्थानी शब्द कोष · श्री सीताराम लालस
(११७) राजस्थान मे हस्तलिखित ग्रथो की खोज · हरविलास शारदा

(११८) राजस्थानी साहित्य : बात सग्रह भाग १ व २
(११९) राजस्थान की जातिया · श्री बजरगलाल लोहिया
(१२०) राजस्थान के जैन शास्त्र भण्डारो की सूची भाग २, जयपुर
(१२१) राजस्थान के हिन्दी के हस्तलिखित ग्रथो की खोज · भाग १, साहित्य सस्थान, उदयपुर
(१२२) राजस्थान के हिन्दी के हस्तलिखित ग्रथो की खोज . भाग २, साहित्य सस्थान, उदयपुर
(१२३) राजस्थान के हिन्दी के हस्तलिखित ग्रथो की खोज भाग ३, साहित्य सस्थान, उदयपुर
(१२४) राजस्थानी कहावत . भाग १ व २ श्री नरोत्तमदास मुरलीधर व्यास
(१२५) राजस्थानी प्रेम कथाये स० मोहनलाल पुरोहित
(१२६) राजस्थानी प्रेमाख्यान · स० गोस्वामी लक्ष्मीनारायण
(१२७) राजस्थानी भाषा डा० सुनीतिकुमार चटर्जी
(१२८) राजस्थानी भाषा और साहित्य श्री नरोत्तम स्वामी
(१२९) राजस्थानी लोकगीत रानी लक्ष्मीकुमारी चू डावत
(१३०) राजस्थानी लोकगीत भाग १ व २ रामसिंह पारीक और नरोत्तम स्वामी
(१३१) राजस्थानी लोकगीत भाग १ व २ साहित्य सस्थान, उदयपुर
(१३२) राजस्थानी लोकगीत सूर्यकरण पारीक
(१३३) राजस्थानी वार्ता भाग १ से ५ साहित्य सस्थान, उदयपुर
(१३४) राजस्थानी वार्ता श्री सूर्यकरण पारीक
(१३५) राजस्थानी व्याकरण : श्री सीताराम लालस
(१३६) राजस्थानी साहित्य एक परिचय . श्री नरोत्तमदास स्वामी
(१३७) राजस्थानी साहित्य का महत्व . स० रामदेव चौखानी
(१३८) राजस्थानी साहित्य व कला की कहानी, पत्थरो की जुबानी (पुरातत्व सग्रहालय, राजस्थान)
(१३९) राजस्थानी साहित्य सग्रह भाग १ राजस्थान पुरान्वेषण मन्दिर, जयपुर
(१४०) राजस्थानी साहित्य सग्रह भाग २ : स० डा० पुरुषोत्तमलाल मेनारिया
(१४१) राजस्थानी साहित्य : डा० सरनामसिंह
(१४२) राजस्थानी वेलि साहित्य . डा० नरेन्द्र भानावत
(१४३) रास और रासान्वयी काव्य · डा० दशरथ ओझा
(१४४) रीतिकाल की भूमिका : डा० नगेन्द्र
(१४५) रीतिकालीन कवियो की प्रेम व्यजना : डा० बच्चनसिंह

(१४६) लोक साहित्य : नलिन विलोचन शर्मा
(१४७) लोक साहित्य का विज्ञान : डा० नगेन्द्र
(१४८) वचनिका राठौड रतनसिह री महेस दातौरी विडिया जगारी कही : स० डा० टेसीटरी
(१४६) वश भास्कर : सूर्यमल मिश्रण
(१५०) बृज लोक साहित्य का अध्ययन . डा० सत्येन्द्र
(१५१) विनयचन्द्र कृति कुसुमाजलि स० भवरलाल नाहटा
(१५२) समय सुन्दर कृति कुसुमाजलि श्री अगरचन्द भवरलाल नाहटा
(१५३) सिद्ध साहित्य डा० धर्मवीर भारती
(१५४) सौन्दर्य मीमासा (इमैनुअल काट) रूपान्तरकार—रामकेवल सिंह
(१५५) सुन्दरदास कृत नलदमन डा० वासुदेव शरण अग्रवाल
(१५६) सूफीमत और साहित्य श्री राम पूजन तिवारी
(१५७) सूफीमत और हिन्दी साहित्य डा० विमलकुमार जैन
(१५८) सूफी काव्य ग्रन्थो की पारस्परिक समानताएँ : प्रो० देवेन्द्र दीपक
(१५६) सूफी काव्य सग्रह . प० परशुराम चतुर्वेदी
(१६०) सूरज प्रकाश भाग १ कवि करणीदानजी कृत
(१६१) शोध प्रक्रिया एव विवरणिका . डा० सरनामसिह शर्मा
(१६२) हस अवाहिर भाषा कासिम शाह (रामकुमार प्रेस लखनऊ)
(१६३) हिन्दी काव्य धारा मे प्रेम प्रवाह श्री परशुराम चतुर्वेदी
(१६४) हिन्दी प्रेमाख्यान काव्य डा० कमल कुल श्रेष्ठ
(१६५) हिन्दी पर फारसी प्रभाव · श्री अम्बाप्रसाद वाजपेयी
(१६६) हिन्दी महाकाव्य का स्वरूप विकास · डा० शम्भूनाथसिह
(१६७) हिन्दी के मुसलमान कवियो का प्रेम काव्य श्री गुणदेव प्रसाद शर्मा (हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय वाराणसी)
(१६८) हिन्दी साहित्य का आदिकाल आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी
(१६६) हिन्दी साहित्य की भूमिका आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी
(१७०) हिन्दी सूफी कवि और काव्य डा० सरला शुक्ल
(१७१) हिन्दी के सूफी प्रेमाख्यान परशुराम चतुर्वेदी
(१७२) हिन्दी प्रेम गाथा काव्य सग्रह . श्री गणेशप्रसाद द्विवेदी
(१७३) हिन्दी के विकास मे अपभ्रश का योग . डा० नामवरसिह
(१७४) हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास · डा० रामकुमार वर्मा
(१७५) हिन्दी साहित्य का इतिहास : आचार्य रामचन्द्र शुक्ल
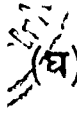
(घ) प्रादेशिक भाषा

(१७६) आपणा कविग्रो भाग १ श्री केशवराम काशीराम शास्त्री
(१७७) इसलामि वगला साहित्य : डा० सुकुमार सेन
(१७८) गुजराती साहित्य नु रेखा दर्शन : खण्ड १ले, अहमदावाद (१९५१)
(१७९) गुजराती साहित्य प्रवाह खण्ड ५
(१८०) चारण अनेचारणी साहित्य . श्री झवेरचन्द मेघाणी
(१८१) जैन गुर्जर कविओ भाग १-४ सोहनलाल दलीपचन्द देसाई
(१८२) प्राचीन गुर्जर काव्य सग्रह . गायकवाड ओरियन्टल सीरीज वडोदा
(१८३) मध्यकाल नो साहित्य प्रवाह खण्ड ५
(१८४) रोमान्तिक पजावी कवि डा० गुलावसिंह (पजाव एकेडेमी नई दिल्ली)
(१८५) शाहनी रो रसालो भाग ३ डा० एच एम गुरुवक्सानी
(१८६) सिन्धी लोक कथा मूमलराणो स० वूलचन्द वसूमल

ENGLISH BOOKS

(1) A catalogue of Rajasthan M S in the Library of H. H. the Maharaja of Bikaner.
(2) A catalogue of M. S. in the Library of H H the Maharaja of Udaipur-Pt. Motilal Menaria.
(3) A descriptive catalogue of Bardic and Historical M. S. (Jodhpur Bikaner States) Dr. Tessitori
(4) A descriptive catalogue of the Rajasthan M. S. in the collections of the Asiatic Society, Calcutta part Dr. Sukumar Sen (1957).
(5) Ajmer Historical Descriptive Harbilas Sharda.
(6) Anuals and Antiquities of Rajasthan (Col Tod).
(7) An Introduction to Medieval Romance A B. Taylor.
(8) Ancient Geography of India by Cunnighan.
(9) A history of Punjabi Literature by Dr. Dewar
(10) Books of Sindbad by Clouston.
(11) Burmese collections by C I. Bandow.
(12) Contempoary school of Psychology by R. Wordwath.
(13) Dictionary of word Literature by Shiple
(14) Descriptive catalogue of the Mackemiyie Collection of Oriental Mas Etc. by H. H Wilson

(15) Elepinton's India.
(16) Folk tales of Kashmir
(17) Folk Tales of Bengal by L B. Days.
(18) Frere's old Daccan days
(19) Love against Hate . Karl Meninger
(20) Maspher's populai stories of ancient Egypt
(21) Nights by Burton
(22) Pancha Tantra by Benfy.
(23) Proceedings of American Philosophical Society Vol VI (1917)
(24) Principles of Literary Criticism.
(25) Russian Folk Tales by Ralston
(26) Schiefiner and Ralston's Tibetan Tales
(27) Science of Emotion by Dr. Bhagwandas.
(28) Sex in relation to Society by Hevlock Elis.
(29) Standard dictionary of Folk-lore.
(30) Studies in Rajput History Dr Kalikaranjan Kanoongo
(31) The Alegory of Love by Lewis
(32) The Folk Tales by Smith Thomson.
(33) The mind and heart of Love, by M C D Aray
(34) The Erotic Motive Litt By Friend Lander.
(35) The Golden Bough by Frazer
(36) Tewney's-Katha Koca
(37) Travells in Western India by James Tod

पत्र-पत्रिकायें

(१) आलोचना
(२) कल्पना
(३) गवेषणा
(४) चारण बन्धु
(५) जैन भारती
(६) धर्मयुग
(७) नागरी प्रचारिणी पत्रिका
(८) परम्परा
(९) ब्रज भारती

(१०) भारतीय विद्या
(११) मधुमती
(१२) मरु भारती
(१३) मरुवाणी
(१४) राजस्थानी
(१५) राजस्थानी भारती
(१६) वरदा
(१७) विश्वभारती
(१८) सरस्वती
(१९) सम्मेलन पत्रिका
(२०) सयुक्त राजस्थान
(२१) साहित्य सन्देश
(२२) शोध पत्रिका
(२३) हिन्दी अनुशीलन
(२४) हिन्दुस्तानी त्रैमासिक
(25) Indian Antiquary.
(26) Journal of American Philosophical Society
Journal of American Oriental Society.
(27) Journal of the Asiatic Society, Calcutta.
(28) Journal of the Gujrat Research Society, Bombay.

* * *